

बयानुल कुरान

हिस्सा अव्वल

तर्जुमा व मुख़्तसर तफ़सीर

सूरतुल फ़ातिहा व सूरतुल बक्ररह

अज़

डॉक्टर इसरार अहमद

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

अर्जे मुरत्तब

कुरान हकीम नौए इन्सानी के लिये अल्लाह तआला का आखरी और तकमीली (complete) पैगाम-ए-हिदायत है, जिसे नबी आखिरुज्जमान मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की दावत व तब्लीग में मरकज़ (center) व महवर (axis) की हैसियत हासिल थी। आप ﷺ ने इस कुरान की बुनियाद पर ना सिर्फ़ दुनिया को एक निज़ामे अद्ल इज्जमाई अता फ़रमाया बल्कि इस आदिलाना निज़ाम पर मन्बी एक सालेह मआशरा भी बिलफअल कायम करके दिखाया। आप ﷺ ने इस कुरान की रहनुमाई में इन्क़लाब के तमाम मराहिल तय करते हुए नौए इन्सानी का अज़ीम तरीन इन्क़लाब बरपा फरमा दिया। चुनाँचे यह कुरान महज़ एक किताब नहीं “किताबे इन्क़लाब” है, और इस शऊर के बग़ैर कुरान मजीद की बहुत सी अहम हक़ीक़तें कुरान के क़ारी पर मुन्क़शिफ़ (ज़ाहिर) नहीं हो सकतीं।

अल्लाह तआला जज़ा-ए-ख़ैर अता फ़रमाये सदर मौसिस मरकज़ी अंजुमन खुदामुल कुरान लाहौर और बानी-ए-तंज़ीमे इस्लामी मोहतरम डॉक्टर इसरार अहमद हफीज़ुल्लाह को जिन्होंने इस दौर में कुरान हकीम की इस हैसियत को बड़े वसीअ पैमाने पर आम किया है कि यह किताब अपनी दीगर (अन्य) इम्तियाज़ी हैसियतों के साथ-साथ मौहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का आला-ए-इन्क़लाब और आप ﷺ के बरपा करदा इन्क़लाब के मुख़्तलिफ़ मराहिल के लिये ब-मंज़िला-ए-मैनुअल (manual) भी है, लिहाज़ा इसका मुताअला (study) आँहुज़ूर ﷺ की दावत व तहरीक और इन्क़लाबी जद्दो-जहद के तनाज़ुर (दृष्टिकोण) में किया जाना चाहिये और इसके क़ारी को खुद भी “मन्हज़-ए-इन्क़लाबे नबवी ﷺ” पर मन्बी इन्क़लाबी जद्दो-जहद में शरीक होना चाहिये। ब-सूरते दीगर (अन्यथा) वह कुरान हकीम के मआरफ़ (तालीम) के बहुत बड़े खज़ाने तक रसाई (पहुँच) से महरूम रहेगा।

मोहतरम डॉक्टर साहब ने अपने दौरा-ए-तर्जुमा-ए-कुरान (बयानुल कुरान) में भी कुरान करीम की इस इम्तियाज़ी हैसियत को पेशे नज़र रखा है,

जिसे दावत रुजू इलल कुरान के इन्तहाई अहम संगे मील की हैसियत हासिल है। इस बात की ज़रूरत शिद्दत से महसूस हो रही थी कि इस शहरा-ए-आफ़ाक़ “बयानुल कुरान” को मुरत्तब करके किताबी सूरत में पेश किया जाये। चुनाँचे राक्मिमुल हुरुफ़ ने अल्लाह तआला की ताईद व तौफ़ीक़ तलब करते हुए कुछ अरसा क़ब्ल इस काम का बीड़ा उठाया और पहले “तआरुफ़े कुरान” और फिर रफ़ता-रफ़ता सूरतुल फ़ातिहा और सूरतुल बक्ररह की तरतीब व तस्वीद (आलेखन) मुकम्मल की। अब तक मुकम्मल होने वाला काम किताबी सूरत में “बयानुल कुरान” (हिस्सा अव्वल) के तौर पर पेश किया जा रहा है। क़ारईन किराम (पाठकों) से इस्तदआ (निवेदन) है कि वह अल्लाह तआला के हुज़ूर इस आजिज़ के लिये उस हिम्मत व इस्तक़ामत (दृढ़ता) की दुआ करें जो इस अज़ीम काम की तकमील के लिये दरकार है।

हाफ़िज़ ख़ालिद महमूद ख़िज़र
मुदीर शौबा मतबूआत, कुरान अकेडमी लाहौर
नवम्बर, 2008

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ

तक्रदीम

इसरार अहमद

इन सतूर के नाचीज़ राक्मि को कुरान मजीद का मुफ़स्सिर तो बहुत दूर की बात है, मरव्वजा मफ़हूम के ऐतबार से “आलिमे दीन” होने का भी हरगिज़ कोई दावा नहीं है, ताहम (हालाँकि), ख़ालिसतन “تَحْدِيثًا لِلتَّعْبَةِ” (बा-हवाला “وَأَمَّا بِبَيْعَةِ رَبِّكَ فَحَدِّثْ”) अल्लाह तआला की उन नेअमतों के ऐतराफ़ व इज़हार में कोई कबाहत महसूस नहीं होती कि उसने अपने ख़ास फज़ल व करम से ऐसे हालात पैदा कर दिये कि अवाइल (early) उमर ही में कुराने हकीम के साथ एक दिली उन्स (घनिष्ठ परिचय) और ज़ेहनी मुनास्बत (सम्बन्ध) क़ायम होती चली गयी। चुनाँचे अव्वलन बिल्कुल ही नौउम्मी में (हाई स्कूल के इब्तदाई सालों के दौरान) अल्लामा इक़बाल की शायरी के ज़रिये कुरान की अज़मत, मिल्लते इस्लामी की निशाते सानिया की उम्मीद और इसके ज़िम्न में कुरान की अहमियत का एक गहरा नक्श क़ल्ब पर क़ायम फरमा दिया, फिर एक खानदानी रिवायत के मुताबिक़ हाई स्कूल की तालीम के दौरान अरबी को एक इज़ाफ़ी मज़मून की हैसियत से इख़्तियार करने की सूरत पैदा फरमा दी जिससे अरबी ग्रामर की असासात (आधार) का इल्म हासिल हो गया। और फिर मेट्रिक के इम्तिहान के बाद फरागत के दिनों में, जबकि 1947 ईस्वी के मुस्लिम कश फसादात के नतीजे में हम लगभग एक माह क़स्बा हिसार (जो अब भारत की रियासत हरयाणा में है) में हिन्दुओं के हमलों से दिफ़ाअ (बचाव) के लिये चंद मुहल्लों पर मुश्तमिल एक दिफ़ाई ब्लाक में “महसूर” थे, कुरान हकीम से पहले मानवी तआरुफ़ की यह सूरत पैदा फरमा दी कि मुझे और मेरे बड़े भाई इज़हार अहमद साहब मरहूम को एक मस्जिद में बैठ कर मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी मरहूम की माहनामा “तर्जुमानुल कुरान” में शायी होने वाली तफ़सीर सूरह युसुफ के इज्जमाई के मुताअले और उस पर बाहमी मुज़ाकरे का मौक़ा मिला, जिससे अंदाज़ा हुआ कि कुरान फ़साहत व बलागत की मेराज और सरचश्मा-ए-हिदायत ही नहीं, बल्कि मिम्बा-ए-इल्म व हिकमत भी है, और वाक्किअतन

इस लायक है कि बेहतरीन ज़हनी व फिक्री सलाहियों को इसके इल्म व फ़हम के हुसूल में इस तौर से सर्फ़ (खर्च) किया जाये कि अब्बलन इसके अमूमी (सामान्य) पैगाम को सही तौर पर समझें जो कि इल्म व हिकमत के बहर-ए-ज़खार की सतह पर बिल्कुल उसी तरह तैर रहा है जैसे किसी तेल बरदार (वाहक) जहाज़ में शिकस्त व रेख्त (विनाश) के बाइस (कारण) उससे निकाल कर बहने वाला तेल सतह समुन्दर पर तैर रहा होता है, और फिर इसकी गहराइयों में गोताज़नी करके इसकी तह से इसके फ़लसफ़ा व हिकमत के असल मोतियों को तलाश करें!

अल्हम्दुलिल्लाह, सुम्मा अल्हम्दुलिल्लाह, कि यह इन ही अमूरे सलासा के नतीजे का ज़हूर था कि जब तक्रसीमे हिन्द के वक्रत एक सौ सत्तर मील का सफ़र (हिसार से हैड सुलेमानकी तक) पैदल काफ़िले के साथ आग और खून के दरिया उबूर (पार) करके पाकिस्तान पहुँचना नसीब हुआ तो फ़ौरन तहरीके जमाते इस्लामी के साथ अमली वाबस्तगी (practical commitment) हो गयी। (जो अब्बलन इस्लामी जमीयते तलबा में शमूलियत [सह-भागिता] की सूरत में थी, और उसके बाद जमाते इस्लामी की रुक़ियत की शक़ल में!) और इस पूरे दस साला अरसे के दौरान जमीयत और जमाअत के इज्जतमाआत में “दरसे कुरान” की ज़िम्मेदारी अमूमन मुझ पर आयद (लागू) होती रही। जिसे बिलउमूम बहुत इस्तेहसान की नज़रों से देखा जाता था। अगरचे मैं अच्छी तरह समझता था कि सामईन (श्रोताओं) की जानिब से यह तहसीन व तारीफ़ इक़बाल के इस शेर के ऐन मुताबिक़ है कि:

खुश आ गयी है जहाँ को क़लंदरी मेरी,

वरना शेर मेरा क्या है! शायरी क्या है!!

मज़ीद बराँ (इसके अलावा) मैं हरगिज़ इसका दावा भी नहीं करता कि मेरे इस तअल्लुम व तदब्बुर कुरान के ज़ोक्र व शौक्र में रोज़ अफ़ज़ो (तेज़ी से) इज़ाफ़े में इस खारजी पसंदीदगी की बिना पर पैदा होने वाली “हिम्मत अफ़ज़ाई” को सिरे से कोई दख़ल हासिल नहीं था, लेकिन वाक़्या यह है कि मैं अपने दरूस (course) के लिये तैयारी के ज़िम्न में जो मुताअला करता और मुख़्तलिफ़ अरबी और उर्दू तफ़ासीर से रूज़ करता और फिर अपने ज़ाती ग़ौरो फ़ि़क़्र से भी काम लेता तो उसके नतीजे में मुझ पर कुरान की अज़मत मुन्कशिफ़ (स्पष्ट) होती चली गयी। और इस क़ौल को हरगिज़ किसी मुबालगे पर मत्री ना समझा जाये कि कुरान ने मुझे अपना “असीर” (possess) कर

लिया। चुनाँचे यह इसी असीरी का मज़हर है कि मैंने 1952 ईस्वी ही में (बीस साल की उम्र में) मेडिकल एजुकेशन के ऐन वस्त (बीच) में ये शऊरी फैसला कर लिया था कि अब यह तिब्ब (मेडिकल) की तालीम भी और तबाबत (प्रेक्टिस) का पेशा भी, सब मेरी तरजीहात में नम्बर दो पर रहेंगे, अब्बलीन तरजीह ख़िदमते कुरान हकीम और ख़िदमते दीने मतीन को हासिल रहेगी! और फिर 1971 ईस्वी में क्रमरी हिसाब से चालीस साल की उम्र में जब यह महसूस हुआ कि अल्लाह तआला ने अपने खुसूसी फ़ज़ल व करम से मुझ पर अपनी शाने “عَلَّمَ الْقُرْآنَ” के साथ-साथ “عَلَّمَهُ الْبَيَانَ” का भी किसी दर्जे में फैज़ान फरमा दिया है तो अपने पेशा-ए-तबाबत को बिल्कुल ख़ैरबाद कह कर अपने आप को हमातन (हर हाल) और हमावक्रत (हर वक्रत) कुराने मुबीन और दीने मतीन की ख़िदमत के लिये वक्रफ़ कर दिया।

मुझ पर अल्लाह तआला का एक ख़ास फ़ज़ल व करम इस ऐतबार से भी हुआ कि उसने मुझे किसी एक लकीर का फ़क़ीर होने से बचा लिया। चुनाँचे कुरान के इल्म व फ़हम के ज़िम्न में मेरे इस्तफ़ादे का हल्का (दायरा) बहुत वसीअ भी है। और बाज़ ऐतबारात से तज़ाद (विरोध) का हामिल (धारक) भी! मैंने अपनी एक तालीफ़ “दावत रुज़अ इलल कुरान का मंज़र व पसमंज़र” में इसकी पूरी तफ़सील दर्ज कर दी है कि मेरे इल्म व फ़हमे कुरान के “हौज़” में तफ़सीर कुरान के चार सिलसिलों की नहरों से पानी आता रहा, जिन पर पाँचवा इज़ाफ़ा मेरी तालीम में शामिल उलूमे तबीइया (प्राकृतिक विज्ञान) के मबादयात (आधार) का इल्म था। फिर अल्लाह ने मुझे जो मन्तक़ी ज़हन अता फ़रमाया था उसके ज़रिये इन पाँच सिलसिलों से हासिलशुदा मालूमात में “जमीअ व तवाफ़ि़क़” (synthesis) कायम किया। जिसकी बिना पर बहम्दुलिल्लाह मेरे “बयानुल कुरान” को एक जामियत हासिल हो गयी। और ग़ालिबन यही इसकी मक्रबूलियत का असल राज़ है।⁽¹⁾ वल्लाहु आलम!

एक मुस्तनद “आलिमे दीन” ना होने के बावजूद जिस चीज़ ने मुझे दर्स व तदरीसे कुरान की ज़रूत (बल्कि ठेठ मज़हबी हल्कों [दायरों] के नज़दीक “जसारत”) की हिम्मत अता फ़रमायी, वह नबी अकरम ﷺ का यह क़ौले मुबारक है कि: ((يَلْعَنُ عَنِّي وَوَيْلٌ لِّىَّ)) यानि “पहुँचा दो मेरी जानिब से ख्वाह एक ही आयत!” (सही बुखारी, और उसके अलावा तिरमिज़ी, और अहमद दारमी रहमतुल्लाह अलै०)। चुनाँचे मेरे नज़दीक जिन उलूमे दीनी की तहसील को उल्माये किराम लाज़मी क्रार देते हैं वह किसी के “मुफ़्ती” बनने के लिये तो

लामहाला लाज़मी हैं, लेकिन कुरान के दाई और मुबल्लिग़ बनने के लिये हरगिज़ ज़रूरी नहीं हैं। इसलिये कि कुरान का पैगाम अगरचे ता क़यामे क़यामत पूरी नौए इंसानी के लिये था, ताहम (हालाँकि) इसके अब्बलीन मुखातिब तो “उम्मी” थे। चुनाँचे कुरान के असल पैगाम को अल्लाह तआला ने निहायत “यसीर” सूरत में, जैसे कि पहले अर्ज़ किया गया, एक अथाह समुन्दर की सतह पर तैरने वाले तेल के मानिन्द पेश किया (यही वजह है कि सूरतुल क्रमर में चार बार फ़रमाया गया):

“हमने नसीहत व हिदायत के लिये कुरान को
बहुत आसान बना दिया है, तो है कोई जो
इससे तज़क़ुर हासिल करे!”

क्रिस्सा मुख़्तसर--- लाहौर में 1965 ईस्वी से मेरे बाज़ाबता हल्का मुताअला-ए-कुरान (organised centers to understand Quran) कायम हुए तो उसके नतीजे में पहले 1972 ई० में मरकज़ी अंजुमन खुद्दामुल कुरान लाहौर कायम हुई, जिसकी कोख से ज़ेली अंजुमनों का एक सिलसिला बरामद हुआ (कराची, मुल्तान, फैसलाबाद, झंग, कोएटा, इस्लामाबाद, पेशावर) फिर 1976 ई० में लाहौर में कुरान अकेडमी कायम हुई, और उसकी “बेटियों” के तौर पर कराची, मुल्तान, फैसलाबाद और झंग में भी अकेडमियाँ वजूद में आयीं। साथ ही पाकिस्तान के तूल व अर्ज़ में बड़े-बड़े शहरों में मेरे दर्से कुरान की महफ़िलें मुनअक्किद (आयोजित) होने लगीं। फिर कुरानी तरबियत गाहों (जो एक हफ़्ते से लेकर एक महीने तक के अरसे पर मुहीत होती थीं) का सिलसिला शुरू हुआ। इधर लाहौर में सालाना कुरान कॉन्फ़ेंसों का सिलसिला जारी हुआ और फिर जब पाकिस्तान टेलिविज़न पर यह दर्से कुरान शुरू हुआ तो अब्बलन अल् किताब फिर अलिफ़ लाम मीम फिर नबी कामिल (ﷺ) और बिल आख़िर “अल् हुदा” का हफ़्तावार प्रोग्राम जो पूरे पन्द्रह महीने इस शान से जरी रहा कि हफ़्ते के एक ही दिन, एक ही वक़्त पर, पाकिस्तान के तमाम टी०वी० स्टेशनों से नशर (प्रसारित) होता था। तो उस ज़माने में जो मक्रबूलियत हासिल हुई उसकी बिना पर मुझे अपने बारे में वह शदीद अन्देशा लाहक़ हो गया था जिसका ज़िक्र एक हदीस में आया है कि आँहुज़ूर (ﷺ) ने इरशाद फ़रमाया: “किसी शख्स की तबाही के लिये यह बात काफी है कि उसकी जानिब उँगलियाँ उठनी शुरू हो जायें!” इस पर दरयाफ़्त किया गया कि: “अगर यह किसी चीज़ की बुनियाद पर हो तो क्या तब भी?”

तो आप (ﷺ) ने फ़रमाया: “हाँ तब भी, इसलिये कि इससे इन्सान के लगज़िश में मुब्तला होने (यानि उसमें उजुब [बदलाव] और तकब्बुर जैसी हलाक़त ख़ेज़ बीमारियों के पैदा हो जाने) का अन्देशा पैदा हो जाता है। इल्ला (सिवाय) यह कि अल्लाह की रहमत शामिल हाल हो!” (इस हदीस को मुहद्दिस ज़हबी रहि० ने हज़रत इमरान बिन हुसैन (रज़ि०) से रिवायत किया है, अगरचे इसकी रिवायत में किसी क्रदर ज़ौफ़ मौजूद है।) इसलिये कि उस ज़माने में फिल वाक़ेअ कैफ़ियत यह हो गई थी कि मैं जिधर जाता था लोग एक-दूसरे को इशारों के ज़रिये मेरी तरफ़ मुतवज्जा करते थे। यह भी उस ज़माने की बात है कि मुझसे मुतअद्दिद (कई) लोगों ने तफ़सीरे कुरान लिखने की फ़रमाइश की, और एक पब्लिशर ने तो बहुत इसरार किया कि आप एक तर्जुमा-ए-कुरान ही लिख दें। लेकिन मैंने हमेशा और सबसे यही कहा कि मेरा मक़ाम नहीं है! इस दावते कुरानी में अगरचे मेरा ज़्यादा ज़ोर कुरान के चीदा-चीदा (ख़ास-ख़ास) मक़ामात पर मुश्तमिल “मुताअला-ए-कुरान हकीम के एक मुन्तख़ब निसाब” के दर्स पर रहा, लेकिन बहम्दुलिल्लाह दो बार पूरे कुरान मजीद का दर्स देने की सआदत (सौभाग्य) भी हासिल हुई, अगरचे वह सारा टेप रिकॉर्डशुदा मौजूद नहीं है!

इस दावते कुरानी का नुक्ता-ए-उरूज यह था कि 1948 ई० (1404 हिजरी) में नमाज़े तरावीह के साथ दौरा-ए-तर्जुमा-ए-कुरान का आगाज़ हुआ। चुनाँचे हर चार रकअत तरावीह से क्रब्ल उन रकाअतों में पढ़ी जाने वाली आयात का तर्जुमा और मुख़्तसर तशरीह बयान होती थी, फिर नमाज़ में उनकी समाअत होती थी, जिसके नतीजे में, बाज़ लोगों में कम और बाज़ में ज़्यादा, वह कैफ़ियत पैदा हो जाती थी जिसे इक़बाल ने अपने इस शेर में बयान किया है कि:

तेरे ज़मीर पर जब तक ना हो नुज़ूले किताब

गिरह कुशा है ना राज़ी ना साहिबे कशाफ़!

इस अमल के नतीजे में नमाज़े इशा और नमाज़े तरावीह की तकमील में लगभग छः घंटे सर्फ़ (खर्च) होते थे। और बहम्दुलिल्लाह सामईन का जोशो ख़रोश और ज़ोक्रो शौक्र दीदनी होता था। और सुम्मा अल्हम्दुलिल्लाह कि अब यह सिलसिला पाकिस्तान के बहुत से मक़ामात पर मेरी सल्बी और माअनवी औलाद के ज़रिये जारी है!

इस सिलसिले में दौरा-ए-तर्जुमा-ए-कुरान का जो प्रोग्राम 1998 ई० में कराची की कुरान अकेडमी की जामा मस्जिद में हुआ, उसकी ऑडियो-वीडियो रिकॉर्डिंग आला मैयार पर की गयी थी। चुनाँचे यह बहमदुलिल्लाह ऑडियो-वीडियो कैसिटों और C.Ds और D.V.Ds और टी०वी० चैनल्स के ज़रिये पूरी दुनिया में निहायत वसीअ पैमाने पर फ़ैल चुका है। और अब इसे किताबी शक़ल में भी शायी (प्रकाशित) करने का सिलसिला शुरू हो रहा है, जिसकी पहली जिल्द आपकी ख़िदमत में हाज़िर है! इसकी तबाअत व अशाअत (printing & publishing) के सिलसिले में अंजुमन खुदामुल कुरान सूबा सरहद के सदर जनाब डॉक्टर इक्रबाल साफ़ी ने ताकीद (focus) का जो दबाव मरकज़ी अंजुमन पर बरकरार रखा और माली तआवुन (सहयोग) भी पेश किया, उसकी बिना पर इससे इस्तफ़ादह (फ़ायदा) करने वाले हर शख्स पर उनका यह हक़ है कि उनके लिये दुआये ख़ैर ज़रूर करे।

आख़री बात यह कि इस “बयानुल कुरान” के ज़िम्न में अगर असहाबे इल्म मेरी गलतियों की निशानदेही करें तो मैं ममनून (आभारी) हूँगा। और आइन्दा तबाअत (प्रिंटिंग) में तसहीह (सुधार) भी कर दी जायेगी। इस बात को दोहराने की चंदआँ ज़रूरत नहीं है कि मैं ना मुफ़स्सिर होने का मुद्दई हूँ ना आलिम होने का, बल्कि सिर्फ़ अल्लाह के कलामे पाक और उसके दीने मतीन का अदना ख़ादिम हूँ। और मेरी सब हज़रात से इस्तदआ (निवेदन) है कि मेरे हक़ में दुआ करें कि अल्लाह मेरी मसाई (कोशिशों) को शर्फ़े कुबूल अता फरमाये और निजाते उख़रवी का ज़रिया बना दे। आमीन! या रब्बल आलमीन!

(नोट: इस पूरी बहस में मैंने अक्रामते दीन की अमली जद्दो-जहद के लिये तंज़ीमे इस्लामी के क्रियाम का ज़िक्र नहीं किया। इसलिये कि यह एक मुस्तक़िल और जुदागाना बाब है, और इस मुख़्तसर ‘तक्रदीम’ में ना उसकी गुंजाइश है ना ज़रूरत। ताहम उसके लिये मेरी तालीफ़ात “तहरीक जमाते इस्लामी: एक तहक़ीक़ी मुताअला” और “सिलसिला-ए-अशाअत तंज़ीमे इस्लामी” अज़ अब्बल ता दहम का मुताअला मुफ़ीद होगा।)

दुआ का तालिब
खाकसार इसरार अहमद अफ़्री अन्हु
26 नवम्बर, 2008

तक्रदीम तबीअ सालिस

“बयानुल कुरान” (हिस्सा अब्बल) के पहले दो एडिशन चंद ही माह में (यानि देखते ही देखते!) ख़त्म हो गये। और यह बात मेरे लिये बहुत हैरतअंगेज़ है। इसलिये कि मैं अब्बलन तो मुफ़स्सिरे कुरान ही नहीं हूँ, सानियन मेरा किसी मारुफ़ मज़हबी फ़िरके या मस्लक से कोई तंज़ीमी ताल्लुक़ भी नहीं है। इन अमूर (विवादों) के अलल-रग़म (बावजूद) इसकी इस क़दर पज़ीराई (अभिवादन) यक़ीनन अल्लाह तआला की किसी खुसूसी मशीयत (मज़ी) की मज़हर (घोषणा) है। वल्लाहु आलम!!

कुरान हकीम की इस तर्जुमानी में अगर कोई ख़ैर वजूद में आया है तो वह सरासर अल्लाह तआला के फ़ज़ल व करम से है। और ख़ालिसतन उसकी अता व मरहम्मत (अनुदान) का नतीजा है। और अगर किसी मक़ाम पर कोई गलती हो गई है तो वह सरासर मेरे इल्म या फ़हम का क़सूर है, जिसके लिये अल्लाह तआला से भी अप्प व दरगुज़र का तलबगार हूँ। और अहले इल्म हज़रात से भी तवक्को रखता हूँ कि इस पर ख़ालिसतन फरमाने नबवी ﷺ “الَّذِي النَّصِيحَةُ” के मुताबिक़ मुतनब्बा (टिप्पणी) फरमा कर सवाब हासिल करेंगे! और ज़ाती तौर पर मैं भी ममनूअ हूँगा!!

इस जिल्द में अभी सिर्फ़ सूरतुल फ़ातिहा और सूरतुल बक्ररह की तर्जुमानी हुई है, गोया कि अभी पहाड़ जैसा भारी काम बाक़ी है। ताहम अल्लाह तआला के फ़ज़ल व करम से तवक्को है कि जैसे उसने, मेरे किसी इरादे या मंसूबाबंदी के बग़ैर और मेरी ख़ालिस ला-इल्मी में पेशे नज़र जिल्द शायी करा दी, वैसे ही बाक़ी भी शायी करा देगा, ख़्वाह खुद मेरी इस दुनिया से दारे आख़िरत की जानिब रवानगी के बाद ही सही। आख़िर में दुआ है:

اللّهُمَّ تَقَبَّلْ مِنِّي فَإِنَّكَ خَيْرُ الْمُتَقَبِّلِينَ وَتُبْ عَلَيَّ فَإِنَّكَ أَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ!
آمین! یاربّ العّلمین!!

खाकसार इसरार अहमद अफ़्री अन्हु
08 अगस्त, 2009



बाब अब्बल

कुरान के बारे में हमारा अक़ीदा

तआरुफ़े कुरान मजीद के सिलसिले में सबसे पहली बात यह है कि कुरान हकीम के बारे में हमारा ईमान, या इस्तलाहे आम में हमारा अक़ीदा क्या है?

कुरान हकीम के मुताल्लिक अपना अक़ीदा हम तीन सादा जुमलों में बयान कर सकते हैं:

- 1) कुरान अल्लाह का कलाम है।
 - 2) यह मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم पर नाज़िल हुआ है।
 - 3) यह हर ऐतबार से महफूज है, और कुल का कुल मन व अन मौजूद है, और इसकी हिफ़ाज़त का ज़िम्मा खुद अल्लाह तआला ने लिया है।
- यह तीन जुमले हमारे अक़ाइद की फ़ेहरिस्त के ऐतबार से, कुरान हकीम के बारे में हमारे अक़ीदे पर किफ़ायत करेंगे। लेकिन इन्हीं तीन जुमलों के बारे में अगर ज़रा तफ़सील से गुफ़्तगू की जाये और दिक्कतें नज़र से इन पर ग़ौर किया जाये तो कुछ इल्मी हक़ाइक सामने आते हैं। तम्हीदी गुफ़्तगू में इनमें से बाज़ की तरफ़ इज्मालन इशारा मुनासिब मालूम होता है।

(1) कुरान : अल्लाह तआला का कलाम

सबसे पहली बात कि कुरान मजीद अल्लाह का कलाम है, खुद कुरान मजीद से साबित है। चुनाँचे सूरतुल तौबा की आयत 6 में अल्लाह तआला ने नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم से फ़रमाया:

“और अगर मुशरिकीन में से कोई शख्स पनाह माँग कर तुम्हारे पास आना चाहे (ताकि अल्लाह का कलाम सुने) तो उसे पनाह दे दो यहाँ तक कि वह अल्लाह का कलाम सुन ले, फिर उसे उसकी अमन की जगह तक पहुँचा दो।”

وَأِنْ أَحَدُ مِنَ الْمُشْرِكِينَ اسْتَجَارَكَ فَأَجِرْهُ
حَتَّى يَسْمَعَ كَلِمَ اللَّهِ ثُمَّ أَلْبِغْهُ مَأْمَنَهُ

जब सूरतुल तौबा की पहली छः आयत नाज़िल हुई, जिनमें से मुशरिकीने अरब को आखिरी अल्टीमेटम दे दिया गया कि अगर तुम ईमान न लाये तो चार माह की मुद्दत के ख़ात्मे के बाद तुम्हारा क़त्लेआम शुरू हो जायेगा, तो इस ज़िम्न में नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم को एक हिदायत यह भी दी गई कि यह अल्टीमेटम दिये जाने के बाद अगर मुशरिकीन में से कोई आप صلی اللہ علیہ وسلم की पनाह तलब करे तो वह आप صلی اللہ علیہ وسلم के पास आकर मुक़ीम हो और कलाम अल्लाह को सुने, जिस पर ईमान लाने की दावत दी जा रही है, फिर उसे उसकी अमन की जगह तक पहुँचा दिया जाये। यानि ऐसा नहीं होना चाहिए कि वहीँ उससे मुतालबा किया जाये कि फ़ैसला करो कि आया तुम ईमान लाते हो या नहीं। इस वक़्त मैंने इस आयत का हवाला सिर्फ़ “कलाम अल्लाह” के अल्फ़ाज़ के लिये शहादत के तौर पर दिया है।

कलाम इलाही : जुमला सिफ़ाते इलाहिया का मज़हर

कुरान मजीद के कलाम अल्लाह होने में ही इसकी असल अज़मत का राज़ मज़मूर है। इसलिये कि कलाम मुतकल्लिम की सिफ़त होता है और उसमें मुतकल्लिम की पूरी शख्सियत हवीदा होती है। चुनाँचे आप किसी भी शख्स का कलाम सुन कर अंदाज़ा कर सकते हैं कि उसके इल्म और फ़हम व शऊर की सतह क्या है। आ या वह तालीम याफ़ता इंसान है, महज़ब है, मुतमदन है या कोई उजड़ु गँवार है। इस ऐतबार से दरहक़ीक़त यह कलाम अल्लाह, अल्लाह तआला की जुमला सिफ़ात का मज़हर है, इसी हक़ीक़त को अल्लामा इक़बाल ने निहायत ख़ूबसूरत अंदाज़ में बयान किया:

फ़ाश गोयम आँच दर दिल मज़मूर अस्त
ई किताबे नीस्त, चीज़े दीगर अस्त
मिसल हक़ पिन्हाँ व हम पैदा सत ई!
ज़िन्दा व पाइन्दा व गोया सत ई!

(जो बात मेरे दिल में छुपी हुई है वह मैं साफ़-साफ़ कह देता हूँ कि यह (कुरान हकीम) किताब नहीं है, कोई और ही शय है। चुनाँचे यह हक़ तआला की ज़ात के मानिंद पोशीदा भी है और ज़ाहिर भी है। नेज़ यह हमेशा ज़िन्दा और बाक़ी रहने वाला भी है और यह कलाम भी करता है।)

मुख्तलिफ़ मफ़ाहीम व मायने के लिये इस शेर का हवाला दे दिया जाता है, लेकिन क़ाबिले ग़ौर बात यह है कि इसमें इसके “चीज़े दीगर” होने का कौनसा पहलू उजागर किया जा रहा है। इसमें दर हक़ीक़त सूरतुल हदीद के उस मुक़ाम की तरफ़ इशारा हो गया है कि: { هُوَ الْأَوَّلُ وَالْآخِرُ وَالظَّاهِرُ وَالْبَاطِنُ } (आयत 3) यानि अल्लाह तआला की शान यह है कि वह الاول भी है और الآخر भी, वह الظاهر भी है और الباطن भी। इसी तरह अल्लामा कहते हैं कि इस कुरान की भी यही शान है। नेज़ जिस तरह अल्लाह तआला की सिफ़त المحي़ القیوم (आयतल कुर्सी, सूरतुल बक्ररह) है इसी तरह यह कलाम भी ज़िन्दा व पाइन्दा है, हमेशा रहने वाला है। फिर यह सिर्फ़ कलाम नहीं, खुद मुतकल्लिम (बात करने वाला) है।

यहाँ कलाम और मुतकल्लिम के माबैन (दर्मियान) फर्क के हवाले से मुतकल्लमीन कि उस बहस की तरफ़ इशारा करना ज़रूरी मालूम होता है कि ज़ाते हक़ की सिफ़ात, ज़ात से अलैहदा और मुस्तज़ाद हैं या ऐन ज़ात? अल्लामा इक़बाल ने भी अपनी मशहूर नज़्म “इब्लीस की मजलिस-ए-शूरा” में इस बहस का ज़िक्र किया है:

हैं सिफ़ाते ज़ाते हक़, हक़ से जुदा या ऐन ज़ात?

उम्मत मरहूम की है किस अक़ीदे में निजात?

यह इल्मे कलाम का एक निहायत ही पेचीदा, ग़ामज़ और अमीक़ मसला है, जिस पर बड़ी बहसों हुई और बिलआख़िर मुतकल्लमीन का इस पर तक्ररीबन इज्माअ हुआ कि “عَلَىٰ وَلَا غَيْرُ” यानि अल्लाह की सिफ़ात को ना उसकी ज़ात का ऐन करार दिया जा सकता है ना उसका ग़ैर। अगर इस हवाले से ग़ौर करें तो कुरान हकीम भी, जो अल्लाह तआला की सिफ़त है, इसी के ज़ेल में आयेगा, यानि ना इसे अल्लाह का ग़ैर कहा जा सकता है ना उसका ऐन।

चुनाँचे इस हवाले से सूरतुल हथ्र की आयत 21 कुरान मजीद की फ़्री नफ़्सी अज़मत के ज़िम्न में अहम तरीन है:

“अगर हम इस कुरान को किसी पहाड़ पर उतार देते तो तुम देखते कि वह अल्लाह तआला की ख़शियत और ख़ौफ़ से दब जाता और फट जाता, और यह मिसालें हैं जो हम

لَوْ أَنزَلْنَاهُ هَذَا الْقُرْآنَ عَلَىٰ جَبَلٍ لَّرَأَيْنَهُ
خَاشِعًا مُّتَصَدِّعًا مِّنْ خَشْيَةِ اللَّهِ وَتِلْكَ

लोगों के लिये बयान करते हैं ताकि वह ग़ौर करें।”

الْأَمْثَالُ نَصْرُهَا لِلنَّاسِ لِأَعْلَاهُمْ
يَتَفَكَّرُونَ

इस तम्सील को सूरतुल आराफ़ की आयत 143 के हवाले से समझा जा सकता है जिसमें अल्लाह तआला की तलबी पर हज़रत मूसा अलै० के कोहे तूर पर हाज़िर होने का वाक़िया बयान हुआ है। यह वही तलबी थी जिसमें आप अलै० को तौरात अता की गयी। उस वक़्त अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा अलै० को मुखातबह व मुकालमह से सरफ़राज़ फ़रमाया तो उनकी आतिशे शौक़ कुछ और भड़की और उन्होंने फ़रमाइश करते हुए कहा

“ऐ परवरदिगार! मुझे अपना दीदार अता फ़रमा।”

رَبِّ ارِنِي أَنْظُرْ إِلَيْكَ

मुखातबह व मुकालमह के शर्फ़ से तूने मुझे मुशरफ़ फ़रमाया है, अब ज़रा मज़ीद करम फ़रमा। इस पर जवाब मिला:

“(मूसा) तुम मुझे हरगिज़ नहीं देख सकते!”

لَنْ تَرَانِي

“लेकिन ज़रा उस पहाड़ की तरफ़ देखो, मैं उस पर अपनी एक तजल्ली डालूँगा।”

وَلَكِنْ انْظُرْ إِلَى الْجَبَلِ

“चुनाँचे अगर वह पहाड़ अपनी जगह पर कायम रह जाये तो फिर तुम भी गुमान कर लेना कि तुम मुझे देख सकोगे।”

فَإِنْ اسْتَفْقَرْنَا مَكَانَهُ فَسَوْفَ تَرَانِي

“फिर जब अल्लाह तआला ने उस पहाड़ पर अपनी तजल्ली डाली तो वह “كُدَّ كُدَّ” (रेज़ा-रेज़ा) हो गया और मूसा अलै० बेहोश होकर गिर पड़े।”

فَلَمَّا تَجَلَّى رَبُّهُ لِلْجَبَلِ جَعَلَهُ دَكًّا وَخَرَّ مُوسَىٰ
صَعِقًا

यहाँ “كُدَّ” के दोनों तर्जुमे किये जा सकते हैं, यानि रेज़ा-रेज़ा हो जाना, टूट-फूट कर टुकड़े-टुकड़े हो जाना, या कूट-कूट कर किसी शय को हमवार कर देना, बराबर कर देना। जैसे सूरतुल फ़जर की आयत 21 { كَلَّا إِذَا دُكِّيَ الرُّضُ دَكًّا دَكًّا } में इन मायनों में वारिद हुआ है। वही लफ़ज़ यहाँ पहाड़ के बारे में आया है।

यानी वह पहाड़ रेज़ा-रेज़ा हो गया या दब गया, ज़मीन के साथ बैठ गया। मूसा अलै० ने अल्लाह तआला की यह तजल्ली देखी जो बिलवास्ता थी, यानी बराहे रास्त हज़रत मूसा अलै० पर नहीं बल्कि पहाड़ पर थी और हज़रत मूसा अलै० बिलवास्ता उसका नज़ारा कर रहे हैं थे, लेकिन खुद हज़रत मूसा अलै० की कैफ़ियत यह हुई कि

“हज़रत मूसा (अलै०) बेहोश होकर गिर पड़े।” وَخَرَّ مُوسَى صَعْفًا

यहाँ ज़ात व सिफ़ाते बारी तआला की बहस का एक अक़ीदा हल हो जाता है कि जैसे अल्लाह तआला ने अपनी ज़ात की तजल्ली पहाड़ पर डाली तो वह पहाड़ दब गया फट गया, रेज़ा-रेज़ा हो गया, इसी तरह कुरान मजीद के मुताल्लिक़ फ़रमाया:

لَوَ اَنزَلْنَاهُ الْفُرَّانَ عَلَى جَبَلٍ لَّرَاٰيْتَهُ خَاشِعًا مُّتَصَدِّعًا مِّنْ خَشْيَةِ اللّٰهِ

यानी कलाम अल्लाह की भी वही कैफ़ियत और तासीर है जो कैफ़ियत व तासीर तजल्लिये ज़ाते इलाही की है। इसलिये कि कुरान अल्लाह का कलाम और अल्लाह की सिफ़ात है। तो तजल्लिये सिफ़ात और तजल्लिये ज़ात में कोई फ़र्क़ नहीं।

अलबत्ता अल्लामा इक़बाल ने एक जगह इस बारे में ज़रा मुबालगा आराई से काम लिया। अल्लामा ने हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की मदद फ़रमाते हुए यह अल्फ़ाज़ इस्तेमाल किये:

मूसा ज़े होश रफ़त बैक जलवये सिफ़ात
तो ऐने ज़ात मी नगरी व तबस्समी!

अल्लामा हज़रत मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم का हज़रत मूसा अलै० से तक्राबुल कर रहे हैं कि वह तो तजल्लिये सिफ़ात के बिलवास्ता नज़ारे ही से बेहोश होकर गिर गये, लेकिन ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم! आपने ऐने ज़ात का दीदार किया और तबस्सुम की कैफ़ियत में किया। इसमें दो ऐतबारत से मुग़ालता पाया जाता है। अब्बल तो वह तजल्ली, तजल्लिये सिफ़ात नहीं तजल्लिये ज़ात थी जो हज़रत मूसा अलै० की फ़रमाईश पर अल्लाह तआला ने पहाड़ पर डाली। जैसा कि कुरान मजीद में है: {فَلَمَّا تَخَلَّى رَبُّهُ لِلْجَبَلِ} गोया यहाँ अल्लाह तआला के लिये यह लफ़ज़ इस्तेमाल हुआ है कि वह खुद तजल्ली हुआ। दूसरे यह कि यह ख्याल भी मुख्तलिफ़ फ़ेह है कि नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم ने शबे मेराज में ज़ाते

इलाही का मुशाहदा किया। अगरचे हमारे असलाफ़ में यह राय भी है कि आप صلی اللہ علیہ وسلم ने अल्लाह तआला को देखा है, लेकिन अकसर व बेशतर की राय इसके बरअक्स है, इसलिये कि वहाँ भी “आयात” का ज़िक्र है। जैसा कि सूरतुल नज्म (आयत:21) में आया: {لَقَدْ رَأَىٰ مِنْ آيَاتِ رَبِّهِ الْكُبْرَىٰ} इसमें कोई शक़ नहीं कि वह आयात, जो वहाँ हुज़ूर नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم ने देखी, अल्लाह तआला की अज़ीम-तरीन आयात में से हैं।

“उस वक़्त बेरी पर छा रहा था जो कुछ कि
छा रहा था। निगाह ना चुन्धियाई और ना
हद से मुतजाविज़ हुई। और उसने अपने रब
की बड़ी-बड़ी निशानियाँ देखी।” اِذْ يَخْشَى السِّدْرَةَ مَا يَغْشَى ۝ مَا زَاغَ
الْبَصَرُ وَمَا طَغَى ۝ لَقَدْ رَأَىٰ مِنْ آيَاتِ رَبِّهِ
الْكُبْرَى ۝

अब उससे ज़्यादा बड़ी आयात और उससे ज़्यादा बड़ी तजल्लिये इलाही और कहाँ होगी? लेकिन दोनों ऐतबार से इस शेर में मुबालगा है। अलबत्ता इस आयते मुबारका के हवाले से अल्लामा के इस शेर

मिसले हक़ पिन्हाँ व हम पैदा सत ई!
ज़िन्दा व पाइन्दा व गोया सत ई!

में मेरे नज़दीक़ क़तअन कोई मुबालगा नहीं है। और इस आयत मुबारका के हवाले से वह बात कही जा सकती है जो अल्लामा इक़बाल ने इस शेर में कही है।

तौरात की गवाही

अब ज़रा कुरान मजीद के कलामुल्लाह होने के हवाले से एक और बात ज़हननशीन कर लीजिये। तौरात में किताबे इस्तस्ना या सफ़रे इस्तस्ना जो सुहुफ़े मूसा में से एक सहीफ़ा है, के अट्टारहवें बाब में नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم के लिये जो पेशनगोई बयान की गयी है उसमें अल्फ़ाज़ यहीं है कि:

“मैं उनके भाईयों में से उनके लिये तेरी मानिंद एक नबी बरपा करूँगा
और उसके मुँह में अपना कलाम डालूँगा और वह उनसे वही कुछ
कहेगा जो मैं उससे कहूँगा।”

मैंने यहाँ ख़ास तौर पर उन अल्फ़ाज़ का हवाला दिया है कि “मैं उसके मुँह में अपना कलाम डालूँगा।” यहाँ एक तो लफ़ज़ कलाम आया है जैसे कि कुरान हकीम की इस आयत में आया {حَتَّىٰ يَسْمَعَ كَلَمَ اللّٰهِ} फिर “कलाम मुँह में

डालना” के हवाले से कुरान मजीद में एक लफ़्ज़ दो मर्तबा आया है, वह लफ़्ज़ “क्रौल” है, यानी कुरान को क्रौल करार दिया गया है।

सूरतुल हाक्का में है:

إِنَّهٗ لَقَوْلُ رَسُوْلٍ كَرِيْمٍ ۝ وَمَا هُوَ بِقَوْلِ شَاعِرٍ قَلِيْلًا مَّا تُؤْمِنُوْنَ ۝ وَلَا بِقَوْلِ كَاهِنٍ قَلِيْلًا مَّا تَذَكَّرُوْنَ ۝

और सूरतुल तकवीर में यह अल्फ़ाज़ वारिद हुए हैं:

إِنَّهٗ لَقَوْلُ رَسُوْلٍ كَرِيْمٍ ۝ ذِي قُوَّةٍ عِنْدَ ذِي الْعَرْشِ مَكِيْنٍ ۝ مُطَاعٍ ثَمَّ أَمِيْنٍ ۝ وَمَا صَاحِبُكُمْ بِمَجْنُوْنٍ ۝

और इसी सूरह में आगे चलकर आया:

وَمَا هُوَ بِقَوْلِ شَيْطٰنٍ رَّجِيْمٍ ۝

क्राविले तबज्जोह अम्र यह है कि इन दो मक़ामात में से मौअक्खर अज़ज़िक्र के मुताल्लिक़ तक्ररीबन इजमाअ है कि यहाँ हज़रत जिब्राईल अलै० मुराद हैं। गोया कुरान को उनका क्रौल करार दिया गया। और सूरतुल हाक्का में इसे नबी ﷺ का क्रौल करार दिया जा रहा है। अब ज़ाहिर है यहाँ जिन चीजों की नफ़ी की जा रही है कि “यह किसी शायर का क्रौल नहीं” और “यह किसी काहिन का क्रौल नहीं” इनसे यक़ीनन रसूल करीम ﷺ मुराद हैं। यूँ समझिये कि अल्लाह का कलाम पहले हज़रत जिब्राईल अलै० पर नाज़िल हुआ। अगर मैं किताबे इस्तस्ना के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल करूँ तो यहाँ “अल्लाह ने अपना कलाम उनके मुँह में डाला।” ताहम “उनके मुँह” का हम कोई तसव्वुर नहीं कर सकते, वह निहायत जलीलो क़द्र फ़रिश्ते हैं। बहरहाल क्रौल का लफ़्ज़ कुरान मजीद के लिये इस्तेमाल हुआ है जिससे ज़ाहिर है कि इब्तदाअन कलामे इलाही हज़रत जिब्रील अलै० के क्रौल की शक़ल में उतरा और फिर हज़रत जिब्रील अलै० के ज़रिये से हज़रत मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के मुँह में डाला गया, और वहाँ से यह क्रौले मुहम्मद ﷺ की सूरत में लोगों के सामने आया, इसलिये कि यह आप ﷺ ही की ज़बाने मुबारक से अदा हुआ, लोगों ने उसे सिर्फ़ आप ही के ज़बाने मुबारक से सुना। गोया यह क्रौल, क्रौले शायर नहीं, यह क्रौले काहिन नहीं, यह क्रौले शैतान रजीम नहीं, बल्कि यह क्रौले रसूले करीम है और रसूले करीम अव्वलन मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ

हैं, यह लोगों के सामने उनके क्रौल की हैसियत से आया है। फिर सनियन (दूसरे) यह हज़रत जिब्राईल अलै० का क्रौल है, इसलिये कि उन्होंने यह क्रौल हुज़ूर ﷺ को पहुँचाया। और इसको आखिरी दर्जे तक पहुँचाने पर यह अल्लाह का कलाम है जिसके मुताल्लिक़ तौरात में अल्फ़ाज़ आये हैं कि “मैं उसके मुँह में अपना कलाम डालूँगा।”

लौहे महफूज़ और मुसहफ़ में मुताबक़त

कलाम होने के हवाले से तीसरी बात यह नोट कीजिये कि कलाम अल्लाह की सिफ़त है और अल्लाह की सिफ़ात क़दीम (प्राचीन) है। अल्लाह की ज़ात की तरह उसकी सिफ़ात का भी यही मामला है। ज़ाहिर है कि अल्लाह तआला माहियत (पदार्थवादी) और जिस्मानियत (भौतिक उपस्थिति) से मा वरा है। यही मामला अल्लाह की सिफ़ात का भी है चुनाँचे कलाम अल्लाह, जिसे हफ़्रोँ सूत की महदूदियत (परिसीमाओं) से आला व अरफ़ा ख़याल किया जाता है, उसे अल्लाह तआला ने इंसानों की हिदायत के लिये हरूफ़ व असवात का जामा (लिबास) पहनाया और सय्यदुल मुर्सलीन ﷺ के क़ल्बे मुबारक पर बतरीक़े तन्ज़ील नाज़िल फ़रमाया। यही कलाम लौहे महफूज़ में अल्लाह के पास मंदर्ज (लिखा हुआ महफूज़ है) है जिसे उम्मुल किताब या किताबे मकनून भी कहा गया है। हमारे पास मौजूद कुरान मजीद या मुसहफ़ की इबारत बैन ही (बिल्कुल) वही है जो लौहे महफूज़ या उम्मुल किताब में है, बिल्कुल उसी तरह जैसे किसी दस्तावेज़ की मस्दक़ह नक़ल (xerox copy) हो, जो बग़ैर किसी शोशे के फ़र्क़ के असल के मुताबिक़ हो। चुनाँचे सूरतुल बुरूज में फ़रमाया:

بَلْ هُوَ قُرْآنٌ مَّجِيْدٌ ۝ فِيْ لَوْحٍ مَّحْفُوْطٍ ۝
यह कुरान निहायत बुज़ुर्ग व बरतर है और यह लौहे महफूज़ में है।

इसी के मुताल्लिक़ सूरतुल वाक़िया में इर्शाद फ़रमाया गया:

إِنَّهٗ لَقُرْآنٌ كَرِيْمٌ ۝ فِيْ كِتٰبٍ مَّكْنُوْنٍ ۝
बाइज़ज़त, और एक ऐसी किताब है जो छुपी हुई है। जिसे छुपी ही नहीं सकते मगर वही जो बहुत ही पाक कर दिए गए हैं।

यानी मलाइका मुकर्रबीन, जिनके बारे में एक और मक़ाम पर फ़रमाया गया:

“यह ऐसे सहीफों में दर्ज है जो मुकर्रम हैं, فِي صُفْهِ مُكْرَمَةٍ ۝ مَرْفُوعَةٍ مُطَهَّرَةٍ ۝
बुलंद मर्तबा है, पाकीज़ा है, मौअज़ज़ और
नेक कातिबों के हाथों में रहते हैं।” بِأَيْدِي سَفَرَةٍ ۝ كِرَامٍ بَرَرَةٍ ۝
(सूरह अ'बसा)

दर हक़ीकत यह किताब मकनून उन फरिश्तों के पास है, वह तुम्हारी रसाई (पहुँच) से बर्द व मा वरा (बहुत दूर) है।
यही बात सूरतुल जुख़रफ में कही गयी है:

“यह तो दर हक़ीकत असल किताब में हमारे وَإِنَّ فِيْ اُولٰٓئِكَ لَآيٰتًا لِّعَلِّكُمْ
पास महफूज़ है, बड़ी बुलंद मर्तबा और
हिकमत से लबरेज़ (भरी हुई है)।” (आयत:4)

ا'म का लफ़ज़ जड़ और बुनियाद के लिये आता है। इसलिये माँ के लिये भी अरबी में लफ़ज़ “ا'م” इस्तेमाल होता है, क्योंकि इसी के बतन से औलाद की विलादत होती है, वह गोया कि बमंज़िले असास है। चुनाँचे इस किताब की असल असास लौहे महफूज़ में है, किताबे मकनून में है। मज़ीद वज़ाहत कर दी गई कि “لَدُنَّا” यानि वह उम्मुल किताब जो हमारे पास है, उसमें यह कुरान दर्ज है। “لَعَلَّكُمْ” इस कुरान की सिफ़ात यह है कि वह बहुत बुलंद व बाला और हिकमत वाला है, मुस्तहकम है। वह अल्लाह का कलाम और निहायत महफूज़ किताब है। इसे लौहे महफूज़ कहें, किताबे मकनून कहें या उम्मुल किताब कहें, असल कलाम वहाँ है--- उसी आलम-ए-ग़ैब में, उसी आलम-ए-अम्र में--- जिसे सिवाये उन पाक-बाज़ फ़रिश्तों के जिनकी रसाई लौहे महफूज़ तक हो, कोई मस्स (छू) नहीं कर सकता, यानि इस लौहे महफूज़ के मज़ामीन पर मुत्तेलह नहीं हो सकता। अलबत्ता अल्लाह तआला ने इंसानों की हिदायत के लिये मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर अपने इस कलाम की तन्ज़ील फ़रमाई और इसकी इबारत को ता-क़यामे क़यामत तक मुसाहफ़ में महफूज़ फ़रमा दिया और नापाक हाथों से छूने पर मना फ़रमा दिया।

कलामे इलाही की तीन सूरतें

जब मैंने अर्ज़ किया कि कुरान अल्लाह का कलाम है तो यहाँ सवाल पैदा होता है कि अल्लाह तआला इंसान से किस तरह हमकलाम होता है! कुरान मजीद में इसकी तीन शक़्लें बयान हुई हैं।

“किसी बशर का यह मक़ाम नहीं है कि وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ أَنْ يَكُلِمَهُ اللَّهُ إِلَّا وَحْيًا أَوْ
अल्लाह उससे रू-ब-रू बात करे। उसकी बात مِنْ وَرَآئِ حِجَابٍ أَوْ يُرْسِلَ رَسُولًا فَيُوحِيَ
या तो वही (इशारे) के तौर पर होती है, या بِأَذْنِهِ مَا يَشَاءُ إِنَّهُ عَلَىٰ حَكِيمٍ
पर्दे के पीछे से, या फिर वह कोई पैगम्बर ۝
(फ़रिश्ता) भेजता है और वह उसके हुक्म से ۝
जो कुछ वह चाहता है वही करता है। यक़ीनन ۝
वह बरतर और साहिबे हिकमत है।”
(सूरतुल शौरा)

नोट करने की बात यह है कि यह नहीं फ़रमाया कि अल्लाह के लिये यह मुमकिन नहीं है, अल्लाह तो हर शय पर क़ादिर है, वह जो चाहता है कर सकता है, अल्लाह की कुदरत से कोई चीज़ बर्द (दूर) नहीं है, बल्कि कहा कि इंसान का यह मक़ाम नहीं है कि अल्लाह उससे बराबरे रास्त कलाम करे, किसी बशर का यह मर्तबा नहीं है कि अल्लाह उससे कलाम करे, सिवाये तीन सूरतों के, या तो वही यानि मख़फ़ी इशारे के ज़रिये से, या पर्दे के पीछे से, या वह किसी रसूल (रसूले मलक) को भेजता है जो वही करता है अल्लाह के हुक्म से जो अल्लाह चाहता है।

अब कलामे इलाही की मज़कूरा तीन शक़्लें हमारे सामने आई हैं। इनमें से दो के लिये लफ़ज़ वही आया है। दरमियान में एक शक़्ल “مِنْ وَرَآئِ حِجَابٍ” बयान हुई है। इसका तज़करा सूरतुल आराफ़ की आयत 143 के ज़ैल में हो चुका है। और यह तो अम्र वाक़िया है ही कि हज़रत मूसा अलै० से अल्लाह तआला ने मुताददिद (कई) मौक़ों पर इस सूरत में कलाम फ़रमाया।

पहली मर्तबा हज़रत मूसा अलै० जब आग की तलाश में कोहे तूर पर पहुँचे तो वहाँ मुखातबा हुआ। यह मुखातबा और मुकालमा-ए-इलाही (बात-चीत) हज़रत मूसा अलै० के साथ “مِنْ وَرَآئِ حِجَابٍ” हुआ था, इसी लिये तो वह आतिशे शौक़ भड़की थी कि:

क्या क़यामत है कि चिलमन से लगे बैठे हैं
साफ़ छुपते भी नहीं, सामने आते भी नहीं!

ज़ाहिर है कि जब हम कलाम होने का शर्फ़ हासिल हो रहा है तो एक क़दम और बाकी है कि मुझे दीदार भी अता हो जाए, लेकिन यह मुखातबा صلى الله عليه وسلم था। नबी अकरम صلى الله عليه وسلم से यही मुखातबा शबे मेराज में पर्दे के पीछे से हुआ। बाज़ हज़रात की राय है कि हुज़ूर صلى الله عليه وسلم को अल्लाह तआला (यानि ज़ाते इलाही) का दीदार हासिल हुआ, लेकिन मेरी राय सलफ़ में से उन हज़रात के साथ है जो इसके कायल नहीं हैं। उनमें हज़रत आयशा सिद्दीका (रज़ि०) बड़ी अहमियत कि हामिल हैं, उन्होंने हुज़ूर صلى الله عليه وسلم से लाज़िमन इन चीज़ों के बारे में इस्तफ़सार किया (पूछा) होगा, चुनाँचे उनकी बात के मुताल्लिक तो हम यक़ीन के दर्जे में कह सकते हैं कि वह मुहम्मद रसूल صلى الله عليه وسلم से मरफ़ूअ है। हज़रत आयशा (रज़ि०) बयान करती हैं कि “نُورُ اللَّهِ يُرَى” यानि अल्लाह तो नूर है, उसे कैसे देखा जा सकता है? (मुस्लिम, किताबुल ईमान, अन अबु ज़र (रज़ि०) नूर तो दूसरी चीज़ों को देखने का ज़रिया बनता है, नूर खुद कैसे देखा जा सकता है! बहरहाल मेरी राय यह कि यह गुफ़्तगू भी صلى الله عليه وسلم थी। वह वराये हिजाब (पर्दे के पीछे से) गुफ़्तगू जो हज़रत मूसा अलै० को कोहे तूर पर मकालमा व मुखातबा में नसीब हुई, उस वराये हिजाब मुलाक़ात और गुफ़्तगू (बात-चीत) से अल्लाह तआला ने मुहम्मद रसूल अल्लाह صلى الله عليه وسلم को शबे मेराज में “عِنْدَ سِدْرَةِ الْمُنْتَهَى” मुशरफ़ फ़रमाया।

अलबत्ता वही बराहे रास्त भी है, यानि बग़ैर फ़रिश्ते के वास्ते के। दूसरी क्रिस्म की वही फ़रिश्ते के ज़रिये से है और कुरान मजीद से जिस बात की तरफ़ ज़्यादा रहनुमाई मिलती है वह यह है कि कुरान वही है बवास्ता “मलक”। जैसे कुरान मजीद में है:

“إِذْ يُلَاقِيكَ الرُّوحُ الْأَمِينُ ۖ عَلَى قَلْبِكَ... ” (अल् शूराअ:194)

और

“पस इसे जिब्रील ने ही आपके क़ल्ब पर नाज़िल किया।” (अल् बक्ररह:97)

فَإِنَّهُ نَزَّلَهُ عَلَى قَلْبِكَ

अलबत्ता फ़रिश्ते के बग़ैर वही, यानि दिल में किसी बात का अल्लाह तआला की तरफ़ से बराहे रास्त (सीधा) डाल दिया जाना, यानि “इल्हाम” का ज़िक्र भी हुज़ूर صلى الله عليه وسلم ने किया है और इसके लिये हदीस में “كَفَتْ فِي الرُّوحِ” के अल्फ़ाज़ भी आये हैं। यानि किसी ने दिल में कोई बात डाल दी, किसी ने फूँक मार दी बग़ैर इसके कि कोई आवाज़ सुनने में आई हो। एक कैफ़ियत सिलसिलातुल जर्स की भी थी। हुज़ूर صلى الله عليه وسلم को घंटियों की सी आवाज़ आती थी और उसके बाद हुज़ूर صلى الله عليه وسلم के क़ल्बे मुबारक पर वही नाज़िल हो जाती थी।

बहरहाल यक़ीन के साथ तो मैं नहीं कह सकता, लेकिन मेरा गुमाने ग़ालिब है कि दूसरी क्रिस्म की वही (बज़रिये फ़रिश्ता) पर पूरे का पूरा कुरान मुशतमिल है। और वही बराहे रास्त यानि “القاء” तो दर हक़ीक़त वही ख़फी है, जिसकी वज़ाहत अंग्रेज़ी के दो अल्फ़ाज़ के दरमियान फ़र्क से बख़ूबी हो जाती है। एक लफ़ज़ है inspiration और दूसरा revelation, जिसके साथ एक और लफ़ज़ verbal revelation भी अहम है। Inspiration में एक मफ़हूम, एक ख़याल या तसव्वुर इंसान के ज़हन व क़ल्ब में आ जाता है, जबकि revelation बाक़ायदा किसी चीज़ के किसी पर reveal किये जाने को कहते हैं। और इसमें भी ईसाईयों के यहाँ एक बड़ी साजिश चल रही है। वह revelation को मानते हैं लेकिन verbal revelation को नहीं मानते, बल्कि उनके नज़दीक सिर्फ़ मफ़हूम ही अम्बिया के कुलूब पर नाज़िल किया जाता था, जिसे वह अपने अल्फ़ाज़ में अदा करते थे। जबकि हमारे यहाँ इस बारे में मुस्तक़िल इज़माई (हमेशा से पूरी उम्मत का) अक़ीदा है कि यह अल्लाह का कलाम है जो मुहम्मद रसूल अल्लाह صلى الله عليه وسلم पर नाज़िल हुआ। यह लफ़ज़न भी वही है और मायनन भी, लफ़ज़न भी अल्लाह का कलाम है और मायनन भी, यानि यह verbal revelation है।

इस ज़िमन (बारे) में एक दिलचस्प वाक़िया लाहौर ही में ग़ालिबन एफ० सी० कॉलेज के प्रिंसिपल और अल्लामा इक़बाल के दरमियान पेश आया था। वह दोनों किसी दावत में इकट्ठे थे कि उन साहब ने हज़रते अल्लामा से कहा कि मैंने सुना है कि आप भी verbal revelation के कायल हैं! इस पर अल्लामा ने उस वक़्त जो जवाब दिया वह उनकी ज़हानत पर दलालत करता (सबूत देता) है। उन्होंने कहा कि जी हाँ, मैं verbal revelation को न सिर्फ़ मानता हूँ, बल्कि मुझे तो इसका ज़ाति तजुर्बा हासिल है। चुनाँचे खुद मुझ पर जब शेर नाज़िल होते हैं तो वह अल्फ़ाज़ के जामे में ढले हुए आते हैं, मैं कोई

लफ़ज़ बदलना चाहूँ तो भी नहीं बदल सकता, मालूम होता है कि वह मेरी अपनी तख़्वीक़ नहीं हैं बल्कि मुझ पर नाज़िल किये जाते हैं। तो यह दर हकीक़त किसी को जवाब देने का वह अंदाज़ है जिसको अरबी में “الاجوبة المسكتة” यानि चुप करा देने वाला जवाब कहा जाता है। यह वह जवाब है जिसके बाद फ़रीक़ सानी के लिये किसी कैल व क़ाल का मौका ही नहीं रहता।

बहरहाल कलामे इलाही वाक़िअतन verbal revelation है जिसने अब्बलन क़ौले जिब्रील की शक़ल इख़्तियार की। हज़रत जिब्रील अलै० के जरिये क़ौल की शक़ल में नाज़िल हुआ। और फिर ज़बाने मुहम्मदी ﷺ की शक़ल में अदा हुआ। तो यह दर हकीक़त revelation है, inspiration नहीं, और महज़ revelation भी नहीं बल्कि verbal revelation है, यानि मायने, मफ़हूम और अल्फ़ाज़ सबके सब अल्लाह तआला की तरफ़ से हैं और यह बहैसियत-ए-मजमूई (पूरे का पूरा) अल्लाह का कलाम है।

(2) कुरान का रसूल अल्लाह ﷺ पर नुज़ूल

कुरान मजीद के मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर नुज़ूल के ज़िम्न (बारे) में भी चन्द बातें नोट कर लें। पहली बहस तो “नुज़ूल” की लम्बी बहस से मुताल्लिक़ है। यह लफ़ज़ نَزَلَ सलासी मुजरद में भी आता है। तब यह फ़ेअल लाज़िम होता है, यानि “खुद उतरना।” कुरान मजीद के लिये इन मायनों में यह लफ़ज़ कुरान में मुताददिद (कई) बार आया है। मसलन:

“हमने इस कुरान को हक़ के साथ नाज़िल किया है और यह हक़ के साथ नाज़िल हुआ है।” (बनी इस्राइल:105)

यहाँ यह फ़ेअल लाज़िम आ रहा है, यानि नाज़िल हुआ। आम तौर पर फ़ेअल लाज़िम को मुताददी बनाने के लिये इस फ़ेअल के साथ किसी सिला (preposition) का इज़ाफ़ा किया जाता है। चुनाँचे यह फ़ेअल نَزَلَ “بِ” के साथ मुताददी होकर भी कुरान मजीद में आया है, बमायने उसने उतारा, जैसे جاء “वह आया” से جاء “वह लाया।” मसलन:

نَزَلَ بِهِ الرُّوحُ الْأَمِينُ ﴿١٦٦﴾ عَلَى قَلْبِكَ...
“रूहुल अमीन (जिब्रील) ने इस कुरान को उतारा है मुहम्मद ﷺ के क़ल्बे मुबारक पर।” (अश शौअरा)

नुज़ूले कुरान की दो कैफ़ियतें : इन्ज़ाल और तन्ज़ील

सलासी मज़ीद फ़ीह के दो अबवाब यानि बाबे इफ़आल और बाबे तफ़ईल से यह लफ़ज़ कुरान मजीद में बकसरत इस्तेमाल हुआ है। दोनों अबवाब से यह फ़ेअल मुमताददी के तौर पर बमायने “उतारना” इस्तेमाल होता है, यानि نَزَلَ और نَزَّلَ। इन दोनों के माबैन फ़र्क़ यह है कि बाबे इफ़आल में कोई फ़ेअल दफ़तन और एकदम कर देने के मायने होते हैं जबकि बाबे तफ़ईल में वही फ़ेअल तदरीजन, अहतमाम, तवज्जोह और मेहनत के साथ करने के मायने होते हैं। इन दोनों के माबैन फ़र्क़ को “ईलाम” और “तालीम” के मायने के फ़र्क़ के हवाले से बहुत ही नुमाया तौर पर और ज़ामियत के साथ समझा जा सकता है। “إعلام” के मायने हैं बता देना। यानि आपने कोई चीज़ पूछी तो जवाब दे दिया गया। चुनाँचे “Information Office” को अरबी में “मकतबुल ईलाम” कहा जाता है। जबकि “तालीम” के मायने ज़हन नशीन कराना और थोड़ा-थोड़ा करके बताना है। यानि पहले एक बात समझा देना, फिर दूसरी बात उसके बाद बताना और इस तरह दर्जा-ब-दर्जा मुखातब के फ़हम की सतह बुलंद से बुलंदतर करना।

अगरचे कुरान मजीद के लिये लफ़ज़ “इन्ज़ाल” और उससे मुशतक़ मुख़्तलिफ़ अल्फ़ाज़ इस्तेमाल हुए हैं, लेकिन बकसरत (ज़्यादातर) लफ़ज़ “तन्ज़ील” इस्तेमाल हुआ है। कुरान मजीद की असल शान तन्ज़ीली शान है, यानि यह कि इसको तदरीजन, रफ़ता-रफ़ता, थोड़ा-थोड़ा और नजमन-नजमन नाज़िल किया गया। चुनाँचे कुरान मजीद के हुज़ूर ﷺ पर नुज़ूल के लिये सहीतर और ज़्यादा मुस्तमिल लफ़ज़ कुरान हकीम में तन्ज़ील है, ताहम दो मक़ामात पर “لَيْلَةُ الْقَدْرِ” और “لَيْلَةُ مُبَارَكَةٍ” के साथ इन्ज़ाल का लफ़ज़ आया है। फ़रमाया: {إِنَّا أَنْزَلْنَاهُ فِي لَيْلَةِ الْقَدْرِ} (अल् क़द्र:1) और: {إِنَّا أَنْزَلْنَاهُ فِي لَيْلَةِ مُبَارَكَةٍ} (अल् बक्ररह:185) में भी लफ़ज़ “इन्ज़ाल” इस्तेमाल हुआ है। फिर हुज़ूर ﷺ पर नुज़ूल के लिये भी

कहीं-कहीं लफ़्ज़ “इन्ज़ाल” आया है, अगरचे अकसर व बेशतर लफ़्ज़ “तन्ज़ील” ही आया है। इसकी तक्ररीबन मज्मुआ अलय तावील यह है कि पूरा कुरान दफ़्फ़तन लौहे महफूज़ से समाये दुनिया तक लैललतुल क़द्र में नाज़िल कर दिया गया, जिसे “लैलाह मुबारका” भी कहा गया है जो कि रमज़ानुल मुबारक की एक रात है। लिहाज़ा जब रमज़ानुल मुबारक की लैललतुल क़द्र या लैलाह मुबारक में कुरान के नुज़ूल का ज़िक्र हुआ तो लफ़्ज़ इन्ज़ाल इस्तेमाल हुआ। कुरान मजीद समाये दुनिया पर एक ही बार मुकम्मल पूरे तौर पर नाज़िल होने के बाद वहाँ से तदरीजन और थोड़ा-थोड़ा करके मुहम्मद रसूल ﷺ पर नाज़िल हुआ। लिहाज़ा हुज़ूर ﷺ पर नुज़ूल के लिये अकसर व बेशतर लफ़्ज़ तन्ज़ील इस्तेमाल हुआ है।

लफ़्ज़ तन्ज़ील के (ज़िम्न) बारे में सूरतुल निशा की आयत 136 निहायत अहम है। इर्शाद हुआ:

“ऐ ईमान वालो! ईमान लाओ (जैसा कि ईमान लाने का हक़ है) अल्लाह पर और उसके रसूल पर और उस किताब पर भी जो उसने अपने रसूल ﷺ पर नाज़िल फ़रमाई और उस किताब पर भी जो उसने पहले नाज़िल की।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا آمِنُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ
وَالْكِتَابِ الَّذِي نَزَّلَ عَلَى رَسُولِهِ وَالْكِتَابِ
الَّذِي أُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ

तौरात तख़्तियों पर लिखी हुई, मकतूब शक़ल में हज़रत मूसा अलै० को दी गई थी। वह चूँकि दफ़्फ़तन और जुमलतन वाहिदतन (एक बार में पूरी) दे दी गई, इसलिये इसके लिये लफ़्ज़ इन्ज़ाल आया है, जबकि कुरान थोड़ा-थोड़ा करके बाइस-तेईस बरस में नाज़िल हुआ। लिहाज़ा इसी के ज़िम्न में लफ़्ज़ “नज़़ला” इस्तमाल हुआ। चुनाँचे ऊपर वाली आयत हैं “तन्ज़ील” और “इन्ज़ाल” एक-दूसरे के बिल्कुल मुक़ाबले में आये हैं। गोया यहाँ “تُغْرَفُ الْأَشْيَاءُ بِأَضْدَادِهَا” (चीज़ें अपनी अज़्दाद से पहचानी जाती हैं) का उसूल दुरुस्त बैठता है।

हिकमते तन्ज़ील

अब हम यह जानने कि कोशिश करते हैं कि तन्ज़ील की हिकमत क्या है? यह थोड़ा-थोड़ा करके क्यों नाज़िल किया गया और एक ही बार क्यों ना नाज़िल कर दिया गया? कुरान मजीद में इसकी दो हिकमतें बयान हुई हैं।

एक तो यह कि लोग शायद इसका तहम्मूल (बरदाशत) ना कर सकते। चुनाँचे लोगों के तहम्मूल की खातिर थोड़ा-थोड़ा करके नाज़िल किया गया ताकि वह इसको अच्छी तरह समझें, इस पर गौर करें और इसे हरज़े जान बनाएँ और इसी के मुताबिक़ उनके ज़हन व फ़िक्र की सतह बुलंद हो। यह हिकमत सूरह बनी इस्राइल की आयत 106 में बयान की गई है:

“और हमने कुरान को टुकड़ों-टुकड़ों में मुन्क़सिम कर दिया ताकि आप थोड़ा-थोड़ा करके और वक़्फे-वक़्फे से लोगों को सुनाते रहें और हमने इसे तदरीज उतारा।”

इस हिकमत को समझने के लिये बारिश की मिसाल मुलाहिज़ा कीजिये। बारिश अगर एकदम बहुत मूसलाधार हो तो उसमें वह बरकात नहीं होती जो थोड़ी-थोड़ी और तदरीजन होने वाली बारिश में होती है। बारिश अगर तदरीजन हो तो ज़मीन के अंदर ज़ब्व होती चली जायेगी, लेकिन अगर मूसलाधार बारिश हो रही हो तो उसका अकसर व बेशतर हिस्सा बहता चला जायेगा। यही मामला कुरान मजीद के इन्ज़ाल व तन्ज़ील का है। इसमें लोगों की मसलहत है कि कुरान उनके फ़हम में, उनके बातिन में, उनकी शख़्सियतों में तदरीजन सरायत करता चला जाये। सरायत के हवाले से मुझे फिर अल्लामा इक़बाल का शेर याद आया है:

चूँ बजाँ दर रफ़त जाँ दीगर शूद
जान चूँ दीगर शद जहाँ दीगर शूद!

“(यह कुरान) जब किसी के बातिन में सराहत कर जाता है तो उसके अंदर एक इन्क़लाब बरपा हो जाता है, और जब किसी के अंदर की दुनिया बदल जाती है तो उसके लिये पूरी दुनिया ही इन्क़लाब की ज़द में आ जाती है!”

तो जब यह कुरान किसी के अंदर इस तरह उतर जाता है जैसे बारिश का पानी ज़मीन में ज़ब्व होता है तो उसकी शख़्सियत में सराहत कर जाता है

और उसके सराहत करने के लिये उसका तदरीजन थोड़ा-थोड़ा नाज़िल किया जाना ही हिकमत पर बनी है। लेकिन इससे भी ज़्यादा अहम बात सूरतुल फुरक़ान में कही गयी है, इसलिये कि वहाँ कुफ़्रारे मक्का बिल् खुसूस सरदाराने कुरैश का बाकायदा एक ऐतराज़ नक़ल हुआ है। फ़रमाया:

“मुन्करीन कहते हैं: इस शख्स पर सारा कुरान एक ही वक़्त में क्यों न उतार दिया गया? हाँ ऐसा इसलिये किया गया है कि इसको हम अच्छी तरह आप (ﷺ) के ज़हेननशीन करते रहें और इसको हमने बगरज़े तरतील थोड़ा-थोड़ा करके उतारा है। और (इसमें यह मस्लिहत भी है कि) जब कभी वह आपके सामने कोई निराली बात (या अजीब सवाल) लेकर आये, उसका ठीक जवाब बर वक़्त हमने आपको दे दिया और बेहतरीन तरीके से बात खोल दी।”

ऐतराज़ यह था कि यह पूरा कुरान एकदम, एक बारगी क्यों नहीं नाज़िल दर दिया गया? इस ऐतराज़ में जो वज़न था, पहले इसको समझ लिजिये। उन्होंने जो बात की दर हकीकत उससे मुराद यह थी कि जैसे हमारा एक शायर दफ़्तन पूरा दीवान लोगों को फ़राहम नहीं कर देता, बल्कि वह एक ग़ज़ल कहता है, क़सीदा कहता है, फिर मज़ीद मेहनत करता है, फिर कुछ और तबा आज़माई करता है, फिर कुछ और कहता है, इस तरह तदरीजन दीवान बन जाता है, इसी तरीके से मुहम्मद (ﷺ) कर रहे हैं। अगर यह अल्लाह का कलाम होता तो पूरा का पूरा एकदम नाज़िल हो सकता था। यह तो दर हकीकत इंसान की कैफ़ियत है कि पूरी किताब दफ़्तन produce नहीं कर देता। पूरा दीवान तो किसी शायर ने एक दिन के अंदर नहीं कहा बल्कि उसे वक़्त लगता है, वह मुसलसल मेहनत करता है, कुछ तकल्लुफ़ भी करता है, कभी आमद भी हो जाती है, लेकिन वह कलाम दीवान की शक़ल में तदरीजन मदव्वन होता है। तो यह तो इसी तरह की चीज़ है।

“क्यों नहीं यह कुरान इस पर एकदम नाज़िल हो गया?”

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لَوْلَا نُزِّلَ عَلَيْهِ الْقُرْآنُ جُمْلَةً وَاحِدَةً كَذَلِكَ لِنُثَبِّتَ بِهِ فُؤَادَكَ وَرَتَّلْنَاهُ تَرْتِيلًا ۖ وَلَا يَأْتُونَكَ بِمَثَلٍ إِلَّا جِئْنَاكَ بِالْحَقِّ وَأَحْسَنَ تَفْسِيرًا ۝

अब इसका जवाब दिया गया:

“यह इसलिये किया है ताकि ऐ नबी (ﷺ) हम इसके ज़रिये से आपके दिल को तस्वीत (जमाव) अता करें।”

كَذَلِكَ لِنُثَبِّتَ بِهِ فُؤَادَكَ

यानि वह बात जो आम इंसानों की मस्लिहत में है वह खुद मुहम्मद रसूल अल्लाह (ﷺ) के लिये भी मस्लिहत पर मन्नी है कि आपके लिये भी शायद कुरान मजीद का एकबारगी तहम्मल करना मुश्किल हो जाता। सूरतुल हश् के आखिरी रुकू में यह अल्फ़ाज़ वारिद हुए हैं:

“अगर हम पूरे के पूरे कुरान को दफ़्तन किसी पहाड़ पर नाज़िल कर देते तो तुम देखते कि वह अल्लाह के ख़ौफ़ से दब जाता और फट जाता।” (आयत:21)

لَوْ أَنْزَلْنَاهُ هَذَا الْقُرْآنَ عَلَى جَبَلٍ لَّرَأَيْنَهُ خَاشِعًا مُّتَصَدِّعًا مِّنْ خَشْيَةِ اللَّهِ

(नोट कीजिये कि यहाँ लफ़ज़ “इन्ज़ाल” आया है)। मालूम हुआ कि क़ल्बे मुहम्मदी (ﷺ) को जमाव और ठहराव अता करने के लिये इसे तदरीज नाज़िल किया गया है:

“और हमने इसको बगरज़े तरतील थोड़ा-थोड़ा करके उतारा है।”

وَرَتَّلْنَاهُ تَرْتِيلًا

“रतल” छोटे पैमाने को, छोटे-छोटे टुकड़े करने को कहते हैं।

अगली आयत में जो इश्ाद हुआ उसके दोनों मफ़हूम हो सकते हैं। एक यह कि ऐ नबी! जो ऐतराज़ भी यह हम पर करेंगे हम उसका बेहतरीन जवाब आपको अता कर देंगे। लेकिन दूसरा मफ़हूम यह भी है कि यह एक मुसलसल कशाकश है जो आपके और मुश्रीकीने अरब के दरमियान चल रही है। आज वह एक बात कहते हैं, अगर उसी वक़्त उसका जवाब दिया जाये तो वह दर हकीकत आपकी दावत के लिये मौज़ू हैं। अगर यह सारे का सारा कलामे इलाही एक ही मर्तबा नाज़िल हो जाता तो हालात के साथ उसकी मुताबिक़त और उनकी तरफ़ से पेश होने वाले ऐतराज़ात का बर वक़्त जवाब न होता और इसके अंदर जो असर अंदाज़ होने की कैफ़ियत है वह हासिल न होती। इस तदरीज में अपनी जगह मौज़ूनियत है और उसकी अपनी तासीर है। इस ऐतबार से कुरान मजीद को तदरीजन नाज़िल किया गया।

لَوْلَا نُزِّلَ عَلَيْهِ الْقُرْآنُ جُمْلَةً وَاحِدَةً

कुरान करीम का ज़माना-ए-नुज़ूल और अर्ज़े नुज़ूल

रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم पर कुरान करीम के नुज़ूल के ज़िम्न में अब दो छोटी-छोटी चीज़ें और नोट कर लीजिये। यह सिर्फ़ मालूमात के ज़िम्न में हैं। इसका ज़माना नुज़ूल क्या है? हम जिस हिसाब (सन् ईसवी) से बात करने के आदी हैं, उसी हिसाब से हमारे ज़हन का सुगरा-कबरा बना हुआ है। इस ऐतबार से नोट कर लीजिये कि कुरान हकीम का ज़माना-ए-नुज़ूल 610 ई० से 632 ई० तक 22 बरस पर मुश्तमिल है। क्रमरी हिसाब से यह 23 बरस बनेंगे। 40 आमूल फ़ील से शुरू करें तो 12 साल क़ब्ले हिजरत और 11 हिजरी साल मिलकर 23 साल क्रमरी बनेंगे। जिनके दौरान यह कुरान बतर्ज़े तन्ज़ील थोड़ा-थोड़ा करके नाज़िल हुआ। सही हदीसों में यह शहादत मौजूद है कि पहले सूरह अलक़ की पाँच आयतें नाज़िल हुई, फिर तीन साल का वक़फ़ा आया। सूरह अलक़ की यह पाँच आयत भी चूँकि कुरान मजीद का हिस्सा हैं, लिहाज़ा सही क़ौल यही है कि कुरान हकीम का ज़माना-ए-नुज़ूल 23 क्रमरी या 22 शम्सी साल है।

अब यह कि नुज़ूल की जगह कौनसी है? इस ज़िम्न में सिर्फ़ एक लफ़्ज़ नोट कर लीजिये कि तक्ररीबन पूरे का पूरा कुरान “हिजाज़” में नाज़िल हुआ। इसलिये कि अगाज़े वही के बाद हुज़ूर अकरम صلی اللہ علیہ وسلم का कोई सफ़र हिजाज़ से बाहर साबित नहीं है। अगाज़े वही से क़ब्ल आप صلی اللہ علیہ وسلم ने मुताददिद सफ़र किये हैं। आप صلی اللہ علیہ وسلم शाम का सफ़र करते थे, यक़ीनन यमन भी आप صلی اللہ علیہ وسلم जाते होंगे। इसलिये कि अल्फ़ाज़े कुरानी “رَحَلَةَ الشَّيْءِ وَالطَّيْفِ” की रू से कुरैश के सालाना दो सफ़र होते थे। गर्मियों के मौसम में शिवाल की तरफ़ जाते थे, इसलिये कि फ़लस्तीन का इलाक़ा निस्वतन ठंडा है, और सर्दियों के मौसम में वह जुनूब की तरफ़ (यमन) जाते थे, इसलिये कि वह गर्म इलाक़ा है। तो हुज़ूर अकरम صلی اللہ علیہ وسلم ने भी तिजारती सफ़र किये हैं। बाज़ मुहक्कीन ने तो यह इम्कान भी ज़ाहिर किया है कि आप صلی اللہ علیہ وسلم ने उस ज़माने में कोई बेहरी सफ़र भी किया और ग़ल्फ़ को उबूर करके मकरान के साहिल पर किसी जगह आप صلی اللہ علیہ وسلم तशरीफ़ लाये। (वल्लाहु आलम!) यह बात मैंने डाक्टर हमीदुल्लाह साहब के एक लेक्चर में सुनी थी जो उन्होंने हैदराबाद (सिन्ध) में दिया था, लेकिन बाद में इस पर ज़िरह हुई कि यह बहुत ही कमज़ोर क़ौल है और इसके लिये कोई सनद मौजूद नहीं है। अलबत्ता “अल् ख़बर” जहाँ आज आबाद है वहाँ पर तो हर साल एक बहुत बड़ा तिजारती मेला लगता था और हुज़ूर

صلی اللہ علیہ وسلم का वहाँ तक आना साबित है। बहरहाल आपको मालूम है कि हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم अगाज़े वही के बाद दस साल तक तो मक्का मुकर्रमा में रहे, इसके बाद तार्ईफ़ का सफ़र किया है। फिर आस-पास “अकाज़” का मेला लगता था और मंडियाँ लगती थीं, उनमें आपने सफ़र किये हैं। फिर आप صلی اللہ علیہ وسلم ने मदीना मुनव्वरा हिजरत फ़रमाई। इसके बाद सब जंगें हिजाज़ के इलाक़े ही में हुईं, सिवाये ग़जव-ए-तबूक के। लेकिन तबूक भी असल में हिजाज़ ही का शिमाली सिरा है, इस ऐतबार से हिजाज़ ही का इलाक़ा है जिसमें कुरान करीम नाज़िल हुआ था। ताहम दो आयतें इस ऐतबार से मुस्तसना करार दी जा सकती हैं कि वह ज़मीन पर नहीं बल्कि आसमान पर नाज़िल हुई। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से सही मुस्लिम में रिवायत मौजूद है कि शबे मेराज में अल्लाह तआला ने आप صلی اللہ علیہ وسلم को जो तीन तोहफ़े अता किये उनमें नमाज़ की फ़र्ज़ियत और दो आयतें कुरानी शामिल हैं। यह सूरतुल बक्ररह की आखिरी दो आयत हैं जो अर्थ के दो ख़जाने हैं जो मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم को शबे मेराज में अता हुए। तो यह दो आयतें मुस्तसना हैं कि यह ज़मीन पर नाज़िल नहीं हुई बल्कि आप صلی اللہ علیہ وسلم को सिद्रतुल मुन्तहा पर दी गयीं और खुद आप صلی اللہ علیہ وسلم सातवें आसमान पर थे, जबकि बाक़ी पूरा कुरान आसमान से ज़मीन पर नाज़िल हुआ है। जियोग्राफ़ाई ऐतबार से हिजाज़ का इलाक़ा महबत वही है।

(3) कुरान हकीम की महफूजियत

मैंने अर्ज़ किया था कि कुरान के बारे में तीन बुनियादी और ऐतकादी (विश्वासी) चीज़ें हैं: अब्बल, यह अल्लाह का कलाम है दूसरा, यह मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم पर नाज़िल हुआ। तीसरा, यह मन व अन कुल का कुल महफूज़ है। इसमें ना कोई कमी हुई है ना कोई बेशी हुई है। ना कमी हो सकती है ना बेशी हो सकती है। ना कोई तहरीफ़ हुई है ना कोई तब्दीली। यह गोया हमारे अक़ीदे (विश्वास) का जुज़्वे ला यन्फक़ (वह हिस्सा जो कभी छोड़ा नहीं जा सकता) है। इसमें कुछ इश्तबा (शक) अहले तशय्यो (शिया लोगों) ने पैदा किया है, लेकिन उनकी बात भी मैं कुछ यक़ीन के साथ इसलिये नहीं कह सकता कि उनका यह क़ौल भी सामने आता है कि “हम इस कुरान को महफूज़ मानते हैं।” अलबत्ता अवाम में जो चीज़ें मशहूर हैं कि कुरान से फ़लाह आयात

निकाल दी गई, फ़लाह सूरत हज़रत अली (रज़ि०) की मदह या शान में थीं, वह इसमें से निकाल दी गई वगैरह, उनके बारे में मैं नहीं कह सकता कि यह उनमें से अवाम का ला नाम की बातें हैं या उनके ऐताकादात (विश्वास) में शामिल हैं। लेकिन यह कि बहरहाल अहले सुन्नत का इज्माई अक़ीदा (पूरी उम्मत इस पर सहमत) है कि यह कुरान हकीम महफूज़ है और कुल का कुल मन व अन हमारे सामने मौजूद है। इसके लिये खुद कुरान मजीद से जो गवाही मिलती है वह सबसे ज़्यादा नुमायां (साफ़) होकर सूरतुल क्रियामा में आई है। फ़रमाया:

لَا تُحَرِّكْ بِهِ لِسَانَكَ لِتُجْعَلَ بِهِ ۝ إِنَّ عَلَيْنَا جَمْعَهُ وَقُرْآنَهُ ۝

रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم को अल्लाह तआला ने अज़राहे शफ़क़त (प्यार से) फ़रमाया: “आप इस कुरान को याद करने के लिये अपनी ज़बान को तेजी से हरकत न दें। इसको याद करवा देना और पढ़वा देना हमारे ज़िम्मे है।” आप صلی اللہ علیہ وسلم मुशक्क़त (तकलीफ़) न झेलें, यह ज़िम्मेदारी हमारी है कि हम इसे आप صلی اللہ علیہ وسلم के सीने मुबारक के अंदर जमा कर देंगे और इसकी तरतीब कायम कर देंगे, इसको पढ़वा देंगे। जिस तरतीब से यह नाज़िल हो रहा है उसकी ज़्यादा फ़िक्र न कीजिये। असल तरतीब जिसमें इसका मुरतब्व किया जाना हमारे पेश नज़र है, जो तरतीब लौहे महफूज़ की है उसी तरतीब से हम पढ़वा देंगे। { ثُمَّ إِنَّا عَلَيْنَا بَيَانَهُ ۝ फिर अगर आपको किसी चीज़ में इब्हाम महसूस हो और वज़ाहत (समझाने) की ज़रूरत हो तो इसकी तौज़ीह और तदीन भी हमारे ज़िम्मे है।

यह सारी ज़िम्मेदारी अल्लाह तआला ने खुद अपने ऊपर ली है। अगर इन आयात को कोई शख्स कुरान मजीद की आयात मानता है तो उसको मानना पड़ेगा कि कुरान मजीद पूरे का पूरा जमा है, इसका कोई हिस्सा ज़ाया नहीं हुआ। सराहत के साथ यह बात सूरह अल् हिज़्र की आयत 9 में मज़कूर है। फ़रमाया:

“हमने ही इस ‘अल् ज़िक्र’ को नाज़िल किया है إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَفِظُونَ और हम ही इसकी हिफ़ाज़त करने वाले हैं।”

यह गोया हमेशा-हमेश के लिये अल्लाह तआला की तरफ़ से गारंटी है कि हमने इसे नाज़िल किया और हम ही इसके मुहाफ़िज़ हैं। इस हकीक़त को अल्लामा इक़बाल ने खूबसूरत शेर में बयान किया है:

हर्फ़े ऊ रा रैब ने, तब्दील ने
आय इश शर्मिदा तावील ने

“इसके अल्फ़ाज़ में ना किसी शक व शुबह का शायबा है न रद्दो-बदल की गुंजाईश। और इसकी आयत किसी तावील की मोहताज़ नहीं।”

इस शेर में तीन ऐतबारात से नफी की गई है: (1) कुरान के हुरूफ़ में यानि इसके मतन में कोई शक व शुबह की गुंजाइश नहीं। यह मिन व अन महफूज़ है। (2) इसमें कहीं कोई तहरीफ़ (परिवर्तन) हुई हो, कहीं तब्दीली की गयी हो, क़तअन ऐसा नहीं। (3) क्या इसकी आयात की उलट-पुलट तावील भी की जा सकती है? नहीं! यह आखिरी बात बज़ाहिर बहुत बड़ा दावा मालूम होता है, इसलिये कि तावील के ऐतबार से कुरान मजीद के मायने में लोगों ने तहरीफ़ की, लेकिन वाक़्या यह है कि कुरान मजीद में अगर कहीं माअन्वी तहरीफ़ की कोशिश भी हुई है तो वह क़तअन दर्जा-ए-इस्तनाद को नहीं पहुँच सकी, उसे कभी भी इस्तक़लाल और दवाम हासिल नहीं हो सका, कुरान ने खुद उसको रद्द कर दिया। जिस तरह दूध में से मक्खी निकाल कर फेंक दी जाती है, ऐसी ही तावीलात भी उम्मत की तारीख़ के दौरान कहीं भी जड़ नहीं पकड़ सकी है और इसी तरह निकाल दी गई हैं। इस बात की सनद भी कुरान में मौजूद है। सूरह हा मीम सजदा की आयत 42 में है:

“बातिल इस (कुरान) पर हमलावर नहीं हो لَا يَأْتِيهِ الْبَاطِلُ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ وَلَا مِنْ خَلْفِهِ تَنْزِيلٌ مِّنْ حَكِيمٍ حَمِيدٍ सकता, ना सामने से ना पीछे से, यह एक हकीम व हमीद की नाज़िल करदा चीज़ है।”

यह बात सिरे से ख़ारिज अज़ इम्कान (मुमकिन ही नहीं) है कि इस कुरान में कोई तहरीफ़ (परिवर्तन) हो जाये, इसका कोई हिस्सा निकाल दिया जाये, इसमें कोई ग़ैर कुरान शामिल कर दिया जाये। सूरतुल हाक्का की यह आयात मुलाहिज़ा कीजिये जहाँ गोया इस इम्कान की नफी में मुबालगे का अंदाज़ है:

“कोई और तो इसमें इज़ाफ़ा क्या करेगा) وَلَوْ تَقَوَّلَ عَلَيْنَا بَعْضُ الْأَقَاوِيلِ ۝ لَا خُذْنَا مِنْهُ بِالْبَيِّنَاتِ ۝ ثُمَّ لَقَطَعْنَا مِنْهُ الْوَتِينَ ۝ فَمَا مِنْكُمْ مِنْ أَحَدٍ عَنْهُ حَاجِزِينَ ۝ अगर यह (हमारे नबी मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم खुद भी (बफ़र्जे महाल) अपनी तरफ़ से कुछ गढ़ कर इसमें शामिल कर दें तो हम इन्हें दाहिने हाथ से पकड़ेंगे और इनकी शह रग काट देंगे। फिर तुम में से कोई (बड़े से बड़ा मुहाफ़िज़ व

मददगार) नहीं होगा कि जो उन्हें हमारी पकड़ से बचा सके।”

यहाँ तो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के लिये भी इस शिद्दत के साथ नफ़ी कर दी गयी है। कुफ़्रारे मुश्रिकीन की तरफ़ से मुतालबा किया जाता था कि आप इस कुरान में कुछ नरमी और लचक दिखायें यह तो बहुत rigid है, बहुत ही uncompromising है, बहरहाल दुनिया में मामलात “कुछ लो कुछ दो” (give and take) से तय होते हैं, लिहाज़ा कुछ आप नरम पड़ें कुछ हम नरम पड़ते हैं। इसके बारे में फ़रमाया: (अल् क़लम, आयत:9)

“वह तो चाहते हैं कि आप कुछ ढीले हो जायें तो यह भी ढीले हो जायेंगे।”

وَدُّوا لَوْ تُدْهِنُ فِيهِمْ هَنُوءٌ

और सूरह यूनस में इर्शाद हुआ:

“जब उन्हें हमारी आयाते बय्यिनात सुनाई जाती हैं तो वह लोग जो हमसे मिलने की तवक्क़ो नहीं रखते, कहते हैं कि इस कुरान के बजाये कोई और कुरान लायें या इसमें कुछ तरमीम कीजिये। (ऐ नबी!इनसे) कह दीजिए मेरे लिये हर्गिज़ मुमकिन नहीं है कि मैं अपने ख़्याल और इरादे से इसके अंदर कुछ तब्दीली कर सकूँ। मैं तो खुद पाबंद हूँ उसका जो मुझ पर वही किया जाता है। अगर मैं अपने रब की नाफ़रमानी करूँ तो मुझे एक बड़े हौलनाक दिन के अज़ाब का डर है।”

यह है कुरान मजीद की शान कि यह लफ़्ज़न, मायनन, मतनन कुल्ली तौर पर (हर तरह से) महफूज़ है।



बाब दोम (दूसरा)

चन्द मुतफ़र्रिक़ मुबाहिस

कुरान मजीद की ज़बान

अब आईये अगली बहस की तरफ़ कि कुरान मजीद की ज़बान क्या है और इस ज़बान की शान क्या है। यह बात भी कुरान मजीद ने बहुत तकरार और इआदह (दोहराना) के साथ बयान की है कि यह कुरान अरबी मुबीन में है, यानि सस्ता, साफ़, सलीस, खुली और वाज़ेह अरबी में है।

कुरान मजीद अल्लाह का कलाम है। इसने जिन हुरूफ़ व अस्वात (आवाज़) का जामा पहना वह हुरूफ़ व अस्वात लौहे महफूज़ में हैं। इसके बाद वह कलामे इलाही, क़ौले जिब्रील अलै० और क़ौले मुहम्मद ﷺ बनकर नाज़िल हुआ और लोगों के सामने आया। चुनाँचे सूरह अल् जुख़र्फ़ के आगाज़ में इर्शाद हुआ:

“हा, मीमा क़सम है इस वाज़ेह किताब की! हमने इसे कुराने अरबी बनाया है ताकि तुम समझ सको।”

حَمِّمٌ ۝ وَالْكِتَابِ الْمُبِينِ ۝ إِنَّا جَعَلْنَاهُ قُرْءَانًا عَرَبِيًّا لَّعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝

कुरान की मुखातिब अब्बल क़ौम हिजाज़ में आबाद थी। उससे कहा जा रहा है कि हमने इस कुरान को तुम्हारी ज़बान में बनाया। उसने अब्बलन हुरूफ़ व अस्वात का जामा पहना है, फिर तुम्हारी ज़बान अरबी का जामा पहनकर तुम्हारे सामने नाज़िल किया गया है ताकि तुम इसको समझ सको। यही बात सूरह यूसुफ़ के शुरू में कही गयी है:

“अलिफ़, लाम, रा। यह उस किताब की आयात है जो अपना मदअन साफ़-साफ़ बयान करती है। हमने इसे नाज़िल किया है कुरान बनाकर अरबी ज़बान में ताकि तुम समझ सको।”

الرَّ تِلْكَ آيَاتُ الْكِتَابِ الْمُبِينِ ۝ إِنَّا أَنْزَلْنَاهُ قُرْءَانًا عَرَبِيًّا لَّعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝

सूरह अल् शौरा में फ़रमाया:

“साफ़-साफ़ अरबी ज़बान में (नाज़िल किया गया)।”

بِلِسَانٍ عَرَبِيٍّ مُبِينٍ ۝

सूरह अल् जुमुर में इशार्द फ़रमाया:

“ऐसा कुरान जो अरबी ज़बान में है, जिसमें कोई टेढ़ नहीं है, ताकि वह बच कर चले।”

قُرْآنًا عَرَبِيًّا غَيْرَ ذِي عِوَجٍ لَّعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ۝

इसमें कहीं कजी नहीं, कहीं कोई ऐच-पेच नहीं, इसकी ज़बान बहुत सलीस, सस्ता और बिलकुल वाजेह ज़बान है। इसमें कहीं पहेलियाँ बुझवाने का अंदाज़ नहीं है।

अब नोट कीजिये कि कुरान की अरबी कौनसी अरबी है? इसलिये कि अरबी ज़बान एक है मगर इसके dialects और इसकी बोलियाँ बेशुमार है। खुद जज़ीरा नुमाए अरब में कई बोलियाँ थीं, तलफ़ुज़ और लहजे मुख़्तलिफ़ थे। बाज़ अल्फ़ाज़ किसी ख़ास इलाक़े में मुस्तमिल थे और दूसरे इलाक़े के लोग उन अल्फ़ाज़ को जानते ही नहीं थे। आज भी कहने को तो मिश्र, लीबिया, अल् जज़ाइर, मुरतानिया और हिजाज़ की ज़बान अरबी है, लेकिन उनके यहाँ जो फ़सीह अरबी कहलाती है वह तो एक ही है। वह दरहक़ीक़त एक इसलिये है कि कुरान मजीद ने उसे दवाम अता किया है। यह कुरान मजीद का अरबी ज़बान पर अज़ीम अहसान है। इसलिये कि दुनिया में दूसरी कोई ज़बान भी ऐसी नहीं है जो चौदह सौ बरस से एक ही शान और एक ही कैफ़ियत के साथ बाकी हो। उर्दू ज़बान ही को देखिये 100-200 बरस पुरानी उर्दू आज हमारे लिये नाक़ाबिले फ़हम है। दक्कन की उर्दू हमें समझ नहीं आ सकती, इसमें कितनी तब्दीली हुई है। इसी तरह फ़ारसी ज़बान का मामला है। एक वह फ़ारसी थी जो अरबों की आमद और इस्लाम के जुहूर के वक़््त थी। अरबों के हाथों ईरान फ़तह हुआ तो रफ़ता-रफ़ता उस फ़ारसी का रंग बदलता गया। अब उसको फिर बदला गया है और उसमें से अरबी अल्फ़ाज़ को निकाल कर उसके लहजे भी बदल दिये गये हैं। एक फ़ारसी वह है जो अफ़ग़ानिस्तान में बोली जाती है, वह हमारी समझ में आती है। इसलिये कि जो फ़ारसी यहाँ पढ़ाई जाती थी वह यही फ़ारसी थी। आज जो फ़ारसी ईरान में पढ़ाई जा रही है वह बहुत मुख़्तलिफ़ है, अपने लहजे में भी और अपने अल्फ़ाज़ के ऐतबार से भी। लेकिन अरबी “फ़सीह ज़बान” एक है। यह असल में हिजाज़ के बद्दुओं की ज़बान थी। पूरा कुरान हकीम हिजाज़ में नाज़िल हुआ। हजाज़ में बादिया

नशीन थे। अरबों का कहना है कि ख़ालिस ज़बान बादिया नशीनों की है, शहर वालों की नहीं। जबकि मक्का शहर था और वहाँ बाहर से भी लोग आते रहते थे। क़ाफ़िले आ रहे हैं, जा रहे हैं, ठहर रहे हैं। जहाँ इस तरह आमद व रफ़्त हो वहाँ ज़बान ख़ालिस नहीं रहती और उसमें ग़ैर ज़बानों के अल्फ़ाज़ शामिल होकर मुस्तमिल हो जाते हैं और बोल-चाल में आ जाते हैं। ख़ास इसी वजह से मक्का के शरफ़ा अपने बच्चों को पैदाइश के फ़ौरन बाद बादिया नशीनों के पास भेज देते थे। एक तो दूध पिलाने का मामला था। दूसरा यह कि उनकी ज़बान साफ़ रहे, ख़ालिस अरबी ज़बान रहे और वह हर मिलावट से पाक रहे। तो कुरान मजीद हिजाज़ के बादिया नशीनों की ज़बान में नाज़िल हुआ।

अलबत्ता यह साबित है कि कुरान मजीद में कुछ अल्फ़ाज़ दूसरे क़बाइल और दूसरे इलाक़ों की ज़बानों के भी आये हैं। अल्लामा जलालुद्दीन स्यूती रहि० ने ऐसे अल्फ़ाज़ की फेहरिस्त मुरत्तब (लिस्ट बनाई है) की है। इसके अलावा कुछ ग़ैर अरबी अल्फ़ाज़ भी कुरान मजीद में आये हैं जो मौरब हो गये हैं। इब्राहीम, इस्माईल, इस्हाक़ यह तमाम नाम दरहक़ीक़त अबरानी ज़बान के अल्फ़ाज़ हैं। लफ़ज़ “ईल” अबरानी ज़बान में अल्लाह के लिये आता है और यह लफ़ज़ हमारे यहाँ कुरान मजीद के ज़रिये आया है। इसी तरीके से “सिज्जील” का लफ़ज़ फ़ारसी से आया है। सहारा में कहीं बारिश के नतीजे में हल्की सी फुहार पड़ी हो तो बारिश के क़तरों के साथ रेत के छोटे-छोटे दाने बन जाते हैं और फिर तेज़ धूप पड़ने पर ऐसे पक जाते हैं जैसे भट्टे में ईंटो को पका दिया गया हो। यह कंकर “सिज्जील” कहलाते हैं जो “संगे गुल” का मौरब है। बाक़ी अक्सर व बेशतर कुरान मजीद की ज़बान जिसमें यह नाज़िल हुआ, वह हिजाज़ के इलाक़े के बादिया नशीनों की अरबी है, जिसमें फ़साहत व बलाग़त नुक़्ता-ए-उरूज पर है और इसका लोहा माना गया है।

इसके अलावा कुरान मजीद में एक सौती आहंग है। इसका एक “मलकूती गिना” (Divine Music) है, इसकी एक अज़ूबत और मिठास है। यह दोनों चीज़ें अरब में पूरे तौर पर तस्लीम की गई हैं और लोगों पर सबसे ज़्यादा मरऊबियत (पसंद) कुरान हकीम की फ़साहत, बलाग़त और अज़ूबित ही से तारी हुई है। उनकी अपनी ज़बान में होने के ऐतबार से ज़ाहिर बात है कि कुरान के बेहतरीन नाक़द भी वही हो सकते थे। वाज़ेह रहे कि अदब में “तन्कीद” दोनों पहलुओं को मुहीत होती है। किसी चीज़ की क़द्र व क़ीमत का अंदाज़ा लगाना, उसे जाँचना, परखना। उसमें कोई ख़ामी हो तो उसको

नुमाया करना, और अगर कोई मुहासिन हो तो उनको समझना और बयान करना। इस ऐतबार से इसकी फ़साहत व बलागत को तस्लीम किया गया है।

मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि अरबी ज़बान आज भी मुख्तलिफ़ इलाक़ों में मुख्तलिफ़ लहजों और बोलियों की शक़ल इख़्तियार कर चुकी है। एक इलाक़े की आमी (colloquial) रबी दूसरे लोगों की समझ में नहीं आती थी। खुद नुज़ूले कुरान के ज़माने में नजद के लोगों की ज़बान हिजाज़ के लोगों की समझ में नहीं आती थी। इसकी वज़ाहत एक हदीस में भी मिलती है कि नजद से कुछ लोग आए और वह हुज़ूर ﷺ से गुफ़्तगु कर रहे थे जो बड़ी मुश्किल से समझ में आ रही थी और लोग उसे समझ नहीं पा रहे थे। आज भी नजद के लोग जो गुफ़्तगु करते हैं तो वाक़िया यह है कि अरबी से वाक़फ़ियत (जानने) होने के बावजूद उनकी अरबी हमारी समझ में नहीं आती, उनका लबो लहजा बिल्कुल मुख्तलिफ़ है। कुरान हकीम की ज़बान हिजाज़ के बादिया नशीनों की है। लिहाज़ा अगर तहक़ीक़ व तदब्बुर कुरान का हक़ अदा करना हो तो जाहिलियत की शायरी पढ़ना ज़रूरी है। अइस्मा-ए-लुग़त (Master of language) ने एक-एक लफ़्ज़ की तहक़ीक़ करके और बड़ी गहराईयों में उतर कर जाहिली शायरी के हवाले से जितने भी इस्तशहाद (प्रमाण) हो सकते थे उनको ख़ंगाल कर कुरान में मुस्तमिल अल्फ़ाज़ के माद्यों के मफ़हूम मुअय्यन (अर्थ बता दिये) कर दिये हैं। एक आम क़ारी को, जो कुरान से तज़क़ुर करना चाहे, सिर्फ़ हिदायत हासिल करना चाहे, इस झगड़े में पड़ने की चंदान ज़रूरत नहीं है। अलबत्ता तदब्बुर कुरान के लिये जब तहक़ीक़ की जाती है तो जब तक किसी एक लफ़्ज़ की असल पूरी तरह मालूम न की जाए और उसके बाल की ख़ाल न उतार ली जाए तहक़ीक़ का हक़ अदा नहीं होता। इस ऐतबार से शेर जाहिली की ज़बान को समझना तदब्बुर कुरान के लिये यक़ीनन ज़रूरी है।

कुरान के अस्मा व सिफ़ात

अगली बहस कुरान हकीम के अस्मा (नाम) व सिफ़ात (गुणों) की है। अल्लाम जलालुद्दीन स्यूति रहि० ने अपनी शहरा आफ़ाक़ किताब “अल् इत्तेफ़ाक़ फ़ी उलूमुल कुरान” में कुरान हकीम के अस्मा व सिफ़ात कुरान

हकीम ही से लेकर पचपन (55) नामों की फ़ेहरिस्त मुरत्तब (तैयार) की है। मैंने जब इस पर ग़ौर किया तो अंदाज़ा हुआ कि वह भी कामिल नहीं है, मसलन लफ़्ज़ “बुरहान” उनकी फ़ेहरिस्त में शामिल नहीं है। दरहकीक़त (असल में) कुरान मजीद की सिफ़ात, इसकी शानों और इसकी तासीर के लिये मुख्तलिफ़ अल्फ़ाज़ को जमा किया जाये तो 55 ही नहीं इससे ज़्यादा अल्फ़ाज़ बन जायेंगे। लेकिन मैंने इन्हें दो हिस्सों में तक्सीम किया है। एक तो वह अल्फ़ाज़ हैं जो मुफ़रद की हैसियत से और मारफ़ा की शक़ल में कुरान मजीद में कुरान के लिये वारिद हुए हैं, जबकि कुछ सिफ़ात हैं जो मौसूफ़ के साथ आ रही हैं। मसलन “कुरान मजीद” में “मजीद” कुरान का नाम नहीं है, दरहकीक़त सिफ़त है। इसी तरह “अल् कुरान अल् मजीद” में अगरचे “अलिफ़ लाम” के साथ “अल् मजीद” आता है, लेकिन यह चूँकि मौसूफ़ के साथ मिल कर आया है लिहाज़ा यह भी सिफ़त है।

कुरान माजीद के लिये जो अल्फ़ाज़ बतौर-ए-इस्म आये हैं, उनमें से अक्सर व बेशतर वह हैं जिनके साथ लाम लगा है। कुरान के लिये अहमतरिन नाम जो इसका इम्तियाज़ी (विशेष) और इख़्तसासी (The Exclusive) नाम है, “अल् कुरान” है। (मैं बाद में इसकी वज़ाहत करूँगा) इसके बाद कसरत से इस्तेमाल होने वाला नाम “अल् किताब” है। कुरान की असल हकीक़त पर रोशनी डालने वाला अहमतरिन नाम “अल् ज़िक़्र” है। कुरान मजीद की इफ़ादियत के लिये सबसे ज़्यादा जामेअ नाम “अल् हुदा” है। कुरान मजीद की नौइयत और हैसियत के ऐतबार से अहम तरिन नाम “अल् नूर” है। कुरान मजीद की एक इन्तहाई अहम शान जो एक लफ़्ज़ के तौर पर आई है “अल् फ़ुरक़ान” है यानि (हक़ व बातिल में) फ़र्क़ कर देने वाली शय, दूध का दूध और पानी का पानी जुदा कर देने वाली शय। कुरान का एक नाम “अल् वही” भी आया है: {قُلْ إِنَّمَا أُنْزِلَتْ بِالْوَحْيِ} (अल् अम्बिया:45)। इसी तरह “कलामुल्लाह” का लफ़्ज़ भी खुद कुरान में आया है: {حَتَّى يَسْمَعَ كَلِمَ اللَّهِ} (अल् तौबा:6) चूँकि यहाँ कलाम मुदाफ़ वाक़ेअ हुआ है, लिहाज़ा यह भी मआरफ़ा बन गया। मेरे नज़दीक़ जिन्हें हम कुरान के नाम क़रार दें, वह तो यही बनते हैं। अगरचे, जैसा कि मैंने अर्ज़ किया, जो लफ़्ज़ भी कुरान के लिये सिफ़त के तौर पर या इसकी शान को बयान करने के लिये कुरान में आ गया है अल्लामा जलालुद्दीन स्यूती रहि० ने उसको फ़ेहरिस्त में शामिल करके 55 नाम गिनवाये हैं, लेकिन यह फ़ेहरिस्त भी मुकम्मल नहीं।

कुरान करीम की मुख्तलिफ़ शानों और सिफ़ात के लिये यह अल्फ़ाज़ आए हैं:

1)	करीमुन	إِنَّهُ لَقُرْآنٌ كَرِيمٌ ۝	(अल् वाक़्या:77)
2)	अल् हकीम	يَس ۝ وَالْقُرْآنُ الْحَكِيمُ ۝	(यासीन:1-2)
3)	अल् अज़ीम	وَلَقَدْ آتَيْنَاكَ سَبْعًا مِّنَ الْمَثَانِ وَالْقُرْآنَ الْعَظِيمَ ۝	(अल् हिज़:87)
4)	मजीदुन और अल् मजीद	بَلْ هُوَ قُرْآنٌ مَّجِيدٌ ۝	(अल् बुरूज:21)
		قُلْ وَالْقُرْآنُ الْمَجِيدُ ۝	(क्राफ:1)
5)	अल् मुबीन	حَمْدُ ۝ وَالْكِتَابِ الْمُبِينِ ۝	(अल् जुख़रुफ़:1-2)
6)	रहमतुन	هُدًى وَرَحْمَةً لِّلْمُؤْمِنِينَ ۝	(यूनस:57)
7)	अलिय्युन	وَإِنَّهُ فِي أُمِّ الْكِتَابِ لَدَيْنَا لَعَلٌّ حَكِيمٌ ۝	(अल् जुख़रुफ़:4)
8)	बसाइर	فَدَجَاءَ كُمْ بُصَايْرٌ مِّن رَّبِّكُمْ ۝	(अल् अनआम:104)
9,10)	बशीरुन व नज़ीरुन	بَشِيرًا وَنَذِيرًا ۝	(हा मीम सज्दा:4)
[अगरचे यह अल्फ़ाज़ अम्बिया के लिये आते हैं लेकिन यहाँ खुद कुरान के लिये भी आये हैं। कुरान अपनी ज़ात में फ़ी नफ़सी बशीर भी है, नज़ीर भी है।]			
11)	बुशरा	وَبُشْرَى لِّلْمُسْلِمِينَ ۝	(अल् नहल:89, 102)
12)	अज़ीज़ुन	وَإِنَّهُ لَكِتَابٌ عَزِيزٌ ۝	(हा मीम सज्दा:41)
13)	बलागुन	هَذَا بَلَاغٌ لِّلنَّاسِ ۝	(इब्राहीम:52)
14)	बयानुन	هَذَا بَيَانٌ لِّلنَّاسِ ۝	(आले इमरान:138)
15)	मौइज़तुन		
16)	शिफ़ाउन	فَدَجَاءَ تَكُمْ مَوْعِظَةٌ مِّن رَّبِّكُمْ وَشِفَاءٌ لِّمَا فِي الصُّدُورِ ۝	(यूनस:57)
17)	अहसनुलक़सस	نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ أَحْسَنَ الْقَصَصِ ۝	(यूसुफ़:3)
18)	अहसनुल हदीस		
19)	मुताशाबिह		
20)	मसानिया	اللَّهُ نَزَّلَ أَحْسَنَ الْحَدِيثِ كِتَابًا مُّتَشَابِهًا مَّثَانًى ۝	(अल् जुमुर:23)

21)	मुबारकुन	كِتَابٌ أَنزَلْنَاهُ إِلَيْكَ مُبَارَكٌ ۝	(सुआद:29)
22)	मुसद्दिकुन		
23)	मुहय्यिनुन	مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتَابِ وَمُهَيِّئًا عَلَيْهِ ۝	(अल् मायदा:48)
24)	कय्यिम	فَقِيلَ لِيُذْخِرْ بَأْسًا شَدِيدًا لِّمَنِ لَّدُنْهُ ۝	(अल् कहफ:2)

यह मुख्तलिफ़ अल्फ़ाज़ हैं जो कुरान हकीम की मुख्तलिफ़ शानों के लिये आए हैं। जैसा कि अल्लाह तआला के निन्यानवे (99) नाम हैं, जो उसकी मुख्तलिफ़ शानों को ज़ाहिर करते हैं, इसी तरह हुज़ूर ﷺ के नामों की फ़ेहरिस्त भी आपने पढ़ी होगी। आप ﷺ की मुख्तलिफ़ शानें हैं, इसके ऐतबार से आप बशीर भी हैं, नज़ीर भी हैं, हादी भी हैं, मुअल्लिम भी हैं। कुरान मजीद के भी मुख्तलिफ़ अस्मा व सिफ़ात हैं।

लफ़ज़ “कुरान” की लुगवी बहस:

कुरान मजीद के नामों में सबसे अहम नाम “अल् कुरान” है, जिसके लिये मैंने लफ़ज़ exclusive इस्तेमाल किया था कि यह किसी और किताब के लिये इस्तेमाल नहीं हुआ, वरना तौरात किताब भी है, हिदायत भी थी, और उसके लिये लफ़ज़ नूर भी आया है। इर्शाद हुआ:

“हमने तौरात नाज़िल की जिसमें हिदायत भी है और नूर भी।” (अल् मायदा:44)

खुद कुरान मजीद हिदायत भी है, नूर भी है, रहमत भी है। तो बक्रिया तमाम औसाफ़ तो मुश्तरिक (एक जैसे) हैं, लेकिन अल् कुरान के लफ़ज़ का इतलाक़ कुतुबे समाविया (आसमानी किताबों) में से किसी और किताब पर नहीं होता। यह इस्तियाज़ी, इख़्तसासी और इस्तस्राई नाम सिर्फ़ कुरान मजीद के लिये है। इसी लिये एक राय यह है कि यह इस्मे अलम है, और इस्मे जमिद है, इस्मे मुश्तरक नहीं है। अल्लाह तआला के नाम “अल्लाह” के बारे में भी एक राय यह है कि यह इस्मे ज़ात है, इस्मे अलम है, इस्मे जामिद है, मुश्तरक नहीं है, यह किसी और मादे से निकला हुआ नहीं है। जबकि एक राय यह है कि यह भी सिफ़ात है, जैसे अल्लाह तआला के दूसरे सिफ़ाती नाम हैं। जैसे “अलीम”

अल्लाह तआला की सिफ़त है और “अल् अलीम” नाम है, “रहीम” सिफ़त है और “अर्रहीम” नाम है, इसी तरह इलाह पर “अल्” दाख़िल हुआ तो “अल् इलाह” बन गया और दो लाम मुद्गम होने (मिलने) से यह “अल्लाह” बन गया। यह दूसरी राय है। जो मामला लफ़ज़ अल्लाह के बारे में इख़्तलाफ़ी है बर्इना वही इख़्तलाफ़ लफ़ज़ कुरान के बारे में है। एक राय यह है कि यह इस्मे जामिद और इस्मे आलम है, इसका कोई और माद्दा नहीं है। जबकि दूसरी राय यह है कि यह इस्मे मुश्तक़ है। लेकिन फिर इसके माद्दे की तार्इन में इख़्तलाफ़ है।

एक राय के मुताबिक़ इसका माद्दा “قُرْ” है, यानि कुरान में जो “तून” है वह भी हफ़्ते असली है। दूसरी राय के मुताबिक़ इसका माद्दा “قُرَّ” है। यह गोया महमूज़ है। मैं यह बातें अहले इल्म की दिलचस्पी के लिये अर्ज़ कर रहा हूँ। जिन लोगों ने इसका माद्दा “قُرْ” माना है, उनके भी दो राय हैं। एक राय यह कि जैसे अरब कहते हैं “قُرْنُ الشَّيْءِ بِالشَّيْءِ” (कोई शय [चीज़] किसी दूसरे के साथ शामिल कर दी गई) तो इससे कुरान बना है। अल्लाह तआला की आयात, अल्लाह तआला का कलाम जो वक़्तन-फ़-वक़्तन नाज़िल हुआ, इसको जब जमा कर दिया गया तो वह “कुरान” बन गया। इमाम अश‘अरी भी इस राय के क़ायल हैं। जबकि एक राय इमाम फ़राअ की है, जो लुगत के बहुत बड़े इमाम हैं, कि यह क़रीना और क़राइन से बना है। क़राइन कुछ चीज़ों के आसार होते हैं। कुरान मजीद की आयात चूँकि एक-दूसरे से मुशाबह हैं, जैसा कि सूरह अल् जुमुर में कुरान मजीद की यह सिफ़त वारिद हुई है “كِتَابًا مُّشَابِهًا مَّثَانًى” (आयत:23)। इस ऐतबार से आपस में यह आयात कुरनाअ हैं। चुनाँचे क़रीना से कुरान बन गया है।

जो लोग कहते हैं कि इसका माद्दा “قُرَّ” है वह कुरान को मसदर मानते हैं। اَقْرَأُ يَقْرَأُ قُرْأً وَقُرَاءَةً وَقُرْأًا यह अगरचे मसदर का मारुफ़ वज़न नहीं है लेकिन इसकी मिसालें अरबी में मौजूद हैं। जैसे رَجُلٌ से رُجُلَانٌ और غَفَرٌ से غُفْرَانٌ इनके मादह में “तून” शामिल नहीं है। जैसे गुफ़रान और रुजहान मसदर हैं, ऐसे ही قُرْ से मसदर कुरान है यानि पढ़ना। और मसदर बसा औक्रात मफ़ऊल का मफ़हूम देता है। तो कुरान का मफ़हूम होगा पढ़ी जाने वाली शय, पढ़ी गयी शय। قُرْأُ الْمَاءِ فِي الْحَوْضِ में जमा करने का मफ़हूम भी है। अरब कहते हैं: قُرْأُ الْمَاءِ فِي الْحَوْضِ

“मैंने हौज़ के अंदर पानी जमा कर लिया।” इसी से कुरिया बना है, यानि ऐसी जगह जहाँ लोग जमा हो जायें। गोया कुरान का मतलब है अल्लाह का कलाम जहाँ जमा कर दिया गया। तमाम आयात जब जमा कर ली गयीं तो यह कुरान बन गया। जैसे कुरिया वह जगह है जहाँ लोग आबाद हो जायें, मिल-जुल कर रह रहे हों। तो जमा करने का मफ़हूम قُرْ में भी है और قُرْ में भी है। यह दोनों माद्दे एक-दूसरे से बहुत क़रीब हैं। बहरहाल यह इस लफ़ज़ की लुगवी बहस है।

कुरान का अस्लूबे कलाम

अब मैं अगली बहस पर आ रहा हूँ कि इसका अस्लूबे कलाम क्या है! कुरान मजीद ने शद व मद के साथ जिस बात की नफ़ी की है वह यह है कि यह शेर नहीं है: (यासीन:69)

“हमने अपने इस रसूल को शेर सिखाया ही नहीं, ना इनके यह शायाने शान है।”

وَمَا عَلَّمْنَاهُ الشِّعْرَ وَمَا يَنْبَغِي لَهُ

शायरों के बारे में सूरह अल् शौराअ में आया है:

“और शायरों की पैरवी तो वही लोग करते हैं जो गुमराह हों। क्या तूने नहीं देखा कि वह हर वादी में घूमते रहते हैं (हर मैदान में सरगर्दा रहते हैं) और यह कि वह कहते हैं जो नहीं करते।”

وَالشُّعْرَاءُ يَتَّبِعُهُمُ الْغَاوُونَ ﴿٦٩﴾ أَلَمْ تَرَ أَنَّهُمْ فِي كُلِّ وَادٍ يَهِيمُونَ ﴿٧٠﴾ وَأَنَّهُمْ يَقُولُونَ مَا لَا يَفْعَلُونَ ﴿٧١﴾

अगली आयत में {إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ....} के अल्फ़ाज के साथ इस्तसना भी आया है, और इस्तसना क़ायदा-ए-कुल्लिया की तौसीक़ करता है (Exception proves the rule)--- चुनाँचे कुरान मजीद के ऐतबार से शेर गोयी कोई अच्छी शय नहीं है, कोई ऐसी महमूद सिफ़त नहीं है कि जो अल्लाह तआला अपने रसूल को अता फ़रमाता। बल्कि हुज़ूर अकरम ﷺ का मामला तो यह था कि आप ﷺ कभी कोई शेर पढ़ते भी थे तो ग़लती हो जाती थी। इसलिये कि नबी अकरम ﷺ पर से अल्लाह तआला शायरी की तोहमत हटाना चाहता था, लिहाज़ा आपके अंदर शायरी का वस्फ़ (ख़ूबी) ही

पैदा नहीं किया गया। सीरत का एक दिलचस्प वाक्या आता है कि हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने एक मर्तबा एक शेर पढ़ा और उसमें ग़लती हुई। इस पर हज़रत अबु बकर (रज़ि०) मुस्कुराये और अर्ज़ की: اَشْهَدُ اَنَّكَ رَسُوْلُ اللّٰهِ "मैं ग़वाही देता हूँ कि यक़ीनन आप अल्लाह के रसूल हैं।" इसलिये कि अल्लाह ने फ़रमाया है: {وَمَا عَلَّمْنَاهُ الشِّعْرَ وَمَا يَنْبَغِي لَهُ} (यासीन:69) तो वाक़िअतन आपको शेर से यानि शेर के वज़न और उसकी बहर वग़ैरह से मुनासबत नहीं थी। बाक़ी जहाँ तक शेर के मफ़हूम का और आला मज़ामीन का ताल्लुक है तो खुद हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم का फ़रमान है: ((اِنَّ مِنَ الْبَيَّانِ لَسِحْرًا وَاِنَّ مِنَ الشِّعْرِ لِحِكْمَةً)) यानि बहुत से बयान बहुत से खुत्वे और तक्ररीरें जादू असर होते हैं और बहुत से अशआर के अंदर हिकमत के ख़जाने होते हैं। बाज़ शायरों के अशआर हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने खुद पढ़े भी हैं और उनकी तहसीन फ़रमाई है, लेकिन कुरान बहरहाल शेर नहीं है।

अलबत्ता एक बात कहने की ज़रूरत कर रहा हूँ कि क़दीम ज़माने की शायरी जिसमें बहर, वज़न और रदीफ़ व क़ाफ़िया की पाबंदी सख़्ती के साथ होती थीं, उसके ऐतबार से यक़ीनन कुरान शेर नहीं है, लेकिन एक शायरी जिसका रिवाज असरे हाज़िर में हुआ है और उसके लिये ग़ालिबन कुरान ही के अस्लूब को चुराया गया है, जिसे आप "आज़ाद नज़्म" (Blank Verse) कहते हैं, उसके अंदर जो सिफ़ात और खुसूसियात आजकल होती हैं उनका मिन्बा और सरचश्मा कुरान हकीम है। इसलिये कि इसमें एक रिदम (Rythm) होता है, इसमें फ़वासल भी हैं, क़वानी के तर्ज़ पर सौती आहंग भी है, लेकिन वह जो मारूफ़ शायरी थी उसके ऐतबार से कुरान बड़ी ताकीद के साथ कहता है कि कुरान शेर नहीं है।

कुरान के अस्लूब के ज़िम्न में दूसरी अहम बात यह है कि आम मायने में कुरान किताब भी नहीं है। मैं यहाँ इक़बाल का मिसरा qoute कर रहा हूँ, अगरचे इसके वह मायने नहीं "ई किताबे नीस्त चीज़े दीगर अस्त!"

आज हमारा किताब का तसव्वुर यह है कि उसके मुख़्तलिफ़ अबवाब (Chapters) होते हैं। आप किसी किताब या तस्नीफ़ में एक मौज़ू को एक बाब की शक्ल देते हैं। एक बाब (Chapter) में एक बात मुकम्मल हो जानी चाहिये। अगले बाब में बात आगे चलेगी, कोई पिछली बात नहीं दोहराई जायेगी, तीसरे बाब में बात और आगे चलेगी। फिर एक किताब मज़मून के ऐतबार से एक वहादत बनेगी और उसके अंदर मौज़ूआत (विषय) और

उन्वानात (शीर्षकों) के हवाले से अबवाब (Chapters) तक्रसीम हो जायेंगे। गोया हमारे यहाँ मारूफ़ मायने में किताब का इल्लाक़ जिस चीज़ पर किया जाता है, उस मायने में कुरान किताब नहीं है। अल्बत्ता यह "अल् किताब" है ब-मायने लिखी हुई शय। अल्लाह तआला ने इसे किताब करार दिया है और इसके लिये सबसे ज़्यादा कसरत से यही लफ़ज़ "किताब" ही कुरान में आया है। यह अल्फ़ाज़ साढ़े तीन सौ (350) जगह आया है। कुरान और कुरआनन तक्ररीबन 70 मक़ामात पर आया है। लेकिन "कुरान" exclusive आया है, जबकि किताब का लफ़ज़ तौरात, इंजील, इल्मे खुदावंदी और तक्रदीर के लिये भी आया है और कुरान मजीद के हिस्सों और अहकाम के लिये भी आया है। बहरहाल किताब इस मायने में तो है। माज़अल्लाह, कोई यह नहीं कह सकता कि कुरान किताब नहीं है, लेकिन जिस मायने में हम लफ़ज़ किताब बोलते हैं उस मायने में कुरान किताब नहीं है।

तीसरी बात यह कि यह मज्मुआ मक़ालात (collection of essays) भी नहीं है। इसलिये कि हर मक़ाला अपनी जगह पर खुद मकतफ़ी और एक मुकम्मल शय होता है। लेकिन कुरान मजीद के बारे में हम यह बात नहीं कह सकते। तो फिर यह है क्या? पहली बात तो यह नोट कीजिये कि इसका अस्लूब खुत्वे का है। अरब में दो ही चीज़ें ज़्यादा मारूफ़ थीं, ख़िताबत या शायरी। शौअरा (शायर का plural) उनके यहाँ बड़े महबूब थे। शायरी का उनको बड़ा ज़ौक (पसंद) था और वह शौअरा की बड़ी क़द्र करते थे। उनके यहाँ क़सीदा गोई के मुक़ाबले होते थे। फिर हर साल जो सबसे बड़ा शायर शुमार होता था उसकी अज़मत को तस्लीम करने की अलामत के तौर पर सब शायर उसके सामने बाक़ायदा सजदा करते थे। फिर उसका क़सीदा बैतुल्लाह पर लटका दिया जाता था। यही क़सीदे "سبعة معلّقة" के नाम से मारूफ़ हैं। चुनाँचे अरब या तो शेरों से वाक़िफ़ थे या खुत्बों से। तो कुरान मजीद उस दौर की दो सबसे ज़्यादा मारूफ़ अस्नाफ़ (शायरी और खुत्बा) में खुत्वे के अस्लूबी पर है। इस ऐतबार से हम कह सकते हैं कि कुरान हकीम मज्मुआ-ए-खुत्बाते इलाहिया (A collection of divine orations) है, जिसमें हर सूरत एक खुत्वे की मानिंद है।

खुत्वे के ऐतबार से चंद बाते नोट कर लें। खुत्वे में मुखातब (दर्शक) और ख़तीब (वक्ता) के दरमियान एक ज़हनी रिश्ता होता है। मुखातिब (वक्ता) को मालूम होता है कि मेरे सामने कौन लोग बैठे हैं, उनकी फ़िक्र क्या है, उनकी

सोच क्या है, उनके अक्राइद क्या हैं, उनके नज़रियात क्या हैं। वह उनका हवाला दिये बग़ैर अपनी गुफ्तुगू के अंदर उन पर तन्कीद भी करेगा, उनकी तसीह भी करेगा, लेकिन कोई तम्हीदी कलिमात नहीं होंगे कि अब मैं तुम्हारी फ़लाँ ग़लती की तसीह करना चाहता हूँ, मैं अब तुम्हारे इस ख़्याल की नफ़ी करना चाहता हूँ। यह अंदाज़ नहीं होगा बल्कि वह रवानी के साथ आगे चलेगा। मुख़ातिब (वक्ता) और मुख़ातब (दर्शक) के माबैन एक ज़हनी हम-आहंगी होती है, वह एक-दूसरे से वाक़िफ़ होते हैं, और खास तौर पर मुख़ातिबीन के फ़हम, उनकी समझ, उनके अक़ीदे, उनके नज़रियात से ख़तीब वाक़िफ़ होता है। यह दर हक़ीक़त ख़ुत्बे की शान है। यही वजह है कि इसमें तहवीले ख़िताब होती है और बग़ैर वारनिंग के होती है। बसा औक्रात ग़ायब को हाज़िर फ़र्ज़ करके उससे ख़िताब किया जाता है। चुनाँचे ऐसा भी होता है कि एक ख़तीब मस्जिद में ख़ुत्बा दे रहा है और वह मुख़ातिब कर रहा है सदरे ममलकत को, हालाँकि वह वहाँ मौजूद नहीं होते। इस तरह जो लोग बैठे हुए हैं बसा औक्रात उनसे सीगा ग़ायब में गुफ्तुगू शुरू हो जायेगी, और यह भी बलागत का अंदाज़ है। कभी वह एक तरफ़ बात कर रहा, कभी दूसरी तरफ़ कर रहा है, कभी किसी ग़ायब से बात कर रहा है और ख़िताबत का वही अंदाज़ होगा अगरचे वह ग़ायब वहाँ मौजूद नहीं है। इसको तहवीले ख़िताब कहते हैं। कुरान मजीद पर ग़ौर करने के ज़िम्न में इसकी बहुत अहमियत होती है। अगर ख़िताब का रख मुअय्यन हो कि यह बात किससे कही जा रही है, मुख़ातब कौन है, तो इस बात का असल मफ़हूम उजागर होकर सामने आता है, वरना अगर मुख़ातब का तअय्युन न हो तो बहुत से बड़े-बड़े मुग़ालतें जन्म ले सकते हैं।

ख़ुत्बे और मक़ाले में एक वाजेह फ़र्क यह होता है कि मक़ाले में आम तौर पर सिर्फ़ अक़ल से अपील की जाती है। इसमें मन्तिक और अक़ली दलीलें होती हैं, जबकि ख़ुत्बे में अक़ल के साथ-साथ ज़बात से भी अपील होती है। गोया कि इंसान के अंदर झाँक कर बात की जाती है। लोगों को दावत दी जाती है कि अपने अंदर झाँको। और:

“और खुद तुम्हारे अंदर भी (निशानियाँ हैं) तो क्या तुमको सूझता नहीं है?”

(अज़ ज़ारियात:21)

وَفِي أَنْفُسِكُمْ أَفَلَا تُبْصِرُونَ

और:

“(ज़रा ग़ौर करो) क्या अल्लाह के बारे में शक करते हो जो ज़मीन और आसमान का बनाने वाला है?” (इब्राहिम:10)

أَفِي اللَّهِ شَكٌّ فَاطِرِ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ

यह अंदाज़ बहरहाल किसी तहरीर या मक़ाले में नहीं होगा, यह ख़ुत्बे का अंदाज़ है।

एक और बात जो ख़ुत्बे के ऐतबार से उसके ख़साइस (गुणों) में से है वह यह कि एक मौस्सर (असरदार) ख़ुत्बे के शुरू में बहुत जामेअ गुफ्तुगू होती है। कामयाब ख़ुत्बा वही होगा जिसका आगाज़ ऐसा हो कि मुक़रर और ख़तीब अपने मुख़ातबीन (दर्शकों) और सामईन (श्रोताओं) की तबज्जोह अपनी तरफ़ मब्ज़ूल करा ले (पलटा ले)। और फिर अगरचे ख़ुत्बे के दौरान मज़मून (विषय) दायें-बायें फैलेगा, इधर जायेगा, उधर जायेगा लेकिन आख़िर में आकर वह फिर किसी मज़मून के ऊपर मुर्तकज़ (केंद्रीत) हो जायेगा। यह अगर नहीं है तो गोया कि वक़्त ज़ाया हो गया। हमारे यहाँ बड़े-बड़े ख़तीब पैदा हुए हैं। खासतौर पर मजलिसे अहरार ने बड़े अवामी ख़तीब पैदा किये, जिनमें से अताउल्लाह शाह बुख़ारी रहि० बहुत बड़े ख़तीब थे। उनकी तक़रीर का यह आलम होता था कि गुफ्तुगू चार-चार घंटे, पाँच-पाँच घंटे चल रही है। उसमें कभी मशरिक़ की, कभी मग़रिब की, कभी शिमाल की और कभी जुनूब की बात आ जाती। कभी हँसाने का और कभी रलाने का अंदाज़ होता, कहीं लतीफ़ा गोई भी हो जाती। लेकिन अब्बल और आख़िर बात बिल्कुल वाज़ेह होती। ख़ूब घुमा फिरा कर भी मुख़ातब को किसी एक बात पर ले आना कि उठे तो कोई एक बात, कोई एक पैग़ाम लेकर उठे, कोई एक ज़बा उसके अंदर जाग चुका हो, एक पैग़ाम उस तक पहुँच चुका हो, यह ख़ुत्बे के औसाफ़ हैं।

आपको मालूम है ख़्वाह ग़ज़ल हो या क़सीदा, शायरी में मुताला और मक़ता दोनों की बड़ी अहमियत है। मुताला जानदार है तो आप पूरी ग़ज़ल पढ़ेंगे और अगर मुताला ही फुसफुसा है तो आगे आप क्या पढ़ेंगे! इसी तरह मक़ता भी जानदार होना चाहिये। इसी लिये मक़ता और मुताला के अल्फ़ाज़ अलैहदा से वाज़ेह किए गये हैं। ख़ुतबात के अंदर भी इन्तदा और इख़ताम पर निहायत जामेअ और अहम मज़मून होता है। कुरान मजीद की सूरतों की

इब्तदा और इख्तताम भी निहायत जामेअ मज़ामीन पर होती है। चुनाँचे कुरान मजीद की सूरतों की इब्तदाई आयात और इख्ततामी आयात की फज़ीलत पर बहुत सी हदीसें मिलती हैं। सूरतुल बक्ररह की इब्तदाई आयात और इख्ततामी आयात, इसी तरह सूरह आले इमरान की शुरू की आयात और फिर इख्ततामी आयात निहायत जामेअ हैं। यह अंदाज़ अक्सर व बेशतर सूरतों में मिलेगा। यह है असल में बिल् अमूम कुरान का असलूब, जो ज़ाहिर बात है शायरी का नहीं है। आम मयाने में वह किताब नहीं, मज्मुआ-ए-मक़ालात नहीं। इसका असलूब अगर है तो वह खुत्बे से मिलता है। यह गोया खुत्बाते इलाहिया हैं जिनका मज्मुआ है कुरान!



बाब सौम (तीसरा)

कुरान मजीद की तरकीब व तक्रसीम

आयात और सूरतों की तक्रसीम

बहुत सी चीज़ों से मिल कर कोई शै मुरक्कब (मिश्रण) बनती है। कुरान कलामे मुरक्कब है। इसकी तक्रसीम सूरतों और आयात में है। फिर इसमें अहज़ाब और ग्रुप हैं। आम तसव्वुरे किताब तो यह है कि इसके अबवाब होते हैं, लेकिन कुरान हकीम पर इन इस्तलाहात का इत्लाक़ नहीं होता। कुरान हकीम ने अपनी इस्तलाहात खुद वाज़ेह की है। इन इस्तलाहात की दुनिया में मौजूद किसी भी किताब की इस्तलाहात से कोई मुशाबिहत नहीं है। चुनाँचे अल्लामा जाहज़ ने एक बड़ा खूबसूरत उन्वान कायम किया है। वो कहते हैं कि अरब इससे तो वाक्फ़ थे कि उनके बड़े-बड़े शायरों के दीवान होते थे। सारा कलाम किताबी शक़ल में जमा हो गया तो वह दीवान कहलाया। लिहाज़ा किसी भी दर्जे में अगर मिसाल या तशबीह से समझना चाहें तो दीवान के मुक़ाबले में लफ़ज़ कुरान है। फिर दीवान बहुत से क़सीदों का मज्मुआ होता था। हमारे यहाँ भी किसी शायर का दीवान होगा तो उसमें क़सीदें होंगे, ग़ज़लें होंगी, नज़्में होंगी। कुरान हकीम में इस सतह पर जो लफ़ज़ है वह सूरत है। अल्लाह तआला का यह कलाम सूरतों पर मुश्तमिल है। अगर कोई नस्र (गद्य) की किताब है तो वह जुमलों पर मुश्तमिल होगी और अगर नज़्म (कविता) की है तो वह अशआर पर मुश्तमिल होगी। इसकी जगह कुरान मजीद की इस्तलाह आयत है। शायरी में अशआर के ख़ात्मे पर रदीफ़ के साथ-साथ एक लफ़ज़ क़ाफ़िया कहलाता है और ग़ज़ल के तमाम अशआर हम क़ाफ़िया होते हैं। कुरान मजीद पर भी हम आमतौर पर इस लफ़ज़ का इत्लाक़ कर देते हैं, इसलिये कि कुरान मजीद की आयतों में भी आखिरी अल्फ़ाज़ के अंदर सौती आहंग है। यहाँ इन्हें फ़वासिल कहा जाता है, क़ाफ़िया का लफ़ज़ इस्तेमाल नहीं किया जाता कि किसी भी दर्जे में शेर के साथ कोई मुशाबिहत ना पैदा हो जाये।

कुरान मजीद का सबसे छोटा यूनिट आयत है। यानि कुरान मजीद की इब्तदाई इकाई के लिये लफ़्ज़ आयत अख़ज़ किया गया है। आयत के मायने निशानी के हैं। कुरानी आयत गोया अल्लाह के इल्म व हिकमत की निशानी है। आयत का लफ़्ज़ कुरान मजीद में बहुत से मायनों में इस्तेमाल हुआ है। मसलन आयाते आफ़ाक़ी और आयाते अन्फुसी। इस कायनात में हर तरफ़ अल्लाह तआला की निशानियाँ हैं। कायनात की हर शय अल्लाह तआला की कुदरत, उसके इल्म और उसकी हिकमत की गवाही दे रही है। गोया हर शय अल्लाह की निशानी है। फिर कुछ निशानियाँ हमारे अंदर हैं। चुनाँचे फ़रमाया:

“और ज़मीन में निशानियाँ हैं यक़ीन लाने वालों के लिये। और खुद तुम्हारे अपने वजूद में भी। क्या तुमको सूझता नहीं?”
(अज़ ज़ारियात:20-21)

मज़ीद फ़रमाया:

“अनक़रीब हम उनको अपनी निशानियाँ आफ़ाक़ में भी दिखायेंगे और उनके अपने नफ़्स में भी, यहाँ तक कि उन पर यह बात वाज़ेह हो जायेगी कि यह कुरान वाक़ई बरहक़ है।” (हा मीम सजदा:53)

अंग्रेजी में आयत के लिये हम लफ़्ज़ verse बोल देते हैं, मगर verse तो शेर को कहते हैं जबकि कुरान की आयात ना तो शेर हैं, ना मिसरे हैं, ना जुमले हैं। बस बायना लफ़्ज़ आयत ही को आम करना चाहिये। बहरहाल कुछ आयाते आफ़ाक़ी हैं, यानि अल्लाह की निशानियाँ, कुछ आयाते अन्फुसी हैं, वह भी अल्लाह की निशानियाँ हैं और आयाते कुरानियाँ भी दरहक़ीक़त अल्लाह तआला की हिक़मते बालगा और इल्मे कामिल की निशानियाँ हैं। यह लफ़्ज़ कुरान की इकाई के तौर पर इस्तेमाल हुआ है।

जान लेना चाहिये कि आयात का तअय्युन किसी ग्रामर, बयान या नह्व (syntax) के उसूल पर नहीं है, इसमें कोई इज्त्हाद (अपनी राय) दाख़िल नहीं है, बल्कि इसके लिये एक इस्तलाह “तौक़ीफ़ी” इस्तेमाल होती है, यानि यह रसूल अल्लाह ﷺ के बताने पर मौकूफ़ (निर्भर) है। चुनाँचे हम देखते हैं

कि आयात बहुत तवील (लम्बी) भी हैं। एक आयत आयतल कुसी है जिसमें मुकम्मल दस जुमले हैं, लेकिन बाज़ आयात हर्फ़े मुक़त्आत पर भी मुश्तमिल हैं। {حَمَّ} एक आयत है, हालाँकि इसका कोई मफ़हूम मालूम नहीं है, आम ज़बान के ऐतबार से इसके मायने मुअय्यन नहीं किये जा सकते। यह तो हुरूफ़े तहज़्ज़ी हैं। इसको मुरक़बे कलाम भी नहीं कह सकते, क्योंकि इसको अलैहदा-अलैहदा पढ़ा जाता है। इसलिये यह हुरूफ़े मुक़त्आत कहलाते हैं। {حَمَّ} इनको जमा नहीं कर सकते, यह तोड़-तोड़ कर अलैहदा-अलैहदा पढ़े जायेंगे। इसी तरह “अलिफ़ लाम मीम” को “अलम्” नहीं पढ़ा जा सकता। लेकिन यह भी आयत है। इस बारे में एक बात याद रखिये कि जहाँ हुरूफ़े मुक़त्आत में से एक-एक हर्फ़ आया है जैसे {ص وَالْقُرْآنِ ذِي الذِّكْرِ} {ن وَالْقَلَمِ وَمَا يَسْطُرُونَ} यहाँ एक हर्फ़ पर आयत नहीं बनी, लेकिन दो-दो हुरूफ़ पर आयतें बनी हैं। “हा मीम” कुरान में सात जगह आया है और यह मुकम्मल आयत है। अलिफ़ लाम मीम आयत है। अल्बत्ता “अलिफ़ लाम रा” तीन हुरूफ़ हैं और वह आयत नहीं है। मालूम हुआ कि इसकी बुनियाद किसी उसूल, कायदे या इज्त्हाद (अपनी राय) पर नहीं है बल्कि यह अमूर कुल्लियतन तौक़ीफ़ी (अल्लाह के द्वारा सिखाया हुआ) हैं कि हुज़ूर ﷺ के बताने से मालूम हुए हैं। अल्बत्ता फिर हुज़ूर ﷺ से चूँकि मुख्तलिफ़ रिवायात हैं, इसलिये इस पहलु से कहीं-कहीं फ़र्क़ वाक़ेअ हुआ है। चुनाँचे आयाते कुरानिया की तादाद मुत्तफ़िक्क़ अलै नहीं है। इस पर तो इत्तेफ़ाक़ है कि आयतों की तादाद छः हज़ार से ज़्यादा है, लेकिन बाज़ के नज़दीक़ कमोबेश 6216, बाज़ के नज़दीक़ 6236 और बाज़ के नज़दीक़ 6666 है। इसके मुख्तलिफ़ असबाब हैं। बाज़ सूरतों के अंदर आयतों के तअय्युन में भी फ़र्क़ है। लेकिन यह सब किसी का अपना इज्त्हाद (अपनी राय) नहीं है, बल्कि सब के सब अदद व शुमार हुज़ूर ﷺ की नक़ल होने की बुनियाद पर है। एक फ़र्क़ यह भी है कि आयत बिस्मिल्लाह कुरान हक़ीम में 113 मर्बता सूरतों के शुरू में आती है (क्योंकि सूरतों की कुल तादाद 114 है और उनमें से सिर्फ़ एक सूरत सूरह तौबा के शुरू में बिस्मिल्लाह नहीं आती)। अगर इसको हर मर्तबा शुमार किया जाये तो 113 तादाद बढ़ जायेगी, हर मर्तबा शुमार ना किया जाये तो 113 तादाद कम हो जायेगी। इस ऐतबार से आयाते कुरानिया की तादाद मुत्तफ़िक्क़ अलै नहीं है, बल्कि इसमें इख़्तलाफ़ है। जैसा कि पहले ज़िक़्र हो चुका

कि हुरुफे मुक़त्आत पर भी आयत है, मुरक़्कबाते नाक़िसा पर भी आयत है, जैसे {وَالْعَصْرِ} कहीं आयत मुकम्मल जुमला भी है, और ऐसी आयतें भी हैं जिनमें दस-दस जुमले हैं।

कुरान हकीम की आयतें जमा होती हैं तो सूरतें वजूद में आती हैं सूरत का लफ़्ज़ “सूर” से माखूज़ है और यह लफ़्ज़ सूरह अल् हदीद में फ़सील के मायने में आया है। पिछले ज़माने में हर शहर के बाहर, गिर्दा-गिर्द (चारों तरफ़) एक फ़सील (firewall) होती थी जो शहर का इहाता कर लेती थी, शहर की हिफ़ाज़त का काम भी देती थी और हद बंदी भी करती थी। आयतों को जब जमा किया गया तो उससे जो फ़सीलें वजूद में आयीं वह सूरतें हैं। फ़सल अलैहदा करने वाली शय को कहते हैं। तो गोया एक सूरह दूसरी सूरह से अलैहदा हो रही है। फ़सील अलैहदगी की बुनियाद है। फ़सील के लिये “सूर” का लफ़्ज़ मुस्तमिल है, फिर इससे सूरत बना है। अलबत्ता यह सूरतें “अबवाब” नहीं हैं, बल्कि जिस तरह आयत के लिये लफ़्ज़ verse मुनासिब नहीं इसी तरह सूरत के लिये लफ़्ज़ “बाब” या chapter दुरुस्त नहीं।

अब जान लीजिये कि जैसे आयात का मामला है ऐसे ही सूरतों का भी है। चुनाँचे सूरतें बहुत छोटी भी हैं। कुरान मजीद की तीन सूरतें सिर्फ़ तीन-तीन आयात पर मुश्तमिल हैं: सूरह अल् अन्न, सूरह अल् नन्न, सूरह अल् कौसर। जबकि तीन सूरतें 200 से ज़्यादा आयतों पर मुश्तमिल हैं। सूरह अल् बक्ररह की 285 या 286 आयतें हैं। (सूरह अल् बक्ररह की आयतों की तादाद के ऐतबार से राय में फ़र्क है)। सबसे ज़्यादा आयतें सूरह अल् बक्ररह में हैं। फिर सूरह अश् शौरा में 227 और सूरह आराफ़ में 206 आयतें हैं। मुहक्कीन उलेमाओं का इस पर इज्मा है कि आयतों की तरह सूरतों का तअय्युन भी हुज़ूर ﷺ ने खुद फ़रमाया। अगरचे एक ज़ईफ़ सा क़ौल मिलता है कि शायद यह काम सहाबा किराम (रज़ि०) ने किसी इज्त्हाद से किया हो, मगर यह मुख्तार क़ौल नहीं है, ज़ईफ़ है। इज्मा इसी पर है कि आयतों की तार्इन भी तौक़ीफी और सूरतों की तार्इन भी तौक़ीफी है।

कुरान हकीम की सात मंज़िलें

दौरे सहाबा (रज़ि०) में हमें एक तक्रसीम मिलती है और वह है सात मंज़िलों की शक्ल में सूरतों की गुपिंग। इन्हें अहज़ाब भी कहते हैं। “हज़ब” का

लफ़्ज़ अहादीस में मिलता है, लेकिन वह एक ही मायने में नहीं होता। यह लफ़्ज़ इस मायने में भी इस्तेमाल होता था कि हर शख्स अपने लिये तिलावत की एक मिक्कदार मुअय्यन कर लेता था कि मैं इतनी मिक्कदार रोज़ाना पढ़ूँगा। यह गोया कि उसका अपना हज़ब है। चुनाँचे हज़रत उमर बिन ख़त्ताब (रज़ि०) से मरवी एक हदीस में आया है कि रसूल ﷺ ने इशार्द फ़रमाया:

مَنْ تَأَمَّرَ عَنْ جِزْيَةِ مِنَ اللَّيْلِ، أَوْ عَنْ شَيْءٍ مِنْهُ، فَقَرَأَ مَا بَيْنَ صَلَاةِ الْفَجْرِ وَصَلَاةِ الظُّهْرِ، كُتِبَ لَهُ كَأَمَّا قَرَأَ مِنْ اللَّيْلِ (اخرجه الجماعة الالبغاري)

“जो शख्स नींद (या बीमारी) की वजह से रात को (तहज़ुद में) अपने हज़ब को पूरा न कर सके, फिर वह फ़जर और जुहर के दरमियान उसकी तिलावत कर ले तो उसके लिये उतना ही सवाब लिखा जायेगा गोया उसने उसे रात के दौरान पढ़ा है।” (यह हदीस बुख़ारी के सिवा दीगर अइम्मा-ए-हदीस ने रिवायत की है)

यानि जो शख्स किसी वजह से किसी रात अपने हज़ब को पूरा न कर सके, जितना भी निसाब उसने मुअय्यन किया हो, किसी बीमारी की वजह से, या नींद का ग़लबा हो जाये, तो उसे चाहिये कि अपनी इस क़िरात या तिलावत को वह दिन के वक़्त ज़रूर पूरा कर ले। सहाबा किराम (रज़ि०) में से अक्सर का मामूल था कि हर हफ्ते कुरान मजीद की तिलावत ख़त्म कर लेते थे। लिहाज़ा ज़रूरत महसूस हुई कि कुरान के सात हिस्से ऐसे हो जायें कि एक हिस्सा रोज़ाना तिलावत करें तो हर हफ्ते कुरान मजीद का दौर मुकम्मल हो जाये। इसलिये सूरतों के सात मज्मुए या गुप बना दिये गये। इन गुपों के लिये आज-कल हमारे यहाँ जो लफ़्ज़ मुस्तमिल है वह “मंज़िल” है, लेकिन हदीसों और रिवायतों में हज़ब का लफ़्ज़ आता है।

अहज़ाब या मंज़िलों की इस तक्रसीम में बड़ी खूबसूरती है। ऐसा नहीं किया गया कि यह सातों हिस्से बिल्कुल मसावी (बराबर) किये जायें। अगर ऐसा होता तो ज़ाहिर बात है कि सूरतें टूट जातीं, उनकी फ़सील ख़त्म हो जाती। चुनाँचे हर हज़ब में पूरी-पूरी सूरतें जमा की गईं। इस तरह अहज़ाब या मंज़िलों की मिक्कदार मुख्तलिफ़ हो गईं। चुनाँचे कुछ हज़ब छोटे हैं कुछ बड़े हैं, लेकिन इनके अंदर सूरतों की फ़सीलें नहीं टूटीं, यह इनका हुस्न है। ग़ौर करें तो मालूम होता है कि यह शय भी शायद अल्लाह तआला ही की तरफ़ से है। अगरचे यह नहीं कहा जा सकता कि मंज़िलों की तार्इन भी तौक़ीफी है,

लेकिन मंज़िलों की इस तकसीम में गिनती के ऐतबार से जो हुस्न पैदा हुआ है उससे मालूम होता है कि यह भी अल्लाह तआला की हिकमत ही का एक मज़हर है। सूरतुल फ़ातिहा को अलग रख दिया जाये कि यह तो कुरान हकीम का मुक़दमा या दिबाचा है तो इसके बाद पहला हज़ब या मंज़िल तीन सूरतों (अल् बक्ररह, आले इमरान, अल् निसा) पर मुश्तमिल है। दूसरी मंज़िल पाँच सूरतों पर, तीसरी मंज़िल सात सूरतों पर, चौथी मंज़िल नौ सूरतों पर, पाँचवीं मंज़िल ग्यारह सूरतों पर, और छठी मंज़िल तेरह सूरतों पर मुश्तमिल है, जबकि सातवीं मंज़िल (हज़बे मुफ़स्सल) जो कि आखिरी मंज़िल है, इसमें 65 सूरतें हैं। आखिर में सूरतें छोटी-छोटी हैं। याद रहे कि 65 भी 13 का multiple बनता है (13x5=65)। सूरतों की तादाद जैसा कि ज़िक्र हो चुका 114 है। यह तादाद मुत्तफ़िक़ अलै है, जिसमें कोई शक व शुबह की गुंजाइश नहीं।

आजकल जो कुरान हकीम हुकुमत सऊदी अरब के ज़ेरे अहतमाम बहुत बड़ी तादाद में बड़ी ख़ूबसूरती और नफ़ासत से शाया (प्रकाशित) होता है, उसमें हज़ब का लफ़्ज़ बिल्कुल एक नये मायने में आया है। उन्होंने हर पारे को दो हज़ब में तकसीम कर लिया है, गोया निस्फ़ पारे की बजाये लफ़्ज़ हज़ब है। फिर वह हज़ब भी चार हिस्सों में मुन्कसिम है: **رُبُّ الْحَرْبِ نَصْفُ الْحَرْبِ** और फिर **ثَلَاثَةُ أَرْبَاعِ الْحَرْبِ**। इस तरह उन्होंने हर पारे के आठ हिस्से बना लिये हैं। यह लफ़्ज़ हज़ब का बिल्कुल नया इस्तेमाल है। इसकी क्या सनद और दलील है और यह कहाँ से माखूज़ है, यह मेरे इल्म में नहीं है।

इंसानी कलाम हुरूफ़ और अस्वात (आवाज़) से मुरत्तब (बना) होता है और हर ज़बान में हुरूफ़े हिजाइया होते हैं। फिर हुरूफ़ मिल कर कलिमात बनाते हैं। कलिमात से कलाम वजूद में आता है, ख़्वाह वह कलाम मंज़ूम (नज़्म में) हो या नसर हो। इस तरह कुरान मजीद की तरकीब है। हुरूफ़ से मिलकर कलिमात बने, कलिमात ने आयात की शक़ल इख़्तियार की, आयात जमा हुई सूरतों की शक़ल में और सूरतें जमा हो गयीं मंज़िलों की शक़ल में।

रुकुओं और पारों की तकसीम

सूरतों की पहली तकसीम रुकुओं में है। यह तकसीम दौरे सहाबा (रज़ि०) और दौरे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم में मौजूद नहीं थी। यह तकसीम ज़माना मा बाद की

पैदावार हैं। रुकुओं की तकसीम बड़ी सूरतों में की गई। 35 सूरतें ऐसी हैं जो एक ही रुकु पर मुश्तमिल हैं, यानि वह इतनी छोटी हैं कि इन्हें एक रकात में आसानी से पढ़ा जा सकता है, लेकिन बक़िया सूरतें तवील हैं। सूरह अल् बक्ररह में 285 या 286 आयात हैं और उसके 40 रुकु हैं। हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने एक रात इन तीन सूरतों (अल् बक्ररह, आले इमरान, अल् निसा) की मंज़िल एक रकात में मुकम्मल की है। लेकिन यह तो इस्तसनात (exceptions) की बात है। आम तौर पर तिलावत की वह मिक्दाद जो एक रकात में बा-आसानी पढ़ी जा सकती हो, एक रुकु पर मुश्तमिल होती है। रुकु रकात से ही बना है। यह तकसीम हज़ाज बिन युसुफ़ के ज़माने में यानि ताबईन के दौर में हुई है। लेकिन ऐसा नज़र आता है कि यह तकसीम बड़ी मेहनत से मायने पर ग़ौर करते हुए की गई है कि किसी मक़ाम पर एक मज़मून मुकम्मल हो गया और दूसरा मज़मून शुरु हो रहा है तो वहाँ अगर रुकु कर लिया जाये तो बात टूटेगी नहीं। अगरचे हमारे यहाँ आमतौर पर अइम्मा-ए-मसाजिद पढ़े-लिखे लोग नहीं होते, अरबी ज़बान से वाकिफ़ नहीं होते, लिहाज़ा अक्सर ऐसी तकलीफ़देह सूरतें हाल पैदा होती है कि वह ऐसी जगह पर रुकु कर देते हैं जहाँ कलाम का रब्त मुंकतह हो जाता है। फिर अगली रकात में वहाँ से शुरु करते हैं जहाँ से बात मायनवी ऐतबार से बहुत ही गिराँ गुज़रती है। रुकुओं की तकसीम बिलउमूम बहुत उम्दा है, लेकिन चंद एक मक़ामात पर ऐसा महसूस होता है कि अगर यह आयत यहाँ से हटा कर रुकु मा क़ब्बल में शामिल की गई होती या रुकु का निशान इस आयत से पहले होता तो मायने और मफ़हूम के ऐतबार से बेहतर होता। बहरहाल अक्सर व बेशतर रुकुओं की तकसीम मायनवी ऐतबार से सही है जो बड़ी मेहनत से गहराई में ग़ौर करके की गई है।

इसके अलावा एक तकसीम पारों की शक़ल में है। यह तकसीम तो और भी बाद के ज़माने की है और बड़ी भूँडी तकसीम है, इसलिये कि इसमें सूरतों की फ़सीलें तोड़ दी गई हैं। ऐसा महसूस होता है कि जब मुसलमानों का जोश ईमान कम हुआ और लोगों ने मामूल बनाना चाहा कि हर महीने में एक मर्तबा कुरान ख़त्म कर लें तब उनको ज़रूरत पेश आई कि इसको तीस हिस्सों में तकसीम किया जाये। इस मक़सद के लिये किसी ने ग़ालिबन यह हरकत की कि उसके पास जो मुस्हफ़ मौजूद था उसने उसके सफ़हें (पन्ने) गिन कर तीस पर तकसीम करने की कोशिश की। इस तरह जहाँ भी सफ़हा (पन्ना) कट गया

वहीं निशान लगा दिया और अगला पारा शुरू हो गया। इस भूँडी तकसीम की मिसाल देखिये कि सूरह अल् हिज्र की एक आयत तेहरवें पारे में है जबकि बाक़ी पूरी सूरत चौदहवें पारे में है। हमारे यहाँ जो मुस्हफ़ है उनमें आपको यही शक़ल नज़र आयेगी। सऊदी अरब से जो कुरान मजीद बड़ी तादाद में शाये होकर (छप कर) पूरी दुनिया में फैला है, यह अब पाकिस्तानी और हिन्दुस्तानी मुसलमानों के लिये इसी अंदाज़ से शायी किया जाता है जिससे कि हम मानूस (परिचित) हैं। अलबत्ता अहले अरब के लिये जो कुरान मजीद शायी किया जाता है उसमें रमूज़े अवकाफ़ और अलामाते ज़ब्त भी मुख़्तलिफ़ हैं और उसमें चौदहवाँ जुज़ सूरह अल् हिज्र से शुरू किया जाता है। गोया वह तकसीम जो हमारे यहाँ है उसमें उन्होंने इज्जतहाद से काम लिया है, अगरचे पारों की तकसीम बाक़ी रखी है। बाज़ दूसरे अरब मुमालिक (देशों) से जो कुरान मजीद शाये होते हैं, उनमें पारों का ज़िक्र ही नहीं है। इसलिये कि यह कोई मुत्तफ़िक़ अलै चीज़ नहीं है और ज़मान-ए-ताबईन में भी इसका कोई तज़करा नहीं है, यह इससे बहुत बाद की बात है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) और हज़रत इमरान इब्ने हुसैन (रज़ि०) से मरवी मुत्तफ़िक़ अलै हदीस है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया:

خَيْرُ النَّاسِ قَرْبِي ثُمَّ الَّذِينَ يُلُونَهُمْ ثُمَّ الَّذِينَ يَكُونُهُمْ

इस हदीस की रू से बेहतरीन अदवार (वक़्त) तीन ही हैं। दौरे सहाबा, दौरे ताबईन, फिर दौरे तबे ताबईन। इन तीन ज़मानों को हम “قَرْنٌ مشهودٌ لها بالخير” कहते हैं। बाक़ी इसके बाद का मामला हुज्जत नहीं है, इसकी दीन के अंदर कोई मुस्तक़िल और दायमी अहमियत नहीं है।

तरतीबे नुज़ूली और तरतीबे मुस्हफ़ का इख़्तलाफ़

कुरान हकीम की तरतीब के ज़िम्न में पहली बात जो बिल्कुल मुत्तफ़िक़ अलै और हर शक व शुबह से बाला है वह यह है कि तरतीबे नुज़ूली बिल्कुल मुख़्तलिफ़ है और तरतीबे मुस्हफ़ बिल्कुल मुख़्तलिफ़ है। अक्सर व बेशतर जो सूरतें इब्तदा में नाज़िल हुईं वह आख़िर में दर्ज हैं और हिज़रत के बाद जो सूरतें नाज़िल हुईं हैं (अल् बक्ररह, आले इमरान, अल् निसा, अल् मायदा) उनको शुरू में रखा गया है। तो इसमें किसी शक व शुबह की गुंजाईश नहीं कि तरतीबे नुज़ूली और तरतीबे मुस्हफ़ मुख़्तलिफ़ है।

जहाँ तक तरतीबे नुज़ूली का ताल्लुक़ है, इससे हर तालिबे इल्म को दिलचस्पी होती है जो कुरान मजीद पर ग़ौर करना चाहता है। इसलिये कि तरतीबे नुज़ूली के हवाले से कुरान हकीम के मायने और मफ़हूमों का एक नया पहलु सामने आता है। एक तो यह कि एक ख़ास पसमंज़र के साथ सूरतें जुड़ती हुई चली जाती हैं। इब्तदा में क्या हालात थे जिनमें यह सूरतें नाज़िल हुईं, फिर हालात ने क्या पलटा ख़ाया तो अगली सूरतें नाज़िल हुईं। चुनाँचे तरतीबे नुज़ूली के हवाले से कुरान हकीम को मुरत्तब किया जाये तो एक ऐतबार से वह सीरतुन नबी ﷺ की किताब बन जायेगी। इसलिये कि आगाज़े वही के बाद से लेकर आप ﷺ के इन्तेक़ाल तक वह ज़माना है जिसमें कुरान नाज़िल हुआ। दूसरे यह कि इस पूरे ज़माने के साथ कुरान मजीद की आयात और सूरतों का जो मज्मूई रब्त है, तरतीबे नुज़ूली की मदद से उसे समझने और ग़ौर फ़िक़्र करने में मदद मिलती है। पस (इसलिये) कुरान मजीद के हर तालिबे इल्म को इससे दिलचस्पी होना समझ में आता है। चुनाँचे बाज़ सहाबा (रज़ि०) के बारे में रिवायात मिलती हैं कि उन्होंने तरतीबे नुज़ूली के ऐतबार से कुरान हकीम को मुरत्तब (set) किया था। हज़रत अली (रज़ि०) के बारे में यह बात बहुत शद व मद (विस्तार) के साथ कही जाती है कि उन्होंने भी इसको तरतीबे नुज़ूली के ऐतबार से कुरान हकीम को मुरत्तब किया था, और अवाम की सतह पर यह मशहूर है कि अहले तशय्य (शिया) उसी को असल और मुस्तनद कुरान मानते हैं और हज़रत अली (रज़ि०) का यह मुस्हफ़ उनके बारहवें इमाम के पास है, जो एक ग़ार में रू पोश हैं। क़यामत के करीब जब वह ज़ाहिर होंगे तब वह अपना यह मुस्हफ़ यानि “असल कुरान” लेकर आयेंगे। गोया अहल तशय्य (शिया) यह कुरान उस वक़्त तक के लिये ही कुबूल करते हैं। आमतौर पर उनकी तरफ़ यही बात मन्सूब है, लेकिन दौरे हाज़िर के बाज़ शिया उल्मा इस तसव्वुर के क़ायल नहीं हैं। एक शिया आलिमे दीन सय्यद हादी अली नक़वी ने बहुत शद व मद (विस्तार) के साथ इस तसव्वुर की नफ़ी की है और कहा है कि “हम इसी कुरान को मानते हैं, यही असल कुरान है और इसे मन व अन महफूज़ मानते हैं। हमारे नज़दीक कोई आयत इससे ख़ारिज नहीं हुई और कोई शय बाहर से बाद में इसमें दाख़िल नहीं हुई। यही जो “دُفَّتَيْنِ” यानि जिल्द के दो गत्तों के माबैन है, यही हक़ीक़ी और असली कुरान है।”

बहरहाल अगर हज़रत अली (रज़ि०) के पास ऐसा कोई मुस्हफ़ था जिसे आपने तरतीबे नुज़ूली के मुताबिक़ मुरत्तब किया था तो इसमें कोई हर्ज की बात नहीं। अमली और हकीक़ी ऐतबार से कुरान हकीम पर ग़ौरो फ़िक्र करने के लिये कुरान मजीद के बाज़ अंग्रेज़ी तर्जुमें में भी तरतीबे नुज़ूली के ऐतबार से सूरतों को मुरत्तब करके तर्जुमा किया गया है। (मुहम्मद इज़तु दरविज़ा ने भी अपनी तफ़्सीर “अल् तफ़्सीर अल् हदीस” में सूरतों को नुज़ूली ऐतबार से तरतीब दिया है।) अमली ऐतबार से इसमें कोई हर्ज नहीं, लेकिन असल हुज्जत तरतीबे मुस्हफ़ की है। यह तरतीब तौफ़ीक़ी (अल्लाह के द्वारा बताया हुआ) है। यह मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की दी हुई तरतीब है और यही तरतीब लौहे महफूज़ में है। असल कुरान तो वही है। अज़रूए अल्फ़ाज़े कुरानी:

{إِنَّهُ لَقُرْآنٌ كَرِيمٌ ۝ فِي كِتَابٍ مَّكْنُونٍ ۝} (अल् वाक़िया:77-78) और {بَلْ هُوَ قُرْآنٌ مَّجِيدٌ ۝ فِي لَوْحٍ مَحْفُوظٍ ۝} (अल् बुरुज:21-22)

“अल् इतक़ान फ़ी उलूमुल् कुरान” में जलालुद्दीन स्यूति रहि० ने बहुत ही ज़ोर और ताकीद के साथ किसी का यह क़ौल नक़ल किया है कि अगर तमाम इंसान और ज़िन्न मिल कर कोशिश कर लें तब भी तरतीबे नुज़ूली पर कुरान को मुरत्तब नहीं किया जा सकता। इसलिये कि इसके बारे में हमारे पास मुकम्मल मालूमात नहीं हैं। बहुत सी सूरतों के अंदर बाद में नाज़िल होने वाली आयतें पहले आ गई हैं और शुरू में नाज़िल होने वाली बाद में आई हैं। इस ऐतबार से एक-एक आयत के बारे में मुअय्यन करना और उसकी तरतीब के बारे में इज्मा नामुमकिन है। चुनाँचे असल मुस्हफ़ वही है जो हमारे पास है और इसकी तरतीब भी तौफ़ीक़ी (अल्लाह के द्वारा बताया हुआ) है जो मुहम्मद रसूल ﷺ ने बताई है।

इस तरतीबे मुस्हफ़ के ऐतबार से इस दौर में सूरतों की एक नयी ग्रुपिंग की तरफ़ रहनुमाई हुई है। मौलाना हमीदुद्दीन फ़राही रहि० ने खासतौर पर अपनी तवज्जह को नज़्मे कुरान पर मरकूज़ किया, आयात का बाहमी रब्त तलाश किया। नेज़ यह कि आयतों की वह कौनसी क्रम मुशतरक है जिसकी बिना पर उनको सूरतों में जमा किया गया--- फिर यह कि हर सूरत का एक अमूद और मरकज़ी मज़मून है, बज़ाहिर आयतें ग़ैर मरबूत (असंबंधित) नज़र आती हैं लेकिन दरहकीक़त उनके माबैन (बीच) एक मन्तक़ी (वैचारिक) रब्त

मौजूद है और हर आयत उस सूरत के अमूद (केंद्रीय विचार) के साथ मरबूत (संबंधित) है--- मज़ीद यह कि सूरतें जोड़ों की शक़ल में हैं--- इन चीज़ों पर मौलाना फ़राही रहि० ने ज्यादा तवज्जह की। मौलाना इस्लाही साहब ने इस बात को मज़ीद आगे बढ़ाया है।

इस बारे में एक इश्तबाह (शक) पैदा हो सकता है, जिसे रफ़ा (दूर) कर देना ज़रूरी है कि कुरान मजीद का यह पहलु इस ज़माने में क्यों सामने आया और इससे पहले इस पर ग़ौर क्यों नहीं हो सका? क्या हमारे अस्लाफ़ (पूर्वज) कुरान मजीद पर तदब्बुर का हक़ अदा नहीं करते थे? इस इश्तबाह (शक) को अपने ज़हन में न आने दें, इसलिये कि कुरान मजीद की शान यह है कि इसके अजायब (अजूबे) कभी ख़त्म नहीं होंगे। हुज़ूर ﷺ का अपना क़ौल है: “لَا تَنْفَضُّنِي عَجَائِبُهُ”। अगर कोई शख्स यह समझता है कि किसी ख़ास दौर के मुहदसीन, मुहक्कीन, मुफ़स्सरीन कुरान मजीद के इल्म का बतमाम व कमाल इहाता कर चुके तो वह सख़्त ग़लती पर है। अगर ऐसा होता तो यह कुरान मजीद पर भी तअन होता और खुद हुज़ूर ﷺ के इस क़ौल की भी नफ़ी होती। यह तो जैसे-जैसे ज़माना आगे बढ़ेगा कुरान मजीद के अजायब, इसकी हिकमतें, इसके उलूम (अध्ययन) व मारफ़ के नये-नये ख़ज़ाने बरामद होते रहेंगे। चुनाँचे हमारा तर्ज़ अमल यह होना चाहिये कि मुताअला कुरान के बाद हम यह महसूस करें कि हमने अपनी इस्तताअत (क्षमता) के मुताबिक़ इसको सीखा है और बाद में आने वाले इसमें से कुछ और भी हासिल करेंगे, वह हमेशा इसके लिये कोशां रहेंगे, इसमें ग़ौरो फ़िक्र और तदब्बुर करते रहेंगे और नये-नये उलूम (अध्ययन) और नये-नये निकात इसमें से बरामद होते रहेंगे। अल्लाह तआला कि हिकमत में यही ज़माना इस इन्क़शाफ़ के लिये मुअय्यन था, और ज़ाहिर बात है कि हिकमते कुरानी का जो भी कोई नया पहलु दरयाफ़्त होगा वह किसी इंसान ही के ज़रिये से होगा। लिहाज़ा इसके लिये तबियत के अंदर बुअद महसूस ना करें। बहरहाल मौलाना फ़राही रहि० ने नज़्मे कुरान को अपना खुसूसी मौजू (विषय) बनाया। वह तफ़्सीर कुरान लिखना चाहते थे मगर लिख नहीं सके, सिर्फ़ चंद सूरतों की तफ़ासीर उन्होंने लिखी हैं। उनमें से भी बाज़ ना-मुकम्मल हैं। वह एक मुफ़क्किर किस्म के इंसान थे मुसन्नफ़ किस्म के इंसान नहीं थे। मुफ़क्किर इंसान मुसलसल ग़ौर करता रहता है और उसके सामने नये-नये पहलू आते रहते हैं। चुनाँचे उनका तस्वीफ़ व तालीफ़ का अंदाज़ यह था कि उन्होंने मुख़्तलिफ़ मौजूआत (विषयों) पर

फ़ाइल खोल रखे थे। जब कोई नया ख़याल आता तो काग़ज़ पर लिख कर मुतालफ़ा फ़ाइल में शामिल कर लेते। यही वजह है कि उनकी अक्सर तसानीफ़ उनकी वफ़ात के बाद किताबी शक़ल में शायी (छपी) हुई हैं, जबकि उनके ज़माने में वह सिर्फ़ फ़ाइलों की शक़ल में थीं और किसी शय के छपने की नौबत आई ही नहीं। सोच-विचार का तसलसुल उनके आख़िरी लम्हें तक जारी रहा। “मुक़द्दमा निज़ामुल कुरान” वाक़िअतन उनके फ़िक़्र और सोच की सही नुमाइन्दगी (प्रतिनिधित्व) करता है। इस ज़िम्न में उनके शाग़िर्द रशीद अमीन अहसन इस्लाही साहब ने बात को आगे बढ़ाया है। नज़्मे कुरान के बारे में इन हज़रात के नतीजे फ़िक़्र के चंद निकात मुलाहिज़ा हों:

- (i) हर सूरत का एक अमूद (केंद्रीय विचार) है, जैसे एक हार की डोरी है उसमें मोती पिरोये हुए हैं। यह डोरी देखने वालों को नज़र नहीं आती, मोती नज़र आते हैं, लेकिन उनको बाँधने वाली शय तो डोरी है जिसमें वह पिरोये गए हैं। इसी तरह हर सूरत का एक मरकज़ी मज़मून या अमूद (केंद्रीय विचार) है जिसके साथ उसकी तमाम आयतें मरबूत (जुड़ी) हैं।
- (ii) कुरान मजीद की अक्सर सूरतें जोड़ों की शक़ल में हैं और यूँ कह सकते हैं कि एक ही मज़मून का एक रुख़ एक सूरत में आ जाता है और उसी का दूसरा रुख़ उस जोड़े के दूसरे हिस्से में आकर मज़मून की तकमील कर देता है। मौलाना इस्लाही साहब ने भी ऐसा ही फ़रमाया है। अलबत्ता जहाँ तक इस उसूल के इन्तबाक़ (अनुपालन) का ताल्लुक़ है इसमें इख़्तिलाफ़ की गुंजाइश है और जो हज़रात मेरे दरसों में तसलसुल (sequence) से कसरत करत रहे हैं उन्हें मालूम है कि मुझे बहुत से मौक़ों पर इस्लाही साहब से इख़्तिलाफ़ भी है, लेकिन उसूलन यह बात दुरुस्त है कि कुरान मजीद की अक्सर सूरतें जोड़ों की शक़ल में हैं। ताहम बाज़ सूरतें मुनफ़रिद हैसियत की मालिक हैं, उनका जोड़ा उस जगह पर मौजूद नहीं है। अगरचे मैंने तहक़ीक़ की है कि अक्सर व बेशतर ऐसी सूरतों के जोड़े भी मायनन कुरान में मौजूद हैं। मसलन सूरह अल् नूर तन्हा और मुनफ़रिद है, सूरह अल् अहज़ाब भी मुनफ़रिद और तन्हा है, लेकिन यह दोनों आपस में जोड़ा हैं और इनमें जोड़ा होने की निस्बत ब-तमाम व कमाल मौजूद है। इसी तरह सूरह अल् फ़ातिहा मुनफ़रिद (अनोखी) है। वह तो इस ऐतबार से भी मुनफ़रिद (अनोखी) है कि वाक़िअतन उसका ब-तमाम व कमाल जोड़ा बनना मुमकिन नहीं, वह

अपनी जगह पर कुरान हकीम और سَيِّدُ الْمَنَاقِبِ है, लेकिन सूरह अन्नास में ग़ौर करें तो मायनन यह सूरत सूरह अल् फ़ातिहा का जोड़ा बनती है। इसलिये कि सूरह अल् फ़ातिहा में इस्तआनत (मदद) है और सूरह अन्नास में इस्तआज़ह (शरण)। फिर सूरतुल फ़ातिहा में अल्लाह तआला की तीन शानें रब, मालिक, इलाह हैं और यही तीन शानें सूरतुन्नास में भी हैं।

- (iii) तिलावत के लिये सात मंज़िलों के अलावा कुरान हकीम में सूरतों की एक मायनवी गुपिंग भी है। इस ऐतबार से भी सूरतों के सात गुप हैं और हर गुप में एक मक्की और मदनी दोनों तरह की सूरतें शामिल हैं। हर गुप में एक या एक से ज़्यादा मक्की सूरतें और उसके बाद एक या एक से ज़्यादा मदनी सूरतें हैं। एक गुप की मक्की और मदनी सूरतों में वही निस्बत है जो एक जोड़े की दो सूरतों में होती है। जैसे एक मज़मून की तकमील एक जोड़े की सूरतों में होती है, यानि एक रुख़ एक फ़र्द में और दूसरा रुख़ दूसरे फ़र्द में, इसी तरह हर गुप का एक मरकज़ी मज़मून और अमूद (केंद्रीय विचार) है, जिसका एक रुख़ मक्की सूरतों में और दूसरा रुख़ मदनी सूरतों में आ जाता है। इस तरह ग़ौर व फ़िक़्र और तदब्बुर करके नये मैदान सामने आ रहे हैं। जो इन्सान भी इनका अमूद मुअय्यन करने में ग़ौरो फ़िक़्र करेगा वह किसी नतीजे पर पहुँचेगा, अगरचे अमूद मुअय्यन करने में इख़्तिलाफ़ हो सकता है। सबसे बड़ा गुप पहला है जिसमें मक्की सूरत सिर्फ़ एक यानि सूरतुल फ़ातिहा जबकि मदनी सूरतें चार हैं जो सबा छः पारों पर फैली हुई है, यानि सूरतुल बक्ररह, आले इमरान, अल् निसा और अल् मायदा। दूसरा गुप इस ऐतबार से मुतवाज़िन है कि उसमें दो सूरतें मक्की और दो मदनी हैं। सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़ मक्की हैं जबकि सूरतुल अन्फ़ाल और सूरतुल तौबा मदनी हैं। तीसरे गुप में सूरह युनुस से सूरह अल् मोमिनून तक चौदह मक्की सूरतें हैं। यह तक़रीबन सात पारे बन जाते हैं। इसके बाद एक मदनी सूरत है और वह सूरतुल नूर है। इसके बाद चौथे गुप में सूरतुल फ़ुरक़ान से सूरतुल सज्दा तक मक्कियात हैं, फिर एक मदनी सूरत सूरतुल अहज़ाब है। पाँचवें गुप में सूरह सबा से लेकर सूरतुल अहक़ाफ़ तक मक्कियात हैं, फिर तीन मदनी सूरतें हैं, सूरह मुहम्मद, सूरतुल फ़तह और सूरह अल् हुजरात हैं। इसके बाद छठे गुप में फिर सूरह काफ़ से सूरतुल वाक़िया तक सात मक्कियात हैं जिनके बाद फिर दस मदनियात हैं सूरह अल् हदीद से

सूरह अल् तहरीम तक। इसी तरह सातवें ग्रुप में भी पहले मक्की सूरतें हैं और आखिर में दो मदनी सूरतें हैं। इस तरह यह सात ग्रुप बनते हैं। यह ग्रुप मौलाना इस्लाही साहब के मुरत्तब करदा हैं, इनमें पहला और आखिरी ग्रुप इस ऐतबार से अक्सी निस्बत रखते हैं कि पहले ग्रुप में सिर्फ एक सूरत सूरह फ़ातिहा मक्की है और सवा छः पारों पर मुश्तमिल चार तवील-तरीन सूरतें मदनी हैं, जबकि आखिरी ग्रुप में सूरतुल मुल्क से लेकर पूरे दो पारे तकरीबन मक्कियात पर मुश्तमिल हैं, आखिरी में सिर्फ दो सूरतें “मौअव्वज़तैन” मदनी हैं। यानि यहाँ निस्बत बिल्कुल अक्सी है। लेकिन दूसरा ग्रुप भी मुतवाज़िन है, यानि दो सूरतें मक्की, दो मदनी-- और छठा ग्रुप भी मुतवाज़िन है कि उसमें सात सूरतें मक्की हैं (सूरह क़ाफ़ से सूरह वाक़िया तक) जबकि दस सूरतें मदनी हैं (सूरह अल् हदीद से सूरह अल् तहरीम तक) लेकिन हुज़्म (volume) के ऐतबार से तकरीबन बराबर हैं। यह भी ग़ौरो फ़िक्र और सोच-विचार का एक मौजू है और इससे भी कुरान मजीद की हिकमत व हिदायत और उसके इल्म के नये-नये गोशे (corner) सामने आ रहे हैं।

कुरान हकीम की सूरतों के जोड़े होने का मामला कुरान मजीद में बाज़ जगहों पर तो बहुत ही नुमाया है। “अल् मौअव्वज़तैन” आखिरी दो सूरतें हैं जो तअव्वुज़ पर मुश्तमिल हैं: {قُلْ أُودُعِدْتُ الْفُلُقِ} और {قُلْ أُودُعِدْتُ النَّاسِ} इसी तरह “अज़ ज़हरावैन - दो निहायत ताबनाक सूरतें” अल् बक्ररह और आले इमरान हैं। हुज़ूर ﷺ इन दोनों को भी एक नाम दिया जैसे आखिरी दो सूरतों को एक नाम दिया। इसी तरह सूरतुल मुज़म्मिल और सूरतुल मुदस्सिर में और सूरह अद् दुहा और सूरह अलम नशरह में मायनवी रब्त है। सूरह अल् तहरीम और सूरह अत् तलाक़ में तो यह रब्त बहुत ही नुमाया है। दोनों सूरतों का आगाज़ बिल्कुल एक जैसा है: {إِنِّي أَنَا اللَّهُ} और {إِنِّي أَنَا اللَّهُ} मज़मून के अंदर भी बड़ी गहरी मुनासबत है। इसके बाद सूरह अस्सफ़ और सूरतुल जुमा का जोड़ा है। सूरह अस्सफ़ ﷻ से और सूरतुल जुमा ﷻ के अल्फ़ाज़ से शुरु हो रही हैं। सूरह अस्सफ़ की मरकज़ी आयत जो रसूल ﷺ के मक़सदे बेअसत को मुअय्यन कर रही है {هُوَ الَّذِي أَرْسَلَ رَسُولَهُ بِالْهُدَىٰ وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظَاهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ} (आयत:9) है, जबकि सूरतुल जुमा की मरकज़ी आयत जो हुज़ूर ﷺ के इन्क़लाब का असासी मिन्हाज

मुअय्यन कर रही है {هُوَ الَّذِي بَعَثَ فِي الْأُمِّيِّينَ رَسُولًا مِنْهُمْ يَتْلُو عَلَيْهِمْ آيَاتِهِ وَيُزَكِّيهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ} (आयत:2) है। बहरहाल सूरतों का जोड़ा होना, सूरतों का ग्रुप की शक़ल में होना, इन ग्रुप्स का अपना एक अमूद और एक मरकज़ी मज़मून होना, फिर इसके दो रुख़ बन जाना जो इसकी मक्कियात और मदनियात में आते हैं, कुरान मजीद के इल्म व हिकमत के खज़ाने के वह दरवाज़े हैं जो अब खुले हैं। इस तरह दरवाज़े हर दौर में खुलते रहे हैं और आइन्दा भी खुलते रहेंगे। चुनाँचे कुरान मजीद पर तज़क्कुर (याद) और तदब्बुर (सोच-विचार) तसलसुल (निरंतर) के साथ जारी रहना चाहिये।

पीछे सात मंज़िलों और सात अहज़ाब का ज़िक्र हो चुका। अब मक्की और मदनी सूरतों के सात ग्रुप्स का बयान हुआ। यह दोनों किस्म के ग्रुप दो जगह पर आकर मिल जाते हैं। पहली मंज़िल तो सूरह अल् निसा पर ख़त्म हो जाती है और पहला ग्रुप सूरह मायदा पर ख़त्म होता है। सूरह अल् तौबा पर दूसरी मंज़िल भी ख़त्म होती है और दूसरा ग्रुप भी ख़त्म होता है। सूरह यूनस से तीसरी मंज़िल शुरु होती है और तीसरा ग्रुप भी शुरु होता है। इसी तरह एक मक़ाम और है। सूरह क़ाफ़ से आखिरी मंज़िल भी शुरु हो रही है और उसी से छठा ग्रुप भी शुरु हो रहा है। सूरह क़ाफ़ छठे ग्रुप की पहली मक्की सूरत है। यह छठा ग्रुप सूरह अल् तहरीम पर ख़त्म हो जाता है और आखिरी ग्रुप सूरतुल मुल्क से शुरु होता है, लेकिन जो मंज़िल सूरह क़ाफ़ से शुरु होती है वह सूरह अन्नास तक एक ही है।

यह वह चीज़ें हैं जो मालूमात के दर्जे में सामने रहें और ज़हन में मौजूद रहें तो इंसान जब ग़ौर करता है तो इनके हवाले से बाज़ अवकात हिकमत के बड़े कीमती मोती हाथ लगते हैं।



बाब चाहरम (चौथा)

तद्वीने कुरान (कुरान की परिपूर्ति)

कुरान मजीद की तद्वीन के बारे में यह बात बिल्कुल वाज़ेह है कि यह रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की हयाते तैय्यबा में मुकम्मल हो गयी थी। किसी शायर का दीवान उसकी गज़लों और कसीदों पर मुश्तमिल होता है। कुरान मजीद अल्लाह का कलाम है और उसकी भी तद्वीन हुई है। यह भी एक दीवान की शकल में है, इसको भी जमा किया गया है। जमा व तद्वीने कुरान अपनी जगह पर बहुत अहम मौजू (विषय) है। इसके बारे में ख़ास मालूमात हमारे ज़हनों में हर वक़्त मुसतहज़र (याद) रहनी चाहिये, क्योंकि आमतौर पर अहले तशय्यो के हवाले से हमारे यहाँ जो चीज़ें मशहूर हैं (वल्लाहु आलम वह हक़ीक़त पर मब्री हैं या महज़ मुख़ालिफ़ीन का प्रोपेगंडा है) इनकी वजह से लोगों के ज़हनों में शुबहात पैदा हुए हैं और वह काफ़ी बड़े हलक़े के अंदर फैले हैं।

हमारे यहाँ जुमे के ख़ुत्बे जो मुरत्तब किये गए हैं और आम ख़तीब पढ़ते हैं, उनमें भी ऐसे अल्फ़ाज़ आ गये हैं जो बहुत बड़े-बड़े मुग़ालतों की बुनियाद बन गये हैं। हो सकता है किसी दुश्मने इस्लाम ने, किसी बातिनी ने, किसी ग़ाली किस्म के राफ़्दी ने यह अल्फ़ाज़ शामिल कर दिये हों। बज़ाहिर तारीफ़ हो रही है मगर हक़ीक़त में तनक़ीस हो रही है और दीन की जड़ काटी जा रही है। इसकी मिसाल भी इसी तद्वीने के ज़ेल (below) में आयेगी।

कुरान मजीद की तद्वीन तीन मराहिल (steps) में मुकम्मल हुई। पहली तद्वीन रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की हयाते तैय्यबा में हो गई थी, लेकिन वह तद्वीन उस शकल में थी कि सूरतें मुअय्यन हो गईं, सूरतों की तरतीब मुअय्यन हो गई। किताबी शकल में कुरान मजीद हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की हयाते तैय्यबा में मौजूद नहीं था। लोगों के पास मुख़्तलिफ़ हिस्सों में लिखा हुआ कुरान था। लोग ऊँट के शाने (shoulder) की हड्डी (जो काफ़ी चौड़ी होती है) पर लिखते थे या कुल्हे की हड्डी पर लिखा जाता था। ऊँट की पसलियाँ (ribs) भी बड़ी चौड़ी होती हैं यह भी इस मक़सद के लिये इस्तेमाल होती थीं। कागज़ उस ज़माने में कहाँ था, कपड़ा ज़्यादा दस्तयाब था, लिहाज़ा कपड़े पर भी लिखा जाता था।

इसी तरह छोटे-छोटे पत्थरों पर भी आयात लिख लेते थे। याद रहे कि कुरान मजीद की असल हैसीयत “कौल” की है: {إِنَّ لَقَوْلِ رَسُولٍ كَرِيمٍ} (अल् हाक्का:40) ना तो यह हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم को लिखी हुई शकल में दिया गया ना हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने लिखी हुई शकल में उम्मत को दिया। हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم को भी यह पढ़ाया गया है। अज़ रूए अल्फ़ाज़े कुरानी:

“हम आपको पढ़ायेंगे, फिर आप भूलेंगे नहीं।”

(अल् आला:6)

سَنُقْرِئُكَ فَلَا تَنْسَى

यह अब्बलन क़ौले जिब्राईल (अलै०) फिर क़ौले मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم बन कर लोगों के सामने आया। जिब्राईल (अलै०) से हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने सुना, हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم से सहाबा (रज़ि०) ने सुना। चुनाँचे असल में तो कुरान पढ़ी जाने वाली शय है। लेकिन जैसे-जैसे कुरान नाज़िल होता आप صلی اللہ علیہ وسلم उसे लिखवा भी लेते। बाज़ सहाबा किराम (रज़ि०) किताबते वही की ज़िम्मेदारी पर मामूर (तैनात) थे। और हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने इस बात का हुक्म भी दे दिया था कि ((لَا تَكْتُبُوا عَنِّي غَيْرَ الْقُرْآنِ)) “मेरी तरफ़ से सिवाये कुरान के कुछ ना लिखो।”

अहादीस को लिखने से हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने मना फ़रमा दिया था ताकि कहीं अल्लाह और रसूल صلی اللہ علیہ وسلم का कलाम गडमड ना हो जाये, सिर्फ़ कुरान मजीद को ही लिखने का हुक्म दिया। लेकिन असल कुरान अल्लाह ताला ने हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के सीने में जमा किया और मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने सहाबा (रज़ि०) के सीनों में जमा कर दिया। वह क़ौल से क़ौल की शकल में गया है, लोगों ने हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के दहन मुबारक से सीखा है। बहरहाल रसूल صلی اللہ علیہ وسلم के दौर में लिखा हुआ कुरान भी था लेकिन किताबी शकल में जमाशुदा नहीं था। जमाशुदा शकल में सिर्फ़ सीनों में था, हुफ़फ़ाज़ को याद था। उन्हें याद था कि कुरान इस तरतीब के साथ है। इसके लिये सबसे बड़ी दलील यह है कि सही रिवायात के मुताबिक़ हर रमज़ानुल मुबारक में जितना कुरान उस वक़्त तक नाज़िल हो चुका था, हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم और हज़रत जिब्राईल (अलै०) उसका दौर करते थे, जैसा कि हमारे यहाँ रमज़ान के आने से पहले हुफ़फ़ाज़ दौर करते हैं, एक हाफ़िज़ सुनाता है, दूसरा सुनता है ताकि तरावीह में सुनाने के लिये ताज़ा हो जाये। तो रमज़ानुल मुबारक में हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم और हज़रत जिब्राईल (अलै०) मुज़ाकरह करते थे, कुरान मजीद का दौर होता था। आप صلی اللہ علیہ وسلم की ज़िन्दगी के आख़री रमज़ान में आप صلی اللہ علیہ وسلم ने जिब्राईल (अलै०) से कुरान

मजीद का दो मरतबा मुकम्मल दौर किया। चुनाँचे जहाँ तक हाफ़जे में और सीने में कुरान का मुदव्विन हो जाना है वह तो नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم की हयात तैय्यबा के दौरान मुकम्मल हो गया था।

तद्वीने कुरान का दूसरा मरहला हज़रत अबुबकर (रज़ि०) के अहदे ख़िलाफ़त में आया जब मुरतदीन (वह शख्स जो इस्लाम क़बूल करने के बाद फिर दोबारा काफ़िर, यहूद या इसाई हो जाये) और मानिईन ज़कात (ज़कात देने से मना करने वाले) से जंगें हुईं। जंगे यमामा में तो बहुत बड़ी तादाद में सहाबा (रज़ि०) शहीद हुए। यह बड़ी खूँरेज़ जंग थी और इसमें कसीर तादाद में हुफ्फाज़े कुरान शहीद हो गए तो तशवीश पैदा हुई और यह ख्याल आया कि इस कुरान को अब किताबी शक़ल में जमा कर लेना चाहिये। यह ख्याल सबसे पहले हज़रत उमर (रज़ि०) के दिल में आया। हज़रत उमर (रज़ि०) ने यह बात हज़रत अबुबकर (रज़ि०) से कही तो वो बड़े मुतरद्दिद (परेशान) हुए कि मैं वह काम कैसे करूँ जो हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने नहीं किया! लेकिन हज़रत उमर (रज़ि०) इसरार (आग्रह) करते रहे और रफ़्ता-रफ़्ता हज़रत अबुबकर (रज़ि०) को भी इस पर इन्शाराहे सद्र हो गया (दिल ने मान लिया)। उन्होंने हज़रत उमर (रज़ि०) से कहा कि अब तुम्हारी इस बात के लिये अल्लाह ने मेरे सीने को कुशादाह (बड़ा) कर दिया है। इसके बाद यह ज़िम्मेदारी हज़रत ज़ेद बिन साबित (रज़ि०) पर डाली गयी जो हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के ज़माने में कातिबे वही थे। आप صلی اللہ علیہ وسلم के चंद खास सहाबा जो किताबते वही पर मामूर (तैनात) थे, उनमें हज़रत ज़ेद बिन साबित (रज़ि०) बहुत मारूफ़ (मशहूर) थे। उनसे हज़रत अबुबकर (रज़ि०) ने फ़रमाया कि तुम यह काम करो, और उनके साथ कुछ और सहाबा की एक क़मैटी तशकील दे दी (गठित कर दी)। वह भी पहले बहुत मुतरद्दिद रहे। उनकी दलील भी यह थी कि जो काम हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने नहीं किया वह मैं कैसे करूँ! इलावज़ह (इससे बड़ी बात) यह तो पहाड़ जैसी ज़िम्मेदारी है, यह मैं कैसे उठाऊँ! लेकिन जब हज़रात अबुबकर और उमर (रज़ि०) दोनों का इसरार (आग्रह) हुआ तो उनका भी सीना खुल गया। फिर जिन सहाबा (रज़ि०) के पास कुरान हकीम का जो हिस्सा भी लिखी हुई शक़ल में था, उनसे लिया गया और मुख़्तलिफ़ शहादतों और हुफ्फाज़ की मदद से अहदे सिद्दीक़ी में कुरान पाक को एक किताब की शक़ल में मुरत्तब (जमा) कर लिया गया। याद रहे कि एक किताब की शक़ल में भी कुरान मजीद की तद्वीन रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के इन्तेक़ाल के दो साल के अंदर-अंदर

मुकम्मल हो गई। हज़रत अबुबकर (रज़ि०) का अहदे ख़िलाफ़त कुल सवा दो बरस है।

हज़रत अबुबकर (रज़ि०) की मजलिसे शूरा में यह मसला भी ज़ेरे गौर आया कि हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के ज़माने में तो कुरान एक जिल्द के माबैन जमा नहीं किया गया, लिहाज़ा इसका नाम क्या रखा जाए! एक तजवीज़ यह आयी कि इसे भी इन्जील का नाम दिया जाये। एक राय यह दी गयी कि इसका नाम “सफ़र” हो, इसलिये कि सफ़र का लफ़्ज़ तौरात की किताबों के लिये मारूफ़ चला आ रहा था, जैसे सफ़र अय्यूब एक किताब थी। तो सफ़र किताब को कहते हैं जिस की जमा “असफ़ार” है और यह लफ़्ज़ कुरान में भी आया है। सफ़र का लफ़्ज़ी मतलब है रोशनी देने वाली। फिर अबदुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) ने तजवीज़ पेश की कि इसका नाम “मुस्हफ़” होना चाहिये। उन्होंने कहा कि मेरा आना-जाना हब्शा होता है, वहाँ के लोगों के पास एक किताब है और वह उसे मुस्हफ़ कहते हैं। अब “मुस्हफ़” के लफ़्ज़ पर इत्तेफ़ाक़ और इज्माअ हो गया। चुनाँचे कुरान के लिये हज़रत अबुबकर (रज़ि०) के अहदे ख़िलाफ़त में हज़रत अबदुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) की तजवीज़ पर मुस्हफ़ नाम रखा गया और इस पर लोगों का इज्माअ हुआ। तद्वीने कुरान का यह दूसरा मरहला है।

कुरान हकीम की तिलावत के ज़िम्न में एक मामला चला आ रहा था, जैसा कि हदीस में आता है कि कुरान मजीद सात हुरूफ़ पर नाज़िल हुआ था। अरबों की ज़बान तो एक थी लेकिन बोलियाँ मुख़्तलिफ़ थीं, अल्फाज़ के लहजे मुख़्तलिफ़ थे। तो सब लोगों को इजाज़त दी गई थी कि वह अपने-अपने लहजे के अंदर कुरान पढ़ लिया करें ताकि सहूलत रहे, वरना बड़ी मशक्क़त की ज़रूरत थी कि सब लोग अपने लहजे बदलें। यह वह ज़माना था कि इन्क़लाबी जद्दो-जहद का tempo इतना तेज़ था कि इन कामों के लिये ज़्यादा फुरसत नहीं थी कि इसके लिये बाक़ायदा इदारे कायम हों, मुख़्तलिफ़ जगहों से लोग आयें और अपना लहजा बदल कर कुरैश के लहजे के मुताबिक़ करें, हिजाज़ी लहजा इख़्तियार करें। चुनाँचे इजाज़त दी गई थी कि अपने-अपने लहजों में पढ़ लें। मुख़्तलिफ़ लहजों में पढ़ने के साथ कुछ लफ़्ज़ी फ़र्क़ भी आने लगे। हज़रत उस्मान (रज़ि०) के ज़माने तक पहुँचते-पहुँचते नौबत यह आ गई कि मुख़्तलिफ़ लहजों में लफ़्ज़ी फ़र्क़ के साथ भी कुरान पढ़ा जाने लगा। कोई शख्स कुरान पढ़ रहा होता, दूसरा कहता कि यह ग़लत पढ़ रहा है, यह यूँ

नहीं है, जैसे मैं पढ़ रहा हूँ वह सही है। इस पर उस जज़्बाती क़ौम के अंदर तलवारें निकल आती थीं। अंदेशा हुआ कि अगर इस तरह से ये बात फैल गई तो कुरान का कोई एक टेक्स्ट (text) मुत्तफ़िक़ अलैह नहीं रहेगा। उम्मत को जमा करने वाली शय तो यह कुरान ही है, इसमें लफ़्ज़ी फ़र्क़ के नतीजे में दाइमी (अविनाशी) इफ़तेराक़ (विभाजन) व इन्तेशार (गड़बड़) पैदा हो जायेगा। चुनाँचे हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने सहाबा (रज़ि०) के मशवरे से तय किया कि कुरान का एक टेक्स्ट (text) तैयार किया जाये। इस टेक्स्ट के लिये लफ़्ज़ “रस्म” है। रस्मुल ख़त का लफ़्ज़ हम इस्तेमाल करते हैं। “ا ب ط” हुरूफ़ है, लेकिन अरबी में लिखे जाएंगे तो इनका रस्मुल ख़त कुछ और है, उर्दू में लिखे जाएंगे तो इनकी शक़ल और है। हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने एक रस्मुल ख़त और एक टेक्स्ट पर कुरान जमा किया। उन्होंने भी एक कमेटी बनाई और हुक्म दे दिया गया कि तमाम लहजों को रद्द करके कु़रैश के लहजे पर कुरान का टेक्स्ट तैयार किया जाये जो मुत्तफ़िक़ अलैह टेक्स्ट होगा। चुनाँचे इस कमेटी ने बड़ी मेहनत शाक्का से इस काम की तकमील की। इस तरह कुरान का रस्मुल ख़त मुअय्यन हो गया और मुत्तफ़िक़ अलैह टेक्स्ट वजूद में आ गया। रस्मे उस्मानी के मुताबिक़ सूरह फ़ातिहा में “مَلِكِ يَوْمِ الدِّينِ” लिखा जायेगा, लिखने की शक़ल यह नहीं होगी: “مَلِكِ يَوْمِ الدِّينِ”। एक क़िरात में चूँकि مَلِكِ भी है तो “مَلِكِ” को “مَلِكِ” भी पढ़ा जा सकता है और “مَلِكِ” भी। तो यह बहुत बड़ा कारनामा है जो हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने सहाबा (रज़ि०) के मशवरे से सरअंजाम दिया कि कुरान का एक रस्मुल ख़त मुअय्यन हो गया और मसाहिफ़े उस्मान (रज़ि०) तैयार हो गये। बाज़ रिवायात के मुताबिक़ उसकी चार नक़ूल (copies) तैयार की गई, बाज़ रिवायात के मुताबिक़ पाँच और बाज़ में सात का अदद भी मिलता है। उनमें से एक मुस्हफ़ official version के तौर पर मदीने में रखा गया और बाक़ी नक़लें मक्का मुकर्रमा, दमिश्क़, कूफ़ा, यमन, बहरीन और बसरह को भेज दी गई। उनमें से कोई-कोई नक़ल अब भी मौजूद है। तुर्की और ताशक़न्द में वह “मुसाहिफ़े उस्मानी” मौजूद हैं जो हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने तैयार कराये थे।

यहाँ एक अहम बात तवज्जोह तलब है कि हमारे यहाँ ख़ुत्बाते जुमा में बाज़ ख़तीब ये जुमला पढ़ जाते हैं: “جامعُ آيَاتِ الْقُرْآنِ عَثْمَانُ بْنُ عَفَّانٍ رَضِيَ اللَّهُ عَنْهُ” यहाँ हम-क्राफ़िया अल्फ़ाज़ जमा करके सौती आहंग के साथ एक ख़ास अन्दाज़ पैदा

किया गया है, लेकिन यह अल्फ़ाज़ इस क़दर ग़लत और इतने गुमराहकुन हैं कि इससे यह तसव्वुर पैदा होता है कि आयाते कुरानिया को सबसे पहले हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने जमा किया। यह बात कुरान पर से ऐतमाद को हटा देने वाली है। आयाते कुरानिया तो रसूल अल्लाह ﷺ के ज़माने में जमा हो चुकी थीं, सूरतें हुज़ूर ﷺ के ज़माने में वजूद में आ चुकी थीं, सूरतों की तद्वीन ही नहीं तरतीब भी हुज़ूर ﷺ के ज़माने में अमल में आ चुकी थी। किताबी शक़ल में कुरान अबुबकर (रज़ि०) के ज़माने में जमा हुआ। हज़रत उस्मान (रज़ि०) और अबुबकर (रज़ि०) के ज़माने में दस-पन्द्रह साल का फ़सल है। अगर “جامعُ آيَاتِ الْقُرْآنِ” हज़रत उस्मान (रज़ि०) को क़रार दिया जाये तो कोई शख्स कह सकता है कि कुरान की तद्वीन हुज़ूर ﷺ के पन्द्रह या बीस साल बाद हुई है। हज़रत उस्मान (रज़ि०) का अहदे ख़िलाफ़त बारह बरस है और हुज़ूर ﷺ के इन्तेक़ाल के 24 बरस के बाद उनका इन्तेक़ाल हुआ। तो इस तरह कुरान के मतन (text) के बारे में शुकूक व शुबहात पैदा किये जा सकते हैं, जबकि हक़ीक़त यह है कि हज़रत उस्मान (रज़ि०) आयाते कुरानी के जमा करने वाले नहीं हैं बल्कि उम्मत को कुरान के एक टेक्स्ट और रस्मुल ख़त पर जमा करने वाले हैं। इसलिये आज दुनिया में जो मुस्हफ़ मौजूद हैं यह “मुस्हफ़े उस्मान” कहलाता है। इसका नाम “मुस्हफ़” हज़रत अबुबकर (रज़ि०) ने रखा था और मुस्हफ़े उस्मान में रस्मुल ख़त और टेक्स्ट मुअय्यन हो गया कि अब कुरान इसी तरीक़े से लिखा जायेगा और यही पूरी दुनिया के अंदर official टेक्स्ट है।

हमारे यहाँ अक्सर व बेशतर कुरान पाक की इशाअत (प्रकाशन) के इदारे रस्मे उस्मानी का पूरा अहतमाम नहीं करते और इस ऐतबार से उनमें रस्म की ग़लतियाँ भी आ जाती हैं, इसलिये कि उनके सामने अपने-अपने मफ़ादात (फ़ायदे) होते हैं यानी कम खर्च से ज़्यादा नफ़ा हासिल करने की कोशिश---- लेकिन अब सऊदी हुकूमत ने इसका अहतमाम करके बड़ी नेकी कमाई है। कुरान मजीद की हिफ़ाज़त के हवाले से एक नेकी मिस्त्र ने कमाई थी। जब इस्राईल ने क़िराअते कुरान मजीद के अन्दर तहरीफ़ करके उसको आम करने की कोशिश की तो हुकूमते मिस्त्र ने अपने चोटी के कुर्अअ, क़ारी महमूद ख़लील हुसरी और अब्दुल बासित अब्दुस्समद से पूरा कुरान मजीद मुख़्तलिफ़ क़िरातों में तिलावत कराया और उनके केसिट्स तैयार करके दुनिया में फैला दिये कि अब गोया वह रेफ़रेंस का काम देंगे। उनके होते हुए अब किसी के

लिये मुमकिन नहीं है कि इस तरह क़िरात के हवाले से कुरान में कोई तहरीफ़ कर सके। इसी तरह सऊदी अरब की हुकूमत ने करोड़ों रुपये के खर्च से बहुत बड़ी फाउंडेशन बनाई है, जिसके ज़ेरे अहतमाम बड़े उम्दा आर्ट पेपर पर आलमी मैयार (quality) की बड़ी उम्दा जिल्द के साथ लाखों की तादाद में यह कुरान मजीद छापे जा रहे हैं, जो हज़रत उस्मान (रज़ि०) के मुअय्यन करदा रस्मुल ख़त के मुताबिक़ हैं।

बहरहाल हज़रत उस्मान (रज़ि०) “جامع آيات القرآن” की बजाये “جامع الأمة على رسم واحد” यानी उम्मत को कुरान हकीम के एक रस्मुल ख़त पर जमा करने वाले हैं। यह तद्दीन भी हुज़ूर ﷺ के इन्तेक़ाल के 24 बरस के अंदर मुकम्मल हो गई। यही वजह है कि दुनिया मानती है और तमाम मुस्तशरिक़ (orientalist) मानते हैं कि जितना ख़ालिस मतन (pure text) कुरान का दुनिया में मौजूद है, किसी दूसरी किताब का मौजूद नहीं है। यह बात “الفضل ما شهدت به الأعداء” का मिस्दाक़ है, यानी फ़ज़ीलत तो वह है, जिसको दुश्मन भी तस्तीम करने पर मजबूर हो जाये। और यह किसी शय की हक्कानियत (सत्यता) के लिये आख़री सबूत होता है। पस यह बात पूरी दुनिया में मुसल्लम (accepted) है कि कुरान हकीम का टेक्स्ट महफूज़ है या जितना महफूज़ टेक्स्ट कुरान का है इतना और किसी किताब का नहीं है। यानी क़िरात के फ़र्क़ भी रिकॉर्ड पर हैं, सबाअ (सात) क़िरात और अशरा (दस) क़िरात रिकॉर्ड पर हैं, उनमें भी एक-एक हर्फ़ का मामला मदवन (recorded) है कि फ़लॉ क़िरात में यह लफ़ज़ ज़बर के साथ पढ़ा गया है या ज़ेर के साथ। और यह तमाम official क़िरात हैं। बाक़ी जहाँ तक रस्मुल ख़त का ताल्लुक़ है उसका टेक्स्ट हज़रत उस्मान (रज़ि०) ने मुअय्यन कर दिया। उम्मत मुस्लिमा पर यह उनका बहुत बड़ा अहसान है। कुरान हकीम की compilation और उसकी तद्दीन के मुताल्लिक़ यह चीज़ें ज़हन में रहनी चाहिये। यह हक़ाईक़ सामने ना हों तो कुछ लोग ज़हनों में शुक्क व शुबहात पैदा कर सकते हैं।



बाब पन्जम (पाँचवा)

कुरान मजीद का मौजू

अब हम अगली बहस पर आते हैं कि कुरान का मौजू क्या है। क्या कुरान फ़लसफ़े की किताब है? क्या यह साइंस की किताब है? क्या यह ज़ियोलॉजी या फ़िज़िक्स की किताब है? किस क्रिस्म की किताब है? तो पहली बात यह समझिये कि कुरान का मौजू है इंसान--- लेकिन इंसान की एनाटोमी, उसकी फ़िज़ियोलॉजी या anthropology नहीं है, बल्कि इंसान की हिदायत। यह हिदायत का लफ़ज़ कुरान मजीद के लिये बुनियादी हैसियत रखता है। चुनाँचे देखिये सूरतुल बक्ररह के शुरु ही में फ़रमाया: {هُدًى لِّلْمُتَّقِينَ} (आयत:2) फिर उसके वस्त (बीच) में इर्शाद हुआ: {هُدًى لِّلنَّاسِ} (आयत:185) यानि पूरे नोए इंसानी के लिये हिदायत। सूरह यूनुस में फ़रमाया: {هُدًى وَرَحْمَةً لِّلْمُؤْمِنِينَ} (आयत:57)। सूरह लुक़मान में फ़रमाया: {هُدًى وَرَحْمَةً لِّلْمُحْسِنِينَ} (आयत:3)। सूरह बक्ररह (आयत:97) और सूरह नम्ल (आयत:2) में {هُدًى وَبُشْرَى لِّلْمُؤْمِنِينَ} जबकि सूरह आले इमरान में {هُدًى وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ} (आयत:138) और सूरतुल मायदा में {هُدًى وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ} (आयत:46) के अल्फ़ाज़ आये। मालूम हुआ कि “هُدًى” का लफ़ज़ कुरान हकीम के लिये कसरत के साथ आया है। फिर यह सिर्फ़ नकरह नहीं “ا” के साथ मारफा बन कर भी कई जगह आया है। तीन मर्तबा तो इस आयत मुबारका में आया जो रसूल अल्लाह ﷺ के मक़सदे बअसत को बयान करती है: {هُوَ الَّذِي أَرْسَلَ رَسُولَهُ بِالْهُدَىٰ وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ} (अल् तौबा: 33, अल् फ़तह:28, अस् सफ़:9) हुदय नकरह था, अल् हुदय मारफ़ा हो गया। यानि हिदायते कामिला, हिदायते ताम्मा, हिदायते अब्दी। इसी तरह सूरह अल् नज्म (आयत:23) में फ़रमाया: {وَلَقَدْ جَاءَهُمْ مِنْ رَبِّهِمُ الْهُدَىٰ}। सूरतुल जिन्न का आगाज़ जिन्नात की एक जमात के इस क़ौल: {إِنَّا سَمِعْنَا قُرْآنًا عَجَبًا} (आयत:1) से होता है। आगे चल कर अल्फ़ाज़ आते हैं: {وَإِنَّا لَنَّا سَمِعْنَا الْهُدَىٰ أَمَّا بَكْرًا} (आयत:13) गोया सूरतुल जिन्न ने मुअय्यन किया कि “قُرْآنًا عَجَبًا” और “الْهُدَىٰ”

मुतरादिफ़ (बराबर) अल्फ़ाज़ हैं। सूरह बनी इस्राईल और सूरह अल् कहफ़ में आया है:

“क्या शय है जो लोगों को ईमान लाने से रोकती है जबकि उनके पास अल् हुदा आया है?” (बनी इसराइल:94, अल् कहफ़:55)

तो गोया कुरान का मौजू है इंसान की हिदायत।

अब यह बात ज़हन में रखिये कि इंसान के इल्म के दो गोशे (corner) हैं, इल्मे इंसानी दो हिस्सों में मुन्कसिम (विभाजित) है। मशहूर कहावत है: (أَلْعِلْمُ عِلْمَانِ: عِلْمُ الْكَدْبَانِ عِلْمٌ وَالْإِدْبَانِ) एक हिस्सा है माद्वी दुनिया (Physical World) का इल्म, माद्वी हकाइक़ का इल्म, जो हवास (senses) के ज़रिये से हासिल होता है। देखना, सुनना, सूँघना, चखना, छूना हमारे हवासे ख़म्सा (five senses) हैं। यह तमाम सलाहियतें हैं जिनसे कुछ मालूमात हासिल होती हैं और अक्ल का कंप्यूटर इनको प्रोसेस करता है, इनसे नतीजे निकालता है और उन्हें स्टोर कर लेता है। फिर हवास के ज़रिये से मज़ीद (ज़्यादा) कोई मालूमात हासिल होती है तो अब इनको भी वह प्रोसेस करके अपने साबक़ा (पिछली) “memory store” के साथ हमआहंग (compatible) करके कोई और नतीजा अज़ज़ करता (निकालता) है। इस तरह रफ़ता-रफ़ता इंसान का यह इल्म बढ़ता चला जा रहा है और हम नहीं कह सकते कि यह अभी और कहाँ तक जायेगा। आज से सौ साल पहले भी इंसान तसव्वुर नहीं कर सकता था कि इंसानी इल्म वहाँ पहुँच जायेगा जहाँ आज पहुँच चुका है। यह इल्म बिल् हवास व अल् अक्ल है और इस इल्म का वही से कोई ताल्लुक नहीं है। इसका ताल्लुक उस इल्मे अस्मा से है जो बिल्कुल शुरू में हज़रत आदम (अलै०) में वदीयत (रखना) कर दिया गया था और यही दुनिया में सरबुलंदी की बुनियाद है।

इल्में इंसानी के दो गोशों के ज़िम्न में सूरतुल बक्ररह का चौथा रुकु बहुत अहम है। इल्मुल अस्मा का ज़िक्र उसके शुरू में है। जब अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों से फ़रमाया कि मैं ज़मीन में एक ख़लीफ़ा बनाने वाला हूँ तो फ़रिश्तों की तरफ़ से यह बात इस्तफ़हामन पेश की गई (पूछी गयी):

“क्या आप उसको ज़मीन में ख़लीफ़ा बनाएँगे जो उसमें फ़साद फैलाएगा और ख़ूँरिज़ियाँ

करेगा?” (आयत:30)

الرّماء

फ़रिश्तों का यह अशक़ाल इस तरह दूर किया गया:

“और अल्लाह ने आदम को तमाम नाम सिखा दियो” (आयत:31)

وَعَلَّمَ آدَمَ الْأَسْمَاءَ كُلَّهَا

यह इल्मे अस्मा जो आदम को दिया गया, यही हुक्मते अरज़ी (ज़मीन की ख़िलाफ़त) की बुनियाद है। जो क़ौम इस इल्म के अंदर तरक्की करेगी वही इक़तदार अरज़ी (सत्ता) की हक़दार ठहरेगी। अलबत्ता इस रूकू के आखिरी में फ़रमाया गया कि जब हज़रत आदम (अलै०) से ख़ता हो गई और शैतान के अग़वा (लालच) से मुतास्सिर होकर अल्लाह तआला के हुक्म की ख़िलाफ़वज़ी हो गई तो उन्होंने अल्लाह तआला के हुज़ूर तौबा की और अल्लाह तआला ने उनकी तौबा कुबूल करने का बायन तौर ऐलान कर दिया:

فَتَلَقَّى آدَمُ مِنْ رَبِّهِ كَلِمَاتٍ فَتَابَ عَلَيْهِ (आयत:37)

इसके बाद ज़िक्र है कि जब आदम और हव्वा अलैहिस्सलाम को हुक्म दिया गया कि अब ज़मीन में जाकर रहो और वहाँ का चार्ज संभालो तो फ़रमाया:

“तो जब भी मेरी तरफ़ से तुम्हारे पास कोई हिदायत आये तो जो लोग मेरी उस हिदायत की पैरवी करेंगे उनके लिये किसी ख़ौफ़ और रंज का मौक़ा ना होगा।” (आयत:38)

فَأَمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنِّي هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَايَ

वह इल्मे हिदायत है।

यह दो चीज़ें बिल्कुल अलैहदा-अलैहदा हैं। इल्मे अस्मा दरहक़ीक़त यूँ समझिये कि जैसे आम की गुठली में आम का पूरा दरख़्त होता है। वही गुठली तो है जो आप ज़मीन में दबाते हैं। फिर अगर वहाँ पानी पड़ता है और ज़मीन में रुईदगी की सलाहियत भी है तो वह गुठली फटेगी। उसमें से जो दो पत्ते निकलेंगे वह फलें-फूलेंगे, परवान चढ़ेंगे तो दरख़्त बनेगा। वह पूरा दरख़्त आम की गुठली में बिल्कुवत (potentially) मौजूद था, अलबत्ता उसे बिल् फ़अल (actually) पूरा दरख़्त बनने में तीन-चार साल लगेंगे। तो जिस तरह पूरा दरख़्त आम की गुठली में बिल् कुववत मौजूद था लेकिन वह आम का दरख़्त कई साल के अंदर बिल् फ़अल वजूद में आया, बयाना यह मामला कुल माद्वी हकाइक़ का है कि इस ज़िम्न में कुल इल्म हज़रत आदम (अलै०) के वजूद में

أَتَجْعَلُ فِيهَا مَن يُفْسِدُ فِيهَا وَيَسْفِكُ

बिल् कुव्वत (potentially) वदीयत कर दिया गया! अब इसकी exfoliation हो रही है, वह बढ़ता जा रहा है, बर्गोबार ला रहा है। और जैसा कि मैंने अर्ज़ किया, इस इल्म का कोई ताल्लुक आसमानी हिदायत से नहीं है। अब यह खुद रू पौदा है जो बढ़ता चला जा रहा है, और मालूम नहीं कहाँ तक पहुँचेगा। अल्लामा इक़बाल ने इसकी सही ताबीर की है:

उरुज-ए-आदम-ए-खाकी से अंजुम सहमे जाते हैं
कि यह टूटा हुआ तारा मय कामिल ना बन जाये!

अल्लामा की ज़िन्दगी में तो इंसान ने चाँद पर क़दम नहीं रखा था, लेकिन अब इंसान चाँद पर क़दम रख कर आ गया है। मज़ीद यह कि अब तो जेनेटिक इंजीनियरिंग अपने कमालात दिखा रही है। क्लोनिंग के तरीके से हैवानात पैदा किये जा रहे हैं। इस इंसानी इल्म के साथ अगर इल्मे वही यानि इल्मे हिदायत ना हो तो यह इल्म बजाये ख़ैर के शर का ज़रिया बन जाता है। चुनाँचे आज यह इल्म वाक़िअतन शैतानी कुव्वत बन चुका है, हलाकत का सामान बन चुका है, तबाही का ज़रिया बन चुका है।

{فَإِنَّمَا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنِّي هُدًى} ने हज़रत आदम अलै० से लेकर हज़रत मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ तक इरतकाई मराहिल तय किये। जैसे-जैसे नौए इंसानी शऊर की मंजिलें तय करती गई, अल्लाह तआला की तरफ़ से हिदायत में भी इज़ाफ़ा होता गया, ता आँके (यहाँ तक कि) यह इल्मे हिदायत कुरान हकीम में आकर “الْهُدَى” (Final Guidance) की सूरत में मुकम्मल हो गया। इस हिदायत में जो इरतका हुआ है उसे भी आप समझ लीजिये। पहली किताबें जो नाज़िल हुईं उनमें भी “هُدًى” तो थीं। सूरतुल मायदा में इर्शाद हुआ:

“हमने तौरात नाज़िल की थी, उसमें हिदायत
भी थी नूर भी था।” (आयत:44)

इसी रूकू में (सूरतुल मायदा का सातवाँ रूकू) इंजील के बारे में फ़रमाया:

“उसमें हिदायत भी थी नूर भी था।”
(आयत:46)

लेकिन यह हिदायत और नूर दर्जा-ब-दर्जा तरक्की करता रहा है, यहाँ तक कि कुरान में आकर यह कामिल हुआ है और الْهُدَى बन गया है। अब यह हُدًى नहीं, हُدًया है, यानि हिदायते ताम्मा (मुकम्मल)।

इसकी वजह क्या है? देखिये एक बच्चे को अगर आप तालीम देना चाहते हैं तो उसकी ज़हनी सतह को मल्हूज़ (ध्यान में) रखे बग़ैर नहीं दे सकते। आप प्राइमरी में ज़ेरे तालीम किसी बच्चे के लिये चाहे पी०एच०डी० उस्ताद रख दें, लेकिन वह उस्ताद बच्चे की ज़हनी इस्तअदाद (क्षमता) की मुनासिबत से ही उसे तालीम दे सकेगा। बच्चा रफ़ता-रफ़ता आगे बढ़ेगा। यहाँ तक कि जब वह अपनी अक्ल और शऊर की पूरी शिद्दत, कुव्वत और बलूगत को पहुँच जायेगा तब उसे आखिरी इल्म पढाया जायेगा। पहले वह तारीख़ पढ़ रहा था, अब फ़लसफ़ा-ए-तारीख़ पढ़ेगा। इस हवाले से अल्लाह तआला ने अपनी हिदायत तदरीज के साथ उतारी है। तौरात में सिर्फ़ अहकाम हैं, हिकमत है ही नहीं, जबकि इंजील में हिकमत है, अहकाम हैं ही नहीं। दोनों चीज़ें मिल कर एक बात को मुकम्मल करती हैं। तौरात में सिर्फ़ अहकाम हैं। जैसे आप बच्चे को बता देते हैं कि भई खाने-पीने से रोज़ा टूट जाता है, रोज़े का मतलब यह है कि अब दिन भर खाना-पीना कुछ नहीं है। चाहे बच्चा अभी छः सात साल का है, वह यह बात समझ लेता है। इस तरह उसे अहकाम तो दे दिये जायेंगे कि यह करो, यह ना करो, यह Do's हैं यह Donts हैं।

चुनाँचे तौरात में अहकामे अशरा (The Ten Commandments) दे दिये गये, लेकिन अभी इनकी हिकमत नहीं बताई गई। इसलिये कि अभी हिकमत का तहम्मूल (समझना/धैर्य) इंसान के लिये मुमकिन नहीं था। अभी नौए इंसानी का अहदे तफूलियत (बचपन) था। यूँ समझिये कि वह आज से साढ़े तीन हज़ार साल क़ब्ल का इंसान था। तौरात चौदह सौ क़ब्ल मसीह में हज़रत मूसा अलै० को दी गई। इसके चौदह सौ साल बाद हज़रत ईसा अलै० को इंजील दी गई, जिसमें सिर्फ़ हिकमत है, अहकाम हैं ही नहीं। लेकिन आज से दो हज़ार साल पहले हज़रत मसीह अलै० के यह अल्फ़ाज़ इंजील में मौजूद हैं (अब भी मौजूद हैं) कि आप अलैहिस्सलाम ने अपने हवारीन से फ़रमाया था: “मुझे तुमसे और भी बहुत सी बातें कहनी थीं, मगर अभी तुम उनका तहम्मूल नहीं कर सकोगे, जब वह फ़ारक़लीत आयेगा तो तुम्हें सब कुछ बतायेगा।” यह मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की पेशनगोई थी। हज़रत मसीह अलै० ने फ़रमाया कि अभी तुम तहम्मूल नहीं कर सकते। गोया तुम्हारी ज़हनी बलूगत के लिये छः सौ बरस मज़ीद दरकार हैं। चुनाँचे अल् हुदा कुरान हकीम में आकर मुकम्मल हुआ है।

कुरान मजीद जो हिदायत देता है उसके भी दो हिस्से हैं। एक फ़िक्रो नज़र की हिदायत है, जिसका उन्वान “ईमान” है। इसका मौजू वही है जो फ़लसफ़े का है। यानि कायनात की हकीकत क्या है, जिन्दगी की हकीकत क्या है, जिन्दगी का माल क्या है, इसका आगाज़ क्या है, अन्जाम क्या है, सही क्या है, ग़लत क्या है, ख़ैर क्या है, शर क्या है, इल्म क्या है? कुरान मजीद का दूसरा मौजू हिदायते अमली है, इन्फ़रादी सतह पर भी और इज्जतमाई सतह पर भी। यह अवामर व नवाही (करना ना करना) और हलाल व हराम के अहकाम पर मुश्तमिल है। फिर इसमें मआशी व मआशरती अहकाम भी हैं। यह हिदायते फ़िक्रो नज़र और हिदायते फ़अल व अमल (इन्फ़रादी व इज्जतमाई) कुरान हकीम का मौजू है।

इस ज़िम्न में यह बात नोट कर लीजिये कि साइंस और टेक्नोलॉजी कुरान हकीम का मौजू नहीं है, कुरान मजीद किताबे हिदायत है, साइंस की किताब नहीं है, अलबत्ता इसमें साइंसी उलूम (studies) की तरफ़ इशारे मौजूद हैं और उनके हवाले मौजूद हैं। कुरान मजीद कायनाती हक्काइक़ को आयाते इलाहिया क़रार देता है। सूरतुल बक्ररह की आयत 164 मुलाहिज़ा कीजिये, जिसे मैं “आयातुल आयात” क़रार देता हूँ:

“यक़ीनन आसमानों और ज़मीन की साख़्त हैं, रात और दिन के पेहम एक-दूसरे के बाद आने में, उन क़श्तियों में जो इंसान के नफ़े की चीज़ें लिये हुये दरियाओं और समुंदरों में चलती-फिरती हैं, बारिश के उस पानी में जिसे अल्लाह ऊपर से बरसाता है, फिर उसके ज़रिये से मुर्दा ज़मीन को जिन्दगी बख़्शता है और (अपने इसी इन्तेज़ाम की बदौलत) ज़मीन में हर किस्म की जानदार मख़्लूक को फैलाता है, हवाओं की गर्दिश में, और उन बादलों में जो आसमान और ज़मीन के दरमियान ताबेअ फ़रमान बना कर रखे गये हैं, उन लोगों के लिये बेशुमार निशानियाँ हैं जो अक्ल से काम लेते हैं।”

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَالاخْتِلَافِ
الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَالْفُلْكِ الَّتِي تَجْرِي فِي الْبَحْرِ
بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ وَمَا أَنْزَلَ اللَّهُ مِنَ السَّمَاءِ
مِنْ مَّاءٍ فَأَخْيَا بِهِ الْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَلَغَ
فِيهَا مِنْ كُلِّ دَابَّةٍ شَرٌّ وَتَضْرِيحُ الرِّيحِ
وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ
لَايَتٍ لِّقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ٥

यह सब अल्लाह की निशानियाँ हैं। इनमें अल्लाह की कुदरत, अल्लाह की अज़मत, अल्लाह का इल्मे कामिल, अल्लाह की हिक़मते बालगा (प्रभावी) सब कुछ शामिल है। तो यह जो मज़ाहिर तबीई (Physical Phenomena) हैं, कुरान हकीम इनका जा-बजा हवाला देता है। बाज़ कायनाती हक्काइक़ वह हैं जिनका ताल्लुक़ फ़ल्कियात (Astronomy) से है। फ़रमाया: (यासीन:40)

यानि यह “तमाम अजरामे समाविया अपने-
अपने मदार (orbit) में तैर रहे हैं।”

وَكُلٌّ فِي فَلَكٍ يَسْبَحُونَ ٥

मालूम हुआ हर शय हरकत में है। इंसान पर एक दौर ऐसा गुज़रा है जब वह समझता था कि ज़मीन साकिन है और सूरज इसके गिर्द हरकत कर रहा है। फिर एक दौर आया जिसमें कहा गया कि नहीं, सूरज साकिन है, ज़मीन हरकत करती है, ज़मीन सूरज के गिर्द चक्कर लगाती है, और आज हमें मालूम हुआ कि हर शय हरकत में है। सूरज का भी अपना एक मदार (orbit) है, उसमें वह अपने पूरे कुन्वे समेत हरकत कर रहा है। यह निज़ामे शम्सी उसका कुन्वा है, इस पूरे कुन्वे को लेकर वह भी एक मदार में हरकत कर रहा है। तो मालूम हुआ कि अल्फ़ाज़े कुरानी: {وَكُلٌّ فِي فَلَكٍ يَسْبَحُونَ} में “كُلٌّ” का लफ़ज़ जिस तरह मन्क़ह और मुबरहन होकर, जिस शान के साथ आज होवीदा (ज़ाहिर) हुआ है, आज से पहले इंसान को मालूम नहीं था। कुरान मजीद में कायनाती मज़ाहिर के बारे में जो बात कही गई है वह कभी ग़लत नहीं हो सकती। यह वह हकीकत है जो इस दौर में आकर पूरी तरह वाज़ेह हुई है।

डाक्टर मोरिस बोकाई एक फ़्रांसिसी सर्जन थे। उन्होंने कुरान और बाइबिल दोनों का तक्काबली मुताला किया। वाज़ेह रहे कि बाइबिल से मुराद अहदनामा क़दीम (Old Testament) और अहदनामा जदीद (New Testament) दोनों हैं। तक्काबिली मुताला के बाद वह इस नतीजे पर पहुँचे कि पूरे कुरान में कोई एक लफ़ज़ भी ऐसा नहीं है जिसे हमारे साइंसी इन्क़शाफ़ात में से किसी ने ग़लत साबित किया हो, जबकि तौरात में बेशुमार चीज़ें ऐसी हैं कि साइंस उन्हें ग़लत साबित कर चुकी है। इस पर उन्होंने 250 सफ़ों की किताब तहरीर की: “The Bible, The Quran and Science”। सवाल यह पैदा होता है कि तौरात भी तो अल्लाह की किताब है, फिर उसमें ऐसी चीज़ें क्यों आ गई जो साइंसी हक्काइक़ के खिलाफ़ हैं। इसका जवाब यह है कि असल तौरात तो छठी सदी क़ब्ल मसीह ही में गुम हो गई थी जब बख़्त

नसर के हाथों येरुशलम की तबाही हुई थी। इसके डेढ़ सौ वर्ष बाद कुछ लोगों ने तौरात को याददाशतों से मुरत्तब किया। लिहाज़ा उस वक़्त इंसानी इल्म की जो सतह थी उसके ऐतबारात से तावीलात तौरात में शामिल हो गयीं, क्योंकि इंसान तो अपनी ज़हनी सतह के मुताबिक ही सोच सकता है। तौरात में तहरीफ़ होने की वजह से इसमें ऐसी चीज़ें दर्ज हैं जो साइंस की रू से ग़लत साबित हुई। अलबत्ता कुरान में ऐसी कोई तावील नहीं हुई और इसकी हिफ़ाजत का अल्लाह तआला ने खुद ज़िम्मा लिया है। यह बात बड़ी अहम है इसको बड़े ख़ूबसूरत अंदाज़ में डाक्टर रफीउद्दीन मरहूम ने कहा है कि यह कायनात अल्लाह का फ़अल है। उसकी तख़लीक और उसकी तदबीर है, जबकि कुरान अल्लाह का क़ौल है, और अल्लाह तआला के क़ौल व अमल में तज़ाद (विरोध) मुमकिन नहीं है। किसी इन्सान के क़ौल व अमल में भी अगर कोई तज़ाद हो तो वह इंसानियत की सतह से नीचे उतर जाता है, अल्लाह तआला के क़ौल और अमल में तज़ाद कैसे हो सकता है? यहाँ यह हो सकता है कि एक दौर में इंसानों ने बात समझी ना हो, उनका ज़हन वहाँ तक पहुँचा ना हो, उनकी मालूमात का दायरा अभी इस हद तक हो कि इन हक्काइक़ तक ना पहुँचा जा सके। लेकिन जैस-जैसे वक़्त आयेगा मज़ीद हक्काइक़ मुन्कशिफ़ होंगे और यह बात ज़्यादा से ज़्यादा वाज़ेह से वाज़ेहतर होती चली जायेगी कि जो कुछ कुरान ने फ़रमाया है वही बरहक़ है। यहाँ आज से पहले इंसानी ज़हन इस हद तक रसाई हासिल करने का अहल नहीं था। सूरह हा मीम सजदा की आखिरी से पहली आयत ज़हन में रखिये:

“हम उन्हें दिखाते चले जायेंगे अपनी
निशानियाँ आफ़ाक़ में भी और खुद उनकी
जानों में भी, यहाँ तक कि यह बात पूरी तरह
निख़र कर उनके सामने वाज़ेह हो जायेगी कि
यह कुरान ही हक़ है।”

डॉक्टर कीथल मूर कनाडा के बहुत बड़े एम्ब्रॉयलॉजिस्ट हैं। उनकी किताब इल्मे जनीन (Embryology) में सनद मानी जाती है और यूनिवर्सिटी की सतह पर बतौर टेक्स्ट बुक पढ़ाई जाती है। उन्होंने कुरान हकीम का मुताला करने के बाद इन्तहाई हैरत का इज़हार किया है कि आज से चौदह सौ वर्ष क़ब्ल जबकि ना माइक्रोस्कोप मौजूद थी और ना ही dissection होता था, कुरान ने इल्मे जनीन के मुताल्लिक़ जो मालूमात दी हैं वह सही

तरीन हक्काइक़ पर मुश्तमिल हैं। डॉक्टर मौसूफ़ सूरतुल मोमिनून की आयात 12 से 14 का मुताला करते हुए अंगशत बद नदों हैं:

“हमने इंसान को मिट्टी के सत् से बनाया,
फिर उसे एक महफूज़ जगह टपकी हुई बूँद में
तब्दील किया, फिर उस बूँद को लोथड़े की
शक़ल दी, फिर लोथड़े को बोटी बना दिया,
फिर बोटी की हड्डियाँ बनाई, फिर हड्डियों पर
गोश्त चढ़ाया, फिर उसे एक दूसरी ही
मख़लूक बना कर खड़ा किया।”

उनका कहना है कि वाक़्या यह है कि इंसानी तख़लीक़ के मराहिल की इससे ज़्यादा सही ताबीर मुमकिन नहीं है। तो यह हक्कीक़त ज़हन में रखिये कि अगरचे कुरान मज़ीद साइंस की किताब नहीं है, लेकिन जिन साइंसी हक्काइक़ या साइंसी मज़ाहिर (phenomena) का कुरान ने हवाला दिया है वह यक्कीनन हक़ हैं, चाहे ता-हाल हम उनकी हक्कानियत को ना समझ पाये हों। मसलन आज भी मुझे नहीं मालूम कि कुरान जो “सात आसमान” कहता है तो इनसे क्या मुराद है। लेकिन मुझे यक्कीन है कि एक वक़्त आयेगा जब इंसान समझेगा कि “सात आसमान” के यह अल्फ़ाज़ ठीक-ठीक उस हक्कीक़त पर मुन्तबिक़ होते हैं जो आज हमारे इल्म में आयी है, पहले नहीं आयी थी। अलबत्ता जैसा कि मैं अर्ज़ कर चुका हूँ, अमली ऐतबार से यह नुक्ता बहुत अहम है कि कुरान साइंस या टेक्नोलॉजी की किताब नहीं है और इसके हवाले से एक बड़ा मन्तक़ी नतीजा यह निकलता है कि अगर हमारे अस्लाफ़ ने अपने दौर की मालूमात की सतह पर कुरान की इन आयात का कोई ख़ास मफ़हूम मुअय्यन किया तो हमारे लिये लाज़िम नहीं है कि हम उसकी पैरवी करें। हम कुरान में बयानकरदा साइंसी मज़ाहिर को उस साइंसी तरक्की के हवाले से समझेंगे जो रोज़ ब रोज़ हो रही है। यहाँ तक कि आखिरी बात अर्ज़ कर रहा हूँ कि इस मामले में खुद मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ से भी अगर कोई बात मन्कूल हो तो वह भी क़तई नहीं समझी जायेगी, क्योंकि हुज़ूर ﷺ यह चीज़ें सिखाने के लिये नहीं आये थे। यह बात अगरचे बहुत से लोगों पर सक़ील और ग़िराँ गुज़रेगी लेकिन सही तर्ज़े अमल यही होगा कि साइंस और टेक्नोलॉजी के ज़िमन में अगर हुज़ूर ﷺ की कोई हदीस भी सामने आ जाये तो उसको भी हम दलीले क़तई नहीं समझेंगे।

इस सिलसिले में ताबीरे नख़ल का वाक्या बहुत अहम है। आपको मालूम है कि हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की पैदाइश मक्के की है, हिजरत तक सारी ज़िन्दगी आपने वहाँ गुज़ारी, वह वादी-ए-ग़ैर ज़िज़रा है, जहाँ कोई पैदावार, कोई ज़राअत, कोई काशत होती ही नहीं थी, लिहाज़ा आप صلی اللہ علیہ وسلم को उसका कोई तजुर्बा सिरे से था ही नहीं। हाँ तिजारत का भरपूर तजुर्बा था और उसके तमाम असरारो रमूज़ से आप صلی اللہ علیہ وسلم वाकिफ़ थे। आप صلی اللہ علیہ وسلم मदीना तशरीफ़ लाये तो आप صلی اللہ علیہ وسلم ने देखा कि खजूरो के सिलसिले में अंसारे मदीना “ताबीरे नख़ल” का मामला करते थे। खजूर एक ऐसा पौधा है जिसके नर और मादा फूल अलैहदा-अलैहदा होते हैं। अगर इसके नर और मादा फूलों को करीब ले आयें तो इसके बारआवर (उपजाऊ) होने का इम्कान ज़्यादा हो जाता है। अहले मदीना को यह बात तजुर्बे से मालूम हुई थी और वह इस पर अमल पैरा (पालन करते) थे। मदीना तशरीफ़ आवरी पर रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने जब अहले मदीना का यह मामूल देखा तो उनसे फ़रमाया कि अगर आप लोग ऐसा ना करें तो क्या है? ऐसा ना करना शायद तुम्हारे हक़ में बेहतर हो। यह बात आप صلی اللہ علیہ وسلم ने अपने इज्जतहाद और फ़हम के मुताबिक़ इस बुनियाद पर फ़रमायी कि फ़ितरत अपनी देखभाल खुद करती है। अल्लाह तआला ने फ़ितरत का निज़ाम इंसानों पर नहीं छोड़ा, बल्कि यह तो खुदकार निज़ाम है। चुनाँचे आप صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया कि आप लोग इस कुदरती निज़ाम में दख़ल ना दें तो क्या है? अलबत्ता आप صلی اللہ علیہ وسلم ने रोका नहीं। लेकिन ज़ाहिर बात है कि सहाबा कराम रिज़वान अल्लाहु तआला अलैहिम अज्मईन के लिये हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم का इतना कहना भी गोया हुक्म के दर्जे में था। उन्होंने उस साल वह काम नहीं किया, लेकिन फ़सल कम हो गई। अब वह डरते-डरते, झिझकते-झिझकते हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की ख़िदमत में आये और अर्ज़ किया कि हुज़ूर! हमने इस मर्तबा ताबीरे नख़ल नहीं की है तो फ़सल कम हुई है। इस पर आप صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया: ((أَنْتُمْ أَعْلَمُ بِأَمْرِ دُنْيَاكُمْ))⁽¹⁾ इस हदीस का एक-एक लफ़्ज़ याद कर लीजिये। आप صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया कि यह जो तुम्हारे अपने दुनयवी और मादी मामलें हैं जिनकी बुनियाद तजुर्बे पर है, यह तुम मुझसे बेहतर जानते हो। तुम ज़्यादा तजुर्बेकार हो, तुम इन हक़ीक़तों से ज़्यादा वाकिफ़ हो। एक दूसरी रिवायत में रसूल صلی اللہ علیہ وسلم के यह अलफ़ाज़ नक़ल हुए हैं:

(2) إِمَّا أَنْ أَبْشُرَ إِذَا أَمَرْتُكُمْ بِشَيْءٍ مِنْ دِينِكُمْ فَخُذُوا بِهِ، وَإِذَا أَمَرْتُكُمْ بِشَيْءٍ مِنْ رَأْيٍ فَإِنَّمَا بَشَرٌ

“मैं तो एक बशर हूँ। जब मैं तुम्हें तुम्हारे दीन के बारे में कोई हुक्म दूँ तो उससे सरताबी ना करना, लेकिन जब मैं तुम्हें अपनी राय से कोई हुक्म दूँ तो जान लो कि मैं एक बशर ही हूँ।”

गोया आप صلی اللہ علیہ وسلم ने वाज़ेह फ़रमा दिया कि मैं यह चीज़ें सिखाने नहीं आया, मैं जो कुछ सिखाने आया हूँ वह मुझसे लो! इस ऐतबार से यह हदीस बुनियादी अहमियत रखती है। ज़ाहिर है आप صلی اللہ علیہ وسلم टेक्नोलॉजी सिखाने नहीं आये थे। आप صلی اللہ علیہ وسلم तिब्ब व जराहत सिखाने नहीं आये थे, आप صلی اللہ علیہ وسلم कोई और साइंस पढ़ाने नहीं आये थे। वरना तो हम शिकवा करते कि आप صلی اللہ علیہ وسلم ने हमें एटम बम बनाना क्यों नहीं सिखा दिया? जब रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने यह फ़रमा दिया कि ((أَنْتُمْ أَعْلَمُ بِأَمْرِ دُنْيَاكُمْ)) तो हमारे लिये यह बात आखिरी दर्जे में सनद है कि जैसे-जैसे साइंसी इन्कशाफ़ात (खुलासे) हो रहे हैं, जैसे-जैसे इल्मे इंसानी की exploration हो रही है, वैसे-वैसे हक़ीक़ते फ़ितरत हमारी निगाहों के सामने मुन्कशिफ़ हो रहे हैं। जैसे आम की गुठली से आम का पूरा दरख़्त वजूद में आता है ऐसे ही हज़रत आदम अलै० के वजूद में इल्म बिल् हवास और इल्म बिल अक़ल का जो mechanism रख दिया गया था, यह उसी का नतीजा है कि इल्म फैल रहा है। इससे जो भी चीज़ें हमारे सामने आईं उनमें कहीं रुकावट नहीं है कि हम सलफ़ की बात को लेकर बैठ जाएँ कि साइंस ख़्वाह कुछ भी कहे हम तो असलाफ़ की बात मानेंगे। यहाँ पर इस तर्ज़े अमल के लिये कोई दलील और बुनियाद नहीं।

कुरान का असल मौज़ू ईमान है। मा वराउल तबीयाती हकाइक़ (Beyond Physical Facts) आलमे ग़ैब से मुताल्लिक़ हैं, जो हमारे आलमे महसुसात (feelings) से मा वरा (beyond) हैं, जिसकी ख़बरें हमें सिर्फ़ वही से मिल सकती हैं। इल्मे हक़ीक़त जिसे हम इज्माली तौर पर ईमान कहते हैं यह कुरान का असल मौज़ू है, यानि हिदायते फ़िक्री व अमली। तमद्दुनी मैदान में, मआशी व इक़तसादी और मआशरती मैदान में यह करो और यह ना करो। यह चीज़ें खाने-पीने की हैं, यह चीज़ें खाने-पीने की नहीं हैं। यह हराम हैं, यह नजिस हैं। यह इल्म हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने दिया है और कुरान का मौज़ू असल में यही है। अलबत्ता कुरान में जो साइंसी रेफरेन्सेस आये हैं, वह ग़लत नहीं हैं, वह लाज़िमन दुरुस्त हैं।

इंसानी इल्म के तीन दायरे हैं। एक इल्म बिल् हवास है, यह इंसानी इल्म का पहला दायरा है। हवास के ज़रिये हमें मालूमात हासिल होती हैं, जिन्हें

आज-कल हम sense data कहते हैं। आँख ने देखा, कान ने सुना, हाथ ने उसकी पैमाइश की। इसके बाद दूसरा दायरा इल्म बिल् अक्ल है। अक्ल sense data को प्रोसेस करती है। इस ज़िम्न में इस्तदलाल और इस्तनबात के उसूल मुअय्यन किये गये हैं। इंसान अपने हवासे खम्सा (five senses) के ज़रिये इल्म हासिल करता है, फिर अक्ल इन मालूमात को process करती है तो इंसान किसी नतीजे पर पहुँचता है। यूँ अक्ल हवास की मोहताज हुई, लेकिन अक्ल व हवास के मा वरा (के ऊपर) भी एक इल्म है जिसे शाह इस्माईल शहीद रहि० ने इल्म बिल् क़ल्ब का नाम दिया है। आज इसे extra sensory perceptions कहा जा रहा है। यह इल्म का तीसरा दायरा है। इससे पहले अदब में इसके लिये वज्दान (intuition) का लफ़्ज़ था। यह इल्म बिल् क़ल्ब दरहक़ीक़त वह ख़ास इंसानी इल्म है जिससे आज के माह्दा परस्त वाकिफ़ नहीं हैं। वही का ताल्लुक़ इसी तीसरे दायरे से है। इसलिये कि वही का नुज़ूल क़ल्ब पर होता है। अज़रुए अल्फ़ाज़ कुरानी: (अल् शौरा:193-194)

قَوْلُ بِهِ الْوُحُّ الْوَمِينُ ۖ عَلَى قَلْبِكَ لِتَكُونَ مِنَ الْمُنذِرِينَ ۝

अक्ल और हवास से हासिल होने वाले उलूम (अध्ययन) में तमाम फ़िज़िकल साइंस, मेडिकल साइंस और टेक्नोलॉजी के मज़ामीन (articles) शामिल हैं। इंसान के मुख्तलिफ़ चीज़ों के ख़वास (गुण) मालूम किये, कुछ तबीई (भौतिक) और किमियाई (रासायनिक) तब्दीलियों के उसूल दरयाफ़्त (खोज) किये। फिर उन उसूलों से जो मालूमात हासिल हुई उनको इस्तेमाल किया। इससे इंसान की टेक्नोलॉजी तरक्की करती जा रही है और अभी ना मालूम कहाँ तक पहुँचेगी। यह एक इल्म है जिसका ज़िक्र कुरान हकीम में {وَعَلَّمَ آدَمَ الْأَسْمَاءَ كُلَّهَا} के अल्फ़ाज़ में कर दिया गया। अलबत्ता इंसान सिर्फ़ इस इल्म पर क़ानेअ (काफी/पर्याप्त) नहीं रहा, इसलिये कि इससे तो सिर्फ़ जुज़वी (partly) इल्म हासिल होता है, इंसान एक-एक ज़ब (ingredients) क़दम-ब-क़दम सीखता है। इंसान की एक तलब (urge) है कि वह माहियत (nature) मालूम करना चाहता है कि कायनात की हक़ीक़त क्या है? मेरी हक़ीक़त क्या है? इल्म की हक़ीक़त, ख़ैर (अच्छे) व शर (बुरे) की हक़ीक़त क्या है? ज़ाहिर बात है कि आज से एक हज़ार साल पहले के इंसान की मालूमात (इल्म बिल् हवास और इल्म बिल् अक्ल के ऐतबार से) बड़ी महदूद थीं, लेकिन उस वक़्त के इंसान को भी इस चीज़ की ज़रूरत थी कि वह कोई

राय कायम करे कि यह कायनात जिसका मैं एक फ़र्द हूँ, उसकी हक़ीक़त क्या है, खुद मेरी हक़ीक़त क्या है? मेरी ज़िन्दगी का आगाज़ क्या है? मेरा इसके साथ रब्त (link) व ताल्लुक़ क्या है? इस सफ़र की मंज़िल क्या है? मैं अपनी ज़िन्दगी में क्या करूँ, क्या ना करूँ? क्या करना सही है क्या करना ग़लत है? यह इंसान की ज़रूरत है। लिहाज़ा इस ज़रूरत के तहत जब इंसान ने सोचना शुरू किया तो फ़लसफ़े का आगाज़ हुआ जो गुल्थियों को सुलझाना चाहता है। इन गुल्थियों को सुलझाने के लिये फिर इंसान ने अक्ल के घोड़े दौड़ाये, अपनी मन्तिक (तर्क) को इस्तेमाल किया। फ़लसफ़ा, मा बाद अल् तबीअ'यात, इलाहियात, अख़लाक़ियात और नफ़िसियात, यह तमाम उलूम (studies) इंसानी उलूम (studies) में से हैं। गोया कि इल्म बिल् हवास और इल्म बिल् अक्ल के नतीजे में यह दो इल्म वजूद में आये। एक फ़िज़िकल साइंस का इल्म जिसका ताल्लुक़ टेक्नोलॉजी से है। दूसरा सोशल साइंस का इल्म जिसमें फिलोसफी, सोशियोलॉजी, नफ़िसियात, अख़लाक़ियात, इक़तसादयात (economics) और सियासियात वगैरह शामिल हैं।

जान लीजिये कि اَلْهَدْيُ जिसकी तकमीली शक़ल “اَلْهَدْيُ” कुरान मजीद है, उसका मौजू इंसानी इल्म का दायरा-ए-अब्बल नहीं है। यह साइंस की किताब नहीं है और ना ही साइंस पढ़ाने या टेक्नोलॉजी सिखाने आई है। अम्बिया इसलिये नहीं भेजे गये। अगरचे कुरान मजीद में साइंसी मज़ाहिर (घटनाओं) की तरफ़ हवाले मौजूद हैं और वह लाज़िम्न दुरुस्त हैं, लेकिन वह कुरान का असल मौजू नहीं है। जैसे-जैसे इंसान के साइंसी इल्म में तदरीजन तरक्की हो रही है इसी तरह इन रेफरेन्सेस को समझना भी इंसान के लिये मुमकिन हो रहा है। अलबत्ता कुरान का असल मौजू मा बाद अल् तबीअ'यात है। फिर फ़िक्र व अमल दोनों के लिये रहनुमाई दरकार है, जैसे कि किसी रास्ते पर चलने वाले “रोड साइज़” की ज़रूरत होती है कि इधर ना जाना, इधर ख़तरा है, हलाक़त है। इसी तरह इंसान को सफ़रे हयात में इन cautions की ज़रूरत है कि इधर ख़तरा है, यह तुम्हारे लिये मन्हूअ (मना) है, यह हराम है, यह नुकसानदेह है, इसमें हलाक़त है, चाहे तुम्हें हलाक़त नज़र नहीं आ रही लेकिन तुम उधर जाओगे तो तुम्हारे लिये हलाक़त है। दरहक़ीक़त यह कुरान का असल मौजू है।



बाब शशम (छठा)

फ़हम-ए-कुरान के उसूल (कुरान को समझने के सिद्धान्त)

फ़हम-ए-कुरआन के सिलसिले में दर्ज ज़ेल (निम्नलिखित) उन्वानात (शीर्षक) की तफ़हीम (समझ) ज़रूरी है।

1) कुरान करीम का अस्लूबे इस्तदलाल (तर्क का अंदाज़)

कुरान के तालिबे इल्म को जानना चाहिये कि कुरान का अस्लूबे इस्तदलाल मन्तकी (logical) नहीं, फ़ितरी (naturally) है। इंसान जिस फ़लसफ़े से वाकिफ़ है उसकी बुनियाद मन्तिक है। चुनाँचे हमारे फ़लासफ़ा (दार्शनिक) और मुतकल्लिमीन (धर्मविज्ञानी) इस्तख़राजी मन्तिक (Deductive Logic) से ऐतना (उपेक्षा) करते रहे हैं, जबकि कुरआन मजीद ने इसे सिरे से इख़्तियार नहीं किया। वक्ती तक्राज़े के तहत हमारे मुतकल्लिमीन ने इसे इख़्तियार करने की कोशिश की लेकिन इससे कोई ज़्यादा फ़ायदा नहीं पहुँच पाया। ईमानी हक्काइक़ को जब इस्तख़राजी मन्तिक के ज़रिये से साबित करने की कोशिश की गई तो यक़ीन कम और शक़ ज़्यादा पैदा हुआ। इस ज़िम्न में केंट की बात हर्फ़े आख़िर का दर्जा रखती है, लिहाज़ा अल्लामा इक़बाल ने भी अपने खुत्बात का आगाज़ इसी हवाले से किया है। केंट ने हत्मी (अंतिम) तौर पर साबित कर दिया कि किसी मन्तकी दलील से खुदा का वजूद साबित नहीं किया जा सकता। मन्तिक में अल्लाह की हस्ती के अस्बात (यक़ीन) के लिये एक दलील लायेंगे तो मन्तिक की दूसरी दलील उसे काट देगी। जैसे लोहा लोहे को काटता है इसी तरह मन्तिक, मन्तिक को काट देगी। कुरआन अग़रचे कहीं-कहीं मन्तिक को इस्तेमाल तो किया है लेकिन वह भी मन्तकी इस्तलाहात (वाक्यांश) में नहीं। कुरआन मजीद का अस्लूबे इस्तदलाल फ़ितरी है और इसका अंदाज़ ख़िताबी है। जैसे एक ख़तीब जब खुत्बा देता है तो जहाँ वह अक़ली दलीलें देता है वहाँ जज़्बात से भी अपील करता है। इससे उसके खुत्बे में गहराई व ग़ैराई (प्रभाव) पैदा होती है। एक लेक्चर में ज़्यादातर दारोमदार मन्तिक पर होता है। यानि ऐसी दलील जो

अक़ल को कायल कर सके। लेकिन शौला बयान ख़तीब इंसान के जज़्बात को अपील करता है। इसको ख़िताबी दलील कहा जाता है। यही ख़िताबी अंदाज़ और इस्तदलाल कुरआन ने इस्तेमाल किया है।

इंसान की फ़ितरत में कुछ हक़ीक़तें मौजूद हैं। कुरान के पेशे नज़र इन हक़ीक़तों को उभारना मक़सूद है। यानि इंसान को अमादा किया जाए कि:

“अपने मन में डूब कर पा जा सुरागे ज़िन्दगी!”

अक़ल और मन्तिक का दायरा तो बड़ा महदूद है। इंसान अपने अंदर झाँके तो उसके अंदर सिर्फ़ अक़ल ही नहीं है, कुछ और भी है। वक़ौल अल्लामा इक़बाल:

हैं ज़ौके तजल्ली भी इसी खाक में पिन्हाँ

गाफ़िल! तो नरा साहब अदराक नहीं है!

यह जो इसके अंदर “कोई और” शय भी है, उसे अपील करना ज़रूरी है ताकि इंसान फ़ितरत की बुनियाद पर अपने अंदर झाँके और महसूस करे कि हाँ यह है! ताहम उसके लिये कोई मन्तकी दलील भी पेश कर दी जाये। तो यह नूरुन अला नूर (सोने पे सुहागा) होगा। यह है दरहक़ीक़त कुरआन का फ़ितरी तर्ज़े इस्तदलाल। बाज़ मक़ामात पर ऐसे मालूम होता है कि जैसे कुरआन अपने मुखातिब की आँखों में आँखें डाल कर कुछ कह रहा है और उसे तवज्जोह दिला रहा है कि ज़रा ग़ौर करो, सोचो, अपने अंदर झाँको। जैसे सूरह इब्राहिम की आयत 10 में फ़रमाया गया:

“क्या अल्लाह की हस्ती में कोई शक़ है जो आसमानों और ज़मीन को पैदा करने वाला है?”

أَفِي اللَّهِ شَكٌّ فَاطِرِ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ

यहाँ कोई मन्तकी दलील नहीं है, लेकिन मुखातिब को दरू बीनी पर अमादा किया जा रहा है कि अपने अन्दर झाँको, तुम्हें अपने अंदर सुबूत मिलेगा, तुम्हें अपने अन्दर अल्लाह की हस्ती की शहादत मिलेगी। सूरतुल अनाम की आयत 19 में इर्शाद हुआ:

“क्या तुम वाकई इस बात की गवाही दे रहे हो कि अल्लाह के सिवा कोई और इलाह भी है?”

أَيُّكُمْ لَشَّهَدُوْنَ اَنْ مَّعَ اللّٰهِ اِلٰهٌ اٰخَرٰی

यानि तुम यह बात कह तो रहे हो, लेकिन ज़रा सोचो तो सही क्या कह रहे हो? क्या तुम्हारी फ़ितरत इसे तस्लीम करती है? अपने बातिन में झाँको, क्या तुम्हारा दिल इसकी गवाही देता है? हालाँकि ज़ाहिर है कि वह तो इसके मुद्ई थे और अपने माअबुदाने बातिल के लिये कट मरने को तैयार थे। इस ख़िताबी दलील के पसमंज़र में यह हक़ीक़त मौजूद है कि तुम जानते हो कि यह महज़ एक अक़ीदा (dogma) है जो चला आ रहा है, तुम्हारे बाप-दादा की रिवायत है, इसकी हैसियत तुम्हारे नस्ली ऐतकादात (racial creed) की है। कुरआन मजीद दरहक़ीक़त इंसान की फ़ितरत के अंदर जो शय मुज़मर (फँसी) है उसी को उभार कर बाहर लाना चाहता है। चुनाँचे कुरआन का अस्लूबे इस्तदलाल मन्तक़ी नहीं है, बल्कि फ़ितरी है। इसको ख़िताबी अंदाज़ कहा जायेगा।

2) कुरान हकीम में मुहक्कम और मुताशाबेह की तक्सीम

सूरह आले इमरान की आयत 7 मुलाहिज़ा कीजिये! इर्शाद हुआ है:

“वही है (अल्लाह) जिसने (ऐ मुहम्मद ﷺ) आप पर किताब नाज़िल की, उसमें से कुछ आयाते मुहक्कमात हैं, वही किताब की जड़ बुनियाद हैं और दूसरी मुताशाबेह हैं।”

इस आयत में लफ़ज़ किताब दो दफ़ा आया है, दोनों के मफ़हूम में बारीक सा फ़र्क़ है। मुताशाबेह इन मायने में कि असल मफ़हूम को समझने में इश्तबाह (गलती) हो जाता है, वह आयाते मुताशाबिहात हैं। आगे फ़रमाया:

“तो वह लोग जिनके दिलों में कजी है वह मुताशाबेह आयात के पीछे पड़ जाते हैं (उन्हीं पर ग़ौरो फ़िक्र और उन्हीं में खोज कुरेद में लगे रहते हैं) उनकी नीयत ही फ़ितना उठाने की है, और वह भी हैं जो उसका असल मफ़हूम जानना चाहते हैं।”

“हालाँकि उसके हक़ीक़ी मायने व मुराद अल्लाह ही जानता है।”

هُوَ الَّذِي أَنْزَلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ مِنْهُ آيَاتٌ مُحْكَمَاتٌ هُنَّ أُمُّ الْكِتَابِ وَأُخَرُ مُتَشَابِهَاتٌ

فَأَمَّا الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُونَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَاءَ الْفِتْنَةِ وَابْتِغَاءَ تَأْوِيلَةٍ

وَمَا يَعْلَمُ تَأْوِيلَهُ إِلَّا اللَّهُ

“अलबत्ता जो लोग इल्म में पुख्तगी के हामिल हैं वह कहते हैं कि हम ईमान रखते हैं इस पूरी किताब पर (मुहक्कमात पर भी और मुताशाबेहात पर भी), यह सब हमारे रब की तरफ़ से है।”

“लेकिन नसीहत नहीं हासिल करते मगर वही जो होशमन्द हैं।”

अल्लाह तआला हमें उन अक्लमन्दों और होशमन्दों में शामिल करे, **وَالرَّاسِخُونَ فِي الْعِلْمِ يَقُولُونَ آمَنَّا بِهِ كُلٌّ مِنْ عِنْدِ رَبِّنَا** में हमारा शुमार हो!

मुहक्कम और मुताशाबेह से मुराद क्या है? जान लीजिये कि “मुहक्कम क़तई” यानि वह मुहक्कम जिनके क़तई होने में ना पहले कोई शुबह हो सकता था ना अब है, ना आइंदा होगा, वह तो कुरआन हकीम के अवामिर व नवाही (Do's and Donts) हैं। यानि यह करो, यह ना करो, यह हलाल है, यह हराम है, यह जायज़ है, यह नाजायज़ है, यह पसंदीदा है, यह नापसंदीदा है, यह अल्लाह को पसंद और यह अल्लाह को नापसंद है!

कुरान हकीम का अमली हिस्सा दरहक़ीक़त मुहक्कमात ही पर मुश्तमिल है। यही वजह है कि इस आयत में किताब का लफ़ज़ दो मर्तबा आया है। पहले बहैसियत मज्मुई पूरे कुरान के लिये फ़रमाया: {هُوَ الَّذِي أَنْزَلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ} कुरआन मजीद का जो हिस्सा अमली हिदायतों पर मुश्तमिल है उसके लिये भी लफ़ज़ “किताब” मख्सूस है। चुनाँचे दूसरी मर्तबा जो लफ़ज़ किताब आया है: {هُنَّ أُمُّ الْكِتَابِ} वह इसी मफ़हूम में है। जहाँ कोई शय वाजिब की जाती है वहाँ {كُتِبَ عَلَيْكُمُ الضِّيَاةُ} {كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ} का लफ़ज़ आता है। जैसे {كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ} नमाज़ के बारे में सूरह निसा (आयत:103) में फ़रमाया: {إِنَّ الصَّلَاةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ كِتَابًا مَوْقُوتًا} यहाँ किताब से मुराद वह हुक़म है जो दिया गया है, तो इन मायने में {هُنَّ أُمُّ الْكِتَابِ} से मुराद क़ानून, शरीअत, अमली हिदायत, अवामिर व नवाही हैं और असल में वही मुहक्कमात हैं।

दायमी मुताशाबिहात आलमे ग़ैब और उसके ज़िम्न में आलम-ए-बरज़ख, आलम-ए-आख़िरत, आलम-ए-अरवाह, मलाइका का आलम और आलम-ए-इमसाल वग़ैरह हैं। यह दरहक़ीक़त वह दायरे हैं जो हमारी निगाहों से ओझल

हैं और इसकी हकीकतों को कव्व कमाहक़, इस ज़िन्दगी में समझना महाल और नामुमकिन है। लेकिन इनका एक इल्म दिया जाना ज़रूरी था। मा बाद अल् तबीअ'यात ईमानियात के लिये ज़रूरी है कि इस सबका एक इज्माली खाका सामने हो। हर इंसान ने मरना है, मरने के फ़ौरन बाद आलम-ए-बरज़ख में यह कुछ होना है, बा'अस बाद अल् मौत (मौत के बाद उठना) है, हश्म-नश्म है, हिसाब-किताब है, जन्नत व दोज़ख है। इन हकीकतों का इज्माली इल्म मौजूद ना हो तो बुनियादी ज़रूरत के तौर पर इंसान को जो फ़लसफ़ा दरकार है वह उसको फ़राहम नहीं होगा। लेकिन इनकी हकीकतों तक रसाई इस ज़िन्दगी में रहते हुए हमारे लिये मुमकिन नहीं, लिहाज़ा इनका जो इल्म दिया गया है वह आयाते मुतशाबिहात हैं, और वह दाईमन मुतशाबिहात ही रहेंगी। हाँ जब उस आलम में आँख खुलेगी तो असल हकीकत मालूम होगी, यहाँ मालूम नहीं हो सकती।

अलबत्ता मुतशाबिहात का एक दूसरा दायरा है जो तदरीजन मुतशाबिहात से मुहक्कमात की तरफ़ आ रहा है। वह दायरा मज़ाहिर तबीई (Physical Phenomena) से मुताल्लिक़ है। आज से हज़ार साल पहले इसका दायरा बहुत वसीअ (wide) था, आज यह कुछ महदूद हुआ है, लेकिन अब भी बहुत से हकों को हम नहीं जानते। सात आसमानों की हकीकत आज तक हमें मालूम नहीं है। हो सकता है कुछ आगे चल कर हमारा मैटेरियल साइंस का इल्म इस हद तक पहुँच जाये कि मालूम हो कि यह है वह बात जो कुरआन ने सात आसमानों से मुताल्लिक़ कही थी, लेकिन इस वक़्त यह हमारे लिये मुतशाबिहात में से है। इसी तरह एक आयत (सूरह यासीन:40)

“हर शय अपने मदार में तैर रही है।”

كُلٌّ فِي فَلَكٍ يَسْبَحُونَ ۝

इसको पहले इंसान नहीं समझ सकता था, लेकिन आज यह हकीकत मुहक्कम होकर सामने आ गई है कि:

“लहु खुर्शीद का टपके अगर ज़रें का दिल चीरें!”

अगर आप निज़ामे शम्सी को देखें तो हर चीज़ हरकत में है। कहकशां को देखें तो हर शय हरकत में है। कहकशांएँ एक-दूसरे से दूर भाग रही हैं, फ़ासला बढ़ता चला जा रहा है। एक ज़रें (atom) का मुशाहिदा करें तो उसमें इलेक्ट्रॉन और प्रोटोन हरकत में हैं। गोया हर शय हरकत में है आज से कुछ अरसा क़ब्ल यह बात मुतशाबिहात में थी, आज वह मुहक्कमात के दायरे में आ

गई है। चुनौचे बहुत सी वह साइंसी हकीकतें जो अभी तक इंसान को मालूम नहीं हैं और उनके हवाले कुरआन में हैं, वह आज के ऐतबार से तो मुतशाबिहात में शुमार होंगे लेकिन इंसान का फ़िज़िकल साइंस का इल्म आगे बढ़ेगा तो वो तदरीजन मुतशाबिहात के दायरे से निकल कर मुहक्कमात के दायरे में आ जायेंगे।

3) तफ़सीर और तावील का फ़र्क़

तफ़सीर और तावील दोनों लफ़्ज़ कुरआन मजीद में आये हैं। सूरह आले इमरान की मुतज़क्किर बाला आयत में इर्शाद हुआ है:

“इसकी तावील कोई नहीं जानता मगर अल्लाह।”

وَمَا يَعْلَمُ تَأْوِيلَهُ إِلَّا اللَّهُ

तफ़सीर का लफ़्ज़ कुरआन मजीद में सूरतुल फुरक़ान में आया है:

“और नहीं लाते वह आपके सामने कोई निराली बात मगर हम पहुँचा देते हैं (उसके जवाब में) आपको ठीक बात और बेहतरीन तरीक़े से बात खोल देते हैं।”

وَلَا يَأْتِيَنَّكَ بِمَثَلٍ إِلَّا جُنُودُكَ بِالْحَقِّ وَأَحْسَنُ تَفْسِيرًا ۝

यह लफ़्ज़ कुरआन में एक ही मर्तबा आया है, जबकि तावील का लफ़्ज़ सत्रह (17) बार आया है। इसके कुछ और मफ़हूम भी हैं और कुरआन के अलावा कुछ और चीज़ों पर भी इसका इल्लाक़ (लागू) हुआ है। तफ़सीर और तावील में फ़र्क़ क्या है? तफ़सीर का मादह “ف س ر” है। यह गोया “सफ़र” की मुन्क़लिब शक़ल है। सफ़र ब-मायने Journey भी है--- और इसका मतलब रोशनी भी है, किताब भी है। हुरूफ़ ज़रा आगे-पीछे हो गये हैं, लफ़्ज़ एक ही है। तफ़सीर के मायने हैं किसी शय को खोलना, वाज़ेह कर देना, किसी शय को रोशन कर देना, लेकिन यह ज़्यादातर मुफ़रादात और अल्फ़ाज़ से मुताल्लिक़ होती है, जबकि तावील बहैसियत मज्मूई कलाम का असल मदलूल होती है कि इससे मुराद क्या है, इसका असल मक़सूद क्या है, इसकी असल हकीकत क्या है। लिहाज़ा ज़्यादातर यही लफ़्ज़ कुरआन के लिये मुस्तमिल है। अगरचे हमारे यहाँ उर्दूदान लोग ज़्यादातर लफ़्ज़ तफ़सीर इस्तेमाल करते हैं कि फ़लाँ आयत की तफ़सीर, फ़लाँ लफ़्ज़ की तफ़सीर, लेकिन इसके लिये कुरआन की असल

इस्तलाह तावील ही है और हदीस में भी यही लफ़्ज़ आया है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन अब्बास (रज़ि०) के लिये हज़ूर ﷺ की दुआ मन्कूल है: ((اَللّٰهُمَّ فَفِّهْهُ فِي الدِّينِ وَعَلَيْهِ التَّوَكُّلُ)) यानि ऐ अल्लाह! इस नौजवान को दीन का फ़हम और तफ़्क़ूको अता फ़रमा और तावील का इल्म अता फ़रमा! चुनाँचे कलाम की असल हकीकत, असल मुराद, असल मतलूब, असल मदलूल को पा लेना ताकि इंसान असल मक़सूद तक पहुँच जाये, इसे तावील कहते हैं।

“जो शय की हकीकत को ना देखे वह नज़र क्या!”

“اول” का माद्दा अरबी ज़बान में किसी शय की तरफ़ लौटने के मफ़हूम में आता है। इसी लिये लोग कहते हैं हम फ़लाँ की आल हैं, यानि वह किसी बड़ी शख़्सियत की तरफ़ अपनी निस्बत करते हैं। “आले फ़िरऔन” का मतलब फ़िरऔन की औलाद नहीं है, बल्कि फ़िरऔन वाले “फ़िरऔनी” है। वह फ़िरऔन की ही इताअत करते थे और उसी को अपना माबूद यानि हाकिम और पेशवा समझते थे। इसी मायने में किसी इबारत को उसके असल मफ़हूम की तरफ़ लौटाना तावील है। तफ़्सीर और तावील के माबैन इस फ़र्क़ को ज़हन में रखना ज़रूरी है।

4) तावील-ए-आम और तावील-ए-खास

कुरआन हकीम की किसी एक आयत या चंद आयात के मज्मूए या किसी खास मज़मून जो चंद आयात में मुक़म्मल हो रहा है, पर ग़ौर करने में दो मरहले हमेशा पेशे नज़र रहने चाहियें: एक तावीले खास और दूसरा तावीले आम। इस सिलसिले में याद रहे कि कुरआन हकीम ज़मान (समय) व मकान के एक खास तनाज़र (Perspective) में नाज़िल हुआ है। इसका ज़माना-ए-नुज़ूल 610 ईस्वी से 632 ईस्वी के अरसे पर मुहीत (शामिल) है और इसके नुज़ूल की जगह सरज़मीं हिजाज़ है। इसका एक खास पसमंज़र है। ज़ाहिर बात है कि अगर उस वक़्त और उस इलाक़े के लोगों के अक़ीदे व नज़रियात और उनकी ज़हनी सतह को मलहूज़ (ध्यान में) ना रखा जाता तो उन तक इब्लाग़ (communication) मुमकिन ही नहीं था। वह तो उम्मी थे (अशिक्षित), पढ़े-लिखे ना थे। अगर उन्हें फ़लसफ़ा पढ़ाना शुरू कर दिया जाता, साइंसी उलूम के बारे में बताया जाता तो यह बातें उनके सरों के ऊपर से गुज़र जातीं। कुरआनी आयात तो उनके दिल और दिमाग़ में पैवस्त

(attached) हो गई, क्योंकि बराहेरास्त इब्लाग़ (communication) था, कोई barrier मौजूद नहीं था। तो कुरआन हकीम का यह शाने नुज़ूल ज़हन में रखिये। वैसे तो “शाने नुज़ूल” की इस्तलाह (term) किसी खास आयत के लिये इस्तेमाल होती है, लेकिन एक खास time and space complex में कुरआन हकीम का एक मज्मूई शाने नुज़ूल है जिसमें यह नाज़िल हुआ। वहाँ के हालात, उस अरसे के वाक़्यात, उन हालात में तदरीजन जो तब्दीली हुई, फिर कौन लोग इसके मुख़ातिब थे, अहले मक्का के अक़ीदे, उनकी रस्में-रीतें, उनके नज़रियात, उनके मुसल्लमात, उनकी दिलचस्पियाँ..... जब कुरआन को इस सयाक़ व सबाक़ (context) में रख कर ग़ौर करेंगे तो यह तावीले खास होगी। इसमें आप मज़ीद तफ़्सील में जायेंगे कि फ़लाँ आयत का वाक़्याती पसमंज़र क्या है। यानि कुरआन मज़ीद की किसी आयत या चंद आयात पर ग़ौर करते हुए अब्बलन इसको इसके context में रख कर ग़ौर करना कि जब यह आयात नाज़िल हुई उस वक़्त लोगों ने इनका मफ़हूम क्या समझा, यह तावीले खास होगी। अलबत्ता कुरआन मज़ीद चूँकि नौए इंसानी की अब्दी (अनन्त) हिदायत के लिये नाज़िल हुआ है, सिर्फ़ खास इलाक़े और खास ज़माने के लोगों के लिये तो नाज़िल नहीं हुआ, लिहाज़ा इसमें अब्दी (अनन्त) हिदायत है, इस ऐतबार से तावीले आम करना होगी।

तावीले आम के ऐतबार से अल्फ़ाज़ पर ग़ौर करेंगे कि अल्फ़ाज़ क्या इस्तेमाल हुए हैं। यह अल्फ़ाज़ जब तरकीबों की शक़ल इख़्तियार करते हैं तो क्या तरकीबें बनती हैं। फिर आयात का बाहमी रब्त क्या है, सयाक़ व सबाक़ क्या है? यह आयात जिस सूरह में आई उसका अमूद क्या है, उस सूरह का जोड़ा कौनसा है, यह सूरह किस सिलसिला-ए-सूर का हिस्सा है। फिर वह सूरतें मक्की और मदनी कौनसे ग्रुप में शामिल हैं, उनका मरकज़ी मज़मून क्या है? इस पसमंज़र में एक सयाक़ व सबाक़ मतन (text) का होगा, जिससे हमें तावीले आम मालूम होगी और एक सयाक़ व सबाक़ वाक़्यात का होगा, जिससे हमें उन आयतों की तावीले खास मालूम होगी।

अगर हम कुरआन मज़ीद की मौजूदा तरतीब के ऐतबार से आयतों पर ग़ौर करें तो मालूम होगा कि जिस तरतीब से इस वक़्त कुरआन मज़ीद मौजूद है असल हुज्जत यही है, यही असल तरतीब है, यही लौहे महफूज़ की तरतीब है। तावीले आम के ऐतबार से एक उसूली बात याद रखें:

الاعتبار لعبوم اللفظ لا لخصوص السبب यानि असल ऐतबार अल्फ़ाज़ के अमूम का

होगा ना कि ख़ास शाने नुज़ूल का। देखा जायेगा कि जो अल्फ़ाज़ इस्तेमाल हुए हैं उनका मफ़हूम व मायने, नेज़ मद्लूल क्या है। कलामे अरब से दलाइल लाये जायेंगे कि वह इन्हें किन मायने में इस्तेमाल करते थे। उस लफ़्ज़ के अमूम का ऐतबार होगा ना कि उसके शाने नुज़ूल का। लेकिन इसके यह मायने भी नहीं कि इसे बिल्कुल नज़र अंदाज़ कर दिया जाये। सबसे मुनासिब बात यही होगी कि पहले इसकी तावीले ख़ास पर ग़ौर करें और फिर इसके अब्दी सरचश्मा-ए-हिदायत होने के नाते अमूम पर ग़ौर करें। इस ऐतबार से तावीले ख़ास और तावीले आम के फ़र्क़ को ज़हन में रखें।

5) तज़क्कुर व तदब्बुर

तज़क्कुर व तदब्बुर दोनों अल्फ़ाज़ अलग-अलग तो बहुत जगह आये हैं, सूरह सुआद की आयत 29 में एकजा (एक साथ) आ गये हैं:

“यह एक बड़ी बरकत वाली किताब है जो (ऐ नबी ﷺ) हमने आपकी तरफ़ नाज़िल की है ताकि यह लोग इसकी आयात पर ग़ौर करें और अक्ल व फ़िक्र रखने वाले इससे सबक लें।”

كِتَابٌ أَنْزَلْنَاهُ إِلَيْكَ مُبَارَكٌ لِيَدَّبَّرُوا الْآيَاتِ ۖ وَلِيَتَذَكَّرَ أُولُو الْأَلْبَابِ ۝

इन दोनों का मतलब क्या है? एक है कुरआन मजीद से हिदायत अख़ज़ कर लेना, नसीहत हासिल कर लेना, असल रहनुमाई हासिल कर लेना, जिसको मौलाना रूम ने कहा: “माज़ कुराँ मग़ज़हा बरदा शतीम” यानि कुरआन का जो असल मग़ज़ है वह तो हमने ले लिया। इसका असल मग़ज़ “हिदायत” है। इस मरहले पर कुरआन जो लफ़्ज़ इस्तेमाल करता है वह “तज़क्कुर” है। यह लफ़्ज़ ज़िक्र से बना है। तज़क्कुर याददेहानी को कहते हैं। अब इसका ताल्लुक उसी बात से जुड़ जायेगा जो कुरआन के अस्तूबे इस्तदलाल के ज़िम्न में पहले बयान की जा चुकी है। यानि कुरआन मजीद जिन असल हक्काइक़ (माबाद अलतबीअ'यात हक्कीक़तों) की तरफ़ रहनुमाई करता है वह फ़ितरते इंसानी में मुज़मर हैं, उन पर सिर्फ़ ज़हूल और निस्नान (भूलने) के पर्दे पड़ गये हैं। मसलन आपको कोई बात कुछ अरसे पहले मालूम थी, लेकिन अब उसकी तरफ़ ध्यान नहीं रहा और वह आपकी याददाश्त के ज़ख़ीरे में गहरी उतर गई है और अब याद नहीं आती, लेकिन किसी रोज़ उसकी तरफ़ कोई हल्का सा

इशारा मिलते ही आपको वह पूरी बात याद आ जाती है। जैसे आपका कोई दोस्त था, किसी ज़माने में बेतकल्लुफ़ी थी, सुबह शाम मुलाक़ातें थीं, अब तवील अरसा हो गया, कभी उसकी याद नहीं आयी। ऐसा नहीं कि आपको याद नहीं रहा, बल्कि ज़हूल है, निस्नान है, तवज्जह उधर नहीं है, कभी ज़हन उधर मुन्तक़िल ही नहीं होता। लेकिन अचानक किसी रोज़ आपने अपना ट्रंक खोला और उसमें से कोई क़लम या रुमाल जो उसने कभी दिया हो बरामद हो गया तो फ़ौरन आपको अपना वह दोस्त याद आ जायेगा। यह phenomenon तज़क्कुर है। तज़क्कुर का मतलब तअल्लम नहीं है। तअल्लम इल्म हासिल करना यानि नई बात जानना है, जबकि तज़क्कुर पहले से हासिलशुदा इल्म जिस पर ज़हूल और निस्नान के जो पर्दे पड़ गये थे, उनको हटाकर अंदर से उसे बरामद करना है। फ़ितरते इंसानी के अंदर अल्लाह की मोहब्बत, अल्लाह की मार्फ़त के हक्काइक़ मुज़मर हैं। यह फ़ितरत में मौजूद हैं, सिर्फ़ उन पर पर्दे पड़ गये हैं, दुनिया की मोहब्बत ग़ालिब आ गई है:

दुनियाँ ने तेरी याद से बेगाना कर दिया

तुझसे भी दिलफ़रेब हैं ग़म रोज़गार के! (फ़ैज़)

यहाँ की दिलचस्पियों, मसाइल, मुश्किलात, मशरूफ़ियात, मशागुल की वजह से ज़हूल हो गया है, पर्दा पड़ गया है। तज़क्कुर यह है कि इस पर्दे को हटा दिया जाये।

सरकशी ने कर दिये धुंधले नक़्शे बन्दगी

आओ सज्दे में गिरें, लौहे ज़बीं ताज़ा करें! (हफ़ीज़)

याददाश्त को recall करना और अपनी फ़ितरत में मुज़मर हक्काइक़ को उजागर कर लेना तज़क्कुर है। कुरआन का असल हदफ़ यही है और इस ऐतबार से कुरआन का दावा सूरह अल् क़मर में चार मर्तबा आया है:

“हमने कुरान को तज़क्कुर के लिये बहुत आसान बना दिया है, तो कोई है नसीहत हासिल करने वाला?”

۝

इसके लिये बहुत ग़हराई में गोताज़नी करने की ज़रूरत नहीं है, बहुत मशक्क़त व मेहनत मतलूब नहीं है। इंसान के अंदर तलब-ए-हक्कीक़त हो और कुरआन से बराहेरास्त राब्ता (communication) हो जाये तो तज़क्कुर हासिल हो जायेगा। इसकी शर्त सिर्फ़ एक है और वह यह कि इंसान को इतनी

अरबी ज़रूर आती हो कि वह कुरआन से हम कलाम हो जाये। अगर आप तर्जुमा देखेंगे तो कुछ मालूमात तो हासिल होगी, तज़क्कुर नहीं होगा। इक़बाल ने कहा था:

*तेरे ज़मीर पर जब तक ना हो नुज़ूले किताब
गिरह कशा है ना राज़ी ना साहिबे कशाफ़!*

तज़क्कुर के अमल का असर तो यह है कि आपके अंदर के मुज़मर हक्काइक़ उभर कर आपके शऊर की सतह पर दोबारा आ जायें। यह ना हो कि पहले आपने मतन को पढ़ा, फिर तर्जुमा देखा, हाशिया देखा, इसके बाद अगली आयत की तरफ़ गये तो तसलसुल टूट गया और कलाम की तासीर ख़त्म हो गई। तर्जुमे से कलाम की असल तासीर बाक़ी नहीं रहती। शेक्सपियर की कोई इबारत अगर आप अँग्रेज़ी में पढ़ेंगे तो झूम जायेंगे, अगर उसका तर्जुमा करेंगे तो उसका वह असर नहीं होगा। इसी तरह ग़ालिब का शेर हो या मीर का, उसका अँग्रेज़ी में तर्जुमा करेंगे तो वह असर बाक़ी नहीं रहेगा और आप वजद में नहीं आयेंगे, झूम-झूम नहीं जायेंगे। अरबी ज़बान का इतना इल्म कि आप अरबी मतन को बराहेरास्त समझ सकें, तज़क्कुर की बुनियादी शर्त है। चुनाँचे अब्बलन (पहला) हुस्ने नीयत हो, तलबे हिदायत हो, तास्सुब की पट्टी ना बंधी हो, और सानयन (दूसरे) अरबी ज़बान का इतना इल्म हो कि आप बराहेरास्त उससे हम कलाम हो रहे हों, यह दोनों शर्तें पूरी हो जायें तो तज़क्कुर हो जायेगा।

दोबारा ज़हन में ताज़ा कर लीजिये कि आयत का मतलब निशानी है। निशानी उसे कहते हैं जिसको देख कर ज़हन किसी और शय की तरफ़ मुन्तक़िल हो जाये। आपने क़लम या रुमाल देखा तो ज़हन दोस्त की तरफ़ मुन्तक़िल हो गया जिससे मिले हुए बहुत अरसा हो गया था और उसका कभी ख़याल ही नहीं आया था। मौलाना रूम कहते हैं।

*खुश्क तार व खुश्क मग़ज़ व खुश्क पोस्त
अज़ कजा मी आयद ई आवाज़े दोस्त?*

हमारा एक अज़ली दोस्त है “अल्लाह” वही हमारा ख़ालिक़ है, हमारा बारी है, हमारा रब है। उसकी दोस्ती पर कुछ पर्दे पड़ गए हैं, उस पर कुछ ज़हूल तारी हो गया है। कुरआन उस दोस्त की याद दिलाने के लिये आया है।

इसके बरअक्स तदब्बुर गहराई में गोताज़न होने को कहते हैं। “कुरआन में हो गोताज़न ऐ मर्दे मुसलमान!” तदब्बुर के ऐतबार से कुरान हकीम

मुश्किलतरीन किताब है। इसकी वजह क्या है? यह कि इसका मिन्बा और सरचश्मा इल्मे इलाही है और इल्मे इलाही ला-मुतनाही (अन्तहीन) है। यह हक्कीक़त है कि कलाम में मुतकल्लिम की सारी सिफ़ात मौजूद होती हैं, लिहाज़ा यह कलाम ला-मुतनाही है। इसको कोई शख्स ना अबूर कर सकता है ना गहराई में इसकी तह तक पहुँच सकता है। यह नामुमकिन है, चाहे पूरी-पूरी ज़िन्दगियाँ खपा लें। वह चाहे साहिबे कश्शाफ़ हों, साहिबे तफ़्सीर कबीर हों, कसे बाशद। इसका अहाता करना किसी के लिये मुमकिन नहीं। बाज़ लोग ग़ैर महतात अंदाज़ में यह अल्फ़ाज़ इस्तेमाल कर देते हैं कि “उन्हें कुरआन पर बड़ा अबूर हासिल है।” यह कुरआन के लिये बड़ा तौहीन आमेज़ कलमा है। अबूर एक किनारे से दूसरे किनारे तक पहुँच जाने को कहते हैं। कुरआन का तो किनारा ही कोई नहीं है। किसी इंसान के लिये यह मुमकिन नहीं है कि वह कुरआन पर अबूर हासिल करे। यह ना मुमकिनात में से है। इसी तरह इसकी गहराई तक पहुँच जाना भी ना मुमकिन है।

इस सिलसिले में एक तम्सील (उदाहरण) से बात किसी क़दर वाज़ेह हो जायेगी। कभी ऐसा भी होता है कि समुन्दर में कोई टैंकर तेल लेकर जा रहा है और किसी वजह से अचानक तेल लीक करने लग जाता है। लेकिन वह तेल सतह समुन्दर के ऊपर ही रहता है, नीचे नहीं जाता। सतह समुन्दर पर ऊपर तेल की तह और नीचे पानी होता है और वह तेल पाँच-दस मील तक फैल जाता है। समुन्दर की अथाह गहराई के बावजूद तेल सतह आब पर ही रहता है। इसी तरह समझिये कि कुरआन मजीद की असल हिदायत और असल तज़क्कुर इसकी सतह पर मौजूद है। इस तक रसाई के लिये साइंसदान या फ़लसफ़ी होना, अरबी अदब (साहित्य) का माहिर होना, कलामे जाहिली का आलिम होना ज़रूरी नहीं। सिर्फ़ दो चीज़ें मौजूद हों। पहली ख़ुलूसे नीयत और तलबे हिदायत, दूसरी कुरआन से बराहेरास्त हमकलामी का शर्फ़ और इसकी सलाहियत। यह दोनों हैं तो तज़क्कुर का तक्राज़ा पूरा हो जायेगा। अलबत्ता तदब्बुर के लिये गहराई में उतरना होगा और इस बहरे ज़ख़्ख़ार में गोताज़नी करना होगी। तदब्बुर का हक़ अदा करने के लिये शेर जाहिली को भी जानना ज़रूरी है। हर लफ़ज़ की पहचान ज़रूरी है कि जिस दौर में कुरआन नाज़िल हुआ उस ज़माने और उस इलाक़े के लोगों में इस लफ़ज़ का मफ़हूम क्या था, यह किन मायने में इस्तेमाल हो रहा था? कुरआन ने बुनियादी इस्तलाहात वहीं से अख़ज़ की हैं। वही अल्फ़ाज़ जिनको अरब अपने अशआर और ख़ुत्बात

के अंदर इस्तेमाल करते थे उन्हीं को कुरआन मजीद ने लिया है। चुनाँचे नुज़ूले कुरआन के दौर की ज़बान को पहचानना और उसके लिये ज़रूरी महारत का होना तदब्बुर के लिये नाज़िरी (ज़रूरी) है। फिर यह कि अहादीस, इल्मे बयान, मन्तिक़, इन सबको इंसान बतरीक़े तदब्बुर जानेगा तो फिर वह इसका हक़ अदा कर सकेगा।

मौलाना अमीन अहसान इस्लाही साहब ने अपनी तफ़्सीर का नाम ही “तदब्बुरे कुरआन” रखा है और वह तदब्बुरे कुरआन के बहुत बड़े दाई हैं। इसके लिये उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में बहुत मेहनत की है। उनके बाज़ शागिर्द हज़रात ने भी मेहनत की है और वक़्त लगाया है। इसके उन तकाज़ों को तो उन हज़रात ने बयान किया है, लेकिन तदब्बुरे कुरआन का एक और तकाज़ा भी है जो बदकिस्मती से उनके सामने भी नहीं आया। अगर वह तकाज़ा भी पूरा नहीं होगा तो असरे हाज़िर के तदब्बुर का हक़ अदा नहीं होगा। वह तकाज़ा यह है कि इल्मे इंसानी आज जिस लेवल तक पहुँच गया है, मेटेरियल साइंस के मुख्तलिफ़ उलूम के ज़िम्न में जो कुछ मालूमात इंसान को हासिल हो चुकी हैं और वह ख़्यालात व नज़रियात जिनको आज दुनिया में माना जा रहा है उनसे आगाही हासिल की जाये। अगर इनका इज्माली इल्म नहीं है तो इस दौर के तदब्बुरे कुरआन का हक़ अदा नहीं किया जा सकता। कुरआन हकीम वह किताब है जो हर दौर के उफ़क़ (Horizon) पर खुर्शीदि ताज़ा की मानिन्द तुलूअ होगी। आज से सौ बरस पहले के कुरआन और आज के कुरआन में इस हवाले से फ़र्क़ होगा। मतन और अल्फ़ाज़ वही हैं, लेकिन आज इल्मे इंसानी की जो सतह है उस पर इस कुरआन के फ़हम और इसके इल्म को जिस तरीक़े से जलवागर होना चाहिये अगर आप इसका हक़ अदा कर रहे हैं तो आप सौ बरस पहले का कुरआन पढ़ा रहे हैं, आज का कुरआन नहीं पढ़ा रहे। जैसे अल्लाह की शान है: {كُلُّ يَوْمٍ هُوَ فَوْزٌ شَانٌ} (सूरह रहमान:29) इसी तरह का मामला कुरआन हकीम का भी है।

इसी तरह हिदायते अमली के ज़िम्न में इक़तसादयात, समाजियात और नफ़िसयाते इंसानी के सिलसिले में रहनुमाई और हक्काइक़ कुरआन में मौजूद हैं, उन्हें कैसे समझेंगे? कुआरन की असल तालीमात की क़द्र व क़ीमत और उसकी असल evaluation कैसे मुमकिन है अगर इंसान आज के इक़तसादी मसाईल को ना जानता हो? इसके बग़ैर वह तदब्बुरे कुरआन का हक़ नहीं अदा कर सकता। मसलन आज के इक़तसादी मसाईल क्या हैं? पेपर करेंसी की

हक़ीक़त क्या है? इक़तसादयात के उसूल व मबादी क्या हैं? बैंकिंग की असल बुनियाद क्या है? किस तरह कुछ लोगों ने इस पूरी नौए इंसानी को मआशी ऐतबार से बेबस किया हुआ है। इस हक़ीक़त को जब तक नहीं समझेंगे तो आज के दौर में कुरआन हकीम की इक़तसादी तालीमात वाज़ेह करने का हक़ अदा नहीं हो सकता।

वाक़या यह है कि आज तदब्बुरे कुरआन किसी एक इंसान के बस का रोग ही नहीं रहा, इसके लिये तो एक जमाअत दरकार है। मेरे किताबचे “मुसलमानों पर कुरआन मजीद के हुक्क़” के बाब “तज़क्कुर व तदब्बुर” में यह तसब्बुर पेश किया गया है कि ऐसी यूनिवर्सिटीज़ कायम हों जिनका असल मरकज़ी शौबा (विभाग) “तदब्बुरे कुरआन” का हो। जो शख्स भी इस यूनिवर्सिटी का तालिबे इल्म हो, वह अरबी ज़बान सीखे और कुरआन पढ़े। लेकिन इस मरकज़ी शौबे के गिर्द तमाम उलूमे अक़ली, जैसे मन्तिक़, मा बाद अल् तबीअ’यात, अख़लाक़ियात, नफ़िसयात और इलाहियात, उलूमे अमरानी (सामाजिक) जैसे मआशियात, सियासियात और क़ानून, और उलूमे तबीई, जैसे रियाज़ी (गणित), कीमिया (रसायन), तबीअ’यात (भौतिक), अरदियात (भूविज्ञान) और फ़ल्क़ियात (खगोलीय) वग़ैरह के शौबों का एक हिसार (दिवार) कायम हो, और हर एक तालिबे इल्म “तदब्बुरे कुरआन” की लाज़िम्न और एक या उससे ज़्यादा दूसरे उलूम की अपने ज़ौक़ (समझ) के मुताबिक़ तहसील (study) करे और इस तरह इन शौबा हाए उलूम में कुरआन के इल्म व हिदायत को तहक़ीक़ी तौर पर अख़ज़ करके मुअस्सर (प्रभावी) अंदाज़ में पेश कर सके। तालिबे इल्म वह भी पढ़े तब मालूम होगा कि इस शौबे में इंसान आज कहाँ खड़ा है और कुरआन क्या कह रहा है। फ़लाँ शौबे में नौए इंसानी के क्या मसाईल हैं और इस ज़िम्न में कुरआन हकीम क्या कहता है। मुख्तलिफ़ शौबे मिल कर तदब्बुरे कुरआन की ज़रूरत को पूरा कर सकते हैं जो वक़्त का अहम तकाज़ा है।

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया, तज़क्कुर के ऐतबार से कुरआन आसान तरीन किताब है जो हमारी फ़ितरत की पुकार है। “मैंने यह जाना कि गोया यही मेरे दिल में था!” अगर इंसान की फ़ितरत मस्ख़शुदा (विकृत) नहीं है, बल्कि सलीम (ठीक) है, सालेह है, सलामती पर कायम है तो वह कुरआन को अपने दिल की पुकार महसूस करेगा, उसके और कुरआन के दरमियान कोई हिजाब ना होगा, वह उसे अपने दिल की बात समझेगा, उसके लिये अरबी ज़बान का

सिर्फ़ इतना इल्म काफ़ी है कि बराहेरास्त हमकलाम हो जाये। जबकि तदब्बुर के तक्काज़े पूरे करने किसी एक इंसान के बस का रोग नहीं है। जो शख्स भी इस मैदान में क़दम रखना चाहे उसके ज़हन में एक इज्माली ख़ाका ज़रूर होना चाहिये कि आज ज़दीद साइंस के ऐतबार से इंसान कहाँ खड़ा है। जब इंसान को अपने मक़ाम की मारफ़त हासिल हो जाये तो वह कुरआन मजीद से बेहतर तौर पर फ़ायदा उठा सकता है। इसकी मिसाल ऐसी है कि समुन्दर में तो बेतहाशा पानी है, आप अगर पानी लेना चाहते हैं तो जितना बड़ा कटोरा, कोई देग, देगची या बाल्टी आपके पास है उसी को आप भर लेंगे। यानि जितना आपका ज़र्फ़ (container) होगा उतना ही आप समुन्दर से पानी अख़ज़ कर सकेंगे। इसका यह मतलब तो हरगिज़ ना होगा कि समुन्दर में पानी ही इतना है! इंसानी ज़हन का ज़र्फ़ उलूम से बनता है। यह ज़र्फ़ आज से पहले बहुत तंग था। एक हज़ार साल पहले का ज़र्फ़ ज़हनी बहुत महदूद था। इंसानी उलूम के ऐतबार से आज का ज़र्फ़ बहुत वसीअ है। अगर आज आपको कुरआन मजीद से हिदायत हासिल करनी है तो आपको अपना ज़र्फ़ इसके मुताबिक़ वसीअ करना होगा। और अगर कुछ लोग अभी उसी साबिक़ दौर में रह रहे हैं तो कुरआन हकीम के मख़फ़ी हक्काइक़ उन पर मुन्कशिफ़ नहीं होंगे।

6) अमली हिदायात और मज़ाहिरे तबीई के बारे में मुतज़ाद तर्ज़े अमल

कुरआन हकीम में साइंसी उलूम के जो हवाले आते हैं और उसमें जो अमली हिदायात मिलती हैं, उनके ज़िम्न में यह बात पेशेनज़र रहनी चाहिये कि एक ऐतबार से हमें आगे से आगे बढ़ना है और दूसरे ऐतबार से हमें पीछे से पीछे जाना है। चुनाँचे कुरआन हकीम पर ग़ौरो फ़िक़र करने वाले का अंदाज़ (attitude) दो ऐतबारात से बिल्कुल मुतज़ाद (opposite) होना चाहिये। साइंसी हवाले जो कुरआन में आये हैं उनकी ताबीर करने में आगे से आगे जाइये। आज इंसान को क्या मालूमात हासिल हो चुकी हैं, कौनसे हक्काइक़ पाये सबूत को पहुँच चुके हैं, उनके हवाले पेशेनज़र रहेंगे। इसमें पीछे जाने की ज़रूरत नहीं है। इमाम राज़ी और दीगर क़दीम मुफ़स्सिरिन को देखने की ज़रूरत नहीं है। बल्कि इस ज़िम्न में नबी अकरम ﷺ ने भी कुछ फ़रमाया है तो वह भी हमारे लिये लाज़िम नहीं है। इसलिये कि हुज़ूर ﷺ साइंस और

टेक्नोलॉजी सिखाने नहीं आये थे। ताबीरे नख़ल का वाक़या पीछे गुज़र चुका है, इसके ज़िम्न में आप ﷺ ने फ़रमाया था: ((أَنْتُمْ أَعْلَمُ بِأَمْرِ دُنْيَاكُمْ)) “अपने दुनियावी मामलात के बारे में तुम मुझसे ज़्यादा जानते हो।” तजुर्बाती उलूम के मुताबिक़ जो तुम्हें इल्म हासिल है उस पर अमल करो। लेकिन दीन का जो अमली पहलू है उसमें पीछे से पीछे जाइये। यहाँ यह दलील नहीं चलेगी कि ज़दीद दौर के तक्काज़े कुछ और हैं, जबकि यह देखना होगा कि रसूल ﷺ ने और सहाबा (रज़ि०) ने क्या किया। इस हवाले से कुरआन के तालिबे इल्म का रुख़ पीछे की तरफ़ होना चाहिये कि अस्लाफ़ ने क्या समझा। मुताख़रीन को छोड़ कर मुतक़दमीन की तरफ़ जाइये। मुतक़दमीन से तबअ ताबईन, फिर ताबईन से होते हुए “مَا لَكَ عَلَيْهِ وَ أَخْطَايَ” यानि हुज़ूर ﷺ और सहाबा (रज़ि०) के अमल तक पहुँचिये। इस ऐतबार से इक़बाल का यह शेर सही मुन्तबिक़ होता है।

बमुस्तफ़ा ﷺ बरसाँ ख़वीश रा कि दीं हमा ऊस्त

अगर बऊव नरसीदी तमाम बू-लहबी सत!

दीन का अमली पहलू वही है जो अल्लाह के रसूल ﷺ से साबित है। इसमें अगरचे रिवायात के इख़्तलाफ़ की वजह से कुछ फ़र्क़ हो जायेगा मगर दलील यही रहेगी: ((صَلُّوا كَمَا رَأَيْتُمُوْنِي أُصَلِّيْ))⁽¹⁾ नमाज़ इस तरह पढ़ो जैसे तुम मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखते हो।” अब नमाज़ के जुज़यात के बारे में रिवायात में कुछ फ़र्क़ मिलता है। किसी के नज़दीक़ एक रिवायत क़ाबिले तरज़ीह है, किसी के नज़दीक़ दूसरी। इस ऐतबार से जुज़यात में थोड़ा बहुत फ़र्क़ हो जाए तो कोई हर्ज नहीं। अलबत्ता दलील यही रहेगी कि रसूल ﷺ और सहाबा (रज़ि०) का अमल यह था। हुज़ूर अकरम ﷺ का यह फ़रमान भी नोट कर लीजिये: ((فَعَلَيْكُمْ بِسُنَّتِيْ وَ سُنَّةِ الْخُلَفَاءِ الرَّاشِدِيْنَ الْمُهَدِّيْنَ))⁽²⁾ “तुम पर मेरी सुन्नत इख़्तियार करना लाज़िम है और मेरे ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन की सुन्नत जो हिदायत याफ़ता हैं।” चुनाँचे हुज़ूर ﷺ का अमल और ख़ुल्फ़ा-ए-राशिदीन का अमल हमारे लिये लायक़ तक्लीद है। फिर इसी से मुत्तसिल (connecting) वह चीज़ें हैं जिन पर हमारी चौदह सौ बरस की तारीख़ में उम्मत का इज्माअ रहा है। अब दुनिया इस्लामी सजाओं को वहशियाना क्रार देकर हम पर असर अंदाज़ होने की कोशिश कर रही है और हमें बुनियादपरस्त (fundamentalist) की गाली देकर चाहती है कि हमारे अंदर

माज़रत ख़वाहाना रवैया पैदा कर दे, मगर हमारा तर्ज़े अमल यह होना चाहिये कि इन बातों से क़तअन मुतास्सिर हुए बग़ैर दीन के अमली पहलू के बारे में पीछे से पीछे जाते हुए {مُحَمَّدٌ رَّسُولُ اللَّهِ وَالَّذِينَ مَعَهُ} (सूरह फ़तह:1) तक पहुँच जायें!

बदकिस्मती से हमारे आम उल्माओं का हाल यह है कि उन्होंने अरबी उलूम तो पढ़े हैं, अरबी मदरसों से फ़ारिग़ अल् तहसील हैं, मगर वह आगे पढ़ने की सलाहियत से आरी (मुक्त) हैं। उन्होंने साइंस नहीं पढ़ी, वह जदीद उलूम से वाकिफ़ नहीं, वह नहीं जानते आइंस्टीन किस बला का नाम है और उस शख्स के ज़रिये तबीअ'यात के अंदर कितनी बड़ी तब्दीली आ गई है। न्यूटोनियन इरा क्या था और आइंस्टीन का दौर क्या है, उन्हें क्या पता! आज कायनात का तसव्वुर क्या है, एटम की साख़्त क्या है, उन्हें क्या मालूम! एटम तो पुरानी बात हो गई, अब तो इंसान न्यूट्रॉन प्रोटोन से भी कहीं आगे की बारीकियों तक पहुँच चुका है। अब इन चीज़ों को नहीं जानेंगे तो इन हक्काइक़ को सही तौर पर समझना मुमकिन नहीं होगा। मज़ाहिर तबीई का मामला तो आगे से आगे जा रहा है। इसकी ताबीर जदीद से जदीद होनी चाहिये। अलबत्ता इस ज़िम्न मे यह फ़र्क़ ज़रूर मल्हूज़ रहना चाहिये कि एक तो साइंस के मैदान के महज़ नज़रियात (theories) हैं जिन्हें मुसल्लमा हक्काइक़ का दर्जा हासिल नहीं है, जबकि एक वह चीज़ें हैं तजुर्बाती तौसीक़ (मान्यता) हो चुकी है और उन्हें अब मुसल्लमा हक्काइक़ का दर्जा हासिल है। इन दोनों में फ़र्क़ करना होगा। ख़्वाहमोंख़्वाह कोई भी नज़रिया सामने आ जाये या कोई मफ़रूज़ा (hypothesis) मंज़रे आम पर आ जाये इस पर कुरान को मुन्तबिक़ करने की कोशिश करना सई ला हासिल बल्कि मज़र (ख़तरनाक) शय है। लकिन उसूली तौर पर हमें इन चीज़ों की ताबीर में आगे से आगे बढ़ना है। और जहाँ तक दीन के अमली हिस्से का ताल्लुक़ है जिसे हम शरीअत कहते हैं, यानि अवामिर व नवाही, हलाल व हराम, हुदूद व ताज़िरात वग़ैरह, इन तमाम मामलात में हमें पीछे से पीछे जाना होगा, यहाँ तक की मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के क़दमों में अपने आप को पहुँचा दीजिये। इसलिये कि दीन इसी का नाम है। : वमुस्तफ़ा ﷺ बरसाँ ख़वीश रा कि दीं हमा ऊस्त!

7) फ़हमे कुरान के लिये जज़्बा-ए-इन्क़लाब की ज़रूरत

फ़हमे कुरआन के लिये बुनियादी उसूल और बुनियादी हिदायात या इशारात के ज़िम्न में मौलाना अबुल आला मौदूदी (रहि०) ने यह बात बड़ी ख़ूबसूरती से तफ़्हीमुल कुरआन के मुक़दमे में कही है कि कुरआन महज़ नज़रियात और ख़्यालात की किताब नहीं है कि आप किसी ड्राइंगरूम में या कुतुबख़ाने में आराम से कुर्सी पर बैठ कर इसे पढ़ें और इसकी सारी बातें समझ जायें। कोई मुहन्निक़क़ या रिसर्च स्कॉलर डिक्शनरियों और तफ़्सीरों की मदद से इसे समझना चाहे तो नहीं समझ सकेगा। इसलिये कि यह एक दावत और तहरीक़ की किताब है। मौलाना मरहूम लिखते हैं:

“.....अब भला यह कैसे मुमकिन है कि आप सिर से नज़ाए कुफ़ व दीन और मारका-ए-इस्लाम व जाहिलियत के मैदान में क़दम ही ना रखें और इस कशमकश की किसी मंज़िल से गुज़रने का आपको इत्तेफ़ाक़ ही ना हुआ हो और फिर महज़ कुरआन के अल्फ़ाज़ पढ़-पढ़ कर इसकी सारी हक़ीक़तें आपके सामने बेनक्राब हो जायें! इसे तो पूरी तरह आप उसी वक़्त समझ सकते हैं जब इसे लेकर उठें और दावत इलल्लाह का काम शुरू करें और जिस-जिस तरह यह किताब हिदायत देती जाये उसी तरह क़दम उठाते चले जायें.....”

कुरान मजीद की बहुत सी बड़ी अहम हक़ीक़तें इसके बग़ैर मुन्कशिफ़ नहीं होगी, इसलिये कि कुरआन एक “किताबे इन्क़लाब” (Manual of Revolution) है। इस कुरआन ने इंसानी जदोज़हद के ज़रिये अज़ीम इन्क़लाब बरपा किया है। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और आप ﷺ के साथी (रज़ि०) एक हिज़बुल्लाह थे, एक जमाअत और एक पार्टी थे, उन्होंने दावत और इन्क़लाब के तमाम मराहिल को तय किया और हर मरहले पर उसकी मुनासिबत से हिदायात नाज़िल हुई। एक मरहला वह भी था कि हुक्म दिया जा रहा था कि मार खाओ लेकिन हाथ मत उठाओ: {كُلُّوا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقْتُلُوا أَنْفُسَكُمْ} (सूरतुन्निसा 77)। फिर एक मरहला वह भी आया कि हुक्म दे दिया गया कि अब आगे बढ़ो और जवाब दो, उन्हें क़त्ल करो। सूरह अन्फ़ाल में इशार्द हुआ:

“और इनसे जंग करते रहो यहाँ तक कि وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّى لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ

फ़ितना ख़त्म हो जाये और दीन कुल का कुल

अल्लाह के लिये हो जाये।” (आयत:39)

الرَّيُّنُ كُلُّهُ

सूरह अल् बक्ररह में फ़रमाया:

“और उनको क़त्ल कर दो जहाँ कहीं तुम
उनको पाओ और उन्हें निकालो जहाँ से
उन्होंने तुमको निकाला है।” (आयत:191)

दोनों मराहिल में यक़ीनन फ़र्क़ है, बल्कि बज़ाहिर तज़ाद (contradiction) है, लेकिन जानना चाहिये कि यह एक ही जद्दोज़हद, के दो मुख़्तलिफ़ मराहिल हैं। फिर एक दाई जब दावत देता है तो जो मसाईल उसे दरपेश होते हैं उनको एक ऐसा शख्स क़त्अन नहीं जान सकता जिसने उस कूचे में क़दम ही नहीं रखा है। उसे क्या अहसास होगा कि मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم से यह क्यों कहा जा रहा है: “क़सम है क़लम की और जो कुछ लिखते हैं! आप अपने रब के फ़ज़ल से मजनून नहीं हैं। और आपके लिये तो बेइन्तहा अज़्र है।” यानि ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم आप महज़ून और ग़मगीन ना हों। आप इनके कहने से (मआज़ अल्लाह) मजनून तो नहीं हो जायेंगे। ऐसे अल्फ़ाज़ जब किसी को कहे जाते हैं तो उसका ही दिल जानता है कि उस पर क्या गुज़रती है। अंदाज़ा लगाइये कि कुरैशे मक्का से इस क़िस्म के अल्फ़ाज़ सुन कर क़ल्बे मुहम्मदी صلی اللہ علیہ وسلم पर क्या कैफ़ियत तारी होती होगी। यह कुरआन हम पर reveal नहीं हो सकता जब तक उन अहसासात व कैफ़ियात के साथ हम खुद दो-चार ना हों। जब तक कि हमारी कैफ़ियात व अहसासात उसके साथ ममास्लत (समानता) ना रखें हम कैसे समझेंगे कि क्या कहा जा रहा है और किस कैफ़ियत के अन्दर कहा जा रहा है।

मेडिकल कॉलेज में दाख़िल होने वाले तलबा (students) सबसे पहले जिस किताब से मुतारफ़ (introduced) होते हैं वह “Manual of Dissection” है। उसमें हिदायात होती हैं कि लाश के बदन पर यहाँ शगाफ़ (चीर) लगाओ और खाल हटाओ तो तुम्हें यह चीज़ नज़र आयेगी, यहाँ शगाफ़ लगाओ तो तुम्हें फ़्लाँ शय नज़र आयेगी, इसे यहाँ से हटाओगे तो तुम्हें इसके पीछे फ़्लाँ चीज़ छुपी हुई नज़र आयेगी। इस ऐतबार से कुरआन हकीम “Manual of Revolution” है। जब तक कोई शख्स इन्क़लाबी जद्दोज़हद में शरीक नहीं होगा कुरआन हकीम के मआरफ़ (Teachings) का बहुत बड़ा

ख़जाना उसके लिये बंद रहेगा। एक शख्स फ़क़ीह है, मुफ़्ती है तो वह फ़िक्ही अहकाम को ज़रूर उसके अंदर से निकाल लेगा। आपको मालूम होगा कि बाज़ तफ़ासीर “अहकामुल कुरान” के नाम से लिखी गई हैं जिनमें सिर्फ़ उन्हीं आयात के बारे में गुफ़्तगू और बहस है जिनसे कोई ना कोई फ़िक्ही हुक्म मुस्तनबत (derived) होता है। मसलन हलत (सिद्धान्त) व हुरमत का हुक्म, किसी शय के फ़र्ज़ होने का हुक्म जिससे अमल का मामला मुताल्लिक़ है। बाकी तो गोया क़सस (क्रिस्से) हैं, तारीख़ी हक्काइक़ व वाक़यात हैं। यहाँ तक कि क़िस्सा आदम व इब्लीस जो सात मर्तबा कुरआन में आया है, या ईमानी हक्काइक़ के लिये जो दलीलें व बराहीन (arguments) हैं उनसे कोई गुफ़्तगू नहीं की गई, बल्कि सिर्फ़ अहकामुल कुरआन जो कुरान का एक हिस्सा है, उसी को अहमियत दी गई है।

कुरआन के तदरीजन नुज़ूल का सबब यह है कि साहिबे कुरआन صلی اللہ علیہ وسلم की जद्दोज़हद के मुख़्तलिफ़ मराहिल को समझा जाये, वरना फ़िक्ही अहकाम तो मुरत्तब करके दिये जा सकते थे, जैसा कि हज़रत मूसा अलै० को दे दिये गए थे “अहकामे अशरा” तख़्तियों पर कन्दह (खुदे हुए) थे जो मूसा अलै० के सुपुर्द कर दिये गये। लेकिन मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की इन्क़लाबी जद्दोज़हद जिस-जिस मरहले से गुज़रती रही कुरआन में उस मरहले से मुताल्लिक़ आयतें नाज़िल होती रहीं। तंज़ील की तरतीब के अंदर मुज़मर असल हिकमत यही तो है कि आँहुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की जद्दोज़हद, हरकत और दावत के मुख़्तलिफ़ मरहले सामने आ जाते हैं। अब भी कुरआन की बुनियाद पर और मन्हजे इन्क़लाबे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم पर जो जद्दोज़हद होगी उसे इन तमाम मरहलों से होकर गुज़रना होगा। चुनाँचे कम से कम यह तो हो कि इस जद्दोज़हद को इल्मी तौर पर फ़हम के लिये इंसान सामने रखे। अगर इल्मी ऐतबार से सीरतुनबी صلی اللہ علیہ وسلم का ख़ाका ज़हन में मौजूद ना हो तो फ़हम किसी दर्जे में भी हासिल नहीं होगा। फ़हमे हकीकी तो उसी वक़्त हासिल होगा जब आप खुद इस जद्दोज़हद में लगे हुए हैं और वही मसाईल आपको पेश आ रहे हैं तो अब मालूम होगा कि यह मक़ाम और मरहला या मसला वह था जिसके लिये यह हिदायते कुरआनी आई थी।

8) कुरान के मुनज़ज़ल मिनल्लाह होने का सुबूत

इस ज़िम्न में यह जानना भी ज़रूरी है कि कुरआन के मुनज़ज़ल मिनल्लाह होने का सुबूत क्या है। याद रखिये कि सुबूत दो किस्म के होते हैं, ख़ारजी और दाख़िली। ख़ारजी सुबूत खुद मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم का यह फ़रमाना है कि यह कलाम मुझ पर नाज़िल हुआ। फिर आप صلی اللہ علیہ وسلم की शहादत भी दो हैसियतों से है। आप صلی اللہ علیہ وسلم की शख्सन शहादत ज़्यादा नुमाया उस वक़्त थी जबकि कुरान नाज़िल हुआ और हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم खुद मौजूद थे। वह लोग भी वहाँ मौजूद थे जिन्होंने आप صلی اللہ علیہ وسلم की चालीस साला ज़िन्दगी का मुशाहदा किया था, जिन्हें कारोबारी शख्सियत की हैसियत से आप صلی اللہ علیہ وسلم के मामलात का तजुर्बा था। जिनके सामने आप صلی اللہ علیہ وسلم की सदाक़त, दयानत, अमानत और इफ़्ता-ए-अहद का पूरा नक्शा मौजूद था। बल्कि उससे आगे बढ़ कर जिनके सामने चेहरा-ए-मुहम्मदी صلی اللہ علیہ وسلم मौजूद था। सलीमुल फ़ितरत इंसान आपका रुप अनवर देख कर पुकार उठता था: سُبْحَانَ اللَّهِ مَا هَذَا بِوَجْهِكَ كَذَابٍ (अल्लाह पाक है, यह चेहरा किसी झूठे का हो ही नहीं सकता)। तो हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की शख्सियत, आप صلی اللہ علیہ وسلم की ज़ात और आप صلی اللہ علیہ وسلم की शहादत कि यह कुरआन मुझ पर नाज़िल हुआ, सबसे बड़ा सुबूत था।

इस ऐतबार से याद रखिये कि मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم और कुरआन बाहम एक दुसरे के शाहिद (गवाह) हैं। कुरआन मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم की रिसालत पर गवाही देता है:

{لَيْسَ ۝ وَالْقُرْآنُ الْحَكِيمُ ۝ إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ۝}

कुरआन गवाही दे रहा है कि आप صلی اللہ علیہ وسلم अल्लाह के रसूल हैं और कुरान के मुनज़ज़ल मिनल्लाह होने का सुबूत ज़ाते मुहम्मदी صلی اللہ علیہ وسلم है। इसका एक पहलु तो वह है कि नुज़ूले कुरआन के वक़्त रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की ज़ात, आप صلی اللہ علیہ وسلم की शख्सियत, आप صلی اللہ علیہ وسلم की सीरत व किरदार, आप صلی اللہ علیہ وسلم का अख़लाक़, आप صلی اللہ علیہ وسلم का वजूद, आप صلی اللہ علیہ وسلم की शबीहा (छवि) और चेहरा सामने था। दूसरा पहलु जो दायमी है और आज भी है वह हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم का वह कारनामा है जो तारीख़ की अनमिट शहादत है। आप एच० जि० वेल्ज़, एम० एन० राय या डॉक्टर माइकल हार्ट से पूछिये कि वह कितना अज़ीम कारनामा है जो मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने सरअंजाम दिया। और आप صلی اللہ علیہ وسلم खुद कह रहे हैं कि मेरा आला इंकलाब कुरआन है, यही मेरा अस्लहा

और असल ताक़त है, यही मेरी कुव्वत का सरचश्मा और मेरी तासीर का मिन्बा है। इससे बड़ी गवाही और क्या होगी? यह तो कुरआन के मुनज़ज़ल मिनल्लाह होने की ख़ारजी शहादत है। यानि “हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم की शख्सियत।” शहादत का यह पहलु हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के अपने ज़माने में और आप صلی اللہ علیہ وسلم की हयाते दुनयवी के दौरान ज़्यादा नुमाया था। और जहाँ तक आप صلی اللہ علیہ وسلم के कारनामे का ताल्लुक है इस पर तो अक़ल दंग रह जाती है। देखिये माइकल हार्ट मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के बारे में यह कहने पर मजबूर हुआ है:

“He was the only man in history who has supremely successful on both the religious and secular levels.”

यानि तारीखे इंसानी में सिर्फ़ वही वाहिद शख्स हैं जो सेक्युलर और मज़हबी दोनों मैदानों में इन्तहाई कामयाब रहे---

और आप صلی اللہ علیہ وسلم का यह इर्शाद है कि यह अल्लाह का कलाम है। तो ख़ारजी सुबूत गोया बतमाम व कमाल हासिल हो गया।

कुरान के मुनज़ज़ल मिनल्लाह होने का दाख़िली सुबूत यह है कि इंसान का दिल गवाही दे। दाख़िली सुबूत इंसान का अपना बातिनी तजुर्बा होता है। अगर हज़ार आदमी कहें चीनी मीठी है मगर आपने ना चखी हो तो आप कहेंगे कि जब इतने लोग कह रहे हैं मीठी है तो होगी मीठी। ज़ाहिर है एक हज़ार आदमी मुझे क्यों धोखा देना चाहेंगे, यक़ीनन मीठी होगी। लेकिन “होगी” से आगे बात नहीं बढ़ती। अलबत्ता जब इंसान चीनी को चख ले और उसकी अपनी हिसे ज़ायका (sense of taste) बता रही हो कि यह मीठी है तो अब “होगी” नहीं बल्कि “है”। “होगी” और “है” मे दरहक़ीक़त इंसान के ज़ाती तजुर्बे का फ़र्क़ है। अफ़सोस यह है कि आज की दुनिया सिर्फ़ ख़ारजी तजुर्बों को जानती है। एक तजुर्बा इससे कहीं ज़्यादा मुअत्बर है और वह बातनी तजुर्बा है, यानि किसी शय पर आपका दिल गवाही दे। इक़बाल ने क्या ख़ूब कहा है:

तू अरब हो या अजम हो तेरा ला इलाहा इल्ला

लुगते ग़रीब, जब तक तेरा दिल ना दे गवाही!

ला इलाहा इल्लल्लाह के लिये अगर दिल ने गवाही ना दी तो इंसान ख़्वाह अरबी नस्ल हो, अरबी ज़बान जानता हो, लेकिन उसके लिये यह कलमा लुगते ग़रीब ही है, नामानूस सी बात है, उसके अंदर पेवस्त नहीं है,

उसको मुतास्सिर नहीं करती। कुरआन इंसान की अपनी फ़ितरत को अपील करता है और इंसान को अपने मन में झाँकने के लिये आमदा करता है। वह कहता है अपने मन में झाँको, देखो तो सही, ग़ौर तो करो

“क्या तुम्हें अल्लाह के बारे में शक है जो आसमानों और जमीन का पैदा करने वाला है?” (10:इब्राहीम)

“क्या तुम वाक़िअतन यह गवाही देते हो कि अल्लाह के साथ कोई और माबूद भी है?” (अल् अनाम:19)

देखना तक्ररीर की लज़ज़त कि जो उसने कहा
मैंने यह जाना कि गोया यह ही मेरे दिल में है!

अल्लामा इब्ने क़य्यिम (रहि०) ने इसकी बड़ी खूबसूरत ताबीर की है। वह कहते हैं कि बहुत से लोग ऐसे हैं कि जब कुरआन पढ़ते हैं तो यूँ महसूस करते हैं कि वह मुस्हफ़ से नहीं पढ़ रहे बल्कि कुरआन उनके लौहे क़ल्ब पर लिखा हुआ है, वहाँ से पढ़ रहे हैं। गोया फ़ितरते इंसानी को कुरआन मजीद के साथ इतनी हम-आहंगी (एकता) हो जाती है।

हमारे दौर के एक सूफ़ी बुज़ुर्ग कहा करते हैं कि रूहे इंसानी और कुरआन हकीम एक ही गाँव के रहने वाले हैं। जैसे एक गाँव के रहने वाले एक दूसरे को पहचानते हैं और बाहम इन्सियत (attached together) महसूस करते हैं ऐसा ही मामला रूहे इंसानी और कुरआन हकीम का है। कुरआन को पढ़ कर और सुन कर रूहे इंसानी महसूस करती है कि इसका मिन्बा और सरचश्मा वही है जो मेरा है। जहाँ से मैं आई हूँ यह कलाम भी वहीं से आया है। यक़ीनन इस कलाम का मिन्बा और सरचश्मा वही है जो मेरे वजूद, मेरी हस्ती और मेरी रूह का मिन्बा और सरचश्मा है। यह हम-आहंगी (एकता) है जो असल बातिनी तजुर्बा बन जाये तब ही यक़ीन होता है कि यह कलाम वाक़िअतन अल्लाह का है।



बाब हफ़्तम (सातवाँ)

एजाज़े कुरआन के अहम और बुनियादी वजूह (वजहें)

कुरान और साहिबे कुरान صلی اللہ علیہ وسلم का बाहमी ताल्लुक

मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि कुरआन मजीद और नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم दोनों एक-दूसरे के शाहिद हैं। कुरआन के मुनज़ज़ल मिनल्लाह होने की सबसे बड़ी और सबसे मौअतबर (trusted) ख़ारजी गवाही नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم की अपनी गवाही है। आप صلی اللہ علیہ وسلم की शख़्सियत, आप صلی اللہ علیہ وسلم का किरदार, आप صلی اللہ علیہ وسلم का चेहरा-ए-अनवर अपनी-अपनी जगह पर गवाह हैं। हमारे लिये अगरचे आप صلی اللہ علیہ وسلم की सीरत आज भी ज़िन्दा व पाइन्दा है, किताबों में दर्ज है, लेकिन एक मुजस्सम इंसानी शख़्सियत की सूरत में आप صلی اللہ علیہ وسلم हमारे सामने मौजूद नहीं हैं, हम आप صلی اللہ علیہ وسلم के रूए अनवर की ज़ियारत से महरूम हैं। ताहम आप صلی اللہ علیہ وسلم का कारनामा ज़िन्दा व ताबन्द है और इसकी गवाही हर शख़्स दे रहा है। हर मौरिख़ (इतिहासकार) ने तस्लीम किया है, हर मुफ़क्किर (Thinker) ने माना है कि तारीख़े इंसानी का अज़ीम-तरीन इन्क़लाब वह था जो हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم ने बरपा किया। आप صلی اللہ علیہ وسلم की यह अज़मत आज भी मुबरहन (स्पष्ट) है, अशकारा (openly) है, अज़हर मिनशश्मा (express evident) है। चुनाँचे कुरआन के मुनज़ज़ल मिनल्लाह और कलामे इलाही होने पर सबसे बड़ी ख़ारजी गवाही खुद नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم हैं, और नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم के नबी और रसूल होने का सबसे बड़ा गवाह, सबसे बड़ा शाहिद और सबसे बड़ा सुबूत खुद कुरआन मजीद है।

इस ऐतबार से यह दोनों जिस तरह लाज़िम व मलज़ूम हैं इसके लिये मैं कुरआन हकीम के दो मक्कामात से इस्तशहाद (शपथपत्र) कर रहा हूँ। सूरह अल् बय्यिना (आयत:1) में फ़रमाया:

“अहले किताब में से जिन लोगों ने कुफ़्र किया और मुशरिक बाज़्र आने वाले ना थे यहाँ तक कि उनके पास “बय्यिना” आ जाती।”

لَمْ يَكُنِ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ
وَالْمُشْرِكِينَ مُتَنَفِّكِينَ حَتَّى تَأْتِيَهُمُ الْبَيِّنَةُ

“बिन्ने” खुली और रोशन दलील को कहते हैं। ऐसी रोशन हकीकत जिसको किसी ख़ारजी दलील की मज़ीद हाज़त ना हो वह “बिन्ने” है। जैसे हम अपनी गुफ़्तगू में कहते हैं कि यह बात बिल्कुल बय्यिन है, बिल्कुल वाज़ेह है, इस पर किसी क़ील व क़ाल की हाज़त ही नहीं है। बल्कि अगर बय्यिना पर कोई दलील लाने की कोशिश की जाये तो किसी दर्जे में शक व शुबह तो पैदा किया जा सकता है, उस पर यक़ीन में इज़ाफ़ा नहीं किया जा सकता। और यह बिन्ने क्या है? फ़रमाया:

“एक रसूल अल्लाह की जानिब से जो पाक सहीफ़े पढ़ कर सुनाता है, जिनमें बिल्कुल रास्त (सच) और दुरुस्त तहरीरें लिखी हुई हों।” (आयत:2-3)

यहाँ कुरान हकीम की सूरतों को अल्लाह की किताबों से ताबीर किया गया है, जो कायम व दायम हैं और हमेशा-हमेश रहने वाली हैं। तो गोया रसूल صلی اللہ علیہ وسلم की शख़्सियत और अल्लाह का यह कलाम जो उन पर नाज़िल हुआ, दोनों मिलकर “बिन्ने” बनते हैं।

मैंने कुरान फ़हमी का यह उसूल बारहा (बार-बार) अर्ज़ किया है कि कुरआन मज़ीद में अहम मज़ामीन (articles) कम से कम दो जगह ज़रूर आते हैं। चुनाँचे इसकी नज़ीर (उदाहरण) सूरह अत् तलाक़ में मौजूद है। इसकी आयत 10 इन अल्फ़ाज़ पर ख़त्म होती है:

“अल्लाह ने तुम्हारी तरफ़ एक ज़िक्र नाज़िल कर दिया है।”

और यह ज़िक्र क्या है? फ़रमाया:

“एक ऐसा रसूल जो तुम्हें पढ़ कर सुना रहा है अल्लाह की आयात जो हर शय को रोशन कर देने वाली (और हर हकीकत को मुबरहन [स्पष्ट] कर देने वाली) हैं, ताकि ईमान लाने वालों और नेक अमल करने वालों को तारीकियों (अंधेरों) से निकाल कर रोशनी में ले आये।”

यहाँ “اٰیٰتٍ مُّبٰیِّنٰتٍ” के बजाये “اٰیٰتٍ مُّبٰیِّنٰتٍ” आया है। “बय्यिन” वह चीज़ है जो खुद रोशन है और “मुबय्यिन” वह चीज़ है जो दूसरी चीज़ों को रोशन करती है, हकाइक को उज़ागर करती है। तो यहाँ पर ज़िक्र की जो तावील की गई कि {رُسُوْلًا یَّتْلُوْا عَلَیْكُمْ اٰیٰتِ اللّٰهِ مُبَیِّنٰتٍ} इससे वाज़ेह हुआ कि कुरआन और मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم एक-दूसरे के साथ इस तरह जुड़े हुए और मिले हुए हैं कि एक हयातयाती वजूद (Organic Whole) बन गये हैं। यह एक-दूसरे के लिये शाहिद भी हैं और एक-दूसरे के लिये complimentary भी हैं। इस हवाले से यह दोनों हकीकते इस तरह जमा हैं कि एक-दूसरे से जुदा नहीं की जा सकतीं।

मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم का असल मोअज़्ज़ह (चमत्कार): कुरान हकीम

अगली बात यह समझिये कि नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم की रिसालत का असल सबूत या बा अल्फ़ाज़े दीगर आप صلی اللہ علیہ وسلم का असल मोअज़्ज़ह (चमत्कार), बल्कि वाहिद मोअज़्ज़ह कुरआन हकीम है। यह बात ज़रा अच्छी तरह समझ लीजिये। “मोअज़्ज़ह” का लफ़्ज़ हमारे यहाँ बहुत आम हो गया है और हर ख़र्के आदत शय को मोअज़्ज़ह शुमार किया जाता है। मोअज़्ज़ह के लफ़्ज़ी मायने आजिज़ कर देने वाली शय के हैं। कुरआन मज़ीद में “عَجْرٌ” माद्दे से बहुत से अल्फ़ाज़ आते हैं, लेकिन हमारे यहाँ इस्तिलाह के तौर पर इस लफ़्ज़ का जो इत्लाक़ किया जाता है वह कुरआन हकीम में मुस्तमिल नहीं है, बल्कि अल्लाह के रसूलों को जो मोअज़्ज़ात दिये गये उन्हें भी आयतें कहा गया है। अम्बिया व रसूल अल्लाह तआला की आयात यानि अल्लाह की निशानियाँ लेकर आये।

इस ऐतबार से मोअज़्ज़ह का लफ़्ज़ जिस मायने में हम इस्तेमाल करते हैं, उस मायने में यह कुरआन मज़ीद में मुस्तमिल नहीं है। अलबत्ता वह तबीई क़वानीन (Physical Laws) जिनके मुताबिक़ यह दुनिया चल रही है, अगर किसी मौक़े पर वह टूट जायें और उनके टूट जाने से अल्लाह तआला की कोई मशियते ख़सूसी (special will) ज़ाहिर हो तो उसे ख़र्के आदत कहते हैं। मसलन क़ानून तो यह है कि पानी अपनी सतह हमवार रखता है, लेकिन हज़रत मूसा अलै० ने अपने असा (लाठी) की ज़र्ब (चोट) लगाई और समुन्दर

फट गया, यह खर्कें आदत है, यानि जो आदी क़ानून है वह टूट गया। “खर्कें” फट जाने को कहते हैं, जैसे सूरह अल् कहफ़ में यह लफ़्ज़ आया है “خَرْقًا” यानि उस अल्लाह के बन्दे ने जो हज़रत मूसा अलै० के साथ कश्ती में सवार थे, कश्ती में शगाफ़ (दरार) डाल दिया। पस (बस) जब भी कोई तबीई क़ानून टूटेगा तो वह खर्कें आदत होगा। अल्लाह तआला इन खर्कें आदत वाक़्यात के ज़रिये से बहुत से क़वानीने कुदरत को तोड़ कर अपनी खुसूसी मशियत और खुसूसी कुदरत का इज़हार फ़रमाता है। और यह बात हमारे हाँ मुसल्लम है कि इस ऐतबार से अल्लाह तआला का मामला सिर्फ़ अम्बिया के साथ मख़सूस नहीं है, बल्कि अल्लाह तआला अपने नेक बंदों में से भी जिनके साथ ऐसा मामला करना चाहें करता है, लेकिन इस्तलाहन हम उन्हें करामात कहते हैं। खर्कें आदत या करामात अपनी जगह पर एक मुस्तक़िल मज़मून है।

मोअज़्ज़ह भी खर्कें आदत होता है, लेकिन रसूल का मोअज़्ज़ह वह होता है जो दावे के साथ पेश किया जाये और जिसमें तहदी (challenge) भी मौजूद हो। यानि जिसे रसूल खुद अपनी रिसालत के सुबूत के तौर पर पेश करे और फिर उसमें मुक़ाबले का चैलेंज दिया जाये। जैसे हज़रत मूसा अलै० को अल्लाह तआला ने जो मोअज़्ज़ात अता किये उनमें “يَدَيَّاهُ” और “عَصَا” की हैसियत असल मोअज़्ज़ेह की थी। वैसे आयतें और भी दी गई थीं जैसा कि सूरह बनी इस्राईल में है:

“और बेशक हमने मूसा को नूर रोशन
وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى تِسْعَ آيَاتٍ بَيِّنَاتٍ
निशानियाँ दीं।” (आयत:101)

मगर यह उस वक़्त की बात है जब आप अलै० अभी मिस्र के अंदर थे। जब आप अलै० मिस्र से बाहर निकले तो असा की करामात ज़ाहिर हुई कि उसकी ज़र्ब से समुन्दर फट गया, उसकी ज़र्ब से चट्टान से बारह चश्में फूट पड़े। यह तमाम चीज़ें खर्कें आदत हैं, लेकिन असल मोअज़्ज़ेह दो थे जिनको हज़रत मूसा अलै० ने दावे के साथ पेश किया कि यह मेरी रिसालत का सुबूत है।

जब आप अलै० फिरऔन के दरबार में पहुँचें और आपने अपनी रिसालत की दावत पेश की तो दलीले रिसालत के तौर पर फ़रमाया कि मैं इसके लिये सनद {سُلْطَانٌ مُّبِينٌ} भी लेकर आया हूँ। फिरऔन ने कहा कि लाओ पेश करो तो आप अलै० ने यह दो मोअज़्ज़ेह पेश किये। यह दो मोअज़्ज़ेह जो अल्लाह की तरफ़ से आप अलै० को अता किये गये, आप अलै० की रिसालत की सनद थे।

इसमें तहदी भी थी। लिहाज़ा मुक़ाबला भी हुआ और जादूगरों ने पहचान भी लिया कि यह जादू नहीं है, मोअज़्ज़ह है। मोअज़्ज़ह जिस मैदान का होता है उसे उसी मैदान के अफ़राद ही पहचान सकते हैं। जब जादूगरों का हज़रत मूसा अलै० से मुक़ाबला हुआ तो आम देखने वालों ने तो यही समझा होगा कि यह बड़ा जादूगर है और यह छोटे जादूगर हैं, इसका जादू ज़्यादा ताक़तवर निकला, इसके असा ने भी साँप और अस्दहा की शक़ल इख़्तियार की थी और इन जादूगरों की रस्सियों और छड़ियों ने भी साँपों की शक़ल इख़्तियार कर ली थी, अलबत्ता यह ज़रूर है कि इसका बड़ा साँप बाक़ी तमाम साँपों को निगल गया। यही वजह है कि मजमा ईमान नहीं लाया, लेकिन जादूगर तो जानते थे कि उनके फ़न की रसाई कहाँ तक है, इसलिये उन पर यह हकीक़त मुन्क़शिफ़ (प्रकट) हो गई कि यह जादू नहीं है, कुछ और है।

इसी तरह कुरान हकीम के मोअज़्ज़ह होने का असल अहसास अरब के शायर, ख़तीबों और ज़बान दानों को हुआ था। आम आदी ने भी अगरचे महसूस किया कि यह ख़ास कलाम है, बहुत पुरतासीर और मीठा कलाम है, लेकिन इसका मोअज़्ज़ह होना यानि आजिज़ कर देने वाला मामला तो इसी तरह साबित हुआ कि कुरआन मजीद में बार-बार चैलेंज़ दिया गया कि इस जैसा कलाम पेश करो। इस ऐतबार से जान लीजिये कि रसूल ﷺ का असल मोअज़्ज़ह कुरआन है।

आप ﷺ के खर्कें आदत मोअज़्ज़ात तो बेशुमार हैं। शक़क़ क़मर (चाँद के दो टुकड़े) कुरआन हकीम से साबित है, लेकिन यह आप ﷺ ने दावे के साथ नहीं दिखाया, ना ही इस पर किसी को चैलेंज किया, बल्कि आप ﷺ से मुतालबे (माँग) किये गये थे कि आप ﷺ यह-यह करके दिखाइये, उनमें से कोई बात अल्लाह तआला के यहाँ मन्ज़ूर नहीं हुई। अल्लाह चाहता तो उनका मुतालबा (माँग) पूरा करा देता, लेकिन उन मुतालबों को तस्लीम नहीं किया गया। अलबत्ता खर्कें आदत वाक़्यात बेशुमार हैं। जानवरों का भी आप ﷺ की बात को समझना और आप ﷺ से अक़ीदत का इज़हार करना बहुत मशहूर है। हज़्ज़तुल विदाह के मौक़े पर 63 ऊँटों को हुज़ूर ﷺ ने खुद अपने हाथों से नहर (ज़िबह) किया था। क़तार में सौ ऊँट खड़े किये गये थे। रिवायात में आता है कि एक ऊँट जब गिरता था तो अगला खुद आगे आ जाता था। इसी तरह “सतूने हनाना” का मामला हुआ। हुज़ूर ﷺ मस्जिद

नबवी ﷺ में खजूर के एक तने का सहारा लेकर खुत्बा इशाद फ़रमाया करते थे, मगर जब इस मक़सद के लिये मिम्बर बना दिया गया और आप ﷺ पहली मर्तबा मिम्बर पर खड़े होकर खुत्बा देने लगे तो उस सूखे हुए तने में से ऐसी आवाज़ आई जैसे कोई बच्चा बिलख-बिलख कर रो रहा हो, इसी लिये तो उसे “हनाना” कहते हैं। ऐसे ही कई मौकों पर थोड़ा खाना बहुत से लोगों को किफ़ायत कर गया।

इन खर्क़े आदत वाक़्यात को बाज़ अक़लियत पसंद (Rationalists) और साइंसी मिज़ाज के हामिल लोग तस्लीम नहीं करते। पिछले ज़माने में भी लोग इनका इन्कार करते थे। इस पर मौलाना रूम ने खूब फ़रमाया है कि:

फ़ल्सफ़ी को मुन्कर हनाना अस्त

अज़ हवासे अम्बिया बेगाना अस्त!

बहरहाल खर्क़े आदत वाक़्यात हुज़ूर ﷺ की हयाते तैय्यबा में बहुत हैं। (तफ़सील देखना हो तो “सूरतुन नबी ﷺ” अज़ मौलाना शिबली की एक ज़ख़ीम जिल्द सिर्फ़ हुज़ूर ﷺ के खर्क़े आदत वाक़्यात पर मुश्तमिल है) लेकिन जैसा कि ऊपर गुज़रा, मोअज़्ज़ह दावे के साथ और रिसालत के सुबूत के तौर पर होता है।

कुरान मजीद में इसकी दूसरी मिसाल हज़रत ईसा अलै० की आई है कि आप अलै० लोगों से फ़रमाते हैं कि देखो मैं मुर्दों को ज़िन्दा करके दिखा रहा हूँ। मैं गारे से परिन्दे की सूरत बनाता हूँ और उसमें फूँक मारता हूँ तो वह अल्लाह के हुक्म से उड़ता हुआ परिन्दा बन जाता है। खर्क़े आदत का मामला तो ग़ैर नबी के लिये भी हो सकता है। अल्लाह तआला अपने नेक बन्दों के लिये भी इस तरह के हालात पैदा कर सकता है। उनका अल्लाह के यहाँ जो मक़ाम व मर्तबा है उसके इज़हार के लिये करामात का ज़हूर हो सकता है। यह चीज़ें बर्इद (असम्भव) नहीं हैं, लेकिन अम्बिया की करामात को अफ़े आम (आम तौर) में “मोअज़्ज़ात” कहा जाता है और ग़ैर अम्बिया और औलिया के लिये “करामात” का लफ़्ज़ इस्तेमाल होता है। लेकिन मोअज़्ज़ह वह है जिसे अल्लाह का रसूल दावे के साथ पेश करके और चैलेंज करे।

यह बात कि कुरान मजीद ही हुज़ूर ﷺ का असल मोअज़्ज़ह है, दो ऐतबारात से कुरआन में बयान की गई है। एक मुस्वत अंदाज़ है, जैसे सूरह यासीन में इब्तदाई आयतों में फ़रमाया:

“यासीन! क़सम है कुरान हकीम की (और क़सम का असल फ़ायदा शहादत होता है, यानि गवाह है यह कुरान हाकिम) कि यक़ीनन (ऐ मुहम्मद ﷺ) आप अल्लाह के रसूल हैं।”

يَسْ ۝ وَالْقُرْآنِ الْحَكِيمِ ۝ إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ۝

ख़िताब बज़ाहिर हुज़ूर ﷺ से है, हालाँकि हुज़ूर ﷺ को यह बताना मक़सूद नहीं है, बल्कि मुखातिबीन यानि अहले अरब और अहले मक्का को सुनाया जा रहा है कि यह कुरआन शाहिद है, यह सुबूत है, यह दलीले क़तई है कि मुहम्मद ﷺ अल्लाह के रसूल हैं, यह कुरान पुकार-पुकार कर मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की रिसालत का सुबूत पेश कर रहा है।

इसके अलावा कुरान हकीम के चार मक़ामत और हैं जिनमें यही आयत मुक़द्दर है, अगरचे बयान नहीं हुई। सूरह सुआद का आगाज़ होता है:

“सुआद, क़सम है इस कुरान की जो नसीहत (याद दिहानी) वाला है। लेकिन वह लोग कि जो मुन्कर हैं, घमण्ड और ज़िद में पड़े हुए हैं।”

ص وَالْقُرْآنِ ذِي الذِّكْرِ ۝ بَلِ الَّذِينَ كَفَرُوا فِي عِزِّهِمْ وَشِقَاقٍ ۝

यहाँ “सुआद” एक हर्फ़ है, लेकिन इससे आयत नहीं बनी, जबकि “यासीन” एक आयत है। सूरह सुआद की पहली आयत क़सम पर मुश्तमिल है। “بَل” से जो दूसरी आयत शुरू हो रही है यह साबित कर रही है कि मुक़स्सम अलैह (जिस चीज़ पर क़सम खाई जा रही है) यहाँ महज़ूफ़ है और वह {إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ} है। गोया कि मायनन इसे यूँ पढ़ा जायेगा:

{ص وَالْقُرْآنِ ذِي الذِّكْرِ ۝ (إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ) بَلِ الَّذِينَ كَفَرُوا.....}

इसी तरह सूरह क़ाफ़ में है:

{ق وَالْقُرْآنِ الْمَجِيدِ ۝ (إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ) بَلِ عَجِبُوا أَنْ جَاءَهُمْ مُنْذِرٌ مِنْهُمْ.....}

ऐसी ही दो सूरतें अल् जुख़रफ़ और अल् दुख़ान “حَم” से शुरू होती हैं। इनकी पहली दो आयतें बिल्कुल एक जैसी हैं

حَم ۝ وَالْكِتَابِ الْمُبِينِ ۝

पहली आयत हुरूफ़े मुक़त्आत पर और दूसरी आयत क़सम पर मुश्तमिल है। इसके बाद मुक़सम अलैह {إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ} महज़ूफ़ मानना पड़ेगा। गोया:

जैसी एक सूरत तुम भी (मौजू करके) ले आओ और अपने तमाम मददगारों को बुला लो (उन सबको जमा कर लो) अल्लाह के सिवा अगर तुम सच्चे हो। और अगर तुम ऐसा ना कर सको, और तुम हरगिज़ ऐसा ना कर सकोगे, तो बचो उस आग से जिसका ईंधन आदमी और पत्थर होंगे, यह मुन्करो के लिये तैयार की गयी है।”

دُونَ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ۝۱۰ فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا وَلَنْ تَفْعَلُوْا فَاْتَقُوْا النَّارَ الَّتِيْ هِيَ وُقُوْدُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ ۝۱۱ اَعَدَّتْ لِلْكَافِرِيْنَ ۝۱۲

यहाँ यह वाज़ेह किया जा रहा है कि हकीकत में तुम सच्चे नहीं हो, तुम्हारा दिल गवाही दे रहा है कि यह इंसानी कलाम नहीं है, लेकिन चूँकि तुम ज़बान से तन्कीद (आलोचना) कर रहे हो और झुठला रहे हो तो अगर वाक्फ़ीतन तुम्हें शक है तो इस शक को रफ़ा (अस्वीकृत) करने के लिये हमारा यह चैलेंज मौजूद है।

यह हैं कुरआन मजीद के मोअज़्ज़ह होने के दो अस्लूब। एक मुस्बत (positive) अंदाज़ है कि कुरआन गवाह है इस पर कि ऐ मुहम्मद! (ﷺ) आप अल्लाह के रसूल हैं, और दूसरा अंदाज़ चैलेंज का है कि अगर तुम्हें इसके कलामे इलाही होने में शक है तो इस जैसा कलाम तुम भी बना कर ले आओ।

कुरान किस-किस ऐतबार से मोअज़्ज़ह है?

अब इस ज़िम्न में तीसरी ज़ेली (उप) बहस यह होगी कि कुरआन मजीद किस-किस ऐतबार से मोअज़्ज़ह है। यह मज़मून इतना वसीअ और इतना मुतनव्वा अल् ऐतराफ़ है कि “وَجُودِ عَجَازِ الْقُرْآنِ” पर पूरी-पूरी किताबें लिखी गई हैं। ज़ाहिर बात है इस वक़्त इसका इहाता मक़सूद नहीं है, सिर्फ़ मोटी-मोटी बातें ज़िक्र की जाती हैं।

असल शय तो इसकी तासीरे क़ल्ब है कि यह दिल को लगने वाली बात है। इसका असल ऐजाज़ यही है कि यह दिल को जाकर लगती है बशर्ते कि पढ़ने वाले के अंदर तास्सुब, ज़िद् और हठधर्मी ना हो और उसे ज़बान से इतनी वाक्फ़ियत हो जाए कि बराहेरास्त कुरआन उसके दिल पर उतर सके। यह कुरआन के ऐजाज़ का असल पहलु है। लेकिन इज़ाफ़ी तौर पर जान लीजिए कि जिस वक़्त कुरआन नाज़िल हुआ उस वक़्त के ऐतबार से इसके

मोअज़्ज़ह होने का नुमाया और अहमतर पहलु इसकी अदबियत, इसकी फ़साहत व बलाग़त, इसके अल्फ़ाज़ का इन्तखाब, बंदिशें और तरकीबें, इसकी मिठास और इसकी सौती आहंग है। यह दरहकीकत नुज़ूल के वक़्त कुरआन के मोअज़्ज़ह होने का सबसे नुमाया पहलु है।

यहाँ यह बात पेशे नज़र रहे कि हर रसूल को उसी तर्ज़ का मोअज़्ज़ह दिया गया जिन चीज़ों का उसके ज़माने में सबसे ज़्यादा चर्चा और शगुफ़ था। हज़रत मूसा अलै० के ज़माने में जादू आम था लिहाज़ा मुकाबले के लिये आप अलै० को वह चीज़ें दी गईं जिनसे आप अलै० जादूगरों को शिकस्त दे सकें। हुज़ूर ﷺ ने जिस क़ौम में अपनी दावत का आगाज़ किया उस क़ौम का असल ज़ौक़ कुदरते कलाम था। वह कहते थे कि असल में बोलने वाले तो हम ही हैं, बाकी दुनिया तो गूँगी है। उनकी ज़बानदानी का यह आलम था कि वह अपनी पसंद की अशयाअ (चोड़ों) के नाम रखना शुरू करते तो हज़ारों नाम रख देते। चुनाँचे अरबी में शेर और तलवार के लिये पाँच-पाँच हज़ार अल्फ़ाज़ हैं। घोड़े और ऊँट के लिये ला-तादाद अल्फ़ाज़ हैं। यह उनकी क़ादिरुल कलामी है कि किसी शय को उसकी हर अदा के ऐतबार से नया नाम दे देते। घोड़ा उनकी बड़ी महबूब शय है, लिहाज़ा उसके नामालूम कितने नाम हैं। शेरों-शायरी में उनके ज़ौक़ व शौक़ का यह आलम था कि उनके यहाँ सालाना मुकाबले होते थे ताकि उस साल के सबसे बड़े शायर का तअय्युन किया जाये। शायर अपने-अपने क़सीदे लिख कर लाते थे, मुकाबला होता था। फिर जब फ़ैसला होता था कि किसका क़सीदा सब पर बाज़ी ले गया है तो बाक़ी तमाम शायर उसकी अज़मत के ऐतराफ़ के तौर पर उसको सजदा करते थे। फिर वह क़सीदा ख़ाना काबा की दीवार पर लटका दिया जाता था कि यह है इस साल का क़सीदा। चुनाँचे इस तरह के सात क़सीदे ख़ाना काबा में आवेज़ा (प्रदर्शित) किये गए थे जिन्हें “سَبْعَةُ مَعْلَقَةٍ” कहा जाता था। “سَبْعَةُ مَعْلَقَةٍ” के आख़िरी शायर हज़रत लबीद (रज़ि०) थे जो ईमान ले आए। ईमान लाने के बाद उन्होंने शेर कहने छोड़ दिये। हज़रत उमर (रज़ि०) ने उनसे कहा कि ऐ लबीद! अब आप शेर क्यों नहीं कहते? तो जवाब में उन्होंने बड़ा प्यारा जुमला कहा कि “أَبْعَدُ الْقُرْآنِ” यानि क्या कुरआन के नुज़ूल के बाद भी? अब किसी के लिये कुछ कहने का मौक़ा बाक़ी है? कुरआन के आ जाने के बाद कोई अपनी फ़साहत व बलाग़त के इज़हार की कोशिश कर सकता है? गोया ज़बाने बंद हो गई, उन पर ताले पड़ गये, मालिकुल शौरा (शायरों के राजा) ने शेर कहने छोड़ दिये।

जिन लोगों की मादरी ज़बान अरबी है वह आज भी कुरान के इस ऐजाज़ को महसूस कर सकते हैं। ग़ैर अरब लोगों के लिये इसको महसूस करना मुमकिन नहीं है। अगर कोई अपनी मेहनत से अरबी अदब के अंदर मौलाना अली मियाँ⁽¹⁾ की सी महारत हासिल कर ले तो वह वाक़िअतन इसको महसूस कर सकेगा और इसकी तहसीन कर सकेगा कि फ़साहत व बलागत में कुरआन का क्या मक़ाम है। हम जैसे लोगों के लिये यह मुमकिन नहीं है, अलबत्ता इसका सौती आहंग हम महसूस कर सकते हैं। वाक़्या यह है कि कुरआन की क़िरात के अंदर एक मोअज्ज़ाना तासीर है जो क़ल्ब के अंदर अजीब कैफ़ियात पैदा कर देती है। कुरआन का सौती आहंग हमारी फ़ितरत के तारों को छेड़ता है। कुरआन की यह मोअज्ज़ाना तासीर आज भी वैसी है जैसी नुज़ूले कुरआन के वक़्त थी। इसमें मरवरे अय्याम (दिन गुज़रने) से कोई फ़र्क़ वाक़ेअ नहीं हुआ।

कुरआन की फ़साहत व बलागत, इसकी अदबियत, अज़ूबत और इसके सौती आहंग की मोअज्ज़ाना तासीर पर मुस्तज़ाद (top) अहदे हाज़िर में कुरान के ऐजाज़ के ज़िम्न में जो चीज़ें बहुत नुमाया होकर सामने आती हैं उनमें से एक चीज़ तो वह है जिसका कुरान मजीद ने बड़े सरीह अल्फ़ाज़ (हा मीम अस्सज्दा:53) में ज़िक्र किया है:

“हम अनक़रीब उन्हें अपनी आयतें दिखाएँगे
आफ़ाक़ में भी और उनकी अपनी जानों में भी
यहाँ तक कि यह बात उन पर वाज़ेह हो
जाएगी कि यह कुरआन हक़ है।”

इस आयत मुबारका में इल्मे इंसानी के दायरे में साइंस और टेक्नोलॉजी की तरक्की और जदीद इकतशाफ़ात (खोज) व इन्कशाफ़ात (खुलासे) की तरफ़ इशारा है। यह आयाते आफ़ाकी हैं। फ़्राँसीसी सर्जन डॉक्टर मौरिस बकाई का पहले भी हवाला दिया जा चुका है कि कुरआन का मुताअला करने के बाद उसने कहा कि मेरा दिल इस पर मुत्मईन हो गया है कि इस कुरआन में कोई बात ऐसी नहीं है जिसे साइंस ने ग़लत साबित किया हो। अलबत्ता उस दौर में जबकि इंसान का अपना ज़हनी ज़र्फ़ वसीअ नहीं हुआ था, ऊलूमे इंसानी और मालूमाते इंसानी का दायरा महदूद था, उस वक़्त साइंसी इशारात की हामिल आयाते कुरानिया का क्या मफ़हूम समझा गया, वह बात और है।

कलामुल्लाह होने के ऐतबार से असल अहमियत तो कुरआन के अल्फ़ाज़ को हासिल है। डॉक्टर मौरिस बकाई ने कुरआन का तौरात के साथ तक्राबुल (मुक्राबला) किया है! तौरात से मुराद Old Testament है। इंजीले अरबिया जो हज़रत ईसा अलै० की तरफ़ मन्सूब है, उनमें तो कई चीज़ें ऐसी हैं जो ग़लत साबित हो चुकी हैं। इंजील में ज़्यादातर अख़्लाकी मुवाअज़ (उपदेश) हैं या फिर हज़रत ईसा अलै० के स्वान्हे हयात (जीवनी) हैं। तौरात में यह मुवाहि़स मौजूद हैं कि कायनात कैसे पैदा हुई, अल्लाह ने कैसे इसे बनाया। मुख़तलिफ़ साइंसी phenomena उसमें मौजूद हैं।

आपको मालूम है कि फ़िज़िक्स में आज सबसे ज़्यादा अहम मौजू जिस पर तहक़ीक़ हो रही है, यही है कि कायनात कैसे वजूद में आई, इब्तदाई हालात क्या थे और बाद अज़ा (बाद में) उनमें क्या तब्दीलियाँ हुईं। डाक्टर मौरिस बकाई ने इस ऐतबार से महसूस किया कि तौरात में तो ऐसी चीज़ें हैं जो ग़लत साबित हो चुकी हैं। इसलिये कि असल तौरात तो छठी सदी क़ब्ले मसीह ही में गुम हो गई थी। बख़्त नसर के हमले में येरुशलम को तहस-नहस कर दिया गया और हैकले सुलेमानी की ईंट से ईंट बजा दी गई, उसकी बुनियादें तक खोद डाली गईं और येरुशलम के बसने वाले छः लाख की तादाद में क़ल्ल कर दिये गए जबकि बख़्त नसर छः लाख को कैदी बना कर भेड़-बकरियों की तरह हाँकते हुए अपने हमराह बाबुल (ईराक़) ले गया। चुनाँचे येरुशलम में एक मुतनफ़िफ़ (जीव) भी बाक़ी नहीं रहा। आप अंदाज़ा करें, अगर यह आदादो और शुमार (आंकड़े) सही हैं तो हज़रत मसीह अलै० से भी छः सौ साल क़ब्ल यानि आज से 2600 बरस क़ब्ल येरुशलम बारह लाख की आबादी का शहर था और उस शहर पर क्या क़यामत गुज़री होगी! इसके बाद से वह असल तौरात दुनिया में नहीं है। मूसा अलै० को जो अहकामे अशरह (Ten Commandments) दिये गये थे वह पत्थर की तख़्तियों पर लिखे हुए थे। यह तख़्तियाँ भी लापता हो गईं और बाक़ी तौरात का वजूद भी बाक़ी ना रहा। कुरआन हकीम में “صُفِّى الْإِبْرَاهِيمَ وَ مُوسَى” का ज़िक्र है। मूसा अलै० के सहीफ़े पाँच हैं जो अहद नामा-ए-क़दीम (Old Testament) की पहली पाँच किताबें हैं। सानेहा येरुशलम (Tragedy of Jerusalem) के तक्ररीबन डेढ़ सौ बरस बाद लोगों ने तौरात को अपनी याददाश्तों से मुरत्तब किया। चुनाँचे उस वक़्त की नौए इंसानी की ज़हनी और इल्मी सतह जो थी वो इस पर लाज़िमी तौर पर असर अंदाज़ हुई।

डॉक्टर मौरिस बर्काई के अलावा मैं डाक्टर कीथल मूर का हवाला भी दे चुका हूँ कि वह कुरआन हकीम में इल्मे जनीन (भूणविज्ञान) से मुताल्लिक इशारात पाकर किस क्रूर हैरान हुआ कि यह मालूमात चौदह सौ बरस पहले कहाँ से आ गई! फ़िज़िकल साइंस के मुख्तलिफ़ फ़ील्ड्स हैं, उनमें जैसे-जैसे इल्मे इंसानी तरक्की करता जायेगा यह बात मज़ीद मुबरहन (स्पष्ट) होती चली जायेगी कि यह कलामे हक़ है और यह कलाम मज़ाहिर तबीई (भौतिक घटनाओं) के ऐतबार से भी हक़ साबित हो रहा है। यह एक वाज़ेह सुबूत है कि यह कुरआन अल्लाह का कलाम है और मुहम्मद ﷺ अल्लाह के रसूल हैं।

अहदे हाज़िर के ऐतबार से कुरआन हकीम के ऐजाज़ का दूसरा अहमतर पहलु इसकी हिदायते अमली है। इसमें इन्फ़रादी (व्यक्तिगत) ज़िन्दगी से मुताल्लिक भी मुकम्मल हिदायतें हैं और इंसानी अख़लाक़ व किरदार और इंसान के रवैये में भी पूरी तफ़्सीलात मौजूद हैं। इन्फ़रादी ज़िन्दगी से मुताल्लिक यह तमाम चीज़ें साबक़ा अम्बिया की तालीमात में भी मौजूद हैं। यह अख़लाकी इक्रदार (moral values) वैसे भी फ़ितरते इंसानी के अंदर मौजूद हैं। कुरआन का अपना कहना है: {فَالْهَمُّهَا بُرُوحًا وَتَقْوَاهَا} (अश्शम्स:8) यानि नफ़से इंसानी को इलहामी तौर पर यह मालूम है कि फ़ुज़ूर (अनैतिकता) क्या हैं और तक्रवा (नैतिकता) क्या है। परहेज़गारी किसे कहते हैं और बदकारी किसे कहते हैं। अलबत्ता कुरआन हकीम का ऐजाज़ यह है कि इसमें अदल व क्रिस्त (न्याय) पर मब्री (आधारित) इज्तमाई निज़ाम दिया गया है जिसमें इन्तहाई तवाज़ुन (संतुलन) रखा गया है।

इंसान ग़ौर करे तो मालूम होगा कि नौए इंसानी को तीन बड़े-बड़े उक़द हाए ला यन्हल (dilemmas) दरपेश हैं जो तवाज़ुन (संतुलन) के मत्काज़ी (अपेक्षित) हैं और इनमें अदमे तवाज़ुन (असंतुलन) से इंसानी तमद्दुन (सभ्यता) फ़साद और बिगाड़ का शिकार है। इसमें पहला उक़दा-ए-ला यन्हल यह है कि मर्द और औरत के हुक्क़ व फ़राइज़ में क्या तवाज़ुन है? दूसरा यह कि सरमाया और मेहनत के माबैन (बीच) क्या तवाज़ुन है? फिर तीसरा यह कि फ़र्द और रियासत या फ़र्द और इज्तमाइयत के माबैन हुक्क़ व फ़राइज़ के ऐतबार से क्या तवाज़ुन है? इन तीनों मामलात में तवाज़ुन कायम करना इन्तहाई मुश्किल है। अगर फ़र्द को ज़रा ज़्यादा आज़ादी दे दी जाती है तो अनारकी (chaos) फ़ैलती है। आज़ादी के नाम पर दुनिया में क्या कुछ हो

रहा है! दूसरी तरफ़ अगर फ़र्द की आज़ादी पर क़दग़नें (controls) और बंदिशें लगा दी जाएं तो वह रदे अमल होता है जो कम्युनिज़्म के खिलाफ़ हुआ। फ़ितरते इंसानी और तबीयते इंसानी ने यह क़दग़नें कुबूल नहीं कीं और इनके खिलाफ़ बगावत की।

औरत और मर्द के हुक्क़ के माबैन तवाज़ुन का मामला भी इन्तहाई हस्सास (संवेदनशील) है। इस मीज़ान का पलड़ा अगर ज़रा सा मर्द की जानिब झुका दिया जाये तो औरत की कोई हैसियत नहीं रहती, वह बिल्कुल भेड़-बकरी की तरह मर्द की मिल्कियत बन कर रह जाती है, उसका कोई तशख़बुस (पहचान) नहीं रहता और वह मर्द की जूती की नोक करार पाती है। लेकिन अगर दूसरा पलड़ा ज़रा झुका दिया जाये तो औरत को जो हैसियत मिल जाती है वह क़ौमों की क्रिस्मों के लिये तबाहकुन साबित होती है। इससे ख़ानदानी इदारा ख़त्म हो जाता है और घर के अंदर का चैन और सुकून बर्बाद होकर रह जाता है। इसकी सबसे बड़ी मिसाल सेकेण्ड यूनियन मुमालिक हैं। मआशी और इक़तसादी (economic) ऐतबार से यह कहा जा सकता है कि रूए अरज़ी (ज़मीन) पर अगर ज़न्नत देखनी हो तो इन मुल्कों को देख लिया जाये। वहाँ के शहरियों की बुनियादी ज़रूरतें किस उम्दगी के साथ पूरी हो रही है! वहाँ इलाज और तालीम की सहूलियतें सबके लिये एकसा (बराबर) हैं और इस ज़िम्न में ख़ैरात (charity) पर पलने वालों और टेक्स अदा करने वालों के माबैन कोई फ़र्क़ व तफ़ावत (असमानता) नहीं है। लेकिन इन मुल्कों में मर्द और औरत के हुक्क़ के माबैन तवाज़ुन बरकरार नहीं रखा गया जिसके नतीजे में ख़ानदान का इदारा मज़महल (उलट) हुआ, बल्कि टूट-फूट कर ख़त्म हो गया और घर का सुकून नापीद (विलुप्त) हो गया। चुनाँचे आज खुदकुशी की सबसे ज़्यादा शरह (अनुपात) स्वीडन में है। इसलिये कि घर का सुकून ख़त्म हो जाने के बाअस (कारण) आसाब (nerves) पर शदीद तनाव है।

अल्लाह का शुक्र है कि हमारे यहाँ ख़ानदान का इदारा बरकरार है। अगरचे यहाँ भी नाम-निहाद तौर पर बहुत ऊँची सतह के लोगों के यहाँ तो वह सूरतें पैदा हो गई हैं, ताहम मज्मुई तौर पर हमारे यहाँ ख़ानदान का इदारा अभी काफ़ी हद तक महफूज़ है। इस ज़िम्न में कुरआन मज़ीद में लफ़ज़ “سكُون” इस्तेमाल हुआ है। सूरतुल रूम की आयत 21 मुलाहिज़ा हो:

“और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिये तुम्हारी ही नौअ (जाति) से जोड़े बनाये, ताकि तुम उनके पास सुकून हासिल करो और तुम्हारे दरमियान मुहब्बत और रहमत पैदा कर दी।”

وَمِنَ الْآيَةِ أَنْ خَلَقَ لَكُمْ مِنْ أَنْفُسِكُمْ
أَزْوَاجًا لَتَسْكُنُوا إِلَيْهَا وَجَعَلَ بَيْنَكُمْ
مَوَدَّةً وَرَحْمَةً

अगर इंसान को यह सुकून नहीं मिलता तो अगरचे उसकी खाने-पीने की ज़रूरतें, जिन्सी तस्कीन (यौन सन्तुष्टि) और दूसरी ज़रूरयाते ज़िन्दगी खूब पूरी हो रही हों लेकिन ज़िन्दगी इंसान के लिये जहन्नम बन जाएगी।

मज़कूरा बाला तीन उक्रद हाए ला-यन्हल में से मआशियात का मसला सबसे मुश्किल है। सरमाये को ज़्यादा खल-खेलने का मौका देंगे तो सूरते हाल एक इन्तहा को पहुँच जायेगी और मज़दूर का बदतरीन इस्तेहसाल (शोषण) होगा, जबकि मज़दूर को ज़्यादा हुकूक दे देंगे तो सरमाए को कोई तहफ़फ़ुज़ हासिल नहीं रहेगा। अगर नेशनलाईज़ेशन हो जाये तो लोगों में काम करने का ज़ब्त ही नहीं रहता। आपको मालूम है कि हमारे यहाँ नेशनलाईज़ेशन के बाद क्या हुआ! रूस की इक्तसादी मौत की अहम वजह यही नेशनलाईज़ेशन थी। तो अब सरमाए और मेहनत में तवाज़ुन के लिये क्या शक्ल इख्तियार की जाये? यह है दरहक़ीक़त अहदे हाज़िर में कुरआन की हिदायत का अहमतरिन हिस्सा! आज इस पर भरपूर तवज्जह मरकूज़ करने की ज़रूरत है। फ़िज़िकल साइंस से कुरआन की हक्क़ानियत के सुबूत खुद-ब-खुद मिलते चले जायेंगे। जैसे-जैसे साइंस तरक्की कर रही है नए-नए गोशे सामने आ रहे हैं और इनसे साबित हो रहा है कि यह कुरआन हक़ है। लेकिन आज ज़रूरत इस अम्र की है कि कुरआन हकीम ने अमरानियाते इंसानिया और इज्तमाइयात मसलन इक्तसादयात, सियासियात और समाजियात के ज़िम्न में जो अदले इज्तमाई दिया है उसके मुबरहन किया जाये। अल्लामा इक़बाल के यह दो शेर इसी हक़ीक़त की निशानदेही कर रहे हैं:

हर कुजा बीनी जहाने रंग व बू
आँ कि अज़ ख़ाकिश बरवीद आरज़ू!

या ज़ नूर मुस्तफ़ा صلی اللہ علیہ وسلم ऊ रा बहास्त
या हनूज़ अंदर तलाशे मुस्तफ़ा صلی اللہ علیہ وسلم अस्त!

यानि दुनिया में जो सोशल इंकलाब आया है उसकी सारी चमक-दमक और रोशनी या तो नूरे मुस्तफ़ा صلی اللہ علیہ وسلم ही से मुस्तआर (उधार ली गई) और माखूज़

(प्राप्त) है या फिर इंसान चार व नाचार हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के लाये हुए निज़ाम ही की तरफ़ बढ़ रहा है। वह दायें-बायें की ठोकरें और अफ़रात व तफ़रीत (ऊँच-नीच) के धक्के खाकर लड़खड़ाता हुआ चार व नाचार उसी मंज़िल की तरफ़ जा रहा है जहाँ मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم और कुरआन हकीम ने उसे पहुँचाया था।

अहदे हाज़िर में ऐजाज़े कुरान का मज़हर: अल्लामा इक़बाल

वुजूह ऐजाज़े कुरआन के ज़िम्न में एक अहम बात अर्ज़ कर रहा हूँ कि मेरे नज़दीक अहदे हाज़िर में कुरआन के ऐजाज़ का सबसे बड़ा मज़हर अल्लामा इक़बाल की शख़्सियत है। मैंने अर्ज़ किया था कि कुरआन हकीम ज़मान (समय) व मकान (जगह) के एक ख़ास तनाज़ुर (दृष्टिकोण) में आज से चौदह बरस क़बल नाज़िल हुआ था। इसके अब्बलीन मुख़ातिब अरब के उजड़ु, देहाती, बददू और ना-ख़वान्दा (अशिक्षित) लोग थे जिन्हें कुरआन ने “उम्मिय्यीन” और “قَوْمًا لَّيًّا” करार दिया है। लेकिन इस कुरआन ने उनके अंदर बिजली दौड़ा दी। उनके ज़हन, क़ल्ब और रूह को मुतास्सिर किया, फिर उनमें वलवला पैदा किया, उनके बातिन को मुनव्वर किया। उनकी शख़्सियतों में इंकलाब आया और अफ़राद बदल गये। फिर उन्होंने ऐसी कुव्वत की हैसियत इख्तियार की कि जिसने दुनिया को एक नया तमद्दुन, नयी तहज़ीब और नये क़वानीन देकर एक नये दौर का आगाज़ किया। लेकिन बीसवीं सदी में अल्लामा इक़बाल जैसा एक शख़्स जिसने वक़्त की आला तरीन सतह पर इल्म हासिल किया, जिसने मशरिफ़ व मशरिफ़ के फ़लसफ़े पढ़ लिये, जो क़दीम और जदीद दोनों का जामेअ था, जो जर्मनी और इंग्लिसतान में जाकर फ़लसफ़े पढ़ता रहा, उसको इस कुरआन ने इस तरह possess किया और उस पर इस तरह अपनी छाप कायम की कि उसके ज़हन को सुकून मिलता तो सिर्फ़ कुरआन हकीम से और उसकी तिशनगी-ए-इल्म (इल्म की प्यास) को आसूदगी (चैन) हासिल हो सकी तो सिर्फ़ किताबुल्लाह से। गोया बक्रौल खुद उनके:

ना कहीं जहाँ में अमाँ मिली, जो अमाँ मिली तो कहाँ मिली
मेरे जुर्म ख़ाना ख़राब को तेरे अफू-ए-बंदा नवाज़ में!

मेरा एक किताबचा “अल्लामा इक़बाल और हम” एक अरसे से शायी होता है। यह मेरी एक तक्ररीर है जो मैंने एचिसन कॉलेज में 1973 ईसवी में की थी। इसमें मैंने अल्लामा इक़बाल के लिये चंद इस्तलाहात इस्तेमाल की हैं। “इक़बाल और कुरान” के उन्वान से मैंने अल्लामा इक़बाल को (1) अज़मते कुरान का निशान, (2) वाक़िफ़े मर्तबा व मक़ामे कुरान, और (3) दाई इलल कुरान के ख़िताबात दिये हैं। मैं अल्लामा इक़बाल को इस दौर का सबसे बड़ा तर्जुमानुल कुरान समझता हूँ। कुरान मजीद के उलूम व मआरफ़ (Studies & Teachings) की जो ताबीर अल्लामा इक़बाल ने की है इस दौर में कोई दूसरी शख़्सियत इसके आस-पास भी नहीं पहुँची। उनसे लोगो ने चीज़ें मुस्तआर (उधार) ली हैं और फिर उनको बड़े पैमाने पर फैलाया है। उन हज़रात की यह ख़िदमत अपनी जगह क़ाबिले क़द्र है, लेकिन फ़िक्री ऐतबार से वह तमाम चीज़ें अल्लामा इक़बाल के ज़हन की पैदावार हैं।

मज़क़ूरा बाला किताबचे में मैंने मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब की गवाही भी शायी की है। कई साल पहले का वाक़्या है कि मौलाना आँखों के ऑपरेशन के लिये ख़ानका डोगरां से लाहौर आये हुए थे और ऑपरेशन में किसी वजह से ताख़ीर हो रही थी। घर से बाहर होने की वजह से उनके लिखने-पढ़ने का सिलसिला मौअत्तल (delay) हो गया। ताहम फ़ुरसत के उन अय्याम में मौलाना ने अल्लामा इक़बाल का पूरा उर्दू और फ़ारसी कलाम दोबारा पढ़ लिया। इसके बाद उन्होंने उसके बारे में मुझसे दो तास्सुर (impression) बयान किये। मौलाना का पहला तास्सुर तो यह था कि “कुरआन हकीम के बाज़ मक़ामात के बारे में मुझे कुछ मान सा था कि मैंने उनकी ताबीर जिस अस्लूब से की है शायद कोई और ना कर सके। लेकिन अल्लामा इक़बाल के कलाम के मुताअले से मालूम हुआ कि वह उनकी ताबीर मुझसे बहुत पहले और मुझसे बहुत बेहतर कर चुके हैं!” मौलाना इस्लाही साहब का दूसरा तास्सुर यह था कि “इक़बाल का कलाम पढ़ने के बाद मेरा दिल बैठ सा गया है कि अगर ऐसा हदी ख़वाँ (extent reader) इस उम्मत में पैदा हुआ, लेकिन यह उम्मत टस से मस ना हुई तो हमा-शमा (forgive us) के करने से क्या होगा!” जो क़ौम अल्लामा इक़बाल से हरकत में नहीं आई उसे कौन हरकत में ला सकेगा।

वाक़्या यह है कि मेरे नज़दीक इस दौर का सबसे बड़ा तर्जुमानुल कुरआन और सबसे बड़ा दाई इलल कुरान अल्लामा इक़बाल है। इसलिये की कुरान

मजीद की अज़मत का जिस गैराई (विस्तार) और गहराई के साथ अहसास अल्लामा इक़बाल को हुआ है मेरी मालूमात की हद तक (अगरचे मेरी मालूमात महदूद है) इस दर्जे कुरआन की अज़मत का इन्क़शाफ़ (खोज) किसी और इंसान पर नहीं हुआ। जब वह कुरआन मजीद की अज़मत बयान करते हैं तो ऐसा महसूस होता है कि यह उनकी दीद और उनका तजुर्बा है, क्योंकि जिस अंदाज़ से वह बात बयान करते हैं वह तकल्लुफ़ और आवर्द (अवतरण) से मावरा (बढ़ कर) अंदाज़ होता है। मुलाहिज़ा कीजिये कि अल्लामा इक़बाल कुरआन मजीद के बारे में क्या कहते हैं:

आँ किताबे ज़िन्दा कुरआने हकीम
हिकमत ऊ ला यज़ाल अस्त व क़दीम
नुस्खा इसरारे तकवीन हयात
बे सबात अज़ कौतश गीरद सबात
हर्फे ऊ रा रैब ने, तब्दील ने
आया इश शर्मिदा-ए-तावील ने
फाश गोयम आँच दर दिल मुज़मर अस्त
ई किताबे नीस्त चीज़ें दीगर अस्त
मिस्ल हक़ पिन्हाँ व हम पैदा सत ई
ज़िन्दा व पाइन्दा व गोया अस्त ई
चूँ बजाँ दर रफ़्त जाँ जो दीगर शूद
जाँ चू दीगर शद जहाँ दीगर शूद!

“वह ज़िन्दा किताब, कुरआन हकीम, जिसकी हिकमत लाज़वाल भी है और क़दीम भी!

ज़िन्दगी के वजूद में आने खज़ाना, जिसकी हयात अफ़रोज़ और कुव्वत बख़्श तासीर से बेसबात भी सबात व दवाम हासिल कर सकते हैं।

इसके अल्फ़ाज़ में ना किसी शक व शुबह का शाइबा है ना रद्दो बदल की गुंजाईश। और इसकी आयतें किसी तावील की मोहताज़ नहीं।

(इस किताब के बारे में) जो बात मेरे दिल में पोशीदा है उसे ऐलानिया ही कह गुज़रूँ? हक़ीक़त यह है कि यह किताब नहीं कुछ और ही शय है!

यह ज़ाते हक़ सुब्हानहु व तआला (का कलाम है लिहाज़ा उसी) के मानिन्द पोशीदा भी है और ज़ाहिर भी, और जीती-जागती बोलती भी है और हमेशा कायम रहने वाली भी!

(यह किताबे हकीम) जब किसी के बातिन में सरायत (जम) कर जाती है तो उसके अंदर एक इंकलाब बरपा हो जाता है, जब किसी के अंदर की दुनिया बदल जाती है तो उसके लिये पूरी दुनिया ही इंकलाब की ज़द में आ जाती है।”

कुरान हकीम के बारे में मज़ीद लिखते हैं:

सद जहाने ताज़ा दर आयाते ऊस्त

अस्र हा पेचीदा दर आनाते ऊस्त!

“इसकी आयतों में सैकड़ों ताज़ा जहान आबाद हैं और इसके एक-एक लम्हें में बेशुमार ज़माने मौजूद हैं।” (गोया हर ज़माने में यह कुरआन एक नई शान और नई आन-बान के साथ दुनिया में आया है और आता रहेगा।)

अब आप अल्लामा इक़बाल के तीन अशआर मुलाहिज़ा कीजिए जो उन्होंने नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم से मुनाजात (प्रार्थना) करते हुए कहे। इनसे आपको अंदाज़ा होगा कि उन्हें कितना यक़ीन था कि मेरे फ़िक्र का मिम्बा (स्रोत) कुरआन हकीम है। चुनाँचा “मस्रवी इसरारो रमूज़” के आख़िर में “अर्ज़े हाले मुसन्निफ़ बहुज़ूर रहमतुल लिल्आलमीन صلی اللہ علیہ وسلم” के ज़ेल में यहाँ तक लिख दिया कि:

गर दिलम आईना बे जौहर अस्त

वर बहर्फ़म ग़ैर कुराँ मज़मर अस्त

पर्दा-ए-नामूसे-ए-फ़िक्रम चाक कुन

ई ख़याबाँ रा ज़ख़ारम पाक कुन!

रोज़े महशर ख़वार व रुस्वा कुन मरा!

बे नसीब अज़ बोसा पा कुन मरा!

“अगर मेरे दिल की मिसाल उस आईने की सी है जिसमें कोई जौहर ही ना हो, और अगर मेरे कलाम में कुरआन के सिवा किसी और शय की तर्जुमानी है, तो (ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم!) आप मेरे नामूसे फ़िक्र का पर्दा खुद चाक फ़रमा दें और इस चमन को मुझ जैसे ख़ार से पाक कर दें। (मज़ीद बीराँ) हश्र के दिन मुझे ख़वार व रुस्वा कर दें और (सबसे बड़

कर यह कि) मुझे अपनी क़दमबोसी की सआदत से महरूम फ़रमा दें!”

मैंने अपनी इस्कानी हद तक कुरआन हकीम का पूरी बारीक बीनी से मुताअला किया है और इस पर ग़ौर फ़िक्र और सोच-विचार किया है। मैंने अल्लामा इक़बाल का उर्दू और फ़ारसी कलाम भी पढ़ा है। इसके बाद मैंने यह बात रिकॉर्ड करानी ज़रूरी समझी है कि अल्लामा इक़बाल के बारे में मैंने जो बात 1973 ईसवी में कही आज भी मैं उसी बात पर कायम हूँ कि “इस दौर में अज़मते कुरआन और मर्तबा व मक़ामे कुरआन का इन्क़शाफ़ जिस शिद्दत के साथ और जिस दर्जे में अल्लामा इक़बाल पर हुआ शायद ही किसी और पर हुआ हो।” और यह कि मेरे नज़दीक इस दौर का सबसे बड़ा तर्जुमानुल कुरआन और दाई इलल कुरआन इक़बाल है। अल्लामा इक़बाल मुसलमानों की कुरआन से दूरी पर मर्सिया कहते:

जानता हूँ मैं यह उम्मत हामिले कुराँ नहीं

है वही सरमाया दारी बंदा-ए-मोमिन का दी!

मुसलमानों को कुरआन की तरफ़ मुतवज्जह करते हुए कहते हैं:

बायातिश तरा कारे जुज़ ई नीस्त

कि अज़ यासीन अव आसाँ बमीरी!

“इस कुरआन के साथ तुम्हारा इसके सिवा और कोई सरोकार नहीं रहा कि तुम किसी शख्स को आलमे नज़ा में इसकी सूरह यासीन सुना दो, ताकि उसकी जान आसानी से निकल जाए।”

हमारे यहाँ सूफ़ी और वाअज़ हज़रात ने कुरआन को छोड़ कर अपनी मजालिस और अपने वाज़ के लिये कुछ और चीज़ों को मुन्तख़ब कर लिया है, तो इस पर इक़बाल ने किस क़दर दर्दनाक मर्सिये कहे हैं और किस क़दर सही नक़शा खींचा है:

सूफ़ी पशमिना पोशे हाल मस्त

अज़ शराबे नगमा क़वाल मस्त

आतिश अज़ शेरे इराक़ी दर दिलश

दर नमी साज़द ब-कुराँ मुफ़फ़िलश

और:

वाज़े दस्ताँ ज़न व अफ़साना बंद

मानी ऊ पस्त व हर्फ़े ऊ बुलंद

*अज़ ख़तीब व देलमी गुफ्तारे अव
बा ज़ईफ़ व शाज़ व मरसिल कारे ऊ!*

“अदना लिबास में मल्बूस और अपने हाल में मस्त सूफी क़व्वाल के नग़मे की शराब ही से मदहोश है। उसके दिल में इराक़ी के किसी शेर से तो आग सी लग जाती है लेकिन उसकी महफ़िल में कुरआन का कहीं गुज़र नहीं!

(दूसरी तरफ़) वाइज़ का हाल यह है कि हाथ भी ख़ूब चलाता है और समौं भी ख़ूब बाँध देता है और उसके अल्फ़ाज़ भी पुर शिकवा और बुलंद व बाला हैं, लेकिन मायने के ऐतबार से निहायत पस्त और हल्के! उसकी सारी गुफ़्तगू (बजाए कुरआन के) या तो ख़तीब बग़दादी से माख़ूज़ होती है या इमाम देलमी से, और उसका सारा सरोकार बस ज़ईफ़, शाज़ और मरसिल हदीसों से रह गया है!”

अल्लामा इक़बाल के नज़दीक मुसलमानों के ज़वाल व इज़्महलाल (तड़प) का और उम्मत मुस्लिमा के नक्बत (कष्ट) व इफ़लास (तंगी) और ज़िल्लत व ख़वारी का असल सबब कुरआन से दूरी और किताबे इलाही से बादुही है। चुनाँचे “जवाबे शिकवा” का एक शेर मुलाहिज़ा कीजिये:

*वो ज़माने में मौअज़ज़ थे मुसलमाँ होकर
और तुम ख़वार हुए तारिके कुराँ हो कर!*

बाद में इसी मज़मून का इआदा (repeat) अल्लामा मरहूम ने फ़ारसी में निहायत पुर शिकवा अल्फ़ाज़ और हद दर्जा दर्दअंगेज़ और हसरत आमेज़ पैराए में यूँ किया:

*ख़वार अज़ महज़ूरी कुराँ शदी
शिकवा सन्ज गर्दिशे दौराँ शदी
ऐ चू शबनम बर ज़मीन अफ़्तनदह
दर बग़ल दारी किताबे ज़िन्दाह!*

“(ऐ मुसलमान!) तेरी ज़िल्लत और रुसवाई का असल सबब तो यह है कि तू कुरआन से दूर और बे-ताल्लुक़ हो गया है, लेकिन तू अपनी इस ज़बूँ हाली पर इज़्जाम गर्दिशे ज़माना को दे रहा है! ऐ वो क़ौम जो शबनम के मानिन्द ज़मीन पर बिखरी हुई है (और पाँव तले रौंदी जा रही है)! उठ कि तेरी बग़ल में एक किताबे ज़िन्दा मौजूद है (जिसके ज़रिये तू दोबारा बामे उरूज़ [शिखर] पर पहुँच सकती है।)”

मैं अपना यह तास्सुर एक बार फिर दोहरा रहा हूँ कि असरे हाज़िर में कुरान की अज़मत जिस दर्जा उन पर मुन्कशिफ़ हुई थी, मैं अपनी महदूद मालूमात की हद तक कहने को तैयार हूँ कि वह मुझे कहीं और नज़र नहीं आती। मेरे नज़दीक अल्लमा इक़बाल दौरे हाज़िर में ऐजाज़े कुरआन का एक अज़ीम मज़हर हैं।



बाब हशतम (आँठवा)

कुरान मजीद से हमारा ताल्लुक

कुरान “हबलुल्लाह” है!

जब हम कहते हैं कि कुरान “हबलुल्लाह” है! तो इसके क्या मायने हैं? “हबल” के एक मायने रस्सी के हैं और यही असल मायने हैं। सूरतुल लहब में यह लफ़्ज़ आया है: {فِي حَبْلِهَا خِثْلٌ مِّن مَّسَدٍ} यानी मूँज की बटी हुई रस्सी। इमाम राग़िब रहि० ने इसकी ताबीर की है: “استعبر للوصول ولكل ما يتوصل به الى شيء” यानी किसी शय से जुड़ने के लिये और जिस शय से जुड़ा जाये उसके लिये इस्तआरतन (रूपक) यह लफ़्ज़ इस्तेमाल होता है। अहद, क़ौल व करार और मीसाक़ दो फरीक़ों को बाहम (एक साथ) जोड़ देता है। चुनाँचे यह लफ़्ज़ अहद के मायने में भी आता है, और कुरान हकीम में यह ऐसे अहद के लिये आया है जिससे किसी को अमन मिल रहा हो, हिफ़ाज़त और अमान हासिल हो रही हो। सूरह आले इमरान (आयत 112) में यहूद के बारे में इर्शाद हुआ:

“यह जहाँ भी पाये गये इन पर ज़िल्लत की मार ही पड़ी, सिवाय इसके कि कहीं अल्लाह के ज़िम्मे या इन्सानों के ज़िम्मे में पनाह मिल गयी। यह अल्लाह के ग़ज़ब में घिर चुके हैं, इन पर मोहताजी और कम हिम्मती मुसल्लत कर दी गयी है।”

गोया खुद अपने बल पर, अपने पाँव पर खड़े होकर, खुद मुख्तारी की असास (self-sufficient foundation) पर उनके लिये इज़ज़त का मामला इस दुनिया में नहीं है। यह कुरान मजीद की पेशनगोई है और मौजूदा रियासते इसराइल इसका वाज़ेह सबूत है। अमेरिका अगर एक दिन के लिये भी अपनी हिफ़ाज़त हटा ले तो इसराइल का वजूद बाक़ी नहीं रहेगा।

कुरान मजीद (आले ईमरान:103) में अहले ईमान से फ़रमाया गया है:

“अल्लाह की रस्सी को मज़बूती से पकड़ लो
सब मिल करा।”

अलबत्ता “हबलुल्लाह” क्या है? कुरान में इसकी सराहत (विवरण) नहीं है। और कुरान मजीद में जो बात पूरी तरह वाज़ेह ना हो, मुज्मल (संक्षिप्त) हो, उसकी तशरीह (व्याख्या) और तबयीन (समझाना) रसूल अल्लाह ﷺ का फर्ज़े मन्सबी (कर्तव्य) है। अज़रुए अल्फ़ाज़े कुरानी:

“और हमने (ऐ नबी ﷺ) आपकी तरफ़
‘अज़ ज़िक्र’ नाज़िल किया, ताकि जो चीज़
उनके लिये उतारी गयी है आप उसे उन पर
वाज़ेह करें।” (सूरह नहल:44)

चुनाँचे अहादीस नबवी ﷺ में सराहत मौजूद है कि “हबलुल्लाह” कुरान मजीद है। सही मुस्लिम में हज़रत ज़ैद बिन अरक़म (रज़ि०) से मरवी यह हदीस नक़ल हुई है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया:

“أَوَّلُ مَا تَرَكَ فِيكُمْ ثَقَلَيْنِ أَحَدُهُمَا كِتَابُ اللَّهِ عَزَّ وَجَلَّ هُوَ حَبْلُ اللَّهِ....
“आगाह रहो! मैं तुम्हारे माबैन (बीच) दो खज़ाने छोड़े जा रहा हूँ,
उनमें से एक अल्लाह की किताब है, वही हबलुल्लाह है.....”

कुरान हकीम के बारे में हज़रत अली (रज़ि०) से एक तवील हदीस मरवी है, जिसमें अल्फ़ाज़ आये हैं: ((هُوَ حَبْلُ اللَّهِ الْمَتِينِ)) “यह (कुरान) ही अल्लाह की मज़बूत रस्सी है।” यह रिवायत सुनन तिरमिज़ी और सुनन दारमी में मौजूद है। मज़ीद बराँ (बढ़ कर) हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से जो रिवायत रज़ीन में आयी है उसमें भी यही अल्फ़ाज़ हैं: ((هُوَ حَبْلُ اللَّهِ الْمَتِينِ)) “यह कुरान ही अल्लाह की मज़बूत रस्सी है।” सुनन दारमी में हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) से रिवायत है कि अल्लाह के रसूल अल्लाह ﷺ ने इर्शाद फ़रमाया: إِنَّ هَذَا الْقُرْآنَ حَبْلُ اللَّهِ وَالنُّورُ الْمُبِينُ “यक़ीनन यह कुरान हबलुल्लाह और नूरे मुबीन है।”

कुरान को “रस्सी” किस ऐतबार से कहा गया है, इसके दो पहलु हैं। एक तो बंदा इस रस्सी के ज़रिये अल्लाह से जुड़ता है। यह रस्सी हमें अल्लाह से जोड़ने वाली है। “ताल्लुक़ माअ अल्लाह” और “तक्ररुब इलल्लाह” दोनों तसव्वुफ़ (रहस्यवाद) की इस्तलाहें (मुहावरे) हैं। ताल्लुक़ के मायने हैं लटक जाना। “अलक़” लटकी हुई शय को कहते हैं। “ताल्लुक़ माअ अल्लाह” का मफ़हूम होगा अल्लाह से लटक जाना, यानि अल्लाह से चिमट जना, अल्लाह के साथ जुड़ जाना। इसी तरह “तक्ररुब इलल्लाह” का मतलब है अल्लाह से

करीब से करीब तर होने की कोशिश करना। सलूक (व्यवहार) और तरीक़त (रास्ता) का मक़सद यही है। ताल्लुक माअ अल्लाह में इज़ाफ़े और तक़्र्रब इलल्लाह का मौअसर तरीन (सबसे प्रभावी) और सहल तरीन (सबसे आसान) ज़रिया कुरआन हकीम है।

इस ऐतबार से दो हदीसें मुलाहिज़ा कीजिए। एक के रावी हज़रत अबदुल्लाह बिन मसऊद (रज़ि०) हैं। हदीस के अल्फ़ाज़ हैं:

الْقُرْآنُ حَبْلُ اللَّهِ الْمَمْدُودُ مِنَ السَّمَاءِ إِلَى الْأَرْضِ

“यह कुरान अल्लाह की रस्सी है जो आसमान से ज़मीन तक तनी हुई है।”

यही अल्फ़ाज़ हज़रत ज़ैद बिन अरक़म (रज़ि०) से मरफूअन भी रिवायत किये गए हैं। यानी अगर अल्लाह से जुड़ना है, अल्लाह से ताल्लुक कायम करना है तो इस कुरान को मज़बूती के साथ थाम लो, इससे तुम अल्लाह से जुड़ जाओगे, अल्लाह का कुर्ब हासिल कर लोगे।

दूसरी मौअज्जम कबीर (कीमती खज़ाना) तिबरानी की बड़ी प्यारी रिवायत है। उसमें इन अल्फ़ाज़ में नक़्शा खींचा गया है कि हुज़ूर ﷺ अपने हुज़रे से बरामद हुए तो आप ﷺ ने मस्जिद के गोशे (कोने) में देखा कि कुछ सहाबा (रज़ि०) कुरान का मुज़करा (discussion) कर रहे थे, कुरान को समझ और समझा रहे थे। हुज़ूर ﷺ उनके पास तशरीफ़ लाये और बड़ा प्यारा सवाल किया:

أَلَسْتُمْ تَشْهَدُونَ أَنَّ لَا إِلَهَ إِلَّا اللَّهُ وَأَنَّي رَسُولُ اللَّهِ وَأَنَّ هَذَا الْقُرْآنُ جَاءَ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ؟

“क्या तुम इस बात की गवाही नहीं देते कि अल्लाह के सिवा कोई माबूद नहीं और मैं अल्लाह का रसूल हूँ और यह कुरान अल्लाह के पास से आया है?”

सहाबा (रज़ि) का जवाब इसके सिवा और क्या हो सकता था: “بلى يَا رَسُولَ اللَّهِ” यानी “क्यों नहीं ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ, हम इसके गवाह हैं! इस पर आप ﷺ ने फ़रमाया:

فَاسْتَبْشِرُوا فَإِنَّ هَذَا الْقُرْآنَ كَرَفَةٌ بِأَيْدِيكُمْ وَكَرَفَةٌ بِإِيدِ اللَّهِ

“पस तुम खुशियाँ मनाओ, इसलिये कि यह कुरान वह शय है जिसका एक सिरा तुम्हारे हाथ में है और दूसरा सिरा अल्लाह के हाथ में है।”

इन अहादीस मुबारका से “हबलुल्लाह” का यह तसव्वुर वाज़ेह हो जाता है कि यह अल्लाह के साथ जोड़ने वाली शय है।

अभी हमने जिस हदीस का मुताअला किया उसमें कुरआन हकीम के लिये “جَاءَ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ” के अल्फ़ाज़ आये हैं, कि यह कुरान अल्लाह के पास से आया है। मुस्तदरक हाकिम और मरासील अबु दाऊद में हज़रत अबुज़र गफ़ारी (रज़ि०) से रसूल अल्लाह ﷺ की यह हदीस नक़ल हुई है:

إِنَّكُمْ لَا تَرْجِعُونَ إِلَى اللَّهِ بِشَيْءٍ أَفْضَلَ مِنْ خَرَجٍ مِنْهُ يُعْغِي الْقُرْآنَ

यानि “तुम लोग अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू और उसके यहाँ तक़्र्रब उस चीज़ से बढ़ कर किसी और चीज़ से हासिल नहीं कर सकते जो खुद उसी (अल्लाह तआला) से निकली है, यानि कुरान मजीदा।”

दरहकीक़त कुरान चूँकि अल्लाह का कलाम है और कलाम मुतकल्लिम की सिफ़त होता है, तो इससे बढ़ कर करीब होने का कोई और ज़रिया हो ही नहीं सकता। चुनाँचे जब कोई शख्स कुरान पढ़ता है तो गोया वह अल्लाह से हमकलाम होता है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मुबारक रहि० तबै ताबईन के दौर की शख्सियत हैं। उन्होंने अपना मामूल बना लिया था कि साल में छः महीने सरहदों पर जिहाद में शरीक होते। उस दौर में दारुल इस्लाम की सरहदे बढ़ रही थीं और उसके लिये जिहाद जारी था। जबकि छः महीने आप रहि० घर पर गुज़ारते और इस अरसे में लोगों से मिलने-जुलने से हत्तल इम्कान गुरेज़ करते। सिर्फ़ नमाज़ बा-जमात के लिये मस्जिद में आते, बाक़ी वक़्त घर पर ही रहते। किसी ने कहा कि अब्दुल्लाह! आप तन्हाई पसंद हो गए हैं, तन्हाई से आपकी तबीयत उकताती नहीं? उन्होंने फ़रमाया: “क्या तुम उस शख्स को तन्हा समझते हो जो अल्लाह से हमकलाम होता है और रसूल अल्लाह ﷺ की सोहबत से फ़ैज़याब होता है?” लोग हैरान हुए कि यह क्या कह रहे हैं। जब इसकी वज़ाहत तलब की गई तो फ़रमाया कि देखो जब मैं अकेला होता हूँ तो कुरान पढ़ता हूँ या हदीस पढ़ता हूँ। जब कुरान पढ़ता हूँ तो अल्लाह से हमकलाम होता हूँ और जब हदीस पढ़ता हूँ तो रसूल अल्लाह ﷺ की सोहबत से फ़ैज़याब होता हूँ। तुम मुझे तन्हा ना समझो:

दीवाना-ए-चमन की सैरें नहीं हैं तन्हा

आलम है इन गुलों में, फूलों में बस्तियाँ हैं!

मसनद अहमद, तिरमिज़ी, अबु दाऊद, निसाई, इब्ने माजा और सही इब्ने हब्बान में हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रज़ि०) से यह हदीसे नबवी मन्कूल है:

يُقَالُ لِصَاحِبِ الْقُرْآنِ اقْرَأْ وَارْتَقِ وَرَتِّلْ كَمَا كُنْتَ تُرْتِّلُ فِي الدُّنْيَا فَإِنَّ مُزْلِكَ عِنْدَ
آخِرِ آيَةٍ تَقْرَأُهَا

“(क़यामत के दिन) साहिबे कुरान से कहा जायेगा कि कुरान शरीफ़ पढ़ता जा और (जन्नत के दरजात पर) चढ़ता जा, और ठहर-ठहर कर पढ़ जैसा कि तू दुनिया में ठहर-ठहर कर पढ़ता था। पस तेरा मक़ाम वही है जहाँ आखरी आयत हर पहुँचे।”

लेकिन वाज़ेह रहे कि साहिबे कुरान से मुराद सिर्फ़ हाफ़िज़े कुरान या हमारे यहाँ पाए जाने वाले क़ारी नहीं हैं, बल्कि वह हाफ़िज़ व क़ारी मुराद हैं जो कुरान के इल्म व हिकमत से भी वाकिफ़ हैं, उसको पढ़ते भी हैं और उस पर अमल पैरा (पालन करना) भी हैं। जन्नत में इस कुरान के ज़रिये उनके दरजात में तरक्की होती चली जायेगी और उनका आखरी मक़ाम वहाँ मुअय्यन होगा जहाँ उनका सरमाया-ए-कुरान ख़त्म होगा। तो वाक़या यह है कि तक्रूरब इलल्लाह और वसल इलल्लाह का मौअस्सर तरीन (असरदार) ज़रिया कुरान हकीम ही है। मैंने इसी लिये इमाम राग़िब रहि० के अल्फ़ाज़ का हवाला दिया था कि “हबल” का लफ़्ज़ वसल के लिये इस्तेआरतन (रूपक) इस्तेमाल होता है और यह हर उस शय के लिये इस्तेमाल होगा जिसके ज़रिये किसी शय के साथ जुड़ा जाये। इस मायने में हबलुल्लाह कुरान मजीद है।

अगर पैराशूट की मिसाल सामने रखें तो जुमला ईमानियात इस कुरान के साथ इस तरह जुड़े हुए हैं जिस तरह पैराशूट की छतरी की रस्सियाँ नीचे आकर एक जगह जुड़ जाती हैं। जब पैराशूट खुलता है तो उसकी छतरी किस क़दर वसीअ (चौड़ी) होती है, लेकिन उसकी सारी रस्सियाँ एक जगह आकर जुड़ी हुई होती हैं। बा-अल्फ़ाज़ दीगर (दूसरे लफ़्ज़ों में) जितने भी शोबे हैं वह सबके सब कुरान के साथ मुन्सलिक (जुड़े हुए) हैं। चुनाँचे कुरान पर यह यक़ीन मतलूब है कि यह इन्सान की कलाम नहीं है, बल्कि इसका मिम्बा और सरचश्मा वही है जो मेरी रूह का मिम्बा और सरचश्मा है। यह कलाम भी ज़ाते बारी तआला ही से सादर (जारी) हुआ है और मेरी रूह भी अल्लाह ही के अम्ने कुन (हुक्म) का ज़हूर (हाजिर) है। इस अन्दाज़ से कुरान पर यक़ीन,

अल्लाह तआला पर यक़ीन और कुरान लाने वाले मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم पर यक़ीन मतलूब है। (“हकीक़ते ईमान” के मौज़ू पर मेरी पाँच तक्रारीर में यह मज़मून आ चुका है)।

एक ईमान तो तक़लीदी (बनावटी) है, यानि ग़ैर शऊरी ईमान, कि एक यक़ीन की कैफ़ियत पैदा हो जाती है, चाहे वह अला वजह अल् बसीरत (अंतर्द्रष्टि में) ना हो, और वह भी बहुत बड़ी दौलत है, लेकिन इससे कहीं ज़्यादा क़ीमती ईमान वह है जो अला वजह अल् बसीरत हो। अज़रुए अल्फ़ाज़े कुरानी:

قُلْ هَذِهِ سَبِيلِي أَدْعُو إِلَى اللَّهِ عَلَى بَصِيرَةٍ أَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنِي
“ (ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم) कह दीजिये कि यह मेरा रास्ता है, मैं अल्लाह की तरफ़ बुलाता हूँ समझ-बूझ कर और जो मेरे साथ हैं (वह भी)।” (युसुफ़: 108)

अला वजह अल् बसीरत ईमान यानि शऊरी ईमान, इकतसाबी (प्राप्त) ईमान और हकीक़ी ईमान का वाहिद मिम्बा और सरचश्मा कुरान हकीम है। मौलाना ज़फ़र अली खान बहुत ही सादा अल्फ़ाज़ में एक बहुत बड़ी हकीक़त बयान कर गये हैं:

वो जिन्स नहीं ईमान जिसे ले आएं दुकान-ए-फलसफ़ा से
ढूँढे से मिलेगी आक़िल को यह कुरआ के सिपारों में

आक़िल यानी गौरो फ़िक़र करने वाले और सोच-विचार करने वाले के लिये ईमान का मिम्बा व सरचश्मा सिर्फ़ कुरआने हकीम है।

कुरान हकीम के “हबलुल्लाह” होने का एक दूसरा पहलु भी है और वह यह कि अहले ईमान को जोड़ने वाली रस्सी, उनको बाहम एक-दूसरे से बाँध देने वाली शय, उनको बुनियादे मरसूस बनाने वाली चीज़ यह कुरान है। इसलिये कि कुरान हकीम में जहाँ अल्लाह की रस्सी को मज़बूती के साथ थामने का हुक्म आया है वहाँ उसके साथ ही बाहम मुतफ़र्रिक़ (अलग) होने से रोका गया है। फ़रमाया:

وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللَّهِ جَمِيعًا وَلَا تَفَرَّقُوا
“और मज़बूती से थाम लो अल्लाह की रस्सी को सब मिल-जुल कर और तफ़रका मत डालो!”

अहले ईमान को जोड़ने वाली और बुनयाने मरसूस (ठोस बुनियाद) बनाने वाली रस्सी यही कुरान हकीम है। इसलिये कि इन्सानी इत्तेहाद वही मुस्तहकम (स्थिर) और पायेदार होगा जो फ़िक्र व नज़र की हम आहंगी के साथ हो। बहुत से इत्तेहाद वक्रती तौर पर वजूद में आ जाते हैं। जैसे कुछ सियासी मसलहतें हैं तो इत्तेहाद कायम कर लिया, कोई दुनियावी मफ़ादात हैं तो उनकी बिना पर इत्तेहाद कायम कर लिया। यह इत्तेहाद हकीमी नहीं होते और ना ही पायेदार और मुस्तहकम होते हैं। इन्सान हैवाने आक़िल है। यह सोचता है, ग़ौर करता है, इसके नज़रियात हैं, इसके कुछ एहराफ़ व मक्रासिद हैं, कोई नस्बुल ऐन (लक्ष्य) है। नज़रियात, मक्रासिद और नस्बुल ऐन का बड़ा गहरा रिश्ता होता है। तो जब तक उनमें हम आहंगी ना हो कोई इत्तेहाद पायेदार और मुस्तहकम नहीं होगा। इस ऐतबार से अल्लाह की इस रस्सी को मज़बूती से थामोगे तो गोया दो रिश्ते कायम हो गये। एक रिश्ता अहले ईमान का अल्लाह के साथ और एक रिश्ता अहले ईमान का एक-दूसरे के साथ। जैसे कुल शरीअत को ताबीर किया जाता है कि शरीअत नाम है हुकूकुल्लाह और हुकूकुल इबाद का। अल्लाह के साथ जोड़ने वाली सबसे बड़ी इबादत नमाज़ है और बन्दों के साथ ताल्लुक़ कायम करने वाली शय ज़कात है। इसी तरह हबलुल्लाह एक तरफ़ अहले ईमान को अल्लाह से जोड़ रही है और दूसरी तरफ़ अहले ईमान को आपस में जोड़ रही है। यह उन्हें बुनयाने मरसूस (ठोस बुनियाद) और "كَيْسِدٌ وَاجِبٌ" बना देने वाली शय है। यही वह बात है जिसे अल्लमा इक़बाल ने इन्तहाई ख़ूबसूरती से कहा है:

अज़ यक आईनी मुसलमाँ ज़िन्दा अस्त

पैकर मिल्लत अज़ कुरआं ज़िन्दा अस्त

मा हमा खाक व दिले आगाह ऊस्त

ऐतशामशे कुन कि हबलुल्लाह ऊस्त!

“वहदते आईन ही मुस्लमान की ज़िन्दगी का असल राज़ है और मिल्लते इस्लामी के जसद-ए-ज़ाहिरी में रुहे बातिनी की हैसियत सिर्फ़ कुरान को हासिल है। हम तो सर से पाँव तक खाक ही खाक हैं, हमारा क़ल्बे ज़िन्दा और हमारी रूहे ताबंदाह (फॉस्फोरस) तो असल में कुरान ही है। लिहाज़ा ऐ मुस्लमान! तू कुरान को मज़बूती से थाम ले कि ‘हबलुल्लाह’ यही है।”

हबलुल्लाह के बारे में मुफ़स्सिरीन के यहाँ बहुत से अक़वाल मिलते हैं कि हबलुल्लाह से मुराद कुरान है, कलमा-ए-तैय्यबा है, इस्लाम है। यह सारी चीज़ें अपनी जगह पर दुरुस्त हैं लेकिन अहादीस नबवी ﷺ की रोशनी में इसका मिस्दाक़े कामिल कुरान ही है। और फिर इसकी जिस क़दर उम्दा ताबीर अल्लामा इक़बाल ने की है, यह फसाहत व बलाग़त के ऐतबार से भी मेरे नज़दीक बहुत उम्दा मक्राम है:

मा हमा खाक व दिले आगाह ऊस्त

ऐतशामशे कुन कि हबलुल्लाह ऊस्त!

नोट कीजिये कि कुरान मजीद में: {وَأَعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللَّهِ جَمِيعًا وَلَا تَفَرَّقُوا۟} के अल्फ़ाज़ के बाद फ़रमाया गया है: (आले इमरान:103)

“और याद करो अपने ऊपर अल्लाह की उस وَأَذْكُرُوا۟ أَنِغْبَثَ اللَّهُ عَلَيْكُمْ إِذْ كُنْتُمْ أَعْدَاءَ
नेअमत को कि जब तुम बाहम दुश्मन थे, फिर فَأَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِكُمْ فَأَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهِ
उसने तुम्हारे दिलों को जोड़ दिया तो तुम إِخْوَانًا
उसके फ़ज़ल से भाई-भाई हो गये।”

यह कुरान मजीद ही है जो अहले ईमान के दिलों को जोड़ता और उनको बाहम पेवस्त (संयुक्त) करता है, और यह दिली ताल्लुक़ और दिली हम आहंगी ही है जो मुसलमानों को बुनयाने मरसूस (ठोस बुनियाद) बनाने वाली शय है।

मुसलमानों पर कुरान मजीद के हुकूक़

तआरुफ़े कुरान के ज़िम्न में जो कुछ मैंने अर्ज़ किया उन सब बातों का जो अमली नतीजा निकलना चाहिये वह क्या है? यानि कुरान हकीम के बारे में मुझ पर और आप पर क्या ज़िम्मेदारी आयद (लागू) होती है? इसके ऐतबार से मैं ख़ास तौर पर अपनी किताब “मुसलमानों पर कुरान मजीद के हुकूक़” का ज़िक्र करना चाहता हूँ जो हमारी तहरीक़ रुजू इलल कुरान के लिये दो बुनयादों में से एक बुनियाद की हैसियत रखती है। हमारी इस तहरीक़ का आगाज़ 1965 ईस्वी से हुआ था। इब्तदाई छः सात साल तो मैं तन्हा था। ना कोई अंजुमन थी, ना कोई इदारा, ना जमाअत। फिर अंजुमन खुदामुल कुरान कायम हुई, फिर 1976 ईस्वी में कुरान अकेडमी का संगे बुनियाद रखा गया। कुरान अकेडमी की तामीरात मुकम्मल होने के बाद फिर उसी के बतन से

कुरान कालेज की विलादत हुई, जिसके सर पर कुरान ऑडिटोरियम का ताज सजा हुआ है। इस पूरी जद्दो-जहद की बुनियाद और असास दो किताबचे हैं: (1) “इस्लाम की निशाते सानिया। करने का असल काम।” यह मज़मून मैंने 1967 ईस्वी में मीसाक के इदारे के तौर पर लिखा था। (2) मुसलमानों पर कुरान मजीद के हुक्का। यह किताबचा मेरी दो तकरीरों पर मुश्तमिल है जो मैंने 1968 ईस्वी में की थीं।

इसका पसमंज़र यह है कि उस ज़माने में जशने ख़ैबर और जशने मेहरान वगैरह जैसे मुख्तलिफ़ उनवानात से जशन मनाये जा रहे थे, जिनमें राग-रंग की महफ़िलें भी होती थीं। सदर अय्यूब खान का ज़माना था। अगरचे शिकस्त व रेख्त (विनाश) के आसार ज़ाहिर हो रहे थे, लेकिन “सब अच्छा है” के इज़हार के लिये यह शानदार तकरीबात मुनअक्किद की जा रही थीं। यह गोया उनके दौरे हुक्मत की आख़री भड़क थी, जैसे बुझने से पहले चिराग़ भड़कता है।

अल्लमा इक़बाल ने अपनी नज़म “इब्लीस की मजलिसे शूरा” में इब्लीस की तर्जुमानी इन अल्फ़ाज़ में की है: “मस्त रखो ज़िक्र व फ़िक्र सुबह गाही में इसे!” लेकिन उन दिनों ज़िक्र व फ़िक्र की बजाये लोगों को राग-रंग की महफ़िलों में मस्त रखने का अहतमाम हो रहा था। उसी ज़माने में मज़हबी लोगों को रिशवत के तौर पर “जशने नुज़ूले कुरान” अता किया गया कि तुम भी जशन मनाओ और अपना ज़ोक्र व शोक्र पूरा कर लो। चुनाँचे चौदह सौ साला “जशने नुज़ूले कुरान” का इनअक्राद (आयोजन) हुआ। इसके ज़िम्न में किरात की बड़ी-बड़ी महफ़िलें मुनअक्किद (आयोजित) हुईं, जिनमें पूरी दुनिया से कुरा (क्रारी) हज़रात शरीक हुए। इसी सिलसिले में सोने के तार से कुरान लिखने का प्रोजेक्ट शुरू हुआ।

उस वक़्त मेरा ज़हन मुन्तक़िल हुआ (बदला) कि क्या कुरान हकीम का हम पर यही हक़ है? क्या अपने इन कामों से हम कुरान मजीद का हक़ अदा कर रहे हैं? चुनाँचे मैंने मस्जिदे खज़रा समनाबाद में अपने दो खुत्वाते जुमा में मुसलमानों पर कुरान मजीद के हुक्क बयान किये कि हर मुसलमान पर हस्बे इस्तअदाद (ताक़त के अनुसार) कुरान मजीद के पाँच हुक्क आयद होते हैं:

- 1) इसे माने जैसा कि मानने का हक़ है। (ईमान व ताज़ीम)
- 2) इसे पढ़े जैसा कि पढ़ने का हक़ है। (तिलावत व तरतील)

3) इसे समझे जैसा कि समझने का हक़ है। (तज़क्कुर व तदब्बुर)

4) इस पर अमल करे जैसा कि अमल करने का हक़ है। (हुक्म व अक्रामत)

इन्फरादी ज़िन्दगी में हुक्म बिल कुरआन यह है कि हमारी हर राय और हर फैसला कुरान पर मब्री हो। और इज्तमाई ज़िन्दगी में कुरान पर अमल की सूरत अक्रामत मा अनज़ल मिनल्लाह यानि कुरान के अता करदा निज़ामे अदले इज्तमाई को कायम करना है। कुराने हकीम में इरशाद है:

“ऐ किताब वालो! तुम्हारा कोई मक़ाम नहीं
जब तक कि तुम कायम ना करो तौरात और
इन्जील को और जो कुछ तुम्हारी जानिब
नाज़िल किया गया है तुम्हारे रब की तरफ़
से।” (सूरह मायदा:68)

قُلْ يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لَسْتُمْ عَلَى شَيْءٍ حَتَّى
تَقِيمُوا الشُّرُوءَ وَالْإِنْجِيلَ وَمَا أُنْزِلَ إِلَيْكُمْ
مِّن رَّبِّكُمْ

5) कुरान को दूसरों तक पहुँचाना, इसे फैलाना और आम करना।
(तबलीग व तबईन)

इन पाँच उन्वानात के तहत अल्हम्दुलिल्लाह सुम्मा अल्हम्दुलिल्लाह यह बहुत जामेअ किताबचा मुस्तब हुआ और बिला मुबालगा यह लाखों की तादाद में छपा है। फिर अंग्रेज़ी, अरबी, फ़ारसी, पश्तो, तमिल, मलेशिया की ज़बान और सिन्धी में इसके तराजिम हुए। जो हज़रात भी हमारी इस तहरीक रुजू इलल कुरान से कुछ दिलचस्पी रखते हैं, मेरे दूरुस (कोर्स) में शरीक होते हैं या हमारे लिट्रेचर का मुताअला करते हैं उन्हें मेरा नासहाना मशवरा है कि इस किताबचे का मुताअला ज़रूर करें। यह दरहक़ीक़त “तआरुफे कुरान” पर मेरे ख़िताबात का लाज़मी नतीजा और उनका ज़रूरी तकमिला है।

यह भी जान लीजिये कि अगर हम यह हुक्क अदा नहीं करते तो अज़रुए कुरान हमारी हैसियत क्या है। कुरान मजीद के हुक्क को अदा ना करना कुरान को तर्क कर (छोड़) देने के मुतरादिफ़ (बराबर) है। सूरतुल फुरक़ान में मुहम्मद रसूल्लाह ﷺ की फ़रियाद नक़ल हुई है:

“और पैगम्बर कहेगा कि ऐ मेरे रब! मेरी क़ौम
ने इस कुरान को छोड़ रखा था।”

وَقَالَ الرَّسُولُ يَرْبِّ إِنِّي قَوْمِي اتَّخَذُوا هَذَا
الْقُرْآنَ مَهْجُورًا

मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी रहि० ने इस आयत के ज़ेल में हाशिये में लिखा है:

“आयत में अगरचे मज़कूर सिर्फ़ काफ़िरों का है ताहम कुरआन की तस्दीक़ ना करना, उसमें तदब्बुर ना करना, उस पर अमल ना करना, उसकी तिलावत ना करना, उसकी तसहीहे क़िरआत की तरफ़ तवज्जो ना करना, उससे ऐराज़ करके दूसरी लख्बियात या हक़ीर चीज़ों की तरफ़ मुतवज्जह होना, यह सब सूरतें दर्जा-ब-दर्जा हिजराने कुरान के तहत में दाख़िल हो सकती हैं।”

बहैसियत मुसलमान हम पर कुरआन मजीद के जो हुक्क आयद होते हैं, अगर उन्हें हम अदा नहीं कर रहे तो हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم के इस क़ौल और फ़रियाद का इतलाक़ (लागू) हम पर भी होगा। गोया कि हुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم अल्लाह तआला की बारगाह में हमारे ख़िलाफ़ मुद्दई की हैसियत से खड़े होंगे।

अल्लामा इक़बाल इसी आयते कुरानी की तरफ़ अपने इस शेर में इशारा करते हैं:

خوار अज़ महज़ूरी कुराँ शुदी
शिकवा सन्ज गर्दिशे दौराँ शुदी!

“(ऐ मुस्लमान!) तेरी ज़िल्लत और रुसवाई का असल सबब तो यह है कि तू कुरान से दूर और बेताल्लुक़ हो गया है, लेकिन तू अपनी इस ज़बूँ हाली (बदहाली) का इल्ज़ाम गर्दिशे ज़माना को दे रहा है।”

कुरान मजीद में दो मक़ामात पर कुरान के हुक्क अदा ना करने को कुरान की तकज़ीब क़रार दिया गया है। आप लाख समझें कि आप कुरान मजीद पर ईमान रखते हैं और उसकी तस्दीक़ करते हैं, लेकिन अगर आप उसके हुक्क की अदायगी अपनी इस्तअदाद (ताक़त) के मुताबिक़, अपनी इस्क़ानी हद तक नहीं कर रहे तो दरहक़ीक़त कुरान को झुठला रहे हैं। साबक़ा उम्मत मुस्लिमा यानि यहूद के बारे में सूरह जुमा में यह अल्फ़ाज़ आये हैं:

“मिसाल उन लोगों की जो हामिले तौरात बनाए गए, फिर उन्होंने उसकी ज़िम्मेदारियों को अदा ना किया, उस गधे की सी है जो किताबों का बोझ उठाये हुए हो। बुरी मिसाल है उस क्रौम की जिसने अल्लाह की आयात को झुठलाया। और अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को

مَثَلُ الَّذِينَ حُمِّلُوا التَّوْرَةَ ثُمَّ لَمْ يَحْمِلُوهَا
كَمَثَلِ الْإِصْحَارِ إِتْأَمَرُوا بِشَيْءٍ مِّنْهُ
فَعَصَوْا ۚ وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِ اللَّهِ وَاللَّهُ لَا
يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ

हिदायत नहीं देता।” (आयत:5)

हमें काँपना चाहिये, लरज़ना चाहिये कि कहीं हमारा शुमार भी इन्हीं लोगों में ना हो जाये।

इस ज़िम्न में दूसरा मक़ाम सूरतुल वाक़िया के तीसरे रकूअ की इब्तदाई आयात हैं:

“पस नहीं, मैं क़सम खाता हूँ तारों के मौक़ों की, और अगर तुम समझो तो यह बहुत बड़ी क़सम है, कि यह एक बुलन्द पाया कुरान है, एक महफूज़ किताब में सब्त, जिसे मुतहर्रीन (पाक) के सिवा कोई छू नहीं सकता। यह रब्बुल आलमीन का नाज़िल करदा है। फिर क्या इस कलाम के साथ तुम बेऐतनाई (लापरवाही) बरतते हो, और इस नेअमत में अपना हिस्सा यह रखा है कि इसे झुठलाते हो?”

فَلَا أُقْسِمُ بِمَوْقِعِ النُّجُومِ ۖ وَإِنَّهُ لَقَسَمٌ لَّا تَعْلَمُونَ عَظِيمٌ ۚ إِنَّهُ لَفَرَزٌ مِّنْ رَبِّهِ ۖ فِي كِتَابٍ مَّكْنُونٍ ۚ لَا يَمَسُّهُ إِلَّا الْمُطَهَّرُونَ ۚ تَنْزِيلٌ مِّنْ رَبِّ الْعَالَمِينَ ۝ أَفَبِهَذَا الْحَدِيثِ أَنْتُمْ مُذْهِبُونَ ۖ وَتَجْعَلُونَ رِزْقَكُمْ أَكْكُمْ تُكَذِّبُونَ ۝

इस कुरान, इस अज़मत वाली किताब, जो किताबे करीम है, किताबे मकनून है, के बारे में तुम्हारी यह सुस्ती, तुम्हारी यह कस्लमंदी, तुम्हारी यह नाक़्द्री और तुम्हारा यह अमली तअतिल (रुकावट) कि तुम इसे झुठला रहे हो! तुमने अपना हिस्सा और नसीब यह बना लिया है कि तुम इसकी तकज़ीब कर रहे हो? तकज़ीब इस मायने में भी कि कुरान का इन्कार किया जाए, इसे अल्लाह का कलाम ना माना जाये--- और तकज़ीब अमली के ज़िम्न में वह चीज़ भी इसके ताबेअ और शामिल होगी जो मैं बयान कर चुका हूँ। यानि हामिल-ए-किताबे इलाही होने के बावजूद उसकी ज़िम्मेदारियों को अदा ना किया जाये। अल्लाह तआला हमें इस अन्जाम से महफूज़ रखे कि हम भी ऐसे लोगों में शामिल हों। हम में से हर शख्स को इन हुक्क के अदा करने की अपनी इस्क़ानी हद तक भरपूर कोशिश करनी चाहिये।

اقول قولى هذا واسغفر الله لى ولكم السائر المسلمين والمسلمات۔



सूरतुल फ़ातिहा

نَحْمَدُكَ يَا رَسُولَ الْكَرِيمِ

أَعُوذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ

بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ ①

الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ② الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ ③ مَلِكِ يَوْمِ الدِّينِ ④ إِيَّاكَ نَعْبُدُ

وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ ⑤ اهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ⑥ صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ⑦

غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ ⑧

رَبِّ اشْرَحْ لِي صَدْرِي وَيَسِّرْ لِي أَمْرِي وَاحْلُلْ عُقْدَةً مِنْ لِسَانِي يَفْقَهُوا قَوْلِي

सूरतुल फ़ातिहा अगरचे कुरान हकीम की मुख्तसर सूरतों में से है, इसकी कुल सात आयत हैं, लेकिन यह कुरान हकीम की अज़ीम तरीन सूरत है। इस सूरह मुबारका को उम्मुल कुरान भी कहा गया है और असासुल कुरान (foundation of Quran) भी। यानि यह पूरे कुरान के लिये जड़, बुनियाद और असास की हैसियत रखती है। यह अल-फ़ातिहा किस ऐतबार से है? فَتَح के मायने हैं खोलना। चूँकि कुरान हकीम शुरू इस सूरत से होता है लिहाज़ा यह “सूरतुल फ़ातिहा” (The Opening Surah of the Qur'an) है। इसका एक नाम “अल-काफ़िया” यानि किफ़ायत करने वाली है, जबकि एक नाम “अश-शफ़िया” यानि शिफ़ा देने वाली है। दूसरी बात यह नोट कीजिये कि यह सूरह मुबारका पहली मुकम्मल सूरत है जो रसूल अल्लाह ﷺ पर नाज़िल हुई है। इससे पहले मुताफ़र्रिक (अलग-अलग) आयत नाज़िल हुई। सबसे पहले सूरतुल अलक़ की पाँच आयतें, फिर सूरह नून या सूरतुल क़लम की सात आयतें, फिर सूरतुल मुज़म्मिल की नौ आयतें, फिर सूरतुल मुदस्सिर की सात आयतें और फिर सूरतुल फ़ातिहा की सात आयतें

नाज़िल हुई। लेकिन यह पहली मुकम्मल सूरत है जो नाज़िल हुई है रसूल अल्लाह ﷺ पर। सूरतुल हिज़्र में एक आयत बाअल्फ़ाज़ आयी है:

“وَلَقَدْ آتَيْنَاكَ سَبْعًا مِنَ الْمَقَانِي وَالْقُرْآنَ الْعَظِيمَ ⑤
“हमने (ऐ नबी ﷺ) आप ﷺ को सात ऐसी आयत अता की हैं जो बार-बार पढ़ी जाती हैं और अज़मत वाला कुराना”

सूरतुल फ़ातिहा की सात आयतें दोहरा-दोहरा कर पढ़ी जाती हैं, नमाज़ की हर रकअत में पढ़ी जाती हैं, और यह सूरह मुबारका खुद अपनी जगह पर एक कुराने अज़ीम है। सही बुखारी की रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फरमाया: ((الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ هِيَ السَّبْعُ الْمَقَانِي وَالْقُرْآنُ الْعَظِيمُ الَّذِي أُتِيَتْهُ)) (1) “सूरह अल्हमदु लिल्लाही रब्बिल आलामीन ही “सबअ मसानी” और “कुराने अज़ीम” है जो मुझे अता हुई है।”

तादाद के ऐतबार से इसकी सात आयत मुत्तफ़िक़ अलै हैं। अलबत्ता अहले इल्म में एक इख़्तलाफ़ है। बाज़ (कुछ) हज़रात के नज़दीक, जिनमें इमाम शाफ़ई (रहि०) भी शामिल हैं, आयत बिस्मिल्लाह भी सूरतुल फ़ातिहा का जुज़ (हिस्सा) है। उनके नज़दीक {بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ} सूरतुल फ़ातिहा की पहली आयत और {صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ} सातवी आयत है। लेकिन दूसरी तरफ़ इमाम अबु हनीफ़ा (रहि०) की राय यह है कि आयत बिस्मिल्लाह सूरतुल फ़ातिहा का जुज़ (हिस्सा) नहीं है, बल्कि आयत बिस्मिल्लाह कुरान मजीद की किसी भी सूरत का जुज़ नहीं है, सिवाय एक मक़ाम के जहाँ वह मतन में आयी है। हज़रत सुलेमान अलै० ने मलका-ए-सबा को जो ख़त लिखा था उसका तज़किरा सूरतुल नम्ल में बाअल्फ़ाज़ आया है:

{إِنَّهُ مِنْ سُلَيْمَانَ وَإِنَّهُ بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ} (आयत:30)। सूरतों के आगाज़ (शुरू) में यह अलामत (निशानी) के तौर पर लिखी गयी है कि यहाँ से नयी सूरत शुरू हो रही है। इन हज़रात के नज़दीक {الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ} सूरतुल फ़ातिहा की पहली आयत और {اهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ} पाँचवी आयत है, जबकि {غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ} सातवी आयत है। जिन हज़रात के नज़दीक आयत बिस्मिल्लाह सूरतुल फ़ातिहा का जुज़ है वह नमाज़ में जहरी क़िरात करते हुए {بِسْمِ اللَّهِ الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ} भी बिलजहर (ऊँची आवाज़ में) पढ़ते हैं, और जिन हज़रात के नज़दीक यह सूरतुल फ़ातिहा

का जुज़ नहीं है वह जहरी किरात करते हुए भी बिस्मिल्लाह ख़ामोशी से पढ़ते हैं और {الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ} से किरात शुरू करते हैं।

नमाज़ का जुज़वे लाज़िम (ज़रूरी हिस्सा)

इस सूरह मुबारका का असलूब (अंदाज़) क्या है? यह बहुत अहम और समझने की बात है। वैसे तो यह कलामुल्लाह है, लेकिन इसका असलूब दुआइया है। यह दुआ अल्लाह ने हमें तलक़ीन फ़रमायी (सिखायी) है कि मुझसे इस तरह मुख़ातिब हुआ करो, जब मेरे हुज़ूर में हाज़िर हो तो यह कहा करो। वाक़िया यह है कि इसी बिना (वजह) पर कुरान मजीद की इस सूरत को नमाज़ का जुज़वे लाज़िम करार दिया गया है, बल्कि सूरतुल फ़ातिहा ही को हदीस में “अस-सलाह” कहा गया है, यानि असल नमाज़ सूरतुल फ़ातिहा है। बाक़ी इज़ाफ़ी चीज़ें हैं, तस्बीहात हैं, रुकूअ व सुजूद हैं, कुरान मजीद का कुछ हिस्सा आप और भी पढ़ लेते हैं। हज़रत उबादह बिन सामित (रजि०) से मरवी मुत्तफ़िक़ अलै हदीस है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया: ((لَا صَلَاةَ لِمَنْ لَمْ يَقْرَأْ بِفَاتِحَةِ الْكِتَابِ)) (2) यानि जो शख्स (नमाज़ में) सूरतुल फ़ातिहा नहीं पढ़ता उसकी कोई नमाज़ नहीं है। इसके अलावा और भी बहुत सी अहादीस में यह मज़मून आया है।

इस ऐतबार से भी हमारे यहाँ एक फ़िक्रही इख़्तलाफ़ मौजूद है। बाज़ हज़रात ने इस हदीस को इतना अहम समझा है कि आप बा-जमात नमाज़ पढ़ रहे हैं तब भी उनके नज़दीक आप इमाम के साथ-साथ ज़रूर सूरतुल फ़ातिहा पढ़ेंगे। चुनाँचे इमाम हर आयत के बाद वक़फ़ा दे। इमाम जब कहे: الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ तो इसके बाद मुक़तदी भी कहे: الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ख़्वाह (चाहे) अपने दिल में कहे। फिर इमाम कहे: الرَّحْمَنُ الرَّحِيمُ तो मुक़तदी भी दिल में कह ले: الرَّحْمَنُ الرَّحِيمُ यह मौक़फ़ (विचार) है इमाम शाफ़ई (रहि०) का कि नमाज़ चाहे जहरी (ऊँची आवाज़ में पढ़ने वाली) हो चाहे सिरि (हल्की आवाज़ से पढ़ने वाली) हो, अगर आप इमाम के पीछे पढ़ रहे हैं तो इमाम अपनी सूरतुल फ़ातिहा पढ़ेगा और आप अपनी पढ़ेंगे और लाज़िमन पढ़ेंगे।

इमाम अबु हनीफ़ा (रहि०) का मौक़फ़ (विचार) इसके बिल्कुल बरअक्स (विपरीत) है कि इमाम जब सूरतुल फ़ातिहा पढ़ेगा तो हम पीछे बिल्कुल नहीं पढ़ेंगे, बल्कि इमाम की किरात ही मुक़तदियों की किरात है। उनका

इस्तदलाल (तर्क) आयते कुरानी {وَإِذَا قُرِئَ الْقُرْآنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَأَنْصِتُوا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ} (आराफ़:204) और हदीसे नबवी ﷺ से ((مَنْ كَانَ لَهُ إِمَامٌ فَقَرَأَهُ الْإِمَامُ لَهُ قِرَاءَةً)) (3) से है। नेज़ (इसलिये) उनका कहना है कि नमाज़ बा-जमाअत में इमाम की हैसियत सबके नुमाइन्दे की होती है। अगर कोई वफ़द (प्रतिनिधि मंडल) कहीं जाता है और उस वफ़द का कोई सरबराह (प्रमुख) होता है तो वहाँ जाकर गुफ़्तुगू (बात-चीत) वफ़द का सरबराह करता है, बाकि सब लोग ख़ामोश रहते हैं।

अब इस ज़िमन (बारे) में एक इन्तहाई मामला तो यह हो गया जो इमाम शाफ़ई (रहि०) का मौक़फ़ है कि चाहे जहरी नमाज़ हो या सिरि हो, उसमे इमाम के पीछे मुक़तदी भी सूरतुल फ़ातिहा पढ़ेंगे। आपको मालूम है कि ज़ोहर और अस्त्र सिरि नमाज़ें हैं, इनमे इमाम ख़ामोशी से किरात करता है, बुलन्द आवाज़ से नहीं पढ़ता, जबकि फ़ज़्र, मग़रिब और इशा जहरी नमाज़ें हैं, जिनमें सूरतुल फ़ातिहा और कुरान मजीद का कुछ हिस्सा पहली दो रकअतों में आवाज़ के साथ पढ़ा जाता है। इमाम अबु हनीफ़ा (रहि०) का मौक़फ़ है कि नमाज़ चाहे जहरी हो या सिरि हो, नमाज़ बा-जमाअत की सूरत में मुक़तदी ख़ामोश रहेगा और सूरतुल फ़ातिहा नहीं पढ़ेगा।

इनके अलावा एक दरमियानी मसलक भी है और वह इमाम मालिक (रहि०) और इमाम इब्ने तैमिया (रहि०) वगैरह का है। इस ज़िमन में उनका मौक़फ़ यह है कि जहरी रकअत में मुक़तदी सूरतुल फ़ातिहा मत पढ़े, बल्कि इमाम की किरात ख़ामोशी से सुने, अज़रूए निस कुरानी (आराफ़:204):

“وَإِذَا قُرِئَ الْقُرْآنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَأَنْصِتُوا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ”
“और जब कुरान पढ़ा जाये तो तुम पूरी तवज्जोह से इसे सुना करो और खुद ख़ामोश रहा करो, ताकि तुम पर रहम किया जाये।”

इसी तरह हदीसे नबवी ﷺ है: ((إِذَا قَرَأَ الْإِمَامُ فَأَنْصِتُوا)) (4) “जब इमाम किरात करे तो तुम ख़ामोश रहो।” चुनाँचे जब इमाम बिलजहर किरात कर रहा है: {الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ الرَّحْمَنُ الرَّحِيمُ} तो आप सुनिये और ख़ामोश रहिये, लेकिन जो सिरि नमाज़ है उसमे इमाम अपने तौर पर सूरतुल फ़ातिहा पढ़े और अपने तौर पर ख़ामोशी से पढ़ें। यह दरमियानी मौक़फ़ है, और मैंने बहरहाल इसी को इख़्तियार किया हुआ है।

फ़ितरते सलीमा की पुकार

सूरतुल फ़ातिहा के ज़िम्न में, मैंने अर्ज़ किया कि यह दुआ है जो अल्लाह तआला ने हमें तलक़ीन की है। लेकिन इससे आगे बढ़ कर ज़रा कुरान मजीद की हिकमत और फ़लसफ़े पर गौर करेंगे तो इस सूरत की एक और शान सामने आयेगी। बुनियादी तौर पर कुरान का फ़लसफ़ा क्या है? इन्सान इस दुनिया में जब आता है तो फ़ितरत लेकर आता है, जिसे कुरान हकीम 'फ़ितरतल्लाही' करार देता है, अज़रूए अलफ़ाज़े कुरानी (अर-रूम:30): {فَطَرَتِ اللَّهُ النَّاسَ عَلَيْنَا} यही हकीकत हदीसे नबी صلی اللہ علیہ وسلم में बाअलफ़ाज़ बयान की गयी है: ((مَا مِنْ مَوْلُودٍ إِلَّا يُولَدُ عَلَى الْفِطْرَةِ فَأَبَوُا يَهُودِيَةً أَوْ نَصْرَانِيَةً أَوْ مَجَسَّانِيَةً)) (5) “(नस्ले इन्सानी का) हर पैदा होने वाला बच्चा फ़ितरत पर पैदा होता है, लेकिन यह उसके वालिदैन हैं जो उसे यहूदी, नसरानी या मजूसी बना देते हैं।” हर बच्चा जो पैदा होता है फ़ितरते इस्लाम लेकर आता है। तो इन्सान की फ़ितरत के अन्दर अल्लाह तआला ने अपनी मारफ़त और अपनी मोहब्बत वदीयत (आन्तरिक देन) कर दी है। इसलिये कि जो रूहे इन्सानी है वह कहाँ से आयी है?

“(ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم)! यह आपसे रूह के बारे में सवाल करते हैं। कह दीजिये कि रूह मेरे रब के अम्र (हुक्म) में से है।” (इसर:85)

हमारी रूह रब तआला की तरफ से आयी है, लिहाज़ा इसके अन्दर अल्लाह की मारफ़त भी है, अल्लाह की मोहब्बत भी है। तो जब तक एक इन्सान की फ़ितरत में कोई कज़ी (विकृति) ना आये वह बेराह रबी (perversion) से महफूज़ रहे तो इसे हम कहते हैं फ़ितरते सलीमा, यानि सालिम (protected) और महफूज़ फ़ितरत। इस फ़ितरत वाला इन्सान जब बुलूग (maturity) को पहुँचता है और उसे अक़ले सलीम भी मिल जाती है, यानि सही-सही अन्दाज़ में ग़ौर करने की सलाहियत मिल जाती है तो इन दोनों चीज़ों के इम्तिज़ाज (मिलने) के नतीजे में ईमानियात के कुछ बुनियादी हक़ाइक़ इन्सान पर खुद मुन्कशिफ़ (प्रकट) हो जाते हैं, चाहे उसे कोई वही मिले या ना मिले। यह है फ़ितरत का मामला और यह है कुरान की हिकमत और फ़लसफ़े का उसूल। इसकी एक बड़ी शानदार मिसाल कुरान मजीद में

हज़रत लुक़मान की दी गयी है, जो ना नबी थे ना किसी नबी के पैरोकार और उम्मत थी, लेकिन उन्हें अल्लाह ने हिकमत अता फरमायी थी।

“हिकमत” फ़ितरते सलीमा, क़ल्बे सलीम और अक़ले सलीम के इम्तिज़ाज से वुजूद में आती है। अगर फ़ितरत भी महफूज़ है, अक़ल भी टेढ़ पर नहीं चल रही, बल्कि सही और सीधे रास्ते पर चल रही है तो इन दोनों के इम्तिज़ाज से जो हिकमत पैदा होती है, इन्सान को जो दानाई (wisdom) मयस्सर आती है उसके नतीजे में वह पहचान लेता है कि इस कायनात का एक पैदा करने वाला है, यह खुद ब खुद नहीं बनी है। दूसरे यह कि वह अकेला है, तन्हा है, कोई उसका साझी नहीं है (لَا مِثْلَ لَهُ وَلَا مِثَالُ لَهُ وَلَا كُفُو لَهُ وَلَا ضِدُّ لَهُ وَلَا يَدُّ لَهُ)। कोई उसका मद्दे मुक़ाबिल नहीं है और उसमें तमाम सिफ़ाते कमाल ब-तमामो कमाल मौजूद हैं। वह كُلُّ شَيْءٍ قَدِيرٌ है, हर जगह मौजूद है, और उसकी ज़ात में कोई नुक्स, कोई ऐब, कोई कोताही, कोई तक्रसीर (fault), कोई कमज़ोरी, कोई ज़ौफ़ (दुर्बलता), कोई एहतियाज क़तअन नहीं है।

यह पाँच बातें फ़ितरते सलीमा और अक़ले सलीम के नतीजे में इन्सान के इल्म में आती हैं, चाहे उसे अभी किसी वही से फैज़ (फ़ायदा) हासिल ना हुआ हो। चुनाँचे आप देखते हैं कि चीन का बड़ा फ़लसफ़ी और हकीम कनफ़्यूसियस इन तमाम बातों को मानने वाला था, हालाँकि वह नबी तो नहीं था! मज़ीद बराँ (इसके अलावा) यह बात भी सामने आती है कि इन्सानी ज़िन्दगी सिर्फ़ यह दुनिया की ज़िन्दगी नहीं है, असल ज़िन्दगी एक और है जौ मौत के बाद शुरू होगी और उसमें इन्सान को इस ज़िन्दगी के आमाल का पूरा-पूरा बदला मिलेगा, नेकियाँ कमाई हैं तो उनकी जज़ा मिलेगी और बदियाँ कमाई हैं तो उनकी सज़ा मिलेगी। यह वह हक़ाइक़ हैं कि जहाँ तक इन्सान अपनी अक़ले सलीम और फ़ितरते सलीमा की रहनुमाई से पहुँच जाता है। फिर इसका मन्तक़ी नतीजा यह निकलता है कि एक हस्ती जो यकता (अद्वितीय) है, वही पैदा करने वाला है, परवरदिगार है, كُلُّ شَيْءٍ قَدِيرٌ है, بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ है, वही राज़िक़ है, वही ख़ालिक़ है, वही मालिक़ है, वही मुश्किल कुशा है, तो अब उसी की बन्दगी होनी चाहिये, उसी का हुक्म मानना चाहिये, उसी से मोहब्बत करनी चाहिये, उसी को मतलूब बनाना चाहिये, उसी को मक़सूद

बनाना चाहिये। यह इसका मन्तक्री नतीजा है और यहाँ तक इन्सान अक़ले सलीम और फ़ितरते सलीमा की रहनुमाई से पहुँच जाता है।

दरखास्त-ए-हिदायत

अलबत्ता अब आगे मसला आता है कि मैं क्या करूँ क्या ना करूँ? इसमें भी जहाँ तक इन्फ़रादी (व्यक्तिगत) मामलात हैं, उनके ज़िम्न में एक रोशनी अल्लाह ने इन्सान के बातिन में रखी हुई है, उसके ज़मीर के अन्दर, क़ल्ब और रूह के अन्दर यह रोशनी मौजूद है कि इन्सान नेकी और बदी को खूब जानता है। अज़रूए अल्फ़ाज़े कुरानी (अश्शम्स):

“क़सम है नफ़्से इन्सानी की और जो उसे
सँवारा (दुरुस्त किया, उसकी नोक-पलक
सँवारी), फिर उसमें नेकी और बदी का इल्म
इल्हामी तौर पर रख दिया।”

وَنَفْسٍ وَمَا سَوَّاهَا ۚ فَأَلْهَمَهَا فُجُورَهَا
وَتَقْوَاهَا ۚ

हर इन्सान जानता है कि झूठ बोलना बुरा है, सच बोलना अच्छा है, वादा पूरा करना अच्छा है, वादा ख़िलाफ़ी बुरी बात है, पड़ोसी को सताना बहुत बुरी बात है जबकि पड़ोसी के साथ खुशखुलक़ी के साथ पेश आना इन्सानियत का तकाज़ा है। तो इन्फ़रादी सतह पर भी इन्सान सही और ग़लत, हक़ और बातिल में कुछ ना कुछ फ़र्क़ कर लेता है। लेकिन जब इज्जतमाई (सामाजिक) ज़िन्दगी का मामला आता है तो उसके लिये मजबूरी है कि वह नहीं समझ सकता कि ऐतदाल (मध्यम) का रास्ता कौनसा है। आइली (पारिवारिक) ज़िन्दगी में औरत का मक़ाम क्या होना चाहिये, औरत के हुक्क़ क्या होने चाहिये। चुनाँचे एक इन्तहा तो यह है कि दुनिया में औरत को मर्द की मिलकियत बना लिया गया। जैसे भेड़-बकरी किसी की मिलकियत है, ऐसे ही गोया बीवी भी खाविन्द की मिलकियत है, उसकी कोई हैसियत ही नहीं, उसके कोई हुक्क़ ही नहीं, उसका कोई लीगल स्टेटस ही नहीं, उसके कोई दस्तूरी हुक्क़ ही नहीं। वह ना किसी शय (चीज़) की मालिक हो सकती है, ना कोई कारोबार कर सकती है। और एक इन्तहा यह होती है कि कोई किल्योपत्रा (69-30 ई.पू. मिस्र की एक रानी) है जो किसी क्रौम की सरबराह बन कर बैठ जाये और फिर उसका बेड़ा गर्क़ कर दे, जैसा मिस्र का बेड़ा किल्योपत्रा ने गर्क़ किया। तो यह दो मुताज़ाद (विपरीत) इन्तहाएँ हैं।

आज हमें मगरिब में नज़र आ रहा है कि मर्दो-ज़न शाना-ब-शाना और बराबर हैं। इसका नतीजा क्या निकला? फैमिली लाइफ़ ख़त्म होकर रह गई। अब वहाँ सिर्फ़ One Parent Family है। बिल क्लिंटन ने नये साल पर अपनी क्रौम को जो पैग़ाम दिया था उसमें कहा था कि अनक़रीब (जल्द ही) हमारी अमेरिकी क्रौम की अज़ीम अक्सरियत हरामज़ादों पर मुश्तमिल होगी। (उसने अल्फ़ाज़ इस्तेमाल किये थे: Born without any wedlock)। हलालज़ादा और हरामज़ादा में यही तो फ़र्क़ है कि अगर माँ-बाप का निकाह हुआ है, शादी हुई है तो उनके मिलाप के नतीजे में पैदा होने वाला बच्चा उनकी हलाल और जायज़ औलाद है। लेकिन अगर एक मर्द और एक औरत ने बग़ैर निकाह के ताल्लुक़ कायम कर लिया है तो इस तरह बग़ैर किसी लीगल मैरिज के, बग़ैर किसी शादी के बन्धन के जो औलाद होगी वह हरामी है। बिल क्लिंटन को मालूम था कि उनके यहाँ अब जो बच्चे पैदा हो रहे हैं वो अक्सरो बेशतर बग़ैर किसी शादी के बन्धन के पैदा हो रहे हैं, लिहाज़ा उसने कहा कि अनक़रीब हमारी क्रौम की अक्सरियत हरामज़ादों पर मुश्तमिल होगी। एक कौम की कज रवी और perversion की इन्तहा यह है कि उन्होंने बुनियादी फ़ार्मों में से बाप का नाम ही निकाल दिया है। इसलिये कि बहुत से बच्चों को पता ही नहीं है कि हमारा बाप कौन है, वह तो अपनी माँ से वाकिफ़ हैं, बाप के बारे में उन्हें कुछ इल्म नहीं है।

इसी तरह सरमाया और मेहनत के दरमियान हुक्क़ व फ़राइज़ का तवाज़ुन (संतुलन) क्या हो, यहाँ भी इन्सान बेबस है। सरमायादार की अपनी मसलहतें (स्वार्थ) हैं और मज़दूर की अपनी मसलहतें (स्वार्थ) हैं। सरमायादार को अन्दाज़ा नहीं हो सकता कि मज़दूर पर क्या बीत रही है, वह किन मशक्क़तों में है। बक्रौल अल्लामा इक़बाल:

तू क़ादिर व आदिल है मगर तेरे ज़हान में
है तल्लू बहुत बन्दा-ए-मज़दूर के अवकात!

लिहाज़ा सरमाये के क्या हुक्क़ हैं और लेबर के क्या हुक्क़ हैं, इनमें तवाज़ुन क्या हो, यह किस तरह मुअय्यन (तय) होगा?

इसी तरह का मामला फ़र्द और मआशरे का है। एक तरफ़ इन्फ़रादी हुक्क़ और इन्फ़रादी आज़ादी है और दूसरी तरफ़ मआशरा, क्रौम और रियासत (state) है। किसके हुक्क़ ज़्यादा होंगे? एक फ़र्द कहता है मैं आज़ाद हूँ, मैं मादरज़ाद बराहना (बिल्कुल नंगा) होकर सड़क पर चलूँगा, तुम कौन हो मुझे

रोकने वाले? आया (क्या) उसे रोका जा सकता है कि नहीं? अगर उसे रोक दिया जाये तो उसकी आज्ञादी पर क्रदगन (प्रतिबन्ध) हो जायेगी। अगर उसे कहा जाये कि तुम इस तरह नहीं निकल सकते तो आज्ञादी तो नहीं रही, उसकी मादर-पीदर आज्ञादी तो खत्म हो जायेगी! लेकिन ज़ाहिर बात है कि एक रियासत और मआशरे के कुछ उसूल हैं, उसके कुछ अख़लाक़ियात हैं, कुछ क़वाइद व क़वानीन हैं। वह चाहती है कि उनकी पाबन्दी की जाये, और पाबन्दी कराने के लिये वह चाहती है कि उसके पास इख़्तियारात हों, ऑथोरिटी हो। दूसरी तरफ़ अवाम यह चाहते हैं कि हमारे हुक्म का सारा मामला हमारे अपने हाथ में होना चाहिये। अब इसमें ऐतदाल का रास्ता कौन सा है?

यह है वह उक्रदाये ला यन्हल (dilemma) जिसमें इन्सान के लिये इसके सिवा कोई और शक़ल नहीं है कि घुटने टेक कर अल्लाह से दुआ करे कि परवरदिगार! मैं इस मसले को हल नहीं कर सकता, मैं तुझसे रहनुमाई चाहता हूँ। तू मुझे हिदायत दे, सीधे रास्ते पर चला! मैंने तुझे पहचान लिया, मैंने यह भी जान लिया कि मरने के बाद जी उठना है और हिसाब किताब होगा और मुझे जवाबदेही करनी पड़ेगी, और मैं इस नतीजे पर भी पहुँच चुका हूँ कि तेरी ही बन्दगी करनी चाहिये, तेरी ही इताअत करनी चाहिये, तेरे ही हुक्म पर चलना चाहिये.... लेकिन इससे आगे मैं क्या करूँ क्या ना करूँ? क्या सही है क्या गलत है? क्या जायज़ है क्या नाजायज़ है? मेरा नफ्स तो मुझे अपनी मरगूब चीज़ों पर उकसाता है। लेकिन जिस चीज़ के लिये मेरे नफ्स ने मुझे उकसाया है वह जायज़ भी है या नहीं? सही भी है या नहीं? फ़ौरी री तौर पर तो मुझे इससे मुसरत (खुशी) हासिल हो रही, मुझे इससे लज़्ज़त हासिल हो रही है, मनफ़अत (फ़ायदा) पहुँच रही है, लेकिन मैं नहीं जानता कि आखिरकार नतीजे के ऐतबार से यह चीज़ मआशरे के लिये और खुद मेरे लिये नुक़सानदेह भी हो सकती है? ऐ अल्लाह! मैं नहीं जानता, तू मुझे हिदायत दे, मुझे रास्ता दिखा, सीधा रास्ता, दरम्यानी रास्ता, ऐसा रास्ता जो मुतवाज़िन हो, जिसमें इन्साफ़ हो, जिसमें अदल और क़िस्त हो, जिसमें किसी के हुक्म साक़ित ना हों और कोई जाबिर (हिंसक) बन कर मुसल्लत (लागू) ना हो जाये, जिसमें ना कोई हुज़्न (शोक) व मलाल और मायूसी व दरमान्दगी (depression) हो, ना कोई मआशी इस्तहसाल (आर्थिक शोषण) हो, ना कोई समाजी इम्तियाज़ (भेदभाव) हो। ऐ रब्ब! इन

तीनों चीज़ों से पाक एक सिराते मुस्तक़ीम में अपने ज़हन से तलाश नहीं कर सकता, मेरे फ़ैसले जो हैं गलत हो जाएँगे। तो मैं हाथ जोड़ कर अर्ज़ करता हूँ कि मुझे इस सीधे रास्ते की हिदायत बख़्श दे।

यूँ समझिये कि पसमंज़र में एक शख्स है जो अपनी सलामती-ए-तबअ, सलामती-ए-फ़ितरत और सलामती-ए-अक़ल की रहनुमाई में यहाँ तक पहुँच गया कि उसने अल्लाह को पहचान लिया, आखिरत को पहचान लिया, यह भी तय कर लिया कि रास्ता एक ही है और वह है अल्लाह की बन्दगी का रास्ता, लेकिन इसके बाद उसे एहतियाज (ज़रूरत) महसूस हो रही है कि मुझे बताया जाये कि अब मैं दायीं तरफ़ मुड़ूँ या बायीं तरफ़ मुड़ूँ? यह मुझे नहीं मालूम। क्रदम-क्रदम पर चौराहे आ रहे हैं, सैराहे आ रहे हैं। ज़ाहिर बात है इनमें से एक ही रास्ता होगा जो सीधा मंज़िले मक़सूद तक लेकर जायेगा। कहीं मैं गलत मोड़ मुड़ गया तो मेरा हाल इस शेर के मिस्दाक़ हो जायेगा:

रुस्तम कि ख़ार अज़ पाकशम महमुल निहाँ शद अज़ नज़र

यक लहज़ा गाफ़िल गुश्तम वसद साला राहम दूर शद!

एक छोटी सी गलती इन्सान को कहाँ से कहाँ ले जाती है। ज़ाहिर बात है कि सीधे रास्ते से आप ज़रा सा कज (टेढ़े) हो गये तो जितना आप आगे बढ़ेंगे इसी क्रदर उस सिराते मुस्तक़ीम से आपका फ़ासला बढ़ता चला जायेगा। आगाज़ में तो महज़ दस डिग्री का एंगल था, ज़्यादा फ़ासला नहीं था, लेकिन यह दस डिग्री का एंगल खुलता चला जायेगा और आप सिराते मुस्तक़ीम से दूर से दूर तर होते चले जाएँगे।

अल्लाह करे कि सूरतुल फ़ातिहा को पढ़ते हुए हम भी इसी मक़ाम पर खड़े हों कि हमारा दिल थका हुआ हो, हमें अल्लाह पर ईमान, अल्लाह की रबूबियत पर ईमान, अल्लाह की रहमानियत पर ईमान, अल्लाह के मालिकी यौमुदीन होने पर ईमान हासिल हो। यह भी हमारा अज़म (वृढ संकल्प) हो और हमारा तयशुदा फ़ैसला हो कि उसी की बन्दगी करनी है, और फिर उसके सामने दस्त सवाल दराज़ करें कि परवरदिगार हमें हिदायत अता फरमा!

सूरतुल फ़ातिहा के तीन हिस्से

इस सूरह मुबारका के असलूब के हवाले से अब मैं इसके मज़ामीन का तजज़िया आपके सामने रखता हूँ। इस सूरह मुबारका को आप तीन हिस्सों में तक़सीम कर सकते हैं। पहली तीन आयात में अल्लाह की हम्दो सना है,

आखरी तीन आयात में अल्लाह से दुआ है, जबकि दरमियान की चौथी आयत में बन्दे का अपने रब से एक अहद व पैमान है। यह गोया अल्लाह और बन्दे का एक Hand Shake है।

जुजवे अब्बल: पहली तीन आयात में इन्सान की तरफ से उन हक्काइक का इज़हार है जहाँ तक वह खुद पहुँच गया है। यह तीन आयतें मिल कर एक जुम्ला बनती हैं। ग्रामर के ऐतबार से भी यह बड़ी खूबसूरत तकसीम है। पहली तीन आयतों में (जो मिल कर एक जुम्ला बनती हैं) अल्लाह की हम्दो सना है।

“कुल शुक्र और कुल सना अल्लाह के लिये है जो तमाम जहानों का परवरदिगार और मालिक है। बहुत रहम फरमाने वाला, निहायत मेहरबान है, जज़ा और सज़ा के दिन का मालिक व मुख्तार है।”

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝
مَلِكِ يَوْمِ الدِّيْنِ ۝

{اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ} अल्हमदु मुब्तदा लिल्लाही खबर। “कुल तारीफ़ (कुल हम्दो सना और कुल शुक्र) अल्लाह के लिये है।” अब वह अल्लाह कौन है? {رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ} “जो तमाम जहानों का मालिक है (परवरदिगार है, परवरिश कुनिन्दाह [प्रदाता] है)।” {الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ} “जो रहमान और रहीम है।” अल्हमदुलिल्लाह में लाम हर्फे जर है लिहाज़ा ‘अल्लाह’ मजरूर है। इसके बाद आने वाले कलिमात रब्बिल आलामीन, अर्रहमानिर्रहीम और मालिकी यौम इद्दीन ‘अल्लाह’ का बदल होने के बाइस मजरूर हैं। यह गोया एक जुम्ला चला आ रहा है: कुल हम्द, कुल सना, कुल शुक्र उस अल्लाह के लिये है जो तमाम जहानों का मालिक है, मुख्तार है, आक्रा है, परवरदिगार है, रहमान है और रहीम है।

नोट कर लीजिये कि आयत बिस्मिल्लाह में भी अल्लाह तआला के नाम के साथ यह दोनों सिफाती नाम “अर्रहमान अर्रहीम” आये हैं। बल्कि दोनों जगह अल्लाह के लिये तीन नाम हैं। सबसे पहला नाम “अल्लाह” है। इसे कहा जाता है कि यह अल्लाह तआला का इस्मे ज्ञात है। अगरचे मैं इसका क्रायल नहीं हूँ। यह भी एक सिफाती नाम है। “इलाह” पर “अल” दाखिल होकर “अल्लाह” बन गया। लेकिन बहरहाल “अल्लाह” का नाम बड़ी अहमियत का हामिल है और अरब में सबसे ज़्यादा मारुफ़ यही नाम था। जब कुरान ने रहमान का तज़क़िरा करना शुरू किया तो वह हैरान हुए और कहने लगे कि

यह रहमान क्या होता है? (مَا الرَّحْمٰنُ) तब यह कहा गया: (बनी इसराइल:110)

“*(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कह दो कि उसे अल्लाह कह कर पुकार लो या रहमान कह कर पुकार लो, जो कह कर भी पुकारोगे तो तमाम अच्छे नाम उसी के हैं।*”

قُلْ اَدْعُوا اللّٰهَ وَاَدْعُوا الرَّحْمٰنَ ۚ اَيَّامًا
تَدْعُوْا فَلَهُ الْاَسْمَاءُ الْحُسْنٰى

यह तमाम सिफाते कमाल उसी की ज्ञात में मौजूद हैं। (Call the rose by any name it will smell as sweet.)

इस्म “अल्लाह” के तीन मायने हैं। तफ़सील से सर्फे नज़र करते हुए अर्ज़ कर रहा हूँ कि अवाम के नज़दीक अल्लाह से मुराद हाजत रवा है, जिसकी तरफ इन्सान तकलीफ़ और मुसीबत में, मुश्किलात में, रिज़क के लिये और अपनी दीगर हाजात के लिये रुजूअ करता है। “अल्लाह” का एक और मफ़हूम ये है कि वह हस्ती जो इन्सान को सबसे ज़्यादा महबूब हो {وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا اَشَدُّ حُبًّا لِّلّٰهِ} यह सूफ़िया किराम का तसव्वुर है। और एक है फ़लसफ़े का तसव्वुर कि “अल्लाह” वह हस्ती है जिसकी किना (वजूद) से कोई वाक़िफ़ नहीं हो सकता, उसके बारे में ग़ौरो फ़िक़र से सिवाय तहय्यर (आश्चर्यजनक) के और कुछ हासिल नहीं हो सकता। तो इस माद्दे “अलिफ़ लाम हा” या “वाव लाम हा” के अन्दर तीन मायने हैं- 1) वह हस्ती कि जिसकी तरफ अपनी तकलीफ़ व मुसीबत के रफ़ा करने के लिये और अपनी ज़रूरियात पूरी कराने के लिये रुजूअ किया जाये। 2) वह हस्ती जिससे इन्तहाई मोहब्बत हो। 3) जिसकी हस्ती का इदराक (अहसास) मुमकिन नहीं, जिसकी किना (वजूद) हमारे फ़हम और हमारे तसव्वुर से मा वरा, वराउल वरा, सुम्मा वराउल वरा (high, higher, highest) है।

{الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ} रहमत के माद्दे से यह अल्लाह के दो अस्मा हैं। इना दोनों में फ़र्क़ क्या है? فَعَلَانِ, رَحْمٰن के वज़न पर मुबालगे का सीगा है, चुनाँचे इसके अन्दर मुबालगे की कैफ़ियत है, यानि इन्तहाई रहम करने वाला। इसलिये कि अरब जो इस वज़न पर कोई लफ़ज़ लाते हैं तो मालूम होता है कि उसमें निहायत शिद्दत है। मसलन غَضَبَان “गुस्से में लाल भभूका शख़्स।” सूरतुल आराफ़ में हज़रत मूसा अलै० के लिये अल्फ़ाज़ आये हैं {غَضَبَانَ اَسِفًا} “गुस्से और

रन्ज में भरा हुआ।" अरब कहेगा: **إِنَّا عَظَّمْنَا**: मैं प्यास से मरा जा रहा हूँ। **إِنَّا جَوَعْنَا**: मैं भूक से मरा जा रहा हूँ। तो रहमान वह हस्ती है जिसकी रहमत ठाठे मारते हुए समुन्दर की मानिन्द है।

और **فَوَيْلٌ** के वज़न पर सिफ़ते मुशब्बा है। जब कोई सिफ़त किसी की ज़ात में मुस्तक़िल और दाइम हो जाये तो वह फ़ईल के वज़न पर आती है। अर्रहमानिर्हीम दोनो सिफ़ात इकट्ठी होने का मायना यह है कि उसकी रहमत ठाठे मारते हुए समुन्दर की मानिन्द भी है और उसकी रहमत में दवाम भी है, वह एक दरिया की तरह मुस्तक़िल रवां-दवां है। अल्लाह तआला की रहमत की यह दोनों शानें ब-यक वक़्त मौजूद हैं। हम इसका कुछ अन्दाज़ा एक मिसाल से कर सकते हैं। फ़र्ज़ कीजिये कहीं कोई एक्सीडेंट हुआ हो और वहाँ आप देखें कि कोई ख़ातून बेचारी मर गयी है और उसका दूध पीता बच्चा उसकी छाती के साथ चिमटा हुआ है। यह भी पता नहीं है कि वह कौन है, कहाँ से आयी है, कोई उसके साथ नहीं है। इस कैफ़ियत को देख कर हर शख्स का दिल पसीज जायेगा और हर वह शख्स जिसकी तबियत के अन्दर नेकी का कुछ माद्दा है, चाहेगा कि इस लावारिस बच्चे की कफ़ालत और इसकी परवरिश की ज़िम्मेदारी में उठा लूँ। लेकिन हो सकता है कि जज़्बात के जोश में आप यह काम तो कर जायें लेकिन कुछ दिनों के बाद आपको पछतावा लाहक़ हो जाये कि मैं ख़ाम्हा ख़्वाह यह ज़िम्मेदारी ले बैठा और मैंने एक बोझ अपने ऊपर नाहक़ तारी कर लिया। चुनाँचे हमारे अन्दर रहम का जो जज़्बा उभरता है वह जल्द ही ख़त्म हो जाता है, वह मुस्तक़िल और दाइम नहीं है, जबकि अल्लाह की रहमत में जोश भी है और दवाम भी है, दोनों चीज़ें ब-यक वक़्त मौजूद हैं।

{**مَلِكِ يَوْمِ الدِّينِ**} "वह जज़ा और सज़ा के दिन का मालिक है।" वह मुख़्तारे मुतलक़ है। क़यामत के दिन इन्सानों के आमाल के मुताबिक़ जज़ा और सज़ा के फ़ैसले होंगे। किसी की वहाँ कोई सिफ़ारिश नहीं चलेगी, किसी का वहाँ ज़ोर नहीं चलेगा, कोई दे दिला कर छूट नहीं सकेगा, किसी को कहीं से मुतलक़न कोई मदद नहीं मिलेगी। उस रोज़ कहा जायेगा: {**لَنْ يَنْفَعَكَ الْيَوْمَ**} "आज किसके हाथ में इख़्तियार और बादशाही है?" {**اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ**} "उस अल्लाह के हाथ में है जो अकेला है और पूरी क़ायनात पर छाया हुआ है।" अब देखिये ग्रामर की रू से यह एक जुम्ला मुक़म्मल हुआ:

"कुल हम्द व सना और शुक्र उस अल्लाह के लिये है जो तमाम ज़हानों का परवरदिगार और मालिक है, जो रहमान है, रहीम है, और जो जज़ा व सज़ा के दिन का मालिक और मुख़्तारे मुतलक़ है।"

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝
مَلِكِ يَوْمِ الدِّينِ ۝

जुज़वे सानी: सूरतुल फ़ातिहा का दूसरा हिस्सा सिर्फ़ एक आयत पर मुश्तमिल है, जो हर ऐतबार से इस सूरत की मरकज़ी आयत है:

"हम सिर्फ़ तेरी ही बन्दगी करते हैं और करते रहेंगे और हम सिर्फ़ तुझ ही से मदद चाहते हैं और चाहते रहेंगे।"

اِيَّاكَ نَعْبُدُ وَاِيَّاكَ نَسْتَعِيْنُ ۝

ज़मीर मुख़ातिब **"اِيَّاكَ"** को मुक़द्दम करने से हथ्र का मफ़हूम पैदा होता है। फिर अरबी में फ़अल मुज़ारेअ, ज़माना-ए-हाल और मुस्तक़बिल दोनों के लिये आता है, लिहाज़ा मैंने तर्जुमे में इन बातों का लिहाज़ रखा है। यह बन्दे का अपने परवरदिगार से अहद व पैमान है जिसे मैंने hand shake से ताअबीर किया है। इसका सही तसव्वुर एक हदीस कुदसी की रोशनी में सामने आता है, जिसे मैं बाद में पेश करूँगा। यहाँ समझने का असल नुक्ता यह है कि यह फ़ैसला कर लेना तो आसान है कि ऐ अल्लाह! मैं तेरी ही बन्दगी करूँगा, लेकिन इस फ़ैसले को निभाना बहुत मुश्किल है।

यह शहादत ग़हे उलफ़त में क़दम रखना है

लोग आसान समझते हैं मुस्लमान होना!

अल्लाह की बन्दगी के जो तक्राज़े हैं उनको पूरा करना आसान नहीं है, लिहाज़ा बन्दगी का अहद करने के फ़ौरन बाद अल्लाह की पनाह में आना है कि ऐ अल्लाह! मैं इस ज़िम्न में तेरी ही मदद चाहता हूँ। फ़ैसला तो मैंने कर लिया है कि तेरी ही बन्दगी करूँगा और इसका वादा कर रहा हूँ, लेकिन इस पर कारबन्द रहने के लिये मुझे तेरी मदद दरकार है। चुनाँचे रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के अज़कारे मासूरह में हर नमाज़ के बाद आप صلی اللہ علیہ وسلم का एक ज़िक़र यह भी है: {**رَبِّ اَعِيْزٍ عَلٰی ذِكْرِكَ وَشُكْرِكَ وَحُسْنِ عِبَادَتِكَ**}}⁽⁶⁾ "परवरदिगार! मेरी मदद फरमा कि मैं तुझे याद रख सकूँ, तेरा शुक्र अदा कर सकूँ और तेरी बन्दगी आहसन तरीक़े से बजा लाऊँ।" तेरी मदद के बग़ैर मैं यह नहीं कर सकूँगा।

{إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ} जब भी आप इस आयत को पढ़ें तो आपके ऊपर एक खास कैफ़ियत तारी होनी चाहिये कि पहले कंपकपी तारी हो जाये कि ऐ अल्लाह! मैं तेरी बन्दगी का वादा तो कर रहा हूँ, मैंने इरादा तो कर लिया है कि तेरा बन्दा बन कर ज़िन्दगी गुज़ारूँगा, मैं तेरी जनाब में इसका इक्करा कर रहा हूँ, लेकिन ऐ अल्लाह! मैं तेरी मदद का मोहताज हूँ, तेरी तरफ़ से तौफ़ीक़ होगी, तैसीर (सुविधा) होगी, तआवुन (सहयोग) होगा, नुसरत (मदद) होगी तब ही मैं यह अहदो पैमान पूरा कर सकूँगा, वरना नहीं।

{إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ} आयत एक है लेकिन जुम्ले दो हैं। “إِيَّاكَ نَعْبُدُ” मुकम्मल जुम्ला है, जुम्ला फ़अलिया इन्शाइया और “إِيَّاكَ نَسْتَعِينُ” दूसरा जुम्ला है। बीच में हर्फ़ अतफ़ वाव है। इससे पहले इस सूरह मुबारका में कोई हर्फ़ अतफ़ नहीं आया है। इसलिये कि अल्लाह तआला की सारी सिफ़ात उसकी ज़ात में ब-यक वक़्त मौजूद हैं। यहाँ हर्फ़ अतफ़ आ गया: “ऐ अल्लाह! हम तेरी ही बन्दगी करते हैं और करते रहेंगे” और “तुझ ही से मदद माँगते हैं और माँगते रहेंगे।” हमारा सारा दारोमदार और तबक्कुल तुझ ही पर है। हम तेरी मदद ही के सहारे पर इतनी बड़ी बात कह रहे हैं कि ऐ अल्लाह! हम तेरी ही बन्दगी करते रहेंगे।

हम नमाज़े वितर में जो दुआ-ए-कुनूत पढ़ते हैं कभी आपने उसके मफ़हूम पर भी गौर किया है? उसमें हम अल्लाह तआला के हुज़ूर बहुत बड़ा इक्करा करते हैं:

اللَّهُمَّ إِنَّا نَسْتَعِينُكَ وَنَسْتَغْفِرُكَ وَنُؤْمِنُ بِكَ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْكَ وَنُثِقُّ عَلَيْكَ الْحُجْرَ وَنَشْكُرُكَ وَلَا نَكْفُرُكَ وَنُخْلَعُ مِنْ يَفْجُرِكَ اللَّهُمَّ إِنَّا نَعْبُدُ وَلَكَ نُصَلِّي وَنَسْجُدُ وَإِلَيْكَ نَسْعَى وَنُخْفِدُ وَنَرْجُو أَرْحَمَتِكَ وَنَخْشَى عَذَابَكَ إِنَّ عَذَابَكَ بِالْكَفَّارِ مُلْحِكٌ

“ऐ अल्लाह! हम तुझ ही से मदद चाहते हैं, और तुझ ही से अपने गुनाहों की मग़फ़िरत तलब करते हैं, और हम तुझ पर ईमान रखते हैं, और तुझ पर तबक्कुल करते हैं, और तेरी तारीफ़ करते हैं, और तेरा शुक्र अदा करते हैं और तेरी नाशुक्री नहीं करते। और हम अलैहदा (अलग) कर देते हैं और छोड़ देते हैं हर उस शख्स को जो तेरी नाफ़रमानी करे। ऐ अल्लाह! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तेरे ही लिये नमाज़ पढ़ते हैं और सज्दा करते हैं, और हम तेरी तरफ़ कोशिश करते हैं और हम हाज़िरी देते हैं। और हम तेरी रहमत के

उम्मीदवार हैं और तेरे अज़ाब से डरते हैं, बेशक तेरा अज़ाब काफ़िरो को पहुँचने वाला है।”

वाक़िया यह है कि इस दुआ को पढ़ते हुए लरज़ा तारी (खौफ़) होता है कि कितनी बड़ी-बड़ी बातें हम अपनी जुबान से निकाल रहे हैं। हम जुबान से तो कहते हैं कि “ऐ अल्लाह! हम सिर्फ़ तेरी ही मदद चाहते हैं” लेकिन ना मालूम किस-किस के सामने हाथ फैलाते हैं और किस-किस के सामने जबीं सायी करते (सर झुकाते) हैं, किस-किस के सामने अपनी इज़्ज़त-ए-नफ़्स का धैला करते हैं। फिर यह अल्फ़ाज़ देखिये: وَنَخْلَعُ وَنُكْفِرُكَ مِنْ يَفْجُرِكَ कि जो भी तेरी नाफ़रमानी करे उसे हम अलैहदा कर देते हैं, उसको हम छोड़ देते हैं, उससे तर्क ताल्लुक़ कर लेते हैं। लेकिन क्या वाक़िअतन हम किसी से तर्क ताल्लुक़ करते हैं? हम कहते हैं दोस्ती है, रिश्तेदारी है क्या करें, वह अपना अमल जाने मैं अपना अमल जानूँ। हमारा तर्जें अमल तो यह है। तो कितना बड़ा दावा है इस दुआ के अन्दर? और वह पूरा दावा इस एक जुम्ले में मुज़मर है: {إِيَّاكَ نَعْبُدُ} “परवरदिगार! हम तेरी ही बन्दगी करते हैं और करते रहेंगे।” चुनाँचे उस वक़्त फ़ौरी तौर पर बन्दे के सामने यह कैफ़ियत आ जानी चाहिये कि ऐ अल्लाह मैं यह उसी सूरत में कर सकूँगा अगर तेरी मदद शामिले हाल रहे।

जुज़वे सालिस: सूरतुल फ़ातिहा का तीसरा हिस्सा तीन आयात पर मुश्तमिल है, ताहम (हालाँकि) यह एक ही जुम्ला बनता है।

“(ऐ रब हमारे!) हमें हिदायत बख़्श सीधी राह की। राह उन लोगों की जिन पर तेरा ईनाम हुआ, जो ना तो मग़ज़ूब हुए और ना गुमराह।”

إِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ۝ صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ ۚ غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ ۝ (अमीन)

अब देखिये यह {إِيَّاكَ نَسْتَعِينُ} ही की तशरीह है जो आख़री तीन आयतों में है। हमें अल्लाह से क्या मदद चाहिये? पैसा चाहिये? दौलत चाहिये? नहीं नहीं! ऐ अल्लाह हमें यह नहीं चाहिये। फिर क्या चाहिये? {إِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ} “हमें सीधे रास्ते की हिदायत अता फ़रमा।” यह जो ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ मामलात में दोराहे, सेराहे और चौराहे आ जाते हैं, वहाँ हम फ़ैसला नहीं कर सकते कि सही क्या है, ग़लत क्या है। लिहाज़ा ऐ अल्लाह! हमें सीधे रास्ते की तरफ़ हिदायत बख़्श। “إِهْدِ” हिदायत से फ़अले अम्र है कि हमें हिदायत दे।

हिदायत का एक दर्जा यह भी है कि सीधा रास्ता बता दिया जाये। हिदायत का दूसरा दर्जा यह है कि सीधा रास्ता दिखा दिया जाये, और हिदायत का आखरी मरतबा यह है कि उँगली पकड़ कर सीधे रास्ते पर चलाया जाये, जैसे बच्चों को लेकर आते हैं। लिहाज़ा सीधे रास्ते की हिदायत की दुआ में यह सारे मफ़हूम शामिल होंगे। ऐ अल्लाह! हमें सीधा रास्ता दिखा दे। ऐ अल्लाह! इस सीधे रास्ते के लिये हमारे सीनों को खोल दे। **اللَّهُمَّ نَوِّرْ قُلُوبَنَا بِالْإِيمَانِ وَالشَّرْحِ صُدُورَنَا** “ऐ अल्लाह! हमारे दिलों को ईमान की रोशनी से मुनव्वर कर दे और हमारे सीनों को इस्लाम के लिये खोल दे।” हमें उस पर इन्शराह-ए-सद्र (खुले दिल) हो जाये। और फिर यह कि हमें उस सीधे रास्ते के ऊपर चला।

अब आगे इस सिराते मुस्तक़ीम की भी वज़ाहत है, और यह वज़ाहत दो तरह से है। सिराते मुस्तक़ीम की वज़ाहत एक मुसबत अन्दाज़ में और एक मन्फ़ी अन्दाज़ में की गयी है। मुसबत अन्दाज़ यह है कि

“(ऐ अल्लाह!) उन लोगों के रास्ते पर (हमें चला) जिन पर तूने अपना ईनाम नाज़िल फ़रमाया।” **صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ**

यह मज़मून जाकर सूरतुन्निसा में खुलेगा कि मुनअम अलैहिम चार गिरोह हैं:

“कि वह नबी, सिद्दीक़ीन, शुहादा और सालेहीन हैं। और बहुत ही ख़ूब है उनकी रफ़ाक़त।” **مِنَ النَّبِيِّينَ وَالصِّدِّيقِينَ وَالشُّهَدَاءِ وَالصَّالِحِينَ وَحَسُنَ أُولَئِكَ رَفِيقًا**

ऐ अल्लाह! उनके रास्ते पर हमें चला। यह तो मुसबत बात हो गयी। मन्फ़ी अन्दाज़ यह इख़्तियार फ़रमाया:

“ना उन पर तेरा ग़ज़ब नाज़िल हुआ और ना ही वह गुमराह हुए।” **غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ**

जो लोग सिराते मुस्तक़ीम से भटक गये वो दो क्रिस्म के हैं। उनमें फ़र्क़ यह है कि जो शरारते नफ्स की वजह से गलत रास्ते पर चलता है उस पर अल्लाह का ग़ज़ब नाज़िल होता है, और जिसकी नीयत तो गलत नहीं होती, लेकिन वो गुलू (ज़रूरत से ज़्यादा मोहब्बत) करके ज़बात में आकर कोई गलत रास्ता इख़्तियार कर लेता है तो वह **ضَالٌّ** (गुमराह) है। चुनाँचे “**مَغْضُوبٌ عَلَيْهِمْ**” की सबसे बड़ी मिसाल यहूद हैं कि अल्लाह की किताब उनके पास थी,

शरीअत मौजूद थी, लेकिन शरारते नफ्स और तकब्वुर की वजह से वह ग़लत रास्ते पर चल पड़े। जबकि नसारा “**مُتَالِّينَ**” हैं, उन्होंने हज़रत मसीह अलै० के बारे में सिर्फ़ गुलू किया है। जैसे हमारे यहाँ भी बाज़ नात गौ और नात ख्वा नबी करीम **صلی اللہ علیہ وسلم** की शान बयान करते हैं तो मुबालगा आराई (ज़रूरत से ज़्यादा मोहब्बत) करते हुए कभी उन्हें अल्लाह से भी ऊपर ले जाते हैं। यह गुलू होता है, लेकिन होता है नेक नीयत से, मोहब्बत से। चुनाँचे नसारा ने हुब्बे रसूल में गुलू से काम लेते हुए हज़रत ईसा अलै० को खुदा का बेटा बना दिया। हमारे शिया भाईयों में से भी बाज़ लोग हैं जो हज़रत अली रजि० को ही खुदा बना बैठे हैं। मसलन,

“लेकिन नहीं है ज़ाते खुदा से जुदा अली!”

बहरहाल यह गुलू होता है जो इन्सानों को गुमराह कर देता है। इसी लिये कुरान में कहा गया है: (अल् मायदा:77)

“ऐ किताब वालों! अपने दीन में नाहक़ गुलू से **قُلْ يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فِي دِينِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ** काम ना लो।”

लेकिन नसारा ने अपने दीन में और हज़रत ईसा अलै० की मोहब्बत में गुलू से काम लिया तो वह गुमराह हो गये। तो ऐ अल्लाह! इन सबके रास्ते से हमें बचा कर सीधे रास्ते पर चला, जो सिद्दीक़ीन का, अंबिया का, शुहादा का और सालेहीन का रास्ता है।

हदीसे कुदसी

आखिर में वह हदीसे कुदसी पेश कर रहा हूँ जिसमें सूरतुल फ़ातिहा ही को अस-सलाह (नमाज़) क़रार दिया गया है। यह मुस्लिम शरीफ़ की रिवायत है और हज़रत अबु हुरैरा रजि० इसके रावी है। वह बयान करते हैं कि मैंने रसूल अल्लाह **صلی اللہ علیہ وسلم** को यह इरशाद फ़रमाते हुए सुना कि अल्लाह तआला फ़रमाता है:

«قَسَمْتُ الصَّلَاةَ بَيْنِي وَبَيْنَ عَبْدِي نَضْفَيْنِ وَلِعَبْدِي مَا سَأَلَ، فَإِذَا قَالَ الْعَبْدُ (أَلْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ) قَالَ اللَّهُ تَعَالَى: حَمْدِي عَبْدِي، وَإِذَا قَالَ (الرَّحْمَنِ الرَّحِيمِ) قَالَ اللَّهُ تَعَالَى: أَثْنَى عَلَيَّ عَبْدِي، وَإِذَا قَالَ (مَلِكِ يَوْمِ الدِّينِ) قَالَ حَمْدِي عَبْدِي. وَقَالَ مَرَّةً: فَوَضَّ إِلَى

عَبْدِي. فَإِذَا قَالَ (إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ) قَالَ هَذَا بَيْنِي وَبَيْنَ عَبْدِي وَلِعَبْدِي مَا سَأَلَ فَإِذَا قَالَ (هُدَيْنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ صِرَاطَ الَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّالِّينَ) قَالَ هَذَا الْعَبْدِي وَلِعَبْدِي مَا سَأَلَ

“मैंने नमाज़ को अपने और अपने बन्दे के दरमियान दो बराबर हिस्सों में तक्रसीम कर दिया है (इसका निस्फ हिस्सा मेरे लिये और निस्फ हिस्सा मेरे बन्दे के लिये है) और मेरे बन्दे को वह अता किया गया जो उसने तलब किया। जब बन्दा कहता है: “अल्हमदुलिल्लाही रब्बिल आलामीन” तो अल्लाह फ़रमाता है कि मेरे बन्दे ने मेरी हम्द की (मेरा शुक्र अदा किया)। जब बन्दा कहता है: “अर्हमानिर्हीम” तो अल्लाह फ़रमाता है कि मेरे बन्दे ने मेरी सना की। जब बन्दा कहता है: “मालिकी यौमइद्दीन” तो अल्लाह फ़रमाता है कि मेरे बन्दे ने मेरी बुजुर्गी और बड़ाई बयान की-- और एक मर्तबा आप ﷺ ने यह भी फ़रमाया “मेरे बन्दे ने अपने आप को मेरे सुपुर्द कर दिया— (गोया यह पहला हिस्सा कुल का कुल अल्लाह के लिये है।) फिर जब बन्दा कहता है कि “इय्याका नाअबुदु व इय्याका नस्तईन” तो अल्लाह तआला फ़रमाता है कि यह हिस्सा मेरे और मेरे बन्दे के माबैन (बीच) मुशतरिक (साझा) है और मैंने अपने बन्दे को बख़्शा जो उसने माँगा। (गोया यह हिस्सा एक क़ौल व क़रार और अहद व मीसाक़ [घोषणापत्र] है। इसे मैंने कहा था कि यह अल्लाह और बन्दे के दरमियान Shake Hand है।) फिर जब बन्दा कहता है: “इहदी नस्सिरातल मुस्तक़ीम, सिरातल्लाज़ीना अन’अमता अलैहिम, गयरिल मग़दूबी अलैहिम वलद्वाल्लीन” तो अल्लाह फ़रमाता है कि यह हिस्सा (कुल का कुल) मेरे बन्दे के लिये है और मेरे बन्दे ने जो कुछ मुझसे तलब किया वह मैंने उसे बख़्शा।”¹⁷

इस हदीस की रू से सूरतुल फ़ातिहा के तीन हिस्से बन जाएँगे। पहला हिस्सा कुल्लियतन अल्लाह के लिये है और आखरी हिस्सा कुल्लियतन बन्दे के लिये, जबकि दरमियानी व मरकज़ी आयत: “إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ” बन्दे और अल्लाह के माबैन (बीच) क़ौल व क़रार है। गोया इसका भी निस्फे अब्बल अल्लाह के लिये और निस्फे सानी बन्दे के लिये है। इसी तरह निस्फ-निस्फ की तक्रसीम ब-तमाम व कमाल पूरी हो गयी!

एक बात यह भी नोट कर लीजिये कि इस हदीसे कुदसी में “قَسَبْتُ الصَّلَاةَ بَيْنِي وَبَيْنَ عَبْدِي نَضْفَتَيْنِ” के बाद आयत “बिस्मिल्लाह” का ज़िक्र नहीं है, बल्कि “الْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ” से बात बराहे रास्त आगे बढ़ती है। इससे यह साबित हुआ कि इस ज़िम्न में इमाम अबु हनीफ़ा रहि० का मौक़फ़ दुरुस्त है कि आयत बिस्मिल्लाह सूरतुल फ़ातिहा का जुज़ नहीं है।

इस सूरह मुबारका के इख़तताम पर “आमीन” कहना मसनून है। “आमीन” के मायने हैं “ऐ अल्लाह ऐसा ही हो!” इस सूरह मुबारका का असलूब चूँकि दुआइया है, लिहाज़ा दुआ के इख़तताम पर “आमीन” कह कर बन्दा गोया फिर बारगाहे इलाही में अर्ज़ करता है कि ऐ परवरदिगार! मैंने यह अर्ज़राशत (घोषणा) तेरे हुज़ूर पेश की है, तू इसे शर्फ़े कुबूल अता फरमा।

بَارِكْ اللَّهُ لِكُلِّكُمْ فِي الْقُرْآنِ الْعَظِيمِ وَنَفَعْنِي وَإِيَّاكُمْ بِالْآيَاتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيمِ.



सूरतुल बक्ररह

तम्हीदी कलिमात

कुरान हकीम की पहली सूरत सूरतुल फ़ातिहा है, जिसका मतअला हम कर चुके हैं। यह बात आपके सामने आ चुकी है कि यह वह पहली सूरत है जो रसूल अल्लाह ﷺ पर पूरी की पूरी नाज़िल हुई। इससे पहले सिर्फ़ मुतफर्रिक (विभिन्न) आयात नाज़िल हुई थीं। यानि सूरतुल अलक़, सूरतुल क़लम, सूरतुल मुज़म्मिल और सूरतुल मुदस्सिर की इब्तदाई (शुरुआती) आयात।

यह बात भी आपके सामने आ चुकी है कि कुरान हकीम में मक्की और मदनी सूरतों के मजमुओं (जोड़ों) के ऐतबार से भी सात ग्रुप हैं। पहला ग्रुप वह है जिसका हम सूरतुल फ़ातिहा से आगाज़ कर चुके हैं। इस ग्रुप में जो मक्की सूरत है वह सिर्फ़ सूरतुल फ़ातिहा है। यह हुजूम (मात्रा) के ऐतबार से बहुत छोटी लेकिन अपने मक़ाम व मरतबा और फज़ीलत के ऐतबार से बहुत बड़ी है, यहाँ तक कि इसे “अल-कुरानुल अज़ीम” भी कहा गया है। गोया यह अपनी जगह पर खुद एक अज़ीम कुरान है। इसके बाद मदनी सूरतें चार हैं। यह तबील तरीन मदनी सूरतें हैं और दो-दो सूरतों के दो जोड़ों पर मुश्तमिल हैं। मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि कुरान हकीम की अक्सर सूरतें जोड़ों की शक़ल में हैं, जबकि कुछ मुन्फ़रिद (अकेली) भी हैं। सूरतुल फ़ातिहा मुन्फ़रिद है, उसका कोई जोड़ा नहीं है, अगरचे उसकी मानवी मुनासबत कुरान मजीद की आखरी सूरत सूरतुल नाज़िम के साथ जोड़ी जाती है, लेकिन बहरहाल उसका जोड़ा सूरतुल फ़लक़ है। **قُلْ أَعُوذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ** और **قُلْ أَعُوذُ بِرَبِّ النَّاسِ** दोनों सूरतों पर मुश्तमिल एक जोड़ा है, लिहाज़ा सूरतुल फ़ातिहा का कोई जोड़ा नहीं है, या हम यह कह सकते हैं कि पूरा कुरआन ही उसका जोड़ा है।

सूरतुल फ़ातिहा के बाद जो चार सूरतें हैं यह जोड़ों की शक़ल में हैं। सूरतुल बक्ररह और सूरह आले इमरान एक जोड़ा है जबकि सूरतुल निसा और सूरतुल मायदा दूसरा जोड़ा है। इसकी सबसे नुमाया अलामत यह है कि सूरतुल बक्ररह और सूरह आले इमरान दोनों का आगाज़ हर्फ़े मुक़त्ताअत “अल्ह”

से होता है, जबकि सूरतुल निसा और सूरतुल मायदा दोनों में बग़ैर किसी तम्हीद के गुफ्तुगू शुरू हो जाती है। सूरतुल निसा का आगाज़ होता है: **{يَا أَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ}** और सूरतुल मायदा शुरू होती है: **{يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَوْفُوا بِالْعُقُودِ}**। पहले कोई तम्हीदी बात नहीं की गयी।

सूरतुल बक्ररह और सूरह आले इमरान का यह जो जोड़ा है, इन दोनों को रसूल अल्लाह ﷺ ने “अज़्ज़हरावैन” का नाम अता फरमाया है। “ज़हरा” का मतलब है बहुत ताबनाक, रोशन। यह लफ़्ज़ हज़रत फ़ातिमा रज़ि० के नाम का जुज़ (हिस्सा) बन चुका है और उन्हें फ़ातिमातुज़्ज़हरा कहा जाता है। रसूल अल्लाह ﷺ की लख्ते जिगर, नूरे चश्म हज़रत फ़ातिमा बहुत ही रोशन चेहरे वाली ख़ातून थीं। हज़ूर ﷺ के अल्फ़ाज़ के मुताबिक़ सूरतुल बक्ररह और सूरह आले इमरान “अज़्ज़हरावैन” यानि दो इन्तहाई ताबनाक और रोशन सूरतें हैं। इसी तरह कुरान मजीद की आखरी दो सूरतों को “मुअव्वज़ातैन” का नाम दिया गया है।

पहले ग्रुप की इन मदनी सूरतों के मज़ामीन के बारे में जान लीजिये कि दो मज़मून हैं जो इनमें मुतवाज़ी (समानांतर) चलते हैं। पहला मज़मून शरीअते इस्लामी का है। इसलिये कि इससे पहले तक्रीबन दो तिहाई कुरान नाज़िल हो चुका है। सूरतुल बक्ररह पहली मदनी सूरत है, इससे पहले ज़मानी ऐतबार से पूरा मक्की कुरान नाज़िल हो चुका था, अगरचे तरतीब में वह बाद में आयेगा। उसमें शरीअत के अहक़ाम नहीं थे। लिहाज़ा अब जबकि मदीना में मुस्लमानों का एक आज़ाद मआशरा क़ायम हो गया, या यूँ कह लीजिये कि मुस्लमानों की एक छोटी सी हुकूमत क़ायम हो गयी, जहाँ अपने क़वाइद, अपने क़वानीन, अपने उसूलों के मुताबिक़ सारे मामलात तय किये जा सकते थे, तब शरीअत का नुज़ूल शुरू हुआ। सूरतुल बक्ररह में यूँ समझिये कि अहक़ामे शरीअत की इब्तदा होती है। कोई भी तामीर करनी हो तो पहले उसका इब्तदाई ख़ाका बनता है, उसके बाद उसके तफ़सीली नक्शे बनते हैं। तो इब्तदाई ख़ाका जो है शरीअते मुहम्मदी अला सहाबाहुस्सलातु वस्सलाम का वह सूरतुल बक्ररह में है। फिर सूरतुल निसा में इसके अन्दर मज़ीद इज़ाफ़ा होता है, और सूरतुल मायदा में शरीअत के तकमीली अहक़ाम आते हैं। चुनाँचे सूरतुल मायदा तकमीले शरीअत की सूरत है। इसी में वह आयत है (आयत:3): **{الْيَوْمَ اكْمَلْتُ لَكُمْ دِينَكُمْ وَأَتِمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِي وَرَضِيْتُ لَكُمُ الْإِسْلَامَ دِينًا}**।

दूसरा मज़मून जो इन सूरतों में चलता है वह है अहले किताब से खिताब। मक्की कुरान में सारा खिताब मुशरिकीन से था, यानि अरब के वो लोग जो मक्का में और उसके इर्द-गिर्द आबाद थे। वहाँ कोई यहूदी या कोई नसरानी नहीं था, सब के सब मुशरिकीने अरब थे। तो पूरे मक्की कुरान में उन्हीं से रहो क़दाह है, गुफ्तुगू है, बहस व नज़ाअ है, उनके ऐतराज़ात के जवाबात हैं और उन पर इत्मा मे हुज्जत किया गया है। अगरचे अहले किताब का तज़किरा हवाले के तौर पर मौजूद है, हज़रत मूसा और हज़रत ईसा अलै० का ज़िक्र मौजूद है, लेकिन बनी इसराइल से, यहूदियों से, या नसारा से कोई खिताब नहीं हुआ। उनसे खिताब मदीना में आकर शुरू हुआ है, क्योंकि वहाँ यहूदी आबाद थे। मदीना में यहूद के तीन मज़बूत क़बीले मौजूद थे। तो यह हैं दो बुनियादी मज़मून इस पहले ग्रुप के। इनमें आपको एक और तक्रसीम नज़र आ जायेगी कि अहले किताब में से जिनसे “या बनी इसराइल” के अल्फ़ाज़ से खिताब हो रहा है यानि यहूद, उनसे सारी गुफ्तुगू सूरतुल बक्ररह में है, जबकि जो नसारा हैं उनसे गुफ्तुगू सूरह आले इमरान में है।

सूरतुल बक्ररह की अहमियत व फज़ीलत का अन्दाज़ा इससे भी होता है कि इसे हुज़ूर ﷺ ने कुरान मजीद का ज़रवा-ए-सनाम यानि क्लाइमैक्स (Climax) करार दिया है। हदीस के अल्फ़ाज़ हैं: ((الْبَقَرَةُ سَنَامُ الْقُرْآنِ وَدُرُوءُهُ)) (मसनद अहमद)। हुज़्म के ऐतबार से भी कुरान की सबसे बड़ी सूरत यही है, 286 आयात पर मुश्तमिल ढाई पारों पर फैली हुई है।

सूरतुल बक्ररह को दो हिस्सों में तक्रसीम किया जा सकता है और इस ऐतबार से मैंने इसका एक नाम तजवीज़ किया है “सूरतुल उम्मातैन” यानि दो उम्मतों की सूरत। इसके निस्फ़े अब्बल में असल रुप सुखन उम्मत साबिक यहूद की तरह है, जो उस वक़्त तक अल्लाह के नुमाइन्दा थे और ज़मीन पर वही उम्मते मुस्लिमा की हैसियत रखते थे। लेकिन उन्होंने अपनी बदआमाली की वजह से अपने आपको उस मक़ाम का नाअहल साबित किया, लिहाज़ा वह माज़ूल (बेदखल) किये गये और एक नयी उम्मत उम्मते मुहम्मद ﷺ उस मक़ाम पर फाइज़ की (रखी) गयी। तो निस्फ़े अब्बल में साबित उम्मत से गुफ्तुगू है और उन पर गोया फर्दे जुर्म आइद की (लगाई) गयी है कि तुमने यह किया, यह किया और यह किया। हमने तुम पर यह अहसानात किये, हमने यह भलाईयाँ कीं, तुम्हारे ऊपर हमारी यह रहमतें हुई, लेकिन तुम्हारा तर्ज़ अमल यह है, जिसकी बिना पर अब तुम माज़ूल किये जा रहे हो। यह मज़मून

है पहले निस्फ़ का। और अब जो दूसरी उम्मत कायम हुई है यानि उम्मते मुहम्मद ﷺ, उससे खिताब है निस्फ़े सानी के अन्दर। तो इसकी यह तरतीब ज़हन में रखिये। पहला हिस्सा अट्टारह रकूओं पर मुश्तमिल है और उसकी आयात की तादाद 152 है। जबकि दूसरा हिस्सा बाईस रकूओं पर मुश्तमिल है, लेकिन तादादे आयात 134 हैं। इस तरह यह दोनों हिस्से तकरीबन बराबर बन जाते हैं।

निस्फ़े अब्बल के जो अट्टारह रकूअ हैं उनको भी तीन हिस्सों में तक्रसीम कर लीजिये। पहले चार रकूअ तम्हीदी हैं। फिर दस रकूओं में बनी इसराइल से खिताब है। फिर चार रकूअ तहवीली हैं। तम्हीदी रकूओं में से पहले दो रकूओं में तीन किस्म के इन्सानों की एक तक्रसीम बयान कर दी गयी जो दुनिया में हमेशा पाये जायेंगे। जब भी कोई नयी दावत आयेगी तो कुछ लोग ऐसे होंगे जो उसे तहे दिल से कुबूल करेंगे और उसके लिये “हरचे बादाबाद मा कशती दराब अन्दाखतीम” के मिस्दाक़ सब कुछ करने को तैयार हो जायेंगे। कुछ लोग वह होंगे जो उसकी मुखालफ़त पर अब्बल रोज़ से कमर कस लेंगे और उसे हरगिज़ नहीं मानेंगे। और कुछ वह होंगे जो बैन-बैन (बीच में) रहेंगे। उनका तर्ज़ अमल यह रहेगा कि बात कुछ अच्छी लगती भी है लेकिन इसके लिये कुर्बानी देनी कठिन है, इसके तक्राज़े बड़े मुश्किल हैं। बात अच्छी है कुबूल भी करते हैं, लेकिन अमालन उसके तक्राज़े पूरे नहीं करते। उनके लिये सूरतुन्निसा (आयत:143) में {إِلَىٰ هَٰؤُلَاءِ وَلَا إِلَىٰ هَٰؤُلَاءِ} के अल्फ़ाज़ आये हैं। यह तफ़सील पहले दो रकूओं में आयी है।

इसके बाद दूसरे दो रकूओं में गोया मक्की कुरान का खुलासा आ गया है। एक रकूअ में कुरान मजीद की दावत का खुलासा और एक रकूअ में कुरान मजीद का फ़लसफ़ा बयान कर दिया गया। यह मज़ामीन असल में मक्की सूरतों के हैं और वहाँ तफ़सील से ज़ेरे बहस आ चुके हैं। सूरतुल बक्ररह के नज़ूल से पहले इन मज़ामीन पर बहुत मुफ़स्सल (विस्तृत) बहसें हो चुकी हैं, लेकिन चूँकि हिकमते खुदावन्दी में इस मुसहफ़ की तरतीब में सबसे पहले सूरतुल बक्ररह है, लिहाज़ा सूरतुल बक्ररह में इन मज़ामीन का खुलासा दर्ज कर दिया गया, ताकि आगे बढ़ने से पहले वह मज़ामीन ज़हन नशीन कर लिये जायें।

अब बिस्मिल्लाह करके हम सूरतुल बक्ररह के मुताअले का आगाज़ कर रहे हैं।

आयात 1 से 7 तक

أَعُوذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

الْم ① ذٰلِكَ الْكِتٰبُ لَا رَيْبَ ۚ فِيْهِ ۙ هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ ② الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ وَ يُقِيمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَ مِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنفِقُوْنَ ③ وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَا اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَا اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ ۚ وَ بِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُوْنَ ④ اُولٰٓئِكَ عَلَىٰ هُدًى مِّنْ رَّبِّهِمْ ۚ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ⑤ اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَوَآءٌ عَلَيْهِمْ ءَاَنذَرْتَهُمْ اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ⑥ خَتَمَ اللّٰهُ عَلَىٰ قُلُوْبِهِمْ وَ عَلَىٰ سَمْعِهِمْ ۚ وَ عَلَىٰ اَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ⑦

आयत 1

“अलिफ़, लाम, मीम।”

الْم ①

यह हुरूफ़े मुक़त्ताआत हैं जिनके बारे में यह जान लीजिये कि इनके हक़ीक़ी, हतमी (निश्चित) और यक़ीनी मफ़हूम को कोई नहीं जानता सिवाय अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के। यह एक राज़ है अल्लाह और उसके रसूल ﷺ के माबैन (बीच)। हुरूफ़े मुक़त्ताआत के बारे में अगरचे बहुत सी आरा (राय) ज़ाहिर की गयी हैं, लेकिन उनमें से कोई शय रसूल अल्लाह ﷺ से मनकूल नहीं है। अलबत्ता यह बात साबित है कि इस तरह के हुरूफ़े मुक़त्ताआत का कलाम में इस्तेमाल अरब में मारूफ़ था, इसलिये किसी ने इन पर ऐतराज़ नहीं किया। कुरान मजीद की 114 में से 29 सूरतें ऐसी हैं जिनका आगाज़ हुरूफ़े मुक़त्ताआत से हुआ है। सूरह क़ाफ़, सूरतुल क़लम और सूरह सुआद के आगाज़ में एक-एक हर्फ़ है। हा मीम, ताहा और यासीन दो-दो हर्फ़ हैं। अलिफ़ लाम मीम और अलिफ़ लाम रा तीन-तीन हुरूफ़ हैं जो कई सूरतों के आगाज़

में आये हैं। अलिफ़ लाम मी सुआद और अलिफ़ लाम मीम रा चार-चार हुरूफ़ हैं। हुरूफ़े मुक़त्ताआत में ज़्यादा से ज़्यादा पाँच हुरूफ़ यक़जा (इकट्ठे) आते हैं। चुनाँचे क़ाफ़ हा या अैन सुआद सूरह मरयम के आगाज़ में और हा मीम अैन सीन क़ाफ़ सूरतुल शौरा के आगाज़ में आये हैं। इनके बारे में इस वक़्त मुझे इससे ज़्यादा कुछ अर्ज़ नहीं करना है। अपने मुफ़स्सल दर्से कुरान में मैंने इन पर तफ़सील से बहसे की हैं।

आयत 2

“यह अल किताब है, इसमें कुछ शक नहीं।”

ذٰلِكَ الْكِتٰبُ لَا رَيْبَ ۚ فِيْهِ ۙ

या “यह वो किताब है जिसमें कोई शक नहीं।”

आयत के इस टुकड़े के दो तर्जुमे हो सकते हैं। पहले तर्जुमे की रू से यह है वह किताबे मौजूद (वादा की हुई) जिसकी ख़बर दी गयी थी कि नबी आखिरुज़माँ ﷺ आयेंगे और उनको हम एक किताब देंगे। यह गोया हवाला है मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के बारे में पेशनगोईयों की तरफ़ कि जो तौरात में मौजूद थीं। आज भी “किताब मुक़द्दस” की किताबे इस्तसना (Deuteronomy) के अट्टाहरवें बाब के अट्टाहरवीं आयत के अन्दर यह अल्फ़ाज़ मौजूद हैं कि: “मैं इन (बनी इसराइल) के लिये इनके भाईयों (बनी इस्माइल) में से तेरी मानिन्द एक नबी बरपा करूँगा और अपना कलाम उसके मुँह में डालूँगा और जो कुछ मैं उसे हुक्म दूँगा वही वह उनसे कहेगा।” तो यह बाइबल में हज़रत मुहम्मद ﷺ की पेशनगोईयाँ थीं। आगे चल कर सूरतुल आराफ़ में हम इसे तफ़सील से पढ़ भी लेंगे। यहाँ इस बात की तरफ़ इशारा हो रहा है कि यही वह किताबे मौजूद है कि जो नाज़िल कर दी गयी है मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर। इसमें किसी शक व शुबह की गुन्जाईश नहीं है। इसमें हर शय अपनी जगह पर यक़ीनी है, हतमी है, अटल है, और यह दुनिया की वाहिद किताब है जो यह दावा लेकर उठी है कि इसमें कोई शक व शुबह नहीं। जो किताबें आसमानी कहलायी जाती हैं उनके अन्दर भी यह दावा कहीं मौजूद नहीं है, इन्सानी किताबों में तो इसका सवाल ही नहीं है। अल्लामा इक़बाल जैसे नाबगह अन्न (समकालीन प्रतिभाशाली) फ़लसफ़ी भी अपने लेक्चर्स की तम्हीद में लिखते हैं कि मैं यह नहीं कह सकता कि जो कुछ मैंने

कहा है वह सब सही है, हो सकता है जैसे-जैसे इल्म आगे बढ़े मज़ीद नयी बातें सामने आयें। लेकिन कुरान का दावा है कि **لَا رَيْبَ فِيهِ** "इसमें किसी शक व शुबह की गुंजाईश नहीं है।" पहले तर्जुमे की रू से **ذَلِكَ الْكِتَابُ** "एक जुम्ला मुकम्मल हो गया और **لَا رَيْبَ فِيهِ**" दूसरा जुम्ला है। जबकि दूसरे तर्जुमे की रू से **ذَلِكَ الْكِتَابُ لَا رَيْبَ فِيهِ** "मुकम्मल जुम्ला है। यानि "यह वह किताब है जिसमें किसी शक व शुबह की गुंजाईश नहीं है।"

"हिदायत है परहेजगारों के लिये।"

هُدًى لِلْمُتَّقِينَ ①

यानि उन लोगों के लिये जो बचना चाहें। तक्रवा का लफज़ी मायना है बचना। "وَفِي بَیِّنٍ" का मफ़हूम है "किसी को बचाना" जबकि तक्रवा का मायना है खुद बचना। यानि कज रवी से बचना, गलत रवी से बचना और इफ़रात व तफ़रीत (inflation & deflation) के धोखों से बचना। जिन लोगों के अन्दर फ़ितरते सलीमा होती है उनके अन्दर यह अख़लाक़ी हिस्स (भावना) मौजूद होती है कि वह भलाई को हासिल करना चाहते हैं और हर बुरी चीज़ से बचना चाहते हैं। यही लोग हैं जो कुरान मज़ीद के असल मुख़ातिबीन (श्रोता) हैं। गोया जिसके अन्दर भी बचने की ख़्वाहिश है उसके लिये यह किताब हिदायत है। सूरतुल फ़ातिहा में हमारी फ़ितरत की तर्जुमानी की गयी थी और हमसे यह कहलवाया गया था: **{إِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ}** "(ऐ परवरदिगार!) हमें सीधे रास्ते की हिदायत बख़्श।" आयत ज़ेरे मुतआला गोया इसका जवाब है: **{ذَلِكَ الْكِتَابُ لَا رَيْبَ فِيهِ هُدًى لِلْمُتَّقِينَ}** "लो वह किताब मौजूद है कि जिसमें किसी शक व शुबह की गुंजाईश नहीं है और यह उन तमाम लोगों के लिये हिदायत के तक्राज़ों के ऐतबार से किफ़ायत करती है जिनमें गलत रवी से बचने की ख़्वाहिश मौजूद है।"

वह लोग कौन हैं? अब यहाँ देखिये तावीले खास का मामला आ जायेगा कि उस वक़्त रसूल अल्लाह **صلی اللہ علیہ وسلم** की तेरह बरस की मेहनत के नतीजे में मुहाजरीन व अन्सार की एक जमात वजूद में आ गयी थी, जिसमें हज़राते अबुबक्र, उमर, उस्मान, अली, तल्हा, जुबैर, साद बिन उबादह और साद इब्ने मुआज़ (रज़िअल्लाहु अन्हुम) जैसे नफ़ूसे कुदसिया शामिल थे। तो गोया इशारा करके दिखाया जा रहा है कि देखो यह वो लोग हैं, देख लो इनमें क्या औसाफ़ (गुण) हैं।

आयत 3

"जो ईमान रखते हैं ग़ैब पर"

الَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِالْغَيْبِ

यह मुत्तक़ीन के औसाफ़ में से पहला वसफ़ (गुण) है। वह यह नहीं समझते कि बस जो कुछ हमारी आँखों से नज़र आ रहा है, हवासे ख़म्सा (Five senses) की ज़द में है बस वही कुल हक़ीक़त है। नहीं! असल हक़ीक़त तो हमारे हवास की सरहदों से बहुत परे वाक़ेअ हुई है।

हिदायते कुरानी का नुक्ता-ए-आगाज़ यह है कि इन्सान यह समझ ले कि जो असल हक़ीक़त है वह उसकी निगाहों से मुस्तविर (छुपी) है। इन्गलिस्तान के बहुत बड़े फ़लसफ़ी ब्रेडले (Bradley) की किताब का उन्वान है: "Appearance and Reality"। उसने लिखा है कि जो कुछ नज़र आ रहा है यह हक़ीक़त नहीं है, हक़ीक़त इसके पीछे है, कन्फ़्यूसिस (551 से 479 ई०पू०) चीन का बहुत बड़ा हकीम और फ़लसफ़ी था, उसकी तालीमात में अख़लाक़ी रंग बहुत नुमाया था। उसका एक जुम्ला है:

There is nothing more real than what can not be seen; and there is nothing more certain than what can not be heard.

यानि वह हक़ाइक़ जो आँखों से देखे नहीं जा सकते और कानों से सुने नहीं जा सकते उनसे ज़्यादा यक़ीनी और वाक़ई हक़ाइक़ कोई और नहीं हैं।

"और नमाज़ क़ायम करते हैं"

وَيُقِيمُونَ الصَّلَاةَ

अल्लाह के साथ अपना एक ज़हनी व क़ल्बी और रूहानी रिश्ता इस्तवार (मज़बूत) करने के लिये नमाज़ क़ायम करते हैं।

"और जो कुछ हमने उन्हें दिया है उसमें से खर्च करते हैं"

وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ②

यानि ख़ैर में, भलाई में, नेकी में, लोगों की तकालीफ़ दूर करने में और अल्लाह के दीन की सरबुलन्दी के लिये, अल्लाह तआला की रज़ाजोई के लिये अपना माल खर्च करते हैं।

आयत 4

“और जो ईमान रखते हैं उस पर भी जो (ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم) आपकी तरफ़ नाज़िल किया गया है।”

“और उस पर भी (ईमान रखते हैं) जो आप (सल्लल्लु अलैहि वसल्लम) से पहले नाज़िल किया गया।”

وَالَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِمَا أُنْزِلَ إِلَيْكَ

وَمَا أُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ

यह बहुत अहम अल्फ़ाज़ हैं। आम तौर पर आज कल हमारे यहाँ यह ख्याल फैला हुआ है कि साबक़ा आसमानी किताब तौरात और इन्जील वगैरह के पढ़ने का कोई फ़ायदा नहीं, इसकी कोई ज़रूरत नहीं। “कोई ज़रूरत नहीं” की हद तक तो शायद बात सही हो, लेकिन “कोई फ़ायदा नहीं” वाली बात बिल्कुल ग़लत है। देखिये कुरान के आगाज़ ही में किस क़दर अहतमाम के साथ कहा जा रहा है कि ईमान सिर्फ़ कुरान पर ही नहीं, उस पर भी ज़रूरी है जो इससे पहले नाज़िल किया गया। सूरतुन्निहा कोई छः हिजरी में जाकर नाज़िल हुई है, और इसकी आयत 136 के अल्फ़ाज़ मुलाहिज़ा कीजिये:

“ऐ लोगो जो ईमान लाये हो! ईमान लाओ अल्लाह पर और उसके रसूल पर और उस किताब पर जो अल्लाह ने अपने रसूल मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم पर नाज़िल की है और हर उस किताब पर जो इससे पहले वह नाज़िल कर चुका है।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا آمِنُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِ
وَالْكِتَابِ الَّذِي نَزَّلَ عَلَى رَسُولِهِ وَالْكِتَابِ
الَّذِي أُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ

चुनाँचे तौरात, इन्जील, ज़बूर और सुहूफ़े इब्राहीम (अलै०) पर इज्माली ईमान की अहमियत को अच्छी तरह समझ लीजिये। अलबत्ता चूँकि हम समझते हैं और मानते हैं कि इन किताबों में तहरीफ़ हो गयी है लिहाज़ा इन किताबों की कोई शय कुरान पर हुज्जत (प्रमाण) नहीं होगी। जो चीज़ कुरान से टकरायेगी हम उसको रद्द कर देंगे और इन किताबों की किसी शय को दलील के तौर पर नहीं लायेंगे। लेकिन जहाँ कुरान मज़ीद की किसी बात की नफी ना हो रही हो वहाँ इनसे इस्तफ़ादह (फ़ायदा) में कोई हर्ज नहीं। बहुत से हक्काइक़ ऐसे हैं जो हमें इन किताबों ही से मिलते हैं। मसलन अम्बिया (अलै०) के दरमियान ज़मानी तरतीब (Chronological Order) हमें तौरात

से मिलती है, जो कुरान में नहीं है। कुरान में कभी हज़रत नूह (अलै०) का ज़िक्र बाद में और हज़रत मूसा (अलै०) का पहले आ जाता है। यहाँ तो किसी और पहलु से तरतीब आती है, लेकिन तौरात में हमें हज़राते इब्राहीम, इसहाक़, याक़ूब, अम्बिया-ए-बनी इसराइल मूसा और ईसा (अला नबिय्यिना व अलैहिमुस्सलातु वस्सलाम) की तारीख़ मिलती है। इस ऐतबार से साबक़ा किताबे समाविया की अहमियत पेशे नज़र रहनी चाहिये।

“और आख़िरत पर वह यक़ीन रखते हैं।”

وَبِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ

यहाँ नोट करने वाली बात यह है कि बाक़ी सब चीज़ों के लिये तो लफ़ज़ ईमान आया है जबकि आख़िरत के लिये “ईक़ान” आया है। वाक़िया यह है कि इन्सान के अमल के ऐतबार से सबसे ज़्यादा मौअस्सर (प्रभावी) शय ईमान बिल आख़िरा है। अगर इन्सान को यह यक़ीन है कि आख़िरत की ज़िन्दगी में मुझे अल्लाह के हुज़ूर हाज़िर होकर अपने आमाल की जवाबदेही करनी है तो उसका अमल सही होगा। लेकिन अगर इस यक़ीन में कमी वाक़ेअ हो गयी तो तौहीद भी महज़ एक अक़ीदा (Dogma) बन कर रह जायेगी और ईमान बिल रिसालत भी बिदआत को जन्म देगा। फिर ईमान बिल रिसालत के मज़ाहिर यह रह जायेंगे कि बस ईद मिलादुन्नबी صلی اللہ علیہ وسلم मना लीजिये और नाते अशआर कह दीजिये, अल्लाह-अल्लाह खैर सल्ला। इन्सान का अमल तो आख़िरत के यक़ीन के साथ दुरुस्त होता है।

{وَبِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ} के अल्फ़ाज़ में यह मफ़हूम भी है कि “आख़िरत पर उन्ही का यक़ीन है।” यहाँ गोया हथ्र भी है। इस ऐतबार से कि यहूदी भी मुद्ई थे कि हम आख़िरत पर यक़ीन रखते हैं। यहाँ तज़ाद (Contrast) दिखाया जा रहा है कि आख़िरत पर यक़ीन रखने वाले तो यह लोग हैं! तावीले खास के ऐतबार से यह कहा जायेगा कि यह लोग तुम्हारी निगाहों के सामने मौजूद हैं जो मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की तेरह बरस की कमाई हैं। जो इन्क़लाबे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم के असासी मिन्हाज (Basic round) यानि तिलावते आयात, तज़किया और तालीमे किताब व हिकमत का नतीजा हैं।

आयत 5

“यही वह लोग हैं जो अपने रब की तरफ़ से

أُولَئِكَ عَلَى هُدًى مِنْ رَبِّهِمْ

हिदायत पर हैं”

वह इब्तदाई हिदायत भी उनके पास थी और इस तकमीली हिदायत यानि कुरान पर भी उनका पूरा यक़ीन है, और मुहम्मद (ﷺ) का इत्तेबाअ भी वह कर रहे हैं।

“और यही वह लोग हैं जो फ़लाह पाने वाले हैं।”

وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْفَٰلِحُونَ ⑥

“फ़लाह” का लफ़्ज़ भी कुरान मजीद की बहुत अहम इस्तलाह (मुहावरा) है। इसका मायना है मंज़िले मुराद को पहुँच जाना, किसी बातिनी हकीकत का अयां (उजागर) हो जाना। इस पर इन्शा अल्लाह सूरतुल मौमिनून के शुरू में गुफ्तुगू होगी। यहाँ फ़रमाया जा रहा है कि फ़लाह पाने वाले, कामयाब होने वाले, मंज़िले मुराद को पहुँचने वाले असल में यही लोग हैं। तावीले खास के ऐतबार से यह सहाबा किराम (रजि०) की तरफ़ इशारा हो गया, जबकि तावीले आम के ऐतबार से हर शख्स को बता दिया गया कि अगर कुरान की हिदायत से मुस्तफ़ीद (फ़ायदेमन्द) होना है तो यह औसाफ़ अपने अन्दर पैदा करो।

आयत 6

“यक़ीनन जिन लोगों ने कुफ़्र किया (यानि वह लोग जो कुफ़्र पर अड़ गये) उनके लिये बराबर है (ऐ मुहम्मद (ﷺ) कि आप उन्हें इन्ज़ार फ़रमायें या ना फ़रमायें वह ईमान लाने वाले नहीं हैं।”

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا سَوَاءٌ عَلَيْهِمْ ءَأَنذَرْتَهُمْ أَمْ لَمْ تُنذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ⑦

“إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا” से मुराद यहाँ वह लोग हैं जो अपने कुफ़्र पर अड़ गये। इसको हम तावीले आम में नहीं ले सकते। इसलिये कि इस सूरत में तो इसके मायने यह होंगे कि जिस शख्स ने किसी भी वक़्त कुफ़्र किया अब वह हिदायत पर आ ही नहीं सकता! यहाँ यह बात मुराद नहीं है। अगर कोई शख्स किसी मुग़ालते की बिना पर या अदमे तौजीही (अनदेखी) की बिना पर कुफ़्र में है, हक़ उस पर वाज़ेह नहीं हुआ है तो इन्ज़ार व तब्शीर से उसे फ़ायदा हो

जायेगा। आप उसे वाज़ व नसीहत करें तो वह उसका असर कुबूल कर लेगा। लेकिन जो लोग हक़ को हक़ समझने और पहचानने के बावजूद महज़ ज़िद, हठधर्मी और तास्सुब की वजह से या तकब्बुर और हसद की वजह से कुफ़्र पर अड़े रहे तो उनकी किस्मत में हिदायत नहीं है। ऐसे लोगों का मामला यह है कि ऐ नबी (ﷺ)! उनके लिये बराबर है ख़वाह आप (ﷺ) उन्हें समझायें या ना समझायें, डरायें या ना डरायें, इन्ज़ार फ़रमायें या ना फ़रमायें वह ईमान लाने वाले नहीं हैं। इसलिये कि सोते को तो जगाया जा सकता है, जागते को आप कैसे जगाएँगे? यह गोया कि मक्का के सरदारों की तरफ़ इशारा हो रहा है कि उनके दिल और दिमाग़ गवाही दे चुके हैं कि मुहम्मद (ﷺ) अल्लाह के रसूल हैं और कुरान उन पर इत्मा मे हुजत कर चुका है और वह मान चुके हैं कि कुरान का मुक़ाबला हम नहीं कर सकते, यह मुहम्मद (ﷺ) का मुकम्मल मौज्ज़ा है, इसके बावजूद वह ईमान नहीं लाये।

आयत 7

“अल्लाह ने मोहर कर दी है उनके दिलों पर और उनके कानों पर।”

خَتَمَ اللَّهُ عَلَىٰ قُلُوبِهِمْ وَعَلَىٰ سَمْعِهِمْ

ऐसा क्यों हुआ? उनके दिलों पर और उनके कानों पर मोहर इब्तदा ही में नहीं लगा दी गयी, बल्कि जब उन्होंने हक़ को पहचानने के बाद रद्द कर दिया तो इसकी पादाश (इज़ाम) में अल्लाह तआला ने उनके दिलों पर मोहर कर दी और उनकी समाअत पर भी।

“और उनकी आँखों के सामने परदा पड़ चुका है।”

وَعَلَىٰ أَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ

यह मज़मून सूरह यासीन के शुरू में बहुत शरहो-बस्त (ज़्यादा विस्तार) के साथ दोबारा आयेगा।

“और उनके लिये बहुत बड़ा अज़ाब है।”

وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ⑧

यह दूसरे गिरोह का तज़क़िरा हो गया। एक रुकूअ (कुल सात आयात) में दो गिरोहों का ज़िक्र समेट लिया गया। एक वह गिरोह जिसने कुरान करीम की दावत से सही-सही इस्तफ़ादह किया, उनमें तलबे हिदायत का माद्दा मौजूद

था, उनकी फ़ितरतें सलीम थीं, उनके सामने दावत आयी तो उन्होंने कुबूल की और कुरान के बताये हुए रास्ते पर चले। वह गुलिस्ताने मुहम्मदी صلی اللہ علیہ وسلم के गुले सरसब्द हैं। वह शजरा-ए-कुरानी के निहायत मुबारक और मुक़द्दस फल हैं। दूसरा गिरोह वह है जिसने हक़ को पहचान भी लिया, लेकिन अपने तास्सुब या हठधर्मी की वजह से उसको रद्द कर दिया। उनका ज़िक्र भी बहुत इख़्तसार (संक्षिप्ता) के साथ आ गया। उनका तफ़्सीली ज़िक्र आपको मक्की सूरतों में मिलेगा। अब आगे तीसरे गिरोह का ज़िक्र आ रहा है।

आयात 8 से 20 तक

وَمِنَ النَّاسِ مَن يَقُولُ آمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالْيَوْمِ الْآخِرِ وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِينَ ۝۱
 اللَّهُ وَالَّذِينَ آمَنُوا وَمَا يَخْدَعُونَ إِلَّا أَنفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُونَ ۝۲ فِي قُلُوبِهِمْ مَّرَضٌ
 فَزَادَهُمُ اللَّهُ مَرَضًا ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝۳ بِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ ۝۴ وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ لَا
 تُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ قَالُوا إِنَّمَا نَحْنُ مُصْلِحُونَ ۝۵ أَلَا إِنَّهُمْ هُمُ الْمُفْسِدُونَ وَلَكِن
 لَا يَشْعُرُونَ ۝۶ وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا كَمَا آمَنَ النَّاسُ قَالُوا أَنُؤْمِنُ كَمَا آمَنَ
 السُّفَهَاءُ ۖ أَلَا إِنَّهُمْ هُمُ السُّفَهَاءُ وَلَكِن لَا يَعْلَمُونَ ۝۷ وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا قَالُوا
 آمَنَّا ۖ وَإِذَا خَلَوْا إِلَىٰ شُيَاطِينِهِمْ قَالُوا إِنَّا مَعَكُمْ ۖ إِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِئُونَ ۝۸ اللَّهُ
 يَسْتَهْزِئُ بِهِمْ وَيَمُدُّهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ۝۹ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ
 بِالْهُدَىٰ ۖ فَمَآ رَاحَتْ تَجَارَتُهُمْ وَمَا كَانُوا مُهْتَدِينَ ۝۱۰ مَثَلُهُمْ كَمَثَلِ الَّذِي اسْتَوْقَدَ
 نَارًا ۖ فَلَمَّا أَضَاءَتْ مَا حَوْلَهُ ذَهَبَ اللَّهُ بِنُورِهِمْ وَتَرَكَهُمْ فِي ظُلُمٍ لَا يَبْصُرُونَ ۝۱۱
 ضُمُّ بَكُمْ عَمِّي فَهُمْ لَا يَرَاجِعُونَ ۝۱۲ أَوْ كَصَيْبٍ مِّنَ السَّمَاءِ فِيهِ ظُلُمٌ وَرَعْدٌ وَبَرْقٌ
 يَّعْمَلُونَ أَصَابِعُهمْ فِي آذَانِهِم مِّنَ الصَّوَاعِقِ حَذَرَ الْمَوْتِ ۖ وَاللَّهُ مُحِيطٌ بِالْكَافِرِينَ ۝۱۳
 يَكَادُ الْبَرْقُ يَخْطَفُ أَبْصَارَهُمْ ۖ كُلَّمَا أَضَاءَ لَهُمْ مَّشَوْا فِيهِ ۖ وَإِذَا أَظْلَمَ عَلَيْهِمْ
 قَامُوا ۖ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَذَهَبَ بِسَمْعِهِمْ وَأَبْصَارِهِمْ ۖ إِنَّ اللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝۱۴

आयत 8

“और लोगों में से कुछ ऐसे भी हैं जो कहते तो यह हैं कि हम ईमान रखते हैं अल्लाह पर भी और यौमे आखिर पर भी, मगर वह हकीकत में मोमिन नहीं हैं।”

وَمِنَ النَّاسِ مَن يَقُولُ آمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالْيَوْمِ
 الْآخِرِ وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِينَ ۝

यहाँ एक बात समझ लीजिये! अक्सर व बेशतर मुफ़स्सिरीन ने इस तीसरी क्रिस्म (Category) के बारे में यही राय क़ायम की है कि यह मुनाफ़िक्कीन का तज़क़िरा है, अगरचे यहाँ लफ़्ज़ मुनाफ़िक्क़ या लफ़्ज़े निफ़ाक्क़ नहीं आया। लेकिन मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब ने इसके बारे में एक राय ज़ाहिर की है जो बड़ी कीमती है। उनका कहना है कि यहाँ एक किरदार का नक्क़शा खींच दिया गया है, ग़ौर करने वाले ग़ौर कर लें, देख लें कि वह किस पर चस्पा हो रहा है। और जब यह आयात नाज़िल हो रही थी तो इनमें शख़्सियात की किरदार निगारी का यह जो नक्क़शा खींचा जा रहा है यह बिल्फ़अल दो तबक्कात के ऊपर रास्त (सही) आ रहा था। एक तबक्का उलमाये यहूद का था। वह भी कहते थे कि हम भी अल्लाह को मानते हैं, आख़िरत को भी मानते हैं। (इसीलिये यहाँ रिसालत का ज़िक्र नहीं है।) वह कहते थे कि अगर सवा लाख नबी आये हैं तो उन सवा लाख को तो हम मानते हैं, बस एक मुहम्मद (صلی اللہ علیہ وسلم) को हमने नहीं माना और एक ईसा (अलै०) को नहीं माना, तो हमें भी तस्तीम किया जाना चाहिये कि हम मुस्लमान हैं। और वाक़िया यह है कि यहाँ जिस अन्दाज़ में तज़क़िरा हो रहा है इससे उनका किरदार भी झलक रहा है और रुए सुखन भी उनकी तरफ़ जा रहा है। मुझे याद है दसवीं जमात के ज़माने में देल्ही में मैंने जूतों की एक दुकान पर देखा था कि एक बहुत बड़ा जूता लटकाया हुआ था और साथ लिखा था: Free to whom it fits यानि जिसके पाँव में यह ठीक-ठीक आ जाये वह इसे मुफ़्त ले जाये! तो यहाँ भी एक किरदार का नक्क़शा खींच दिया गया है। अब यह किरदार जिसके ऊपर भी फिट बैठ जाये वह इसका मिस्दाक्क़ (applicable) शुमार होगा।

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया, ज़्यादातर मुफ़स्सिरीन की राय तो यही है कि यह मुनाफ़िक्कीन का तज़क़िरा है। लेकिन यह किरदार बैनहीं (इसी तरह) यहूद के उलमा पर भी मुन्तबिक्क़ (लागू) हो रहा है। यहाँ यह बात भी नोट कर लीजिये कि मदीना मुनव्वरा में निफ़ाक्क़ का पौदा, बल्कि सहीतर अल्फ़ाज़ में

निफ़ाक़ का झाड़-झन्काड़ जो परवान चढ़ा है वह यहूदी उलमा के ज़ेरे असर परवान चढ़ा है। जैसे जंगल के अन्दर बड़े-बड़े दरख़्त भी होते हैं और उनके नीचे झाड़ियाँ भी होती हैं। तो यह निफ़ाक़ का झाड़-झन्काड़ दरअसल यहूदी उलमा का जो बहुत बड़ा पौदा था उसके साये में परवान चढ़ा है और इन दोनों में मानवी रब्त (हू-ब-हू सम्पर्क) भी मौजूद है।

आयत 9

“वह धोखा देने की कोशिश कर रहे हैं अल्लाह को और अहले ईमान को।”

يُخٰدِعُونَ اللَّهَ وَالَّذِينَ آمَنُوا ۚ

يُخٰدِعُونَ बाब मुफ़ाअला है। इस बाब का खास्सा है कि इसमें एक कशमकश और कशाकश मौजूद होती है। लिहाज़ा मैंने इसका तर्जुमा किया: “वह धोखा देने की कोशिश कर रहे हैं।”

“और नहीं धोखा दे रहे मगर सिर्फ़ अपने आप को।”

وَمَا يَخْدَعُونَ إِلَّا أَنْفُسَهُمْ

यह बात यक़ीनी है कि अपने आप को तो धोखा दे रहे हैं, लेकिन यह अल्लाह, उसके रसूल ﷺ को और अहले ईमान को धोखा नहीं दे सकते। सूरतुन्निहा की आयत 142 में मुनाफ़िक़ीन के बारे में यही बात बड़े वाज़ेह अन्दाज़ में बाअल्फ़ाज़ आयी है: {إِنَّ الْمُنٰفِقِیْنَ يُخٰدِعُونَ اللَّهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ} “यक़ीनन मुनाफ़िक़ीन अल्लाह को धोखा देने की कोशिश कर रहे हैं, हालाँकि अल्लाह ही उन्हें धोखे में डालने वाला है।”

“और उन्हें इसका शऊर नहीं है।”

وَمَا يَشْعُرُونَ ۚ

यह बात बहुत अच्छी तरह नोट कर लीजिये कि मुनाफ़िक़ीन की भी अक्सरियत वह थी जिन्हें अपने निफ़ाक़ का शऊर नहीं था। वह अपने तै खुद को मुस्लमान समझते थे। वह मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के बारे में कहते थे कि इन्होंने ख़्वाह माख़्वाह अहले मक्का के साथ लड़ाई मोल ले ली है, इसकी क्या ज़रूरत है? हमें अमन के साथ रहना चाहिये और अमन व आशती (सुलह) के माहौल में उनसे बात करनी चाहिये। वह समझते थे कि हम ख़ैर ख़्वाह हैं, हम भली बात कह रहे हैं, जबकि यह बेवकूफ़ लोग हैं। देखते नहीं

कि किससे टकरा रहे हैं! हाथ में अस्लाह नहीं है और लड़ाई के लिये जा रहे हैं। चुनाँचे यह तो बेवकूफ़ हैं। अपने बारे में वह समझते थे कि हम तो बड़े मुख़्लिस हैं। जान लीजिये कि मुनाफ़िक़ीन में यक़ीनन बाज़ लोग ऐसे भी थे कि जो इस्लाम में दाख़िल ही धोखा देने की खातिर होते थे और उन पर पहले दिन से यह वाज़ेह होता था कि हम मुस्लमान नहीं हैं, हमने मुस्लमानों को धोखा देने के लिये इस्लाम का महज़ लिबादा ओढ़ा है। ऐसे मुनाफ़िक़ीन का ज़िक़्र सूरह आले इमरान की आयत 72 में आयेगा। लेकिन अक्सर व बेशतर मुनाफ़िक़ीन दूसरी तरह के थे, जिन्हें अपने निफ़ाक़ का शऊर हासिल नहीं था।

आयत 10

“उनके दिलों में एक रोग है।”

فِي قُلُوبِهِمْ مَّرَضٌ

यह रोग और बीमारी क्या है? एक लफ़्ज़ में इसको “किरदार की कमज़ोरी” (weakness of character) से ताबीर किया जा सकता है। एक शख्स वह होता है जो हक़ को हक़ समझ कर कुबूल कर लेता है और फिर “हरचे बादाबाद” (जो हो सो हो) की कैफ़ियत के साथ उसकी खातिर अपना सब कुछ कुर्बान कर देने को तैयार हो जाता है। दूसरा शख्स वह है जो हक़ को पहचान लेने के बावजूद रद्द कर देता है। उसे “काफ़िर” कहा जाता है। जबकि एक शख्स वह भी है जो हक़ को हक़ पहचान कर आया तो सही, लेकिन किरदार की कमज़ोरी की वजह से उसकी कुव्वते इरादी कमज़ोर है। ऐसे लोग आख़िरत भी चाहते हैं लेकिन दुनिया भी हाथ से देने के लिये तैयार नहीं। वह चाहते हैं कि यहाँ का भी कोई नुक़सान ना हो और आख़िरत का भी सारा भला हमें मिल जाये। दर हकीक़त यह वो लोग हैं कि जिनके बारे में कहा गया कि इनके दिलों में एक रोग है।

“तो अल्लाह ने उनके रोग में इज़ाफ़ा कर दिया।”

فَزَادَهُمُ اللَّهُ مَرَضًا

यह अल्लाह की सुन्नत है। आप हक़ पर चलना चाहें तो अल्लाह तआला हक़ का रास्ता आप पर आसान कर देगा, लेकिन अगर आप बुराई की तरफ़ जाना चाहें तो बड़ी से बड़ी बुराई आपके लिये हल्की होती चली जायेगी। आप

ख्याल करेंगे कि कोई खास बात नहीं, जब यह कर लिया तो अब यह भी कर गुज़रा। और अगर कोई बैन-बैन (बीच में) लटकना चाहे तो अल्लाह उसको उसी राह पर छोड़ देता है। ठीक है, वह समझते हैं हम कामयाब हो रहे हैं कि हमने मुस्लमानों को भी धोखा दे लिया, वह हमें मुस्लमान समझते हैं और यहूदियों को भी धोखा दे लिया, वह समझते हैं कि हम उनके साथी हैं। तो उनका यह समझना कि हम कामयाब हो रहे हैं, बिल्कुल गलत है। हकीकत में यह कामयाबी नहीं है, बल्कि अल्लाह तआला ने वह तबाहकुन रास्ता उनके लिये आसान कर दिया है जो उन्होंने खुद मुन्तख़ब किया (चुना) था। उनके दिलों में जो रोग मौजूद था अल्लाह ने उसमें इज़ाफ़ा फ़रमा दिया।

“और उनके लिये तो दर्दनाक अज़ाब है।”

وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ

ऊपर कुफ़ार के लिये अलफ़ाज़ आये थे: {وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ} और यहाँ عَذَابٌ أَلِيمٌ और यहाँ कि उनके लिये दर्दनाक और अलमनाक अज़ाब है।

“ब-सबब उस झूठ के जो वह बोल रहे थे।”

بِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ

आयत 11

“और जब उनसे कहा जाता है कि मत फ़साद करो ज़मीन में”

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوا فِي الْأَرْضِ

इससे मुराद यह है कि जब तुमने मुहम्मद ﷺ को अल्लाह का रसूल मान लिया तो अब उनकी ठीक-ठीक पैरवी करो, उन (ﷺ) के पीछे चलो। उन (ﷺ) का हुक्म है तो जंग के लिये निकलो। उन (ﷺ) की तरफ़ से तकाज़ा आता है तो माल पेश करो। और अगर तुम इससे कतराते हो तो फिर जमाती जिन्दगी के अन्दर फ़ितना व फ़साद फैला रहे हो।

“वह कहते हैं हम तो इस्लाह करने वाले हैं।”

قَالُوا إِنَّمَا خُنْ مُضِلُّونَ

हम तो सुलह कराने वाले हैं। हमारी नज़र में यह लड़ना-भिड़ना कोई अच्छी बात नहीं है, टकराव और तसादुम कोई अच्छे काम थोड़े ही हैं। बस लोगों को ठंडे-ठंडे दावत देते रहो, जो चाहे कुबूल कर ले और जो चाहे रद्द कर दे। यह

ख्वाह माख्वाह दुश्मन से टकराना और जंग करना किस लिये? और अल्लाह के दीन को ग़ालिब करने के लिये कुर्बानियाँ देने, मुसीबतें झेलने और मशक्कतें बर्दाश्त करने के मुतालबे काहे के लिये?

आयत 12

“आगाह हो जाओ कि हकीकत में यही लोग मुफ़्सिद हैं, मगर इन्हें शऊर नहीं है।”

أَلَا إِنَّهُمْ هُمُ الْمُفْسِدُونَ وَلَكِنْ لَا

يَشْعُرُونَ

यही तो हैं जो फ़साद फैलाने वाले हैं। इसलिये कि मुहम्मद ﷺ की दावत तो ज़मीन में इस्लाह के लिये है। इस इस्लाह के लिये कुछ ऑपरेशन करना पड़ेगा। इसलिये कि मरीज़ इस दर्जे को पहुँच चुका है कि ऑपरेशन के बग़ैर उसकी शिफ़ा मुमकिन नहीं है। अब अगर तुम इस ऑपरेशन के रास्ते में रुकावट बनते हो तो दर हकीकत तुम फ़साद मचा रहे हो, लेकिन तुम्हें इसका शऊर नहीं। आयत के आख़री अलफ़ाज़ {يَشْعُرُونَ} से यह बात वाज़ेह हो रही है कि शऊरी निफ़ाक़ और शय है, जबकि यहाँ सारा तज़क़िरा ग़ैर शऊरी निफ़ाक़ का हो रहा है।

आयत 13

“और जब उनसे कहा जाता है कि ईमान लाओ, जिस तरह दूसरे लोग ईमान लाये हैं”

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا كَمَا آمَنَ النَّاسُ

आख़िर देखो, यह दूसरे अहले ईमान हैं, जब बुलावा आता है तो फ़ौरन लब्बैक कहते हुए हाज़िर होते हैं, जबकि तुमने और ही रविश (तरीक़ा) इख़्तियार कर रखी है।

“वह कहते हैं क्या हम ईमान लायें जैसे यह बेवकूफ़ लोग ईमान लाये हैं?”

قَالُوا الْاُنُومُ كَمَا آمَنَ الشُّفَهَاءُ

मुनाफ़िक़ीन सच्चे अहले ईमान के बारे में कहते थे कि इन्हें तो अपने नफ़े की फ़िक्र है ना नुक़सान की, ना ख़तरात का कोई ख्याल है ना अन्देशों का कोई गुमान। जान, माल और औलाद की कोई परवाह नहीं। यह घरबार को छोड़

कर आ गये हैं, अपने बाल-बच्चे कुफ़ारे मक्का के रहमो करम पर छोड़ आये हैं कि सरदाराने कुरैश उनके साथ जो चाहे सुलूक करें, तो यह तो बेवकूफ़ लोग हैं। (आज-कल आप ऐसे लोगों को fanatics कहते हैं) भई देख-भाल कर चलना चाहिये, दायें-बायें देख कर चलना चाहिये। अपने नफ़ा-नुक़सान का ख़्याल करके चलना चाहिये। ठीक है, इस्लाम दीने हक़ है, लेकिन बहरहाल अपनी और अपने अहलो अयाल की मसलहतों (स्वार्थों) को भी देखना चाहिये। यह लोग तो मालूम होता है बिल्कुल दीवाने और fanatics हो गये हैं।

“आगाह हो जाओ कि वही बेवकूफ़ हैं, लेकिन
إِلَّا أَنَّهُمْ هُمُ السُّفَهَاءُ وَلَكِنْ لَا يَعْلَمُونَ ۝”
उन्हें इल्म नहीं।”

वह सादिकुल ईमान जो ईमान के हर तक्काज़े को पूरा करने के लिये हर वक़्त हाज़िर हैं, उनसे बड़ा अक्लमन्द और उनसे बड़ा समझदार कोई नहीं। उन्होंने यह जान लिया है कि असल ज़िंदगी आख़िरत की ज़िंदगी है, यह ज़िंदगी तो आरज़ी है, तो अगर कल के बजाये आज ख़त्म हो जाये या अभी ख़त्म हो जाये तो क्या फर्क पड़ेगा? यहाँ से जाना तो है, आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसो, जाना तो है। तो अक्ल तो उनके अन्दर है।

आयत 14

“और जब यह अहले ईमान से मिलते हैं तो
وَإِذْ يَقُولُ الَّذِينَ آمَنُوا أَفَأُلَؤِاَ امِّتًا ۖ
कहते हैं हम भी ईमान रखते हैं।”

आम यहूदी भी कहते थे कि हम भी तो आख़िर अल्लाह को और आख़िरत को मानते हैं, जबकि मुनाफ़िक़ तो रसूल ﷺ को भी मानते थे।

“और जब यह ख़लवत (अकेले) में होते हैं
وَإِذَا خَلَوْا إِلَىٰ شَيَاطِينِهِمْ ۖ
अपने शैतानों के पास”

यहाँ “श्यातीन” से मुराद यहूद के उलमा भी हो सकते हैं और मुनाफ़िक़ीन के सरदार भी। अब्दुल्लाह बिन उबई मुनाफ़िक़ीने मदीना का सरदार था। अगर वह कभी उन्हें मलामत करता कि मालूम होता है तुम तो बिल्कुल पूरी तरह से मुस्लमानों में शामिल ही हो गये हो, तुम्हें क्या हो गया है तुम मुहम्मद (ﷺ) की हर बात मान रहे हो, तो अब उन्हें अपनी वफ़ादारी का यक़ीन

दिलाने के लिये कहना पड़ता था कि नहीं नहीं, हम तो मुस्लमानों को बेवकूफ़ बना रहे हैं, हम उनसे ज़रा तमस्खुर (मज़ाक) कर रहे हैं, हम आप ही के साथ हैं, आप फिक़्र ना करें। मुनाफ़िक़ तो होता ही दो रखा है। “نفق” कहते हैं सुरंग को, जिसके दो रास्ते होते हैं। “نافق” गोह (रेगिस्तान में पाया जाने वाला छिपकली जैसा एक जीव) के बिल को कहा जाता है। गोह अपने बिल के दो मुँह रखता है कि अगर कुत्ता शिकार के लिये एक तरफ़ से दाख़िल हो जाये तो वह दूसरी तरफ़ से निकल भागे। तो मुनाफ़िक़ भी ऐसा शख्स है जिसके दो रुख़ होते हैं। सूरतुन्निहा में मुनाफ़िक़ीन के बारे में कहा गया है: (आयत:143) {مُنَافِقِينَ بَيْنَ ذَٰلِكَ لَا إِلَىٰ هَٰؤُلَاءِ وَلَا إِلَىٰ هَٰؤُلَاءِ} यानि कुफ़्र व ईमान के दरमियान डाँवाडोल हैं, मुज़बज़ब होकर रह गये हैं। ना इधर के हैं ना उधर के हैं।

लफ़ज़ “शैतान” के बारे में दो राय हैं। एक यह कि इसका मादा “ش ط و” है और दूसरी यह कि यह “ش و ط” मादे से है। شَطْن के मायने हैं تَبَعٌ यानि बहुत दूर हो गया। पस शैतान से मुराद है जो अल्लाह की रहमत से बहुत दूर हो गया। जबकि شَا ط يَشُوْط के मायने हैं حَسَدًا وَ غَضَبًا यानि कोई शख्स गुस्से और हसद के अन्दर जल उठा। इससे فُغْلَان के वज़न पर “شَيْطَان” है, यानि वह जो हसद और ग़ज़ब की आग में जल रहा है। चुनाँचे एक तो शैतान वह है जो जिन्नात में से है, जिसका नाम पहले “अज़ाज़ील” था, अब हम उसे इब्लीस के नाम से जानते हैं। फिर यह कि दुनिया में जो भी उसके पैरोकार हैं और उसके मिशन में शरीकेकार हैं, ख़्वाह इन्सानों में से हों या जिन्नों में से, वह भी श्यातीन हैं। इसी तरह अहले कुफ़्र और अहले ज़ैग के जो बड़े-बड़े सरदार होते हैं उनको भी श्यातीन से ताबीर किया गया। आयत ज़ेरे मुतआला में श्यातीन से यही सदरार मुराद हैं।

“कहते हैं कि हम तो आपके साथ हैं और उन
قَالُوا إِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَبْزِرُونَ ۝
लोगों से तो महज़ मज़ाक कर रहे हैं।”

जब वह अलैहदगी में अपने शैतानों यानि सरदारों से मिलते हैं तो उनसे कहते हैं कि असल में तो हम आपके साथ हैं, उन मुस्लमानों को तो हम बेवकूफ़ बना रहे हैं, उनसे इस्तेहज़ा और तमस्खुर (हँसी-मज़ाक) कर रहे हैं जो उनके सामने “आमन्ना” कह देते हैं कि हम भी आपके साथ हैं।

आयत 15

“दर हक़ीक़त अल्लाह उनका मज़ाक उड़ा रहा है और उनको उनकी सरकशी में ढील दे रहा है कि वह अपने अक्ल के अन्धेपन में बढ़ते चले जायें।”

اللَّهُ يَسْتَهْزِئُ بِهِمْ وَيَمُدُّهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ①

अल्लाह तआला शरकशों की रस्सी दराज़ करता है। कोई शख्स शरकशी के रास्ते पर चल पड़े तो अल्लाह तआला उसे फ़ौरन नहीं पकड़ता, बल्कि उसे ढील देता है कि चलते जाओ जहाँ तक जाना चाहते हो। तो इनकी भी अल्लाह तआला रस्सी दराज़ कर रहा है, लेकिन यह समझते हैं कि हम मुस्लिमानों का मज़ाक उड़ा रहे हैं। असल में मज़ाक तो अल्लाह के नज़दीक उनका उड़ रहा है।

लफ़ज़ “يَعْمَهُونَ” अक्ल के अन्धेपन के लिये आया है। इसका माद्दा “ع م ه” है। आगे आयत 18 में लफ़ज़ “ع م ي” आ रहा है जो “ع م ي” से है। इन दोनों में फर्क यह है कि “ع م ي” बसीरत से महरूमी के लिये आता है और “ع م ه” बसीरत से महरूमी के लिये।

आयत 16

“यह वह लोग हैं कि जिन्होंने हिदायत के एवज़ (बदले) गुमराही खरीद ली है।”

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلٰلَةَ بِالْهُدٰى

यह बड़ा प्यारा अन्दाज़े बयान है। इनके सामने दोनों options थे। एक शख्स ने गुमराही को छोड़ा और हिदायत ले ली। उसे इसकी भारी कीमत देना पड़ी। उसे तकलीफें उठानी पड़ीं, आजमाइशों में से गुज़रना पड़ा, कुरबानियाँ देनी पड़ीं। उसने यह सब कुछ मन्ज़ूर किया और हिदायत ले ली। जबकि एक शख्स ने हिदायत देकर गुमराही ले ली। आसानी तो हो गई, फ़ौरी तकलीफ से तो बच गये, दोनों तरफ से अपने मफ़ादात को बचा लिया, लेकिन हक़ीक़त में सबसे ज़्यादा घाटे का सौदा यही है।

“सो नफ़ा ना हुई उनकी तिज़ारत उनके हक़ में और ना हुऐ राह पाने वाले।”

فَمَا رِبْحَتْ تُجَارُهُمْ وَمَا كَانُوا مُنْتَفِعِينَ ②

“ع م ه” के मायने हैं तिज़ारत वगैरह में नफ़ा उठाना, जो एक सही और जायज़ नफ़ा है, जबकि “ع م و” मादे से ع م ي के मायने भी माल में इज़ाफ़ा और बढ़ोत्तरी के हैं, लेकिन वह हराम है। तिज़ारत के अन्दर जो नफ़ा हो जाये वह “ع م ه” है, जो जायज़ नफ़ा है और अपना माल किसी को कर्ज़ देकर उससे सूद वसूल करना “ع م و” है जो हराम है।

अब यहाँ दो बड़ी प्यारी तमसीलें (उदाहरण) आ रही हैं। पहली तमसील कुफ़्फ़ार के बारे में और दूसरी तमसील मुनाफ़िक़ीन के बारे में।

आयत 17

“उनकी मिसाल ऐसी है जैसे एक शख्स ने आग रोशन की।”

مَثَلُهُمْ كَمَثَلِ الَّذِي اسْتَوْفَدَ نَارًا ③

“फिर जब उस आग ने सारे माहौल को रोशन कर दिया।”

فَلَمَّا أَضَاءَتْ مَا حَوْلَهُ

“तो अल्लाह ने उनका नूरे बसारत सल्ब कर (छीन) लिया।”

ذَهَبَ اللَّهُ بِنُورِهِمْ

“और छोड़ दिया उनको अन्धेरों के अन्दर कि वह कुछ नहीं देखते।”

وَتَرَكَهُمْ فِي ظُلُمٍ لَا يَبْصُرُونَ ④

यहाँ एक शबे तारीक का नक्शा खींचा जा रहा है। अल्लामा इक़बाल के अल्फ़ाज़ में:

अन्धेरी शब है जुदा अपने काफ़िले से है तू
तेरे लिये है मेरा शौला-ए-नवा कन्दील!

अन्धेरी शब है। काफ़िला भटक रहा है। कुछ लोग बड़ी हिम्मत करते हैं कि अन्धेरे में भी इधर-उधर से लकड़ियाँ जमा करते हैं और आग रोशन कर देते हैं। लेकिन ऐन उस वक़्त जब आग रोशन होती है तो कुछ लोगों की बीनाई सल्ब हो जाती है। पहले वह अन्धेरे में इसलिये थे कि खारिज में रोशनी नहीं थी। अब भी वह अन्धेरे ही में रह गये कि खारिज में तो रोशनी आ गई मगर उनके अन्दर की रोशनी गुल हो गई, उनकी बसारत सल्ब हो गई। यह मिसाल है उन कुफ़्फ़ार की जो इस्लाम की रोशनी फैलाने के बावजूद उससे महरूम (वंचित) रहे, मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की आमद से पहले हर सू (दिशा)

तारीकी छाई हुई थी। कोई हकीकत वाज़ेह नहीं थी। काफ़िला-ए-इन्सानियत अन्धेरी शब में भटक रहा था। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ तशरीफ़ लाये और उन्होंने आग रोशन कर दी। इस तरह हिदायत वाज़ेह हो गयी। लेकिन कुछ ज़िद, तास्सुब, तकब्बुर या हसद की बुनियाद पर कुछ लोगों की अन्दर की बीनाई (नज़र) ज़ाइल (दूर) हो गयी। चुनाँचे वह तो वैसे के वैसे भटक रहे हैं। जैसे पहले अन्धेरे में थे वैसे ही अब भी अन्धेरे में हैं। रोशनी में आने वाले तो वह हैं जिनका ज़िक्र सबसे पहले “अल-मुत्ताकीन” के नाम से हुआ।

आयत 18

“यह बहरे हैं, गूँगे हैं, अन्धे हैं, सो अब यह नहीं लौटेंगे।”

وَمِنْكُمْ عُمَىٰ فَهُمْ لَا يَرْجِعُونَ ۝

بُكَر बहरे को कहते हैं, اُنْمُ इसकी जमा है, اُكْمू गूँगे को कहा जाता है, اُنْمُ इसकी जमा है। अन्धे को कहते हैं, اُنْمُ इसकी जमा है। फ़रमाया कि यह बहरे हैं, गूँगे हैं, अन्धे हैं, अब यह लौटने वाले नहीं हैं। यह कौन हैं? अबु-जहल, अबु-लहब, वलीद बिन मुगीरा और उक़बा इब्ने अबी मुईत सबके सब अभी ज़िन्दा थे जब यह आयात नाज़िल हो रही थीं। यह सब तो ग़ज़वा-ए-बद्र में वासिले जहन्नम हुए जो सन 2 हिजरी में हुआ। तो यह लोग इस मिसाल का मिस्दाक़े कामिल थे। आगे अब दूसरी मिसाल बयान की जा रही है।

आयत 19

“या उनकी मिसाल ऐसी है जैसे बड़े ज़ोर की बारिश बरस रही है आसमान से, उसमें अन्धेरे भी हैं और गरज और बिजली (की चमक) भी।”

أَوْ كَصَيِّبٍ مِّنَ السَّمَاءِ فِيهِ ظُلُمٌ وَّرَعْدٌ وَبَرْقٌ

“यह अपनी उँगलियाँ अपने कानों के अन्दर ठूँस लेते हैं मारे कड़क के, मौत के डर से।”

يَجْعَلُونَ أَصَابِعَهُمْ فِي آذَانِهِمْ مِنَ الصَّوَاعِقِ حَذَرَ الْمَوْتِ

यानि इस हैबतनाक कड़क से कहीं उनकी जानें ना निकल जायें।

“और अल्लाह ऐसे काफ़िरोँ का इहाता (cover) किये हुऐ है।”

وَاللَّهُ مُحِيطٌ بِالْكَافِرِينَ ۝

वह इन मुन्करीने हक़ को हर तरफ़ से घेरे में लिये हुए है, यह बच कर कहाँ जायेंगे।

आयत 20

“क़रीब है कि बिजली उचक ले उनकी आँखों।”

يَكَادُ الْبَرْقُ يَكْطِفُ أَبْصَارَهُمْ

“जब चमकती है उन पर तो चलने लगते हैं उसकी रोशनी में।”

كَلِمًا أَصَاءَ لَهُمْ مَّشَوا فِيهِ

ज्यों ही उन्हें ज़रा सी रोशनी महसूस होती है और दायें-बायें कुछ नज़र आता है तो कुछ दूर चल लेते हैं।

“और जब उन पर तारीकी तारी हो जाती है तो खड़े के खड़े रह जाते हैं।”

وَإِذَا أَظْلَمَ عَلَيْهِمْ قَامُوا

यह एक नक़शा खींचा गया है कि एक तरफ़ बारिश हो रही है। यानि कुरान मजीद आसमान से नाज़िल हो रहा है। बारिश को कुरान मजीद “مَاءٌ مُّبَارَكٌ” क़रार देता है और यह खुद “كِتَابٌ مُّبَارَكٌ” है। लेकिन यह कि इसके साथ कड़क हैं, गरज है, कुफ़्र से मुकाबला है, कुफ़्र की तरफ़ से धमकियाँ हैं, अन्देशे और खतरात हैं, इम्तिहानात और आज़माईशें हैं। चुनाँचे मुनाफ़िक्कीन का मामला यह है कि ज़रा कही हालात कुछ बेहतर हुए, कुछ breathing space मिली तो मुस्लमानों के शाना-ब-शाना थोड़ा सा चल लिये कि हम भी मुस्लमान हैं। जब वह देखते कि हालात कुछ पुर सकून हैं, किसी जंग के लिये बुलाया नहीं जा रहा है तो बड़-चढ़ कर बातें करते और अपने ईमान का इज़हार भी करते, लेकिन जैसे ही कोई आज़माइश आती ठिठक कर खड़े के खड़े रह जाते।

“और अल्लाह चाहता तो उनकी समाअत और बसारत को सल्ब कर लेता।”

وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَذَهَبَ بِسَنِهِمْ وَأَبْصَارِهِمْ

लेकिन अल्लाह का क़ानून यही है कि वह फ़ौरी गिरफ्त नहीं करता। उसने इन्सान को इरादे और अमल की आज्ञा दी है। तुम अगर मोमिन सादिक बन कर रहना चाहते हो तो अल्लाह तआला उस रविश (तरीके) को तुम्हारे लिये आसान कर देगा। और अगर तुमने अपने तास्सुब या तकब्बुर की वजह से कुफ़्र का रास्ता इख्तियार किया तो अल्लाह उसी को तुम्हारे लिये खोल देगा। और अगर तुम बीच में लटकना चाहते हो {إِلَى هَؤُلَاءِ وَلَا إِلَى هَؤُلَاءِ} तो लटके रहो। अल्लाह तआला ना किसी को जबरन हक़ पर लायेगा और ना ही किसी को जबरन बातिल की राह पर लेकर जायेगा। इसलिये कि अगर ज़ब्र का मामला हो तो फिर इम्तिहान कैसा? फिर तो जज़ा और सज़ा का तसव्वुर ग़ैर मन्तक़ी (illogical) और ग़ैर माकूल (irrational) ठहरता है।

“यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।”

إِنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

सूरतुल बक्ररह के यह इब्तदाई दो रकूअ इस ऐतबार से बहुत अहम हैं कि इनमें इन्सानी शख्सियतों की तीन गिरोहों में तक्सीम कर दी गयी है, और तावीले आम ज़हन में रखिये कि जब भी कोई दावते हक़ उठेगी, अगर वह वाक़िअतन कुल की कुल हक़ की दावत हो और उसमें इन्क़लाबी रंग हो कि बातिल से पंजा आज़माई करके उसे नीचा दिखाना है और हक़ को गालिब करना है, तो यह तीन क्रिस्म के अफ़राद लाज़िमत वजूद में आयेंगे। इनको पहचानना और इनके किरदार के पीछे जो असल पसमन्ज़र है उसको जानना बहुत ज़रूरी है।

आयात 21 से 29 तक

يَا أَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُمْ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝
الَّذِي جَعَلَ لَكُمُ الْأَرْضَ فِرَاشًا وَالسَّمَاءَ بِنَاءً ۖ وَأَنزَلَ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً فَأَخْرَجَ بِهِ
مِنَ الشَّجَرِ رِزْقًا لَّكُمْ ۖ فَلَا تَجْعَلُوا لِلَّهِ أَندَادًا وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ وَإِنْ كُنْتُمْ فِي
رَيْبٍ مِّمَّا نَزَّلْنَا عَلَىٰ عَبْدِنَا فَأْتُوا بِسُورَةٍ مِّمَّنْ مِثْلِهِ ۖ وَادْعُوا شُهَدَاءَكُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ
إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ فَإِنْ لَمْ تَفْعَلُوا وَلَنْ تَفْعَلُوا فَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِي وَقُودُهَا

النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ ۖ أَعَدَّتْ لِلْكَافِرِينَ ۝ وَيَسِّرِ لِلَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ أَنْ
لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ ۖ كُلَّمَا رُزِقُوا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِزْقًا ۖ قَالُوا هَذَا
الَّذِي رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ ۖ وَأُتُوا بِهِ مُتَشَابِهًا ۖ وَلَهُمْ فِيهَا أَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ ۖ وَهُمْ
فِيهَا خَالِدُونَ ۝ إِنَّ اللَّهَ لَا يَسْتَحْيِي أَنْ يَضْرِبَ مَثَلًا مَّا بَعُوضَةً فَمَا فَوْقَهَا ۖ فَأَمَّا
الَّذِينَ آمَنُوا فَيَعْلَمُونَ أَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ ۖ وَأَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا فَيَقُولُونَ مَاذَا أَرَادَ
اللَّهُ بِهَذَا مَثَلًا ۖ يُضِلُّ بِهِ كَثِيرًا ۖ وَيَهْدِي بِهِ كَثِيرًا ۖ وَمَا يُضِلُّ بِهِ إِلَّا الْفَاسِقِينَ ۝
الَّذِينَ يَنْقُضُونَ عَهْدَ اللَّهِ مِنْ بَعْدِ مِيثَاقِهِ ۖ وَيَقْطَعُونَ مَا أَمَرَ اللَّهُ بِهِ أَنْ يُوصَلَ
وَيُفْسِدُونَ فِي الْأَرْضِ ۖ أُولَٰئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ۝ كَيْفَ تَكْفُرُونَ بِاللَّهِ وَكُنْتُمْ
أَمْوَاتًا فَأَحْيَاكُمْ ۖ ثُمَّ مُمِيتَكُمْ ثُمَّ يُحْيِيكُمْ ثُمَّ إِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ۝ هُوَ الَّذِي خَلَقَ لَكُمْ
مَّا فِي الْأَرْضِ جَمِيعًا ثُمَّ اسْتَوَىٰ إِلَى السَّمَاءِ فَسَوَّاهُنَّ سَبْعَ سَمَوَاتٍ ۖ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ
عَلِيمٌ ۝

सूरतुल बक्ररह के तीसरे रकूअ में कुरान की दावत का खुलासा आ गया है कि कुरान अपने मुखातिब को क्या मानने की दावत देता है और उसकी पुकार क्या है। जैसा कि मैं अर्ज़ कर चुका हूँ, सूरतुल बक्ररह के नुज़ूल से क़ब्ल दो तिहाई कुरान नाज़िल हो चुका था। तरतीबे मुसहफ़ के ऐतबार से वह कुरान बाद में आयेगा, लेकिन तरतीबे नुज़ूली के ऐतबार से वह पसमन्ज़र में मौजूद है। लिहाज़ा सूरतुल बक्ररह के पहले दो रकूओं में मक्की कुरान के मुबाहि़स का खुलासा बयान कर दिया गया है और तीसरे रकूअ में कुरान मजीद की दावत का खुलासा और लुब्बे लुबाब (सारांश) आ गया है, जबकि कुरान मजीद का फ़लसफ़ा और बाज़ निहायत अहम मौज़ूआत व मसाइल का खुलासा चौथे रकूअ में बयान हुआ है। अब हम तीसरे रकूअ का मुतआला कर रहे हैं:

आयत 21

“ऐ लोगो! बन्दगी इख्तियार करो अपने उस

يَا أَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوا رَبَّكُمُ الَّذِي خَلَقَكُمْ

रब (मालिक) की जिसने तुमको पैदा किया
और तुमसे पहले जितने लोग गुज़रे हैं (उन्हें
भी पैदा किया) ताकि तुम बच सको।”

وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ⑩

यह कुरान की दावत का खुलासा है और यही तमाम अम्बिया व रसूल
(अलै०) की दावत थी। सूरतुल आराफ़ और सूरह हूद में एक-एक रसूल का
नाम लेकर उसकी दावत इन अल्फ़ाज़ में बयान की गयी है:

“ऐ मेरी क्रौम के लोगों! अल्लाह की बन्दगी
करो, तुम्हारा कोई और इलाह उसके सिवा
नहीं है।”

يَقَوْمِ اعْبُدُوا اللَّهَ مَا لَكُمْ مِنْ إِلَهِ غَيْرُهُ

सूरतुल शौरा में रसूलों की दावत के ज़िम्न में बार-बार यह अल्फ़ाज़ आये हैं:

“पस अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो और
मेरी इताअत करो।”

فَاتَّقُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا

सूरह नूह में हज़रत नूह (अलै०) की दावत इन अल्फ़ाज़ में बयान हुई:

“कि अल्लाह की बन्दगी करो, उसका तक्रवा
इख़्तियार करो और मेरी इताअत करो!”

أَنِ اعْبُدُوا اللَّهَ وَاتَّقُوهُ وَأَطِيعُوا ⑪

फिर अज़रुए कुरान यही इबादते रब इन्सान की गायत-ए-तख़लीक़ (utmost
creation) है (अज़ज़ारियात):

“और हमने ज़िन्नो और इंसानों को पैदा ही
सिर्फ़ इसलिये किया है कि हमारी बन्दगी
करें।”

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْإِنْسَ إِلَّا لِيَعْبُدُونِ ⑫

चुनाँचे तमाम रसूलों की दावत यही “इबादते रब” है और मुहम्मद रसूल
अल्लाह ﷺ की दावत भी यही है, लेकिन यहाँ एक बहुत बड़ा फ़र्क़ वाक़ेअ
हो गया है। वह यह कि बाक़ी तमाम रसूलों की दावत के ज़िम्न में सीगा-ए-
ख़िताब “या क्रौमी” है। यानि “ऐ मेरी क्रौम के लोगों!” जबकि यहाँ सीगा-ए-
ख़िताब है “या अय्युहन्नास” यानि “ऐ बनी नौऐ इन्सान!” मालूम हुआ कि
मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ से पहले तमाम रसूल (अलै०) सिर्फ़ अपनी-
अपनी क्रौमों की तरफ़ आये, जबकि पैगम्बर आखिरुज़़मान हज़रत मुहम्मद

रसूल अल्लाह ﷺ अल्लाह तआला के आखरी और कामिल रसूल हैं जिनकी
दावत आफ़ाक़ी (universal) है।

आम तौर पर लोग जो ग़लत रास्ता इख़्तियार कर लेते हैं उस पर इस
दलील से ज़मे रहते हैं कि हमारे आबा व अजदाद का रास्ता यही था।
{الَّذِينَ خَلَقَكُمْ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ} के अल्फ़ाज़ में इस दलील का रद्द भी मौजूद है कि
जैसे तुम मख़्लूक़ हो वैसे ही तुम्हारे आबा व अजदाद भी मख़्लूक़ थे, जैसे तुम
ख़ता कर सकते हो इसी तरह वह भी तो ख़ता कर सकते थे। लिहाज़ा यह ना
देखो कि आबा व अजदाद का रास्ता क्या था, बल्कि यह देखो कि हक़ क्या है।

{لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ} “ताकि तुम बच सको।” यानि दुनिया में इफ़रात व तफ़रीत
(inflation & deflation) के धोखों से बच सको और आख़िरत में अल्लाह के
अज़ाब से बच सको। इन दोनों से अगर बचना है तो अल्लाह की बन्दगी की
रविश इख़्तियार करो।

आयत 22

“जिसने तुम्हारे लिये ज़मीन को फ़र्श बना
दिया और आसमान को छत बना दिया।”

الَّذِي جَعَلَ لَكُمُ الْأَرْضَ فِرَاشًا وَالسَّمَاءَ
بِنَاءً

“और आसमान से पानी बरसाया”

وَأَنْزَلَ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً

“फिर उस (पानी) के ज़रिये से (ज़मीन से) हर
तरह की पैदावार निकाल कर तुम्हारे लिये
रिज़क़ बहम (provided) पहुँचाया।”

فَأَخْرَجَ بِهِ مِنَ الثَّمَرَاتِ رِزْقًا لَّكُمْ ⑬

“तो हरगिज़ अल्लाह के मदे मुकाबिल ना
ठहराओ जानते-बूझते।”

فَلَا تَجْعَلُوا لِلَّهِ أَنْدَادًا وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ⑭

وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ का एक मतलब यह भी है कि जब तुम भी मानते हो कि इस
कायनात का ख़ालिक़ अल्लाह के सिवा कोई नहीं, तो फिर उसके शरीक़ क्यों
ठहराते हो? अहले अरब यह बात मानते थे कि कायनात का ख़ालिक़ सिर्फ़
और सिर्फ़ अल्लाह है, अलबत्ता जो उनके देवी-देवता थे उन्हें वह समझते थे

कि यह अल्लाह के अवतार हैं या अल्लाह के यहाँ बहुत पसन्दीदा हैं, उसके महबूब हैं, उसके औलिया हैं, उसकी बेटियाँ हैं, लिहाज़ा यह शफाअत करेंगे तो हमारा बेड़ा पार हो जायेगा। उनसे कहा जा रहा है कि जब तुम यह मानते हो कि कायनात का ख़ालिक एक अल्लाह है, वही इसका मुदब्विर (planner) है तो अब किसी को उसका मद्दे मुक़ाबिल ना बनाओ।

”يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ” की जमा है, इसके मायने मद्दे मुक़ाबिल है। ख़ुत्बा-ए-जुमा में आपने यह अल्फ़ाज़ सुने होंगे: ”لَا خِدْلَ لَهُ وَلَا يَدَّ لَهُ“ हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रजि०) बयान करते हैं कि मैंने रसूल अल्लाह ﷺ से दरयाफ़्त किया: अल्लाह के नज़दीक सबसे बड़ा गुनाह कौनसा है? आप ﷺ ने फ़रमाया: ((إِنَّ تَجَعَلَ لِلَّهِ دِينًا وَهُوَ خَلَقَكَ)) (1) ”यह कि तू उसका कोई मद्दे मुक़ाबिल ठहराये हालाँकि उसने तुझे पैदा किया है।“ अल्लाह सुब्हाना व तआला का किसी दर्जे में कोई शरीक या मद्दे मुक़ाबिल नहीं है। इस ज़िम्न में रसूल अल्लाह ﷺ उम्मत को इस दर्जे तौहीद की बारीकियों तक पहुँचा कर गये हैं कि ऐसे तसव्वुरात की बिल्कुल जड़ कट जाती है। एक सहाबी (रजि०) ने आप ﷺ के सामने ऐसे ही कह दिया: ”مَا شَاءَ اللَّهُ وَمَا شِئْتُ“ यानि जो अल्लाह चाहे और जो आप ﷺ चाहें। आप ﷺ ने उन्हें फ़ौरन टोक दिया और फ़रमाया: ((أَجَعَلْتَنِي لِلَّهِ دِينًا؟ مَا شَاءَ اللَّهُ وَخَدَّ)) (2) ”क्या तूने मुझे अल्लाह का मद्दे मुक़ाबिल बना दिया है? (बल्कि वही होगा) जो तन्हा अल्लाह चाहे।“ इस कायनात में मशीयत सिर्फ़ एक हस्ती की चलती है। किसी और की मशीयत उसकी मशीयत के ताबेअ पूरी हो जाये तो हो जाये, लेकिन मशीयते मुतलक सिर्फ़ उसकी है। यहाँ तक कि कुरान हकीम में रसूल अल्लाह ﷺ से फ़रमाया गया: {إِنَّكَ لَا تَهْدِي مَنْ أَحْبَبْتَ وَلَكِنَّ اللَّهَ يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ} (अल क़सस:56) ”(ऐ नबी ﷺ!) यक़ीनन आप जिसे चाहें उसे हिदायत नहीं दे सकते, बल्कि अल्लाह जिसे चाहता है हिदायत देता है।“ अगर हिदायत का मामला रसूल अल्लाह ﷺ के इख़्तियार में होता तो अबु तालिब दुनिया से ईमान लाये बग़ैर रुख़सत ना होते।

इन दो आयतों में तौहीद के दोनों पहलू बयान हो गये, तौहीद नज़री भी और तौहीद अमली भी। तौहीद अमली यह है कि बन्दगी सिर्फ़ उसी की है। अब अगली आयत में ईमान बिर्रिसालत का बयान आ रहा है।

आयत 23

”और अगर तुम वाक़िअतन शक में हो इस कलाम के बारे में जो हमने उतारा अपने बन्दे पर (कि यह हमारा नाज़िलकर्दा है कि नहीं)“

وَأَنْ كُنْتُمْ فِي رَيْبٍ مِّمَّا نَزَّلْنَا عَلَىٰ عَبْدِنَا

”तो ले आओ एक ही सूरत इस जैसी।“

فَأْتُوا بِسُورَةٍ مِّثْلِهِ

”तआरफ़े कुरान“ में यह बात तफ़सील से बयान की गयी थी कि कुरान हकीम में ऐसे पाँच मक़ामात है जहाँ पर यह चैलेंज मौजूद है कि अगर तुम्हारा यह ख़याल है कि यह कलाम मुहम्मद (ﷺ) की इख़तराअ (आविष्कार) है तो तुम भी मुक़ाबले में ऐसा ही कलाम पेश करो। सूरतुत्तूर की आयत 33, 34 में इरशाद हुआ: ”क्या इनका यह कहना है कि इसे मुहम्मद (ﷺ) ने खुद गढ़ लिया है? बल्कि हकीकत यह है कि यह मानने को तैयार नहीं। फिर चाहिये कि वह इसी तरह का कोई कलाम पेश करें अगर वह सच्चे हैं।“ सूरह बनी इसराइल (आयत 88) में फ़रमाया गया कि ”अगर तमाम ज़िन्न ओ इन्स जमा होकर भी इस कुरान जैसी किताब पेश करना चाहें तो हरगिज़ नहीं कर सकेंगे, चाहे वह सब एक दूसरे के मददगार ही क्यों न हो।“ फिर सूरह हूद (आयत 13) में फ़रमाया गया कि ”(ऐ नबी ﷺ) इनसे कह दीजिये (अगर पूरे कुरान की नज़ीर नहीं ला सकते) तो ऐसी दस सूरतें ही गढ़ कर ले आओ!“ इसके बाद मज़ीद नीचे उतर कर जिसे बर सबीले तन्ज़ील कहा जाता है, सूरह यूनुस (आयत 38) में इस जैसी एक ही सूरत बना कर ले आने का चैलेंज दिया गया। मज़क़ूरा वाला (उपरोक्त) तमाम मक़ामात मक्की सूरतों में हैं। पहली मदनी सूरत ”अल-बक्ररह“ की आयत ज़ेरे मुतआला में यही बात बड़े अहतमाम के साथ फ़रमायी गयी कि अगर तुम लोगों को इस कलाम के बारे में कोई शक है जो हमने अपने बन्दे पर नाज़िल किया है (कि यह अल्लाह का कलाम नहीं है) तो इस जैसी एक सूरत तुम भी मौजू करके ले आओ! यह एक एक सूरत सूरतुल अन्न के मसावी (बराबर) भी हो सकती थी, सूरतुल कौसर के मसावी भी हो सकती थी।

”और बुला लो अपने सारे मददगारों को अल्लाह के सिवा अगर तुम सच्चे हो।“

وَادْعُوا شُهَدَاءَكُمْ مِّنْ دُونِ اللَّهِ إِنْ كُنْتُمْ

صَادِقِينَ ﴿٢٣﴾

कुरैश का ख्याल यह था कि शौअरा (शायरों) के पास जिन होते हैं, जो उन्हें शेर सिखाते हैं, वरना आम आदमी तो शेर नहीं कह सकता। चुनाँचे फ़रमाया कि जो भी तुम्हारे मददगार हों, एक अल्लाह को छोड़ कर जिसकी भी तुम मदद हासिल कर सकते हो, जिन्नात हों या इन्सान हों, ख़तीब हों, शौअरा हों या अदीब (लेखक) हों, इन सबको जमा कर लो और इस कुरान जैसी एक ही सूरत बना कर ले आओ, अगर तुम सच्चे हो।

कुरान का अन्दाज़ यह है कि वह अपने अन्दर झाँकने की दावत देता है। चुनाँचे यहाँ गोया आँखों में आँखे डाल कर यह कहा जा रहा है कि हकीकत में तुम्हें इस कुरान के कलामे इलाही होने में कोई शक नहीं है, यह तो तुम महज़ बात बना रहे हो। अगर तुम्हें वाक़िअतन शक है, अगर तुम अपने दावे में सच्चे हो तो आओ मैदान में और इस जैसी एक ही सूरत बना लाओ!

आयत 24

“फिर अगर तुम ऐसा ना कर सको, और हरगिज़ ना कर सकोगे!”

فَإِنْ لَّمْ تَفْعَلُوا وَلَنْ تَفْعَلُوا

ज़रा अन्दाज़ देखिये, कैसा तहदी (चुनौतीपूर्ण) और चैलेंज का है! और यह चैलेंज अल्लाह के सिवा कोई नहीं दे सकता। यह अन्दाज़ दुनिया की किसी किताब का नहीं है, यह दावा सिर्फ़ कुरान का है। कैसा दो टूक अन्दाज़ है: “फिर अगर तुम ना कर पाओ, और तुम हरगिज़ नहीं कर पाओगे।”

“तो फिर बचो उस आग से जिसका ईंधन बनेंगे इन्सान और पत्थर।”

فَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِي وَقُودُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ

जहन्नम के ईंधन के तौर पर पत्थरों का ज़िक्र खास तौर पर किया गया है। इसके दो इमकानात हैं। एक तो यह कि आपको मालूम है पत्थर के कोयले की आग आम लकड़ी के कोयले के मुक़ाबले में बड़ी सख़्त होती है। लिहाज़ा जहन्नम की आग बहुत बड़े-बड़े पत्थरों से दहकायी जायेगी। दूसरे यह कि मुशरिकीन ने जो मअबूद तराश रखे थे वह पत्थर के होते थे। मुशरिकीन को आगाह किया जा रहा है कि तुम्हारे साथ तुम्हारे इन मअबूदों को भी जहन्नम में झोंका जायेगा ताकि तुम्हारी हसरत के अन्दर इज़ाफ़ा हो कि यह हैं वह

मअबूदाने बातिल जिनसे हम दुआएँ माँगा करते थे, जिनके सामने माथे टेकते थे, जिनके सामने दण्डवत करते थे, जिनको चढ़ावे चढ़ाते थे!

“तैयार की गयी है काफ़िरों के लिये।”

أُعِدَّتْ لِلْكَافِرِينَ

यह जहन्नम मुनकिरीने हक़ के लिये तैयार की गयी है। अब यहाँ गोया ईमान बिल्लाह और ईमान बिर्रिसालत के बाद ईमान बिलआख़िरत का ज़िक्र आ गया।

आयत 25

“और बशारत दे दीजिये (ऐ नबी ﷺ!) उन लोगों को जो ईमान लाये और जिन्होंने नेक अमल किये”

وَبَشِّرِ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ

“कि उनके लिये ऐसे बाग़ात हैं जिनके नीचे नदियाँ बहती होगी।”

أَنَّ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ

यह लफ़्ज़ी तर्जुमा है। मुराद इससे यह है कि जिनके दामन में नदियाँ बहती होंगी। इसलिये कि फ़ितरी बाग़ आम तौर पर ऐसा होता है कि जिसमें ज़रा ऊँचाई पर दरख़्त लगे हुए हैं और दामन में नदी बह रही है, जिससे खुद-ब-खुद आबपाशी हो रही है और दरख़्तों की जड़ों तक पानी पहुँच रहा है।

“जब भी उन्हें दिया जायेगा वहाँ का कोई भी फल रिज़क़ के तौर पर (यानि खाने के लिये)”

كُلَّمَا رُزِقُوا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِزْقًا

“वे कहेंगे यह तो वही है जो हमें पहले भी मिलता था”

قَالُوا هَذَا الَّذِي رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ

“और दिये जायेंगे उनको फल एक सूरत के।”

وَأُتُوا بِهِ مُتَشَابِهًا

इसका एक मफ़हूम तो यह है कि जन्नत में अहले जन्नत की जो इब्तदाई दावत या इब्तदाई ज़ियाफ़त (नुजुल) होगी उसमें उन्हें वही फल पेश किये जायेंगे जो दुनिया में मारूफ़ हैं, मसलन अनार, अंगूर, सेब, खजूर वगैरह। अहले जन्नत उन्हें देख कर कहेंगे कि यह तो वही फल हैं जो हम दुनिया में खाते आये हैं,

लेकिन जब उन्हें चखेंगे तो ज़ाहिरी मुशाबिहत (समानता) के बावजूद ज़ायके में ज़मीन व आसमान का फर्क पायेंगे। और एक मफ़हूम यह भी लिया गया है कि अहले जन्नत को जन्नत में भी वही फल मिलते रहेंगे, लेकिन हर बार उनका ज़ायका बदलता रहेगा। उनकी शकल व सूरत वही रहेगी, लेकिन ज़ायका वह नहीं रहेगा। लिहज़ा यह दुनिया वाला मामला नहीं होगा कि एक ही शय को खाते-खाते इन्सान की तबीयत भर जाती है।

“और उनके लिये उस (जन्नत) में निहायत
पाकबाज़ बीवियाँ होंगी।”

وَلَهُمْ فِيهَا أَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ

“और वह उसमें रहेंगे हमेशा-हमेशा।”

وَهُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ⑥

इन पाँच आयात (21 से 25) में ईमानियाते सलासा यानि ईमान बिल्लाह, ईमान बिरसूल और ईमान बिलआखिरा की दावत आ गयी। अब आगे कुछ ज़िमनी (incidental) मसाईल ज़ेरे बहस आयेंगे।

आयत 26

“यक़ीनन अल्लाह इससे नहीं शरमाता कि
बयान करे कोई मिसाल मच्छर की या उस
चीज़ की जो उससे बड़ कर है।”

إِنَّ اللَّهَ لَا يَسْتَحْيِي أَنْ يَضْرِبَ مَثَلًا مَّا
بِخُوصَةٍ مَّا فَوْقَهَا

कुफ़्रार की तरफ़ से कुरान के बारे में कई ऐतराज़ात उठाये जाते थे। वह कभी भी उस चैलेंज का मुक़ाबला तो ना कर सके जो कुरान ने उन्हें بِسُورَةٍ مِنْ مِّثْلِهِ के अल्फ़ाज़ में दिया था, लेकिन ख्वाह माख्वाह के ऐतराज़ात उठाते रहे। यह बिल्कुल ऐसी ही बात है जैसे किसी मुसव्विर की तस्वीर पर ऐतराज़ करने वाले तो बहुत थे लेकिन जब कहा गया कि यह ब्रुश लीजिये और ज़रा इसको ठीक कर दीजिये तो सब पीछे हट गये। कुरान के मुक़ाबले में कोई सूरत लाना तो उनके लिये मुमकिन नहीं था लेकिन इधर-उधर से ऐतराज़ात करने के लिये उनकी ज़बानें खुलती थीं। उनमें से उनका एक ऐतराज़ यहाँ नकल किया जा रहा है कि कुरान मजीद में मक्खी की तशबीह (तुलना) आयी है, यह तो बहुत हकीर शय (छोटी/तुच्छ चीज़) है। कोई आला मुतकल्लिम अपने आला कलाम में ऐसी हकीर चीज़ों का तज़क़िरा नहीं करता। कुरान मजीद में मक़ड़ी

जैसी हकीर शय का भी ज़िक्र है, चुनाँचे यह कोई आला कलाम नहीं है। यहाँ इसका जवाब दिया जा रहा है। दरअसल तशबीह और तमसील के अन्दर मुमसिल लहू और मुमसिल बिही में मुनासबत और मुताबक़त होनी चाहिये। यानि कोई तमसील या तशबीह बयान करनी हो तो जिस शय के लिये तशबीह दी जा रही है उससे मुताबक़त और मुनासबत रखने वाली शय से तशबीह दी जानी चाहिये। कोई शय अगर बहुत हकीर है तो उसे किसी अज़मत वाली शय से आखिर कैसे तशबीह दी जायेगी? उसे तो किसी हकीर शय ही से तशबीह दी जायेगी तो तशबीह का असल मक़सद पूरा होगा। चुनाँचे फ़रमाया कि अल्लाह तआला के लिये यह कोई शर्म या आर (लज्जा) की बात नहीं है कि वह मच्छर की मिसाल बयान करे या उस चीज़ की जो उससे बड़ कर है। लफ़ज़ “فَوْقَهَا” (उससे ऊपर) में दोनो मायने मौजूद हैं। यानि कमतर और हकीर होने में उससे भी बड़ कर या यह कि उससे ऊपर की कोई शय। इसलिये कि मक्खी या मक़ड़ी बहरहाल मच्छर से ज़रा बड़ी शय है।

“तो जो लोग साहिबे ईमान हैं वह जानते हैं
कि यह यक़ीनन हक़ है उनके रब की तरफ
से।”

فَأَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا فَيَعْلَمُونَ أَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ
رَبِّهِمْ

“और जिन्होंने कुफ़्र किया सो वह कहते हैं कि
क्या मतलब था अल्लाह का इस मिसाल से?”

وَأَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا فَيَقُولُونَ مَاذَا أَرَادَ اللَّهُ
بِهَذَا مَثَلًا

हक़ के मुन्कर नाक भौं चढ़ा रहे हैं और ऐतराज़ कर रहे हैं कि इस मिसाल से अल्लाह ने क्या मुराद ली है? इस ज़िमन में अगला जुम्ला बहुत अहम है।

“गुमराह करता है अल्लाह तआला इसके
ज़रिये से बहुतों को और हिदायत देता है इसी
के ज़रिये से बहुतों को।”

يُضِلُّ بِهِ كَثِيرًا وَيَهْدِي بِهِ كَثِيرًا

इन मिसालों के ज़रिये अल्लाह तआला बहुत सों को गुमराही में मुब्तला कर देता है और बहुत सों को राहे रास्त दिखा देता है। मालूम हुआ कि हिदायत और गुमराही का दारोमदार इन्सान की अपनी दाखिली कैफ़ियत (subjective condition) पर है। आपके दिल में ख़ैर है, भलाई है, आपकी नीयत तलबे हिदायत और तलबे इल्म की है तो आपको इस कुरान से

हिदायत मिल जायेगी, और दिल में ज़ेग है, कजी है, नीयत में टेढ़ और फ़साद है तो इसी के ज़रिये से अल्लाह आपकी गुमराही में इज़ाफ़ा कर देगा। लेकिन अल्लाह तआला का किसी को हिदायत देना और किसी को गुमराही में मुब्तला कर देना अललटप नहीं है, किसी क़ायदे और क़ानून के बग़ैर नहीं है।

“और नहीं गुमराह करता वह इसके ज़रिये से
मगर सिर्फ़ सरकश लोगों को।” وَمَا يُضِلُّ بِهِ إِلَّا الْفَاسِقِينَ ۝

इससे गुमराही में वह सिर्फ़ उन्हीं को मुब्तला करता है जिनमें सरकशी है, ताअद्दी (उल्लंघन) है, तकब्बुर है। अगली आयत में उनके औसाफ़ बयान कर दिये गये।

आयत 27

“जो तोड़ देते हैं अल्लाह के (साथ किये हुए) अहद को मज़बूत बाँध लेने के बाद।” الَّذِينَ يَنْقُضُونَ عَهْدَ اللَّهِ مِنْ بَعْدِ مِيثَاقِهِ

अल्लाह तआला और बन्दे के दरमियान सबसे बड़ा अहद “अहदे अलस्त” है, जिसका ज़िक्र सूरतुल आराफ़ में आयेगा। यह अहद आलमे अरवाह में तमाम अरवाहे इन्सानिया ने किया था, इनमें मैं भी था, आप भी थे, सब थे। अलगज़ तमाम के तमाम इन्सान जितने आज तक दुनिया में आ चुके हैं और जो क़यामत तक अभी आने वाले हैं, इस अहद के वक़्त मौजूद थे, लेकिन सिर्फ़ अरवाह की शक़ल में थे, जिस्म मौजूद नहीं थे। और यह बात याद रखिये कि इन्सान का रूहानी वजूद मुकम्मल वजूद है और अब्बलन तख़लीक़ उसी की हुई थी। “अहदे अलस्त” में तमाम बनी आदम से अल्लाह तआला ने दरयाफ़्त फरमाया: अलस्तु बिरब्बिकुम (क्या मैं ही तुम्हारा रब्ब नहीं हूँ?) सबने एक ही जवाब दिया: बला (क्यों नहीं!) तो यह जो फ़ासिक़ हैं, नाफ़रमान हैं, सरकश हैं, इन्होंने इस अहद को तोड़ा और अल्लाह को अपना मालिक, अपना ख़ालिक़ और अपना हाकिम मानने की बजाय खुद हाकिम बन कर बैठ गये और इस तरह के दावे किये: {أَلَيْسَ لِي مَلِكٌ مِّثْرِي} “क्या मिस्र की बादशाही मेरी नहीं है?” गैरुल्लाह की हाकिमियत (sovereignty) को तस्लीम करना सबसे बड़ी बगावत, सरकशी, फिस्क़ (भ्रष्टाचार) और नाफ़रमानी है, ख्वाह वह

मलूकियत की सूरत में हो या अवामी हाकिमियत (Popular Sovereignty) की सूरत में।

“और काटते हैं उस चीज़ को जिसे अल्लाह ने जोड़ने का हुक्म दिया है” وَيَقْطَعُونَ مَا أَمَرَ اللَّهُ بِهِ أَنْ يُوصَلَ

अल्लाह ने सिला रहमी (रिश्तेदारी जोड़ने) का हुक्म दिया है, यह क़ता रहमी (रिश्तेदारी ख़त्म) करते हैं। माल की तलब में, उसके माल को हथियाने के लिये भाई-भाई को ख़त्म कर देता है। इन्सान अपनी ज़ाती अगराज़ (ज़रूरतों) के लिये, अपने तकब्बुर और तअल्ली (बडप्पन) की खातिर तमाम अख़लाक़ी हुदूद को पसे पुश्त डाल देता है। हमारी शरीअत का फ़लसफ़ा यह है कि हमें दो तरह के ताल्लुक़ात जोड़ने का हुक्म दिया गया है। एक ताल्लुक़ है बन्दे का अल्लाह के साथ। उसका ताल्लुक़ “हुक्क़ुल्लाह” से है। जबकि एक ताल्लुक़ है बन्दों को बन्दों के साथ। यह “हुक्क़ुलइबाद” से मुताल्लिक़ है। अल्लाह का हक़ यह है कि उसे हाकिम और मालिक समझो और खुद उसके बन्दे बनो। जबकि इन्सानों का हक़ यह है कि: ((كُونُوا عِبَادَ اللَّهِ إِخْوًا))⁽³⁾ “सब आपस में भाई-भाई होकर अल्लाह के बन्दे बन जाओ।” इस ज़िम्न में अहमतररीन रहमी रिश्ता है, यानि सगे बहन-भाई। फिर दादा-दादी की औलाद में तमाम चचाज़ाद वग़ैरह (cousins) आ जायेंगे। इसके ऊपर परदादा-परदादी की औलाद का दायरा मज़ीद वसी (बड़ा) हो जायेगा। इसी तरह ऊपर चलते जायें यहाँ तक कि आदम और हव्वा पर तमाम इन्सान जमा हो जायेंगे। तो रहमी रिश्ते की बड़ी अहमियत है। यहाँ फ़ासिक़ीन की दो सिफ़ात बयान कर दी गयीं। एक यह कि वह अल्लाह के अहद को मज़बूती से बाँधने के बाद तोड़ देते हैं और दूसरे यह कि जिन रिश्तों को अल्लाह ने जोड़ने का हुक्म दिया है यह उन्हें क़ता करते (काटते) हैं।

“और ज़मीन में फ़साद बरपा करते हैं।” وَيُفْسِدُونَ فِي الْأَرْضِ

मुताज़किरा बाला दोनों चीज़ों के नतीजे में ज़मीन में फ़साद पैदा होता है। इन्सान अल्लाह की इताअत से बागी हो जायें या आपस में एक-दूसरे की गरदन काटने लगे तो इसका नतीजा फ़साद फिल अर्द (ज़मीन में फ़साद) की सूरत में निकलता है।

“यही लोग तुक़सान उठाने वाले हैं।”

أُولَٰئِكَ هُمُ الْخٰسِرُونَ ⑩

यही लोग हैं जो बिलआखिर आखरी और दाईमी खसारे में रहने वाले हैं।

आयत 28

“तुम कैसे कुफ़र करते हो अल्लाह का हालाँकि तुम मुर्दा थे, फिर उसने तुम्हें ज़िन्दा किया।”

كَيْفَ تَكْفُرُونَ بِاللّٰهِ وَكُنْتُمْ اَمْوَاتًا فَاحْيَاكُمْ ⑪

“फिर वह तुम्हें मारेगा, फिर जिलायेगा, फिर तुम उसी की तरफ लौटा दिये जाओगे।”

ثُمَّ يَمِيتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيكُمْ ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ⑫

इस मक़ाम पर एक बड़ी गहरी हिकमत और फ़लसफ़े की बात बयान की गयी है जो आज निगाहों से बिल्कुल ओझल हो चुकी है। वह यह कि हम दुनिया में आने से पहले मुर्दा थे (كُنْتُمْ اَمْوَاتًا)। इसके क्या मायने हैं?

यह मज़मून सूरह गाफ़िर/सूरतुल मोमिन में ज़्यादा वज़ाहत से आया है, जो सूरतुल बक्ररह से पहले नाज़िल हो चुकी थी। लिहाज़ा यहाँ इज्माली (संक्षिप्त) तज़क़िरा है। वहाँ अहले जहन्नम का क़ौल बाअल्फ़ाज़ नक़ल हुआ है:

“ऐ हमारे रब! तूने दो मर्तबा हम पर मौत वारिद की और दो मर्तबा हमें ज़िन्दा किया, अब हमने अपने गुनाहों का ऐतराफ़ कर लिया है, तो अब यहाँ से निकलने का भी कोई रास्ता है?”

رَبَّنَا اَمَتْنَا اثْنَتَيْنِ وَاَحْيَيْنَا اثْنَتَيْنِ فَاعْتَرَفْنَا بِذُنُوبِنَا فَهَلْ اِلٰى خُرُوجٍ مِّنْ سَبِيلٍ ⑬

इससे यह हकीकत बाज़ेह हुई कि इन्सान की तख़लीक़े अब्बल आलमे अरवाह में सिर्फ़ अरवाह की हैसियत से हुई थी। अहादीस में अल्फ़ाज़ वारिद हुए हैं: ((الْاَرْوَاحُ جُنُودٌ مُّجَنَّدَةٌ)) (मुत्तफ़िक्क अलै०) यानि अरवाह जमाशुदा लश्क़रों की सूरत में थीं। इन अरवाह से वह अहद लिया गया जो “अहदे अलस्त” कहलाता है। फिर इन्हें सुला दिया गया। यह गोया पहली मौत थी जो हम गुज़ार आये हैं। (आप जानते हैं कि मुर्दा मादूम (अस्तित्वहीन) नहीं होता, बेजान होता है, एक तरह से सोया हुआ होता है। कुरान हकीम में मौत और नींद को बाहम तशबीह दी गयी है।) फिर दुनिया में आलमे ख़ल्क़ का मरहला आया, जिसमें

तनासुल (प्रजनन) के ज़रिये से अज्सादे इन्सानिया (Human bodies) की तख़लीक़ होती है और उनमें अरवाह फूँकी जाती हैं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसूद (रजि०) से मरवी मुत्तफ़िक्क अलै हदीस के मुताबिक़ रहमे मादर (गर्भ) में जनीन (भ्रूण) जब चार माह का हो जाता है तो उसमें वह रूह लाकर फूँक दी जाती है। यह गोया पहली मर्तबा का ज़िन्दा किया जाना हो गया। हम इस दुनिया में अपने जसद (जिस्म) के साथ ज़िन्दा हो गये, हमें पहली मौत की नींद से जगा दिया गया। अब हमें जो मौत आयेगी वह हमारी दूसरी मौत होगी और इसके नतीजे में हमारा जसद वहीं चला जायेगा जहाँ से आया था (यानि मिट्टी में) और हमारी रूह भी जहाँ से आयी थी वहीं वापस चली जायेगी। यह फ़लसफ़ा व हिकमते कुरानी का बहुत गहरा नुक्ता है।

आयत 29

“वही है जिसने पैदा किया तुम्हारे लिये जो कुछ भी ज़मीन में है।”

इस आयत में ख़िलाफ़त का मज़मून शुरू हो गया है। हदीस में आता है: ((إِنَّ الدُّنْيَا خُلِقَتْ لِلَّهِ وَأَنْتُمْ خُلِقْتُمْ لِالْآخِرَةِ)) (4) “यह दुनिया तुम्हारे लिये बनायी गयी है और तुम आख़िरत के लिये बनाये गये हो।” अगली आयत में हज़रत आदम (अलै०) की ख़िलाफ़ते अर्ज़ी का ज़िक़र है। गोया ज़मीन में जो कुछ भी पैदा किया गया है वह इन्सान की ख़िलाफ़त के लिये पैदा किया गया है।

“फिर वह मुतवज्जा हुआ आसमानों की तरफ़ और उन्हें ठीक-ठीक सात आसमानों की शक़ल में बना दिया।”

ثُمَّ اسْتَوٰى اِلَى السَّمَاءِ فَسَوّٰهُنَّ سَبْعَ سَمٰوٰتٍ ⑭

यह आयत ताहाल (अभी तक) आयाते मुताशाबेहात में से है। सात आसमानों की क्या हकीकत है, हम अभी तक पूरे तौर पर इससे वाकिफ़ नहीं हैं।

“और वह हर चीज़ का इल्म रखने वाला है।”

وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ⑮

उसे हर शय का इल्मे हकीक़ी हासिल है।

आयात 30 से 39 तक

وَإِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلِكَةِ إِنِّي جَاعِلٌ فِي الْأَرْضِ خَلِيفَةً ۖ قَالُوا أَتَجْعَلُ فِيهَا مَنْ يُفْسِدُ فِيهَا وَيَسْفِكُ الدِّمَاءَ ۚ وَنَحْنُ نُسَبِّحُ بِحَمْدِكَ وَنُقَدِّسُ لَكَ ۚ قَالَ إِنِّي أَعْلَمُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝ وَعَلَّمَ آدَمَ الْأَسْمَاءَ كُلَّهَا ثُمَّ عَرَضَهُمْ عَلَى الْمَلِكَةِ ۖ فَقَالَ أَنْبِئُونِي بِأَسْمَاءِ هَؤُلَاءِ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ قَالُوا سُبْحَنَكَ لَا عِلْمَ لَنَا إِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا ۚ إِنَّكَ أَنْتَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ۝ قَالَ يَادُمُ أَنْبِئْهُمْ بِأَسْمَائِهِمْ ۖ فَلَمَّا أَنْبَأَهُمْ بِأَسْمَائِهِمْ ۖ قَالَ أَلَمْ أَقُلْ لَكُمْ إِنِّي أَعْلَمُ غَيْبِ السَّمُوتِ وَالْأَرْضِ وَأَعْلَمُ مَا تُبْدُونَ وَمَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ۝ وَإِذْ قُلْنَا لِلْمَلِكَةِ اسْجُدْ لِآدَمَ فَسَجَدَ إِلَّا إِبْلِيسَ ۖ أَبَى وَاسْتَكْبَرَ ۖ وَكَانَ مِنَ الْكَافِرِينَ ۝ وَقُلْنَا يَادُمُ اسْكُنْ أَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ وَكُلَا مِنْهَا رَغَدًا حَيْثُ شِئْتُمَا ۖ وَلَا تَقْرَبَا هَذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُونَا مِنَ الظَّالِمِينَ ۝ فَأَزَلَّهُمَا الشَّيْطَانُ عَنْهَا فَأَخْرَجَهُمَا مِمَّا كَانَا فِيهِ ۖ وَقُلْنَا اهْبِطُوا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ ۖ وَلَكُمْ فِي الْأَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ إِلَىٰ حِينٍ ۝ فَتَلَقَّى آدَمُ مِنْ رَبِّهِ كَلِمَاتٍ فَتَابَ عَلَيْهِ ۚ إِنَّهُ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ۝ قُلْنَا اهْبِطُوا مِنْهَا جَمِيعًا ۖ فَإِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنِّي هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَايَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِآيَاتِنَا أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

आयत 30

“और याद करो जबकि कहा था तुम्हारे रब ने फ़रिश्तों से कि मैं बनाने वाला हूँ ज़मीन में एक खलीफ़ा।”

وَإِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلِكَةِ إِنِّي جَاعِلٌ فِي الْأَرْضِ خَلِيفَةً ۖ

खलीफ़ा दर हकीकत नायब को कहते हैं। आमतौर पर लोगों को मुग़लता लाहक़ होता है कि खलीफ़ा और जानशीन किसी की मौत के बाद मुकर्रर होता है, ज़िन्दगी में नहीं होता। लेकिन इस दुनिया में इन्सान की असल

हकीकत को समझने के लिये वायसराय का तसव्वुर ज़हन में रखिये। 1947 ई० से पहले हम अंग्रेज़ के गुलाम थे। हमारा असल हाकिम (बादशाह या मलिका) इंगलिस्तान में था, जबकि देहली में वायसराय होता था। वायसराय का काम यह था कि His Majesty या Her Majesty की हुकूमत का जो भी हुकूम मौसूल (प्राप्त) हो उसे बिना चूँ व चरा बगैर किसी तगय्युर (परिवर्तन) और तब्दील के नाफ़िज़ करे। अलबत्ता वायसराय को इख़्तियार हासिल था कि अगर किसी मामले में इंगलिस्तान से हुकूम ना आये तो वह यहाँ के हालात के मुताबिक़ अपनी बेहतरीन राय कायम करे। वह ग़ौरो फ़िक्क करे कि यहाँ की मसलहतें क्या हैं और जो चीज़ भी सल्तनत की मसलहत में हो उसके मुताबिक़ फ़ैसला करे। बैयन ही यही रिश्ता कायनात के असल हाकिम और ज़मीन पर उसके खलीफ़ा के माबैन है। कायनात का असल हाकिम और मालिक अल्लाह तआला है, लेकिन उसने अपने आप को ग़ैब के परदे में छुपा लिया है। ज़मीन पर इन्सान उसका खलीफ़ा है। अब इन्सान का काम यह है कि जो हिदायत अल्लाह की तरफ़ से आ रही है उस पर तो बे चूँ व चरा अमल करे और जिस मामले में कोई वाज़ेह हिदायत नहीं है वहाँ ग़ौरो फ़िक्क और सोच-विचार करे और इस्तमबात (अनुमान) व इज्त्हाद (राय) से काम लेते हुए जो बात रूहे दीन से ज़्यादा से ज़्यादा मुताबक़त रखने वाली (मिलती) हो उसे इख़्तियार करे। यही दर हकीकत रिश्ता-ए-ख़िलाफ़त है जो अल्लाह और इन्सान के माबैन है।

यह हैसियत तमाम इन्सानों को दी गयी है और बिलकुव्वा (Potentially) हर इन्सान अल्लाह का खलीफ़ा है, लेकिन जो अल्लाह का बागी हो जाये, जो खुद हाकिमियत का मुद्ई हो जाये तो वह इस ख़िलाफ़त के हक़ से महरूम हो जाता है। अगर किसी बादशाह का वली अहद अपने बाप की ज़िदगी ही में बग़ावत कर दे और हुकूमत हासिल करना चाहे तो अब वह वाजिबुल क़त्ल है। इसी तरह जो लोग भी इस दुनिया में अल्लाह तआला की हाकिमियते आला के मुन्कर होकर खुद हाकिमियत के मुद्ई हो गये अगरचे वह वाजिबुल क़त्ल हैं, लेकिन दुनिया में उन्हें मोहलत दी गयी है। इसलिये कि यह दुनिया दारुल इम्तिहान है। चुनाँचे अल्लाह तआला उन्हें फ़ौरन ख़त्म नहीं करता। अज़रूए अल्फ़ाज़े कुरानी {وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ إِلَىٰ أَجَلٍ مُّسَمًّى لَّفُضِّلْنَا بِهِمْ} (अश्शूरा:14) “और अगर एक बात पहले से तय ना हो चुकी होती एक वक़्ते मुअय्यन तक तुम्हारे रब की तरफ़ से तो इनके दरमियान फ़ैसला चुका दिया

जाता।" चूँकि अल्लाह तआला ने उन्हें एक वक़्ते मुअय्यन तक के लिये मोहलत दी है लिहाज़ा उन्हें फ़ौरी तौर पर ख़त्म नहीं किया जाता, लेकिन कम से कम इतनी सज़ा ज़रूर मिलती है कि अब वह खिलाफ़त के हक़ से महरूम कर दिये गये हैं। गोया कि अब दुनिया में खिलाफ़त सिर्फ़ खिलाफ़तुल मुस्लिमीन होगी। सिर्फ़ वह शाख़्स जो अल्लाह को अपना हाकिमे मुतलक़ (पूर्ण) माने, वही खिलाफ़त का अहल है। तो यह चन्द बातें खिलाफ़त की असल हक़ीक़त के ज़िम्न में यहीं पर समझ लीजिये। {وَإِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلَكَةِ إِنِّي جَاعِلٌ فِي الْأَرْضِ خَلِيفَةً ۖ} "और याद करो जब तुम्हारे रब ने कहा था फ़रिश्तों से कि मैं ज़मीन में एक ख़लीफ़ा बनाने वाला हूँ।"

"उन्होंने कहा: क्या आप ज़मीन में किसी ऐसे को मुक़रर करने वाले हैं जो उसमें फ़साद मचायेगा और ख़ूरेज़ी करेगा?"

قَالُوا أَتَجْعَلُ فِيهَا مَنْ يُفْسِدُ فِيهَا وَيَسْفِكُ الدِّمَاءَ

"और हम आपकी हम्दो सना के साथ तस्बीह और आपकी तक्रदीस में लगे हुए हैं।"

وَنَحْنُ نُسَبِّحُ بِحَمْدِكَ وَنُقَدِّسُ لَكَ

"फ़रमाया: मैं जानता हूँ जो कुछ तुम नहीं जानते।"

قَالَ إِنِّي أَنْعَلِمُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝

अब यहाँ यह सवाल पैदा होता है कि फ़रिश्तों को इन्सान के बारे में यह गुमान या यह ख्याल कैसे हुआ? इसके ज़िम्न में दो आरा (रायें) हैं। एक तो यह कि इन्सान की तख़लीक़ से पहले इस ज़मीन पर जिन्नात मौजूद थे और उन्हें भी अल्लाह ने कुछ थोड़ा सा इख़्तियार दिया था और उन्होंने यहाँ फ़साद बरपा कर रखा था। उन्हीं पर क़यास (अनुमान) करते हुए फ़रिश्तों ने समझा कि इन्सान भी ज़मीन में फ़साद मचायेगा और ख़ूरेज़ी करेगा। एक दूसरी उसूली बात यह कही गयी है कि जब खिलाफ़त का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ तो फ़रिश्ते समझ गये कि इन्सान को ज़मीन में कोई ना कोई इख़्तियार भी मिलेगा। जिन्नात के बारे में खिलाफ़त का लफ़्ज़ कहीं नहीं आया, यह सिर्फ़ इन्सान के बारे में आ रहा है। और ख़लीफ़ा बिल्कुल बे इख़्तियार नहीं होता। जैसा कि मैंने अर्ज़ किया जहाँ वाज़ेह हुक्म है उसका काम उसकी तन्फ़ीज़ है और जहाँ नहीं है वहाँ अपने ग़ौरो फ़िक्क़ और सोच-विचार की सलाहियतों को बरवयेकार लाकर उसे बेहतर से बेहतर राय क़ायम करनी होती है। ज़ाहिर

बात है जहाँ इख़्तियार होगा वहाँ उसके सही इस्तेमाल का भी इम्कान है और ग़लत का भी। पॉलिटिकल साइन्स का तो यह मुसल्लमा उसूल (Axiom) है: "Authority tends to corrupt and absolute authority corrupts absolutely." चुनाँचे इख़्तियार के अन्दर बदउन्वानी (भ्रष्टाचार) का रुझान मौजूद है। इस बिना पर उन्होंने क़यास किया कि इन्सान को ज़मीन में इख़्तियार मिलेगा तो यहाँ फ़साद होगा, ख़ूरेज़ी होगी। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि अपनी हिक़मतों से मैं खुद वाकिफ़ हूँ। मैं इन्सान को ख़लीफ़ा क्यों बना रहा हूँ, यह मैं जानता हूँ तुम नहीं जानते।

आयत 31

"और अल्लाह ने सिखा दिये आदम को तमाम के तमाम नाम"

وَعَلَّمَ آدَمَ الْأَسْمَاءَ كُلَّهَا

मुफ़स्सिरीन का तक्ररीबन इज्मा है कि इससे मुराद तमाम अशिया (चीज़ों) के नाम हैं और तमाम अशिया के नामों से मुराद उनकी हक़ीक़त का इल्म है। आप इन्सानी इल्म (Human Knowledge) का तजज़िया करें तो वह यही है कि इन्सान एक चीज़ को पहचानता है, फिर उसका एक नाम रखता है या उसके लिये कोई इस्तलाह (term) क़ायम करता है। वह उस नाम और उस इस्तलाह के हवाले से उस चीज़ के बारे में बहुत से हक़ाइक़ को अपने ज़हन में महफूज़ करता है। तो अल्लाह तआला ने इन्सान को तमाम नाम सिखा दिये। गोया कुल मादी कायनात (Material World) के अन्दर जो कुछ वजूद में आने वाला था, उन सबकी हक़ीक़त से हज़रत आदम (अलै०) को इम्कानी तौर पर (Potentially) आगाह कर दिया। यह इन्सान का इकतसाबी इल्म (Acquired Knowledge) है जो उसे सम-ओ-बसर और अक्ल व दिमाग से हासिल होता है।

इन्सान को हासिल होने वाले इल्म के दो हिस्से हैं। एक इल्हामी (Revealed Knowledge) है जो अल्लाह तआला वही के ज़रिये से भेजता है, जबकि एक इल्म बिलहवास या इकतसाबी इल्म (Acquired Knowledge) है जो इन्सान खुद हासिल करता है। उसने आँखों से देखा, कानों से सुना, नतीजा निकाला और दिमाग के कम्प्यूटर ने उसको प्रोसेस करके उस नतीजे को कहीं हाफ़ज़े (memory) के अन्दर महफूज़ कर लिया।

फिर कुछ और देखा, कुछ और सुना, कुछ छू कर, कुछ चख कर, कुछ सूँघ कर मालूम हुआ और कुछ और नतीजा निकाला तो उसे साबक़ा याद्दाश्त के साथ टैली करके नतीजा निकाला। अज़रूए अल्फ़ाज़ कुरानी (बनी इसराइल:36): {إِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ أُولَٰئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْئُولٌ} इन्सान को यह इकतसाबी इल्म (Acquired Knowledge) तीन चीज़ों से हासिल हो रहा है: समाअत, बसारत और अक्ल। अक्ल उस तमाम sense data को जो उसे मुहैया होता है, हवास (sense organs) के ज़रिये से प्रोसेस करती है और फ़ायदा अख़ज़ करती है। यह इल्म है जो बिलकुव्वा (Potentially) हज़रत आदम (अलै०) को दे दिया गया। अब इसकी exfoliation हो रही है और दर्जा-ब-दर्जा वह इल्म फैल रहा है, बढ़ रहा है। बढ़ते-बढ़ते यह कहाँ तक पहुँचेगा, हम कुछ नहीं कह सकते। इन्सान कहाँ से कहाँ पहुँच गया है! इस निस्फ़े सदी में इल्मे इन्सानी में जो explosion हुआ है मैं और आप उसका तसव्वुर तक नहीं कर सकते। अक्सर बड़े-बड़े साइन्सदानों को भी इसका इदराक़ (अहसास) व शऊर नहीं है कि इन्सानी इल्म ने कितनी बड़ी ज़क्रन्द (छलांग) लगायी है। इसलिये कि एक शख्स अपनी लाईन के बारे में तो जानता है कि इसमें क्या कुछ हो गया। मसलन एक साइन्सदान सिर्फ़ फ़िज़िक्स या इसकी भी किसी शाख़ के बारे में जानता है, बाकी दूसरी शाख़ों के बारे में उसे कुछ मालूम नहीं। यह दौर स्पेशलाइजेशन का दौर है, लिहाज़ा इल्म के मैदान में जो बड़ा धमाका (explosion) हुआ है उसका हमें कोई अन्दाज़ा नहीं है। एक चीज़ जो आज ईजाद होती है चन्द दिनों के अन्दर-अन्दर उसका नया version आ जाता है और यह चीज़ मतरूक (outdated) हो जाती है। इब्लाग और मवासलात (Communication) के अन्दर इन्क़लाबे अज़ीम बरपा हुआ है। आप यह समझिये कि इक्बाल ने जो यह शेर कभी कहा था, उसकी ताबीर क़रीब से क़रीब तर आ रही है:

उरुजे आदमे खाकी से अन्जुमन सहमे जाते हैं
कि यह टूटा हुआ तारा मय कामिल ना बन जाये!

और यह “मयकामिल” उस वक़्त बनेगा जब दज्जाल की शक़ल इख़्तियार करेगा। दज्जाल वह शख्स होगा जो इन तमाम क़वाइदे तबीइया (Physical Laws) के ऊपर काबू पा लेगा। जब चाहेगा, जहाँ चाहेगा बारिश बरसायेगा। वह रिज़क़ के तमाम खज़ाने अपने हाथ में ले लेगा और ऐलान कर देगा कि जो उस पर ईमान लायेगा उसी को रिज़क़ मिलेगा, किसी और को नहीं मिलेगा।

उसकी आवाज़ पूरी दुनिया में सुनायी देगी। वह चन्द दिनों के अन्दर पूरी दुनिया का चक्कर लगा लेगा। यह सारी बातें हदीस में दज्जाल के बारे में आयी हैं। वह आदम के उस इकतसाबी इल्म (Acquired Knowledge) की उस हद को पहुँच जायेगा कि फ़ितरत के तमाम इसरार (mysteries) उस पर मुन्कशिफ़ हो जायें और उसे क़वाइदे तबीइया पर तसरूफ़ (ज़ब्त) हासिल हो जाये, वह इन्हें harness कर ले, काबू में ले आये और उन्हें इस्तेमाल करे।

इन्सान ने जो सबसे पहला ज़रिया-ए-तवानाई (source of energy) दरयाफ़्त किया वह आग़ था। आज से हज़ारों साल पहले हमारे किसी ज़दे अमजद ने देखा कि कोई चट्टान ऊपर से गिरी, पत्थर से पत्थर टकराया तो उसमें से आग़ का शोला निकला। उसका यह मुशाहिदा आग़ पैदा करने के लिये काफी हो गया कि पत्थरों को आपस में टकराओ और आग़ पैदा कर लो। चुनाँचे आग़ उस दौर की सबसे बड़ी ईजाद और अब्बलीन ज़रिया-ए-तवानाई थी। अब वह तवानाई (energy) कहाँ से कहाँ पहुँची! पहले उस आग़ ने भाप की शक़ल इख़्तियार की, फिर हमने बिजली ईजाद की और अब एटमी तवानाई (Atomic Energy) हासिल कर ली है और अभी ना मालूम क्या-क्या हासिल होना है। वल्लाहु आलम! इन तमाम चीज़ों का ताल्लुक़ ख़िलाफ़ते अरज़ी के साथ है। लिहाज़ा फ़रिश्तों को बताया गया कि आदम को सिर्फ़ इख़्तियार ही नहीं, इल्म भी दिया जा रहा है।

“फिर उन (तमाम अशया) को पेश किया
फ़रिश्तों के सामने”

ثُمَّ عَرَّضَهُمْ عَلَى الْمَلَكَةِ

“और फ़रमाया कि बताओ मुझे इन चीज़ों के
नाम अगर तुम सच्चे हो।”

فَقَالَ أَنبِيُّنِي بِأَسْمَاءِ هَٰؤُلَاءِ إِنْ كُنْتُمْ

صَادِقِينَ ۝

अगर तुम्हारा यह ख़याल सही है कि किसी ख़लीफ़ा के तक्रर (नियुक्ति) से ज़मीन का इन्तेज़ाम बिगड़ जायेगा।

आयत 32

“उन्होंने कहा (परवरदिगार!) नुक्स से पाक
तो आप ही की ज़ात है”

قَالُوا سُبْحٰنَكَ

आप हर नुक्स से, हर ऐब से, हर ज़ौफ़ से, हर अहतियाज (ग़रीबी) से मुबरा (रहित) और मुनज़्ज़ाह हैं, आला और अरफ़ाअ हैं।

“हमें कोई इल्म हासिल नहीं सिवाय उसके जो आपने हमें सिखा दिया है।”

لَا عِلْمَ لَنَا إِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا

इसकी यही ताबीर बेहतर मालूम होती है कि अल्लाह तआला की इस कायनाती हुकूमत में मलाइका की हैसियत दर हक़ीक़त उसके कारिन्दों (या Civil Servants) की है। चुनाँचे हर एक को सिर्फ़ उसके शौबे (क्षेत्र) के मुताल्लिक इल्म दिया गया है, उनका इल्म ज़ामेअ नहीं है और उनके पास तमाम चीज़ों का मज्मूई इल्म हासिल करने की इस्तेअदाद (क्षमता) नहीं है। मसलन कोई फ़रिश्ता बारिश के इन्तेज़ाम पर मामूर है, कोई पहाड़ों पर मामूर है, जिसका ज़िक्र सीरत में आता है कि जब तार्ईफ़ में रसूल अल्लाह ﷺ पर पथराव हुआ तो उसके बाद एक फ़रिश्ता हाज़िर हुआ कि मैं मलाकुल जिबाल हूँ, अल्लाह ने मुझे पहाड़ों पर मामूर किया हुआ है, अगर आप ﷺ फ़रमायें तो मैं इन दो पहाड़ों को आपस में टकरा दूँ जिनके दरमियान तार्ईफ़ की यह वादी वाक़ेअ है और इस तरह अहले तार्ईफ़ पिस कर सुरमा बन जायें। आप ﷺ ने फ़रमाया कि नहीं, क्या अजब कि अल्लाह तआला इनकी आईन्दा नस्लों को हिदायत दे दे। तो फ़रिश्ते अल्लाह तआला की तरफ़ से मुख़्तलिफ़ ख़िदमात पर मामूर हैं और उनको जो इल्म दिया गया है वह सिर्फ़ उनके अपने फराइज़े मनसबी और उनके अपने-अपने शौबे से मुताल्लिक दिया गया है, जबकि हज़रत आदम (अलै०) को इल्म की ज़ामियत बिलकुब्वा (Potentially) दे दी गयी, जो बढ़ते-बढ़ते अब एक बहुत तनावर दरख़्त बन चुका है।

“यक़ीनन आप ही हैं जो सब कुछ जानने वाले कामिल हिकमत वाले हैं।”

إِنَّكَ أَنْتَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ۝

आप ही की ज़ात है जो कुल के कुल इल्म की मालिक है और जिसकी हिकमत भी कामिल है। बाक़ी तो मख़लूक़ में से हर एक का इल्म नाक़िस (अधूरा) है।

आयत 33

“अल्लाह ने फ़रमाया कि ऐ आदम! इनको बताओ इन चीज़ों के नाम।”

قَالَ يَا دُمْ أَنْبِئْهُمْ بِأَسْمَائِهِمْ

“तो जब उसने बता दिये उनको उन सबके नाम”

فَلَمَّا أَنْبَأَهُمْ بِأَسْمَائِهِمْ

“तो (अल्लाह ने) फ़रमाया: क्या मैंने तुमसे कहा ना था कि मैं जानता हूँ आसमानों और ज़मीन की तमाम छुपी हुई चीज़ों को”

قَالَ أَلَمْ أَقُلْ لَكُمْ إِنِّي أَعْلَمُ غَيْبِ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ

जो तुम्हारी निगाहों से ओझल और मख़फ़ी हैं।

“और मैं जानता हूँ जो कुछ तुम ज़ाहिर कर रहे थे और जो कुछ तुम छुपा रहे थे।”

مَا تُبْدُونَ وَمَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ۝

इन अल्फ़ाज़ से महसूस होता है कि फ़रिश्तों की ख़्वाहिश यह थी कि ख़िलाफ़त हमें मिले, हम खुदामे अदब हैं, हर वक़्त तस्बीह व तहमीद और तक्रदीस में मसरूफ़ हैं, जो हुक्म मिलता है बजा लाते हैं, तो यह ख़िलाफ़त किसी और मख़लूक़ को क्यों दी जा रही है।

अब आगे चूँकि तीसरी मख़लूक़ का ज़िक्र भी आयेगा लिहाज़ा यहाँ नोट कर लीजिये कि अल्लाह तआला की तीन मख़लूकात ऐसी हैं जो साहिबे तशख़ुस (पहचान) और साहिबे शऊर हैं और जिनमें “अना” (मैं) का शऊर है। एक मलाका हैं, उनकी तख़लीक़ नूर से हुई है। दूसरे इन्सान हैं, जिनकी तख़लीक़ गारे से हुई है और तीसरे जिन्नात हैं, जिनकी तख़लीक़ आग से हुई है। बाक़ी हैवानात हैं, उनमें शऊर (consciousness) तो है, खुद शऊरी (self consciousness) नहीं है। इन्सान जब देखता है तो उसको यह भी मालूम होता है कि मैं देख रहा हूँ, जबकि कुत्ता या बिल्ला देखता है तो उसे यह अन्दाज़ा नहीं होता कि मैं देख रहा हूँ। हैवानात में “मैं” का शऊर नहीं है। यह अना, Self या Ego सिर्फ़ फ़रिश्तों में, इन्सान में और जिन्नात में है। इनमें से एक नूरी मख़लूक़ है, एक नारी मख़लूक़ है और एक ख़ाकी है, जो ज़मीन के इस क़शर (crust) में मिट्टी और पानी के मलगूबे यानि गारे से वजूद में आयी है।

आयत 34

“और याद करो जब हमने कहा फ़रिश्तों से कि सज्दा करो आदम को तो सब सज्दे में गिर

وَإِذْ قُلْنَا لِلْمَلَائِكَةِ اسْجُدُوا لِآدَمَ فَسَجَدُوا

पडे सिवाय इब्लीस के।”

إِلَّا الْإِنْسَٰنَ

यहाँ एक बात तो यह समझिये कि आदम (अलै०) को तमाम मलाइका के सज्दे की ज़रूरत क्या थी? क्या यह सिर्फ़ ताज़ीमन था? और अगर ताज़ीमन था तो क्या आदमे खाकी की ताज़ीम मक़सूद थी या किसी और शय की ताज़ीम थी? मक्की सूरतों में यह बात दो जगह बाअल्फ़ाज़ वाज़ेह की गयी है: {فَإِذَا سَوَّيْنَاهُ وَنَفَخْنَا فِيهِ مِنْ رُّوحِنَا فَقَعُوا لَهُ سَجْدًا} (अल हिज़्र: 29 व सुआद: 72) “फिर जब मैं इस (आदम) की तख़लीक़ मुकम्मल कर लूँ और इसमें अपनी रूह में से फूँक दू तब गिर पड़ना उसके सामने सज्दे में।” चुनाँचे ताज़ीम अगर है तो आदमे खाकी की नहीं है, उसके अन्दर मौजूद “रूहे रब्बानी” की है, जो एक Divine Element या Divine Spark है, जिसे खुद ख़ालिक ने “मिन रूही” से ताबीर फ़रमाया है।

दूसरे यह कि इस सज्दे की हिकमत क्या है? इसकी इल्लत (कारण) और गरज़ (इरादा) व गायत (अंत) क्या है? जैसा कि मैंने अर्ज़ किया, इस कायनात यानि इस आफ़ाक़ी हुकूमत के कारिन्दे तो फ़रिश्ते हैं और ख़लीफ़ा बनाया जा रहा है इन्सान को। लिहाज़ा जब तक यह सारी सिविल सर्विस उसके ताबेअ ना हो जाये वह ख़िलाफ़त कैसे करेगा! जब हम किसी काम का इरादा करते हैं और कोई फ़अल करना चाहते हैं तो उस फ़अल के पूरा होने में, उसके ज़हूर पज़ीर होने में नामालूम कौन-कौन से अवामिल कारफ़रमा होते हैं और फ़ितरत की कौन-कौन सी कुव्वतें (forces) हमारे साथ मुवाफ़क़त (अनुकूलन) करती हैं तो हम वह काम कर सकते हैं, और उन सब पर फ़रिश्ते मामूर हैं। हर एक की अपनी अक़लीम (domain) है। अगर वह इन्सान के ताबेअ ना हो तो ख़िलाफ़त के कोई मायने ही नहीं हैं। इसे ख़िलाफ़त दी गयी है, यह जिधर जाना चाहता है जाने दो, यह नमाज़ के लिये मस्जिद में जाना चाहता है जाने दो, यह चोरी के लिये निकला है निकलने दो। इन्सान को जो इख़्तियार दिया गया है उसके इस्तेमाल में यह तमाम कुव्वतें उसके साथ मुवाफ़क़त करती हैं तब ही उसका कोई इरादा, ख्वाह अच्छा हो या बुरा, पाये तकमील को पहुँच सकता है। इस मुवाफ़क़त की अलामत के तौर पर तमाम फ़रिश्तों को इन्सान के आगे झुका दिया गया।

इस आयत में “إِلَّا الْإِنْسَٰنَ” (सिवाय इब्लीस के) से यह मुग़लता पैदा हो सकता है कि शायद इब्लीस भी फ़रिश्ता था। इसलिये कि सज्दे का हुक़म तो

फ़रिश्तों को दिया गया था। इस मुग़लते का इज़ाला (निवारण) सूरतुल कहफ़ में कर दिया गया जो सूरतुल बक्ररह से बहुत पहले नाज़िल हो चुकी थी। वहाँ अल्फ़ाज़ आये हैं: {كَانَ مِنَ الْإِنِّ فَفَسَقَ عَنْ أَمْرِ رَبِّهِ} (आयत: 50) “वह जिन्नों में से था, पस उसने सरकशी की अपने रब के हुक़म से।” फ़रिश्तों में से होता तो नाफ़रमानी कर ही ना सकता। फ़रिश्तों की शान तो यह है कि वह अल्लाह के किसी हुक़म से सरताबी (हठधर्मी) नहीं कर सकते। अज़रूए अल्फ़ाज़ कुरानी: {لَا يَعْصُونَ اللَّهَ مَا أَمَرَهُمْ وَيَفْعَلُونَ مَا يُؤْمَرُونَ} (अल तहरीम: 6) “वह अल्लाह के किसी हुक़म की नाफ़रमानी नहीं करते और जो हुक़म भी उन्हें दिया जाता है उसे बजा लाते हैं।” जिन्नात भी इन्सानों की तरह एक ज़ी इख़्तियार (सक्षम प्राधिकारी) मख़्लूक़ है जिसे ईमान-ओ-कुफ़्र और इताअत-ओ-माअसियत (आज्ञा व अवहेलना) दोनों की कुदरत बख़्शी गयी है। चुनाँचे जिन्नात में नेक भी हैं बद भी हैं, आला भी हैं, अदना भी हैं, जैसे इन्सानों में हैं। लेकिन यह “अज़ाज़ील” जो जिन्न था, इल्म व इबादत दोनों के ऐतबार से बहुत बुलन्द हो गया था और फ़रिश्तों का हमनशीन था। यह फ़रिश्तों के साथ इस तौर पर शामिल था जैसे बहुत से इन्सान भी अगर अपनी बन्दगी में, ज़ुहद में, नेकी में तरक्की करें तो उनका आलमे अरवाह के साथ, आलमे मलाइका के साथ और मला-ए-आला के साथ एक राबता क़ायम होता है। इसी तरह अज़ाज़ील भी जिन्न होने के बावजूद अपनी नेकी, इबादत, पारसाई (धार्मिकता) और अपने इल्म में फ़रिश्तों से बहुत आगे था, इसलिये “मुअल्लिमुल मलाकूत” की हैसियत इख़्तियार कर चुका था और उसे अपनी इस हैसियत का बड़ा ज़अम (गुरूर) था।

जैसा कि अर्ज़ किया गया, कुरान हकीम में किस्सा आदम व इब्लीस के ज़िमन में यह बात सात मर्तबा आयी है कि फ़रिश्तों को हुक़म हुआ कि आदम को सज्दा करो, सब झुक गये मगर इब्लीस ने सज्दे से इन्कार कर दिया। आयत ज़ेरे मुतआला में किस्सा आदम व इब्लीस सातवीं मर्तबा आ रहा है। अगरचे मुसहफ़ में यह पहली मर्तबा आ रहा है लेकिन तरतीबे नुज़ूली के ऐतबार से यहाँ सातवीं मर्तबा आ रहा है। आदम व इब्लीस का यह किस्सा सूरतुल बक्ररह के बाद सूरतुल आराफ़ में, फिर सूरतुल हिज़्र में, फिर सूरह बनी इसराइल में, फिर सूरतुल कहफ़ में, फिर सूरह ताहा में और फिर सूरह सुआद में आयेगा। यानि यह किस्सा कुरान हकीम में छः मर्तबा मक्की सूरतों में आया है और एक मर्तबा मदनी सूरत सूरतुल बक्ररह में आया है।

इब्लीस का असल नाम “अज़ाज़ील” था, इब्लीस अब इसका सिफ़ाती नाम है। इसलिये कि **إِبْلِيسُ** के मायने होते हैं मायूस हो जाना। यह अल्लाह की रहमत से बिल्कुल मायूस है और जो अल्लाह की रहमत से मायूस हो जाये वह शैतान हो जाता है। वह सोचता है कि अब मेरा तो छुटकारा नहीं है, मेरी तो आक़बत (परिणाम) ख़राब हो ही चुकी है, लिहाज़ा मैं अपने साथ और जितनों को बरबाद कर सकता हूँ कर लूँ। “हम तो डूबे हैं सनम तुमको भी ले डूबेंगे!” अब वह शैतान इस मायने में है कि इन्सान की अदावत (दुश्मनी) उसकी घुट्टी में पड़ गयी। उसने अल्लाह से इजाज़त भी ले ली कि मुझे मोहलत दे दे क़यामत के दिन तक के लिये {إِلَى يَوْمٍ يُعْتَدُونَ} तो मैं साबित कर दूँगा कि यह आदम उस रुतबे का हक़दार ना था जो इसे दिया गया।

“उसने इन्कार किया और तकबुर किया।”

وَأَسْتَكْبَرُ

कुरान हकीम में दूसरे मक़ामात पर उसके यह अल्फ़ाज़ नक़ल हुए हैं: {إِنَّا خَلَقْنَاهُ مِنْ نَارٍ وَخَلَقْتَهُ مِنْ طِينٍ} (अल आराफ़:12 व सुआद:76) “मैं उससे बेहतर हूँ, तूने मुझे आग से बनाया और उसे गारे से बनाया।” दर हकीक़त यही वह तकबुर है जिसने उसे रान्दाह दरगाहे हक़ कर दिया।

तकबुर अज़ाज़ील रा ख़वार कर्द, कि दर तौक़े लानत गिरफ़्तार कर्द!

“और हो गया वह काफ़िरों में से।” या “और था वह काफ़िरों में से।”

وَكَانَ مِنَ الْكَافِرِينَ

اَلْ अरबी ज़बान में दो तरह का होता है: “ताम्मा” और “नाक़िसा।” اَلْ नाक़िसा के ऐतबार से यह मायने हो सकते हैं कि अपने उस इस्तक़बार और इन्कार की वजह से वह काफ़िरों में से हो गया। जबकि اَلْ ताम्मा के ऐतबार से यह मायने होंगे कि वह था ही काफ़िरों में से। यानि उसके अन्दर सरकशी छुपी हुई थी, अब ज़ाहिर हो गयी। ऐसा मामला कभी हमारे मुशाहिदे (अनुभव) में भी आता है कि किसी शख्स की बदनियती पर नेकी और ज़ुहद के परदे पड़े रहते हैं और किसी ख़ास वक़्त में आकर वह नंगा हो जाता है और उसकी बातिनी हकीक़त सामने आ जाती है।

आयत 35

“और हमने कहा ऐ आदम! रहो तुम और तुम्हारी बीवी जन्नत में”

وَقُلْنَا يَا آدَمُ اسْكُنْ أَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ

सवाल पैदा होता है कि यह जन्नत कौनसी है? अक्सर हज़रात के नज़दीक यह जन्नत कहीं आसमान ही में थी और आसमान ही में हज़रत आदम (अलै०) की तख़लीक़ हुई। अलबत्ता यह सब मानते हैं कि यह वह जन्नतुल फ़िरदौस नहीं थी जिसमें जाने के बाद निकलने का कोई सवाल नहीं। उस जन्नत में तो आख़िरत में लोगों को जाकर दाखिल होना है और उसमें दाखिले के बाद फिर वहाँ से निकलने का कोई इम्कान नहीं है। एक राय यह भी है, और मेरा रुझान इसी राय की तरफ़ है, कि तख़लीक़े आदम (अलै०) इसी ज़मीन पर हुई है। वह तख़लीक़ जिन मराहिल से गुज़री वह इस वक़्त हमारा मौजू-ए-बहस नहीं है। बायोलॉजी और वही दोनों इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि क़शरे अर्द (Crust of the Earth) यानि मिट्टी से इन्सान की तख़लीक़ हुई है। इसके बाद किसी ऊँचे मक़ाम पर किसी सरसब्ज़ व शादाब इलाक़े में हज़रत आदम (अलै०) को रखा गया, जहाँ हर क्रिस्म के मेवे थे, हर शय बाफ़रागत (आराम से) मयस्सर थी। अज़रूए अल्फ़ाज़ कुरानी (सूरह ताहा):

“यहाँ तुम्हारे लिये यह आसाईशें (सुविधायें) मौजूद हैं कि ना तुम्हें इसमें भूख़ लगेगी ना उरयानी (नय़ता) लाहक़ होगी। और यह कि ना तुम्हें इसमें प्यास तंग करेगी ना धूप सतायेगी।”

إِنَّ لَكَ الْأَتَجُوعُ فِيهَا وَلَا تَعْرَىٰ ۖ وَأَنَّكَ لَا

تَظْمَأُ فِيهَا وَلَا تَصْحَىٰ ۖ

हज़रत आदम (अलै०) और उनकी बीवी को वहाँ हर तरह की आसाईशें हासिल थीं। अलबत्ता यह जन्नत यह सिर्फ़ एक demonstration के लिये थी कि उन्हें नज़र आ जाये कि शैतान उनका और उनकी औलाद का अज़ली (अनन्त काल से) दुश्मन है, वह उन्हें बरगलायेगा और तरह-तरह से बसबसा अन्दाज़ी करेगा। इसकी मिसाल यूँ समझिये कि किसी शख्स का इन्तख़ाब तो हो गया और वह CSP cadre में आ गया, लेकिन उसकी तैनाती (Posting) से पहले उसे सिविल सर्विस अकेडमी में ज़ेरे तरतीब रखा जाता है। वाज़ेह रहे कि यहाँ जो लफ़्ज़ **مَبُوط** (उतरना) आ रहा है वह सिर्फ़ इसी एक मायने में नहीं आता, इसके दूसरे मायने भी हैं। यह चीज़ें फिर मुतशाबेहात में

से रहेंगी। इसलिये इनके बारे में ग़ौरो फ़िक्र से कोई एक या दूसरी राय इख़्तियार की जा सकती है। वल्लाहु आलम!

“और खाओ इसमें से बाफ़रागत (आराम से) जहाँ से चाहो।”

وَكُلُوا مِنْهَا رَغَدًا حَيْثُ شِئْتُمْ

यहाँ हर तरह के फल मौजूद हैं, जो चाहो बिला रोक-टोक खाओ।

“मगर उस दरख़्त के करीब मत जाना।”

وَلَا تَقْرَبُوا هَذِهِ الشَّجَرَةَ

यहाँ पर उस दरख़्त का नाम नहीं लिया गया, इशारा कर दिया गया कि उस दरख़्त के करीब भी मत जाना।

“वरना तुम ज़ालिमों में से हो जाओगे।”

فَكُونُوا مِنَ الظَّالِمِينَ

तुम हद से गुज़रने वालों में से शुमार होगे।

अब इसकी भी हिकमत समझिये कि यह उस demonstration का हिस्सा है कि दुनिया में खाने-पीने की हज़ारों चीज़ें मुबाह (permissible) हैं, सिर्फ़ चन्द चीज़ें हाराम हैं। अब अगर तुम हज़ारों मुबाह चीज़ों को छोड़ कर हाराम में मुँह मारते हो तो यह नाफ़रमानी शुमार होगी। अल्लाह ने मुबाहात का दायरा बहुत वसी रखा है। चन्द रिश्ते हैं जो बयान कर दिये गये कि यह हाराम हैं, मुहरमाते अब्दिया हैं, इनसे तो शादी नहीं हो सकती, बाक़ी एक मुस्लमान मर्द किसी मुस्लमान औरत से दुनिया के किसी भी कोने में शादी कर सकता है, उसके लिये करोड़ों options खुले हैं। फिर एक नहीं, दो-दो, तीन-तीन, चार-चार तक औरतों से शादी की इजाज़त दी गयी है। इसके बावजूद इन्सान शादी ना करे और ज़िना करे, तो यह गोया उसकी अपनी खबासते नफ़्स है। चुनाँचे आदम व हव्वा (अलै०) को बता दिया गया कि यह पूरा बाग़ तुम्हारे लिये मुबाह है, बस यह एक दरख़्त है, उसके पास ना जाना। दरख़्त का नाम लेने की कोई ज़रूरत नहीं थी। यह तो सिर्फ़ एक आजमाईश और उसकी demonstration थी।

आयत 36

“फिर फिसला दिया उन दोनों को शैतान ने

فَأَزَلَّهُمَا الشَّيْطَانُ عَنْهَا

उस दरख़्त के बारे में”

इसकी तफ़सील सूरह ताहा में आयी है कि शैतान ने उन्हें किस-किस तरीक़े से फिसलाया और उन्हें उस दरख़्त का फल चखने पर आमादा किया।

“तो निकलवा दिया उन दोनों को उस

فَأَخْرَجَهُمَا مِمَّا كَانَا فِيهِ

कैफ़ियत में से जिसमें वह थे।”

वह क्या कैफ़ियत थी कि ना कोई मशक्कत है, ना कोई मेहनत है और इन्सान को हर तरह का अच्छे से अच्छा फल मिल रहा है, तमाम ज़रूरियात फ़राहम (प्रदान) हैं और ख़ास खलअते फ़ाख़रह (आलीशान पहनावे) से भी नवाज़ा गया है, जन्नत का ख़ास लिबास अता किया गया है। लेकिन इन कैफ़ियात से निकाल कर उन्हें कहा गया कि अच्छा अब जाओ और ज़िन्दगी के तलख़ हक्काइक़ का सामना करो। याद रखना कि शैतान तुम्हारा और तुम्हारी नस्ल का दुश्मन है और वह तुम्हें फिसलायेगा जैसे आज फिसलाया है, तुम उसकी शरारतों से होशियार रहना: { إِنَّ الشَّيْطَانَ لَكُمْ عَدُوٌّ فَاتَّخِذُوهُ عَدُوًّا } (फ़ातिर:6) “यक़ीनन शैतान तुम्हारा दुश्मन है, इसलिये तुम भी उसे अपना दुश्मन ही समझो।” लेकिन अगर कुछ लोग उसे अपना दोस्त बना लें और उसके एजेन्ट और कारिन्दे बन जायें तो यह उनका इख़्तियार है जिसकी सज़ा उन्हें मिलेगी।

“और हमने कहा तुम सब उतरो, तुम एक-

وَقُلْنَا امْطُتُوا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوًّا

दूसरे के दुश्मन हो गये।”

नोट कीजिये यहाँ जमा का सीगा आया है कि तुम एक-दूसरे के दुश्मन हो गये। तो एक दुश्मनी तो शैतान और आदम और ज़ुरियते (औलाद) आदम की है, जबकि एक और दुश्मनी इन्सानों में मर्द और औरत के माबैन है। औरत मर्द को फिसलाती है और गलत रास्ते पर डालती है और मर्द औरतों को गुमराह करते हैं। कुरान मजीद में फ़रमाया गया है: (सूरह तगाबुन:14) { يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِنَّ مِنْ أَزْوَاجِكُمْ وَأَوْلَادِكُمْ لِلْغِيَالِكُمْ فَاتَّخِذُوا لَهُمْ } “ऐ अहले ईमान! यक़ीनन तुम्हारी बीवियों और तुम्हारी औलाद में तुम्हारे दुश्मन हैं, इनसे होशियार रहो।” कहीं इनकी मोहब्बत तुम्हें राहे हक़ से मुनहरिफ़ (गुमराह) ना कर दे। शौहर एक अच्छा काम करना चाहता है लेकिन बीवी रुकावट बन गयी या बीवी कोई अच्छा काम करना चाहती है और शौहर रुकावट बन गया तो यह मोहब्बत नहीं अदावत है।

“और तुम्हारे लिये अब ज़मीन में ठिकाना है
और नफ़ा उठाना है एक ख़ास वक़्त तक।”

⊙

अब ज़मीन तुम्हारी जाये क़ायम है और यहाँ ज़रूरत की तमाम चीज़ें हमने फ़राहम कर दी हैं, लेकिन यह एक वक़्त मुअय्यन तक के लिये है, यह अब्दी (हमेशा के लिये) नहीं है, एक वक़्त आयेगा कि हम यह बिसात लपेट देंगे। {يَوْمَ نَطْوِي السَّمَاءَ كَطَيِّ السِّجِّيلِ لِلْكُتُبِ} (सूरह अम्बिया:104) “जिस दिन कि हम तमाम आसमानों को इस तरह लपेट लेंगे जैसे औवराक़ का तूमार (कागज़ों का स्कॉल) लपेट लिया जाता है।” यह तख़लीक़ अब्दी नहीं है, “إِلَىٰ أَجَلٍ مُّسَمًّى” है “إِلَىٰ” है।

आयत 37

“फिर सीख लिये आदम ने अपने रब से चन्द
कलिमात, तो अल्लाह ने उसकी तौबा कुबूल
कर ली।”

इसकी वज़ाहत सूरतुल आराफ़ में है। जब हज़रत आदम (अलै०) ने अल्लाह तआला का हुक्मे अताब आमेज़ (अपमानजनक दोष) सुना और जन्नत से बाहर आ गये तो सख़्त पशेमानी (पछतावा) और नदामत (लज्जा) पैदा हुई कि यह मैंने क्या किया, मुझसे कैसी ख़ता सरज़द हो गयी कि मैंने अल्लाह के हुक्म की खिलाफ़ वर्ज़ी कर डाली। लेकिन उनके पास तो तौबा व इस्तग़फ़ार के लिये अल्फ़ाज़ नहीं थे। वह नहीं जानते थे कि किन अल्फ़ाज़ में अल्लाह तआला से माफी चाहें। अल्लाह की रहमत यह हुई कि उसने अल्फ़ाज़ उन्हें खुद तल्कीन फ़रमा दिये। यह अल्लाह की शाने रहीमी है। तौबा की असल हक़ीक़त इन्सान के अन्दर गुनाह पर नदामत का पैदा हो जाना है। इक़बाल ने अन्फ़वाने शबाब में जो अशआर कहे थे उनमें से एक शेर को सुन कर उस वक़्त के उस्ताज़ाह भी फ़डक उठे थे:

मोती समझ के शाने करीमी ने चुन लिये क़तरे जो थे मेरे अर्क़े इन्फ़िआल के!
यानि शर्मिन्दगी के बाइस मेरी पेशानी पर पसीने के जो क़तरे नमूदार
(हाज़िर) हो गये मेरे परवरदिगार को वह इतने अज़ीज़ हुए कि उसने उन्हें

मोतियों की तरह चुन लिया। हज़रत आदम व हव्वा अलै० को जब अपनी गलती पर नदामत हुई तो गिरया व ज़ारी (शोक-विलाप) में मशगूल हो गये। इस हालत में अल्लाह तआला ने अपनी रहमत से उन्हें चन्द कलिमात इलक़ा फ़रमाये (सिखाये) जिनसे उनकी तौबा कुबूल हुई। वह कलिमात सूरतुल आराफ़ में बयान हुए हैं: {وَرَبَّنَا ظَلَمْنَا أَنفُسَنَا وَإِن لَّمْ تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ} (आयत:23) “ऐ हमारे रब! हमने अपनी जानों पर जुल्म किया है, और अगर तूने हमें बख़्श ना दिया और हम पर रहम ना फ़रमाया तो हम ज़रूर ख़सारा पाने वालों में हो जायेंगे।” तबाह व बर्बाद हो जायेंगे।

इस मक़ाम पर शैतानियत और आदमियत का फ़ौरी तक्राबुल मौजूद है। गलती इब्लीस से भी हुई, अल्लाह के हुक्म से सरताबी हुई, लेकिन उसे उस पर नदामत नहीं हुई बल्कि वह तकब्वुर की बिना पर मज़ीद अड़ गया कि “وَخَيْرٌ مِنِّي” और सरकशी का रास्ता इख़्तियार किया। दूसरी तरफ़ गलती आदम से भी हुई, नाफ़रमानी हुई, लेकिन वह उस पर पशेमान हुए और तौबा की। वह तर्जें अमल शैतानियत है और यह आदमियत है। वरना कोई इन्सान गुनाह से और माअसियत (गलती) से मुबर्रा (वंचित) नहीं है। रसूल अल्लाह ﷺ की एक हदीस है: {كُلُّ بَنِي آدَمَ خَطَّاءٌ وَخَيْرُ الْخَطَّائِينَ التَّوَّابُونَ} (5) “आदम (अलै०) की तमाम औलाद ख़ताकार है, और उन ख़ताकारों में बेहतर वह हैं जो तौबा कर लें।” हज़रत आदम (अलै०) से गलती हुई। उन्हें उस पर नदामत हुई, उन्होंने तौबा की तो अल्लाह तआला ने उनकी तौबा कुबूल फ़रमा ली।

“यक़ीनन वही तो है तौबा का बहुत कुबूल
करने वाला, बहुत रहम फ़रमाने वाला।”

إِنَّهُ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ

तौबा का लफ़्ज़ दोनों तरफ़ से आता है। बन्दा भी तव्वाब है। अज़रूए अल्फ़ाज़े कुरानी: {إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ التَّوَّابِينَ وَيُحِبُّ الْمُتَطَهِّرِينَ} (सूरतुल बक्ररह:222) जबकि तव्वाब अल्लाह तआला भी है। इसकी असल हक़ीक़त समझ लीजिये। बन्दे ने ख़ता की और अल्लाह से दूर हो गया तो अल्लाह ने अपनी रहमत की निगाह उससे फेर ली। बन्दे ने तौबा की तो अल्लाह फिर अपनी रहमत के साथ उसकी तरफ़ मुतवज्जा हो गया। तौबा के मायने हैं पलटना। बन्दा माअसियत से तौबा करके अपनी इस्लाह की तरफ़, बन्दगी की तरफ़, इताअत की तरफ़ पलट आया, और अल्लाह ने जो अपनी नज़रे रहमत बन्दे से फेर ली थी, फिर

अपनी शाने गफ़फ़ारी और रहीमी के साथ बन्दे की तरफ़ तवज्जो फ़रमा ली। इसके लिये हदीस में अल्फ़ाज़ आते हैं:

((.....وَأِنْ تَقَرَّبَ إِلَيَّ بِشَيْءٍ تَقَرَّبْتُ إِلَيْهِ ذَرَأَةً وَإِنْ تَقَرَّبَ إِلَيَّ ذَرَأَةً تَقَرَّبْتُ إِلَيْهِ بَاعًا. وَإِنْ أَكُنِي بِمَشْيِئَةِ عَبْدِي أَتَيْنُهُ هَرُولَةً))^१

“.....और अगर वह (मेरा बन्दा) बालिशत भर मेरी तरफ़ आता है तो मैं हाथ भर उसकी तरफ़ आता हूँ, और अगर वह हाथ भर मेरी तरफ़ आता है तो मैं दो हाथ उसकी तरफ़ आता हूँ, और अगर वह चल कर मेरी तरफ़ आता है तो मैं दौड़ कर उसकी तरफ़ आता हूँ।”

हम तो माइल बा करम है कोई साइल ही नहीं
राह दिखलायें किसे राह रवे मंज़िल ही नहीं!

वह तो तव्वाब है। बस फ़र्क़ यह है कि “كَأَنَّ” बन्दे के लिये आयेगा तो “إِلَى” के सिला के साथ आयेगा। जैसे: {إِلَىٰ نَبِيِّكَ} और जब अल्लाह के लिये आयेगा तो “عَلَى” के सिला के साथ “كَأَنَّ” आयेगा, जैसे आयत ज़ेरे मुतआला में आया: {فَكَأَنَّ عَلَيْهِ}। अल्लाह की शान बहुत बुलन्द है। इन्सान तौबा करता है तो उसकी तरफ़ तौबा करता है, जबकि अल्लाह की शान यह है कि वह बन्दे पर तौबा करता है।

आयत 38

“हमने कहा: तुम सबके सब यहाँ से उतर जाओ।”

فُلْنَا أَهْبَطُوا مِنْهَا جَمِيعًا

अब यहाँ लफ़ज़ “أَهْبَطُوا” आया है जो इससे पहले भी आया है। जो हज़रत यह समझते हैं कि तख़लीक़े आदम (अलै०) आसमानों पर हुई है और वह जन्नत भी आसमानों पर ही थी जहाँ हज़रत आदम (अलै०) आजमाइश या तरबियत के लिये रखे गये थे वह “أَهْبَطُوا” का तर्जुमा करेंगे कि उन्हें आसमान से ज़मीन पर उतरने का हुक्म दिया गया। लेकिन जो लोग समझते हैं कि हज़रत आदम (अलै०) को ज़मीन पर ही किसी बुलन्द मक़ाम पर रखा गया था वह कहते हैं कि “أَهْبَطُوا” से मुराद बुलन्द जगह से नीचे उतरना है ना कि आसमान से ज़मीन पर उतरना। वह वह आजमाइशी जन्नत किसी ऊँची सतह मरतफ़अ

(पठार) पर थी। वहाँ पर हुक्म दिया गया कि नीचे उतरो और जाओ, अब तुम्हें ज़मीन में हल चलाना पड़ेगा और रोटी हासिल करने के लिये मेहनत करना पड़ेगी। यह नेअमतों के दस्तरख़वान जो यहाँ बिछे हुए थे अब तुम्हारे लिये नहीं हैं। इस मायने में इस लफ़ज़ का इस्तेमाल इसी सूरतुल बक्ररह के सातवें रकूअ में हुआ है: {أَهْبَطُوا مِصْرًا فَإِنْ لَكُمْ مَسَآلُكُمْ} (आयत:61)

“तो जब भी आये तुम्हारे पास मेरी जानिब से कोई हिदायत, तो जो लोग मेरी उस हिदायत की पैरवी करेंगे उनके लिये ना कोई खौफ़ होगा और ना वह हुज़्न से दो-चार होंगे।”

فَأَمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنِّي هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَايَ
فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ

यह है इल्मे इन्सानी का दूसरा गोशा, यानि इल्म बिलवही (Revealed Knowledge)। इस चौथे रकूअ का हुस्र मुलाहिज़ा कीजिये कि इसके शुरू में इल्म बिलहवास या इकतसाबी इल्म (Acquired Knowledge) का ज़िक्र है जो बिलकुव्वा (Potentially) हज़रत आदम (अलै०) में रख दिया गया और जिसे इन्सान ने फिर अपनी मेहनत से, अपने हवास और अक्ल के ज़रिये से आगे बढ़ाया। यह इल्म मुसलसल तरक्की पज़ीर है और आज मगरबी अक़वाम इसमें हमसे बहुत आगे हैं। कभी एक ज़माने में मुस्लमान बहुत आगे निकल गये थे, लेकिन ज़ाहिर है कि इस दुनिया में उरूज तो उन्हीं को होगा जिन्हें सबसे ज़्यादा उसकी आगही (जागरूकता) हासिल होगी। अलबत्ता वह इल्म जो आसमान से नाज़िल होता है वह अताई (given) है, जो वही पर मन्नी है। और इन्सान के मक़ामे ख़िलाफ़त का तक्राज़ा यह है कि अल्लाह तआला के जो अहक़ाम उसके पास आयें, वह जो हिदायत भी भेजे उनकी पूरे-पूरे तौर पर पैरवी करे। अल्लाह तआला ने वाज़ेह फ़रमा दिया कि जो लोग मेरी इस हिदायत की पैरवी करेंगे उनके लिये किसी खौफ़ और रंज का मौक़ा ना होगा।

आयत 39

“और जो कुफ़्र करेंगे”

وَالَّذِينَ كَفَرُوا

हमारी इस हिदायत को कुबूल करने से इन्कार करेंगे, नाशुक्की करेंगे।

“और हमारी आयात को झुठलायेंगे।”

وَكَذَّبُوا بِآيَاتِنَا

“वह आग वाले (जहन्नमी) होंगे, उसमें वह **أُولَئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ** हमेशा-हमेशा रहेंगे।”

यह गोया अल्लाह तआला की तरफ़ से नौए इन्सानी को अब्दी मन्थूर (charter) अता कर दिया गया जब ज़मीन पर ख़लीफ़ा की हैसियत से इन्सान का तक्रर (नियुक्ति) किया गया।

जैसा कि पहले अर्ज़ किया जा चुका है, सूरतुल बकरह के यह इब्तदाई चार रकूअ कुरान की दावत और कुरान के बुनियादी फ़लसफ़े पर मुश्तमिल हैं, और इनमें मक्की सूरतों के मज़ामीन का खुलासा आ गया है।

आयात 40 से 46 तक

يٰٓيٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءٰمَنُوا اذْكُرُوا ٱلنِّعَمَ الَّتِي ٱنتَعَمْتُمْ عَلَيْكُمْ ۚ وَٱؤْفُوا بِعَهْدِي ۖ أُوفٍ بِعَهْدِكُمْ ۖ
وَإِيَّائِيَ فَٱرْهَبُوا ۚ ۝ وَإِمْنُوا بِمَا ٱنزَلْتُ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ ۚ وَلَا تَكُونُوا ٱوَّلَ كَافِرٍ
بِهِ ۚ وَلَا تَشْتَرُوا بِآيَتِي ثَمَنًا قَلِيلًا ۚ وَإِيَّائِيَ فَٱتَّقُوا ۚ ۝ وَلَا تَلْبِسُوا ٱلْحَقَّ بِٱلْبَاطِلِ
وَتَكْتُمُوا ٱلْحَقَّ ۚ وَٱنتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ ۚ وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ وَٱرْكَعُوا مَعَ
الرُّكَّعِينَ ۝ ۚ أَتَأْمُرُونَ ٱلنَّاسَ بِٱلْبِرِّ وَتَنسَوْنَ أَنفُسَكُمْ ۚ وَٱنتُمْ تَكْتُمُونَ ۚ ٱلْكِتَٰبُ
ٱفْلَٱ تَعْقِلُونَ ۝ ۚ وَٱسْتَعِينُوا بِٱلصَّبْرِ وَٱلصَّلَاةِ ۚ وَٱئْتِهَا لَكِبْرَةً ۖ ٱلَّا عَلَى ٱلْخَشَعِينَ ۝
ٱلَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُم مُّلقَوْنَ رَحْمَةً ۖ وَٱلَّهُمَّ ٱلْيَوْمَ ٱرْجُونِ ۝

अब यहाँ से बनी इसराइल से ख़िताब शुरू हो रहा है। यह ख़िताब पाँचवें रकूअ से चौदहवें रकूअ तक, मुसलसल दस रकूआत पर मुहीत (फैला हुआ) है। अलबत्ता इनमें एक तक्रसीम है। पहला रकूअ दावत पर मुश्तमिल है, और जब किसी गिरोह को दावत दी जाती है तो तशवीक़ व तरगीब (प्रोत्साहन), दिलजोई और नर्मी का अन्दाज़ इख़्तियार किया जाता है, जो दावत के अज़्ज़ा-ए-ला यनफ़क़ (अभिन्न अंग) हैं। इस अन्दाज़ के बग़ैर दावत मौअस्सर (प्रभावी) नहीं होती। यूँ समझ लीजिये कि यह सात आयात (पाँचवा रकूअ) इन दस रकूआओं के लिये बमज़िला-ए-फ़ातिहा है। बनी इसराइल की हैसियत

साबका उम्मत मुस्लिमा की थी, जिनको यहाँ दावत दी जा रही है। वह भी मुस्लमान ही थे, लेकिन मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم का इन्कार करके काफ़िर हो गये। वरना वह हज़रत मूसा (अलै०) के मानने वाले थे, शरीअत उनके पास थी, बड़े-बड़े उलमा उनमें थे, इल्म का चर्चा उनमें था। गर्ज़ यह कि सब कुछ था। यहाँ उनको दावत दी जा रही है। इससे हमें यह रहनुमाई मिलती है कि आज मुस्लमानों में, जो अपनी हकीक़त को भूल गये हैं, अपने फर्जे मन्सबी से गाफ़िल हो गये हैं और दुनिया की दीगर क्रौमों की तरह एक क्रौम बन कर रह गये हैं, अगर कोई एक दाई गिरोह खड़ा हो तो ज़ाहिर बात है सबसे पहले उसे इसी उम्मत को दावत देनी होगी। इसलिये कि दुनिया तो इस्लाम को इसी उम्मत के हवाले से पहचानेगी (Physician heals thyself)। पहले यह खुद ठीक हो और सही इस्लाम का नमूना पेश करे तो दुनिया को दावत दे सकेगी कि आओ देखो यह है इस्लाम! चुनाँचे उनको दावत देने का जो असलूब होना चाहिये वह इस असलूब का अक्स होगा जो इन सात आयात में हमारे सामने आयेगा।

आयत 40

يٰٓيٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءٰمَنُوا اذْكُرُوا ٱلنِّعَمَ الَّتِي ٱنتَعَمْتُمْ عَلَيْكُمْ
“ऐ बनी इसराइल! याद करो मेरे उस ईनाम को जो मैंने तुम पर किया”

“बनी इसराइल” की तरकीब को समझ लीजिये कि यह मुरक्कबे इज़ाफ़ी है। “अस्त्र” का मायना है बन्दा या गुलाम। इसी से “असीर” बना है जो किसी का कैदी होता है। और लफ़ज़ “ईल” इब्रानी में अल्लाह के लिये आता है। चुनाँचे बनी इसराइल का तुर्जमा होगा “अब्दुल्लाह” यानि अल्लाह का गुलाम, अल्लाह की इताअत के क़लादे के अन्दर बंधा हुआ। “इसराइल” लक़ब है हज़रत याकूब (अलै०) का। उनके बारह बेटे थे और उनसे जो नस्ल चली वह बनी इसराइल है। उन्हीं में हज़रत मूसा (अलै०) की बेअसत हुई और उन्हें तौरात दी गयी। फिर यह एक बहुत बड़ी उम्मत बने। कुरान मजीद के नुज़ूल के वक़्त तक उन पर उरूज व ज़वाल के चार अदवार (काल) आ चुके थे। दो मर्तबा उन पर अल्लाह तआला की रहमत की बारिशें हुईं और उन्हें उरूज नसीब हुआ, जबकि दो मर्तबा दुनिया परस्ती, शहवत परस्ती और अल्लाह के

अहकाम को पसे पुश्त (पीठ पीछे) डाल देने की सज़ा में उन पर अल्लाह के अज़ाब के कोड़े बरसे। इसका ज़िक्र सूरह बनी इसराइल के पहले रूकूअ में आयेगा। उस वक़्त जबकि कुरान नाज़िल हो रहा था वह अपने इस ज़वाल के दौर में थे। हाल यह था कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की बेअसत से पहले ही उनका “मअबूदे सानी” (Second Temple) भी मुनहदिम (ध्वस्त) किया जा चुका था। हज़रत सुलेमान (अलै०) ने जो हैकले सुलेमानी बनाया था, जिसको यह “मअबूदे अव्वल” (First Temple) कहते हैं, उसे बख़्तनसर (Nebukadnezar) ने हज़रत मसीह से भी छः सौ साल पहले गिरा दिया था। उसे उन्होंने दोबारा तामीर किया था जो “मअबूदे सानी” कहलाता था। लेकिन 70 ई० में मुहम्मदे अरबी ﷺ की विलादत से पाँच सौ साल पहले रोमियों ने हमला करके येरूशलम को तबाह व बरबाद कर दिया, यहूदियों का क़त्ले आम किया और जो “मअबूदे सानी” उन्होंने तामीर किया था उसे भी मसमार (विध्वंस) कर दिया, जो अब तक गिरा पड़ा है, सिर्फ़ एक दीवारे गिरया (Veiling Wall) बाक़ी है जिसके पास जाकर यहूदी मातम और गिरया व ज़ारी कर लेते हैं, और अब वह उसे सेबारा (तीसरी बार) बनाने पर तुले हुए हैं। चुनाँचे उनके “मअबूदे सालिस” (Third Temple) के नक्शे बन चुके हैं, उसका इब्तदाई खाका तैयार हो चुका है। बहरहाल जिस वक़्त कुरान नाज़िल हो रहा था उस वक़्त यह बहुत ही पस्ती में थे। उस वक़्त उनसे फ़रमाया गया: “ऐ बनी इसराइल! ज़रा याद करो मेरे उस ईनाम को जो मैंने तुम पर किया था।” वह ईनाम क्या है? मैंने तुमको अपनी किताब दी, नबुवत से सरफ़राज़ फ़रमाया, अपनी शरीअत तुम्हें अता फ़रमायी। तुम्हारे अन्दर दाऊद और सुलेमान (अलै०) जैसे बादशाह उठाये, जो बादशाह भी थे, नबी भी थे।

“और तुम मेरे वादे को पूरा करो ताकि मैं भी
तुम्हारे वादे को पूरा करूँ।” وَأَوْفُوا بِعَهْدِي أُوفِ بِعَهْدِكُمْ

बनी इसराइल से नबी आखिरुज़माँ हज़रत मुहम्मद ﷺ पर ईमान लाने का अहद लिया गया था। तौरात में किताबे इस्तस्ना या सफर-ए-इस्तस्ना (Deuteronomy) के अट्टहारवें बाब की आयत 18-19 में अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा (अलै०) से ख़िताब करके यह अल्फ़ाज़ फ़रमाये:

“मैं उनके लिये उन्हीं के भाईयों में से तेरी मानिन्द एक नबी बरपा करूँगा और अपना कलाम उसके मुँह में डालूँगा और जो कुछ मैं उसे हुक्म दूँगा वही वह उनसे कहेगा। और जो कोई मेरी उन बातों को जिनको वह मेरा नाम लेकर कहेगा, ना सुने तो मैं उनका हिसाब उससे लूँगा।”

यह गोया हज़रत मूसा (अलै०) की उम्मत को बताया जा रहा था कि नबी आखिरुज़माँ (ﷺ) आयेंगे और तुम्हें उनकी नबुवत को तस्लीम करना है। कुरान मजीद में इसका तफ़्सीली ज़िक्र सूरतुल आराफ़ में आयेगा। यहाँ फ़रमाया कि तुम मेरा अहद पूरा करो, मेरे इस नबी ﷺ को तस्लीम करो, उस (ﷺ) पर ईमान लाओ, उसकी (ﷺ) की सदा पर लब्बैक कहो तो मेरे ईनाम व इकराम मज़ीद बढ़ते चले जायेंगे।

“और सिर्फ़ मुझ ही से डरो।”

وَأَيُّ فَارِهُبُونَ ۝

आयत 41

“और ईमान लाओ उस किताब पर जो मैंने
नाज़िल की है जो तस्दीक़ करते हुए आयी है
उस किताब की जो तुम्हारे पास है”

وَأْمِنُوا بِمَا آتَيْنَاكَ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ

इन अल्फ़ाज़ के दो मायने हैं। एक तो यह कि ईमान लाओ इस कुरान पर जो तस्दीक़ करता है तौरात की और इन्जील की। अज़रूए अल्फ़ाज़े कुरानी: { إِنَّا أَنْزَلْنَا التَّوْرَةَ فِيهَا هُدًى وَنُورٌ } (सूरतुल मायदा:44) “हमने नाज़िल की तौरात जिसमें हिदायत और रोशनी थी।” { وَآتَيْنَاهُ الْإِنْجِيلَ فِيهِ هُدًى وَنُورٌ } (सूरतुल मायदा:46) “और हमने उस (ईसा अलै०) को दी इन्जील जिसमें हिदायत और रोशनी थी।” और दूसरे यह कि कुरान और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ उन पेशनगोईयों के मिस्दाक़ बन कर आये हैं जो तौरात में थीं। वरना वह पेशनगोईयाँ झूठी साबित होती।

“और तुम ही सबसे पहले इसका कुफ़्र करने
वाले ना बन जाओ।”

وَلَا تَكُونُوا أَوَّلَ كَافِرٍ بِهِ ۝

यानि कुरान की दीदाह व दानिस्ता (जानबूझ कर) तकज़ीब करने वालों में अव्वल मत हो। तुम्हें तो सब कुछ मालूम है। तुम जानते हो कि हज़रत मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم अल्लाह के रसूल हैं और यह किताब अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल हुई है। तुम तो आखरी नबी صلی اللہ علیہ وسلم के इन्तेज़ार में थे और उनके हवाले से दुआयें किया करते थे कि ऐ अल्लाह! उस नबी आखिरुज़्ज़मान के वास्ते से हमारी मदद फ़रमा और काफ़िरों के मुक़ाबले में हमें फ़तह अता फ़रमा। (यह मज़मून आगे चल कर इसी सूरतुल बक्ररह ही में आयेगा।) लेकिन अब तुम ही इसके अव्वलीन मुन्कर हो गये हो और तुम ही इसके सबसे बड़ कर दुश्मन हो गये हो।

“और मेरी आयात के एवज़ (बदले) हकीर
(थोड़ी) सी क़ीमत कुबूल ना करो।”

وَلَا تَشْتَرُوا بِآيَاتِي ثَمَنًا قَلِيلًا

यह आयाते इलाहिया हैं और तुम इनको सिर्फ़ इसलिये रद्द कर रहे हो कि कहीं तुम्हारी हैसियत, तुम्हारी मसनदों (गद्दी) और तुम्हारी चौधराहटों पर कोई आँच ना आ जाये। यह तो हकीर सी चीज़ें हैं। यह सिर्फ़ इस दुनिया का सामान है, इसके सिवा कुछ नहीं।

“और सिर्फ़ मेरा तक्रवा इख़्तियार करो।” मुझ
ही से बचते रहो!

وَإِنِّي فَأَتَّقُونِ ۝

आयत 42

“और ना ग़ढमढ करो हक़ के साथ बातिल को
और ना छुपाओ हक़ को दर हालाँकि तुम
जानते हो।”

وَلَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوا الْحَقَّ
وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝

यह बात अच्छी तरह नोट कर लीजिये कि मुग़ालते में ग़लत राह पर पड़ जाना ज़लालत और गुमराही है, लेकिन जानते-बूझते हक़ को पहचान कर उसे रद्द करना और बातिल की रविश इख़्तियार करना अल्लाह तआला के ग़ज़ब को दावत देना है। इसी सूरतुल बक्ररह में आगे चल कर आयेगा कि उलमाये यहूद मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم को और कुरान को इस तरह पहचानते थे जैसे अपने बेटों को पहचानते थे: { يَغْرِفُونَ كُنَا يَغْرِفُونَ أَبْنَاءَهُمْ } (आयत:146)

लेकिन इसके बावजूद उन्होंने महज़ अपनी दुनयवी मसलहतों के पेशे नज़र आप صلی اللہ علیہ وسلم और कुरान की तकज़ीब की।

आयत 43

“और नमाज़ कायम करो और ज़कात अदा
करो”

وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ

“और झुको (नमाज़ में) झुकने वालों के साथ।”

وَارْكَعُوا مَعَ الرَّاكِعِينَ ۝

यानि बा-जमात नमाज़ अदा किया करो।

अव्वल तो यहूद ने रकूअ को अपने यहाँ से खारिज कर दिया था, सानियन बा-जमात नमाज़ उनके यहाँ खत्म हो गयी थी। चुनाँचे उन्हें रकूअ करने वालों के साथ रकूअ करने का हुक्म दिया जा रहा है। गोया सराहत की जा रही है कि नबी आखिरुज़्ज़मान صلی اللہ علیہ وسلم पर सिर्फ़ ईमान लाना ही निजात के लिये काफ़ी नहीं, बल्कि तमाम उसूल में आप صلی اللہ علیہ وسلم की पैरवी ज़रूरी है। नमाज़ भी आप صلی اللہ علیہ وسلم के तरीक़े पर पढ़ो जिसमें रकूअ भी हो और जो बा-जमात हो।

आयत 44

“क्या तुम लोगों को नेकी का हुक्म देते हो
और खुद अपने आप को भूल जाते हो?”

أَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَتَنْسَوْنَ أَنْفُسَكُمْ

इन आयात के असल मुखातिब उलमाये यहूद हैं, जो लोगों को तक्रवा और पारसाई की तालीम देते थे लेकिन उनका अपना किरदार इसके बरअक्स (विपरीत) था। हमारे यहाँ भी उलमा और वाईज़ीन (प्रचारकों) का हाल अक्सर व बेशतर यही है कि ऊँचे से ऊँचा वाज़ (उपदेश) कहेंगे, आला से आला बात कहेंगे, लेकिन उनके अपने किरदार को उस बात से कोई मुनासबत ही नहीं होती जिसकी वह लोगों को दावत दे रहे होते हैं। यही दर हकीकत उलमाये यहूद का किरदार बन चुका था। चुनाँचे उनसे कहा गया कि “क्या तुम लोगों को नेकी का रास्ता इख़्तियार करने के लिये कहते हो मगर खुद अपने आप को भूल जाते हो?”

“हालाँकि तुम किताब की तिलावत करते हो।”

وَأَنْتُمْ تَقْلُونَ الْكِتَابَ

तुम यह कुछ कर रहे हो इस हाल में कि तुम अल्लाह की किताब भी पढ़ते हो। यानि तौरात पढ़ते हो, तुम साहिबे तौरात हो। हमारे यहाँ भी बहुत से उलमा का, जिन्हें हम उलमाये सू (बुरे उलमा) कहते हैं, यही हाल हो चुका है। बक्रौल इक्रबाल:

खुद बदलते नहीं कुरान को बदल देते हैं
हुए किस दर्जा फ़कीहाने हरम बे तौफ़ीक़!

कुरान हकीम के तर्जुमे में, इसके मफ़हूम में, इसकी तफ़सीर में बड़ी-बड़ी तहरीफ़ें मौजूद हैं। अल्हमदुलिल्लाह कि इसका मतन (text) बचा हुआ है। इसलिये कि इसकी हिफ़ाज़त का ज़िम्मा खुद अल्लाह तआला ने ले रखा है।

“क्या तुम अक्ल से बिल्कुल ही काम नहीं लेते?”

أَفَلَا تَعْقِلُونَ

आयत 45

“और मदद हासिल करो सब्र से और नमाज़ से।”

وَاسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ

यहाँ पर सब्र का लफ़्ज़ बहुत बा-मायने है। उलमाये सू क्यों वजूद में आते हैं? जब वह सब्र और क़नाअत (सन्तुष्टि) का दामन हाथ से छोड़ देते हैं तो हुब्बे माल (माल की मोहब्बत) उनके दिल में घर कर लेती है और वह दुनिया के कुत्ते बन जाते हैं। फिर वह दीन को बदनाम करने वाले होते हैं। बज़ाहिर दीनी मरासिम (प्रथाओं) के पाबन्द नज़र आते हैं लेकिन दरअसल उनके परदे में दुनियादारी का मामला होता है। चुनाँचे उन्हें सब्र की ताकीद की जा रही है। सूरतुल मायदा में यहूद के उलमा व मशाइख पर बा-अल्फ़ाज़ तनक़ीद (आलोचना) की गयी है: {لَوْلَا يَنْهَاهُمُ الرَّبَّيُّونُ وَالْأَخْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْإِثْمَ وَالْكَذِبُ السُّخْتُ} (सूरतुल मायदा:63) “क्यों नहीं रोकते उन्हें उनके उलमा और सूफ़िया झूठ बोलने से और हराम खाने से?” अगर कोई आलिम या पीर अपने अरादत मन्दों को इन चीज़ों से रोकेगा तो फिर उसको नज़राने तो नहीं मिलेंगे, उसकी ख़िदमतें तो नहीं होंगी। चुनाँचे अगर तो दुनिया में सब्र इख़्तियार करना है,

तब तो आप हक़ बात कह सकते हैं, और अगर दुनियावी ख्वाहिशात (ambitions) मुक़द्दम (इच्छित) हैं तो फिर आपको कहीं ना कहीं समझौता (compromise) करना पड़ेगा।

सब्र के साथ जिस दूसरी शय की ताकीद की गयी वह नमाज़ है। उलमाये यहूद वज़ूहे हक़ के बावजूद मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान ना लाते थे इसकी बड़ी वजह हुब्बे माल और हुब्बे जान थी। यहाँ दोनों का इलाज बता दिया गया कि हुब्बे माल का मदावा (इलाज) सब्र से होगा, जबकि नमाज़ से उबूदियत व तज़लील पैदा होगा और हुब्बे जान का खात्मा होगा।

“और यक़ीनन यह बहुत भारी शय है”

وَإِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ

आमतौर पर यह ख़्याल ज़ाहिर किया गया है कि इन्नहा की ज़मीर सिर्फ़ सलाह (नमाज़) के लिये है। यानि नमाज़ बहुत भारी और मुश्किल काम है। लेकिन एक राय यह है कि यह दरहक़ीक़त इस पूरे तर्ज़े अमल की तरफ़ इशारा है कि दुनिया के शदाईद (आपदाओं) और इबतलाआत (मोह) का मुक़ाबला सब्र और नमाज़ की मदद से किया जाये। मतलूब तर्ज़े अमल यह है कि दुनिया और दुनिया के मुताल्लिकात में कम से कम पर क़ानेअ (संतुष्ट) हो जाओ और हक़ का बोल-बाला करने के लिये मैदान में आ जाओ। इसके साथ-साथ नमाज़ को अपने मामलाते हयात का महवर (आधार) बनाओ, जो कि इमादुद्दीन है। फ़रमाया कि यह रविश यक़ीनन बहुत भारी है, और नमाज़ भी बहुत भारी है।

“मगर उन आजिज़ों पर (भारी नहीं है)।”

إِلَّا عَلَى الْخَشِيعِينَ

उन खुशूअ (विनम्रता) रखने वालों पर, उन डरने वालों पर यह रविश भारी नहीं है जिनके दिल अल्लाह के आगे झुक गये हैं।

आयत 46

“जिन्हें यह यक़ीन है कि वह अपने रब से मुलाक़ात करने वाले हैं”

الَّذِينَ يَبْتَغُونَ اللَّهَ مُلْقُوا رَبَّهُمْ

मैंने शुरु में {وَبِالْآخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ} (आयत:4) के ज़ैल में तवज्जो दिलायी थी कि यह ईमान बिल आखिरत ही है जो इन्सान को अमल के मैदान में सीधा रखता है।

“और (जिन्हें यह यकीन है कि) बिलआखिर उन्हें उसी की तरफ़ लौट कर जाना है।”

उन्हें उसके रू-ब-रू हाज़िर होना है।

आयात 47 से 59 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰذْكُرُوْا نِعْمَتِيَ الَّتِيْۤ اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنّٰیۤ اَفْضَلْتُكُمْ عَلَی الْعٰلَمِیْنَ ۝
وَاتَّقُوا یَوْمًا لَا تَجِزِیْ نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا وَلَا یُقْبَلُ مِنْهَا شَفَاعَةٌ وَلَا یُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ وَلَا هُمْ یُنصَرُوْنَ ۝
وَإِذْ نَجَّیْنٰکُمْ مِّنَ الْفِرْعَوْنَ یَسُوْۤءُ مُوَدَّعِیْکُمْ سُوْءَ الْعَذَابِ ۝
یَذْبَحُوْنَ اَبْنَاءَکُمْ وَیَسْتَحْیُوْنَ نِسَاءَکُمْ ۚ وَفِیْ ذٰلِکُمْ بَلَاءٌ مِّنْ رَّبِّکُمْ عَظِیْمٌ ۝
وَإِذْ فَرَقْنَا بِکُمْ الْبَحْرَ فَاَنجَیْنٰکُمْ وَاَعْرَفْنَا اِلَۤیۤ فِرْعَوْنَ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ۝
مُوْسٰی اَرْبَعِیْنَ لَیْلَةً ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْۢ بَعْدِهَا وَاَنْتُمْ ظٰلِمُوْنَ ۝
ثُمَّ عَفَوْنَا عَنْکُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِکَ لَعَلَّکُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝
وَإِذْ اَتٰیْنَا مُوْسٰی الْکِتٰبَ وَالْفُرْقَانَ لَعَلَّکُمْ تَهْتَدُوْنَ ۝
وَإِذْ قَالَ مُوْسٰی لِقَوْمِہٖ یَقُوْمُوْا اِنَّکُمْ ظٰلِمُوْنَ اَنْفُسَکُمْ بِاتِّخَاذِکُمُ الْعِجْلَ فَتُؤْبَۤوْا اِلَیۤیۤ بَارِئِکُمْ فَاَقْتُلُوْا اَنْفُسَکُمْ ۚ ذٰلِکُمْ خَیْرٌ لَّکُمْ عِنْدَ بَارِئِکُمْ ۚ فَتَابَ عَلَیْکُمْ ۚ اِنَّہٗ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِیْمُ ۝
وَإِذْ قُلْتُمْ یٰمُوْسٰی لَنْ نُّؤْمِنَ بِکَ حَتّٰی تَرٰی اللّٰہَ جَهْرَةً فَاَخَذْنَاکُمُ الطُّعْفَةَ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ۝
ثُمَّ بَعَثْنَاکُمْ مِنْۢ بَعْدِ مَوَدَّعِکُمْ لَعَلَّکُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝
وَظَلَّلْنَا عَلَیْکُمُ الْعِمَامَ وَاَنْزَلْنَا عَلَیْکُمُ الْمَنَّٰ وَالسَّلٰوٰی ۚ کُلُّوْا مِنْ طَیِّبٰتِ مَا رَزَقْنٰکُمْ ۚ وَمَا ظَلَمْنٰوْا وَلٰکِنْ کَاٰوُا اَنْفُسَہُمْ یَظْلِمُوْنَ ۝
اَدْخُلُوْا ہٰذِہِ الْقَرْیَةَ فَاَکُلُوْا مِنْہَا حَیْثُ شِئْتُمْ رَغَدًا وَّاَدْخُلُوْا الْبَابَ سَجْدًا وَّقُوْلُوْا

حِطَّةً نَّغْفِرْ لَّکُمْ خَطِیْکُمْ ۚ وَسَنَرْزِیْکُمُ الْمُحْسِنِیْنَ ۝
فَبَدَّلَ الَّذِیْنَ ظَلَمُوْا قَوْلًا غَیْرَ الَّذِیۤ قِیْلَ لَهُمْ فَاَنْزَلْنٰا عَلَی الَّذِیْنَ ظَلَمُوْا رِجْزًا مِّنَ السَّمَآءِ بِمَا کَاٰوُا یَفْسُقُوْنَ ۝

जैसा कि अर्ज किया जा चुका है, सूरतुल बक्ररह के पाँचवें रुकूअ से चौहदवें रुकूअ तक, बल्कि पन्द्रहवें रुकूअ की पहली दो आयात भी शामिल कर लीजिये, यह दस रुकूओं से दो आयात ज़ायद हैं कि जिनमें खिताब कुल का कुल बनी इसराइल से है। अलबत्ता इनमें से पहला रुकूअ दावत पर मुश्तमिल है, जिसमें उन्हें नबी करीम صلی اللہ علیہ وسلم पर ईमान लाने की पुरज़ोर दावत दी गयी है, जबकि बक्रिया नौ रुकूअ उस फर्दे करारदारे जुर्म पर मुश्तमिल हैं जो बनी इसराइल पर आयद की जा रही है कि हमने तुम्हारे साथ यह अहसान व इकराम किया, तुम पर यह फ़ज़ल किया, तुम पर यह करम किया, तुम्हें यह हैसियत दी, तुम्हें यह मक़ाम दिया और तुमने इस-इस तौर से अपने उस मिशन की खिलाफ़ वर्ज़ी की जो तुम्हारे सुपुर्द किया गया था और अपने मक़ाम व मरतबे को छोड़ कर दुनिया परस्ती की रविश इख्तियार की। इन नौ रुकूओं में बनी इसराइल की तारीख का तो एक बहुत बड़ा हिस्सा उसके खदोखाल (features) समेत आ गया है, लेकिन असल में यह उम्मत मुस्लिमा के लिये भी एक पेशगी तन्वीह (चेतावनी) है कि कोई मुस्लमान उम्मत जब बिगड़ती है तो उसमें यह और यह खराबियाँ आ जाती हैं। चुनाँचे इस बारे में रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की अहादीस भी मौजूद हैं। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर (रजि०) से मरवी है कि रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने इरशाद फ़रमाया: ((لَیْسَ بَیْنَ عَلٰی اُمّیّی مَا اَتٰی عَلٰی بَیْنِ اِسْرَآءِیْلَ حَذُو النَّعْلِ بِالنَّعْلِ)) (7) “मेरी उम्मत पर भी वह सब हालात वारिद होकर रहेंगे जो बनी इसराइल पर आये थे, बिल्कुल ऐसे जैसे एक जूती दूसरी जूती से मुशाबा होती है।”

एक दूसरी हदीस में जो हज़रत अबु सईद खुदरी (रजि०) से मरवी है, रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم का इरशाद नक़ल हुआ है:

((لَتَتَّبِعَنَّ سَنَنْ مَنْ قَبْلَکُمْ شَرًّا بِشَرٍّ وَّذِرَاعًا بِذِرَاعٍ حَتّٰی لَوْ سَلَکُوْا مَجْرَ صَبٍّ لَّسَلَکْتُمْوْهُ. قُلْنَا: یٰۤاَرْسُوْلَ اللّٰہِ الْیَهُودُ وَ النَّصَارَی؟ قَالَ: فَمَنْ؟)) (8)

“तुम लाज़िमन अपने से पहलों के तौर-तरीकों की पैरवी करोगे, बालिशत के मुक़ाबले में बालिशत और हाथ के मुक़ाबले में हाथ। यहाँ

तक कि अगर वह गोह के बिल में घुसे होंगे तो तुम भी घुस कर रहोगे।” हमने अर्ज़ किया: ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ! यहूद व नसारा की? आप ﷺ ने फरमाया: “तो और किसकी?”

तिरमिज़ की मज़कूरा वाला हदीस में तो यहाँ तक अल्फ़ाज़ आते हैं कि: ((حَتَّىٰ إِنْ كَانَ مِنْهُمْ مَنْ آتَىٰ أُمَّةً عَلاَئِيَّةً لَّكَانَ فِي أَفْئِدَةٍ مِّنْ يَّبْنَعُ ذَٰلِكَ)) यानि अगर उनमें कोई बदबख्त ऐसा उठा होगा जिसने अपनी माँ से अलल ऐलान ज़िना किया था तो तुम में से भी कोई शकी ऐसा ज़रूर उठेगा जो यह हरकत करेगा। इस ऐतबार से इन रकूओं को पढ़ते हुए यह ना समझिये कि यह महज़ अगलों की दास्तान हैं, बल्कि:

“खुशतर आँ बाशिद कि सर दिलबराँ
गुफ़ता-ए-आयद दर हदीस दीगराँ”

के मिस्दाक़ यह हमारे लिये एक आईना है और हमें हर मरहले पर सोचना होगा, दरू बीनी (आत्मनिरीक्षण) करनी होगी कि कहीं इसी गुमराही में हम भी तो मुब्तला नहीं?

दूसरा अहम नुक्ता पहले से ही यह समझ लीजिये कि सूरतुल बक्ररह की आयात 47-48 जिनसे इस छठे रकूअ का आगाज़ हो रहा है, यह दो आयतें बैयन ही पन्द्रहवें रकूअ के आगाज़ में फिर आयेंगी। इनमें से पहली आयत में तो शोशे भर का फ़र्क़ भी नहीं है, जबकि दूसरी आयत में सिर्फ़ अल्फ़ाज़ की तरतीब बदली है, मज़मून वही है। यूँ समझिये कि यह गोया दो ब्रेकेट्स हैं और नौ रकूओं के मज़ामीन इन दो ब्रेकेटों के दरमियान हैं। और सूरतुल बक्ररह का पाँचवा रकूअ जो इन ब्रेकेटों से बाहर है, इसके मज़ामीन ब्रेकेटों के अन्दर के सारे मज़ामीन से ज़र्ब खा रहे हैं। यह हिसाब का बहुत ही आम-फ़हम सा क़ायदा है कि ब्रेकेट के बाहर लिखी हुई रक़म, जिसके बाद जमा या तफ़रीक़ वगैरह की कोई अलामत ना हो, वह ब्रेकेट के अन्दर मौजूद तमाम अक़दार (values) के साथ ज़र्ब खायेगी। तो गोया इस पूरे मामले में हर-हर क़दम पर रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान लाने की दावत मौजूद है। यह वज़ाहत इसलिये ज़रूरी है कि इस हिस्से में बाज़ आयात ऐसी आ गयी है जिनसे कुछ लोगों को मुग़ालता पैदा हुआ या जिनसे कुछ लोगों ने जानबूझ कर फ़ितना पैदा किया कि निजाते उख़रवी के लिये मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान ज़रूरी नहीं है। इस फ़ितने ने एक बार अकबर के ज़माने में “दीन-ए इलाही” की शक़ल में जन्म लिया था कि आख़िरत में निजात के लिये सिर्फ़

ख़ुदा को मान लेना, आख़िरत को मान लेना और नेक आमाल करना काफ़ी है, किसी रसूल पर ईमान लाना ज़रूरी नहीं है। यह फ़ितना सूफ़िया में भी बहुत बड़े पैमाने पर फैला और “मस्जिद मन्दिर हिक़डो नूर” के फ़लसफ़े की तशहीर (विज्ञापन) की गयी। यानि मस्जिद में और मन्दिर में एक ही नूर है, सब मज़ाहिब असल में एक ही हैं, सारा फ़र्क़ शरीअतों का और इबादात की ज़ाहिरी शक़ल का है। और वह रसूलों से मुताल्लिक़ है। चुनाँचे रसूलों को बीच में से निकाल दीजिये तो यह “दीन-ए-इलाही” (अल्लाह का दीन) रह जायेगा। यह एक बहुत बड़ा फ़ितना था जो हिन्दुस्तान में उस वक़्त उठा जब सियासी ऐतबार से मुस्लमानों का इक़तदार चोटी (climax) पर था। यह फ़ितना जिस मुस्लमान हुक्मरान का उठाया हुआ था वह “अकबर-ए-आज़म” और “मुग़ल-ए-आज़म” कहलाता था। उसके पेशकरदा “दीन” का फ़लसफ़ा यह था कि दीने मुहम्मदी ﷺ का दौर ख़त्म हो गया (नाउज़ुबिल्लाह), वह एक हज़ार साल के लिये था, अब दूसरा हज़ार साल (अल्फ़े सानी) है और इसके लिये नया दीन है। उसे “दीने अकबरी” भी कहा गया और “दीने इलाही” भी। सूरतुल बक्ररह के इस हिस्से में एक आयत आयेगी जिससे कुछ लोगों ने इस “दीने इलाही” के लिये इस्तदलाल (तर्क) किया था।

हिन्दुस्तान में बीसवीं सदी में यह फ़ितना फिर उठा जब गाँधी जी ने “मुत्तहिदा वतनी क़ौमियत” का नज़रिया पेश किया। इस मौक़े पर मुस्लमानों में से एक बहुत बड़ा नाबगा (genius) इन्सान अबुल कलाम आज़ाद भी इस फ़ितने का शिकार हो गया। गाँधी जी अपनी प्रार्थना में कुछ कुरान की तिलावत भी करवाते, कुछ गीता भी पढ़वाते, कुछ उपनिषदों से, कुछ बाइबल से और कुछ गुरुग्रन्थ से भी इस्तफ़ादा किया जाता। मुत्तहिदा वतनी क़ौमियत का तसव्वुर यह था कि एक वतन के रहने वाले लोग एक क़ौम हैं, लिहाज़ा उन सबको एक होना चाहिये, मज़हब तो इन्फ़रादी मामला है, कोई मस्जिद में चला जाये, कोई मन्दिर में चला जाये, कोई गुरुद्वारे में चला जाये, कोई कलैसा, सिनेगाग या चर्च में चला जाये तो इससे क्या फ़र्क़ वाक़ेअ होता है? इस तरह के नज़रियात और तसव्वुरात का तोड़ यही है कि यूँ समझ लीजिये कि पाँचवें रकूअ की सात आयात ब्रेकेट के बाहर हैं और यह ब्रेकेटों के अन्दर के मज़मून से मुसलसल ज़र्ब खा रही हैं। चुनाँचे इन ब्रेकेटों के दरमियान जितना भी मज़मून आ रहा है वह इनके तावेअ होगा। गोया जहाँ तक मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान लाने का मामला है वह हर

मरहले पर मुक़द्दर (understood) समझा जायेगा। अब हम इन आयत का मुतअला शुरू करते हैं।

आयत 47

“ऐ याक़ूब की औलाद! याद करो मेरे उस ईनाम को जो मैंने तुम पर किया”

يٰٓبَنِي إِسْرَءِيلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِي أَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ

इसकी वज़ाहत गुज़िश्ता (पिछले) रकूअ में हो चुकी है, लेकिन यहाँ आगे जो अल्फ़ाज़ आ रहे हैं बहुत ज़ोरदार हैं:

“और यह कि मैंने तुम्हें फज़ीलत अता की तमाम ज़हानों पर।”

وَإِنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ

अरबी नहव (वाक्य-विन्यास) का यह क़ायदा है कि कहीं ज़र्फ़ का तज़क़िरा होता है (यानि जिसमें कोई शय है) लेकिन इससे मुराद मज़रूफ़ होता है (यानि ज़र्फ़ के अन्दर जो शय है)। यहाँ भी ज़र्फ़ की जमा लायी गयी है लेकिन इससे मज़रूफ़ की जमा मुराद है। “तमाम ज़हानों पर फज़ीलत” से मुराद “जहान वालों पर फज़ीलत” है। मतलब यह है कि हमने तुम्हें तमाम अक़वामे आलम पर फज़ीलत अता की। आलमे इन्सानियत के अन्दर जितने भी मुख़्तलिफ़ ग़िरोह, नस्लें और तबक़ात हैं उनमें फज़ीलत अता की।

आयत 48

“और डरो उस दिन से कि जिस दिन काम ना आ सकेगी कोई जान किसी दूसरी जान के कुछ भी”

وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِي نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا

कब्ल अज़ यह बात अर्ज़ की जा चुकी है कि इन्सान के अमल के ऐतबार से सबसे मौअस्सर शय ईमान बिलआखिरा है। मुहासबा-ए-आख़िरत अगर मुस्तहज़र (जागरूक) रहेगा तो इन्सान सीधा रहेगा, और अगर इसमें ज़ौफ़ (कमी) आ जाये तो ईमान बिल्लाह और ईमान बिर्रिसालत भी ना मालूम क्या-क्या शक़लें इख़्तियार कर लें। इस आयत के अन्दर चार ऐतबारात से मुहासबा-ए-उख़रवी पर ज़ोर दिया गया है। सबसे पहले फ़रमाया कि डरो

उस दिन से जिस दिन कोई जान किसी दूसरी जान के कुछ भी काम ना आ सकेगी।

“और ना किसी से कोई सिफ़ारिश कुबूल की जायेगी”

وَلَا يَقْبَلُ مِنْهَا شَفَاعَةً

“और ना किसी से कोई फ़िदया कुबूल किया जायेगा”

وَلَا يُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ

“और ना उन्हें कोई मदद मिल सकेगी।”

وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ

ईमान बिलआखिरा के ज़िम्न में लोगो ने तरह-तरह के अक़ीदे गढ़ रखे हैं, जिनमें शफ़ाअते बातिला (झूठी हिमायत) का तसव्वुर भी है। अहले अरब समझते थे कि फ़रिश्ते खुदा की बेटियाँ हैं। उन्होंने लात, मनात और उज़ज़ा वगैरह के नाम से उनके बुत बना रखे थे, जिन्हें वह पूजते थे और यह अक़ीदा रखते थे कि अल्लाह की यह लाडली बेटियाँ हमें अपने “अब्बाजान” से छुड़ा लेंगी। (نعوذ بالله من ذلك) हमारे यहाँ भी शफ़ाअते बातिला का तसव्वुर मौजूद है कि औलिया अल्लाह हमें छुड़ा लेंगे। खुद रसूल अल्लाह ﷺ की शफ़ाअत के बारे में ग़लत तसव्वुरात मौजूद हैं। एक शफ़ाअते हक़ है, जो बरहक़ है उसकी वज़ाहत का यह मौक़ा नहीं है। इसी सूरह मुबारका में जब हम आयतुल कुर्सी का मुतअला करेंगे तो इन्शाअल्लाह तो इसकी वज़ाहत भी होगी। यह सारे तसव्वुरात और ख्यालात जो हमने गढ़ रखे हैं, इनकी नफ़ी इस आयत के अन्दर दो टूक अन्दाज़ में कर दी गयी है।

इसके बाद अल्लाह तआला की तरफ़ से बनी इसराइल पर जो अहसानात व ईनामात हुए और उनकी तरफ़ से जो नाशुक्रियाँ हुई उनका तज़क़िरा बड़ी तेज़ी के साथ किया गया है। वाज़ेह रहे कि यह वाक़िआत कई सौ बरस पर मुहीत हैं और इनकी तफ़सील मक्की सूरतों में आ गयी है। इन वाक़िआत की सबसे ज़्यादा तफ़सील सूरतुल आराफ़ में मौजूद है। यहाँ पर तो वाक़िआत का पय-बा-पय तज़क़िरा किया जा रहा है, जैसे किसी मुलज़िम पर फ़र्दे क़रारदारे जुर्म आइद की जाती है तो उसमें सब कुछ गिनवाया जाता है कि तुमने यह किया, यह किया और यह किया।

आयत 49

“और ज़रा याद करो जबकि हमने तुम्हें निजात दी थी फिरऔन की क़ौम से”

وَأَذِّنْكُمْ مِنَ الْفُرْعَانِ

“वह तुम्हें बदतरीन अज़ाब में मुबतला किये हुऐ थे”

يَسُومُوكُمْ سُوءَ الْعَذَابِ

“तुम्हारे बेटों को ज़िबह कर डालते थे और तुम्हारी औरतों को ज़िन्दा रखते थे।”

يَذْبَحُونَ أَبْنَاءَكُمْ وَيَسْتَحْيُونَ نِسَاءَكُمْ

फ़िरऔन ने हुक्म दिया था कि बनी इसराइल में जो भी लड़का पैदा हो उसको क़त्ल कर दिया जाये और लड़कियों को ज़िन्दा रहने दिया जाये ताकि उनसे ख़िदमत ली जा सके और उन्हें लौंडियाँ (नौकरानी) बनाया जा सके। बनी इसराइल के साथ यह मामला दो मौक़ों पर हुआ है। इसकी तफ़सील इन्शा अल्लाह बाद में आयेगी।

“और इसमें तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम्हारे लिये बड़ी आज़माइश थी।”

وَفِي ذَلِكُمْ بَلَاءٌ مِّن رَّبِّكُمْ عَظِيمٌ

आयत 50

“और याद करो जबकि हमने तुम्हारी खातिर समुन्दर को (या दरिया को) फाड़ दिया”

وَأَذِفْرَفْنَا بِكُمْ الْبَحْرَ

यह एक मुख्तलिफ़ फ़ी बात है कि बनी इसराइल ने मिस्र से ज़ज़ीरा नुमाये सीना आने के लिये किस समुन्दर या दरिया को उबूर (पार) किया था। एक राय यह है कि दरिया-ए-नील को उबूर करके गये थे, लेकिन यह बात इस ऐतबार से ग़लत है कि दरिया-ए-नील तो मिस्र के अन्दर बहता है, वही कभी भी मिस्र की हद नहीं बना। दूसरी राय यह है कि बनी इसराइल ने ख़लीज सुवेज़ को उबूर किया था। बहरा-ए-कुलज़ुम (Red Sea) ऊपर जाकर दो खाड़ियों में तब्दील हो जाता है, मशरिफ़ की तरफ़ ख़लीज उक़बा और मग़रिब की तरफ़ ख़लीज सुवेज़ है और इनके दरमियान ज़ज़ीरा नुमाये सीना (Sinai Peninsula) है। यह इसी तरह की तकवीन है जैसे ज़ज़ीरा नुमाये

हिन्द (Indian Peninsula) है। ख़लीज सुवेज़ और बहरा-ए-रूम के दरमियान कई बड़ी-बड़ी झीलें थी, जिनको बाहम जोड़-जोड़ कर, दरमियान में हाइल खुशकी को काट कर नहर सुवेज़ बनायी गयी है, जो अब एक मुसलसल रास्ता है। मालूम होता है कि हज़रत मूसा (अलै०) और बनी इसराइल ने ख़लीज सुवेज़ को उबूर किया था। मुझे खुद भी इसी राय से इत्तेफ़ाक़ है। इस लिये कि कोहे तूर इस ज़ज़ीरा नुमाये सीना की नोक (tip) पर वाक़ेअ है, जहाँ हज़रत मूसा (अलै०) को चालीस दिन-रात के लिये बुलाया गया और फिर उन्हें तौरात दी गयी। बनी इसराइल ने ख़लीज सुवेज़ को इस तरह उबूर किया कि हज़रत मूसा (अलै०) के असा की एक ज़र्ब से समुन्दर फट गया। अज़रूए अल्फ़ाज़े कुरानी: {فَأَنفَلَقَ فَمَا كَانَ كُلُّ فَرْقٍ كَالظُّدِ الْعَظِيمِ} (अशशौरा:63) “पस समुन्दर फट गया और हो गया हर हिस्सा जैसे बड़ा पहाड़।” समुन्दर का पानी दोनों तरफ़ पहाड़ की तरह खड़ा हो गया और बनी इसराइल उसके दरमियान में से निकल गये। उनके पीछे-पीछे जब फ़िरऔन अपना लश्कर लेकर आया तो उसने सोचा कि हम भी ऐसे ही निकल जायेंगे, लेकिन वे ग़र्क़ हो गये। इसलिये कि दोनों तरफ़ का पानी आपस में मिल गया। यह एक मौज्ज़ाना कैफ़ियत थी और यह बात फ़ितरत (nature) के क़वानीन के मुताबिक़ नहीं थी।

“फिर तुम्हें तो निजात दे दी और फिरऔन के लोगों को ग़र्क़ कर दिया जबकि तुम देख रहे थे।”

فَأَنجَيْنَاكُمْ وَأَغْرَقْنَا آلَ فِرْعَوْنَ وَأَنْتُمْ تَنْظُرُونَ

तुम्हारी निगाहों के सामने फ़िरऔन के लाव-लश्कर को ग़र्क़ कर दिया। बनी इसराइल ख़लीज सुवेज़ से गुज़र चुके थे और दूसरी जानिब खड़े थे। उन्होंने देखा कि इधर से फ़िरऔन और उसका लाव-लश्कर समुन्दर में दाखिल हुआ तो पानी दोनों तरफ़ से आकर मिल गया और यह सब ग़र्क़ हो गये।

आयत 51

“और याद करो जब हमने वादा किया मूसा (अलै०) से चालीस रातों का”

وَأَذِوَعَدْنَا مُوسَىٰ أَرْبَعِينَ لَيْلَةً

अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा (अलै०) को तौरात अता फ़रमाने के लिये चालीस दिन-रात के लिये कोहे तूर पर बुलाया।

“फिर तुमने बना लिया बछड़े को (मअबूद) उसके बाद”

ثُمَّ أَخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِهِ

बनी इसराइल ने हज़रत मूसा (अलै०) की ग़ैरहाज़री में बछड़े की परस्तिश शुरू कर दी और उसे मअबूद बना लिया।

“और तुम ज़ालिम थे।”

وَأَنْتُمْ ظَالِمُونَ ۝

बछड़े को मअबूद बना कर तुमने बहुत बड़े जुल्म कर इरत्काब (commit) किया था। अल्फ़ाज़े कुरानी: {إِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظِيمٌ} के मिस्दाक़ अज़ीम-तरीन जुल्म जो है वह शिर्क है, और बनी इसराइल ने शिर्क ज़ली की यह मकरूह तरीन शक़ल इख़्तियार की कि बछड़े की परस्तिश शुरू कर दी।

आयत 52

“फिर हमने तुम्हें इसके बाद भी माफ़ किया”

ثُمَّ عَفَوْنَا عَنْكُمْ مِنْ بَعْدِ ذَلِكَ

यह हमारा करम रहा है, हमारी रहमत रही है।

“ताकि तुम शुक्र करो।”

لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝

आयत 53

“और याद करो जबकि हमने मूसा (अलै०) को किताब और फ़ुरक़ान अता फ़रमायी ताकि तुम हिदायत पाओ।”

وَإِذْ آتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَالْفُرْقَانَ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ۝

“फ़ुरक़ान” से मुराद हक़ और बातिल के दरमियान फ़र्क़ कर देने वाली चीज़ है और किताब का लफ़ज़ आमतौर पर शरीअत के लिये आता है।

आयत 54

“और याद करो जबकि कहा था मूसा (अलै०) ने अपनी क़ौम से”

وَإِذْ قَالَ مُوسَى لِقَوْمِهِ

“ऐ मेरी क़ौम के लोगों! यक़ीनन तुमने अपने ऊपर बड़ा जुल्म किया है बछड़े को मअबूद बना कर”

يَقَوْمِ إِنَّكُمْ ظَلَمْتُمْ أَنْفُسَكُمْ بِاتِّخَاذِكُمُ الْعِجْلَ

“पस अब तौबा करो अपने पैदा करने वाले की जनाब में”

فَتَوُوبُوا إِلَىٰ بَارِيكُمْ

“तो क़त्ल करो अपने आपको।”

فَاقتُلُوا أَنْفُسَكُمْ ۝

यह वाक़िआ तौरात में तफ़सील से आया है, कुरान में इसकी तफ़सील मज़कूर नहीं है। बहुत से वाक़िआत जिनका कुरान में इजमालन (संक्षिप्त) ज़िक्र है उनकी तफ़सील के लिये हमें तौरात से रज़ूअ करना पड़ता है, वरना बाज़ आयात का सही-सही मफ़हूम वाज़ेह नहीं होता। यहाँ अल्फ़ाज़ आये हैं: {فَاقتُلُوا أَنْفُسَكُمْ} “मार डालो अपनी जानें” या “क़त्ल करो अपने आपको।” इसके क्या मायने हैं? यह दरअसल क़त्ले मुरतद की सज़ा है। बनी इसराइल के बारह क़बीले थे। हर क़बीले में से कुछ लोगों ने यह कुफ़्र और शिर्क किया कि बछड़े को मअबूद बना लिया, बाक़ी लोगों ने ऐसा नहीं किया। बनी इसराइल को हुक्म दिया गया कि हर क़बीले के वह लोग जो इस शिर्क में मुलव्विस (शामिल) नहीं हुए अपने-अपने क़बीले के उन लोगों को क़त्ल करें जो इस कुफ़्र व शिर्क के मुरतकिब (दोषी) हुए। “فَاقتُلُوا أَنْفُسَكُمْ ۝” से मुराद यह है कि तुम अपने क़बीले के लोगों को क़त्ल करो। इसलिये कि क़बाइली ज़िन्दगी बड़ी हस्सास (संवेदनशील) होती है और किसी दूसरे क़बीले की मुदाख़लत (हस्तक्षेप) से क़बाइली असबियत (दुश्मनी) भड़क उठने का अन्देशा होता है। हज़रत मूसा (अलै०) इस हुक्म पर अमल दर आमद (implementation) के नतीजे में सत्तर हज़ार यहूदी क़त्ल हुए। इससे बड़ी तौबा और इससे बड़ी ततहीर (purge) मुमकिन नहीं है। किसी भी नज़रियाती जमात के अन्दर तज़किया और ततहीर का अमल बहुत ज़रूरी होता है। कुछ लोग एक नज़रिये को कुबूल करके जमात से वाबस्ता (सम्बंधित) हो जाते हैं, लेकिन रफ़्ता-रफ़्ता नज़रिया औझल हो जाता है और अपने मफ़ादात और चौधराहटें मुक़द्दम हो जाती हैं। इसी से जमातें ख़राब होती हैं और ग़लत रास्ते पर पड़ जाती हैं। चुनाँचे नज़रियाती जमातों में यह अमल बहुत ज़रूरी होता है कि

जो अफ़राद नज़रिये से मुनहरिफ़ (गुमराह) हो जायें उनको जमात से काट कर अलैहदा कर दिया जाये।

कुरान हकीम के इस मक़ाम से क़त्ले मुरतद की सज़ा साबित होती है, जबकि क़त्ले मुरतद का वाज़ेह हुक्म हदीसे नबवी ﷺ में मौजूद है। हमारे बाज़ ज़दीद दानिश्वर इस्लाम में क़त्ले मुरतद की हद को तस्लीम नहीं करते, लेकिन मेरे नज़दीक यह शरीअते मूसवी (अलै०) का तसलसुल है। शरीअते मूसवी (अलै०) के जिन अहकाम के बारे में सराहतन (निश्चित रूप से) यह मालूम नहीं कि उन्हें तब्दील कर दिया गया है वह शरीअते मुहम्मदी ﷺ का जुज़ (हिस्सा) बन गये हैं। शादी-शुदा ज़ानी पर हद्दे रज्म का मामला भी यही है। कुरान मजीद में हद्दे रज्म की कोई सरीह आयत मौजूद नहीं है, लेकिन अहादीस में यह सज़ा मौजूद है। इसी तरह कुरान मजीद में मुरतद के क़त्ल की कोई सरीह आयत मौजूद नहीं है, लेकिन यह हदीस और सुन्नत से साबित है। अलबत्ता इन दोनों सज़ाओ का मिम्बा (स्रोत) और माखज़ (निकास) दरअसल तौरात है। इस ऐतबार से कुरान हकीम का यह मक़ाम बहुत अहम है, लेकिन अक्सर लोग यहाँ से बहुत सरसरी तौर पर गुज़र जाते हैं।

बनी इसराइल जब मिस्र से निकले तो उनकी तादाद छः लाख थी। जज़ीरा नुमाये सीना पहुँचने के बाद उनकी तादाद मज़ीद बढ़ गयी होगी। उनमें से सत्तर हज़ार अफ़राद को शिर्क की पादाश (इल्ज़ाम) में क़त्ल किया गया, और हर क़बीले ने जो अपने मुरतद थे उनको अपने हाथ से क़त्ल किया।

“यही तुम्हारे लिये तुम्हारे रब के नज़दीक
 ड़िकुम् ख़ैरु लकुम् एन्दा बारिकुम्”

“तो (अल्लाह ने) तुम्हारी तौबा कुबूल कर
 ली।”

बनी इसराइल की तौबा इस तरह कुबूल हुई कि उम्मत का तज़किया हुआ और उनमें से जिन लोगों ने इतनी बड़ी ग़लत हरकत की थी उनको ज़िबह करके, क़त्ल करके उम्मत से काट कर फेंक दिया गया।

“यक़ीनन वह तो है ही तौबा का बहुत कुबूल
 फ़रमाने वाला, बहुत रहम फ़रमाने वाला।”

आयत 55

“और याद करो जबकि तुमने कहा था ऐ मूसा (अलै०)! हम तुम्हारा हरगिज़ यक़ीन नहीं करेंगे जब तक हम अल्लाह को सामने ना देख लें”

“يُؤْمِنُونَ” के बाद “بِ” का सिला हो तो इसके मायने ईमान लाने के होते हैं, जबकि “لِ” के सिले के साथ इसके मायने सिर्फ़ तस्दीक के होते हैं। बनी इसराइल ने हज़रत मूसा (अलै०) से कहा था कि हम आपकी बात की तस्दीक नहीं करेंगे जब तक हम अपनी आँखों से अल्लाह को आपसे कलाम करते ना देख लें। हम कैसे यक़ीन कर लें कि अल्लाह ने यह किताब आपको दी है? आप (अलै०) तो हमारे सामने पत्थर की कुछ तख्तियाँ लेकर आ गये हैं जिन पर कुछ लिखा हुआ है। हमें क्या पता कि यह किसने लिखा है? देखिये, एक ख़्वाहिश हज़रत मूसा (अलै०) की भी थी कि {رَبِّ ارْزُقْنِي} (आराफ़:143) “ऐ मेरे रब! मुझे याराये नज़र दे कि मैं तुझको देखूँ।” वह कुछ और शय थी, वह “तू मेरा शौक देख मेरा इन्तेज़ार देख!” की कैफ़ियत थी, लेकिन यह तखरीबी (विनाशकारी) ज़हन की सोच है कि हम भी चाहते हैं कि अल्लाह को अपनी आँखों से देखें और हमें मालूम हो कि वाक़ई उसने आपको यह किताब दी है।

“तो तुम्हें आ पकड़ा एक बहुत बड़ी कड़क ने
 और तुम देख थे।”

तुम्हारे देखते-देखते एक बहुत बड़ी कड़क ने तुम्हें आलिया (पकड़ लिया) और तुम सबके सब मुर्दा हो गये।

आयत 56

“फिर हमने तुम्हें दोबारा उठाया तुम्हारी
 मौत के बाद”

बाज़ लोग इसकी एक तावील करते हैं कि यह मौत नहीं थी, बल्कि ज़बरदस्त कड़क की वजह से सबके सब बेहोश होकर गिर पड़े थे, लेकिन मेरे नज़दीक यहाँ तावील की ज़रूरत नहीं है, बाअस बाद अल मौत (मौत के ज़िन्दा

करना) अल्लाह के लिये कुछ मुश्किल नहीं है। {وَمِنْ بَعْدِ مَوْتِكُمْ} के अल्फ़ाज़ अपने मफ़हूम के ऐतबार से बिल्कुल सरीह (साफ़) हैं, इन्हें ख्वाह माख्वाह कोई और मायने पहनाना दुरुस्त नहीं है।

“ताकि तुम (इस अहसान पर हमारा) शुक्र करो।”

وَعَلَّكُم تَشْكُرُونَ ﴿٥٧﴾

आयत 57

“और हमने तुम पर अब्र (बादल) का साया किया”

وَوَلَّلْنَا عَلَيْكُمُ الْغَمَامَ

जज़ीरा नुमाये सीना के लक़ व दक़ सहरा (ऐसा चटियल व सुनसान रेगिस्तान जिसमें कोई पेड़-पौधा ना हो) में छः लाख का काफ़िला चल रहा है, कोई ओट नहीं, कोई साया नहीं, धूप की तपिश से बचने का कोई इन्तेज़ाम नहीं। इन हालात में उन पर अल्लाह तआला का यह फ़ज़ल हुआ कि तमाम दिन एक बादल उन पर साया किये रहता और जहाँ-जहाँ वह जाते वह बादल उनके साथ होता।

“और उतारा तुम पर मन्न व सलवा।”

وَأَنزَلْنَا عَلَيْكُمُ الْمَنَّاءَ وَالسَّلْوَىٰ

सहराये सीना में बनी इसराइल के पास खाने को कुछ नहीं था तो उनके लिये मन्न व सलवा नाज़िल किये गये। “मन्न” रात के वक़्त शबनम के क़तरों की मानिन्द उतरता था, जिसमें शीरीनी (मिठास) भी होती थी, और उसके क़तरे ज़मीन पर आकर जम जाते थे और दानों की सूरत इख़्तियार कर लेते थे। यह गोया उनका अनाज हो गया, जिससे काब्रोहाईड्रेट्स की ज़रूरत पूरी हो गयी। “सलवा” एक ख़ास किस्म का बटेर की शक़ल का परिन्दा था। शाम के वक़्त उन परिन्दों के बड़े-बड़े झुण्ड आते और जहाँ बनी इसराइल डेरा डाले होते उसके गिर्द उतर आते थे। रात की तारीकी (अँधेरे) में यह उन परिन्दों को आसानी से पकड़ लेते थे और भून कर खाते थे। चुनाँचे उनकी प्रोटीन की ज़रूरत भी पूरी हो रही थी। इस तरह अल्लाह तआला ने उनको मुकम्मल गिज़ा फ़राहम कर दी थी।

“(हमने कहा) खाओ इन पाकीज़ा चीज़ों को जो हमने तुमको अता की है।”

كُلُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ

“और उन्होंने हमारा कुछ नुक़सान ना किया, बल्कि वह खुद अपने ऊपर जुल्म ढाते रहे।”

وَمَا ظَلَمُونَا وَلَكِنْ كَانُوا أَنفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٥٨﴾

हर क़दम पर नाफ़रमानी और नाशुक्रि बनी इसराइल का वतीराह (आदत) थी। चुनाँचे उन्होंने “मन्न व सलवा” जैसी नेअमत की क़द्र भी ना की और नाशुक्रि की रविश अपनाये रखी। इसका ज़िक़्र अगली आयत में आ जायेगा।

आयत 58

“और याद करो जबकि हमने तुमसे कहा था कि दाखिल हो जाओ इस शहर में और फिर खाओ उसमें से बाफ़राग़त जहाँ से चाहो जो चाहो”

وَأَذَقْنَا ادْخُلُوا هَذِهِ الْقَرْيَةَ فَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ رَغَدًا

“लेकिन देखना (बस्ती के) दरवाज़े में दाखिल होना झुक कर और कहते रहना मग़फ़िरत-मग़फ़िरत, तो हम तुम्हारी ख़ताओं से दरगुज़र फ़रमायेंगे।”

وَادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَقُولُوا حِطَّةٌ نَغْفِرْ لَكُمْ خَطِيئَتَكُمْ

“और मोहसीनीन को हम मज़ीद फ़ज़ल व करम से नवाज़ेंगे।”

وَسَنَرْزِقُ الْمُحْسِنِينَ ﴿٥٩﴾

बनी इसराइल के सहराये सीना में आने और तौरात अता किये जाने के बाद हज़रत मूसा (अलै०) ही के ज़माने में उन्हें जिहाद और क़िताल का हुक्म हुआ, लेकिन इससे पूरी क्रौम ने इन्कार कर दिया। इस पर अल्लाह तआला ने उन पर यह सज़ा मुसल्लत कर दी कि यह चालीस बरस तक इसी सहरा में भटकते फिरेंगे। अल्लाह तआला ने फ़रमाया कि अगर यह अभी जिहाद और क़िताल करते तो हम पूरा फ़लस्तीन इनके हाथ से अभी फ़तह करा देते। लेकिन चूँकि इन्होंने बुज़दिली दिखाई है लिहाज़ा अब इनकी सज़ा यह है: {فَأَنبَأَ عِزْمَةً عَلَيْهِمْ أَرْبَعِينَ سَنَةً يَتِيَّبُونَ فِي الْأَرْضِ} (मायदा:26) यानि अर्दे फ़लस्तीन जो उनके लिये अर्दे मौऊद (वादा की हुई) थी वह उन पर चालीस साल के लिये

हराम कर दी गयी है, अब यह चालीस साल तक इसी सहरा में भटकते फिरेंगे। सहरानावरदी (cross-country) के इस अर्से में हज़रत मूसा (अलै०) का भी इन्तेक़ाल हो गया और हज़रत हारून (अलै०) का भी। इस अर्से में एक नयी नस्ल पैदा हुई और वह नस्ल जो मिस्र से गुलामी का दाग़ उठाये हुए आयी थी वह पूरी की पूरी ख़त्म हो गयी। गुलामी का यह असर होता है कि गुलाम क्रौम के अन्दर अख़लाक़ व किरदार की कमज़ोरियाँ पैदा हो जाती हैं। सहरानावरदी के ज़माने में जो नस्ल पैदा हुई और सहरा ही में परवान चढ़ी वह एक आज़ाद नस्ल थी जो उन कमज़ोरियों से پاک थी और उनमें एक जज़्बा था। बनी इसराइल की इस नयी नस्ल ने हज़रत मूसा (अलै०) के ख़लीफ़ा यूशा बिन नून [तौरात में इनका नाम येशूआ (Joshua) आया है] की क़यादत में क़िताल किया और पहला शहर जो फ़तह हुआ वह “अरीहा” था। यह शहर आज भी जेरिका (Jericho) के नाम से मौजूद है।

यहाँ पर इस फ़तह के बाद का तज़क़िरा हो रहा है कि याद करो जबकि हमने तुमसे कहा था कि इस शहर में फ़ातेह की हैसियत से दाख़िल हो जाओ और फिर जो कुछ नेअमतेँ यहाँ हैं उनसे मुतमताअ (आनंदित) हो, ख़ूब खाओ-पीयो, लेकिन शहर के दरवाज़े से सज़्दा करते हुए दाख़िल होना। मुराद यह है कि झुक कर, सज़्दाये शुक्र बजालाते हुए दाख़िल होना। ऐसा ना हो कि तकव्वुर की वजह से तुम्हारी गरदनें अकड़ जायें। अल्लाह का अहसान मानते हुए गरदनें झुका कर दाख़िल होना। यह ना समझना कि यह फ़तह तुमने बज़ोरे बाज़ू हासिल की है। इसका नक्रशा हमें मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की शख़्सियत में नज़र आता है कि जब फ़तह मक्का के मौक़े पर आप ﷺ मक्का में दाख़िल हुए तो जिस सवारी पर आप ﷺ बैठे हुए थे आप ﷺ की पेशानी मुबारक उसकी गर्दन के साथ जुड़ी हुई थी। यह वक़्त होता है जबकि एक फ़ातेह तकव्वुर और तअल्ली (बड़प्पन) का मुज़ाहिरा करता है, लेकिन बन्दा-ए-मोमिन के लिये यही वक़्त तवाज़े (विनम्रता) का और झुकने का है।

इसके साथ ही उन्हें हुक्म दिया गया: ﴿وَقُولُوا حِطَّةٌ﴾ “और कहते जाओ मग़फ़िरत-मग़फ़िररता।” حِطَّةٌ का वज़न فَعْلَةٌ और माद्दा “ح ط ط” है। मसलन कहेंगे حِطَّةٌ के मुतअद्दिद (कई) मायने हैं, जिनमें से एक “पत्ते झाड़ना” है। मसलन कहेंगे حِطَّةٌ (उसने दरख़्त के पत्ते झाड़ दिये)। حِطَّةٌ के मायने “अस्तग़फ़ार, तलब-ए-मग़फ़िररत और तौबा” के किये जाते हैं। गोया इसमें गुनाहों को झाड़ देने

और ख़ताओं को माफ़ कर देने का मफ़हूम है। चुनाँचे “وَقُولُوا حِطَّةٌ” का मफ़हूम यह होगा कि मफ़तूह बस्ती में दाख़िल होते वक़्त जहाँ तुम्हारी गरदनें आजिज़ी के साथ झुकी होनी चाहिये वहीं तुम्हारी जुबान पर भी इस्तग़फ़ार होना चाहिये कि ऐ अल्लाह हमारे गुनाह झाड़ दे, हमारी मग़फ़िरत फ़रमा दे, हमारी ख़ताओं को बख़्श दे! अगर तुम हमारे इस हुक्म पर अमल करोगे तो हम तुम्हारी ख़तायें माफ़ फ़रमा देंगे, और तुम में जो मोहसिन और नेकोकार होंगे उन्हें मज़ीद फ़ज़ल व करम और ईनाम व इकराम से नवाज़ेंगे।

आयत 59

“फिर बदल डाला ज़ालिमों ने बात को
खिलाफ़ उसके जो उनसे कह दी गयी थी”
فَبَدَّلَ الَّذِينَ ظَلَمُوا قَوْلًا غَيْرَ الَّذِي قِيلَ لَهُمْ

उनमें से जो ज़ालिम थे, बदकार थे उन्होंने एक और क़ौल इख़्तियार कर लिया उस क़ौल की जगह जो उनसे कहा गया था। उनसे कहा गया था कि “हिन्तातुन-हिन्तातुन” कहते हुए दाख़िल होना, लेकिन उन्होंने इसकी बजाय “हिन्तातुन-हिन्तातुन” कहना शुरू कर दिया, यानि हमें तो गेहूँ चाहिये, गेहूँ चाहिये! अगले रकूअ में यह बात आ जायेगी कि मन्न व सलवा खाते-खाते बनी इसराइल की तबीयतें भर गयी थीं, एक ही चीज़ खा-खा कर वह उकता गये थे और अब वह कह रहे थे कि हमें ज़मीन की रूईदगी और पैदावार में से कोई चीज़ खाने को मिलनी चाहिये। इस ख़्वाहिश का इज़हार उनकी ज़बानों पर “हिन्तातुन-हिन्तातुन” की सूरत में आ गया। इस तरह उन्होंने अल्लाह तआला के उस हुक्म का इस्तेहज़ाअ व तमस्खुर किया जो उन्हें “وَقُولُوا حِطَّةٌ” के अल्फ़ाज़ में दिया गया था। इसी तरह शहर में सज़्दारेज़ होते हुए दाख़िल होने की बजाय उन्होंने अपने सरीनों पर फिसलना शुरू किया।

“फिर हमने उतारा जुल्म करने वालों पर एक
बड़ा अज़ाब आसमान से”
فَأَنزَلْنَا عَلَى الَّذِينَ ظَلَمُوا رِجْزًا مِّنَ السَّمَاءِ

जिन ज़ालिमों ने अल्लाह तआला के हुक्म का इस्तेहज़ाअ व तमस्खुर किया था उन पर आसमान से एक बहुत बड़ा अज़ाब नाज़िल हुआ। तौरात से मालूम होता है कि अरीहा शहर में पहुँचने के बाद उन्हें ताऊन की वबा (महामारी)

ने आलिया (पकड़ लिया) और जिन्होंने यह हरकत की थी वह सबके सब हलाक हो गये।

“ब-सबव उस नाफ़रमानी के जो उन्होंने की।”

بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ﴿٥٩﴾

यह उन नाफ़रमानियों और हुक्म अदलियों (उल्लंघन) की सज़ा थी जो वह कर रहे थे।

आयात 60 से 61 तक

وَإِذِ اسْتَسْقَىٰ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ فَقُلْنَا اضْرِبْ بِعَصَاكَ الْحَجَرَ ۖ فَانْفَجَرَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا ۖ قَدْ عَلِمَ كُلُّ أُنَاسٍ مَّشْرَبَهُمْ ۖ كُلُوا وَاشْرَبُوا مِنْ رِّزْقِ اللَّهِ وَلَا تَعْتُوا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ۚ وَإِذْ قُلْتُمْ يَمُوسَىٰ لَنْ نُّصْبِرَ عَلَىٰ طَعَامٍ وَاحِدٍ فَادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُخْرِجْ لَنَا مِمَّا تُنْبِئُ الْأَرْضُ مِنْ بَغْلَيْهَا وَقِثَابِهَا وَفُومَهَا وَعَدْسَهَا وَبَصْلَهَا ۚ قَالَ أَتَسْتَبْدِلُونَ الَّذِي هُوَ أَدْنَىٰ بِالَّذِي هُوَ خَيْرٌ ۚ اهْبِطُوا مِصْرًا فَإِنَّ لَكُمْ مَّا سَأَلْتُمْ ۖ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ ۖ وَبَاءُوا بِغَضَبٍ مِنَ اللَّهِ ۚ ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ كَانُوا يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ وَيَقْتُلُونَ النَّبِيَّاتِ بِغَيْرِ الْحَقِّ ۚ ذَلِكَ بِمَا عَصَوْا وَكَانُوا يَعْتَدُونَ ﴿٦٠﴾

अब यहाँ फिर सहराये सीना के वाकिआत बयान हो रहे हैं। इन वाकिआत में तरतीबे ज़मानी नहीं है। अरीहा की फ़तह मूसा अलै० के बाद हुई, जिसका ज़िक्र गुज़िशता आयात में हुआ, लेकिन अब यहाँ फिर उस दौर के वाकिआत आ रहे हैं जब बनी इसराइल सहराये तईहा में भटक रहे थे।

आयत 60

“और जब पानी माँगा मूसा (अलै०) ने अपनी क्रौम के लिये तो हमने कहा ज़र्ब (चोट) लगाओ अपने असा (लाठी) से चट्टान पर।”

وَإِذِ اسْتَسْقَىٰ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ فَقُلْنَا اضْرِبْ بِعَصَاكَ الْحَجَرَ ۖ

सह्राये सीना में छः लाख से ज़ायद बनी इसराइल पड़ाव डाले हुए थे और वहाँ पानी नहीं था। उन्होंने हज़रत मूसा अलै० से पानी तलब किया। हज़रत

मूसा अलै० ने अल्लाह तआला से अपनी क्रौम के लिये पानी की दुआ की तो उन्हें अल्लाह तआला ने हुक्म दिया कि अपने असा से चट्टान पर ज़र्ब लगाओ।

“तो उससे बारह चश्में फूट बहे।”

فَانْفَجَرَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا ۖ

“ज़र्” कहते हैं कोई चीज़ फट कर उससे किसी चीज़ का बरामद होना। फज़्र के वक़्त को फज़्र इसी लिये कहते हैं कि उस वक़्त रात की तारीकी का परदा चाक होता है और सफेदा सहर नमोदार होता है।

“हर कबीले ने अपना घाट जान लिया (और

قَدْ عَلِمَ كُلُّ أُنَاسٍ مَّشْرَبَهُمْ ۖ

मुअय्यन कर लिया)।”

बनी इसराइल के बारह कबीले थे, अगर उनके लिये अलैहदा-अलैहदा घाट ना होता तो उनमें बाहम लड़ाई झगड़े का मामला होता। उन्हें बारह चश्में इसी लिये दिये गये थे कि आपस में लड़ाई झगड़ा ना हो। पानी तो बहुत बड़ी चीज़ है और क़बाइली ज़िन्दगी में इसकी बुनियाद पर जंग व जदल का आगाज़ हो सकता है।

कहीं पानी पीने-पिलाने पे झगडा

कहीं घोडा आगे बढाने पे झगडा

तो इस ऐतबार से अल्लाह तआला ने उनके लिये यह सहूलत मुहैया की कि बारह चश्में फूट बहे और हर कबीले ने अपना घाट मुअय्यन कर लिया।

“(गोया उनसे यह कह दिया गया कि) खाओ

كُلُوا وَاشْرَبُوا مِنْ رِّزْقِ اللَّهِ

और पियो अल्लाह के रिज़्क में से”

“और ज़मीन में फ़साद मचाते ना फ़िरो।”

وَلَا تَعْتُوا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ۚ

सह्रा में उनके लिये पीने को पानी भी मुहैया कर दिया गया और खाने के लिये मन्न व सलवा उतार दिया गया, लेकिन उन्होंने नाशुक्री का मामला किया, जिसका ज़िक्र मुलाहिज़ा हो।

आयत 61

“और याद करो जबकि तुमने कहा था ऐ मूसा !हम एक ही खाने पर सब नहीं कर

وَإِذْ قُلْتُمْ يَمُوسَىٰ لَنْ نُّصْبِرَ عَلَىٰ طَعَامٍ وَاحِدٍ

सकते”

मन्न व सलवा खा-खा कर अब हम उकता गये हैं।

“तो ज़रा अपने रब से हमारे लिये दुआ करो”

فَادْعُ لَنَا رَبَّكَ

“कि निकाले हमारे लिये उससे कि जो ज़मीन उगाती है”

يُخْرِجُ لَنَا مِمَّا تُنْبِتُ الْأَرْضُ

यानि ज़मीन की पैदावार में से, नबाताते अर्ज़ी में से हमें रिज़क दिया जाये।

“उसकी तरकारियाँ”

مِنْ بَقْلِهَا

“और ककड़ियाँ”

وَقَنَائِهَا

यह लफ़्ज़ खीरे और ककड़ी वगैरह सबके लिये इस्तेमाल होता है।

“और लहसुन”

وَقُومِهَا

फूम का एक तर्जुमा गेहूँ किया गया है, लेकिन मेरे नज़दीक ज़्यादा सही तर्जुमा लहसुन है। अरबी में इसके लिये बिल्उमूम लफ़्ज़ “قُوم” इस्तेमाल किया जाता है। लहसुन को फ़ारसी में तूम और पंजाबी, सराइकी और सिन्धी में “थूम” कहते हैं और यह फूम और सूम ही की बदली हुई शकल है, इसलिये कि अरबों की आमद के बाइस उनकी ज़बान के बहुत से अल्फ़ाज़ सिन्धी और सराइकी ज़बान में शामिल हो गये, जो थोड़ी सी तब्दीली के साथ काफ़ी तादाद में अब भी मौजूद हैं।

“और मसूर”

وَعَدَسِهَا

“और प्याज़ा”

وَبَصَلِهَا

अब जो सालन के चटखारे इन चीज़ों से बनते हैं उनकी ज़बानें वह चटखारे माँग रही थीं। बनी इसराइल सहराये सीना में एक ही तरह की गिज़ा “मन्न व सलवा” खाते-खाते उकता गये थे, लिहाज़ा वह हज़रत मूसा अलै० से कहने लगे कि हमें ज़मीन से उगने वाली चटखारेदार चीज़ें चाहिये।

“हज़रत मूसा अलै० ने फ़रमाया: क्या तुम वह शय लेना चाहते हो जो कमतर है उसके बदले में जो बेहतर है?”

قَالَ أَتَسْتَبْدِلُونَ الَّذِي هُوَ أَدْنَى بِالَّذِي هُوَ خَيْرٌ

मन्न व सलवा नबाताते अर्ज़ी से कहीं बेहतर है जो अल्लाह की तरफ़ से तुम्हें दिया गया है। तो इससे तुम्हारा जी भर गया है और इसको हाथ से देकर चाहते हो कि यह अदना चीज़ें तुम्हें मिलें?

“उतरो किसी शहर में तो तुमको मिल जायेगा जो कुछ तुम माँगते हो।”

إِهْبِطُوا مِصْرًا فَإِنَّ لَكُمْ مَّا سَأَلْتُمْ

लफ़्ज़ “إِهْبِطُوا” पर आयत 38 के ज़ैल में बात हो चुकी है कि इसका मायने बुलन्दी से उतरने का है। ज़ाहिर बात है यहाँ यह लफ़्ज़ आसमान से ज़मीन पर उतरने के लिये नहीं आया, बल्कि इसका सही मफ़हूम यह होगा कि किसी बस्ती में जाकर आबाद हो जाओ! (settle down somewhere) अगर तुम्हें ज़मीन की पैदावार में से यह चीज़ें चाहियें तो कहीं आबाद (settle) हो जाओ और काश्तकारी करो, यह सारी चीज़ें तुम्हें मिल जायेगी।

“और उन पर ज़िल्लत व ख़वारी और मोहताजी व कम हिम्मती थोप दी गयी।”

وَضَرَبْتَ عَلَيْهِمُ الدِّلَّةَ وَالْمُسْكِنَةَ

“और वह अल्लाह का ग़ज़ब लेकर लौटे।”

وَبَاءَؤُ بِغَضَبٍ مِّنَ اللَّهِ

वह अल्लाह के ग़ज़ब में घिर गये।

बनी इसराइल वह उम्मत थी जिसके बारे में फ़रमाया गया (बक्ररह:47)

{وَأَنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ} उसी उम्मत का फिर यह हथ्र हुआ तो क्यों हुआ? अल्लाह तआला की नाफ़रमानी की वजह से! उन्हें किताब दी गयी थी कि उसकी पैरवी करें और उसे कायम करें। सूरतुल मायदा (आयत:66) में फ़रमाया गया:

“अगर यह (अहले किताब) तौरात और इन्जील और उन दूसरी किताबों को कायम करते जो उनकी जानिब उनके रब की तरफ़ से उतारी गयीं तो खाते अपने ऊपर से और अपने क़दमों के नीचे से।”

وَلَوْ أَنَّهُمْ أَقَامُوا التَّوْرَةَ وَالْإِنْجِيلَ وَمَا أُنزِلَ إِلَيْهِمْ مِن رَّبِّهِمْ لَأَكْلُوا مِن فَوْقِهِمْ وَمِن تَحْتِ أَرْجُلِهِمْ

यानि उनके सरों के ऊपर से भी नेअमतों की बारिश होती और ज़मीन भी उनके लिये नेअमतें उगलती। लेकिन उन्होंने इसको छोड़ कर अपनी खाहिशात, अपने नज़रियात, अपने ख्यालात, अपनी अक्ल और अपनी मसलहतों को मुक़द्दम किया, और अपने तमरूद (विद्रोह), अपनी सरकशी और अपनी हाकमियत को बालातर किया। जो क़ौम दुनिया में अल्लाह के क़ानून, अल्लाह की हिदायत और अल्लाह की किताब की अमीन होती है वह अल्लाह की नुमाइन्दा (representative) होती है, और अगर वह अपने अमल से गलत नुमाइन्दगी (misrepresent) करे तो वह अल्लाह के नज़दीक काफ़िरों से बढ़ कर मग़ज़ूब (तुच्छ) और मबगूज़ (घृणित) हो जाती है। इसलिये कि काफ़िरों को दीन पहुँचाना तो इस मुस्लमान उम्मत के ज़िम्मे था। अगर यह खुद ही दीन से मुन्हरिफ़ हो गये तो किसी और को क्या दीन पहुँचायेंगे? आज इस मक़ाम पर मौजूदा उम्मत मुस्लिमा खड़ी है कि तादाद में सवा अरब या डेढ़ अरब होने के बावजूद उनके हिस्से में इज़ज़त नाम की कोई शय नहीं है। दुनिया के सारे मामलात जी-7 और जी-15 मुमालिक के हाथ में हैं। सिक्योरिटी काउंसिल के मुस्तक़िल अरकान को वीटो का हक़ हासिल है, लेकिन कोई मुस्लमान मुल्क ना तो सिक्योरिटी काउंसिल का मुस्तक़िल रुकन है और ना ही जी-7, जी-9 या जी-15 में शामिल है। गोया “किस नमी पुरसद के भैया कैस्ती!” हमारी अपनी पालिसियाँ कहीं और तय होती हैं, हमारे अपने बजट कहीं और बनते हैं, हमारी सुलह और जंग किसी और के इशारे से रिमोट कन्ट्रोल अन्दाज़ में होती हैं। यह ज़िल्लत और मसकनत है जो आज हम पर थोप दी गयी है। हम कहते हैं कश्मीर हमारी शह रग है, लेकिन उसके लिये जंग करने को हम तैयार नहीं हैं। यह ख़ौफ़ नहीं है तो क्या है? यह मसकनत नहीं है तो क्या है? अगर अल्लाह पर यक़ीन है और अपने हक़ पर होने का यक़ीन है तो अपनी शह रग दुश्मन के कब्ज़े से आज़ाद कराने के लिये हिम्मत करो। लेकिन नहीं, हम में यह हिम्मत मौजूद नहीं है। हमारे रेडियो और टेलीविज़न पर ख़बरें आती रहेंगी कि काबिज़ भारतीय फ़ौज ने रियासती दहशतगर्दी की कार्यवाहियों में इतने कश्मीरियों को शहीद कर दिया, इतनी मुस्लमान औरतों की बेहुरमती कर दी, लेकिन हम यहाँ अपने-अपने धन्धों में, अपने-अपने कारोबार में, अपनी-अपनी मुलाज़मतों में और अपने-अपने कैरियर्ज़ में मगन हैं। बहरहाल मुताज़किरह बिलअल्फ़ाज़ अगरचे बनी इसराइल के लिये आये हैं कि उन पर ज़िल्लत व ख़वारी और मोहताजी व कम

हिम्मती मुसल्लत कर दी गयी, लेकिन इसमें आज की उम्मत मुस्लिमा का नक़शा भी मौजूद है।

खुशतर आं बाशिद कि सर दिलबरां

गुफ़ता आयद दर हदीस दीगरां!

“यह इसलिये हुआ कि वह अल्लाह की आयात का इन्कार करते रहे”

ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ كَانُوا يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ

“और अल्लाह के नबियों को नाहक़ क़त्ल करते रहे।”

وَيَقْتُلُونَ النَّبِيِّنَ بِغَيْرِ الْحَقِّ

हमारे यहाँ भी मुजद्दिदे दीने उम्मत को क़त्ल भी किया गया और उनमे से कितने हैं जो जेलों में डाले गये। मुतअद्दिद सहाबा किराम (रज़ि०) और सैकड़ों ताबईन मुस्तबद (कट्टरपंथी) हुक्मरानों के हाथों मौत के घाट उतार दिये गये। अइम्मा-ए-दीन को ऐसी-ऐसी मार पड़ी है कि कहा जाता है कि हाथी को भी ऐसी मार पड़े तो वह बर्दाश्त ना कर सके। इमाम अहमद बिन हम्बल (रहि०) के साथ क्या कुछ हुआ! इमाम अबु हनीफ़ा (रहि०) ने जेल में इन्तेक़ाल किया और वहाँ से उनका जनाज़ा उठा। इमामे दारुल हिज़रत इमाम मालिक (रहि०) के कन्धें खींच दिये गये और मुँह काला करके उन्हें ऊँट पर बिठा कर फिराया गया। हज़रत मुजद्दि अल्फ़े सानी शेख़ अहमद सरहन्दी (रहि०) को पसे दीवार ज़िन्दा डाला गया। सय्यद अहमद बरेलवी (रहि०) और उनके साथियों को खुद मुस्लमानों ने शहीद करवा दिया। हमारी तारीख़ ऐसी दास्तानों से भरी पड़ी है। अब नबी तो कोई नहीं आयेगा। उनके यहाँ नबी थे, हमारे यहाँ मुजद्दिदीन हैं, उलमाये हक़ हैं। उन्होंने जो कुछ अम्बिया (अलै०) के साथ किया वही हमने मुजद्दिदे दीन के साथ किया।

“और यह इसलिये हुआ कि वह नाफ़रमान थे और हद से तजावुज़ करते थे।”

ذَلِكَ بِمَا عَصَوْا وَكَانُوا يَعْتَدُونَ

उनको यह सज़ा उनकी नाफ़रमानियों की वजह से और हद से तजावुज़ करने की वजह से दी गयी। अल्लाह तआला तो ज़ालिम नहीं है (नाऊज़ुबिल्लहा), अल्लाह तआला ने तो उन्हें ऊँचा मक़ाम दिया था। अल्लाह तआला ने हमें भी “ख़ैर उम्मत” क़रार दिया। हमने भी जब अपना मिशन छोड़ दिया तो ज़िल्लत और मसकनत हमारा मुक़द्दर बन गयी। अल्लाह का क़ानून और अल्लाह का

समझी जायेगी। इसलिये कि सारी गुफ्तुगू इसी के हवाले से हो रही है। इस हवाले से अब यूँ समझिये कि आयते ज़ेरे मुतआला में “فِي أَيَّامِهِمْ” या “فِي أَرْمَنِهِمْ” (अपने-अपने दौर में) के अल्फ़ाज़ महज़ूफ़ माने जायेंगे। गोया:

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَادُوا وَالصَّابِرِينَ وَالصَّادِقِينَ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا ﴿فِي أَيَّامِهِمْ﴾ فَلَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٣٠﴾

यानि निजाते उखरवी के लिये अल्लाह तआला और रोज़े क़यामत पर ईमान के साथ-साथ अपने दौर के नबी पर ईमान लाना भी ज़रूरी है। चुनाँचे जब तक हज़रत ईसा (अलै०) नहीं आये थे तो हज़रत मूसा (अलै०) के मानने वाले जो भी यहूदी मौजूद थे, जो अल्लाह पर ईमान रखते थे, आखिरत को मानते थे और नेक अमल करते थे उनकी निजात हो जायेगी। लेकिन जिन्होंने हज़रत ईसा (अलै०) के आने के बाद उन (अलै०) को नहीं माना तो अब वह काफ़िर करार पाये। मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत से क़बल हज़रत ईसा (अलै०) तक तमाम रसूलों पर ईमान निजाते उखरवी के लिये काफ़ी था, लेकिन मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत के बाद आप صلی اللہ علیہ وسلم पर ईमान ना लाने वाले काफ़िर करार पायेंगे।

आयते ज़ेरे मुतआला में असल ज़ोर इस बात पर है कि यह ना समझो कि किसी गिरोह में शामिल होने से निजात पाओगे, निजात किसी गिरोह में शामिल होने की वजह से नहीं है, बल्कि निजात की बुनियाद ईमान और अमल सालेह है। अपने दौर के रसूल पर ईमान लाना तो लाज़िम है, लेकिन इसके साथ अगर अमल सालेह नहीं है तो निजात नहीं होगी। कुरान मजीद के एक मक़ाम पर आया है: {وَلِكُلِّ أُمَّةٍ أَجَلٌ} (आराफ़:34) “और हर उम्मत के लिये एक खास मुअय्यन मुद्दत है।” हर उम्मत इस मुअय्यना मुद्दत ही की मुकल्लिफ़ है। ज़ाहिर है कि जो लोग मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत से पहले फ़ौत हो गये उन पर तो आप صلی اللہ علیہ وسلم पर ईमान लाने की कोई ज़िम्मेदारी नहीं थी। बेअसते नबवी صلی اللہ علیہ وسلم से क़बल ऐसे मुवहिदीन मक्का मुकर्रमा में मौजूद थे जो काबा के परदे पकड़-पकड़ कर यह कहते थे कि ऐ अल्लाह! हम सिर्फ़ तेरी बन्दगी करना चाहते हैं, लेकिन जानते नहीं कि कैसे करें। हज़रत उमर (रज़ि०) के बहनोई और फ़ातिमा (रज़ि०) बन्ते खत्ताब के शौहर हज़रत सईद बिन ज़ैद (रज़ि०) (जो अशरा-ए-मुबशशरा में से हैं) के वालिद ज़ैद का

यही मामला था। वह यह कहते हुए दुनिया से चले गये कि: “ऐ अल्लाह! मैं सिर्फ़ तेरी बन्दगी करना चाहता हूँ, मगर नहीं जानता कि कैसे करूँ।”

सूरतुल फ़ातिहा के मुताअले के दौरान मैंने कहा था कि एक सलीमुल फ़ितरत और सलीमुल अक्ल इन्सान तौहीद तक पहुँच जाता है, आखिरत को पहचान लेता है, लेकिन आगे वह नहीं जानता कि अब क्या करे। अहकामे शरीअत की तफ़सील के लिये वह “रब्बुल आलामीन” और “मालिकी यौमइदीन” के हज़ूर दस्ते सवाल-दराज़ करने पर मजबूर है कि: {إِهْدِنَا الصِّرَاطَ} उसी सिराते मुस्तक़ीम की दुआ का जवाब यह कुरान हकीम है, और इसमें सूरतुल बक्ररह ही से अहकामे शरीअत का सिलसिला शुरू किया जा रहा है कि यह करो, यह ना करो, यह फ़र्ज़ है, यह तुम पर लाज़िम किया गया है और यह चीज़ें हराम की गयी हैं।

आयत 63

“और ज़रा याद करो जब हमने तुमसे क़ौल व क़रार लिया और तुम्हारे ऊपर उठा दिया कोहे तूर को।”

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ

बनी इसराइल को जब तौरात दी गयी तो उस वक़्त उनके दिलों में अल्लाह और उसकी किताब की हैबत (दहशत) डालने और ख़शियत (डर) पैदा करने के लिये मौज्ज़ाना तौर पर एक ऐसी कैफ़ियत पैदा की गयी कि उनके ऊपर कोहे तूर उठा कर मुअल्लक़ (लटका) कर दिया गया। उस वक़्त उनसे कहा गया:

“पकड़ो इसको मज़बूती के साथ जो हमने तुमको दिया है।”

خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ

इस किताब तौरात को और इसमें बयान करदा अहकामे शरीअत को मज़बूती के साथ थाम लो।

“और याद रखो उसे जो कुछ कि इसमें है”

وَأَذْكُرُوا مَا فِيهِ

“ताकि तुम बच सको।”

لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ﴿٣٠﴾

आयत 64

“फिर तुमने रू-गरदानी की उसके बाद।”

ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ مِّنْ بَعْدِ ذَلِكَ ۖ

यानि जो मीसाक़े शरीअत तुमसे लिया गया था उसको तोड़ डाला।

“फिर अगर तुम पर अल्लाह का फ़ज़ल और उसकी मेहरबानी ना होती तो तुम (उसी वक़्त) ख़सारा पाने वाले हो जाते।”

فَلَوْلَا فَضْلُ اللَّهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ لَكُنْتُمْ مِنَ الْخَاسِرِينَ ۝

अगर अल्लाह तआला का फ़ज़ल तुम्हारे शामिले हाल ना होता और उसकी रहमत तुम्हारी दस्तगीरी ना करती रहती, तुम्हें बार-बार माफ़ ना किया जाता और तुम्हें बार-बार मोहलत ना दी जाती तो तुम उसी वक़्त तबाह हो जाते।

आयत 65

“और तुम उन्हें ख़ूब जान चुके हो जिन्होंने तुम में से ज़्यादाती की थी हफ़्ते के दिन में”

وَلَقَدْ عَلِمْتُمُ الَّذِينَ اعْتَدُوا مِنكُمْ فِي السَّبْتِ

तुम्हें ख़ूब मालूम है कि तुम में से वह कौन लोग थे जिन्होंने सव्त के क़ानून को तोड़ा था और हद से तजावुज़ किया था। यहूद की शरीअत में हफ़्ते का रोज़ इबादत के लिये मुअय्यन कर दिया गया था और इस रोज़ दुनियावी काम-काज की इजाज़त नहीं थी। आज भी जो मज़हबी यहूदी (Practicing Jews) हैं वह इसकी पाबन्दी बड़ी शिद्दत से करते हैं। लेकिन एक ज़माने में उनके एक ख़ास क़बीले ने एक शरई हीला ईजाद करके इस क़ानून की धज़ियाँ बिखेर दी थीं। इस वाक़िये की तफ़सील सूरतुल आराफ़ में आयेगी।

“तो हमने कह दिया उनसे कि हो जाओ ज़लील बन्दर।”

فَقُلْنَا لَهُمْ كُونُوا قِرَدَةً خَاسِرِينَ ۝

उनकी शक़लें मसख़ (विरूपण) करके उन्हें बन्दरों की सूरत में तब्दील कर दिया गया। तीन दिन के बाद यह सब मर गये।

आयत 66

“फिर हमने इस (वाक़िये को या इस बस्ती) को इब्रत का सामान बना दिया उनके लिये भी जो सामने मौजूद थे (उस ज़माने के लोग) और उनके लिये भी जो बाद में आने वाले थे”

فَجَعَلْنَاهَا نَكَالًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهَا وَمَا خَلْفَهَا

“और एक नसीहत (और सबक आमोज़ी की बात) बना दिया अहले तक्रवा के लिये।”

وَمَوْعِظَةً لِّلْمُتَّقِينَ ۝

आयात 67 से 74 तक

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تَذْبَحُوا بَقَرَةً ۚ قَالُوا أَتَتَّخِذُنَا هُزُوًا ۖ قَالَ أَعُوذُ بِاللَّهِ أَنْ أَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۝ قَالُوا ادْعُ لِنَارِكَ يَبِّينْ لَنَا مَا هِيَ ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا فَارِضٌ وَلَا بِكْرٌ ۚ عَوَانٌ بَيْنَ ذَلِكَ ۚ فَافْعَلُوا مَا تُؤْمَرُونَ ۝ قَالُوا ادْعُ لِنَارِكَ يَبِّينْ لَنَا مَا لَوْهَا ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ صَفَرَاءُ فَاقِعٌ لَّوْنُهَا تَسُرُّ النَّاظِرِينَ ۝ قَالُوا ادْعُ لِنَارِكَ يَبِّينْ لَنَا مَا هِيَ ۚ إِنَّ الْبَقَرَ تَشْبَهُ عَلَيْنَا ۚ وَإِنَّا إِن شَاءَ اللَّهُ لَمُهْتَدُونَ ۝ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا ذَلُولٌ تُثِيرُ الْأَرْضَ وَلَا تَسْقِي الْحَرْثَ ۚ مُسْلَمَةٌ لَا شَيْءَ فِيهَا ۚ قَالُوا الْتِن جِئْتَ بِالْحَقِّ ۚ فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ ۝ وَإِذْ قَتَلْتُمْ نَفْسًا فَادَرَأْتُمُ فِيهَا ۚ وَاللَّهُ مُخْرِجٌ مَّا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ۝ فَقُلْنَا اضْرِبُوهَ بَعْضُهَا ۚ كَذَلِكَ يُحْيِي اللَّهُ الْمَوْتَىٰ ۚ وَيُرِيكُمْ آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝ ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِّنْ بَعْدِ ذَلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمِنْ الْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ الْأَنْهَارُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَّا يَنْشَقُّ فَيَخْرُجُ مِنْهُ الْمَاءُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَّا يَنْهِيضُ مِنَ خَشْيَةِ اللَّهِ ۚ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

इन आयात के मुताअले से क़बल इनका पसमन्ज़र जान लीजिये। बनी इसराइल में आमील नामी एक शख़्स क़त्ल हो गया था और क़ातिल का पता

नहीं चल रहा था। अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा (अलै०) के ज़रिये से हुक्म दिया कि एक गाय ज़िबह करो और उसके गोशत का एक टुकड़ा मुर्दा शख्स के जिस्म पर मारो तो वह जी उठेगा और बता देगा कि मेरा क़ातिल कौन है।

बनी इसराइल की तारीख में हमें मौज्जात का अमल-दखल बहुत ज़्यादा मिलता है। यह भी उन्हीं मौज्जात में से एक मौज्जाह था। गाय को ज़िबह कराने का एक मक़सद यह भी था कि बनी इसराइल के कुलूब व अज़्हाँन (दिलों व दिमागों) में गाय का जो तक्रद्दुस रासिख हो चुका था उस पर तलवार चलायी जाये। और फिर उन्हें यह भी दिखा दिया गया कि एक मुर्दा आदमी ज़िन्दा भी हो सकता है, इस तरह बाअसे बाद अल मौत का एक नक़्शा उन्हें इस दुनिया में दिखा दिया गया। बनी इसराइल को जब गाय ज़िबह करने का हुक्म मिला तो उनके दिलों में जो बछड़े की मोहब्बत और गाय की तक्रदीस जड़ पकड़ चुकी थी उसके बाइस उन्होंने इस हुक्म से किसी तरह से बच निकलने के लिये मीन-मेख निकालनी शुरू की और तरह-तरह के सवाल करने लगे कि वह कैसी गाय हो? उसका क्या रंग हो? किस तरह की हो? किस उम्र की हो? बिलआखिर जब हर तरफ़ से उनका घेराव हो गया और सब चीज़ें उनके सामने वाज़ेह कर दी गयीं तब उन्होंने चार व नाचार बा दिले नाख्वास्ता (ना चाहते हुए) इस हुक्म पर अमल किया। अब हम इन आयात का एक रवा तर्जुमा कर लेते हैं।

आयत 67

“और याद करो जब मूसा (अलै०) ने कहा अपनी क़ौम से कि अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि एक गाय को ज़िबह करो।”

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَنْ تَذْبُحُوا بَقَرَةً ۖ

“उन्होंने कहा: क्या आप (अलै०) हमसे कुछ ठट्ठा कर रहे हैं?”

قَالُوا أَتَتَّخِذُ الْهُزُوءَ ۖ

क्या आप (अलै०) यह बात हँसी-मज़ाक में कह रहे हैं?

“फ़रमाया: मैं अल्लाह की पनाह तलब करता हूँ इससे कि मैं जाहिलों में से हो जाऊँ।”

قَالَ أَعُوذُ بِاللَّهِ أَنْ أَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ۖ

हँसी-मज़ाक और तमस्बुर व इस्तेहज़ा तो जाहिलों का काम है और अल्लाह के नबी से यह बर्ईद है कि वह दीन के मामलात के अन्दर इन चीज़ों को शामिल कर ले।

आयत 68

“उन्होंने कहा (अच्छा ऐसी ही बात है तो) हमारे लिये ज़रा अपने रब से दुआ कीजिये कि वह हम पर वाज़ेह कर दे कि वह कैसी हो।”

قَالُوا ادْعُ لَنَارَبِّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا هِيَ ۖ

“(हज़रत मूसा अलै० ने) फ़रमाया: अल्लाह तआला फ़रमाता है कि वह एक ऐसी गाय होनी चाहिये जो ना बूढ़ी हो ना बिल्कुल बछिया।”

قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا فَارِصٌ وَلَا يَكُورُ ۖ

“बुढ़ापे और जवानी के बैन-बैन हो।”

عَوَانٌ بَيْنَ ذَلِكَ ۖ

“तो अब कर गुज़रो जो तुम्हें हुक्म दिया जा रहा है।”

فَاعْمَلُوا مَا تُؤْمُرُونَ ۚ

आयत 69

“अब उन्होंने कहा (ज़रा एक दफ़ा फिर) हमारे लिये दुआ कीजिये अपने रब से कि वह हमें बता दे कि उसका रंग कैसा हो?”

قَالُوا ادْعُ لَنَارَبِّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا لَوْ هِيَ ۖ

“फ़रमाया: अल्लाह तआला फ़रमाता है वह गाय होनी चाहिये ज़र्द रंग की, जिसका रंग ऐसा शोख हो कि देखने वालों को खूब अच्छी लगे।”

قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ صَفْرَاءٌ فَاقِعٌ لَوْنُهَا تَسُرُّ النَّاظِرِينَ ۖ

यह खूबियाँ उस गाय की थी जो उनके यहाँ ज़्यादा से ज़्यादा मुक़द्दस समझी जाती थी। अगर पहले ही हुक्म पर अमल पैरा हो जाते तो किसी भी गाय को ज़िबह कर सकते थे। लेकिन एक के बाद दीगर सवालात के बाइस रफ़्ता-

रफ़ता उनका घेराव होता गया कि जिस गाय के तक़द्दुस का तास्सुर (प्रभाव) उनके ज़हन में ज़्यादा से ज़्यादा था उसी को focus कर दिया गया।

आयत 70

“उन्होंने कहा (ज़रा फिर) अल्लाह से हमारे लिये दुआ कीजिये कि वह हम पर वाज़ेह कर दे कि वह गाय कैसी हो”

قَالُوا اذْعُ لَنَا رَبِّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا هِيَ

“क्योंकि गाय का मामला यक़ीनन हम पर कुछ मुशतबा (संदिग्ध) हो गया है।”

إِنَّ الْبَقَرَ تَشْبَهُ عَلَيْنَا

हमें गाय की ताअयीन (selection) में इशतबाह (चूक) हो गया है।

“और अगर अल्लाह ने चाहा तो हम ज़रूर राह पा लेंगे।”

وَإِنَّا إِنْ شَاءَ اللَّهُ لَنَهْتَدُونَ

आयत 71

“फ़रमाया कि अल्लाह फ़रमाता है वह एक ऐसी गाय होनी चाहिये कि जिससे कोई मशक्कत ना ली जाती हो, ना वह ज़मीन में हल चलाती हो और ना खेती को पानी देती हो।”

قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا ذَلُولَ تُثِيرُ الْأَرْضَ وَلَا تَسْقِي الْحَرْثَ

“वह सही सालिम एक रंग होनी चाहिये, उसमें (किसी दूसरे रंग का) कोई दाग तक ना हो।”

مُسَلَّمَةٌ لَا شِيَةَ فِيهَا

“उन्होंने कहा अब आप लाये हैं ठीक बात।”

قَالُوا لَنْ جُنْتُ بِالْحَقِّ

अब तो आप (अलै०) ने बात पूरी तरह वाज़ेह कर दी है।

“तब उन्होंने उसको ज़िबह किया और वह लगते ना थे कि ऐसा कर लेंगे।”

فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ

अब वह क्या करते, पे-बा-पे सवालात करते-करते वह घेराव में आ चुके थे, लिहाज़ा बा दिले ना ख्वास्ता वह अपनी मुक़द्दस सुनहरी गाय को ज़िबह करने पर मजबूर हो गये।

यहाँ वाक़िये की तरतीब तौरात से मुख़्तलिफ़ है और ज़िबह बक्ररह का जो सबब था वह बाद में बयान हो रहा है, जबकि तौरात में तरतीब दूसरी है।

आयत 72

“और याद करो जब तुमने एक शख्स को क़त्ल कर दिया था, और उसका इल्ज़ाम तुम एक-दूसरे पर लगा रहे थे।”

وَأَذَقْتُمُ نَفْسًا فَادْرَأْهُمُ فِيهَا

चुनाँचे पता नहीं चल रहा था कि क़ातिल कौन है।

“और अल्लाह को ज़ाहिर करना था जो कुछ तुम छुपाते थे।”

وَاللَّهُ يُخْرِجُ مَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ

अल्लाह तआला फ़ैसला कर चुका था कि जो कुछ तुम छुपा रहे हो उसे निकाल कर रहेगा और वाज़ेह कर देगा।

आयत 73

“तो हमने हुक्म दिया कि मक़तूल की लाश को उस गाय के एक टुकड़े से ज़ब्र लगाओ।”

فَقُلْنَا اضْرِبْهُ بِبَعْضِهَا

इस तरह वह मुर्दा शख्स बा-हुक्मे इलाही थोड़ी देर के लिये ज़िन्दा हो गया और उसने अपने क़ातिल का नाम बता दिया।

“देखो, इसी तरह अल्लाह मुर्दों को ज़िन्दा कर देगा”

كَذَلِكَ يُعْجِ اللَّهُ الْمَوْتَى

“और वह तुम्हें अपनी निशानियाँ (अपनी कुदरत के नमूने) दिखाता है ताकि तुम अक़ल से काम लो।”

وَيُرِيكُمْ آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ

अब जो अल्फ़ाज़ आगे आ रहे हैं बहुत सख़्त हैं। लेकिन इनको पढ़ते हुए दरू बीनी (आत्मनिरीक्षण) ज़रूर कीजियेगा, अपने अन्दर ज़रूर झाँकियेगा।

आयत 74

“फिर तुम्हारे दिल सख्त हो गये इस सबके बाद”

ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِنْ بَعْدِ ذَلِكَ

जब दीन में हीले बहाने निकाले जाने लगे और हीलों बहानों से शरीअत के अहकाम से बचने और अल्लाह को धोखा देने की कोशिश की जाये तो उसका जो नतीजा निकलता है वह दिल की सख्ती है।

“पस अब तो वह पत्थरों की मानिन्द हैं, बल्कि सख्ती में उनसे भी ज्यादा शदीद हैं।”

فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً

यह फ़साहत और बलागत के ऐतबार से भी कुरान हकीम का एक बड़ा उम्दा मक़ाम है।

“और पत्थरों में से तो यक़ीनन ऐसे भी होते हैं जिनसे चश्में फूट बहते हैं।”

وَأَنَّ مِنَ الْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ الْأَنْهَارُ

“और उन (पत्थरों और चट्टानों) में से बेशक ऐसे भी होते हैं जो शक्र हो (फट) जाते हैं और उनमें से पानी बरामद हो जाता है।”

وَأَنَّ مِنْهَا لَمَّا يَشْفُقُ فَيَخْرُجُ مِنْهُ الْمَاءُ

“और उनमें से यक़ीनन वह भी होते हैं जो अल्लाह के ख़ौफ़ से गिर पड़ते हैं।”

وَأَنَّ مِنْهَا لَمَّا يَهْبِطُ مِنْ خَشْيَةِ اللَّهِ

“और अल्लाह तआला गाफ़िल नहीं है उससे कि जो तुम कर रहे हो।”

وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ

क्रसावते क़ल्बी की यह कैफ़ियत उस उम्मत के अफ़राद की बयान की जा रही है जिसे कभी अहले आलम पर फज़ीलत अता की गयी थी। इस उम्मत पर चौदह सौ बरस ऐसे गुज़रे कि कोई लम्हा ऐसा ना था कि इनके यहाँ कोई नबी मौजूद ना हो। इन्हें तीन किताबें दी गयीं। लेकिन यह अपनी बदअमली के बाइस काअरे मुज़ल्लत (ज़िल्लत की गहराई) में जा गिरी। अक्राइद में मिलावट, अल्लाह और उसके रसूल के अहकाम में मीन-मेख निकाल कर अपने आपको बचाने के रास्ते निकालने और आमाल में भी “किताबुल हियल” के ज़रिये से अपने आपको ज़िम्मेदारियों से मुबर्रा कर लेने की रविश का

नतीजा फिर यही निकलता है। अल्लाह तआला मुझे और आपको इस अन्जामे बद से बचाये। आमीन!

आयात 75 से 82 तक

أَفَتَعْظِمُونَ أَنْ يُؤْمِنُوا بِكُمْ وَقَدْ كَانَ فَرِيقٌ مِنْهُمْ يَسْمَعُونَ كَلِمَ اللَّهِ ثُمَّ يَحِزُّونَهُ مِنْ بَعْدِ مَا عَقِلُواهُ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ۝ وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا قَالُوا آمَنَّا ۖ وَإِذَا خَلَا بِغُضِّهِمْ إِلَى بَعْضٍ قَالُوا اتَّخَذُوا آلَهُمْ مِمَّا فَتَحَ اللَّهُ عَلَيْكُمْ لِيَبْجَأَكُمْ بِهِ عِنْدَ رَبِّكُمْ ۖ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ۝ أَوْ لَا يَعْلَمُونَ أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ۝ وَمِنْهُمْ أُمِّيُّونَ لَا يَعْلَمُونَ الْكِتَابَ إِلَّا أَمَانِي وَإِنْ هُمْ إِلَّا يَظُنُّونَ ۝ فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ يَكْتُمُونَ الْكِتَابَ بِأَيْدِيهِمْ ۖ ثُمَّ يَقُولُونَ هَذَا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ لِيُشْرَوْا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۖ فَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا كَتَبَتْ أَيْدِيهِمْ وَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا يَكْسِبُونَ ۝ وَقَالُوا لَنْ تَمْسَسَنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَعْدُودَةً ۖ قُلْ اتَّخَذْتُمْ عِنْدَ اللَّهِ عَهْدًا فَلَنْ يُخْلِفَ اللَّهُ عَهْدَ أَمَةٍ تَقُولُونَ عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝ بَلَى مَنْ كَسَبَ سَيِّئَةً وَأَحَاطَتْ بِهِ خَطِيئَتُهُ فَأُولَئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ وَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ أُولَئِكَ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

अब तक हमने सूरतुल बक्ररह के आठ रुकूअ और उन पर मुस्तज़ाद तीन आयात का मुतअला मुकम्मल किया है। साबक़ा उम्मत मुस्लिमा यानि बनी इसराइल के साथ ख़िताब का सिलसिला सूरतुल बक्ररह के दस रुकूओं पर मुहीत है। यह सिलसिला पाँचवे रुकूअ से शुरू हुआ था और पन्द्रहवें रुकूअ के आगाज़ तक चलेगा। इस सिलसिला-ए-ख़िताब के बारे में यह बात अच्छी तरह ज़हननशीं रहनी चाहिये कि इसमें से पहला रुकूअ दावत पर मुशतमिल है और वह बहुत फ़ैसलाकुन है, जबकि अगले रुकूअ से असलूबे कलाम तब्दील हो गया है और तहदीद और धमकी का अन्दाज़ इख़्तियार किया गया है। मैंने अर्ज़ किया था कि पाँचवा रुकूअ इस पूरे सिलसिला-ए-ख़िताब में बमज़िला-

ए-फ़ातिहा बहुत अहम है और जो बक्रिया नौ (9) रुकूअ हैं उनके आगाज़ व इख़्तताम पर ब्रेकेट का अन्दाज़ है कि दो आयतों से ब्रेकेट शुरू होती है और उन्ही दो आयतों पर ब्रेकेट ख़त्म होती है, जबकि पाँचवे रुकूअ के मज़ामीन इस पूरे सिलसिला-ए-ख़िताब से ज़र्ब खा रहे हैं। इन रुकूओं में बनी इसराइल के ख़िलाफ़ एक मुफ़स्सल फर्दे करारदारे जुर्म आइद की गयी है, जिसके नतीजे में वह उस मंसबे जलीला से माज़ूल कर दिये गये जिस पर दो हज़ार बरस से फाइज़ थे और उनकी जगह पर अब नयी उम्मते मुस्लिमा यानि उम्मते मुहम्मद (ﷺ) का इस मंसब पर तक्ररर अमल में आया (नियुक्ति हुई) और इस मसनद नशीनी की तक्ररीब (Installation Ceremony) के तौर पर तहवीले क़िब्ला का मामला हुआ। यह रबते कलाम अगर सामने ना रहे तो इन्सान कुरान मजीद की तवील सूरतों को पढते हुए खो जाता है कि बात कहाँ से चली थी और अब किधर जा रही है।

इन रुकूओं के मज़ामीन में कुछ तो तारीख बनी इसराइल के वाक़िआत बयान हुए हैं कि तुमने यह किया, तुमने यह किया! लेकिन इन वाक़िआत को बयान करते हुए बाज़ ऐसे अज़ीम अब्दी हक़ाइक और Universal Truths बयान हुए हैं कि उनका ताल्लुक किसी वक़्त से, किसी क्रौम से या किसी ख़ास ग़िरोह से नहीं है। वह तो ऐसे उसूल हैं जिन्हें हम सुन्नतुल्लाह कह सकते हैं। इस कायनात में एक तो क़वानीने तबीई (Physical Laws) हैं, जबकि एक Moral Laws हैं जो अल्लाह की तरफ़ से इस दुनिया में कारफरमां हैं। सूरतुल बक्ररह के ज़ेरे मुतअला नौ रुकूओं में तारीख बनी इसराइल के वाक़िआत के बयान के दौरान थोड़े-थोड़े वक़्फे के बाद ऐसी आयात आती हैं जो इस सिलसिला-ए-कलाम के अन्दर इन्तहाई अहमियत की हामिल हैं। उनमें दर हक़ीक़त मौजूदा उम्मते मुस्लिमा के लिये रहनुमाई पौशिदा है। मिसाल के तौर पर इस सिलसिला-ए-ख़िताब के दौरान आयत 61 में वारिद शुदा यह अल्फ़ाज़ याद कीजिये: {وَضَرَبَتْ عَلَيْهِمُ الرِّيلَةُ وَالْمَسْكَنَةُ ۖ وَبَاءُوا بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ} “और उन पर ज़िल्लत व ख़वारी और मोहताजी व कमहिम्मती थोप दी गयी और वह अल्लाह का ग़ज़ब लेकर लौटे।” मालूम हुआ कि ऐसा हो सकता है कि एक मुस्लमान उम्मत जिस पर अल्लाह के बड़े फ़ज़ल हुए हों, उसे बड़े ईनाम और इकराम से नवाज़ा गया हो, और फिर वह अपनी बेअमली या बदअमली के बाइस अल्लाह तआला के ग़ज़ब की मुस्तहिक्क हो जाये और ज़िल्लत व मसकनत उस पर थोप दी जाये। यह एक अब्दी हक़ीक़त है जो इन अल्फ़ाज़ में

बयान हो गयी। उम्मते मुस्लिमा के लिये यह एक लम्हा-ए-फ़िक्रिया है कि क्या आज हम तो उस मक़ाम पर नहीं पहुँच गये?

दूसरा इसी तरह का मक़ाम गज़िशता आयत (74) में गुज़रा है, जहाँ एक अज़ीम अब्दी हक़ीक़त बयान हुई है: {ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِّنْ بَعْدِ ذَلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً} “फिर तुम्हारे दिल सख़्त हो गये इस सबके बाद, पस अब तो वह पत्थरों की मानिन्द हैं, बल्कि सख़्ती में उनसे भी शदीदतर हैं।” गोया इसी उम्मते मुस्लिमा का यह हाल भी हो सकता है कि उनके दिल इतने सख़्त हो जायें कि सख़्ती में पत्थरों और चट्टानों को मात दे जायें। हालाँकि यह वही उम्मत है जिसके बारे में फ़रमाया: {وَإِنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ} “बबी तफ़ावते राह अज़ कज़ास्त ताबे कज़ा!” अलबत्ता यहाँ एक बात वाज़ेह रहे कि इस क़सावते क़ल्बी में पूरी उम्मत मुब्तला नहीं हुआ करती, बल्कि इस कैफ़ियत में उम्मत के क़ायदीन मुब्तला हो जाते हैं और उम्मते मुस्लिमा के क़ायदीन उसके उलमा होते हैं। चुनाँचे सबसे ज़्यादा शिद्दत के साथ यह खराबी उनमें दर आती है। इसलिये कि बाक़ी लोग तो पैरोकार हैं, उनके पीछे चलते हैं, उन पर ऐतमाद करते हैं कि यह अल्लाह की किताब के पढने वाले और उसके जानने वाले हैं। लेकिन जो लोग जान-बूझ कर अल्लाह की किताब में तहरीफ़ कर रहे हों और जानते-बूझते हक़ को पहचान कर उसका इन्कार कर रहे हों उन्हें तो पता है कि हम क्या कर रहे हैं! दरहक़ीक़त यह सज़ा उन पर आती है। यह बात इन आयात में जो आज हम पढने चले हैं, बहुत ज़्यादा वाज़ेह हो जायेगी (इन्शा अल्लाह)। फ़रमाया:

आयत 75

“तो क्या (ऐ मुस्लमानों!) तुम यह तवक्क़ो रखते हो कि यह तुम्हारी बात मान लेंगे?”

أَفَتَطْمَعُونَ أَنْ يُؤْمِنُوا بِالْكُمْ

आम मुस्लमानों को यह तवक्क़ो थी कि यहूद दीने इस्लाम की मुख़ालफ़त नहीं करेंगे। इसलिये कि मुशरिकीने मक्का तो दीने तौहीद से बहुत दूर थे, रिसालत का उनके यहाँ कोई तसब्बुर ही नहीं था, कोई किताब उनके पास थी ही नहीं। जबकि यहूद तो अहले किताब थे, हामिलीने तौरात थे, मूसा (अलै०) के मानने वाले थे, तौहीद के अलम्बरदार थे और आख़िरत का भी इक्क़रार करते थे। चुनाँचे आम मुस्लमान का ख़्याल था कि उन्हें तो मुहम्मद

रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم और आप صلی اللہ علیہ وسلم की दावत को झटपट मान लेना चाहिये। तो मुस्लमानों के दिलों में यहूद के बारे में जो हुस्ने ज़न था, यहाँ उसका पर्दा चाक किया जा रहा है और मुस्लमानों को इसकी हकीकत से आगाह किया जा रहा है कि मुस्लमानों! तुम्हें बड़ी तम्आ (लालच) है, तुम्हारी यह ख्वाहिश है, आरजू है, तमन्ना है, तुम्हें तवक्को है कि यह तुम्हारी बात मान लेंगे।

“जबकि हाल यह है कि इनमें एक गिरोह वह भी था कि जो अल्लाह का कलाम सुनता था और फिर खूब समझ-बूझ कर दानिस्ता उसमें तहरीफ़ करता था।”

ज़ाहिर बात है वह गिरोह उनके उलमा ही का था। आम आदमी तो अल्लाह की किताब में तहरीफ़ नहीं कर सकता।

अब अगली आयत में बड़ी अजीब बात सामने आ रही है। जिस तरह मुस्लमानों के दरमियान मुनाफ़िक़ीन मौजूद थे उसी तरह यहूद में भी मुनाफ़िक़ीन थे। यहूद में से कुछ लोग ऐसे थे कि जब उन पर हक़ मुनक़शिफ़ हो गया तो अब वह इस्लाम की तरफ़ आना चाहते थे। लेकिन उनके लिये अपने ख़ानदान को, घर-बार को, अपने कारोबार को और अपने क़बीले को छोड़ना भी मुमकिन नहीं था, जबकि क़बीलों की सरदारी उनके उलमा के पास थी। ऐसे लोगों के दिल कुछ-कुछ अहले ईमान के क़रीब आ चुके थे। ऐसे लोग जब अहले ईमान से मिलते थे तो कभी-कभी वह बातें भी बता जाते थे जो उन्होंने उलमाये यहूद से नबी आख़िरुज़्ज़मान صلی اللہ علیہ وسلم और उनकी तालीमात के बारे में सुन रखी थीं कि तौरात उनकी गवाही देती है। इसके बाद जब वह अपने “श्यातीन” यानि उलमा के पास जाते थे तो वह उन्हें डाँट-डपट करते थे कि बेवकूफ़ों! यह क्या कर रहे हो? तुम उन्हें यह बातें बता रहे हो ताकि अल्लाह के यहाँ जाकर वह तुम पर हुज्जत क़ायम करें कि उन्हें पता था और फिर भी उन्होंने नहीं माना!

आयत 76

“और (उनमें से कुछ लोग हैं कि) जब मिलते हैं अहले ईमान से तो कहते हैं कि हम ईमान ले आये।”

وَإِذَا قَالُوا لِلَّذِينَ آمَنُوا قَالُوا آمَنَّا

“और जब वह ख़लवत (अकेले) में होते हैं एक-दूसरे के साथ”

وَإِذَا خَلَا بِغُضْهِمْ إِلَىٰ بَعْضٍ

“तो कहते हैं क्या तुम बता रहे हो उनको वह बातें जो अल्लाह ने खोली हैं तुम पर?”

قَالُوا أَلَمْ نَكُنْ نُبَيِّنْ لَكُمْ مَا فَتَحَ اللَّهُ عَلَيْكُمْ

“ताकि वह उनके ज़रिये तुम पर हुज्जत क़ायम करे तुम्हारे रब के पास!”

لِيُبَيِّنَ لَكُمْ بِهِ عِنْدَ رَبِّكُمْ

“क्या तुम्हें अक्ल नहीं है?”

أَفَلَا تَعْقِلُونَ ⑦

तुम ज़रा अक्ल से काम लो और यह हकीकतें जो तौरात के ज़रिये से हमें मालूम हैं, मुस्लमानों को मत बताओ। क्या तुम्हें अक्ल नहीं है कि ऐसा बेवकूफी का काम कर रहे हो?

उनके इस मकालमे पर अल्लाह तआला का तबसिरा यह है:

आयत 77

“और क्या यह जानते नहीं हैं कि अल्लाह को तो मालूम है वह सब कुछ भी जो वह छुपाते हैं और वह सब कुछ भी जिसे वह ज़ाहिर करते हैं।”

أَوَلَا يَعْلَمُونَ أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ⑧

तुम चाहे यह बातें मुस्लमानों को बताओ या ना बताओ, अल्लाह की तरफ़ से तो तुम्हारे मुहासबा होकर रहना है। लिहाज़ा यह भी उनकी नासमझी की दलील है।

आयत 78

“और उनमें बाज़ अनपढ़ हैं”

وَمِنْهُمْ أُمِّيُونَ

“अमी” का लफ़्ज़ कुरान मजीद में असलन तो मुशरिकीने अरब के लिये आता है। इसलिये कि उनके अन्दर पढ़ने-लिखने का रिवाज ही नहीं था। कोई आसमानी किताब भी उनके पास नहीं थी। लेकिन यहाँ यहूद के बारे में कहा जा रहा है

कि उनमें से भी एक तबक्रा अनपढ़ लोगों पर मुश्तमिल है। जैसे आज मुस्लिमानों का हाल है कि अक्सर व बेशतर जाहिल हैं, उनमें से बाज़ अगरचे पी.एच.डी. होंगे, लेकिन उन्हें कुरान की “ا.ب.ت” नहीं आती, दीन के “मबादी” (आधार) तक से नावाक़िफ़ हैं। चुनाँचे आज पढ़े-लिखे मुस्लिमानों की भी अज़ीम अक्सरियत “पढ़े-लिखे जाहिलों” पर मुश्तमिल है। जबकि हमारी अक्सरियत वैसे ही बग़ैर पढ़ी-लिखी है। तो अब उन्हें दीन का क्या पता? वो तो सारा ऐतमाद करेंगे उलमा पर! कोई बरेलवी है तो बरेलवी उलमा पर ऐतमाद करेगा, कोई देवबन्दी है तो देवबन्दी उलमा पर ऐतमाद करेगा, कोई अहले हदीस है तो अहले हदीस उलमा पर ऐतमाद करेगा। अब उम्मियों का सहारा क्या होता है?

“वह किताब का इल्म नहीं रखते, सिवाय बे बुनियाद आरज़ुओं के”

لَا يَعْلَمُونَ الْكِتَابَ إِلَّا أَمَانِي

ऐसे लोग किताब से तो वाक़िफ़ नहीं होते, बस अपनी कुछ ख़्वाहिशात और आरज़ुओं पर तकिया किये हुए होते हैं। उन ख़्वाहिशात का ज़िक्र आगे आ जायेगा। यहूद को यह ज़अम (घमण्ड) था कि हम तो इसराइली हैं, हम अल्लाह के महबूब हैं और उसके बेटों की मानिन्द चहेते हैं, हमारी तो शफ़ाअत हो ही जायेगी। हमें तो जहन्नम में दाखिल किया भी गया तो थोड़े से अरसे के लिये किया जायेगा, फिर हमें निकाल लिया जायेगा। यह उनकी “أَمَانِي” हैं। कहते हैं वे बुनियाद ख़्वाहिश को, أَمَانِي इसकी जमा (plural) है। इसकी सही ताबीर के लिये अंग्रेज़ी का लफ़्ज़ wishful thinkings है। यह अपनी उन बे बुनियाद ख़्वाहिशात और झूठी आरज़ुओं के सहारे जी रहे हैं, किताब का इल्म इनके पास है ही नहीं।

“और वह कुछ नहीं कर रहे मगर ज़न्न (संदेह) व तख़मीन (अनुमान) पर चले जा रहे हैं।”

وَأَن هُمْ إِلَّا يَظُنُّونَ

उनके पास महज़ वहम व गुमान और उनके अपने मनघड़त ख़्यालात हैं।

आयत 79

“पस हलाकत और बरबादी है उनके लिये जो किताब लिखते हैं अपने हाथ से।”

فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ يَكْتُبُونَ الْكِتَابَ بِأَيْدِيهِمْ

“وَيْل” के बारे में बाज़ रिवायात में आता है कि यह जहन्नम का वह तबक्रा है जिससे खुद जहन्नम पनाह माँगती है।

“फिर कहते हैं यह अल्लाह की तरफ़ से है”

ثُمَّ يَقُولُونَ هَذَا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ

“ताकि हासिल कर लें उसके बदले हकीर सी कीमत।”

لِيَشْتَرُوا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا

यानि लोग उलमाये यहूद से शरई मसाइल दरयाफ़्त करते तो वह अपने पास से मसले गढ़ कर फ़तवा लिख देते और लोगों को बावरकराते (यक़ीन दिलाते) कि यह अल्लाह की तरफ़ से है, यही दीन का तक्राज़ा है। अब इस फ़तवा नवेसी में कितनी कुछ वाक़िअतन उन्होंने सही बात कही, कितनी हठधर्मी से काम लिया और किस क़दर किसी रिश्तत पर मबनी कोई राय दी, अल्लाह के हुज़ूर सब दूध का दूध और पानी का पानी अलग हो जायेगा। अल्लामा इक़बाल ने उलमाये सू का नक्कशा इन अल्फ़ाज़ में खींचा है:

खुद बदलते नहीं कुरान को बदल देते हैं

हुए किस दर्जा फ़क़ीहाने हरम बे तौफ़ीक़!

उलमाये यहूद का किरदार इसी तरह का था।

“तो हलाकत और बरबादी है उनके लिये उस चीज़ से कि जो उनके हाथों ने लिखी”

فَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا كَتَبَتْ أَيْدِيهِمْ

“और उनके लिये हलाकत और बरबादी है उस कमाई से जो वह कर रहे हैं।”

وَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا يَكْسِبُونَ

यह फ़तवा फ़रोशी और दीन फ़रोशी का जो सारा धन्धा है इससे वह अपने लिये तबाही और बर्बादी मोल ले रहे हैं, इससे उनको अल्लाह तआला के यहाँ कोई अज़्रो सवाब नहीं मिलेगा। अब आगे उनकी बाज़ “أَمَانِي” का तज़क़िरा है।

आयत 80

“और वह कहते हैं हमें तो आग़ हरगिज़ छ नहीं सकती, मगर गिनती के चन्द दिन।”

وَقَالُوا إِنَّمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَّعْدُودَةً

गोया सिर्फ़ दूसरों की आँखों में धूल झोंकने के लिये हमें चन्द दिन की सज़ा दे दी जायेगी कि कोई ऐतराज़ ना कर दे कि “ऐ अल्लाह! हमें आग में फेंका जा रहा है और इन्हें नहीं फेंका जा रहा, जबकि यह किरदार में हमसे भी बदतर थे।” चुनाँचे उनका मुँह बन्द करने के लिये शायद हमें चन्द दिन के लिये आग में डाल दिया जाये, फिर फौरन निकाल लिया जायेगा।

“इनसे कहिये क्या तुमने अल्लाह से कोई अहद ले लिया है?”

قُلْ أَخَذْتُ عِنْدَ اللَّهِ عَهْدًا

क्या तुम्हारा अल्लाह से कोई क़ौल व क़रार हो गया है?

“कि अब (तुम्हें यह यक़ीन है कि) अल्लाह अपने अहद के ख़िलाफ़ नहीं करेगा?”

فَلَنْ يُخْلِفَ اللَّهُ عَهْدَهُ

“या तुम अल्लाह के ज़िम्मे वह बातें लगा रहे हो जिन्हें तुम नहीं जानते?”

أَمْ تَقُولُونَ عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ⑤

हकीकत यही है कि तुम अल्लाह की तरफ़ उस बात की निस्वत कर रहे हो जिसके लिये तुम्हारे पास कोई इल्म नहीं है।

बनी इसराइल की फर्दे क़रारदार ज़ुर्म के दौरान गाहे-बगाहे जो अहम तरीन अब्दी हक़ाइक़ बयान हो रहे हैं, उनमें से एक अज़ीम हकीक़त अगली आयत में आ रही है। फ़रमाया:

आयत 81

“क्यों नहीं, जिस शख्स ने जान-बूझ कर एक गुनाह कमाया”

بَلَىٰ مَنْ كَسَبَ سَيِّئَةً

लेकिन इससे मुराद कबीरा गुनाह है, सगीरा नहीं। सَيِّئَةٍ की तन्कीर “تفخيم” का फ़ायदा भी दे रही है।

“और उसका घेराव कर लिया उसके गुनाह ने”

وَأَحَاطَتْ بِهِ خَطِيئَتُهُ

मसलन एक शख्स सूदखोरी से बाज़ नहीं आ रहा, बाक़ी वह नमाज़ का भी पाबन्द है और तहज़ुद का भी इल्तज़ाम कर रहा है तो इस एक गुनाह की बुराई उसके गिर्द इस तरह छा जायेगी कि फिर उसकी यह सारी नेकियाँ

ख़त्म होकर रह जायेंगी। हमारे मुफ़स्सरीन ने लिखा है कि गुनाह के इहाता कर लेने से मुराद यह है कि गुनाह उस पर ऐसा ग़लबा कर ले कि कोई जानिब ऐसी ना हो कि गुनाह का ग़लबा ना हो, हत्ता कि दिल से ईमान व तस्दीक़ रुख़्सत हो जाये। उलमा के यहाँ यह उसूल माना जाता है कि “الْمَعَاصِي يُرِيدُ الْكُفْرَ” यानि गुनाह तो कुफ़्र की डाक होते हैं। गुनाह पर मदावमत (दृढ़ता) का नतीजा बिलआख़िर यह निकलता है कि दिल से ईमान रुख़्सत हो जाता है। एक शख्स अपने आप को मुस्लमान समझता है, लेकिन अन्दर से ईमान ख़त्म हो चुका होता है। जिस तरह किसी दरवाज़े की चौखट को दीमक चाट जाती है और ऊपर लकड़ी की एक बारीक परत (veneer) छोड़ जाती है।

“पस यही हैं आग वाले”

فَأُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ

“वह उसी में हमेशा रहेंगे।”

هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ⑥

आयत 82

“और (इसके बरअक्स) जो लोग ईमान लायें और नेक अमल करें”

وَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ

अब नेक अमल के बारे में हर शख्स ने अपना एक तसव्वुर और नज़रिया बना रखा है। जबकि नेक अमल से कुरान मजीद की मुराद दीन के सारे तक्काज़ों को पूरा करना है। महज़ कोई खैराती इदारा या कोई यतीम खाना खोल देना या बेवाओं की फ़लाह व बहबूद (कल्याण) का इन्तेज़ाम कर देना और खुद सूदी लेन-देन और धोखा फ़रेब पर मन्नी कारोबार तर्क ना करना नेकी का मसख़शुदा तसव्वुर है। जबकि नेकी का जामेअ (व्यापक) तसव्वुर यह है कि अल्लाह तआला की तरफ़ से आयद करदा तमाम फ़राइज़ की बजाआवरी (कार्यान्वित) हो, दीन के तमाम तक्काज़े पूरे किये जायें, अपने माल और जान के साथ अल्लाह के रास्ते में जिहाद और मुजाहदा किया जाये और उसके दीन को क़ायम और सरबुलन्द करने की जद्दो जहद की जाये।

“यही हैं जन्नत वाले”

أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ

“वह उसी में हमेशा-हमेश रहेंगे।”

هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٨٣﴾

आयात 83 से 86 तक

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَ بَنِي إِسْرَءِيلَ لَا تَعْبُدُونَ إِلَّا اللَّهَ وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا وَذِي
الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينِ وَقُولُوا لِلنَّاسِ حُسْنًا وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ ثُمَّ
تَوَلَّيْتُمْ إِلَّا قَلِيلًا مِّنْكُمْ وَأَنْتُمْ مُّعْرِضُونَ ﴿٨٤﴾ وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ لَا تَسْفِكُونَ
دِمَاءَكُمْ وَلَا تُخْرِجُونَ أَنْفُسَكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ ثُمَّ أَقْرَرْتُمْ وَأَنْتُمْ تَشْهَدُونَ ﴿٨٥﴾ ثُمَّ أَنْتُمْ
هَؤُلَاءِ تَقْتُلُونَ أَنْفُسَكُمْ وَتُخْرِجُونَ فَرِيقًا مِّنْكُمْ مِنْ دِيَارِهِمْ تَظْهَرُونَ عَلَيْهِمْ
بِالْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَإِن يَأْتُوكُمْ أُسْرَىٰ تُمْسِكُوهُمْ وَهُوَ جُحُومٌ عَلَيْكُمْ
إِخْرَاجُهُمْ أَفْئُتُوهُمْ مِّنْ بَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْضٍ فَمَا جَزَاءُ مَنْ يَفْعَلْ ذَلِكَ
مِّنْكُمْ إِلَّا خِزْيٌ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ يُرَدُّونَ إِلَىٰ أَشَدِّ الْعَذَابِ وَمَا اللَّهُ
بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٨٦﴾ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْحَيَاةَ الدُّنْيَا بِالْآخِرَةِ فَلَا يَخَفُفُ
عَنْهُمْ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ ﴿٨٧﴾

आयत 83

“और याद करो जब हमने बनी इसराइल से
अहद लिया था कि तुम नहीं इबादत करोगे
किसी की सिवाय अल्लाह के।”

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَ بَنِي إِسْرَءِيلَ لَا تَعْبُدُونَ
إِلَّا اللَّهَ

“और वालिदैन् के साथ नेक सुलूक करोगे”

وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا

अल्लाह के हक के फ़ौरन बाद वालिदैन् के हक का ज़िक्र कुरान मजीद में चार
मक़ामात पर आया है। उनमें से एक मक़ाम यह है।

“और क़राबतदारों के साथ भी (नेक सुलूक
करोगे)।”

وَذِي الْقُرْبَىٰ

“और यतीमों के साथ भी”

وَالْيَتَامَىٰ

“और मोहताजों के साथ भी”

وَالْمَسْكِينِ

“और लोगों से अच्छी बात कहो”

وَقُولُوا لِلنَّاسِ حُسْنًا

अम्र बिलमरूफ़ करते रहो। नेकी की दावत देते रहो।

“और नमाज़ कायम रखो और ज़कात अदा
करो।”

وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ

यह बनी इसराइल से मुआहिदा (अनुबंध) हो रहा है।

“फिर तुम (इससे) फिर गये सिवाय तुम में से
थोड़े से लोगों के”

ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ إِلَّا قَلِيلًا مِّنْكُمْ

“और तुम हो ही फिर जाने वाले।”

وَأَنْتُمْ مُّعْرِضُونَ ﴿٨٤﴾

तुम्हारी यह आदत गोया तबीयते सानिया है।

अल्लाह तआला ने उनसे इसके अलावा एक और अहद भी लिया था,
जिसका ज़िक्र बाअल्फ़ाज़ किया जा रहा है:

आयत 84

“और जब हमने तुमसे यह अहद भी लिया था
कि”

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ

“तुम अपना खून नहीं बहाओगे”

لَا تَسْفِكُونَ دِمَاءَكُمْ

यानि आपस में जंग नहीं करोगे, बाहम खूँरज़ी नहीं करोगे। तुम बनी
इसराइल एक वाहदत बन कर रहोगे, तुम सब भाई-भाई बन कर रहोगे।
जैसा कि कुरान मजीद में आया है: {إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ إِخْوَةٌ} (अल हुजरात:10)

“और ना ही तुम निकालोगे अपने लोगों को
उनके घरों से”

وَلَا تُخْرِجُونَ أَنْفُسَكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ

“फिर तुमने इसका इकरार किया था मानते हुए।”

ثُمَّ أَقْرَرْتُمْ وَأَنْتُمْ تَسْهَلُونَ ۝

यानि तुमने इस क़ौल व क़रार को पूरे शऊर के साथ माना था।

हज़रत मूसा और हज़रत हारून (अलै०) की वफ़ात के बाद बनी इसराइल ने हज़रत यूशा बिन नून की क़यादत में फ़लस्तीन को फ़तह करना शुरू किया। सबसे पहला शहर अरीहा (Jericko) फ़तह किया गया। उसके बाद जब सारा फ़लस्तीन फ़तह कर लिया तो उन्होंने एक मरकज़ी हुकूमत कायम नहीं की, बल्कि बारह क़बीलों ने अपनी-अपनी बारह हुकूमतें बना ली। इन हुकूमतों की बाहमी आवेज़िश (झगड़ों) के नतीजे में उनकी आपस में जंगें होती थीं और यह एक-दूसरे पर हमला करके वहाँ के लोगों को निकाल बाहर करते थे, उन्हें भागने पर मजबूर कर देते थे। लेकिन अगर उनमें से कुछ लोग फ़रार होकर किसी काफ़िर मुल्क में चले जाते और कुफ़्रार उन्हें गुलाम या क़ैदी बना लेते और यह इस हालत में उनके सामने लाये जाते तो फ़िदया देकर उन्हें छुड़ा लेते कि हमें हुकम दिया गया है कि तुम्हारा इसराइली भाई अगर कभी असीर (क़ैदी) हो जाये तो उसको फ़िदया देकर छुड़ा लो। यह उनका जुज़्बी (आंशिक) इताअत का तर्ज़ अमल था कि एक हुकम को तो माना नहीं और दूसरे पर अमल हो रहा है। असल हुकम तो यह था कि आपस में ख़ूरेज़ी मत करो और अपने भाई-बन्दों को उनके घरों से मत निकालो। इस हुकम की तो परवाह नहीं की और इसे तोड़ दिया, लेकिन इस वजह से जो इसराइली गुलाम बन गये या असीर हो गये अब उनको बड़े मुत्तक़ियाना अन्दाज़ में छुड़ा रहे हैं कि यह अल्लाह का हुकम है, शरीअत का हुकम है। यह है वह तज़ाद (विरोध) जो मुस्लमान उम्मतों के अन्दर पैदा हो जाता है।

आयत 85

“फिर तुम ही वह लोग हो कि अपने ही लोगों को क़त्ल भी करते हो”

ثُمَّ أَنْتُمْ هَؤُلَاءِ تَقْتُلُونَ أَنْفُسَكُمْ

“और अपने ही लोगों में से कुछ को उनके घरों से निकाल देते हो”

وَتُخْرِجُونَ فَرِيقًا مِنْكُمْ مِنْ دِيَارِهِمْ

“उन पर चढ़ाई करते हो गुनाह और जुल्म व ज़्यादती के साथ।”

تَظْهَرُونَ عَلَيْهِم بِالْإِثْمِ وَالْعُدْوَانِ

“और अगर वह क़ैदी बन कर तुम्हारे पास आयें तो तुम फ़िदया देकर उन्हें छुड़ाते हो”

وَإِنْ يَأْتُواكُمْ أُسْرَى فَغْدُوهُمْ

“हालाँकि उनका निकाल देना ही तुम पर हराम किया गया था।”

وَهُمْ حَرَمٌ عَلَيْكُمْ إِخْرَاجُهُمْ

अब देखिये इस वाक़िये से जो अख़लाक़ी सबक (Moral Lesson) दिया जा रहा है वह अब्दी है। और जहाँ भी यह तर्ज़ अमल इख़्तियार किया जायेगा तावीले आम के ऐतबार से यह आयत उस पर मुन्तबिक़ (लागू) होगी।

“तो क्या तुम किताब के एक हिस्से को मानते हो और एक को नहीं मानते?”

أَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْضٍ

“तो नहीं है कोई सज़ा इसकी जो यह हरकत करे तुममें से”

فَمَا جَزَاءُ مَنْ يَفْعَلْ ذَلِكَ مِنْكُمْ

“सिवाय ज़िल्लत व रुसवाई के दुनिया की ज़िन्दगी में।”

إِلَّا خِزْيٌ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا

“और क़यामत के रोज़ वह लौटा दिये जायेंगे शदीद तरीन अज़ाब की तरफ़।”

وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ يُرَدُّونَ إِلَى أَشَدِّ الْعَذَابِ

“और अल्लाह तआला ग़ाफ़िल नहीं है उससे जो तुम कर रहे हो।”

وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

यह एक बहुत बड़ी आफ़ाक़ी सच्चाई (Universal Truth) बयान कर दी गयी है, जो आज उम्मत मुस्लिमा पर सद फ़ीसद मुन्तबिक़ हो रही है। आज हमारा तर्ज़ अमल भी यही है कि हम पूरे दीन पर चलने को तैयार नहीं हैं। हममें से हर गिरोह ने कोई एक शय अपने लिये हलाल कर ली है। मुलाज़मत पेशा तबक़ा रिश्वत को इस बुनियाद पर हलाल समझ बैठा है कि क्या करें, इसके बग़ैर गुज़ारा नहीं होता। कारोबारी तबक़े के नज़दीक़ सूद हलाल है कि इसके बग़ैर कारोबार नहीं चलता। यहाँ तक कि यह जो तवायफ़ें “बाज़ारे हुस्न” सजा

कर बैठी हैं वह भी कहती हैं कि क्या करें, हमारा यह धन्धा है, हम भी मेहनत करती हैं, मशक्कत करती हैं। उनके यहाँ भी नेकी का एक तसव्वुर मौजूद है। चुनाँचे मोहर्रम के दिनों में यह अपना धन्धा बन्द कर देती हैं, सियाह कपड़ें पहनती हैं और मातमी जुलूसों के साथ भी निकलती हैं। उनमें से बाज़ मजारों पर धमाल भी डालती हैं। उनके यहाँ इस तरह के काम नेकी शुमार होते हैं और जिस्म फ़रोशी को यह अपनी कारोबारी मजबूरी समझती हैं। चुनाँचे हमारे यहाँ हर तबके में नेकी और बदी का एक इस्तिज़ाज (संयोजन) है। जबकि अल्लाह तआला का मुतालबा कुल्ली इताअत का है, जुज़्वी इताअत उसके यहाँ कुबूल नहीं की जाती, बल्कि उल्टा मुँह पर दे मारी जाती है। आज उम्मत मुस्लिमा आलमी सतह पर जिस ज़िल्लत व रुसवाई का शिकार है उसकी वजह यही जुज़्वी इताअत है कि दीन के एक हिस्से को माना जाता है और एक हिस्से को पाँव तले रौन्द दिया जाता है। इस तर्ज़े अमल की पादाश में आज हम "طُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ" का मिस्दाक़ बन गये हैं और ज़िल्लत व मसकनत हम पर थोप दी गयी है। बाक़ी रह गया क़यामत का मामला तो वहाँ शदीद तरीन अज़ाब की वईद (चेतावनी) है। अपने तर्ज़े अमल से तो हम उसके मुस्तहक़ हो गये हैं, ताहम अल्लाह तआला की रहमत दस्तगीरी (हिमायत) फ़रमा ले तो उसका इख़्तियार है। आयत के आख़िर में फ़रमाया:

"और अल्लाह गाफ़िल नहीं है उससे जो तुम कर रहे हो।"

وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٥٠﴾

सेठ साहब हर साल उमरह फ़रमा कर आ रहे हैं, लेकिन अल्लाह को मालूम है कि यह उमरे हलाल कमाई से किये जा रहे हैं या हराम से! वह तो समझते हैं कि हम नहा धोकर आ गये हैं और साल भर जो भी हराम कमायी की थी सब पाक हो गयी। लेकिन अल्लाह तआला तुम्हारी करतूतों से नावाक़िफ़ नहीं है। वह तुम्हारी दाढ़ियों से, तुम्हारे अमामों से और तुम्हारी अबा और क़बा से धोखा नहीं खायेगा। वह तुम्हारे आमाल का अहतसाब (जवाबदेही) करके रहेगा।

आयत 86

"यह वो लोग हैं जिन्होंने दुनिया की ज़िन्दगी इख़्तियार कर ली है आख़िरत को छोड़ कर।"

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْحَيَاةَ الدُّنْيَا

بِالْآخِرَةِ

"सो अब ना तो उनसे अज़ाब हल्का किया जायेगा और ना ही उनकी कोई मदद की जायेगी।"

فَلَا يُخَفِّفُ عَنْهُمْ الْعَذَابَ وَلَا هُمْ

يُنصَرُونَ ﴿٥١﴾

आयात 87 से 96 तक

وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَقَفَّيْنَا مِنْ بَعْدِهِ بِالرُّسُلِ وَآتَيْنَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ أَفَكُلَّمَا جَاءَكُمْ رَسُولٌ بِمَا لَا تَهْوَى أَنْفُسُكُمْ اسْتَكْبَرْتُمْ فَفَرِقْنَا كَذِبُكُمْ وَفَرِقْنَا تَفْتُلُونَ ﴿٥٢﴾ وَقَالُوا قُلُوبُنَا غُلْفٌ بَلْ لَعَنَهُمُ اللَّهُ بِكُفْرِهِمْ فَقَلِيلًا مَّا يُؤْمِنُونَ ﴿٥٣﴾ وَلَمَّا جَاءَهُمْ كِتَابٌ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَهُمْ وَكَانُوا مِنْ قَبْلُ يَسْتَفْتِحُونَ عَلَى الَّذِينَ كَفَرُوا فَلَمَّا جَاءَهُمْ مَّا عَرَفُوا كَفَرُوا بِهِ فَلَعْنَةُ اللَّهِ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٥٤﴾ بِئْسَمَا اشْتَرَوْا بِهِ أَنْفُسَهُمْ أَنْ يَكْفُرُوا بِمَا أَنْزَلَ اللَّهُ بَغْيًا أَنْ يَنْزِلَ اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ عَلَى مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ فَبَاءُوا بِغَضَبٍ عَلَى غَضَبٍ وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿٥٥﴾ وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا بِمَا أَنْزَلَ اللَّهُ قَالُوا نُوْمِنُ بِمَا أَنْزَلَ عَلَيْنَا وَيَكْفُرُونَ بِمَا وَرَاءَهُ وَهُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِمَا مَعَهُمْ قُلْ فَلِمَ تَقْتُلُونَ أَنْبِيَاءَ اللَّهِ مِنْ قَبْلُ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٥٦﴾ وَلَقَدْ جَاءَكُمْ مُوسَى بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِهِ وَأَنْتُمْ ظَالِمُونَ ﴿٥٧﴾ وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمْ الطُّورَ خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاسْمِعُوا قَالُوا سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَأَشْرَبُوا فِي قُلُوبِهِمُ الْعِجْلَ بِكُفْرِهِمْ قُلْ بِئْسَمَا يَأْمُرُكُمْ بِهِ إِيمَانُكُمْ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٥٨﴾ قُلْ إِنْ كُنْتُمْ لَكُمْ الدَّارُ الْآخِرَةُ عِنْدَ اللَّهِ خَالِصَةً مِنْ دُونِ النَّاسِ فَتَمَتِّتُوا الْمَوْتَ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٥٩﴾ وَلَنْ يَتَمَتَّعَهُ أَبَدًا بِمَا قَدَّمْتُمْ آيِدِيهِمْ وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ﴿٦٠﴾

وَلَتَجِدَنَّهُمْ أَحْرَصَ النَّاسِ عَلَى حَيَاتِهِ وَمِنَ الَّذِينَ أَشْرَكُوا يَوَدُّ أَحَدُهُمْ لَوْ يُعَٰثِرَ
الْفَسَقَ وَمَا يُؤْمِرُ بِحَرْجِهِ مِنَ الْعَذَابِ أَنْ يُعَٰثَرَ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿٥٠﴾

आयत 87

“और हमने मूसा को किताब दी (यानि तौरात)”

وَلَقَدْ آتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ

“और उसके बाद पे दर पे रसूल भेजे।”

وَقَفَّيْنَا مِنْ بَعْدِهِ بِالرُّسُلِ

एक बात नोट कर लीजिये कि यहाँ लफ़्ज़ “الرُّسُل” अम्बिया के मायने में आया है। नबी और रसूल में कुछ फ़र्क है, इसे इख़्तिसार (संक्षिप्तता) के साथ समझ लीजिये। कुरान मजीद की इस्तेलाहात के तीन जोड़े ऐसे हैं कि वह तीनों मुतरादिफ़ (बराबर) के तौर पर भी इस्तेमाल हो जाते हैं और अपना अलैहदा-अलैहदा मफ़हूम भी रखते हैं। इनके ज़िम्न में उलमाये किराम ने यह उसूल वज़अ (तैयार) किया है कि “إِذَا اجْتَبَعْنَا نَفَرًا وَإِذَا نَفَرْنَا جَنَبًا” यानि जब (एक जोड़े के) दोनों लफ़्ज़ इकट्ठे इस्तेमाल होंगे तो दोनों का मफ़हूम मुख़्तलिफ़ होगा, और जब यह दोनों अलग-अलग इस्तेमाल होंगे तो एक मायने में इस्तेमाल हो जायेंगे। इनमें से एक जोड़ा “इस्लाम” और “ईमान” या “मुस्लिम” और “मोमिन” का है। आम तौर पर मुस्लिम की जगह मोमिन और मोमिन की जगह मुस्लिम इस्तेमाल हो जाता है, लेकिन सूरतुल हुजरात में यह दोनों अल्फ़ाज़ इकट्ठे इस्तेमाल हुए हैं तो इनका फ़र्क वाज़ेह हो गया है। फ़रमाया: {قَالَ الْأَعْرَابُ امْنًا قُلْ لَمْ تُؤْمِنُوا وَلَكِنْ قُولُوا أَسْلَمْنَا} (आयत:14) “बदू कहते हैं कि हम ईमान ले आये हैं। इनसे कहिये कि तुम हरगिज़ ईमान नहीं लाये हो, अलबत्ता यह कहो कि हमने इस्लाम कुबूल कर लिया है....” इसी तरह “जिहाद” और “क्रिताल” का मामला है। यह दो मुख़्तलिफ़ अल्फ़ाज़ हैं, जिनका मफ़हूम जुदा भी है लेकिन एक-दूसरे की जगह भी आ जाते हैं।

इस ज़िम्न में तीसरा जोड़ा “नबी” और “रसूल” का है। यह दोनों लफ़्ज़ भी अक्सर एक-दूसरे की जगह आ जाते हैं, लेकिन इनमें फ़र्क भी है। हर नबी रसूल नहीं होता, अलबत्ता हर रसूल लाज़िम्न नबी होता है। यानि नबी आम

है रसूल खास है। नबी को जब किसी खास क्रौम की तरफ़ मुअय्यन तौर पर भेज दिया जाता है तब उसकी हैसियत रसूल की हो जाती है। इससे पहले उसकी हैसियत इन्तहाई आला मरतबे पर फ़ाइज़ एक वली अल्लाह की है, जिस पर वही नाज़िल हो रही है। आम वली अल्लाह में और नबी में फ़र्क यही है कि नबी पर वही आती है, वली पर वही नहीं आती। लेकिन किसी नबी को जब किसी मुअय्यन क्रौम की तरफ़ मबऊस (नियुक्त) कर दिया जाता था तो फिर वह रसूल होता था। जैसे हज़रत मूसा और हज़रत हारून (अलै०) को हुक्म दिया गया: {إِذْخَبَا إِلَىٰ فِرْعَوْنَ إِنَّهُ طَغَىٰ} (ताहा) “तुम दोनों फ़िरऔन की तरफ़ जाओ, यक़ीनन वह सरकशी पर उतर आया है।” इसी तरह दूसरे रसूलों के बारे में आया है कि वह अपनी-अपनी क्रौम की तरफ़ मबऊस फ़रमाये गये थे। मसलन {وَإِلَىٰ مَدْيَنَ أَخَاهُمْ شُعَيْبًا} (अल आराफ़:85) “और मदन की तरफ़ भेजा हमने उनके भाई शुऐब (अलै०) को।” यह फ़र्क है नबी और रसूल का। महज़ समझाने के लिये बतौर मिसाल अर्ज़ कर रहा हूँ कि जैसे आपके यहाँ खुसूसी तरबियत याफ़ता अफ़राद पर मुश्तमिल CSP Cadre है, उनमें से कोई डिप्टी कमिश्नर लगा दिया जाता है, किसी को जॉइंट सेक्रेट्री की ज़िम्मेदारी तफ़वीज़ की (सौंपी) जाती है, तो कोई बतौर O.S.D. ख़िदमात अन्जाम देता है, लेकिन उसका काइर (CSP) बरक्रार रहता है। इसी ऐतबार से हर नबी हर हाल में नबी होता था, लेकिन उसे “रसूल” की हैसियत से एक इज़ाफ़ी ज़िम्मेदारी और इज़ाफ़ी मरतबा अता किया जाता था।

नबी और रसूल के फ़र्क के ज़िम्न में एक बात यह नोट कर लीजिये कि नबियों को क़त्ल भी किया गया है, जबकि रसूल क़त्ल नहीं हो सकते। अल्लाह का फ़ैसला यह है कि {لَاغْلِبَنَّ أَكَاوُسُ} (अल मुजादला:21) “लाज़िम्न ग़ालिब रहेंगे मैं और मेरे रसूल।” चुनाँचे जब भी किसी क्रौम ने किसी रसूल (अलै०) की जान लेने की कोशिश की तो उस क्रौम को हलाक कर दिया गया और रसूल (अलै०) और उसके साथियों को बचा लिया गया। लेकिन यह मामला नबियों के साथ नहीं हुआ। हज़रत याहिया (अलै०) नबी थे, क़त्ल कर दिये गये, जबकि हज़रत ईसा (अलै०) रसूल थे, लिहाज़ा क़त्ल नहीं किये जा सकते थे, उनको ज़िन्दा आसमान पर उठा लिया गया, जो क़यामत से क़ब्बल दोबारा ज़मीन पर नुज़ूल फ़रमायेंगे। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ को अल्लाह के

महफूज़ हैं, बड़े मज़बूत और मुस्तहकम (स्थिर) हैं, तुम्हारी बात इनमें घर कर ही नहीं सकती।

“बल्कि (हक़ीक़त में तो) उन पर लानत हो चुकी है अल्लाह की तरफ़ से उनके कुफ़्र की वजह से”

بَلْ لَعَنَهُمُ اللَّهُ بِكُفْرِهِمْ

यह उनके इस क़ौल पर तबसिरा है कि हमारे दिल महफूज़ हैं और ग़िलाफ़ों में बन्द हैं।

“पस अब कम ही) होंगे उनमें से जो (ईमान लायेंगे।”

فَقَلِيلًا مَّا يُؤْمِنُونَ ﴿٥﴾

आयत 89

“और जब आ गयी उनके पास एक किताब (यानि कुरान) अल्लाह के पास से”

وَلَمَّا جَاءَهُمْ كِتَابٌ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ

“जो उसकी तस्दीक़ करने वाली है जो उनके पास (पहले से मौजूद) है”

مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَهُمْ

यह वज़ाहत क़बूल अज़ की जा चुकी है कि कुरान करीम एक तरफ़ तो तौरात और इन्ज़ील की तस्दीक़ करता है और दूसरी तरफ़ वह तौरात और इन्ज़ील की पेशनगोईयों का मिस्दाक़ बन कर आया है।

“और वह पहले से कुफ़्रार के मुकाबले में फ़तह की दुआयें माँगा करते थे।”

وَكَانُوا مِنْ قَبْلُ يَسْتَفْتِحُونَ عَلَى الَّذِينَ

كَفَرُوا

उनका हाल यह था कि वह इसकी आमद से पहले अल्लाह की आखरी किताब और आखरी नबी صلی اللہ علیہ وسلم के हवाले और वास्ते से अल्लाह तआला से काफ़िरों के खिलाफ़ फ़तह व नुसरत की दुआयें किया करते थे। यहूद के तीन क़बाइल बनू क़ैनकाअ, बनू नज़ीर और बनू कुरेज़ा मदीना में आकर आबाद हो गये थे। वहाँ औस और खज़रज के क़बाइल भी आबाद थे जो यमन से आये थे और असल अरब क़बाइल थे। फिर आस-पास के क़बाइल भी थे। वह सब उम्मिय्यीन में से थे, उनके पास ना कोई किताब थी, ना कोई शरीअत और ना वह किसी

नबुवत से आगाह थे। उनकी जब आपस में लड़ाईयाँ होती थीं तो यहूदी चूँकि सरमायेदार होने की वजह से बुज़दिल थे लिहाज़ा हमेशा मार खाते थे। इस पर वह कहा करते थे कि अभी तो तुम हमें मार लेते हो, दबा लेते हो, नबी आखिरुज़्ज़मान صلی اللہ علیہ وسلم के आने का वक़्त आ चुका है जो नयी किताब लेकर आयेंगे। जब वह आयेंगे और हम उनके साथ होकर जब तुमसे जंग करेंगे तो तुम हमें शिकस्त नहीं दे सकोगे, हमें फ़तह पर फ़तह हासिल होगी। वह दुआ किया करते थे कि ऐ अल्लाह! उस नबी आखिरुज़्ज़मान का ज़हूर जल्दी हो ताकि उसके वास्ते से और उसके सदक़े हमें फ़तह मिल सके।

खज़रज और औस के क़बाइल ने यहूद की यह दुआयें और उनकी जुबान से नबी आखिरुज़्ज़मान صلی اللہ علیہ وسلم की आमद की पेशनगोईयाँ सुन रखी थीं। यही वजह है कि 11 नववी के हज के मौके पर जब मदीना से जाने वाले खज़रज के छः अफ़राद को रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने अपनी दावत पेश की तो उन्होंने कन्धियों से एक-दूसरे को देखा कि मालूम होता है यह वही नबी صلی اللہ علیہ وسلم हैं जिनका यहूदी ज़िक़र करते हैं, तो इससे पहले कि यहूद इन पर ईमान लायें, तुम ईमान ले आओ! इस तरह वह इल्म जो बिलवास्ता (अप्रत्यक्ष) तौर पर उन तक पहुँचा था उनके लिये एक अज़ीम सरमाया और ज़रिया-ए-निजात बन गया। मगर वही यहूदी जो आने वाले नबी के इन्तेज़ार में घड़ियाँ गिन रहे थे, आप صلی اللہ علیہ وسلم की आमद पर अपने तास्सुब और तकब्बुर की वजह से आप صلی اللہ علیہ وسلم के सबसे बड़ कर मुख़ालिफ़ बन गये।

“फिर जब उनके पास आ गयी वह चीज़ जिसे उन्होंने पहचान लिया तो वह उसके मुन्कर हो गये।”

فَلَمَّا جَاءَهُمْ مَا عَرَفُوا كَفَرُوا بِهِ

“पस अल्लाह की लानत है उन मुन्करीन पर।”

فَلَعَنَهُ اللَّهُ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٥﴾

आयत 90

“बहुत बुरी शय है जिसके एवज़ इन्होंने अपनी जानों को फ़रोख़्त कर दिया”

بِئْسَمَا اشْتَرَوُا بِهِ أَنْفُسَهُمْ

यानि दुनिया का हक़ीर सा फ़ायदा, यहाँ की हक़ीर सी मन्फ़अतें (लाभ), यहाँ की मसनदें (गदियाँ) और चौधराहटें उनके पाँव की ज़न्जीर बन गयी हैं और

वह अपनी फ़लाह व सआदत और निजात की खातिर इन हक़ीर सी चीज़ों की कुरबानी देने को तैयार नहीं हैं।

“कि वह इन्कार कर रहे हैं उस हिदायत का जो अल्लाह ने नाज़िल की है”

أَنْ يَكْفُرُوا بِمَا أَنْزَلَ اللَّهُ

“सिर्फ़ इस ज़िद की बिना पर कि अल्लाह तआला नाज़िल फ़रमाता है अपने फ़ज़ल (वही व रिसालत) में से अपने बन्दों में से जिस पर चाहता है।”

بَعْثًا أَنْ يُنَزِّلَ اللَّهُ مِنْ فَضْلِهِ عَلَى مَنْ يَشَاءُ مِنْ عِبَادِهِ

यहूद इस उम्मीद में थे कि आखरी नबी भी इसराइली ही होगा, इसलिये कि चौदह सौ बरस तक नबुवत हमारे पास रही है, यह “फ़तरा” का ज़माना है, जिसे छः सौ बरस गुज़र गये, अब आखरी नबी आने वाले हैं। उनको यह गुमान था कि वह नबी इसराइल ही में से होंगे। लेकिन हुआ यह कि अल्लाह तआला की यह रहमत और यह फ़ज़ल बनी इस्माईल पर हो गया। इस ज़िद्दम-ज़िद्दा कि वजह से यहूद अनाद (विरोध) और सरकशी पर उतर आये। इस “बुद्दी” के लफ़्ज़ को अच्छी तरह समझ लीजिये। दीन में जो इख़लाफ़ होता है उसका असल सबब यही ज़िद्दम-ज़िद्दा वाला रवैय्या होता है, जिसे कुरान मजीद में “बुद्दी” कहा गया है। यह लफ़्ज़ कुरान में कई बार आया है।

अहदे हाज़िर में इल्मे नफ़िसयात (Psychology) में ऐडलर के मकतबा-ए-फ़िक्र (विचारधारा) को एक खास मक़ाम हासिल है। उसका नुक्ता-ए-नज़रिया यह है कि इन्सान के ज़िबिल्ली अफ़आल (instincts) और मोहर्रिकात (motives) में एक निहायत ताक़तवर मुहर्रिक ग़ालिब होने की तलब (urge to dominate) है। चुनाँचे किसी दूसरे की बात मानना नफ़से इन्सानी पर बहुत गिराँ (तकलीफ़ देह) गुज़रता है, वह चाहता है कि मेरी बात मानी जाये! “बुद्दी” के मायने भी हद से बढ़ने और तजावुज़ करने के हैं। दूसरों पर ग़ालिब होने की ख्वाहिश में इन्सान अपनी हद से तजावुज़ कर जाता है। यही मामला यहूद का था कि उन्होंने दूसरों पर रौब गाँठने के लिये ज़िद्दम-ज़िद्दा की रविश इख़्तियार की, महज़ इस वजह से कि अल्लाह तआला ने बनी इस्माईल के एक शख्स मुहम्मदे अरबी عليه وسلم को अपने फ़ज़ल से नवाज़ दिया।

“तो वह लौटे ग़ज़ब पर ग़ज़ब लेकर।”

فَبَاءُوا بِغَضَبٍ عَلَى غَضَبٍ

यानि वह अल्लाह तआला के ग़ज़ब बलाये ग़ज़ब के मुस्तहिक़ हो गये।

“और ऐसे काफ़िरों के लिये सख़्त ज़िल्लत आमेज़ (अपमानजनक) अज़ाब है।”

وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ مُهِينٌ ⑩

“अहानत से बना है। उनकी इस रविश की वजह से उनके लिये अहानत आमेज़ अज़ाब मुकरर है।

आयत 91

“और जब उनसे कहा जाता है ईमान लाओ उस पर जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया है”

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ آمِنُوا بِمَا أَنْزَلَ اللَّهُ

“तो कहते हैं हम ईमान रखते हैं उस पर जो हम पर नाज़िल हुआ”

قَالُوا نؤمنُ بِمَا أَنْزَلَ عَلَيْنَا

“और वह कुफ़र कर रहे हैं उसका जो उसके पीछे है।”

وَيَكْفُرُونَ بِمَا وَرَاءَهُ

चुनाँचे उन्होंने पहले इन्जील का कुफ़र किया और हज़रत मसीह (अलै०) को नहीं माना, और अब उन्होंने मुहम्मद عليه وسلم का कुफ़र किया है और कुरान को नहीं माना।

“हालाँकि वह हक़ है, तस्दीक़ करते हुए आया है उसकी जो उनके पास है।”

وَهُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِمَا مَعَهُمْ

“(ऐ नबी عليه وسلم ! इनसे) कहिये: तो फिर तुम क्यों क़त्ल करते रहे हो अल्लाह के नबियों को इससे पहले?”

قُلْ فَلِمَ قَتَلْتُمُ أَنْبِيَاءَ اللَّهِ مِنْ قَبْلُ

“अगर तुम वाक़िअतन ईमान रखने वाले हो!”

إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ⑪

अगर तुम ऐसे ही हक़परस्त हो और जो कुछ तुम पर नाज़िल किया गया है उस पर ईमान रखने वाले हो तो तुम उन पैगम्बरों को क्यों क़त्ल करते रहे हो

जो खुद बनी इसराइल में पैदा हुए थे? तुमने ज़करिया (अलै०) को क्यों क़त्ल किया? याहिया (अलै०) को क्यों क़त्ल किया? ईसा (अलै०) के क़त्ल की प्लानिंग क्यों की? तुम्हारे तो हाथ नबियों के खून से आलूदह (दूषित) हैं और तुम दावेदार हो ईमान के!

आयत 92

“और आ चुके तुम्हारे पास मूसा (अलै०) सरीह (स्पष्ट) मौज्जज़े और वाज़ेह तालिमात लेकर”

وَلَقَدْ جَاءَكُمْ مُوسَىٰ بِالْبَيِّنَاتِ

“फिर तुमने उसकी गैरहाज़री में बछड़े को अपना मअबूद बना लिया”

ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِن بَعْدِهِ

“और तुम ज़ालिम हो।”

وَأَنْتُمْ ظَالِمُونَ ﴿٩٢﴾

आयत 93

“और याद करो जबकि हमने तुमसे अहद लिया था और तुम्हारे ऊपर कोहे तूर को मौअल्लक़ कर (लटका) दिया था।”

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ

“पकड़ो इसको जो हमने तुमको दिया है मज़बूती के साथ और सुनो!”

خُذُوا مَا آتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاسْمَعُوا

हमने ताकीद की थी कि जो हिदायत हम दे रहे हैं उनकी सख्ती के साथ पाबन्दी करो और कान लगा कर सुनो।

“उन्होंने कहा हमने सुना और नाफ़रमानी की।”

قَالُوا سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا

यानि हमने सुन तो लिया है, मगर मानेंगे नहीं! क्रौमे यहूद की यह भी एक देरीना (कठिन) बीमारी थी कि ज़बान को ज़रा सा मरोड़ कर अल्फ़ाज़ को इस तरह बदल देते थे कि बात का मफ़हूम ही यकसर (मौलिक) बदल जाये। चुनाँचे “سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا” के बजाये “سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا” कहते। हज़रत मूसा (अलै०) के

साथ जो मुनाफ़िक़ीन थे उनका भी ही वतीरा (व्यवहार) था। उनकी जब सरज़निश (डांट) की जाती तो कहते थे कि हमने तो कहा था “سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا” आपकी अपनी समाअत में कोई खलल होगा।

“और पिला दी गयी उनके दिलों में बछड़े की मोहब्बत उनके इस कुफ़्र की पादाश में।”

وَأَشْرَبُوا فِي قُلُوبِهِمُ الْعِجْلَ بِكُفْرِهِمْ

“कहिये: बहुत ही बुरी हैं यह बातें जिनका हुक्म दे रहा है तुम्हें तुम्हारा ईमान”

قُلْ بِئْسَمَا يَأْمُرُكُمْ بِهِ إِيمَانُكُمْ

“अगर तुम मोमिन हो!”

إِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِينَ ﴿٩٣﴾

यह अजीब ईमान है जो तुम्हें ऐसी बुरी हरकात का हुक्म देता है। क्या ईमान के साथ ऐसी हरकतें मुमकिन होती हैं?

आगे फिर एक बहुत अहम आफ़ाक़ी सच्चाई (universal truth) का बयान हो रहा है, जिसको पढ़ते हुए खुद दरुं बीनी (introspection) की ज़रूरत है। यहूद को यह ज़अम (दावा) था कि हम तो अल्लाह के बड़े चहेते हैं, लाडले हैं, उसके बेटों की मानिन्द हैं, हम औलिया अल्लाह हैं, हम उसके पसन्दीदा और चुनिन्दा लोग हैं, लिहाज़ा आख़िरत का घर हमारे ही लिये है। चुनाँचे उनके सामने एक लिटमस टेस्ट (litmus test) रखा जा रहा है। वाज़ेह रहे कि यह टेस्ट मेरे और आपके लिये भी है।

आयत 94

“(ऐ नबी ﷺ ! इनसे) कहिये: अगर तुम्हारे लिये आख़िरत का घर अल्लाह के पास खालिस कर दिया गया है दूसरे लोगों को छोड़ कर”

قُلْ إِنْ كَانَتْ لَكُمْ الدَّارُ الْآخِرَةُ عِنْدَ اللَّهِ خَالِصَةً مِن دُونِ النَّاسِ

यानि तुम्हारे लिये जन्नत मख़सूस (reserve) हो चुकी है और तुम मरते ही जन्नत में पहुँचा दिये जाओगे।

“तब तो तुम्हें मौत की तमन्ना करनी चाहिये अगर तुम (अपने इस ख्याल में) सच्चे हो।”

فَتَبَيَّنُوا الْمَوْتَ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٩٤﴾

अगर तुम्हें जन्नत में दाखिल होने का इतना ही यक़ीन है फिर तो दुनिया में रहना तुम पर गिरा होना चाहिये। यहाँ तो बहुत सी तकलीफ़ें हैं, यहाँ तो इन्सान को बड़ी मशक्कत और शदीद कौफ़कत (चालबाज़ी) उठानी पड़ जाती है। जिस शख्स को यह यक़ीन हो कि इस दुनिया के बाद आखिरत की ज़िन्दगी है और वहाँ मेरा मक़ाम जन्नत में है तो उसे यह ज़िन्दगी असासा (asset) नहीं, ज़िम्मेदारी (liability) मालूम होनी चाहिये। उसे तो दुनिया कैदखाना नज़र आनी चाहिये, जैसे हदीस है कि नबी करीम ﷺ ने फ़रमाया: ((الْذُّنْيَا سِجْنُ الْمُؤْمِنِ وَجَنَّةُ الْكَافِرِ))⁽¹⁰⁾ “दुनिया मोमिन के लिये कैदखाना और काफ़िर के लिये जन्नत है।” अगर किसी शख्स का आखिरत पर ईमान है और अल्लाह के साथ उसका मामला खुलूस पर मब्री है ना कि धोखेबाज़ी पर तो उसका कम से कम तक्राज़ा यह है कि उसे दुनिया में ज़्यादा देर तक ज़िन्दा रहने की आरज़ू तो ना हो। इसका जायज़ा हर शख्स खुद लगा सकता है, अज़रुए अल्फ़ाज़े कुरानी: {بَلِ الْإِنْسَانُ عَلَىٰ نَفْسِهِ بَصِيرَةٌ ۚ} (अल क्रियामा) “बल्कि आदमी अपने लिये आप दलील है।” हर इन्सान को खूब मालूम है कि मैं कहाँ खड़ा हूँ। आपका दिल आपको बता देगा कि आप अल्लाह के साथ धोखेबाज़ी कर रहे हैं या आपका मामला खुलूस व इख़लास पर मब्री है। अगर वाक़िअतन खुलूस और इख़लास वाला मामला है तो फिर तो यह कैफ़ियत होनी चाहिये जिसका नक़शा इस हदीसे नबवी में ﷺ में खींचा गया है: ((كُنْ فِي الدُّنْيَا كَأَنَّكَ غَرِيبٌ أَوْ عَابِرُ سَبِيلٍ))⁽¹¹⁾ “दुनिया में इस तरह रहो गोया तुम अजनबी हो या मुसाफ़िर हो।” फिर तो यह दुनिया बाग़ नहीं कैदखाना नज़र आनी चाहिये, जिसमें इन्सान मजबूरन रहता है। फिर ज़ावया-ए-निगाह (दृष्टिकोण) यह होना चाहिये कि अल्लाह ने मुझे यहाँ भेजा है, लिहाज़ा एक मुअय्यन मुद्दत के लिये यहाँ रहना है और जो-जो ज़िम्मेदारियाँ उसकी तरफ़ आयद की गयी हैं वह अदा करनी हैं। लेकिन अगर यहाँ रहने की ख्वाहिश दिल में मौजूद है तो फिर या तो आखिरत पर ईमान नहीं या अपना मामला अल्लाह के साथ खुलूस व इख़लास पर मब्री नहीं। यह गोया लिटमस टेस्ट है।

आयत 95

“और यह हरगिज़ आरज़ू नहीं करेंगे मौत की”

وَلَنْ يَسْتَمْتُوهُ أَبَدًا

“बसबव उन करतूतों के जो इनके हाथों ने आगे भेजे हुए हैं।”

بِمَا قَدَّمْتُمْ أَيُّدِيهِمْ

हर शख्स को खुद मालूम है कि मैंने क्या कमाई की है, क्या आगे भेजा है।

“और अल्लाह इन ज़ालिमों से बखूबी वाकिफ़ है।”

وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ۝

आयत 96

“और तुम इन्हें पाओगे तमाम इन्सानों से ज़्यादा हरीस इस (दुनिया की) ज़िन्दगी पर।”

وَلَتَجِدَنَّهُمْ أَخْرَصَ النَّاسِ عَلَىٰ حَيَوتِهِمْ

“हत्ता कि मुशरिकों से भी ज़्यादा हरीस।”

وَمِنَ الَّذِينَ أَشْرَكُوا

यह इस मामले में मुशरिकों से भी बढ़े हुए हैं। मुशरिकीन ने अहले ईमान के साथ मुकाबला किया तो खुल कर किया, मैदान में आकर डट कर किया, अपनी जानें अपने बातिल मअबूदों के लिये कुरबान कीं, जबकि यहूदियों में यह हिम्मत व जुरात क़तअन नहीं थी कि वह जान हथेली पर रख कर मैदान में आ सकें। इनके बारे में सूरतुल हथ्र में अल्फ़ाज़ वारिद हुए हैं: {لَا يُفَالِتُونَكُمْ بَجَيْعًا إِلَّا فِي قُرَىٰ مُّحْصَنَةٍ أَوْ مِنْ وَّرَآءِ جُدٍّ} (आयत:14) “यह सब मिल कर भी तुमसे जंग ना कर सकेंगे मगर क़िला बन्द बस्तियों में या दीवारों की ओट से।” चुनौचे यहूद कभी भी सामने आकर मुस्लिमानों का मुकाबला नहीं कर सके। इसलिये कि उन्हें अपनी जानें बहुत अज़ीज़ थीं।

“इनमें से हर एक की यह ख्वाहिश है कि किसी तरह उसकी उम्र हज़ार बरस हो जाये।”

يَوَدُّ أَحَدُهُمْ لَوْ يُعَظَّرُ أَلْفَ سَنَةٍ

“हालाँकि नहीं है इसको बचाने वाला अज़ाब से इस क्रूर जीना।”

وَمَا هُوَ بِمُخْرِجِهِ مِنَ الْعَذَابِ أَنْ يُعَمَّرَ

अगर इनको इनकी ख्वाहिश के मुताबिक़ तवील ज़िन्दगी दे भी दी जाये तो यह इन्हें अज़ाब से तो छुटकारा नहीं दिला सकेगी। आखिरत तो बिलआखिर आनी है और इन्हें इनके करतूतों की सज़ा मिल कर रहनी है।

“और अल्लाह देख रहा है जो कुछ यह कर रहे हैं।”

وَاللّٰهُ بِصِرِّهِمْ يَّعْلَمُونَ ﴿٥٠﴾

आयात 97 से 103 तक

قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِلْجِبْرِيلَ فَإِنَّهُ نَزَّلَهُ عَلَى قَلْبِكَ بِإِذْنِ اللَّهِ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَهُدًى وَبُشْرَىٰ لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٥٠﴾ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِلَّهِ وَمَلَائِكَتِهِ وَرُسُلِهِ وَجِبْرِيلَ وَمِيكَلَ فَإِنَّ اللَّهَ عَدُوٌّ لِلْكَافِرِينَ ﴿٥١﴾ وَلَقَدْ أَنْزَلْنَا إِلَيْكَ آيَاتٍ بَيِّنَاتٍ وَمَا يَكْفُرُ بِهَا إِلَّا الْفَاسِقُونَ ﴿٥٢﴾ أَوَكَلَّمَا عَاهَدُوا عَهْدًا نَّبَذَهُ فَرِيقٌ مِّنْهُمْ بَلْ أَكْثَرُهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٥٣﴾ وَلَمَّا جَاءَهُمْ رَسُولٌ مِّنْ عِنْدِ اللَّهِ مُصَدِّقٌ لِّمَا مَعَهُمْ نَبَذَ فَرِيقٌ مِّنَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ كِتَابَ اللَّهِ وَرَاءَ ظُهُورِهِمْ كَأَنَّهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٥٤﴾ وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيَاطِينُ عَلَىٰ مُلْكٍ سُلَيْمٍ وَمَا كَفَرَ سُلَيْمٌ وَلَكِنَّ الشَّيَاطِينَ كَفَرُوا يُعَلِّمُونَ النَّاسَ السِّحْرَ وَمَا أُنْزِلَ عَلَى الْمَلَكَيْنِ بِبَابِلَ هَارُوتَ وَمَارُوتَ وَمَا يُعَلِّمُونَ مِنْ أَحَدٍ حَتَّى يَقُولَا إِنَّمَا نَحْنُ فِتْنَةٌ فَلَا تَكْفُرْ فَيَتَعَلَّمُونَ مِنْهُمَا مَا يُفَرِّقُونَ بِهِ بَيْنَ الْمَرْءِ وَزَوْجِهِ وَمَا هُمْ بِضَارِّينَ بِهِ مِنْ أَحَدٍ إِلَّا بِإِذْنِ اللَّهِ وَيَتَعَلَّمُونَ مَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ وَلَقَدْ عَلِمُوا لَمَنِ اشْتَرَاهُ مَا لَهُ فِي الْآخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ وَلَبِئْسَ مَا شَرَوْا بِهِ أَنْفُسَهُمْ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٥٥﴾ وَلَوْ أَنَّهُمْ آمَنُوا وَاتَّقَوْا لَهَيُّوبَةٌ مِّنْ عِنْدِ اللَّهِ خَيْرٌ لَّوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٥٦﴾

जैसा कि क़बूल अज़ अज़ किया जा चुका है, मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत यहूद के लिये बहुत बड़ी आजमाइश साबित हुई। उनका खयाल था कि आखरी नबुवत का वक़्त करीब है और यह नबी भी हस्बे साबिक बनी इसराइल में से मबऊस होगा। लेकिन नबी अखिरुज़मान صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत बनी इसमाइल में से हो गयी। यहूद जिस अहसासे बरतरी का शिकार थे

उसकी रू से वह बनी इसमाइल को हक़ीर समझते थे। उनका कहना था कि यह उम्मी लोग हैं, अनपढ़ हैं, इनके पास ना कोई किताब है ना शरीअत है और ना कोई क़ानून और ज़ाबता (नियम) है, लिहाज़ा अल्लाह तआला ने उनमें से एक शख्स को कैसे चुन लिया? उनका खयाल था कि यह सब जिब्राइल की “शरारत” है कि वह वही लेकर मुहम्मदे अरबी صلی اللہ علیہ وسلم के पास चला गया। लिहाज़ा वह हज़रत जिब्राइल को अपना दुश्मन तसव्वुर करते थे और उन्हें गालियाँ देते थे।

यह बात शायद आपको बड़ी अजीब लगे कि अहले तशय्यो में से फ़िरका “गराबिया” का अक़ीदा भी कुछ इसी तरह का था। हज़रत मुजद्दिद अल्फे सानी शेख अहमद सरहन्दी (रहि०) ने अपने मकातीब में इस फ़िरके के बारे में लिखा है कि उनका अक़ीदा यह था कि हज़रत मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم और हज़रत अली (रजि०) दोनों की अरवाह एक-दूसरे के बिल्कुल ऐसे मुशाबेह थीं जैसे एक गुराब (कव्वा) दूसरे गुराब के मुशाबेह होता है। चुनाँचे हज़रत जिब्राइल (अलै०) धोखा खा गये। अल्लाह ने तो वही भेजी थी हज़रत अली (रजि०) के पास, लेकिन वह ले गये हज़रत मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم के पास। यहूद के यहाँ यह अक़ीदा मौजूद था कि अल्लाह ने तो जिब्राइल (अलै०) को बनी इसराइल में से किसी के पास भेजा था, लेकिन वह मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم के पास चले गये, और यही मफ़रूज़ा (कल्पना) उनकी हज़रत जिब्राइल (अलै०) से दुश्मनी की बुनियाद था। रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया था:

لَيَأْتِيَنَّ عَلَى أُمَّتِي مَا أَتَى عَلَى بَنِي إِسْرَائِيلَ حَذَوِ النَّعْلِ بِالنَّعْلِ

“मेरी उम्मत पर भी वह तमाम अहवाल (अफ़साने) लाज़िमन वारिद होकर रहेंगे जो बनी इसराइल पर वारिद हुए थे, जैसे एक जूता दूसरे जूते के मुशाबेह होता है।” (12)

चुनाँचे उम्मत मुस्लिमा में से किसी फ़िरके का इस तरह के अक्राइद अपना लेना कुछ बर्द नहीं है। इससे इस हदीस की हक़ीक़त मुन्कशिफ़ होती है।

आयत 97

“(ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم!) कह दीजिये जो कोई भी दुश्मन हो जिब्राइल (अलै०) का”

قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِلْجِبْرِيلَ

“तो (वह यह जान ले कि) उसने तो नाज़िल किया है इस कुरान को आप ﷺ के दिल पर अल्लाह के हुक्म से”

فَإِنَّهُ نَزَّلَهُ عَلَى قَلْبِكَ بِإِذْنِ اللَّهِ

इस मामले में जिब्राईल (अलै०) को तो कुछ इख्तियार हासिल नहीं। फ़रिशते जो कुछ करते हैं अल्लाह के हुक्म से करते हैं, अपने इख्तियार से कुछ नहीं करते।

“यह तस्दीक करते हुए आया है उस कलाम की जो इसके सामने मौजूद है”

مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ

“और हिदायत और बशारत है अहले ईमान के लिये।”

وَهُدًى وَبُشْرَى لِّلْمُؤْمِنِينَ ۝

इसके बाद अब फ़रमाया जा रहा है कि अल्लाह, उसके रसूल ﷺ और उसके मलाइका सब एक हयातयाती वहादत (organic whole) की हैसियत रखते हैं, यह एक जमाअत हैं, इनमें कोई इख्तिलाफ़ या इफ़तराक़ (विभाजन) नहीं हो सकता। अगर कोई जिब्राईल (अलै०) का दुश्मन है तो वह अल्लाह का दुश्मन है, और अगर कोई अल्लाह के सच्चे रसूल ﷺ का दुश्मन है तो वह अल्लाह का भी दुश्मन है और जिब्राईल (अलै०) का भी दुश्मन है।

आयत 98

“(तो कान खोल कर सुन लो) जो कोई भी दुश्मन है अल्लाह का और उसके फ़रिशतों का और उसके रसूलों का और जिब्राईल और मीकाईल का तो (अल्लाह तआला की तरफ़ से भी ऐलान है कि) अल्लाह ऐसे काफ़िरों का दुश्मन है।”

مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِلَّهِ وَمَلَائِكَتِهِ وَرُسُلِهِ وَجِبْرِيلَ وَمِيكَالَ فَإِنَّ اللَّهَ عَدُوٌّ لِّلْكَافِرِينَ ۝

۝

आयत 99

“और (ऐ नबी ﷺ) हमने आप ﷺ की तरफ़ नाज़िल कर दी हैं रोशन आयात।”

وَلَقَدْ أَنزَلْنَا إِلَيْكَ آيَاتٍ بَيِّنَاتٍ

“और इन्कार नहीं करते इनका मगर वही जो सरकश हैं।”

وَمَا يَكْفُرُ بِهِ إِلَّا الْفَاسِقُونَ ۝

याद कीजिये सूरतुल बक्ररह के तीसरे रुकूअ में यह अल्फ़ाज़ आये थे: {وَمَا يُضِلُّ بِهِ إِلَّا الْفَاسِقُونَ ۝} “और वह गुमराह नहीं करता इसके ज़रिये से मगर फ़ासिकों को।”

आयत 100

“तो क्या) हमेशा ऐसा ही नहीं होता रहा है कि (जब कभी भी इन्होंने कोई अहद किया”

أَوْ كَلِمًا عَهْدًا وَعَهْدًا

अल्लाह से कोई मीसाक़ किया या अल्लाह के रसूलों से कोई अहद किया।

“इनमें से एक गिरोह ने उसे उठा कर फेंक दिया।”

تَبَدَّلَهُ فَريقٌ مِّنْهُمْ

“बल्कि इनमें से अक्सर ऐसे हैं जो यक़ीन नहीं रखते।”

بَلْ أَكْثَرُهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ۝

इनकी अक्सरियत ईमान व यक़ीन की दौलत से तही दामन (नष्ट) है।

यही हाल आज उम्मत मुस्लिमा का है कि मुस्लिमान तो सब हैं, लेकिन ईमाने हक़ीक़ी, ईमाने क़ल्बी यानि यक़ीन वाला ईमान कितने लोगों को हासिल है? “ढूँढ़ अब उनको चिरागे रख ज़ेबा लेकर!”

आयत 101

“और जब आया उनके पास अल्लाह की तरफ़ से एक रसूल (यानि मुहम्मद ﷺ) ”

وَلَمَّا جَاءَهُمْ رَسُولٌ مِّنْ عِنْدِ اللَّهِ

“तस्दीक करने वाला उस किताब की जो उनके पास मौजूद है”

مُصَدِّقٌ لِّمَا مَعَهُمْ

“तो अहले किताब में से एक जमात ने अल्लाह की किताब को पीठों के पीछे फेंक

تَبَدَّلَ فَرِيقٌ مِّنَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ كِتَابَ

दिया”

اللَّهُوَرَاءَ طُورِهِمْ

“गोया कि वह जानते ही नहीं।”

كَأَنَّهُمْ لَا يَعْلَمُونَ

उलमाये यहूद ने नबी आखिरुज़्ज़मान صلی اللہ علیہ وسلم की आमद की पेशनगोईयाँ छुपाने की खातिर खुद तौरात को पसे-पुशत डाल दिया और बिल्कुल अन्जाने से होकर रह गये। उनके अवाम पूछते होंगे कि क्या यह वही नबी है जिनका ज़िक्र तुम किया करते थे? लेकिन यह जवाब में कहते कि यकीन से नहीं कह सकते, अभी तेल देखो तेल की धार देखो! उन्होंने ऐसा रवैय्या अपना लिया जैसे उन्हें कुछ इल्म नहीं है।

अब एक और हकीकत नोट कीजिये। जब किसी मुस्लमान उम्मत में दीन की असल हकीकत और असल तालीमात से बाअदु (फ़ासला) पैदा होता है तो लोगों का रुझान जादू, टोने, टोटके, तावीज़ और अम्लियात वगैरह की तरफ़ हो जाता है। अल्लाह की किताब तो हिदायत का सरचश्मा बन कर उतरी थी, लेकिन यह उसको अपनी दुनयवी ख्वाहिशात की तकमील का ज़रिया बनाते हैं। चुनाँचे दुश्मन को ज़ेर करने और महबूब को क़दमों में गिराने के लिये “अम्लियाते कुरानी” का सहारा लिया जाता है। यह धन्धे हमारे यहाँ भी खूब चल रहे हैं और शायद सबसे ज़्यादा मुनफ़अत बख़्श कारोबार यही है, जिसमें ना तो कोई मेहनत करने की ज़रूरत है और ना ही किसी सरमायाकारी की। बनी इसराइल का भी यही हाल था कि वह दीन की असल हकीकत को छोड़ कर जादू के पीछे चल पड़े थे। फ़रमाया:

आयत 102

“उन्होंने पैरवी की उस इल्म की जो श्यातीन पढा करते थे सुलेमान (अलै०) की बादशाहत के वक़्त”

وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيْطَانُ عَلَىٰ مُلْكِ سُلَيْمَانَ

अल्लाह तआला ने जिन्नात को हज़रत सुलेमान (अलै०) के ताबेअ कर दिया था। उस वक़्त चूँकि उनका इन्सानों के साथ ज़्यादा मेल-जोल रहता था, लिहाज़ा यह इन्सानों को जादू वगैरह सिखाते रहते थे।

“और सुलेमान (अलै०) ने कभी कुफ़्र नहीं किया, बल्कि यह तो श्यातीन थे जो कुफ़्र करते थे”

وَمَا كَفَرَ سُلَيْمَانُ وَلَكِنَّ الشَّيَاطِينَ كَفَرُوا

“वह लोगों को जादू सिखाते थे।”

يُعَلِّمُونَ النَّاسَ السِّحْرَ

जादू कुफ़्र है, लेकिन आपको आज भी “नक़्शे सुलेमानी” की इस्तलाह सुनने को मिलेगी। इस तरह बाज़ मुस्लमान भी इन चीज़ों को हज़रत सुलेमान (अलै०) की तरफ़ मन्सूब कर रहे हैं और वह जुल्म अब भी जारी है।

“और (वह उस इल्म के पीछे पड़े) जो नाज़िल किया गया दो फ़रिशतों हारूत और मारूत पर बाबुल में।”

وَمَا أُنْزِلَ عَلَى الْمَلَكَيْنِ بِبَابِلَ هَارُوتَ وَمَارُوتَ

बाबुल (Babylonia) ईराक़ का पुराना नाम था। येरूशलम पर हमला करने वाला बख़्तनसर (Nebuchadnezzar) भी यहीं का बादशाह था और नमरूद भी बाबुल ही का बादशाह था। नमरूद ईराक़ के बादशाहों का लक़ब होता था, जिसकी जमा “ममरूद” है। हज़रत सुलेमान (अलै०) के दौरे हुकूमत में जिन्नात और इन्सानों का बाहम मेल-जोल होने की वजह से जिन्नात लोगों को जादूगरी की तालीम देते थे। अल्लाह तआला ने लोगों की आख़री आजमाइश के लिये दो फ़रिशतों को ज़मीन पर उतारा जो इन्सानी शक़ल व सूरत में लोगों को जादू सिखाते थे। वह खुद ही यह वाज़ेह कर देते थे कि देखो जादू कुफ़्र है, हमसे ना सीखो। लेकिन इसके बावजूद लोग सीखते थे। गोया उन पर इत्मा मे हुज्जत हो गया कि अब उनके अन्दर ख़बासत पूरे तरीक़े से घर कर चुकी है।

“और वह नहीं सिखाते थे किसी को भी”

وَمَا يُعَلِّمُونَ أَحَدًا

“यहाँ तक कि वह कह देते थे कि देखो हम तो आजमाइश के लिये भेजे गये हैं, पस तुम कुफ़्र मत करो।”

حَتَّىٰ يَقُولَ إِنَّمَا جُعِلْنَا فِتْنَةً فَلَا تَكْفُرْ

“फिर वह सीखते थे उन दोनों से वह शय जिनके ज़रिये से आदमी और उसकी बीबी के दरमियान जुदाई डालते थे।”

فَيَتَعَلَّمُونَ مِنْهُمَا مَا يُفَرِّقُونَ بِهِ بَيْنَ الْمَرْءِ وَزَوْجِهِ

शौहर और बीवी के दरमियान जुदाई डालना और लोगों के घरों में फ़साद डालना, इस तरह के काम अब भी बाज़ औरतें बड़ी सरगर्मी से सरअन्जाम देती हैं। इस मक़सद के लिये तावीज़, गन्डे, धागे और ना जाने क्या कुछ ज़राये (साधन) इख़्तियार किये जाते हैं।

“और नहीं थे वह ज़र्र (चोट) पहुँचाने वाले
इसके ज़रिये किसी को भी अल्लाह के इज़्ज़
(आज़ा) के बग़ैर।”

ईमान का तक्काज़ा यह है कि बन्दा-ए-मोमिन को यह यक़ीन हो कि अल्लाह के इज़्ज़ के बग़ैर ना कोई चीज़ फ़ायदा पहुँचा सकती है और ना ही नुक़सान। चाहे कोई दवा हो वह भी बिइज़्ज़े रब काम करेगी वरना नहीं। जो कोई भी असबाबे तबीआ (फिज़ियोथेरेपी) हैं उनके असरात तभी ज़ाहिर होंगे अगर अल्लाह चाहेगा, इसके बग़ैर कुछ नहीं हो सकता। जादू का असर भी अगर होगा तो अल्लाह के इज़्ज़ से होगा। चुनाँचे बन्दा-ए-मोमिन को अल्लाह के भरोसे पर ड़ते रहना चाहिये और मसाईब (मुसीबतों) व मुशक़लात का मुक़ाबला करना चाहिये।

“और वे सीखते थे वह चीज़ें जो खुद उनको
भी ज़र्र पहुँचाने वाली थीं और उन्हें नफ़ा नहीं
पहुँचाती थीं।”

“हालाँकि वह ख़ूब जान चुके थे कि जो भी
इस चीज़ का खरीदार बना (यानि जादू
सीखा) उसके लिये आख़िरत में कोई हिस्सा
नहीं है।”

“और बहुत ही बुरी थी वह चीज़ जिसके बदले
इन्होंने अपने आपको फ़रोख़्त कर दिया।”

“काश इन्हें इल्म होता।”

आयत 103

“और अगर वह ईमान रखते और तक्वा की
रविश इख़्तियार करते”

“तो बदला पाते अल्लाह की तरफ़ से बहुत ही
अच्छा।”

“काश उनको मालूम होता।”

وَلَوْ أَنَّهُمْ آمَنُوا وَاتَّقَوْا

لَمْ تُؤْتِكُمْ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ حَيْرٌ

لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ۝

आयात 104 से 112 तक

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقُولُوا رَاعِنَا وَقُولُوا انظُرْنَا وَاسْمَعُوا وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝
مَا يَوْدُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ وَلَا الْيَهُودِ أَنْ يُتَزَّلَ عَلَيْكُمْ مِنْ خَيْرٍ
مِنْ رَبِّكُمْ وَاللَّهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهِ مَنْ يَشَاءُ وَاللَّهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ۝ مَا تَسْمَعُ مِنْ
آيَةٍ أَوْ نُنسِهَا نَأْتِ بِخَيْرٍ مِنْهَا أَوْ مِثْلَهَا أَلَمْ تَعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝ أَلَمْ
تَعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ لَهُ مُلْكُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ۝
أَمْ تَرِيدُونَ أَنْ تَسْأَلُوا رَسُولَكُمْ كَمَا سَأَلُوا مُوسَى مِنْ قَبْلُ وَمَنْ يَتَّبِعِ الْكُفْرَ
بِالْإِيمَانِ فَقَدْ ضَلَّ سَوَاءَ السَّبِيلِ ۝ وَذَكِّرُوا مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ لَوْ يَرُدُّونَكُمْ مِنْ
بَعْدِ إِيمَانِكُمْ كُفَّارًا حَسَدًا مِنْ عِنْدِ أَنْفُسِهِمْ مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْحَقُّ فَاعْفُوا
وَاصْفَحُوا حَتَّى يَأْتِيَ اللَّهُ بِأَمْرٍ ۝ إِنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝ وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا
الزَّكَاةَ وَمَا تَقَدَّمُوا لَأَنْفُسِكُمْ مِنْ خَيْرٍ تَجِدُوهُ عِنْدَ اللَّهِ إِنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝
وَقَالُوا لَنْ يَدْخُلَ الْجَنَّةَ إِلَّا مَنْ كَانَ هُودًا أَوْ نَصْرِي تِلْكَ آمَانِيهِمْ قُلْ هَاتُوا
بُرْهَانَكُمْ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝ بَلَى مَنْ أَسْلَمَ وَجْهَهُ لِلَّهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهُ أَجْرٌ عِنْدَ
رَبِّهِ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝

وَيَتَعَلَّمُونَ مَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ

وَلَقَدْ عَلِمُوا لَمَنِ اشْتَرَاهُ مَا لَهُ فِي الْآخِرَةِ
مِنْ خَلَقٍ

وَلَيْسَ مَا شَرَوْا بِهِ أَنْفُسَهُمْ

لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ۝

आयत 104

“ऐ ईमान वालों तुम رَاعِيَا मत कहा करो”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقُولُوا رَاعِيَا

“बल्कि اُنْظُرُوا कहा करो”

وَقُولُوا اُنْظُرُوا

“और तवज्जो से बात को सुनो!”

وَأَسْمَعُوا

क्रबल अज़ मुनाफ़िक़ीन बनी इसराइल का ज़िक्र हुआ था, जिनका क़ौल था: “سَمِعْنَا وَاعْتَمَيْنَا” अब यहाँ उन मुनाफ़िक़ीन का तर्ज़े अमल बयान हो रहा है जो मुस्लमानों में शामिल हो गये थे और यहूद के ज़ेरे असर थे। यहूदी और उनके ज़ेरे असर मुनाफ़िक़ीन जब रसूल अल्लाह ﷺ की महफ़िल में बैठते थे तो अगर आप ﷺ की कोई बात उन्हें सुनाई ना देती या समझ में ना आती तो वह رَاعِيَا कहते थे, जिसका मफ़हूम यह है कि हुज़ूर (ﷺ) ज़रा हमारी रियायत कीजिये, बात को दोबारा दोहरा दीजिये, हमारी समझ में नहीं आई। अहले ईमान भी यह लफ़्ज़ इस्तेमाल करने लगे थे। लेकिन यहूद और मुनाफ़िक़ीन अपने खबसे बातिन का इज़हार इस तरह करते कि इस लफ़्ज़ को ज़बान दबा कर कहते तो “رَاعِيَا” हो जाता (यानि ऐ हमारे चरवाहे!) इस पर दिल ही दिल में खुश होते और इस तरह अपनी खबासते नफ़्स को गिज़ा मुहैया करते। अगर कोई उनको टोक देता कि यह तुम क्या कह रहे हो तो जवाब में कहते हमने तो رَاعِيَا कहा था, मालूम होता है आपकी समाअत में कोई खलल पैदा हो चुका है। चुनाँचे मुस्लमानों से कहा जा रहा है कि तुम इस लफ़्ज़ ही को छोड़ दो, इसकी जगह कहा करो: اُنْظُرُوا यानि ऐ नबी ﷺ हमारी तरफ़ तवज्जो फ़रमाइये! या हमें मोहलत दीजिये कि हम बात को समझ लें। और दूसरे यह कि तवज्जो से बात को सुना करो ताकि दोबारा पूछने की ज़रूरत ही पेश ना आये।

“और इन काफ़िरों के लिये दर्दनाक अज़ाब है।”

وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ أَلِيمٌ

आयत 105

“और नहीं चाहते वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया है अहले किताब में से और मुशरिकीन में से कि नाज़िल हो तुम पर कोई भी ख़ैर तुम्हारे रब की तरफ़ से।”

مَا يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ وَلَا الْمُشْرِكِينَ أَنْ يُنَزَّلَ عَلَيْكُمْ مِنْ خَيْرٍ مِنْ رَبِّكُمْ

जिन लोगों ने दावाते हक़ को कुबूल करने से इन्कार कर दिया है, ख्वाह अहले किताब में से हो या मुशरिकीने मक्का में से, वह इस बात पर हसद की आग में जल रहे हैं कि यह कलामे पाक आप ﷺ पर क्यों नाज़िल हो गया और “खातमुन्न नबिय्यीन” का यह मंसब आप ﷺ को क्यों मिल गया। वह नहीं चाहते कि अल्लाह की तरफ़ से कोई भी ख़ैर आपको मिले।

“और अल्लाह ख़ास कर लेता है अपनी रहमत के साथ जिसको चाहता है।”

وَاللَّهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهِ مَنْ يَشَاءُ

यह तो उसका इख़्तियार और उसका फ़ैसला है।

“और अल्लाह तआला बड़े फ़ज़ल वाला है।”

وَاللَّهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ

आयत 106

“जो भी हम मंसूख (cancel) करते हैं कोई आयत या उसे भुला देते हैं”

مَا نُنَسِّخْ مِنْ آيَةٍ أَوْ نُنسِهَا

एक तो है नसख यानि किसी आयत को मंसूख कर देना और एक है हाफ़िज़े से ही किसी शय को मसह कर (निकाल) देना।

“तो हम (उसकी जगह पर) ले आते हैं उससे बेहतर या (कम अज़ कम) वैसी ही।”

نَأْتِ بِخَيْرٍ مِنْهَا أَوْ مِثْلِهَا

“क्या तुम यह नहीं जानते कि अल्लाह हर शय पर कुदरत रखता है?”

أَلَمْ تَعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ

उसे हर शय का इख़्तियार हासिल है।

इस आयत का असल मफ़हूम और और पसमंज़र समझ लीजिये। आपको मालूम है कि अल्लाह का दीन आदम अलैहिस्सलाम से लेकर इदम तक एक ही है। नूह अलैहिस्सलाम का दीन, मूसा अलैहिस्सलाम का दीन, ईसा अलैहिस्सलाम का दीन और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ का दीन एक ही है, जबकि शरीअतों में फ़र्क़ रहा है। इस फ़र्क़ का असल सबब यह है कि नौए इंसानी मुख्तलिफ़ ऐतबारत से इरतकाअ (विकास) के मराहिल तय कर रही थी। ज़हनी पुख्तगी, शऊर की पुख्तगी और फिर तमद्दुनी इरतकाअ (सामाजिक विकास) मुसलसल जारी था। लिहाज़ा उस इरतकाअ के जिस मरहले में रसूल आये उसी की मुनासबत से उनको तालीमात दे दी गयीं। इन तालीमात के कुछ हिस्से ऐसे थे जो अब्दी (eternal) हैं, वह हमेशा रहेंगे, जबकि कुछ हिस्से ज़माने की मुनासबत से थे। चुनाँचे जब अगला रसूल आता तो उनमें से कुछ चीज़ों में तगय्युर (परिवर्तन) व तबद्दुल (बदलाव) हो जाता, कुछ चीज़ें नयी आ जाती और कुछ पुरानी साक्रित (अस्वीकार) हो जाती। यह मामला नस्ख कहलाता है। या तो अल्लाह तआला तअय्युन (निर्धारण) के साथ किसी हुक्म को मंसूख फ़रमा देते हैं और उसकी जगह नया हुक्म भेज देते हैं, या किसी शय को सिरे से लोगों के ज़हनों से ख़ारिज कर देते हैं। यहूदी यह ऐतराज़ कर रहे थे कि अगर यह दीन वही है जो मूसा अलैहिस्सलाम का था तो फिर शरीअत पूरी वही होनी चाहिये। यहाँ इस ऐतराज़ का जवाब दिया जा रहा है।

फिर नासिख व मंसूख का मसला कुरान में भी है। कुरान में भी तदरीज (क्रम) के साथ शरीअत की तकमील हुई है। जैसा कि मैंने पहले अर्ज़ किया था, शरीअत का इब्तदाई खाका (blue print) सूरतुल बक्ररह में मिल जाता है, लेकिन शरीअत की तकमील सूरतुल मायदा में हुई है। यह जो तक्ररीबन पाँच-छः साल का अरसा है इसमें कुछ अहकाम किये गये, फिर उनमें रद्दो-बदल करके नये अहकाम दिये गये और फिर आख़िर में यह इरशाद फ़रमा दिया गया: {الْيَوْمَ أَكْمَلْتُ لَكُمْ دِينَكُمْ وَأَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِي وَرَضِيتُ لَكُمُ الْإِسْلَامَ دِينًا} (अल मायदा:3) “आज मैंने तुम्हारे दीन को तुम्हारे लिये मुकम्मल कर दिया है और अपनी नेअमत तुम पर तमाम कर दी है और तुम्हारे लिये इस्लाम को बहैसियत दीन पसंद कर लिया है।” तो यह नासिख व मंसूख का मसला सिर्फ़ साबका शरीअतों और शरीअते मुहम्मदी ﷺ के माबैन ही नहीं है, बल्कि खुद शरीअते मुहम्मदी (على صاحبها الصلوة والسلام) में भी ज़मानी ऐतबार से

इरतकाअ हुआ है। मिसाल के तौर पर पहले शराब के बारे में हुक्म दिया गया कि इसमें गुनाह का पहलु ज़्यादा है, अगरचे कुछ फ़ायदे भी हैं। इसके बाद हुक्म आया कि अगर शराब के नशे में हो तो नमाज़ के क़रीब मत जाओ। फिर सूरतुल मायदा में आख़री हुक्म आ गया और उसे गन्दा शैतानी काम क़रार देकर फ़रमाया गया: {فَهَلْ أَنْتُمْ مُنْتَهُونَ} “तो क्या अब भी बाज़ आते हो या नहीं?” इस तरह तदरीजन (क्रमानुसार) अहकाम आये और आख़री हुक्म में शराब हाराम कर दी गयी। यहाँ फ़रमाया कि अगर हम किसी हुक्म को मंसूख करते हैं या उसे भुला देते हैं तो उससे बेहतर ले आते हैं या कम अज़ कम उस जैसा दूसरा हुक्म ले आते हैं। इसलिये कि अल्लाह तआला क़ादिर मुतलक़ है, उसका इख़्तियार कामिल है, वह मालिकुल मुल्क है, दीन उसका है, उसमें वह जिस तरह चाहे तब्दीली कर सकता है।

आयत 107

“क्या तुम नहीं जानते कि अल्लाह ही के लिये बादशाही है आसमानों की और ज़मीन की?”

أَلَمْ تَعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ لَهُ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ
وَالْأَرْضِ

“और नहीं है तुम्हारे लिये अल्लाह के सिवा कोई भी हिमायती और ना कोई मददगार।”

وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ۝

आयत 108

“क्या तुम मुस्लमान भी यह चाहते हो कि सवालात (और मुतालबे) करो अपने रसूल ﷺ से उसी तरह जैसे इससे पहले मूसा अलैहिस्सलाम से किये जा चुके हैं?”

أَمْ تُرِيدُونَ أَنْ تَسْأَلُوا رَسُولَكُمْ كَمَا سَأَلِ
مُوسَى مِنْ قَبْلُ

मसलन उनसे कहा गया कि हम आपकी बात नहीं मानेंगे जब तक कि अल्लाह को अपनी आँखों से ना देख लें। इसी तरह के और बहुत से मुतालबे (माँग) हज़रत मूसा अलै० से किये जाते थे। यहाँ मुस्लमानों को आगाह किया जा रहा

है कि उस रविश से बाज़ रहो, ऐसी बात तुम्हारे अन्दर पैदा नहीं होनी चाहिये।

“और जो कोई ईमान के बदले कुफ़्र ले लेगा
वह तो भटक चुका सीधी राह से।”
سَوَاءَ السَّبِيلِ ۝

ज़ाहिर है कि जो मुनाफ़िक़ीन अहले ईमान की सफ़ों में शामिल थे वही ऐसी हरकतें कर रहे होंगे। इसलिये फ़रमाया कि जो कोई ईमान को हाथ से देकर कुफ़्र को इख़्तियार कर लेगा वह तो रहे रास्त से भटक गया। मुनाफ़िक़ का मामला दो तरफ़ा होता है, चुनाँचे कुरान हकीम में मुनाफ़िक़ीन के लिये “مَذْبُذِينَ بَيْنَ ذَلِكَ” के अल्फ़ाज़ आये हैं। अब इसका भी इस्काण होता है कि वह कुफ़्र की तरफ़ यक्सु हो जाये और इसका भी इस्काण होता है कि बिलआख़िर ईमान की तरफ़ यक्सु हो जाये। जो शख्स ईमान और कुफ़्र के दरमियान मुअल्लिक़ (लटका) है उसके लिये यह दोनों इस्काणानात मुमकिन हैं। जो कुफ़्र की तरफ़ जाकर मुस्तक़िल (स्थायी) तौर पर उधर राग़िब हो गया यहाँ उसका ज़िक़्र है।

आयत 109

“अहले किताब में से बहुत से लोग यह चाहते हैं कि किसी तरह तुम्हें फेर कर तुम्हारे ईमान के बाद तुम्हें फिर काफ़िर बना दें।”
وَذَكِّرْهُمْ مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ لَوْ يُدُّوكُمْ مِّنْ بَعْدِ إِيمَانِكُمْ كُفَّارًا ۝

यह ऐसे ही है जैसे किसी बिल्ली की दुम कट जाये तो वह यह चाहेगी कि सारी बिल्लियों की दुमें कट जायें ताकि वह अलैहदा से नुमाया (प्रतीत) ना रहे। चुनाँचे अहले किताब यह चाहते थे कि अहले ईमान को भी वापस कुफ़्र में ले आया जाये।

“बसबब उनके दिली हसद के”
حَسَدًا مِّنْ عِندِ أَنْفُسِهِمْ

उनका यह तर्ज़े अमल उनके हसद की वजह से है कि यह नेअमत मुस्लमानों को क्यों दे दी गयी?

“इसके बाद कि उन पर हक़ बिल्कुल वाज़ेह हो चुका है।”

مِّنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْحَقُّ

वह हक़ को जान चुके हैं और पहचान चुके हैं, किसी मुग़ालते या ग़लतफ़हमी में नहीं हैं।

“तो (ऐ मुस्लमानों!) तुम माफ़ करते रहो और सफ़े नज़र (बेपरवाही) से काम लो”

فَاعْفُوا وَاصْفَحُوا

यह बहुत अहम मक़ाम है। मुस्लमानों को बावर कराया (दिखाया) जा रहा है कि अभी तो मदनी दौर का आगाज़ हो रहा है, अभी कशमकश, कशाकश और मुकाबला व तसादुम के बड़े सख़्त मराहिल आ रहे हैं। क्योंकि तम्हारा सबसे पहला महाज़ (सामना) कुफ़्रारे मक्का के खिलाफ़ है और वही सबसे बड़ कर तुम पर हमले करेंगे और उनसे तुम्हारी जंगे होंगी, लिहाज़ा यह जो आस्तीन के साँप हैं, यानि यहूद, इनको अभी मत छेड़ो। जब तक यह ख्वाबेदाह (dormant) पड़े रहें इन्हें पड़ा रहने दो। फ़िलहाल इनके तर्ज़े अमल के बारे में ज़्यादा तवज्जो ना दो, बल्कि अफ़व (माफ़ी) व दरगुज़र और चश्मपोशी से काम लेते रहो।

“यहाँ तक कि अल्लाह अपना फ़ैसला ले आये।”

حَتَّى يَأْتِيَ اللَّهُ بِأَمْرٍ ۝

एक वक़्त आयेगा जब ऐ मुस्लमानों तुम्हें आख़री ग़लबा हासिल हो जायेगा और जब तुम बहार के दुश्मनों से निमट लोगे तो फिर इन अंदरूनी दुश्मनों के खिलाफ़ भी तुम्हें आज़ादी दी जायेगी कि इनको भी केफ़र-ए-किरदार तक पहुँचा दो।

“यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।”

إِنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

आयत 110

“और नमाज़ कायम रखो और ज़कात देते रहो।”

وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ

“और जो भलाई भी तुम अपने लिये आगे भेजोगे उसे अल्लाह के यहाँ मौजूद पाओगे।”
وَمَا تُقَدِّمُوا إِلَّا أَنْفُسُكُمْ مِنْ خَيْرٍ يُجَدُّوهُ
عِنْدَ اللَّهِ

जो माल तुम अल्लाह की राह में खर्च कर रहे हो वह अल्लाह के बैंक में जमा हो जाता है और मुसलसल बढ़ता रहता है। लिहाज़ा उसके बारे में फ़िक्र करने की कोई ज़रूरत नहीं।

“यक़ीनन जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उसे देख रहा है।”
إِنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝

आयत 111

“और यह कहते हैं हरगिज़ दाख़िल ना होगा जन्नत में मगर वही जो यहूदी हो या नसरानी हो।”
وَقَالُوا لَنْ يَدْخُلَ الْجَنَّةَ إِلَّا مَنْ كَانَ هُودًا أَوْ

जब यह नयी उम्मत मुस्लिमा तशकील (निर्मित) पा रही थी तो यहूदी और नसरानी, जो एक दूसरे के दुश्मन थे, मुस्लिमानों के मुक़ाबले में जमा हो गये। उन्होंने मिल कर यह कहना शुरू किया कि जन्नत में कोई हरगिज़ नहीं दाख़िल होगा सिवाय उसके जो या तो यहूदी हो या नसरानी हो। इस तरह की मज़हबी जत्थे बन्दियाँ हमारे यहाँ भी बन जाती हैं। मसलन अहले हदीस के मुक़ाबले में बरेलवी और देवबन्दी जमा हो जाएँगे, अगरचे उनका आपस में एक-दूसरे के साथ बैर अपनी जगह है। जब एक मुश्तरका (संयुक्त) दुश्मन नज़र आता है तो फिर वह लोग जिनके अपने अन्दर बड़े इख़्तलाफ़ात होते हैं वह भी एक मुत्तहिदा महाज़ बना लेते हैं। यहूद व नसारा के इस मुश्तरका बयान के जवाब में फ़रमाया:

“यह इनकी तमन्नायें हैं।”
تِلْكَ أَمَانِيُّهُمْ

यह इनकी ख्वाहिशात हैं, मनघडत ख्यालात हैं, खुशनुमा आरज़ुएँ (wishful thinkings) हैं।

“उनसे कहो अपनी दलील पेश करो अगर तुम
قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ۝

(अपने दावे में) सच्चे हो।”

किसी आसमानी किताब से दलील लाओ। कहीं तौरात में लिखा हो या इन्ज़ील में लिखा हो तो हमें दिखा दो! अब यहाँ पर फिर एक अलमगीर सदाक़त (universal truth) बयान हो रही है:

आयत 112

“क्यों नहीं, हर वह शख्स जो अपना चेहरा अल्लाह के सामने झुका दे और वह मोहसिन हो”
بَلَىٰ مَنْ أَسْلَمَ وَجْهَهُ لِلَّهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ

उसका सरे तस्लीम ख़म कर देने (सर झुकाने) का रवैय्या सदाक़ व सच्चाई और हुस्ने किरदार पर मब्री हो। सर का झुकाना मुनाफ़िक़ाना अंदाज़ में ना हो, उसकी इताअत जुज़्वी ना हो कि कुछ माना कुछ नहीं माना।

“तो उसके लिये उसका अज़्र महफ़ूज़ है उसके रब के पास।”
فَلَهُ أَجْرُهُ عِنْدَ رَبِّهِ

“और ऐसे लोगों को ना तो कोई ख़ौफ़ लाहक़ होगा और ना ही वह किसी हुज़्न (शोक) व मलाल से दो-चार होंगे।”
وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝

यह दूसरी आयत है कि जिससे कुछ लोगों ने इस्तेदाल किया है कि निजाते उखरवी के लिये ईमान बिरिसालत ज़रूरी नहीं है। इसका जवाब पहले अज़्र किया जा चुका है। मुख़्तसरन यह कि:

अब्बलन- कुरान हकीम में हर मक़ाम पर सारी चीज़ें बयान नहीं की जाती। कोई शय एक जगह बयान की गयी है तो कोई कहीं दूसरी जगह बयान की गयी है। इससे हिदायत हासिल करनी है तो इसको पूरे का पूरा एक किताब की हैसियत से लेना होगा।

सानियन- यह सारा सिलसिला-ए-कलाम दो ब्रेकिटों के दरमियान आ रहा है और इससे पहले यह अल्फ़ाज़ वाज़ेह तौर पर आ चुके हैं: {وَأَمِنُوا بِمَا آتَيْنَا مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ وَلَا تَكُونُوا أَوَّلَ كَافِرٍ بِهِ} (आयत:41) चुनाँचे यह इबारत ज़र्ब खा रही है इस पूरे के पूरे सिलसिला-ए-मज़ामीन से जो इन दो ब्रेकिटों के

दरमियान आ रहा है।

आयात 113 से 123 तक

وَقَالَتِ الْيَهُودُ لَيْسَتِ النَّصْرَىٰ عَلَىٰ شَيْءٍ وَقَالَتِ النَّصْرَىٰ لَيْسَتِ الْيَهُودُ عَلَىٰ شَيْءٍ وَهُمْ يَتْلُونَ الْكِتَابَ ۚ كَذَلِكَ قَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ مِثْلَ قَوْلِهِمْ ۚ قَالَ اللَّهُ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيَمَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ۝ وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسْجِدَ اللَّهِ أَنْ يُذْكَرَ فِيهَا اسْمُهُ وَسَعَىٰ فِي خَرَابِهَا ۚ أُولَٰئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ أَنْ يَدْخُلُوهَا إِلَّا خَائِفِينَ لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ ۚ وَلَهُمْ فِي الْآخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيمٌ ۝ وَلِلَّهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ فَأَيْنَمَا تُولَّوْا فَوَجْهُ اللَّهِ إِنَّ اللَّهَ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ۝ وَقَالُوا اتَّخَذَ اللَّهُ وَلَدًا سُبْحَنَهُ بَلْ لَهُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ كُلُّ لَّهُ قُنُوتٌ ۝ بَدِيعَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَإِذَا قَضَىٰ أَمْرًا فَإِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ۝ وَقَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ لَوْلَا يُكَلِّمُنَا اللَّهُ أَوْ تَأْتِينَا آيَةٌ كَذَلِكَ قَالَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ مِثْلَ قَوْلِهِمْ تَشَابَهَتْ قُلُوبُهُمْ قَدْ بَيَّنَّا الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يُوقِنُونَ ۝ إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ بِالْحَقِّ بَشِيرًا وَنَذِيرًا وَلَا تُسْأَلُ عَنْ أَصْحَابِ الْجَحِيمِ ۝ وَلَنْ تَرْضَىٰ عَنْكَ الْيَهُودُ وَلَا النَّصْرَىٰ حَتَّىٰ تَتَّبِعَ مَلَّتَهُمْ قُلْ إِنَّ هُدَىٰ اللَّهِ هُوَ الْهُدَىٰ وَلَئِنْ اتَّبَعْتَ أَهْوَاءَهُمْ بَعْدَ الَّذِي جَاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ مَا لَكَ مِنَ اللَّهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ۝ الَّذِينَ اتَّبَعْتَهُمْ يَتْلُونَهُ حَقِّ تِلَاوَةٍ أُولَٰئِكَ يُؤْمِنُونَ بِهِ وَمَنْ يَكْفُرْ بِهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْخٰسِرُونَ ۝ يٰٓيَبْنَٰىٓ اِسْرٰٓءٰىلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِىَ الَّتِىْ اَنْعَمْتُ عَلٰىكُمْ وَاَنْىِٕ فَضَلْتُكُمْ عَلَى الْعٰلَمِیْنَ ۝ وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِى نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا عَدْلٌ وَلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ ۝

आयत 113

“यहूदी कहते हैं कि नसारा किसी बुनियाद पर नहीं हैं”

وَقَالَتِ الْيَهُودُ لَيْسَتِ النَّصْرَىٰ عَلَىٰ شَيْءٍ

उनकी कोई हैसियत नहीं है, कोई जड़ बुनियाद नहीं है।

“और नसारा कहते हैं कि यहूद किसी बुनियाद पर नहीं हैं”

उनकी कोई बुनियाद नहीं है, यह बेबुनियाद लोग हैं, इनकी कोई हकीकत नहीं है।

“हालांकि दोनों ही किताब पढ़ रहे हैं”

وَهُمْ يَتْلُونَ الْكِتَابَ

अहदनामा-ए-कदीम (Old Testament) यहूदियों और ईसाईयों में मुश्तरक (common) है। यह बहुत अहम नुक्ता है और अमेरिका में जदीद ईसाइयत की सूरत में एक बहुत बड़ी ताकत जो उभर रही है वह ईसाइयत को यहूदियत के रंग में रंग रही है। रोमन कैथोलिक मज़हब ने तो बाइबल से अपना रिश्ता तोड़ लिया था और सारा इख्तियार पॉप के हाथ में आ गया था, लेकिन प्रोटेस्टेन्ट्स (Protestants) ने फिर बाइबल को कुबूल किया। अब इसकी मन्तक्री (logical) इन्तहा यह है कि अहदनामा-ए-कदीम पर भी उनकी तबज्जो हो रही है और वह कह रहे हैं कि इसे भी हम अपनी किताब मानते हैं और इसमें जो कुछ लिखा है उसे हम नज़र अंदाज़ नहीं कर सकते। अमेरिका में हमने एक सेमिनार मुनअक्रिद (आयोजित) किया था, जिसमें एक यहूदी आलिम ने कहा था कि इस वक़्त इसराइल को सबसे बड़ी नुसरत व हिमायत अमेरिका के उन ईसाईयों से मिल रही है जो Evengelists कहलाते हैं और वहाँ पर एक बड़ा फ़िरका बन कर उभर रहे हैं। बहरहाल यह उनका तर्ज़ अमल बयान हुआ है।

“इसी तरह कही थी उन लोगों ने जो कुछ भी नहीं जानते, इन्हीं की सी बात।”

यहाँ इशारा है मुशरिकीने मक्का की तरफ़।

“पस अल्लाह तआला फ़ैसला कर देगा इनके माबैन क़यामत के दिन उन तमाम बातों का जिनमें यह इख्तिलाफ़ कर रहे थे।”

فَاللَّهُ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيَمَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ۝

अब देखिये इस सिलसिला-ए-कलाम की बक्रिया आयात में भी अगरचे ख़िताब तो बनी इसराइल ही से है, लेकिन अब यहाँ पर अहले मक्का से कुछ

ताअरीज़ (लड़ाई) शुरू हो गयी है। इसके बाद हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का तज़क़िरा आयेगा, फिर तहवीले क़िब्ला का ज़िक्र आयेगा। बैतुल्लाह चूँकि उस वक़्त मुशरिकीने मक्का के कब्ज़े में था, लिहाज़ा इस हवाले से कुछ मुताल्लिका (सम्बन्धित) मज़ामीन आ रहे हैं और तहवीले क़िब्ला की तम्हीद बाँधी जा रही है। “तहवीले क़िब्ला” दरअसल इस बात की अलामत थी कि अब वह साबक़ा उम्मत मुस्लिमा माज़ूल की जा रही है और इस मक़ाम पर एक नयी उम्मत, उम्मत मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم की तक्ररी (नियुक्ति) अमल में लायी जा रही है। इस हवाले से { كَذَلِكَ قَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ مِثْلَ قَوْلِهِمْ } के अल्फ़ाज़ में मुशरिकीने मक्का की तरफ़ इशारा किया गया।

आयत 114

“और उस शख्स से बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह तआला की मस्जिदों से (लोगों को) रोके कि उनमें उसका नाम लिया जाये?”

وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ مَنَعَ مَسْجِدَ اللَّهِ أَنْ يُذْكَرَ فِيهَا اسْمُهُ

मुशरिकीने मक्का ने मुस्लिमानों को मस्जिदे हराम में हाज़री से महरूम कर दिया था और उनको वहाँ जाने की इजाज़त ना थी। 6 हिजरी में रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने सहाबा किराम रज़िअल्लाहुअन्हुम के हमराह उमरे के इरादे से मक्का का सफ़र फ़रमाया, लेकिन मुशरिकीने आप صلی اللہ علیہ وسلم और आप صلی اللہ علیہ وسلم के साथियों को मक्का में दाखिल होने की इजाज़त नहीं दी। इस मौक़े पर सुलह हुदैबिया हुई और आप صلی اللہ علیہ وسلم को उमरा किये बग़ैर वापस आना पड़ा। फिर अगले बरस 7 हिजरी में आप صلی اللہ علیہ وسلم ने सहाबा किराम रज़िअल्लाहुअन्हुम के हमराह उमरा अदा किया। तो यह सात बरस मुहम्मद रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم और अहले ईमान पर बहुत शाक़ (कठिन) गुज़रे हैं। यहाँ मुशरिकीने मक्का के इस जुल्म का ज़िक्र हो रहा है कि उन्होंने अहले ईमान को मस्जिदे हराम से रोक रखा है।

“और वह उनकी तख़रीब के दर पे हो?”

وَسُئِلَ فِي خَرَابِهَا

ख़राब और तख़रीब का माद्दाये असली एक ही है। तख़रीब दो तरह की होती है। एक ज़ाहिरी तख़रीब कि मस्जिद को गिरा देना, और एक बातिनी और

मानवी (सचमुच) तख़रीब कि अल्लाह के घर को तौहीद के बजाये शिर्क का अड्डा बना देना। मुशरिकीने मक्का ने बैतुल्लाह को बुतकदा बना दिया था:

दुनिया के बुतकदों में पहला वह घर खुदा का

हम उसके पासबाँ हैं वह पासबाँ हमारा!

खाना-ए-काबा में 360 बुत रख दिये गये थे, जिसे इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने तौहीदे खालिस के लिये तामीर किया था। मसाजिद के साथ लफ़ज़ “ख़राब” एक हदीस में भी आया है। यह बड़ी दिलदोज़ हदीस है और मैं चाहता हूँ कि आप इसे ज़हन नशीन कर लें। हज़रत अली रज़िअल्लाहुअन्हु से रिवायत है कि रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया:

يُوشِكُ أَنْ يَأْتِيَ عَلَى النَّاسِ زَمَانٌ

“अंदेशा है कि लोगों पर (यानि मेरी उम्मत पर) एक ज़माना ऐसा भी आयेगा कि”

لَا يَبْقَى مِنَ الْإِسْلَامِ إِلَّا اسْمُهُ

“इस्लाम में से इसके नाम के सिवा कुछ नहीं बचेगा”

وَلَا يَبْقَى مِنَ الْقُرْآنِ إِلَّا رُسْمُهُ

“और कुरान में से इसके रस्मुल ख़त (अल्फ़ाज़ और हुरूफ़) के सिवा कुछ नहीं बचेगा।”

अल्लाह तआला ने इसी की ज़मानत दी है कि कुरान हकीम के अल्फ़ाज़ व हुरूफ़ मन व अन महफूज़ रहेंगे।

مَسَاجِدُهُمْ عَامِرَةٌ وَهِيَ خَرَابٌ مِنَ الْهُدَى

“उनकी मस्जिदें आबाद तो बहुत होंगी लेकिन हिदायत से खाली हो जाएँगी।”

यहाँ भी लफ़ज़ “ख़राब” नोट कीजिये। गोया मानवी ऐतबार से यह वीरान हो जाएँगी।

عُلَمَاؤُهُمْ شَرٌّ مَنْ تَحْتَ أَوْدِيمِ السَّمَاءِ

“उनके उलमा आसमान की छत के नीचे के बदतरीन इन्सान होंगे।”

مِنْ عِنْدِهِمْ تَخْرُجُ الْفِتْنَةُ وَفِيهِمْ تَعُودُ (13)

“फितना उन्हीं के अन्दर से बरामद होगा और उन्हीं में घुस जायेगा।”

यानि उनका काम ही फ़ितना अन्जेज़ी, मुखालफ़त और जंग व जिदाल होगा। अपने-अपने फ़िरके के लोगों के जज़्बात को भड़काते रहना और मुस्लिमानों के अन्दर इख़्तलाफ़ात को हवा देना ही उनका काम रह जायेगा।

आज जिनको हम उलमा कहते हैं उनकी अज़ीम अक्सरियत इस कैफ़ियत से दो-चार हो चुकी है। जब मज़हब और दीन पेशा बन जाये तो उसमें कोई ख़ैर बाक़ी नहीं रहता। दीन और मज़हब पेशा नहीं था, लेकिन इसे पेशा बना लिया गया। इस्लाम में कोई पेशवाइयत नहीं, कोई पापाइयत नहीं, कोई ब्रह्मनियत नहीं। इस्लाम तो एक खुली किताब की मानिंद हैं। हर शख्स किताबुल्लाह पढ़े, हर शख्स अरबी सीखे और किताबुल्लाह को समझे। हर शख्स को इबादात के काबिल होना चाहिये। हर शख्स अपनी बच्ची का निकाह खुद पढ़ाये, अपने वालिद का जनाज़ा खुद पढ़ाये। हमने खुद इसे पेशा बना दिया है और इबादात के मामले में एक ख़ास तबके के मोहताज हो गये हैं। मिर्ज़ा ग़ालिब ने कहा था:

पेशे में ऐब नहीं, रखिये ना फ़रहाद को नाम!

एक चीज़ जब पेशा बन जाती है तो उसमें पेशा वाराणा चश्मके और रक्बावें दर आती हैं। लेकिन साथ ही यह बात वाज़ेह रहे कि दुनिया कभी उल्माये हक़ से खाली नहीं होगी। चुनाँचे यहाँ उल्माये हक़ भी हैं और उल्माये सू भी हैं, लेकिन हक़ीक़त यह है कि उनकी अक्सरियत का हाल वही हो चुका है जो हदीस में बयान हुआ है, वरना उम्मत का यूँ बेड़ा ग़र्क़ ना होता।

“ऐसे लोगों को तो उनमें दाख़िल ही नहीं होना चाहिये मगर डरते हुए।”
أُولَٰئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ أَنْ يَدْخُلُوهَا إِلَّا خَائِفِينَ

इन लोगों को लायक़ नहीं है कि अल्लाह की मस्जिदों में दाख़िल हों, यह अगर वहाँ जायें भी तो डरते हुए जायें।

“उनके लिये दुनिया में भी ज़िल्लत व रुसवाई है”
لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ

“और आख़िरत में उनके लिये अज़ाबे अज़ीम है।”
وَلَهُمْ فِي الْآخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيمٌ ⑩

अगली आयत में तहवीले क़िब्ला के लिये तम्हीद (प्रस्तावना) बाँधी जा रही है। क़िब्ले की तब्दीली बड़ा हस्सास (संवेदनशील) मामला था। जिन लोगों को येरुशलम और बैतुलमक़दस के साथ दिलचस्पी थी उनके दिलों में उसकी अक़ीदत जागज़ी (विरासत में प्राप्त) थी, जबकि मक्का मुकर्रमा और बैतुल्लाह के साथ जिनको दिलचस्पी थी उनके दिलों में उसकी मोहब्बत व अक़ीदत थी। तो इस हवाले से क़िब्ले की तब्दीली कोई मामूली बात ना थी। हिज़रत के बाद क़िब्ला दो दफ़ा बदला है। मक्का मुकर्रमा में मुस्लिमानों का क़िब्ला बैतुल्लाह था। मदीने में आकर रसूल अल्लाह ﷺ ने सौलह महीने तक बैतुलमक़दस की तरफ़ रुख करके नमाज़ पढ़ी और फिर बैतुल्लाह की तरफ़ नमाज़ पढ़ने का हुक्म आया। इस तरह अहले ईमान के कई इम्तिहान हो गये, उनका ज़िक्र आगे आ जायेगा। लेकिन यहाँ उसकी तम्हीद बयान हो रही है। फ़रमाया:

आयत 115

“और मशरिक् और मगरिब सब अल्लाह के हैं”
وَاللَّهُ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ

यानि अगर हम मगरिब की तरफ़ रुख करते हैं तो इसके मायने यह नहीं हैं कि अल्लाह मगरिब में है (मआज़ अल्लाह)। अल्लाह तो जोहत (दिशा) और मक़ाम से मा वरा है, वरा उल वरा सुम्मा वरा उल वरा है (High, Higher, Highest)। यह तो यक्सानियत (समानता) पैदा करने के लिये और इज्तमाई रंग देने के लिये एक चीज़ को क़िब्ला बना दिया गया है। यह तो एक अलामत है। ग़ालिब ने क्या खूब कहा है:

*है परे सरहद इदराक से अपना मसजूद
क़िब्ले को अहले नज़र क़िब्ला नुमा कहते हैं!*

क़िब्ला हमारा मसजूद तो नहीं है!

“पस जिधर भी तुम रुख करोगे उधर ही अल्लाह का रुख है।”
فَآيَنَمَا تَوَلَّوْا فَجْهَ اللَّهِ

“यक़ीनन अल्लाह बहुत वुसअत (विस्तार) वाला, सब कुछ जानने वाला है।”
إِنَّ اللَّهَ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ⑪

वह बहुत वुसअत वाला है, वह किसी भी सिम्त में महदूद नहीं है, और हर शय का जानने वाला है।

तहवीले क्रिब्ला की तम्हीद के तौर पर एक आयत कह कर अब फिर असल सिलसिला-ए-कलाम जोड़ा जा रहा है:

आयत 116

“और इन (में वह भी हैं जिन) का क़ौल है कि अल्लाह ने किसी को बेटा बनाया है। वह तो इन बातों से पाक है।”

وَقَالُوا اتَّخَذَ اللَّهُ وَلَدًا سُبْحَنَهُ

ज़ाहिर बात है यहाँ फिर अहले मक्का ही की तरफ़ इशारा हो रहा है जिनका यह क़ौल था कि अल्लाह ने अपने लिये औलाद इख्तियार की है। वह कहते थे कि फ़रिश्ते अल्लाह की बेटियाँ हैं। नसारा कहते थे कि मसीह अलैहिस्सलाम अल्लाह के बेटे हैं, और यहूदियों का भी एक गिरोह ऐसा था जो हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम को अल्लाह का बेटा कहता था।

“बल्कि आसमानों और ज़मीन में जो कुछ है उसी की मिलकियत है।”

بَلْ لَهُ مَا فِي السَّمُوتِ وَالْأَرْضِ

सब मख़्लूक और ममलूक हैं, खालिक और मालिक सिर्फ़ वह है।

“सबके सब उसी के मुतीअ फ़रमान हैं।”

كُلُّ لَهٗ قَنِينٌ ۝

बड़े से बड़ा रसूल हो या बड़े से बड़ा वली या बड़े से बड़ा फ़रिश्ता या बड़े बड़े अजरामे समाविया (खगोलीय पिंड), सब उसी के हुक्म के पाबन्द हैं।

आयत 117

“वह नया पैदा करने वाला है आसमानों और ज़मीन का।”

بَدِيعُ السَّمُوتِ وَالْأَرْضِ

वह बगैर किसी शय के आसमानों और ज़मीन को पैदा करने वाला है। “ابّاع” और “خلق” में फ़र्क़ नोट कीजिये। शाह वलीउल्लाह देहलवी रहीमुल्लाह ने हुज्जतुल्लाह अलबाल्गा के पहले बाब में लिखा है कि अल्लाह तआला के

अफ़आल बुनियादी तौर पर तीन हैं: इब्दाअ, खल्क और तदबीर। इब्दाअ से मुराद है अदम-ए-महज़ से किसी चीज़ को वजूद में लाना, जिसे अंग्रेज़ी में “creation ex nihilo” से ताबीर किया जाता है। जबकि खल्क एक चीज़ से दूसरी चीज़ का बनाना है, जैसे अल्लाह तआला ने गारे से इन्सान बनाया, आग से जिन्नात बनाये और नूर से फ़रिश्ते बनाये, यह तखलीक है। तो “بَدِيعُ” वह ज़ात है जिसने किसी माद्दा-ए-तखलीक के बगैर एक नयी कायनात पैदा फ़रमा दी। हमारे यहाँ “बिदअत” वह शय कहलाती है जो दीन में नहीं थी और ख्वाह माख्वाह लाकर शामिल कर दी गयी। जिस बात की जड़ बुनियाद दीन में नहीं है वह बिदअत है।

“और जब वह किसी मामले का फ़ैसला कर लेता है तो उससे बस यही कहता है कि हो जा और वह हो जाता है।”

وَإِذَا قَضَىٰ أَمْرًا فَإِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ۝

۝

आयत 118

“और कहा उन लोगों ने जो इल्म नहीं रखते”

وَقَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ

यहाँ पर मुशरिकीने मक्का की तरफ़ रूए सुखन है।

“क्यों नहीं बात करता हमसे अल्लाह या क्यों नहीं आ जाती हमारे पास कोई निशानी?”

لَوْلَا يُكَلِّمُنَا اللَّهُ أَوْ تَأْتِينَا آيَةٌ

मुशरिकीने मक्का का रसूल अल्लाह ﷺ से बड़ी शिद्दत के साथ यह मुतालबा था कि आप कोई ऐसे मौज़्जात ही दिखा दें जैसे आप कहते हैं कि ईसा अलैहिस्सलाम ने दिखाये थे या मूसा अलैहिस्सलाम ने दिखाये थे। अगर आप हमारे यह मुतालबे पूरे कर दें तो हम आपको अल्लाह का रसूल मान लेंगे। यह मज़मून तफ़सील के साथ सूरतुल अनआम में और फिर सूरह बनी इसराइल में आयेगा।

“इसी तरह की बातें जो लोग इनसे पहले थे वह भी कहते रहे हैं।”

كَذَلِكَ قَالَ الَّذِينَ مِن قَبْلِهِمْ مِثْلَ قَوْلِهِمْ

“इनके दिल एक-दूसरे से मुशाबेह हो गये हैं।”

تَشَابَهَتْ قُلُوبُهُمْ

“हम तो अपनी आयात वाज़ेह कर चुके हैं उन लोगों के लिये जो यकीन करना चाहें।”

قَدْ بَيَّنَّا الْآيَاتِ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿١٥﴾

आयत 119

“(ऐ नबी ﷺ) बेशक हमने आपको भेजा है हक़ के साथ बशीर और नज़ीर बना कर”

إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ بِالْحَقِّ بَشِيرًا وَنَذِيرًا ﴿١٦﴾

आप ﷺ की बुनियादी हैसियत यह है कि आप ﷺ अहले हक़ को जन्नत और उसकी तमाम तर नेअमतों की बशारत दें, और जो गलत रास्ते पर चल पड़ें, कुफ़्र करें, मुनाफ़क़त में मुब्तला हों, मुल्हिद (नास्तिक) हों और बदअमली करें उनको आप ﷺ ख़बरदार कर दें कि उनके लिये जहन्नम तैयार कर दी गयी है। आप ﷺ का काम दावत, इब्लाग, तब्लीग और नसीहत है।

“और आप ﷺ से सवाल नहीं किया जायेगा जहन्नमियों के बारे में।”

وَلَا تُسْأَلُ عَنْ أَصْحَابِ الْجَنَّةِ ﴿١٧﴾

जो लोग अपने तर्ज़े अमल की बिना पर जहन्नम के मुस्तहिक़ (हक़दार) करार पा गये हैं उनके बारे में आप ﷺ ज़िम्मेदार नहीं हैं। आप ﷺ से यह नहीं पूछा जायेगा कि यह क्यों जहन्नम में पहुँच गये? आप ﷺ के होते हुए यह जहन्नमी क्यों हो गये? नहीं, यह आप ﷺ की ज़िम्मेदारी नहीं है। कौन जन्नत में जाना चाहता है और कौन जहन्नम में, यह आदमी का अपना फ़ैसला है। आप ﷺ का काम हक़ को वाज़ेह कर देना है, इसकी वज़ाहत में कमी ना रह जाये, हक़ वाज़ेह हो जाये, कोई इश्तबाह (गलती) बाक़ी ना रहे, बस यह ज़िम्मेदारी आप ﷺ की है, इससे ज़्यादा नहीं। इन्सान अगर अपनी असल मसूलियत (उत्तरदायित्व) से ज़्यादा ज़िम्मेदारी अपने सर पर डाल ले तो ख़्वाह माख़्वाह मुश्किल में फँस जाता है। हमारे यहाँ की बहुत सी जमातें इसी तरह की गलतियों की वजह से गलत रास्ते पर पड़ गई और पूरी की पूरी तहरीकें बर्बाद हो गई। रसूल अल्लाह ﷺ चाहते थे कि किसी तरह यह उल्माये यहूद ईमान ले आयें और जहन्नम का ईधन ना बनें। उनके लिये आप ﷺ ने अल्लाह के हुज़ूर दुआएँ की होगी। जैसे मक्की दौर में आप ﷺ दुआएँ माँगते थे कि ऐ अल्लाह! उमर बिन हिशाम और उमर बिन ख़त्ताब में से

किसी एक को तू मेरी झोली में डाल दे और उसके ज़रिये से इस्लाम को कुव्वत अता फ़रमा!

आयत 120

“और (ऐ नबी ﷺ! आप किसी मुग़ालते में ना रहिये) हरगिज़ राज़ी ना होंगे आप ﷺ से यहूदी और नसरानी जब तक कि आप ﷺ पैरवी ना करें उनकी मिल्लत की।”

وَلَنْ تَرْضَىٰ عَنْكَ الْيَهُودُ وَلَا النَّصَارَىٰ حَتَّىٰ تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ ﴿١٨﴾

लिहाज़ा आप उनसे उम्मीद मुन्क़तअ (अलग) कर लीजिये। इसलिये कि ज़्यादा उम्मीद हो तो फिर मायूसी हो जाती है। इक़बाल ने बंदा-ए-मोमिन के बारे में बहुत खूब कहा है:

उसकी उम्मीदें क़लील, उसके मक्रासिद ज़लील!

मक्रसद ऊँचा हो, लेकिन उम्मीद क़लील (कम) रहनी चाहिये। अल्लाह चाहेगा तो हो जायेगा, नहीं चाहेगा तो नहीं होगा। बंदा-ए-मोमिन का काम अपनी हद तक अपना फ़र्ज़ अदा कर देना है। इससे ज़्यादा की ख़्वाहिश अगर अपने दिल में पालेंगे तो किसी उजलतपसन्दी (जल्दीबाज़ी) में गिरफ़्तार हो जाएँगे और किसी राहे यसीर (आसान) या राहे कसीर (short cut) के ज़रिये मंज़िल तक पहुँचने की कोशिश करेंगे और अपने आपको भी बर्बाद कर लेंगे।

“कह दीजिये हिदायत तो बस अल्लाह की हिदायत है।”

قُلْ إِنَّ هُدَى اللَّهِ هُوَ الْهُدَىٰ ﴿١٩﴾

जो अल्लाह ने बतलाया है वही सीधा रास्ता है।

“और (ऐ नबी ﷺ! अगर आप ﷺ ने इनकी ख़्वाहिशात की पैरवी की उस इल्म के बाद जो आपके पास आ चुका है”

وَلَيْنِ اتَّبَعْتَ أَهْوَاءَهُمْ بَعْدَ الَّذِي جَاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ ﴿٢٠﴾

अगर बफ़र्ज़े महाल (असम्भव मान लीजिये) आप ﷺ ने इनकी ख़्वाहिशात की पैरवी की कि चलो कुछ लो कुछ दो का मामला कर लो, कुछ इनकी बात मानो कुछ अपनी बात मनवा लो, तो यह तर्ज़े अमल अल्लाह तआला के यहाँ क़ाबिले कुबूल ना होगा। मक्का में कुरैश की तरफ़ से इस तरह की पेशकश की जाती थी कि कुछ अपनी बात मनवा लीजिये, कुछ हमारी मान लीजिये,

compromise कर लीजिये, और अब मदीना में यहूद के साथ भी यही मामला था। चुनाँचे इस पर मुतनब्बा किया (ध्यान दिलाया) जा रहा है।

“तो नहीं होगा अल्लाह के मुकाबले में आप ﷺ के लिये कोई मददगार और ना हिमायती।” (माज़ अल्लाह)

हक़ की तलवार बिल्कुल उरियाँ (नग्न) है। अल्लाह का अद्ल हर फ़र्द के लिये अलग नहीं है, यह फ़र्द से फ़र्द तक बदलता नहीं है। ऐसे ही हर क़ौम और हर उम्मत के लिये क़ानून तब्दील नहीं होता। ऐसा नहीं है कि किसी एक क़ौम से कोई एक मामला हो और दूसरी क़ौम से कोई दूसरा मामला। अल्लाह के उसूल और क़वानीन गैर मुबद्दल हैं। इस ज़िम्न में इसकी एक सुन्नत है जिसके बारे में फ़रमाया: { فَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّةِ اللَّهِ تَبْدِيلًا وَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّةِ اللَّهِ تَحْوِيلًا } (फ़ातिर) “पस तुम अल्लाह के तरीक़े में हरगिज़ कोई तब्दीली ना पाओगे, और तुम अल्लाह के तरीक़े को हरगिज़ टलता हुआ नहीं पाओगे।”

आयत 121

“वह लोग जिन्हें हमने किताब दी है वह उसकी तिलावत करते हैं जैसा कि उसकी तिलावत का हक़ है।”

इस पर मैंने अपने किताबचे “मुस्लिमानों पर कुरान मजीद के हुक्क” में बहस की है कि तिलावत का असल हक़ क्या है। एक बात जान लीजिये कि तिलावत का लफ़्ज़, जो कुरान ने अपने लिये इख़्तियार किया है, बड़ा ज़ामेअ लफ़्ज़ है। “تَلَا يَتْلُو” का मायना पढ़ना भी है और “تَلَا يَتْلُو” किसी के पीछे-पीछे चलने (to follow) को भी कहते हैं। सुरतुशशम्स की पहली दो आयात मुलाहिज़ा कीजिये:

“क़सम है सूरज की और उसकी धूप की। और क़सम है चाँद की जब वह उसके पीछे आता है।” وَالشَّمْسِ وَضُحَاهَا ۝ وَالْقَمَرِ إِذَا تَلَّهَا

जब आप कोई किताब पढ़ते हैं तो आप उसके मतन (text) के पीछे-पीछे चल रहे होते हैं। चुनाँचे बाज़ लोग जो ज़्यादा माहिर नहीं होते, किताब पढ़ते हुए

अपनी ऊँगली साथ-साथ चलाते हैं ताकि निगाह इधर से उधर ना हो जाये, एक सतर (लाइन) से दूसरी सतर पर ना पहुँच जाये। अल्लाह तआला की तरफ से नाज़िल करदा किताब की तिलावत का असल हक़ यह होगा कि आप इस किताब को follow करें, इसे अपना इमाम बनायें, इसके पीछे चलें, इसका इत्तेबाअ (पालन) करें, इसकी पैरवी (अनुसरण) करें, जिसकी हम दुआ करते हैं: “وَاجْعَلْهُ لِي إِمَامًا وَتَوْفِيرًا وَهُدًى وَرَحْمَةً” और इसे मेरे लिये इमाम और रोशनी और हिदायत और रहमत बना दे!” अल्लाह तआला इस कुरान को हमारा इमाम उसी वक़्त बनायेगा जब हम फ़ैसला कर लें कि हम इस किताब के पीछे चलेंगे।

“वही हैं जो इस पर ईमान रखते हैं।”

أُولَٰئِكَ يُؤْمِنُونَ ۖ

यानि जो अल्लाह की किताब की तिलावत का हक़ अदा करें और उसकी पैरवी भी करें। और जो ना तो तिलावत का हक़ अदा करें और ना किताब की पैरवी करें, लेकिन वह दावा करें कि हमारा ईमान है इस किताब पर तो यह दावा झूठा है। अज़रूए हदीसे नबवी ﷺ ((مَا آمَنَ بِالْقُرْآنِ مَنِ اسْتَحْلَ حَرَامَهُ)) (14) “जिस शख्स ने कुरान की हराम करदा चीज़ों को अपने लिये हलाल कर लिया उसका कुरान पर कोई ईमान नहीं है।”

“और जो इसका कुफ़्र करेगा तो वही लोग हैं وَمَنْ يَكْفُرْ بِهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ۖ” खसारे में रहने वाले।”

अब यहूद के साथ इस सिलसिला-ए-कलाम का इख़तताम (अंत) हो रहा है जिसका आगाज़ छठे रुकूअ से हुआ था। इस सिलसिला-ए-कलाम के आगाज़ में जो दो आयात आयी थीं उन्हें मैंने ब्रेकेट से ताबीर किया था। वही दो आयात यहाँ दोबारा आ रही हैं और इस तरह गोया ब्रेकेट बंद हो रही है। फ़रमाया:

आयत 122

“ऐ औलादे याकूब! याद करो मेरे उस ईनाम को जो मैंने तुम पर किया, और यह कि मैंने तुम्हें फ़ज़ीलत दी थी अहले आलम पर।”

يٰٓبَنِي إِسْرَءِيلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِي أَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَأَنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ ۝

यह आयत बैन ही इन अल्फ़ाज़ में छठे रुकूअ के आगाज़ में आ चुकी है। (आयत 47) दूसरी आयत भी ज्यों की त्यों आ रही है, सिर्फ़ अल्फ़ाज़ की तरतीब थोड़ी सी बदली है। इबारात के शुरू और आखिर वाली ब्रेकेट्स एक दूसरे का अक्स (mirror) होती हैं। एक की गोलाई दायीं तरफ़ होती है तो दूसरी की बायीं तरफ़। इसी तरह यहाँ दूसरी आयत की तरतीब दरमियान से थोड़ी सी बदल दी गयी है। फ़रमाया:

आयत 123

“और डरो उस दिन से कि जिस दिन कोई जान किसी दूसरी जान के कुछ भी काम ना आ सकेगी”

وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِي نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا

“और ना उससे कोई फ़िदया कुबूल किया जायेगा”

وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا عَدْلٌ

वहाँ अल्फ़ाज़ थे {وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا شَفَاعَةٌ} “और ना उसे कोई सिफ़ारिश कुबूल की जायेगी।”

“और ना उसे कोई सिफ़ारिश ही फ़ायदा दे सकेगी”

وَلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ

यहाँ अद्ल पहले और शफ़ाअत बाद में है, वहाँ शफ़ाअत पहले है और अद्ल बाद में। बस यही एक तब्दीली है।

“और ना उन्हें कोई मदद मिल सकेगी।”

وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ۝

यह टुकड़ा भी ज्यों का त्यों वही है जिस पर छठे रुकूअ की दूसरी आयत ख़त्म हुई थी।

आयात 124 से 129 तक

وَإِذْ ابْتَلَىٰ إِبْرَاهِيمَ رَبُّهُ بِكَلِمَاتٍ فَأَتَتْهُنَّ قَالَ إِنِّي جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ إِمَامًا قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِي قَالَ لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِمِينَ ۝ وَإِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَثَابَةً لِّلنَّاسِ وَأَمْنًا

وَاتَّخِذُوا مِن مَّقَامِ إِبْرَاهِيمَ مُصَلًّى وَعَهِدْنَا إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ أَنَّ طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّائِفِينَ وَالْعَاكِفِينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ ۝ وَإِذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّ اجْعَلْ هَذَا بَلَدًا آمِنًا وَارْزُقْ أَهْلَهُ مِنَ الثَّمَرَاتِ مَنْ آمَنَ مِنْهُمْ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ قَالَ وَمَنْ كَفَرَ فَأُمَتِّعُهُ قَلِيلًا ثُمَّ أَضْطَرُّهُ إِلَىٰ عَذَابِ النَّارِ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ۝ وَإِذْ يَرْفَعُ إِبْرَاهِيمُ الْقَوَاعِدَ مِنَ الْبَيْتِ وَإِسْمَاعِيلُ رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا إِنَّكَ أَنْتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ۝ رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَا أُمَّةً مُّسْلِمَةً لَّكَ وَأَرِنَا مَنَاسِكَنَا وَتُبْ عَلَيْنَا إِنَّكَ أَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ۝ رَبَّنَا وَابْعَثْ فِيهِمْ رَسُولًا مِّنْهُمْ يَتْلُو عَلَيْهِمْ آيَاتِكَ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَيُزَكِّيهِمْ إِنَّكَ أَنْتَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ۝

सूरतुल बक्ररह के इब्तदाई अट्टारह रुकूओं में हुए सुखन मज्मुई तौर पर साबका उम्मत मुस्लिमा यानि बनी इसराइल की जानिब है। इब्तदाई चार रुकूअ अगरचे उमूमी नौइयत के हामिल हैं, लेकिन उनमें भी यहूद की तरफ़ हुए सुखन के इशारे मौजूद हैं। चौथे रुकूअ के आगाज़ से पंद्रहवे रुकूअ की इब्तदाई दो आयात तक, इन दस रुकूओं में सारी गुफ्तगू सराहत के साथ (विशेष रूप से) बनी इसराइल ही से है, इल्ला यह कि एक जहग अहले ईमान से खिताब किया गया और कुछ मुशरिकीने मक्का का भी तारीज़ के असलूब में तज़किरा हो गया।

इसके बाद अब हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का ज़िक्र शुरू हो रहा है। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की नस्ल से बनी इस्माइल और बनी इसराइल दो शाखें हैं। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की ज़ौजा मोहतरमा हज़रत हाजरा से हज़रत इस्माइल अलैहिस्सलाम पैदा हुए, जो बड़े थे, जबकि दूसरी बीवी हज़रत सारा से इसहाक़ अलैहिस्सलाम पैदा हुए। उनके बेटे याक़ूब अलैहिस्सलाम थे, जिनका लक़ब इसराइल था। उनके बारह बेटों से बनी इसराइल के बारह क़बीले वजूद में आये। हज़रत इस्माइल अलैहिस्सलाम को हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने खाना काबा के पास, वादी-ए-ग़ैर ज़ी ज़रअ (बंज़र ज़मीन) में आबाद किया था, जिनसे एक नस्ल बनी इस्माइल चली। हज़रत इब्राहीम अलै० के बाद नबुवत हज़रत इस्माइल अलै० को तो मिली,

लेकिन उसके बाद तक्ररीबन तीन हज़ार साल का फ़ासला है कि इस शाख में कोई नबुवत नहीं आई। नबुवत का सिलसिला दूसरी शाख में चला। हज़रत इसहाक के बेटे हज़रत याक़ूब और उनके बेटे हज़रत युसुफ़ अलैहिस्सलाम सब नबी थे। फिर हज़रत मूसा और हज़रत हारून अलैहिस्सलाम से शुरू होकर हज़रत ईसा और हज़रत याहया अलैहिस्सलाम तक चौदह सौ बरस मुसलसल ऐसे हैं कि बनी इसराइल में नबुवत का तार टूटा ही नहीं। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की नस्ल से एक तीसरी शाख बनी क़तूरा भी थी। यह आप अलैहिस्सलाम की तीसरी अहलिया क़तूरा से थी। इन्हीं में से बनी मदन (या बनी मदन) थे, जिनमें हज़रत शोएब अलैहिस्सलाम की बेअसत हुई थी। इस तरह हज़रत शोएब अलैहिस्सलाम भी हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की नस्ल में से हैं।

जैसा कि अर्ज़ किया गया, हज़रत इस्माइल अलैहिस्सलाम के बाद बनी इस्माइल में नबुवत का सिलसिला मुनक़तअ (कटा) रहा। यहाँ तक कि तक्ररीबन तीन हज़ार साल बाद मुहम्मद अरबी صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत हुई। आप صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत के बाद इमामतुन्नास साबका उम्मत मुस्लिमा (बनी इसराइल) से मौजूदा उम्मत मुस्लिमा (उम्मत मुहम्मदी अला साहिबहुमा अस्सलातु वस्सलाम) को मुन्तक़िल हो गयी। इस इन्तेक़ाले इमामत के वक़्त बनी इसराइल से ख़िताब करते हुए उनके और बनी इस्माइल के माबैन क़द्र मुश्तरक (common ground) का तज़क़िरा किया जा रहा है ताकि उनके लिये बात का समझना आसान हो जाये। उन्हें बताया जा रहा है कि तुम्हारे ज़दे अमजद भी इब्राहीम अलैहिस्सलाम ही थे और यह दूसरी नस्ल भी इब्राहीम अलैहिस्सलाम ही की है। इस हवाले से यह समझ लिया जाये कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने खाना काबा की तामीर की थी और अब इसे अहले तौहीद का मरकज़ बनाया जा रहा है, चुनाँचे पंद्रहवें रकूअ से अट्ठाहरवें रकूअ तक यह सारी गुफ्तगू जो हो रही है इसका असल मज़मून “तहवीले क़िब्ला” है।

आयत 124

“और ज़रा याद करो जब इब्राहीम अलै० को आज़माया उसके रब ने बहुत सी बातों में तो

وَإِذْ ابْتَلَىٰ إِبْرَاهِيمَ رَبُّهُ بِكَلِمَاتٍ فَأَتَتْهُنَّ

उसने उन सबको पूरा कर दिखाया।”

“ईद-उल-अज़हा और फ़लसफ़ा-ए-कुरबानी” के उन्वान से हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की शख्सियत पर मेरा एक किताबचा है जो मेरी एक तक्ररीर और एक तहरीर (लेखन) पर मुश्तमिल है। तहरीर का उन्वान है: “हज और ईद-उल-अज़हा और उनकी असल रूह।” अपनी यह तहरीर मुझे बहुत पसंद है। इसमें मैंने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम वस्सलाम के इम्तिहानात और आज़माइशों का ज़िक्र किया है। आप अलैहिस्सलाम के तबील सफ़रे हयात का खुलासा और लुब्बे लुबाब (सार) ही “इम्तिहान व आज़माइश” है, जिसके लिये कुरान की इस्तलाह (मुहावरा) “इबतला” है। इस आयत मुबारका में इनकी पूरी दास्ताने इबतला को चंद अल्फ़ाज़ में समो दिया गया है, और “فَأَتَتْهُنَّ” का लफ़ज़ इन तमाम इम्तिहानात का नतीजा ज़ाहिर कर रहा है कि वह इन सबमें पूरा उतरे, इन सबमें पास हो गये, हर इम्तिहान में नुमाया हैसियत से कामयाबी हासिल की।

“तब फ़रमाया: (ऐ इब्राहीम अलै०!) अब मैं तुम्हें नौए इंसानी का इमाम बनाने वाला हूँ।”

قَالَ إِنِّي جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ إِمَامًا

“उन्होंने कहा: और मेरी औलाद में से भी।”

قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِي

यानि मेरी नस्ल के बारे में भी यह वादा है या नहीं?

“फ़रमाया: मेरा यह अहद ज़ालिमों से मुताल्लिक नहीं होगा।”

قَالَ لَا يَأْتِيكَ عَهْدِي الظَّالِمِينَ ﴿١٢٤﴾

यानि तुम्हारी नस्ल में से जो साहिबे ईमान होंगे, नेक होंगे, सीधे रास्ते पर चलेंगे, उनसे मुताल्लिक हमारा यह वादा है। लेकिन यह अहद नस्लियत की बुनियाद पर नहीं है कि जो भी तुम्हारी नस्ल से हो वह इसका मिस्दाक़ बन जाये।

आयत 125

“और याद करो जब हमने इस घर (बैतुल्लाह) को क़रार दे दिया लोगों के लिये इज्जता

وَإِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَحَابَّةً لِّلنَّاسِ وَآمَنَّا

(और ज़ियारत) की जगह और उसे अमन का घर करार दे दिया।”

“और (हमने हुक्म दिया कि) मक्कामे इब्राहीम अलै० को अपनी नमाज़ पढ़ने की जगह बना लो।”

दौरे जदीद के बाज़ उलमा ने यह कहा है कि मक्कामे इब्राहीम अलैहिस्सलाम से मुराद कोई खास पत्थर नहीं है, बल्कि असल में वह पूरी जगह ही “मक्कामे इब्राहीम” है जहाँ हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम आबाद हुए थे। लेकिन सही बात वही है जो हमारे सलफ़ से चली आ रही है और इसके बारे में पुख्ता रिवायात हैं कि जिस तरह हज़रे अस्वद जन्नत से आया था ऐसे ही यह भी एक पत्थर था जो हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के लिये जन्नत से लाया गया था। खाना काबा की तामीर के दौरान आप अलैहिस्सलाम इस पर खड़े होते थे और जैसे-जैसे तामीर ऊपर जा रही थी उसके लिये यह पत्थर खुद-ब-खुद ऊँचा होता जाता है। इस पत्थर पर आप अलैहिस्सलाम के क़दमों का निशान है। यही पत्थर “मक्कामे इब्राहीम” है जो अब भी महफूज़ है। बैतुल्लाह का तवाफ़ मुकम्मल करके इसके करीब दो रकअत नमाज़ अदा की जाती है।

“और हमने हुक्म किया था इब्राहीम अलै० और इस्माइल अलै० को कि तुम दोनों मेरे इस घर को पाक रखो तवाफ़ करने वालों, ऐताकाफ़ करने वालों और रुकूअ व सुजूद करने वालों के लिये।”

इससे दोनों तरह की ततहीर (सफ़ाई) मुराद है। ज़ाहिरी सफ़ाई भी हो, गन्दगी ना हो, ताकि ज़ायरीन आयें तो उनके दिलों में कदुरत (नफ़रत) पैदा ना हो, उन्हें कोफ़्त (ऊब) ना हो। और ततहीर बातिनी का भी अहतमाम हो कि वहाँ तौहीद का चर्चा हो, किसी तरह का कोई कुफ़्र व शिर्क दर ना आने पाये।

आयत 126

“और याद करो जबकि इब्राहीम अलै० ने दुआ

وَاتَّخِذُوا مِن مَّقَامِ إِبْرَاهِيمَ مُصَلًّى

وَعَهْدًا إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَاسْمِعِيلَ أَن طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّائِفِينَ وَالْعَاكِفِينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ ۝

की थी: ऐ मेरे परवरदिगार! इस घर को अमन की जगह बना दे”

“और यहाँ आबाद होने वालों (यानि बनी इस्माइल अलै०) को फ़लों का रिज़क अता कर, जो कोई उनमें से ईमान लाये अल्लाह पर और यौमे आखिर पर।”

وَأَرْزُقْ أَهْلَهُ مِنَ الثَّمَرَاتِ مَن آمَنَ مِنْهُمْ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ

यहाँ हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने खुद ही अहतियात बरती और अपनी सारी औलाद के लिये यह दुआ नहीं की, बल्कि सिर्फ़ उनके लिये जो अल्लाह पर और यौमे आखिर पर ईमान रखते हों। इसलिये कि पहली दुआ में “وَمَن دُرِّي” के जवाब में अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमाया था: {لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِمِينَ ۝} लेकिन यहाँ मामला मुख्तलिफ़ (अलग) नज़र आता है।

“अल्लाह तआला ने फ़रमाया: और (तुम्हारी औलाद में से) जो कुफ़्र करेगा तो उसको भी मैं दुनिया की चंद रोज़ा ज़िन्दगी का साज़ो सामान तो दूँगा”

قَالَ وَمَن كَفَرَ فَأُمَتِّعُهُ قَلِيلًا

जो लोग ईमान से महरूम होंगे उन्हें मैं इमामत में शामिल नहीं करूँगा, लेकिन बहरहाल दुनियवी ज़िन्दगी का माल व मताअ (उपयोगी सामान) तो मैं उनको भी दूँगा।

“फिर उसे कशां-कशां ले आऊँगा जहन्नम के अज़ाब की तरफ़।”

ثُمَّ أَصْطَرُّهُ إِلَىٰ عَذَابِ النَّارِ

“और वह बहुत बुरी जगह है लौटने की।”

وَيُنْسِ الْأَصْطَرُّ

आयत 127

“और याद करो जब इब्राहीम अलै० और इस्माइल अलै० हमारे घर की बुनियादों को उठा रहे थे।”

وَأَذِّنْ فَعِ إِبْرَاهِيمَ الْقَوَاعِدَ مِنَ الْبَيْتِ وَإِسْمَاعِيلَ

وَأَذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّ اجْعَلْ هَذَا بَلَدًا آمِنًا

बाप-बेटा दोनों बैतुल्लाह की तामीर में लगे हुए थे। यहाँ लफ़्ज़ “قَوَاعِدَ” जो आया है इसे नोट कीजिये, यह “قاعدة” की जमा है और बुनियादों को कहा जाता है। इस लफ़्ज़ से यह इशारा मिलता है कि हज़रत इब्राहीम अलै० खाना काबा के असल मअमार (Architect) और बानी (संस्थापक) नहीं हैं। काबा सबसे पहले हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने तामीर किया था। सूरह आले इमरान (आयत 96) में अल्फ़ाज़ आये हैं: {إِنَّ أَوَّلَ بَيْتٍ وُضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِي بِبَكَّةَ} “बेशक सबसे पहला घर जो लोगों के लिये मुक़रर किया गया यही है जो मक्का में है।” अब यह कैसे मुमकिन था कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम के ज़माने से लेकर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम तक, कम-ओ-बेश चार हज़ार बरस के दौरान, रुए अज़ी पर कोई मस्जिद तामीर ना हुई हो? अल्लाह तआला की इबादत के लिये तामीर किया गया सबसे पहला घर यही काबा था। इस्तदादे ज़माने (वक्त्र गुज़रने) से इसकी सिर्फ़ बुनियादें बाक़ी रह गयी थीं, और चूँकि यह वादी में वाक़ेअ था जो सैलाब का रास्ता था, लिहाज़ा सैलाब की वजह से इसकी सब दीवारें बह गयी थीं। हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माइल अलै० ने इन बुनियादों को फिर से उठाया। सूरतुल हज में यह मज़मून तफ़सील से आया है।

जब वह इन बुनियादों को उठा रहे थे तो अल्लाह तआला से दुआयें माँग रहे थे:

“ऐ हमारे रब! हमसे यह ख़िदमत कुबूल
फ़रमा ले।”

رَبَّنَا اقْبَلْ مِنَّا

हमारी इस कोशिश और हमारी इस मेहनत व मशक्कत को कुबूल फ़रमा! जिस वक्त्र हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम बैतुल्लाह की तामीर कर रहे थे उस वक्त्र हज़रत इस्माइल अलैहिस्सलाम की उम्र लगभग तेरह बरस थी, आप अलैहिस्सलाम इस काम में अपने वालिद मोहतरम का हाथ बटा रहे थे।

“यक़ीनन तू सब कुछ सुनने वाला जानने
वाला है।”

إِنَّكَ أَنْتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ

आयत 128

“और ऐ हमारे रब! हमें अपना मुतीअ
फ़रमान बनाये रख”

رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمِينَ لَكَ

नोट कीजिये, यह दुआ इब्राहीम अलैहिस्सलाम कर रहे हैं। तो मैं और आप अगर अपने बारे में मुत्मईन हो जायें कि मेरी मौत लाज़िमन हक़ पर होगी, इस्लाम पर होगी तो यह बहुत बड़ा धोखा है। चुनौते डरते रहना चाहिये और अल्लाह की पनाह तलब करते रहना चाहिये।

“और हम दोनों की नस्ल से एक उम्मत
उठाइयो जो तेरी फ़रमावरदार हो।”

وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَا أُمَّةٌ مُّسْلِمَةٌ لَّكَ

“और हमें हज करने के कायदे बतला दे”

وَأَرِنَا مَنَاسِكَنَا

ऐ परवरदिगार! तेरा यह घर तो हमने बना दिया, अब इसकी ज़ियारत से मुताल्लिक़ जो रसूमात हैं, जो मनासिके हज हैं वह हमें सिखा दे।

“और हम पर अपनी तवज्जो फ़रमा।”

وَتُبَّ عَلَيْنَا

हम पर अपनी शफ़क्कत की नज़र फ़रमा।

“यक़ीनन तू ही है बहुत ज़्यादा तौबा का
कुबूल फ़रमाने वाला (और शफ़क्कत के साथ
रुजूअ करने वाला) और रहम फ़रमाने
वाला।”

إِنَّكَ أَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ

आयत 129

“और ऐ हमारे परवरदिगार! उन लोगों में
उठाइयो एक रसूल खुद उन्हीं में से”

رَبَّنَا وَابْعَثْ فِيهِمْ رَسُولًا مِنْهُمْ

से हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माइल अलैहिस्सलाम की नस्ल यानि बनी इस्माइल मुराद है। वह दोनों दुआ कर रहे थे कि परवरदिगार! हमारी इस नस्ल में एक रसूल मबऊस (नियुक्त) फ़रमाना जो उन्हीं में से हो, बाहर का ना हो, ताकि उनके और उसके दरमियान मुगायरत (टकराव) और अज़नबियत का कोई पर्दा हाईल (रुकावट) ना हो।

“जो उन्हें तेरी आयात पढ कर सुनाये”

يَتْلُوا عَلَيْهِمْ آيَاتِكَ

“और उन्हें किताब और हिकमत की तालीम दे”

وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ

किताब का सिर्फ़ पढ़ कर सुना देना तो बहुत आसान काम है। इसके बाद किताब और उसमें मौजूद हिकमत की तालीम देना और उसे दिलों में बिठाना अहमतर है।

“और उनको पाक करे।”

وَيُزَكِّهِمْ

उनका तज़किया करे और उनके दिलों में तेरी मोहब्बत और आखिरत की तलब की सिवा कोई तलब बाक़ी ना रहने दे।

“यक़ीनन तू ही है ज़बरदस्त और कमाले हिकमत वाला।”

إِنَّكَ أَنْتَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ

आयात 130 से 141 तक

وَمَنْ يَرْغَبْ عَنْ مِلَّةِ إِبْرَاهِيمَ إِلَّا مَنْ سَفِهَ نَفْسَهُ وَلَقَدِ اصْطَفَيْنَاهُ فِي الدُّنْيَا وَإِنَّهُ فِي الْآخِرَةِ لَمِنَ الصَّالِحِينَ ③ إِذْ قَالَ لَهُ رَبُّهُ أَسْلِمْ قَالَ أَسْلَمْتُ لِربِّ الْعَالَمِينَ ④ وَوَضَىٰ بِهَا إِبْرَاهِيمُ بَنِيهِ وَيَعْقُوبُ لِيَبْنِيَ لِلَّهِ اصْطَفَىٰ لَكُمْ الدِّينَ فَلَا تَمُوتُنَّ إِلَّا وَأَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ⑤ أَمْ كُنْتُمْ شُهَدَاءَ إِذْ حَضَرَ يَعْقُوبُ الْمَوْتَ إِذْ قَالَ لِبَنِيهِ مَا تَعْبُدُونَ مِنْ بَعْدِي قَالُوا نَعْبُدُ إِلَهَكَ وَإِلَهَ آبَائِكَ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ إِلَهًا وَاحِدًا وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ⑥ تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ وَلَا تُنْسَلُونَ عَنْهَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ⑦ وَقَالُوا كُونُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ تَهْتَدُوا قُلْ بَلْ مِلَّةَ إِبْرَاهِيمَ حَنِيفًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ⑧ قُولُوا آمَنَّا بِاللَّهِ وَمَا أُنْزِلَ إِلَيْنَا وَمَا أُنْزِلَ إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطِ وَمَا أُوتِيَ مُوسَىٰ وَعِيسَىٰ وَمَا أُوتِيَ النَّبِيُّونَ مِنْ رَبِّهِمْ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ أَحَدٍ مِنْهُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ⑨ فَإِنْ آمَنُوا بِمِثْلِ مَا آمَنْتُمْ بِهِ فَقَدْ اهْتَدَوْا وَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا هُمْ فِي شِقَاقٍ تَسْتَكْفِرُكُمُ

اللَّهُ وَهُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ⑩ صِبْغَةَ اللَّهِ وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللَّهِ صِبْغَةً وَنَحْنُ لَهُ عَابِدُونَ ⑪ قُلْ أَمَحَاجُؤُنَا فِي اللَّهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ وَلَنَا أَعْمَالُنَا وَلَكُمْ أَعْمَالُكُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ ⑫ أَمْ تَقُولُونَ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطَ كَانُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ قُلْ أَنْتُمْ أَغْلَمُ أَمِ اللَّهُ وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ⑬ تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ وَلَا تُنْسَلُونَ عَنْهَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ⑭

आयत 130

“और कौन होगा जो इब्राहीम अलैहिस्सलाम के तरीके से मुँह मोड़े?”

وَمَنْ يَرْغَبْ عَنْ مِلَّةِ إِبْرَاهِيمَ

रग़बत का लफ़्ज़ अरबी ज़बान में दोनों तरह इस्तेमाल होता है। “رَغِبَ إِلَى” का मफ़हूम है किसी शय की तरफ़ रग़बत होना, मोहब्बत होना, मीलान होना, जबकि “رَغِبَ عَنْ” का मतलब है किसी शय से मुतनफ़्फ़िर (नफ़रत) होना, किसी शय से इबा (इन्कार) करना, उसको छोड़ देना। जैसा कि हदीस में आया है: ((فَمَنْ رَغِبَ عَنْ سُنَّتِي فَلَيْسَ مِنِّي)) (15) “पस जिसे मेरी सुन्नत नापसंद हो तो वह मुझसे नहीं है।”

“सिवाय उसके जिसने अपने आपको हिमाक़त ही में मुब्तला करने का फ़ैसला कर लिया हो।”

إِلَّا مَنْ سَفِهَ نَفْسَهُ

उसके सिवा और कौन होगा जो इब्राहीम अलै० के तरीके से मुँह मोड़े?

“और हमने तो उन्हें दुनिया में भी मुन्तख़ब कर लिया था।”

وَلَقَدِ اصْطَفَيْنَاهُ فِي الدُّنْيَا

“और यक़ीनन आखिरत में भी वह हमारे सालेह बन्दों में से होंगे।”

وَإِنَّهُ فِي الْآخِرَةِ لَمِنَ الصَّالِحِينَ ⑩

आयत 131

“जब भी कहा उससे उसके परवरदिगार ने कि मुतीअ (विनम्र) फ़रमान होजा तो उसने कहा मैं मुतीअ फ़रमान हूँ तमाम जहानों के परवरदिगार का।”

إِذْ قَالَ لَهُ رَبُّهُ أَسْلِمِ قَالَ أَسْلَمْتُ لِرَبِّ
الْعَالَمِينَ ۝

यहाँ तक कि इकलौते बेटे को ज़िबह करने का हुक्म आया तो उस पर भी सरे तस्लीम ख़म कर दिया। यह हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के सिलसिलाये इस्तिहानात का आखरी इस्तिहान था जो अल्लाह तआला ने उनका सौ बरस की उम्र में लिया। अल्लाह तआला से दुआएँ माँग-माँग कर सतासी बरस की उम्र में बेटा (इस्माइल अलैहिस्सलाम) लिया था और अब वह तेरह बरस का हो चुका था, बाप का दस्तो बाज़ू बन गया था। उस वक़्त उसे ज़िबह करने का हुक्म हुआ तो आप अलैहिस्सलाम फ़ौरन तैयार हो गये। यहाँ फ़रमाया जा रहा है कि जब भी हमने इब्राहीम अलैहिस्सलाम से कहा कि हमारा हुक्म मानो तो उसे हुक्म बरदारी के लिये सरापा तैयार पाया। अल्लाह तआला हमें भी इस तर्ज़े अमल की पैरवी की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन!

आयत 132

“और इसी की वसीयत की थी इब्राहीम अलै० ने अपने बेटों को और याक़ूब ने भी।”

وَوَصَّى بِهَا إِبْرَاهِيمُ بَنِيهِ وَيَعْقُوبُ

आगे वह नसीहत बयान हो रही है:

“ऐ मेरे बेटों! अल्लाह ने तुम्हारे लिये यही दीन पसंद फ़रमाया है”

يٰۤبَنِيَّ إِنَّ اللَّهَ اصْطَفَىٰ لَكُمُ الدِّينَ

“पस तुम हरगिज़ ना मरना मगर मुस्लमान!”

فَلَا تَمُوتُنَّ إِلَّا وَأَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ۝

देखना तुम्हें मौत ना आने पाये, मगर फ़रमाबरदारी की हालत में! यही बात सूरह आले इमरान (आयत:102) में मुस्लमानों से ख़िताब करके फ़रमायी गयी: {يٰۤأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ حَقَّ تَقَاتِهِ وَلَا تَمُوتُنَّ إِلَّا وَأَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ۝} “ऐ लोगों जो ईमान लाये हो! अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो जैसा कि उसके तक्रवे का हक़ है और तुमको मौत ना आये, मगर इस हाल में कि तुम मुस्लिम हो।” और

फ़रमाया: {إِنَّ الدِّينَ عِنْدَ اللَّهِ الْإِسْلَامُ} (आयत:19) “यक़ीनन दीन तो अल्लाह के नज़दीक सिर्फ़ इस्लाम है।” मज़ीद फ़रमाया: {وَمَنْ يُبْتَغِ غَيْرَ الْإِسْلَامِ دِينًا فَلَنْ يُقْبَلَ مِنْهُ} (आयत:85) “और जो कोई इस्लाम के सिवा कोई और दीन इख़्तियार करना चाहे तो उससे वह हरगिज़ कुबूल ना किया जायेगा।”

आयत 133

“क्या तुम उस वक़्त मौजूद थे जब आ धमकी अफ़ कُنتُمْ شُهَدَاءَ إِذْ حَضَرَ يَعْقُوبُ النَّوْثُ याक़ूब पर मौत”

यानि जब याक़ूब अलैहिस्सलाम की मौत का वक़्त आया। उस वक़्त हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम और उनके सब बेटे हज़रत यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के ज़रिये मिस्र में पहुँच चुके थे। यह सारा वाक़िया सूरह यूसुफ़ में बयान हुआ है। हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम का इन्तेक़ाल मिस्र में हुआ। दुनिया से रखसत होने से पहले उन्होंने अपने बारह के बारह बेटों को जमा किया।

“जब कहाँ अपने बेटों से कि तुम किसकी इबादत करोगे मेरे बाद?”

إِذْ قَالَ لِبَنِيهِ مَا تَعْبُدُونَ مِنْ بَعْدِي

किसकी पूजा करोगे? किसकी परस्तिश करोगे? यह बात नहीं थी कि उन्हें मालूम ना था कि उन्हें किसकी इबादत करनी है, बल्कि आप अलैहिस्सलाम ने क़ौल व क़रार को मज़ीद पुख़्ता करने के लिये यह अंदाज़ इख़्तियार फ़रमाया।

“उन्होंने कहा हम बन्दगी करेंगे आपके मअबूद की और आपके आवा इब्राहीम, इस्माइल और इसहाक़ के मअबूद की”

قَالُوا نَعْبُدُ إِلَهَكَ وَإِلَهَ آبَائِكَ إِبْرَاهِيمَ

وَأِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ

“वही एक मअबूद है”

إِلَهًا وَاحِدًا ۝

“और हम सब उसी के मुतीअ फ़रमान हैं।”

وَأَخْبَرْنَاهُ لَكَ مُسْلِمُونَ ۝

हम उसी के सामने सर झुकाते हैं और उसी की फ़रमाबरदारी का इक़रार करते हैं।

आयत 134

“यह एक जमाअत थी जो गुज़र चुकी।”

تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ

यह आयत इस रुकूअ में दो मरतबा आयी है। यह इन्सानों का एक गिरोह था जो गुज़र गया। इब्राहीम, इस्माइल, इसहाक़, याकूब अलैहिस्सलाम और उनकी औलाद सब गुज़र चुके।

“उनके लिये था जो उन्होंने कमाया और तुम्हारे लिये होगा जो तुम कमाओगे।”

لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ

यहाँ “पदरम सुल्तान बूद” का दावा कोई मक्काम नहीं रखता। हर शख्स के लिये अपना ईमान, अपना अमल और अपनी कमाई ही काम आयेगी।

“तुमसे यह नहीं पूछा जायेगा कि वह क्या करते थे।”

وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ۝

तुमसे तो यही पूछा जायेगा कि तुम क्या करके लाये हो? तुम्हारा बाप सुल्तान होगा, लेकिन तुम अपनी बात करो कि तुम क्या हो?

इस पसमंज़र में अब यहूद की खबासत को नुमाया किया जा रहा है कि इब्राहीम और याकूब अलैहिस्सलाम की वसीयत तो यह थी, मगर उस वक्त्र के यहूद व नसारा का क्या रवैय्या है। उन्होंने अल्लाह के रसूल ﷺ के खिलाफ़ मुत्तहिदा महाज़ बना रखा है।

आयत 135

“और वह कहते हैं या तो यहूदी हो जाओ या नसरानी तो हिदायत पर हो जाओगे।”

وَقَالُوا كُونُوا هُودًا أَوْ نَصَارَى تَهْتَدُوا ۝

“कह दीजिये नहीं, बल्कि (हम तो पैरवी करेंगे) इब्राहीम के तरीके की बिल्कुल यक्सु होकर।”

قُلْ بَلْ مِلَّةَ إِبْرَاهِيمَ حَنِيفًا

“बल तन्नैय मल्लै इब्रहैम हनैफ़ा”। गोया: “बल तन्नैय फ़अल फ़अल तन्नैय महज़ूफ़ है।

“और वह मुशरिकों में से नहीं थे।”

وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ۝

अब मुस्लिमानों को हुक्म दिया जा रहा है कि यहूद व नसारा जो कुछ कहते हैं उसके जवाब में तुम यह कहो”

आयत 136

“कहो हम ईमान रखते हैं अल्लाह पर”

قُولُوا آمَنَّا بِاللّٰهِ

“और जो कुछ नाज़िल किया गया हमारी जानिब”

وَمَا أُنْزِلَ إِلَيْنَا

“और जो कुछ नाज़िल किया गया इब्राहीम, इस्माइल, इसहाक़, याकूब और औलादे याकूब की तरफ़”

وَمَا أُنْزِلَ إِلَىٰ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطِ

“और जो कुछ दिया गया मूसा और ईसा को”

وَمَا أُوتِيَ مُوسَىٰ وَعِيسَىٰ

“और जो कुछ दिया गया तमाम नबियों को उनके रब की तरफ से।”

وَمَا أُوتِيَ النَّبِيُّونَ مِنْ رَبِّهِمْ

“हम उनमें से किसी के माबैन तफ़रीक़ नहीं करते।”

لَا نَفَرِقُ بَيْنَ أَحَدٍ مِنْهُمْ

हम सबको मानते हैं, किसी का इन्कार नहीं करते। एक बात समझ लीजिये कि एक है “تفضیل” यानि किसी एक को दूसरे से ज़्यादा अफ़ज़ल समझना, यह और बात है, इसकी नफ़ी नहीं है। सूरतुल बकरह (आयत:253) ही में अल्फ़ाज़ आये हैं: {تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ} “यह सब रसूल फ़ज़ीलत दी हमने बाज़ को बाज़ पर।” जबकि तफ़रीक़ यह है कि एक को माना जाये और एक का इन्कार कर दिया जाये। और रसूलों में से किसी एक का इन्कार गोया सबका इन्कार है।

“और हम उसी के मुतीअ फ़रमान हैं।”

وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ۝

हमने तो उसी की फ़रमाबरदारी का क़लादा अपनी गर्दन में डाल लिया है।

आयत 137

“फिर (ऐ मुस्लमानों) अगर वह (यहूद व नसारा) भी उसी तरह ईमान ले आयें जिस तरह तुम ईमान लाये हो”

فَإِنْ آمَنُوا بِمِثْلِ مَا آمَنْتُمْ بِهِ

यानि वह ज़िद और हठधर्मी की रविश तर्क कर दें और ठीक-ठीक वही दीन और वही रास्ता इख्तियार करें जो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के ज़रिये से तुम्हें दिया गया है।

“तब वह हिदायत पर होंगे।”

فَقَدْ اهْتَدَوْا

“और अगर वह पीठ मोड़ लें”

وَإِنْ تَوَلَّوْا

“तो फिर वही हैं ज़िद पर।”

فَأَمَّا هُمْ فِي شِقَاقٍ

अगर वह ईमान नहीं लाते तो इसके मायने यह हैं कि वह हठधर्मी और ज़िद्द में मुव्तला हो चुके हैं और दुश्मनी और मुखालफ़त पर अड़े हुए हैं।

“तो (ऐ नबी ﷺ!) आपके लिये इनके मुक़ाबले में अल्लाह काफी है।”

فَسَيَكْفِيكَهُمُ اللَّهُ

आप फ़िक्र ना करें, आप मदाहनत (compromise) की किसी दावत की तरफ़ तवज्जो ही ना करें, कुछ दो कुछ लो का मामला आप बिल्कुल भी ना सोचें। आप इनकी मुखालफ़तों से मरऊब (भयभीत) ना हों और इनकी धमकियों का कोई असर ना लें। अल्लाह तआला आपकी हिमायत के लिये इन सबके मुक़ाबले में काफ़ी रहेगा।

“और वह सब कुछ सुनने वाला जानने वाला है।”

وَهُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ

ऐसा नहीं है कि उसे मालूम ना हो कि आप ﷺ इस वक़्त किन हालात में हैं, कैसी मुशकिलात में हैं, किस तरह की नाज़ुक सूरते हाल है जो दिन-ब-दिन शक़ल बदल रही है। अल्लाह तआला हर तरह के हालात में आपका मुहाफ़िज़ और मददगार है।

[हज़रत उस्मान रज़िअल्लाहुअन्हु शहादत के वक़्त कुरान हकीम के जिस नुस्खे पर तिलावत फ़रमा रहे थे उसमें इन अल्फ़ाज़ पर खून का धब्बा आज भी मौजूद है। बागियों ने आप रज़ि० को कुरान की तिलावत करते हुए शहीद किया था। आप रज़ि० की ज़ौजा मोहतरमा नाईला रज़िअल्लाहुअन्हा ने आपको बचाना चाहा तो उनकी उँगलियाँ कट गईं और खून इन अल्फ़ाज़ पर पड़ा।]

आयत 138

“हमने तो इख्तियार कर लिया है अल्लाह के रंग को।”

صِبْغَةَ اللَّهِ

“وَلَّةٌ إِبْرَاهِيمَ” की तरह “صِبْغَةَ اللَّهِ” में भी मुज़ाफ़ की नसब बता रही है कि यह मुरक्कबे इज़ाफ़ी मफ़ऊल है और इसका फ़अल महज़ूफ़ है।

“और अल्लाह के रंग से बेहतर और किसका रंग होगा?”

وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللَّهِ صِبْغَةً

“और हम तो बस उसी की बन्दगी करने वाले लोग हैं।”

وَنَحْنُ لَهُ عِبْدُونَ

आयत 139

“(ऐ नबी ﷺ इनसे) कहिये क्या तुम हमसे झगड रहे हो (दलील बाज़ी कर रहे हो) अल्लाह के बारे में?”

قُلْ أُنْحَاكُمْ نَتَافِي اللَّهِ

“हालाँकि वही हमारा रब भी है और तुम्हारा रब भी।”

وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ

रब भी एक है और उसका दीन भी एक है, हाँ शरीअतों में फ़र्क़ ज़रूर हुआ है।

“और हमारे लिये होंगे हमारे अमल और तुम्हारे लिये होंगे तुम्हारे अमल।”

وَلَنَأَعْمَلُنَا وَلَكُمْ أَعْمَالُكُمْ

“और हम तो खालिस उसी के हैं।”

وَنَحْنُ لَهُ خَالِصُونَ

हम उसके लिये अपने आपको और अपनी बन्दगी को खालिस कर चुके हैं।

यहाँ पे-दर-पे आने वाले तीन अल्फ़ाज़ को नोट कीजिये। यह मक़ाम मेरे और आपके लिये लम्हा-ए-फ़िक्रिया है। आयत 136 इन अल्फ़ाज़ पर ख़त्म हुई थी: { وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ } "हम उसी के सामने सरे तस्लीम ख़म करते हैं।" इनमें तो हम भी शामिल हैं। इसके बाद आयत 138 के इख़तताम पर यह अल्फ़ाज़ आये: { وَنَحْنُ لَهُ عِبْدُونَ } "और हम उस ही की बन्दगी करते हैं।" सिर्फ़ इस्लाम नहीं, इबादत यानि पूरी ज़िन्दगी में उसके हर हुक्म की पैरवी और इताअत दरकार है। इससे आगे यह बात आयी: { وَنَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ } यह इबादत अगर इख़लास के साथ नहीं है तो मुनाफ़क़त है। इस इबादत से कोई दुनयवी मनफ़अत पेशे नज़र ना हो। "सौदागरी नहीं, यह इबादत खुदा की है!" दीन को दुनिया बनाने और दुनिया कमाने का ज़रिया बनाने से बड़ कर गिरी हुई हरकत और कोई नहीं है। रसूल अल्लाह ﷺ का इशारे ग़रामी है:

((مَنْ صَلَّى بِإِيٍّ فَقَدْ أَشْرَكَ وَمَنْ صَامَ بِإِيٍّ فَقَدْ أَشْرَكَ وَمَنْ تَصَدَّقَ بِإِيٍّ فَقَدْ أَشْرَكَ))

"जिसने दिखावे के लिये नमाज़ पढ़ी उसने शिर्क किया, जिसने दिखावे के लिये रोज़ा रखा उसने शिर्क किया, और जिसने दिखावे के लिये सदक़ा व खैरात किया उसने शिर्क किया।" (मसनद अहमद)

इन तीनों अल्फ़ाज़ को हर्जे जान (तावीज़) बना लीजिये:

نَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ، نَحْنُ لَهُ عِبْدُونَ، نَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ. اللَّهُمَّ رَبَّنَا اجْعَلْنَا مِنْهُمْ! اللَّهُمَّ رَبَّنَا اجْعَلْنَا مِنْهُمْ!!

आयत 140

"क्या तुम्हारा कहना यह है कि इब्राहीम, इस्माइल, इसहाक़ और याक़ूब और उनकी औलाद सब यहूदी थे या नसरानी थे?"

أَمْ تَقُولُونَ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ وَالْأَسْبَاطَ كَانُوا يَهُودًا أَوْ نَصَارَى

तुम जो कहते हो कि यहूदी हो जाओ या नसरानी तब हिदायत पाओगे, तो क्या इब्राहीम अलैहिस्सलाम यहूदी थे या नसरानी? और इसहाक़, याक़ूब, यूसुफ़, मूसा और ईसा अलैहिस्सलाम कौन थे? यही बात आज मुस्लिमानों को सोचनी चाहिये कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और आप ﷺ के असहाब रज़िअल्लाहुअन्हुम देवबन्दी थे, बरेलवी थे, अहले हदीस थे, या शिया थे? अल्लाह तआला के साथ इख़लास का तकाज़ा यह है कि इन तक़सीमों से

बालातर (ऊपर) रहा जाये। ठीक है एक शख्स किसी फ़िक्रही मसलक की पैरवी कर रहा है, लेकिन उस मसलक को अपनी शिनाख़्त बना लेना, उसे दीन पर मुक़द्दम रखना, उस मसलक ही के लिये है सारी मेहनत व मशक्कत और भाग-दौड़ करना, और उसी की दावत व तब्लीग़ करना, दीन की असल हकीक़त और रूह के यक्सर (पूरी तरह से) खिलाफ़ है।

"कहिये: तुम ज़्यादा जानते हो या अल्लाह?"

قُلْ أَأَنْتُمْ أَعْلَمُ أَمِ اللَّهُ

"और (कान खोल कर सुन लो) उस शख्स से बड़ कर ज़ालिम और कौन होगा जिसके पास अल्लाह की तरफ़ से एक गवाही थी जिसे उसने छुपा लिया?"

وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ

उल्माये यहूद जानते थे कि मुहम्मद ﷺ अल्लाह के रसूल हैं, जिनके वह मुन्तज़िर थे। लेकिन वह इस गवाही को छुपाये बैठे थे।

"और अल्लाह हरगिज़ ग़ाफ़िल नहीं है उससे जो तुम कर रहे हो।"

وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ

आयत 141

"वह एक जमाअत थी जो गुज़र चुकी।"

تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ

यह उस मुक़द्दस जमाअत के गुले सरसब्द थे जिनका तज़क़िरा हुआ।

"उनके लिये है जो कमाई उन्होंने की और तुम्हारे लिये है जो कमाई तुमने की।"

لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ

जो अमल उन्होंने कमाये वह उनके लिये हैं, तुम्हारे लिये नहीं। तुम्हारे लिये वही होगा जो तुम कमाओगे।

"और तुमसे उनके आमाल के बारे में सवाल नहीं होगा।"

وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ

तुमसे यह नहीं पूछा जायेगा कि उन्होंने क्या किया, तुमसे तो यह सवाल होगा कि तुमने क्या किया!

आयात 142 से 152 तक

سَيَقُولُ السُّفَهَاءُ مِنَ النَّاسِ مَا وَلَهُمْ عَن قِبَلِهِمُ النَّبِيُّ كَانُوا عَلَيْهَا قُلُ لِلَّهِ
الْمَشْرِئُ وَالْمُغْرِبُ يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ إِلَى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ۝ وَكَذَلِكَ جَعَلْنَاكُمْ أُمَّةً
وَسَطًا لِتَكُونُوا شُهَدَاءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُونَ الرَّسُولُ عَلَيْكُمْ شَهِيدًا وَمَا جَعَلْنَا
الْقِبْلَةَ الَّتِي كُنْتَ عَلَيْهَا إِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يَتَّبِعِ الرَّسُولَ مِمَّنْ يَنْقَلِبُ عَلَى عَقْبَيْهِ وَإِن
كَانَتْ لَكَبِيرَةً إِلَّا عَلَى الَّذِينَ هَدَى اللَّهُ وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُضِلَّ إِبْرَاهِيمَ إِنَّ اللَّهَ
بِالنَّاسِ لَرُءُوفٌ رَّحِيمٌ ۝ قَدْ نَرَى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِي السَّمَاءِ فَلَنُوَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً
تَرْضَاهَا فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ
شَطْرَهُ وَإِنَّ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ لَيَعْلَمُونَ أَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا
يَعْمَلُونَ ۝ وَلَئِنْ أَتَيْتَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ بِكُلِّ آيَةٍ مَا تَبِعُوا قِبْلَتَكَ وَمَا أَنْتَ
بِتَابِعٍ قِبْلَتَهُمْ وَمَا بَعْضُهُمْ بِتَابِعٍ قِبْلَةَ بَعْضٍ وَلَئِنْ اتَّبَعْتَ أَهْوَاءَهُمْ مِنْ بَعْدِ مَا
جَاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ إِنَّكَ إِذَا لَئِن الظَّالِمِينَ ۝ الَّذِينَ أُتُوا الْكِتَابَ يَعْرِفُونَهُ كَمَا
يَعْرِفُونَ أَبْنَاءَهُمْ وَإِنَّ فَرِيقًا مِنْهُمْ لَيَكْتُمُونَ الْحَقَّ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ۝ الْحَقُّ مِنْ
رَبِّكَ فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُنْتَرِينَ ۝ وَلِكُلِّ وُجْهَةٍ هُوَ مَوْلَاهَا فَاسْتَبِقُوا الْحَيَاتِ آيِنَ
مَا تَكُونُوا يَأْتِ بِكُمْ اللَّهُ جَمِيعًا إِنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝ وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ
فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَإِنَّهُ لَلْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا
تَعْمَلُونَ ۝ وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَحَيْثُ مَا
كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ إِلَّا الَّذِينَ ظَلَمُوا
مِنْهُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِي وَلَا تَمْنَعْنِي عَلَيْكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ۝ كَمَا
أَرْسَلْنَا فِيكُمْ رَسُولًا مِنْكُمْ يَتْلُوا عَلَيْكُمْ آيَاتِنَا وَيُزَكِّيكُمْ وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتَابَ
وَالْحِكْمَةَ وَيُعَلِّمُكُم مَّا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ۝ فَادْكُرُوا نِيَّ أَذْكُرْكُمْ وَاشْكُرُوا لِي وَلَا
تَكْفُرُونِ ۝

दो रुक़ों पर मशतमिल तम्हीद (प्रस्तावना) के बाद अब तहवीले किब्ला का मज़मून बराहे रास्त आ रहा है, जो पूरे दो रुक़ों पर फैला हुआ है। किसी के ज़हन में यह सवाल पैदा हो सकता है कि यह कौनसी ऐसी बड़ी बात थी जिसके लिये क़ुरान मजीद में इतने शब्दों-मद (उत्साह) के साथ और इस क्रूर तफ़सील बल्कि तकरार के साथ बात की गयी है? इसको यूँ समझिये कि एक ख़ास मज़हबी ज़हनियत होती है, जिसके हामिल लोगों की तवज्जो आमाल के ज़ाहिर पर ज़्यादा मरकज़ हो जाती है और आमाल की रूह उनकी तवज्जो का मरकज़ नहीं बनती। अवामनास का मामला बिल उमूम यही हो जाता है कि उनके यहाँ असल अहमियत दीन के ज़वाहिर (दिखावे) और मरासिमे उबदियत (इबादत की रस्मों) को हासिल हो जाती है और जो असल रूहे दीन है, जो मक़ासिदे दीन हैं, उनकी तरफ़ तवज्जो नहीं होती। नतीजतन ज़वाहिर में ज़रा सा फ़र्क़ भी उन्हें बहुत ज़्यादा महसूस होता है। हमारे यहाँ इसकी मिसाल यूँ सामने आती है कि अहनाफ़ (हनफ़ियों) की मस्जिद में अगर किसी ने रफ़ा यदैन कर लिया या किसी ने आमीन ज़रा ऊँची आवाज़ में कह दिया तो गोया क़यामत आ गयी। यूँ महसूस हुआ जैसे हमारी मस्जिद में कोई और ही आ गया। इस मज़हबी ज़हनियत के पसमंज़र में यह कोई छोटा मसला नहीं था।

इसके अलावा यह मसला क़बाइली और क़ौमी पसमंज़र के हवाले से भी समझना चाहिये। मक्का मकर्रमा में जो लोग ईमान लाये थे ज़ाहिर है उन सबको खाना काबा के साथ बड़ी अक़ीदत थी। खुद नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم ने जब मक्का से हिजरत फ़रमायी तो आप صلی اللہ علیہ وسلم रोते हुए वहाँ से निकले थे और आप ने फ़रमाया था कि ऐ काबा! मुझे तुझसे बड़ी मोहब्बत है, लेकिन तेरे यहाँ के रहने वाले मुझे यहाँ रहने नहीं देते। मालूम होता है कि जब तक आप صلی اللہ علیہ وسلم मक्का में थे तो आप صلی اللہ علیہ وسلم काबा की जुनूबी (दक्षिणी) दीवार की तरफ़ रुख करके खड़े होते। यूँ आप صلی اللہ علیہ وسلم का रुख शिमाल (उत्तर) की तरफ़ होता, काबा आप صلی اللہ علیہ وسلم के सामने होता और उसकी सीध में बैतुल मुक़द्दस भी आ जाता। इस तरह “इस्तक़बाल अल क़िब्लतैन” का अहतमाम हो जाता। लेकिन मदीना में आकर आप صلی اللہ علیہ وسلم ने रुख बदल दिया और बैतुल मुक़द्दस की तरफ़ रुख करके नमाज़ पढ़ने लगे। यहाँ “इस्तक़बाल अल क़िब्लतैन” मुमकिन ना था, इसलिये कि येरुशलम मदीना मुनव्वरा के शिमाल में है, जबकि मक्का मुकर्रमा जुनूब में है। अब अगर खाना काबा की तरफ़ रुख करेंगे तो येरुशलम

की तरफ़ पीठ होगी और येरुशलम की तरफ़ रुख करेंगे तो काबा की तरफ़ पीठ होगी। चुनाँचे अब अहले ईमान का इम्तिहान हो गया कि आया वह मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के फ़रमान की पैरवी करते हैं या अपनी पुरानी अक़ीदतों और पुरानी रिवायात को ज़्यादा अहमियत देते हैं। जो लोग मक्का मुकर्रमा से आये थे उनकी इतनी तरबियत हो चुकी थी कि उनमें से किसी के लिये यह मसला पैदा नहीं हुआ। बक्रौल इक्रबाल:

ब-मुस्तफ़ा ﷺ ब-रसाँ ख्वेश रा कि दीं हमा ऊस्त

अगर बाव ना रसीदी तमाम बू लहबी ईस्त!

हालाँकि कुरान मज़ीद में कहीं मन्कूल नहीं है कि अल्लाह ने अपने नबी ﷺ को बैतुल मुक़द्दस की तरफ़ रुख करने का हुक्म दिया था। हो सकता है यह हुक्म वहिये ख़फ़ी के ज़रिये से दिया गया हो, ताहम वहिये ज़ली में यह हुक्म कहीं नहीं है कि अब येरुशलम की तरफ़ रुख करके नमाज़ पढ़िये। यह मुसलमानों का इत्तेबा-ए-रसूल ﷺ के हवाले से एक इम्तिहान था जिसमें वह सुख़ रू हुए। फिर जब यह हुक्म आया कि अपने रुख मस्जिदे हराम की तरफ़ फेर दो तो यह अब उन मुसलमानों का इम्तिहान था जो मदीना के रहने वाले थे। इसलिये कि उनमें से बाज़ यहूदियत तर्क तरके ईमान लाये थे। मसलन अब्दुल्लाह बिन सलाम रज़ि० उल्माये यहूद में से थे, लेकिन जो और दूसरे लोग थे वह भी उल्माये यहूद के ज़ेरे असर थे और उनके दिल में भी येरुशलम की अज़मत थी। अब जब उन्हें बैतुल्लाह की तरफ़ रुख करने का हुक्म हुआ तो उनके ईमान का इम्तिहान हो गया।

मज़ीद बराँ बाज़ लोगों के दिलों में यह ख़याल भी पैदा हुआ होगा कि अगर असल क़िब्ला बैतुल्लाह था तो हमने अब तक बैतुल मुक़द्दस की तरफ़ रुख करके जो नमाज़ें पढ़ी हैं उनका क्या बनेगा? क्या वह नमाज़ें ज़ाया हो गयीं। नमाज़ तो ईमान का रुकने रकीन है! चुनाँचे इस ऐतबार से भी बड़ी तशवीश पैदा हुई। इसके साथ ही एक मसला सियासी ऐतबार से यह पैदा हुआ कि यहूद अब तक यह समझ रहे थे कि मुसलमानों और मुहम्मद ﷺ ने हमारा क़िब्ला इख़्तियार कर लिया है, तो यह गोया हमारे ही पैरोकार हैं, लिहाज़ा हमें इनकी तरफ़ से कोई ख़ास अन्देशा नहीं है। लेकिन अब जब तहवीले क़िब्ला का हुक्म आ गया तो उनके कान खड़े हो गये कि यह तो कोई नयी मिल्लत है और एक नयी उम्मत की तशकील हो रही है। चुनाँचे उनकी

तरफ़ से मुख़ालफ़त के अन्दर शिद्दत पैदा हो गयी। यह सारे मज़ामीन यहाँ पर ज़ेरे बहस आ रहे हैं।

आयत 142

“अनक़रीब कहेंगे लोगों में से अहमक़ और बेवकूफ़ लोग”

سَيَقُولُ الشُّفَهَاءُ مِنَ النَّاسِ

“किस चीज़ ने फेर दिया इन्हें उस क़िबले से जिस पर यह थे?”

مَا وَلَّهُمْ عَنْ قِبْلَتِهِمُ الَّتِي كَانُوا عَلَيْهَا

यानि सौलह-सत्रह महीनों तक इन्होंने बैतुल मुक़द्दस की तरफ़ रुख करके नमाज़ पढ़ी है, अब इन्हें बैतुल्लाह की तरफ़ किसने फेर दिया?

“कह दीजिये कि अल्लाह ही के हैं मशरिक़ और मगरिब!”

قُلْ لِلَّهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ

यह वही अल्फ़ाज़ हैं जो चौदहवें रकूअ में तहवीले क़िब्ला की तम्हीद के तौर पर आये थे। अल्लाह तआला किसी एक सिम्त (दिशा) में महदूद नहीं हैं, बल्कि मशरिक़ व मगरिब और शिमाल व जुनूब सब उसी के हैं।

“वह जिसको चाहता है सीधे रास्ते की तरफ़ हिदायत दे देता है।”

يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ إِلَى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ

आयत 143

“और (ऐ मुसलमानों!) इसी तरह तो हमने तुम्हें एक उम्मत दे वस्त (दरमियानी उम्मत) बनाया है”

وَكَذَلِكَ جَعَلْنَاكُمْ أُمَّةً وَسَطًا

अब यह ख़ास बात कही जा रही है कि ऐ मुसलमानों! तुम इस तहवीले क़िब्ला को मामूली बात ना समझो, यह अलामत है इस बात की कि अब तुम्हें वह हैसियत हासिल हो गई है:

“ताकि तुम लोगों पर गवाह हो और रसूल तुम पर गवाह हो।”

لِتَكُونُوا شُهَدَاءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُونَ

الرَّسُولُ عَلَيْكُمْ سَهْمًا

अब यह तुम्हारा फ़र्ज मन्सबी (कर्तव्य) है कि रसूल صلی اللہ علیہ وسلم ने जिस दीन की गवाही तुम पर अपने क़ौल व अमल से दी है उसी दीन की गवाही तुम्हें अपने क़ौल और अमल से पूरी नौए इंसानी पर देनी है। अब तुम मुहम्मद रसूल صلی اللہ علیہ وسلم और नौए इंसानी के दरमियान वास्ता (link) बन गये हो। अब तक नबुवत का सिलसिला जारी था। एक नबी की तालीम ख़त्म हो जाती या उसमें तहरीफ़ हो जाती तो दूसरा नबी आ जाता। इस तरह पे दर पे अम्बिया व रसूल अलै० चले आ रहे थे और हर दौर में यह मामला तसलसुल (निरंतरता) के साथ चल रहा था। अब मुहम्मद रसूल صلی اللہ علیہ وسلم पर नबुवत ख़त्म हो रही है, लेकिन नस्ले इंसानी का सिलसिला तो क़ायामत तक जारी रहना है। लिहाज़ा अब आगे लोगों को तब्लीग़ करना, उन तक दीन पहुँचाना, उन पर हुज्जत क़ायम करना और शहादत अलन्नास का फ़रीज़ा सर अंजाम देना किसकी ज़िम्मेदारी होगी? पहले तो हमेशा यही होता रहा कि अल्लाह की तरफ़ से जिब्राइल अलै० वही लाये और नबी के पास आ गये, नबी ने लोगों को सिखा दिया। अब यह मामला इस तरह है कि अल्लाह से जिब्राइल अलै० वही लाये मुहम्मद रसूल صلی اللہ علیہ وسلم के पास और मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم ने सिखाया तुम्हें, और अब तुम्हें सिखाना है पूरी नौए इंसानी को! तो अब तुम्हारी हैसियत दरमियानी वास्ते की है। यह मज़मून सूरतुल हज की आखरी आयत में ज़्यादा वज़ाहत के साथ आयेगा।

كُنْزُكَ (इसी तरह) से मराद यह है कि तहवीले क़िब्ला इसका एक मज़हर (प्रदर्शन) है। इससे अब तुम अपनी ज़िम्मेदारियों का अंदाज़ा करो। सिर्फ़ ख़शियाँ ना मनाओ, बल्कि एक बहत बड़ी ज़िम्मेदारी का जो बोझ तुम पर आ गया है उसका इदराक़ (अहसास) करो। यही बोझ जब हमने अपने बंदे मुहम्मद صلی اللہ علیہ وسلم के कंधों पर रखा था तो उनसे भी कहा था (अल् मुज़्ज़मिल:5): {إِنَّا سَأَلْنَاكَ عَلَيْكَ بِرَّآءُ} (ऐ नबी! صلی اللہ علیہ وسلم) हम आप पर एक भारी बात डालने वाले हैं। वही भारी बात बहुत बड़े पैमाने पर अब तुम्हारे कंधों पर आ गई है।

“और नहीं म़क़रर किया था हमने वह क़िब्ला وَمَا جَعَلْنَا الْقِبْلَةَ الَّتِي كُنْتَ عَلَيْهَا जिस पर (ऐ नबी!) आप पहले थे”

إِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يَتَّبِعُ الرَّسُولَ مِمَّنْ يَنْقَلِبُ عَلَى عَقِبَيْهِ “मगर यह जानने के लिये (यह ज़ाहिर करने के लिये) कि कौन रसूल صلی اللہ علیہ وسلم का इत्तेबा करता है और कौन फिर जाता है उल्टे पाँव!”

यहाँ अल्लाह तआला ने बैतुल मक़द़स को क़िब्ला म़क़रर करने की निस्बत अपनी तरफ़ की है। यह भी हो सकता है कि अल्लाह तआला ने हिजरत के बाद बहिये ख़फ़ी के ज़रिये नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم को बैतुल मक़द़स की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ने का हक़म दिया हो, और यह भी हो सकता है कि यह आँहज़र صلی اللہ علیہ وسلم का इज्तेहाद (विचार) हो, और उसे अल्लाह ने क़बूल फ़रमा लिया हो। रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के इज्तेहाद पर अगर अल्लाह की तरफ़ से नफ़ी ना आये तो वह गोया अल्लाह ही की तरफ़ से है। बैतुल मक़द़स को क़िब्ला म़क़रर किया जाना एक इस्तिहान क़रार दिया गया कि कौन इत्तेबा-ए-रसूल صلی اللہ علیہ وسلم की रविश पर ग़ामजन रहता है और कौन दीन से फिर जाता है। इस आजमाइश में तमाम मसलमान कामयाब रहे और उनमें से किसी ने यह नहीं कहा कि ठीक है, हमारा क़िब्ला वह था, अब आपने अपना क़िब्ला बदल लिया है तो आपका रास्ता और है और हमारा रास्ता और!

وَإِنْ كَانَتْ لَكَبِيرَةً إِلَّا عَلَى الَّذِينَ هَدَى اللَّهُ “और यकीनन यह बहत बड़ी बात थी मगर उनके लिये (दुश्वार ना थी) जिनको अल्लाह ने हिदायत दी।”

वाक़्या यह है कि इतनी बड़ी तब्दीली कुबूल कर लेना आसान बात नहीं होती। यह बड़ा हस्सास मसला होता है।

وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُضِلَّ إِيمَانَكُمْ “और अल्लाह हरगिज़ तुम्हारे ईमान को ज़ाया करने वाला नहीं है।”

ईमान से यहाँ मराद नमाज़ है जिसे दीन का सतून क़रार दिया गया है। यह बात उस तशबीह (चिंता) के जवाब में फ़रमायी गयी जो बाज़ मसलमानों को लाहक़ हो गयी थी कि हमारी उन नमाज़ों का क्या बनेगा जो हमने सौलह महीने बैतुल मक़द़स की तरफ़ रुख़ करके पढ़ी हैं? मसलमान तो रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के हक़म का पाबंद है, उस वक़्त रसूल का वह हक़म था, वह अल्लाह के यहाँ मक़बूल ठहरा, इस वक़्त यह हक़म है जो तुम्हे रसूल की जानिब से मिल रहा है, अब तुम इसकी पैरवी करो।

“यक्कीनन अल्लाह तआला इंसानों के हक़ में बहुत ही शफ़ीक़ और बहुत ही रहीम है।”

إِنَّ اللَّهَ بِالنَّاسِ لَرُؤُوفٌ رَّحِيمٌ ۝

आयत 144

“(ऐ नबी ﷺ) बिला शबह हम आपके चेहरे का बार-बार आसमान की तरफ़ उठाना देखते रहे हैं।”

قَدْ نَرَى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِي السَّمَاءِ ۝

मालूम होता है कि ख़ुद रसूल अल्लाह ﷺ को तहवीले किब्ला के फ़ैसले का इन्तेज़ार था और आप ﷺ पर भी यह वक्फ़ा (अन्तराल) शाक़ (कठिन) गज़र रहा था जिसमें नमाज़ पढ़ते हए बैतुल्लाह की तरफ़ पीठ हो रही थी। चनाँचे आपकी निगाहें बार-बार आसमान की तरफ़ उठती थीं कि कब जिब्रीले अमीन तहवीले किब्ला का हुक्म लेकर नाज़िल हों।

“सो हम फेर देते हैं आपको उसी किब्ले की तरफ़ जो आपको पसंद है।”

فَلَنُؤَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً تَرْضَاهَا ۝

इस आयत में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के लिये अल्लाह की तरफ़ से बड़ी मोहब्बत, बड़ी शफ़क़त और बड़ी इनायत का इज़हार हो रहा है। ज़ाहिर बात है कि रसूल अल्लाह ﷺ को बैतुल्लाह के साथ बड़ी मोहब्बत थी, उसके साथ आप ﷺ का एक रिश्ता क़ल्बी था।

“तो बस अब फेर दीजिये अपने रुख़ को मस्जिदे हराम की तरफ़।”

قَوْلٍ وَجْهِكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۝

“और (ऐ मुसलमानों!) जहाँ कहीं भी तुम हो अब अपना चेहरा (नमाज़ में) उसी की तरफ़ फेर।”

وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوْا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ ۝

“और यह लोग जिन्हें किताब दी गई थी, जानते हैं कि यह (तहवीले किब्ला का हुक्म) हक़ है उनके परवरदिगार की तरफ़ से।”

وَأَنَّ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ لَيَعْلَمُونَ أَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ ۝

तौरात में भी यह मज़कूर था कि असल किब्ला इब्राहिमी अलै० बैतुल्लाह ही था। बैतुल मुक़द्दस को तो हज़रत इब्राहीम अलै० के एक हज़ार साल बाद

हज़रत सुलेमान अलै० ने तामीर किया था, जिसे “हैकले सुलेमानी” से मौसूम (मनोनीत) किया जाता है। अलै० से मराद यहाँ बैतुल्लाह का इस उम्मत के लिये किब्ला होना है। इस बात का हक़ होना और अल्लाह तआला की तरफ़ से होना यहद पर वाज़ेह था और इसके इशारात व क़राइन (सबूत) तौरात में मौजूद थे, लेकिन यहद अपने हसद और अनाद (विरोध) के सबब इस हकीक़त को भी दूसरे बहत से हकाइक़ की तरह जानते-बझते छपाते थे। इस मौज़ को समझने के लिये मौलाना हमीदुद्दीन फ़राही साहब का रिसाला (पत्रिका) “الرأى الصحيح فى من هو الذبيح” बहुत अहम है, जिसका उर्दू तर्जुमा मौलाना अमीन अहसन इस्लाही साहब ने “ज़बीह कौन है?” के उन्वान से किया है।

“और अल्लाह ग़ाफ़िल नहीं है उससे जो वह कर रहे हैं।”

وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُونَ ۝

आयत 145

“और (ऐ नबी ﷺ) अगर आप इन अहले किताब के सामने हर किस्म की निशानियाँ पेश कर दें तब भी यह आपके किब्ले की पैरवी नहीं करेंगे।”

وَلَيْنَ أَتَيْتَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ بِكُلِّ آيَةٍ مَّا تَبِعُوا قِبْلَتَكَ ۝

“और ना ही अब आप पैरवी करने वाले हैं इनके किब्ले की।”

وَمَا أَنْتَ بِتَابِعٍ قِبْلَتَهُمْ ۝

यह तो {لَكُمْ دِينُكُمْ وَدِينِ} वाला मामला हो गया।

“और ना ही वह एक-दूसरे के किब्ले की पैरवी करने वाले हैं।”

وَمَا بَعْضُهُمْ بِتَابِعٍ قِبْلَةَ بَعْضٍ ۝

हद यह है कि यह ख़ुद आपस में एक-दूसरे के किब्ले की पैरवी नहीं करते। अगरचे यहद व नसारा सबका किब्ला येरुशलम है, लेकिन ऐन येरुशलम में जाकर यहूदी हैकल सुलेमानी का मग़रबी गोशा इख़्तियार करते थे और मग़रिब की तरफ़ रुख़ करते थे, जबकि नसारा मशरिक् की तरफ़ रुख़ करते थे, इसलिये कि हज़रत मरियम सलामुनअलैहा ने जिस मकान में ऐतकाफ़ किया था और जहाँ फ़रिश्ता उनके पास आया था वह हैकल के मशरिक्की गोशे

में था, जिसके लिये कुरान हकीम में “مَكَّا شَرُوءًا” का लफ़्ज़ आया है। ईसाईयों ने इसी मशरिकी घर को अपना क़िब्ला बना लिया।

“और (ऐ नबी ﷺ! बिलफ़ज़) अगर आपने इनकी ख़्वाहिशात की पैरवी की”

وَلَيْنِ اتَّبَعْتَ أَهْوَاءَهُمْ

“उस इल्म के बाद जो आप के पास आ चुका है”

مِّنْ بَعْدِ مَا جَاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ

“तो बिला शुबह आप भी जुल्म करने वालों में से हो जायेंगे।” (मआज़ अल्लाह)

إِنَّكَ إِذَا لَنِ الظَّالِمِينَ

आयत 146

“जिन लोगों को हमने किताब दी है वह इसको ऐसे पहचानते हैं जैसा कि अपने बेटों को पहचानते हैं।”

الَّذِينَ آتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَعْرِفُونَهُ كَمَا يَعْرِفُونَ أَبْنَاءَهُمْ

यहाँ यह नुक्ता नोट कर लीजिये कि कुरान हकीम में तौरात और इंजील के मानने वालों में से ग़लतकारों के लिये मजहूल का सीगा आता है {أَوْثُوا الْكِتَابَ} “जिन्हें किताब दी गई थी” और जो उनमें से सालेहीन थे, सही रुख पर थे, उनके लिये मारुफ़ का सीगा आता है, जैसे यहाँ आया है। {يَعْرِفُونَهُ} में ज़मीर (6) का मरजा क़िब्ला भी है, कुरान भी है और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ भी हैं।

“अलबत्ता उनमें से एक ग़िरोह वह है”

وَأَن فَرِيقًا مِنْهُمْ

“जो जानते-बूझते हक़ को छुपाता है।”

لَيَكْتُمُونَ الْحَقَّ وَهُمْ يَعْلَمُونَ

आयत 147

“यह हक़ है आप ﷺ के रब की तरफ़ से”

الْحَقُّ مِن رَّبِّكَ

इसका तर्जुमा यूँ भी किया गया है: “हक़ वही है जो आपके रब की तरफ़ से है।”

“तो आप हरगिज़ शक करने वालों में से ना बनें।”

فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُبْتَلِينَ

ख़िताब का रुख़ रसूल अल्लाह ﷺ की तरफ़ है और आप ﷺ की वसातत (ज़रिये) से दरअसल हर मुसलमान से यह बात कही जा रही है कि इस बारे में कोई शक व शुबह अपने पास मत आने दो कि यही तो हक़ है तुम्हारे परवरदिगार की तरफ़ से।”

आयत 148

“हर एक के लिये एक सिम्त है जिसकी तरफ़ वह रुख़ करता है”

وَلِكُلٍّ وِجْهَةٌ هُوَ مُوَلِّيهَا

“तो (मुसलमानों!) तुम नेकियों में सबक़त (बढत) करो।”

فَاسْتَبِقُوا الْحَيْرَاتِ

हमने तुम्हारे लिये एक रुख़ मुअय्यन कर दिया, यानि बैतुल्लाह। और एक बातिनी रुख़ तुम्हें यह इख़्तियार करना है कि नेकियों की राह में एक-दूसरे से आगे बढने की कोशिश करो। जैसे नमाज़ का एक ज़ाहिर और एक बातिन है। ज़ाहिर यह है कि आपने बावजू होकर क़िबले की तरफ़ रुख़ कर लिया और अरकाने नमाज़ अदा किये, जबकि नमाज़ का बातिन खुशुअ व खुजूअ, हुजूरे क़ल्ब और रक़त है। इंसान को यह अहसास हो कि वह परवरदिगारे आलम के रू-ब-रू हाज़िर हो रहा है।

“जहाँ कहीं भी तुम होगे अल्लाह तुम सबको जमा करके ले आयेगा।”

إِن مَّا تَكُونُوا آيَاتِ بِكُمْ اللَّهُ جَمِيعًا

“यक़ीनन अल्लाह तआला हर चीज़ पर क़ादिर है।”

إِنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ

आयत 149

“और जहाँ कहीं से भी आप ﷺ निकलें तो

وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ

(नमाज़ के वक़्त) आप अपना रुख़ फेर लीजिये मस्जिदे हराम की तरफ़।”

الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

“और यक़ीनन यह हक़ है आप ﷺ के रब की तरफ़ से”

وَأِنَّهُ لَلْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ

“और अल्लाह गाफ़िल नहीं है उससे जो तुम कर रहे हो।”

وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ۝

जैसा कि पहले अर्ज़ किया गया, यहाँ कलाम बज़ाहिर आँहुज़ूर ﷺ से है, मगर असल में आप ﷺ की वसातत से तमाम मुसलमानों से ख़िताब है। दोबारा फ़रमाया गया:

आयत 150

“और जहाँ कहीं से भी आप निकलें तो आप अपना रुख़ (नमाज़ के वक़्त) मस्जिदे हराम ही की तरफ़ कीजिये।”

وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

“और (ऐ मुसलमानों!) जहाँ कहीं भी तुम हो तो (नमाज़ के वक़्त) अपने चेहरों को उसी की जानिब फेर दो”

وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوْا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ

तुम ख़्वाह अमेरिका में हो या रूस में, नमाज़ के वक़्त तुम्हें बैतुल्लाह ही की तरफ़ रुख़ करना होगा।

“ताकि बाक़ी ना रहे लोगों के पास तुम्हारे ख़िलाफ़ कोई दलील”

لِّئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ

यानि अहले किताब बिलख़ुसूस यहूद के लिये तुम्हारे ख़िलाफ़ बदगुमानी फैलाने का कोई मौक़ा बाक़ी ना रह जाये। तौरात में मज़कूर था कि नबी आखिरुज़्ज़मा का क़िब्ला ख़ाना काबा होगा। अगर आँहुज़ूर ﷺ यह क़िब्ला इख़्तियार ना करते तो उल्माये यहूद मुसलमानों पर हुज्जत कायम करते। तो यह गोया उनके ऊपर इत्मा मे हुज्जत भी हो रहा है और क़ता उज़र भी।

“सिवाय उनके जो उनमें से ज़ालिम हैं।”

إِلَّا الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ

शरीर (दुष्ट) लोग इस क़ता हुज्जत के बाद भी बाज़ आने वाले नहीं और वह ऐतराज़ करने के लिये लाख हीले बहाने बनाएँगे, उनकी ज़बान किसी हाल में बंद ना होगी।

“तो (ऐ मुसलमानों!) उनसे ना डरो”

فَلَا تَخْشَوْهُمْ

“और मुझसे डरो।”

وَاحْشَوْنِي

“और इसलिये कि मैं तुम पर अपनी नेअमत तमाम कर दूँ”

وَلَا أَمْلَأُ نِعْمَتِي عَلَيْكُمْ

यह जो तहवीले क़िब्ला का मामला हुआ है और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की बेअसत की बुनियाद पर एक नयी उम्मत तश्कील दी जा रही है, उसे इमामतुन्नास से सरफ़राज़ किया जा रहा है और विरासते इब्राहिमीअलै० अब इसे मुन्तक़िल हो गयी है, यह इसलिये है ताकि ऐ मुसलमानों! मैं तुम पर अपनी नेअमत पूरी कर दूँ।

“और ताकि तुम हिदायत याफ़्ता बन जाओ।”

وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ۝

आयत 151

“जैसे कि हमने भेज दिया है तुम्हारे दरमियान एक रसूल ख़ुद तुम में से”

كَمَا أَرْسَلْنَا فِيكُمْ رَسُولًا مِنْكُمْ

“वह तिलावत करता है तुम पर हमारी आयात”

يَتْلُوا عَلَيْكُمْ آيَاتِنَا

“और तुम्हें पाक करता है” (तुम्हारा तज़क़िया करता है)

وَيُزَكِّيكُمْ

“और तुम्हें तालीम देता है किताब और हिक़मत की”

وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ

“और तुम्हें तालीम देता है उन चीज़ों की जो तुम्हें मालूम नहीं थीं।”

وَيُعَلِّمُكُم مَّا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ﴿٥٠﴾

यहाँ हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल अलै० की दुआ याद कर लीजिये जो आयत 129 में मज़कूर हुई है। उस दुआ का ज़हूर तीन हज़ार बरस बाद बेअसते मुहम्मदी ﷺ की शकल में हो रहा है। यहाँ एक नुक्ता बड़ा अहम है कि हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल अलै० की दुआ में जो तरतीब थी, यहाँ अल्लाह ने उसको बदल दिया है। दुआ में तरतीब यह थी: तिलावते आयात, तालीमे किताब व हिकमत, फिर तज़किया। यहाँ पहले तिलावते आयात, फिर तज़किया और फिर तालीमे किताब व हिकमत आया है। ज़ाहिर बात है कि हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल अलै० ने जो बात कही वह भी ग़लत तो नहीं हो सकती, लेकिन हम यह कह सकते हैं कि इसकी तन्फ़ीज़शुदा (imposed) सूरत यह है जो अल्लाह तआला की तरफ़ से दी गयी। इसलिये कि तज़किया मुक़द्दम है, अगर नीयत सही नहीं है तो तालीमे किताब व हिकमत मुफ़ीद नहीं होगी, बल्कि गुमराही में इज़ाफ़ा होगा। नीयत कज (टेढ़ी) है तो गुमराही बढ़ती चली जायेगी। तज़किये का हासिल इख़लास है, यानि नीयत दुरुस्त हो जाये। अगर यह नहीं है तो कोई जितना बड़ा आलिम होगा वह उतना बड़ा शैतान भी बन सकता है। वाक्या यह है कि बड़े-बड़े फ़ितने आलिमों ने ही उठाये हैं। “दीने अकबरी” या “दीने इलाही” की तद्दीन का ख़याल तो अकबर के बाप दादा को भी नहीं आ सकता था, यह तो अबुल फ़ज़ल और फ़ैज़ी जैसे उलमा थे जिन्होंने उसे यह पट्टी पढ़ाई। इसी तरह गुलाम अहमद क़ादयानी को भी उल्टी पट्टियाँ पढ़ाने वाला हकीम नूरुद्दीन था, जो बहुत बड़ा अहले हदीस आलिम था। तो दरहकीक़त कोई जितना बड़ा आलिम होगा अगर उसकी नीयत कज हो गई तो वह उतना ही बड़ा फ़ितना उठा देगा। इस पहलु से तज़किया मुक़द्दम है। और इसका सबूत यह है कि यही मज़मून सूरह आले इमरान में और फिर सूरतुल जुमा में भी आया है, वहाँ भी तरतीब यही है:

(1) तिलावते आयात

(2) तज़किया

(3) तालीमे किताब व हिकमत।

आयत 152

“पस तुम मुझे याद रखो, मैं तुम्हें याद रखूँगा”

فَاذْكُرُونِي أَذْكَرُكُمْ

यह अल्लाह तआला और बंदों के दरमियान एक बहुत बड़ा मीसाक़ और मुआहिदा है। इसकी शरह (विवरण) हदीसे कुदसी में बाअलफ़ाज़ आयी है: ((اَكْمَعَةُ اِذَا ذَكَرْنِي فَاِنْ ذَكَرْنِي فِي نَفْسِهِ ذَكَرْتُهُ فِي نَفْسِي. وَاِنْ ذَكَرْنِي فِي مَلَاءٍ ذَكَرْتُهُ فِي مَلَاءٍ خَيْرٌ مِنْهُمْ)) (16) “मेरा बंदा जब मुझे याद करता है तो मैं उसके पास होता हूँ, अगर वह मुझे अपने दिल में याद करता है तो मैं भी उसे अपने जी में याद करता हूँ, और अगर वह मुझे किसी महफ़िल में याद करता है तो मैं उसे उससे बहुत बेहतर महफ़िल में याद करता हूँ।” उसकी महफ़िल तो बहुत बुलंद व बाला है, वह मला-उल-आला की महफ़िल है, मलाइका मुक़रबीन की महफ़िल है। अमीर खुसरो मालूम नहीं किस आलम में ये शेर कह गये थे:

खुदा खुद मेरे महफ़िल बुद अंदर ला मकान खुसरो

मुहम्मद ﷺ शमा महफ़िल बुद शब जाये कि मन बुदम!

“और मेरा शुक्र करो, मेरी नाशुक्री मत करना।”

وَاشْكُرُوا لِي وَلَا تَكْفُرُونِ ﴿٥١﴾

मेरी नेअमतों का इदराक़ करो, उनका शऊर हासिल करो। ज़बान से भी मेरी नेअमतों का शुक्र अदा करो और अपने अमल से भी, अपने आज्ञा व जवारह (अंगों) से भी इन नेअमतों का हक़ अदा करो।

यहाँ इस सूरह मुबारक का निस्फ़े अब्बल मुकम्मल हो गया है जो अट्टारह रकूओं पर मुश्तमिल है।

आयात 153 से 163 तक

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ إِنَّ اللَّهَ مَعَ الصَّابِرِينَ ﴿٥٢﴾ وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ يُقْتَلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمْوَاتٌ بَلْ أَحْيَاءٌ وَلَكِنْ لَا تَشْعُرُونَ ﴿٥٣﴾ وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوعِ وَنَقْصٍ مِّنَ الْأَمْوَالِ وَالْأَنْفُسِ وَالثَّمَرَاتِ وَبَشِّرِ الصَّابِرِينَ ﴿٥٤﴾ الَّذِينَ إِذَا أَصَابَتْهُمُ مُصِيبَةٌ قَالُوا إِنَّا لِلَّهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ ﴿٥٥﴾

أُولَئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِنْ رَبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ وَأُولَئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ﴿١٥٠﴾ إِنَّ الصَّغَا
وَالْمَرْوَةَ مِنْ شَعَائِرِ اللَّهِ فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ أَوْ اعْتَمَرَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَنْ يَطَّوَّفَ بِهَا
وَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَإِنَّ اللَّهَ شَاكِرٌ عَلِيمٌ ﴿١٥١﴾ إِنَّ الَّذِينَ يَكْفُرُونَ مَا أَنْزَلْنَا مِنَ
الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدَى مِنْ بَعْدِ مَا بَيَّنَّاهُ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ أُولَئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللَّهُ وَيَلْعَنُهُمُ
الْعَالَمُونَ ﴿١٥٢﴾ إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَبَيَّنَّاهُ فَأُولَئِكَ أَتُوبُ عَلَيْهِمْ وَأَنَا التَّوَّابُ
الرَّحِيمُ ﴿١٥٣﴾ إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ أُولَئِكَ عَلَيْهِمْ لَعْنَةُ اللَّهِ وَالْمَلَائِكَةِ
وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ﴿١٥٤﴾ خَالِدِينَ فِيهَا لَا يَخْفَى عَنْهُمْ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ﴿١٥٥﴾
وَالْهُكْمُ لِلَّهِ وَالْوَاحِدِ لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ الرَّحْمَنُ الرَّحِيمُ ﴿١٥٦﴾

सूरतुल बक्ररह के उन्नीसवें रुकूअ से अब उम्मत मुस्लिमा से बराहे रास्त ख़िताब है। इससे क़ब्ल इस उम्मत की ग़ज़े तासीस (स्थापना) बाअल्फ़ाज़ बयान की जा चुकी है: {لَتَكُونُوا شُهَدَاءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُونَ الرَّسُولُ عَلَيْكُمْ شَهِيدًا} (आयत:143) “ताकि तुम लोगों पर गवाही देने वाले बनो और रसूल ﷺ तुम पर गवाही देने वाले बने।” गोया अब तुम हमेशा-हमेश के लिये मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और नौए इंसानी के दरमियान वास्ता हो। एक हदीस में उल्माये हक़ के बारे में फ़रमाया गया है: ((إِنَّ الْعُلَمَاءَ هُمْ وَرَثَةُ الْأَنْبِيَاءِ)) (17) “यक़ीनन उलमा ही अम्बिया के वारिस है।” इसलिये कि अब नबुवत तो ख़त्म हो गई ख़ातिमुल मुर्सलीन मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर, लेकिन यह आख़री किताब क़ायमत तक रहेगी, इसको पहुँचाना है, इसको आम करना है, और सिर्फ़ तब्लीग़ से नहीं अमल करके दिखाना है। वह निज़ाम अमलन क़ायम करके दिखाना है जो मुहम्मद अरबी ﷺ ने क़ायम किया था, तब हुज्जत क़ायम होगी। इसके लिये तुम्हें कुर्बानियाँ देनी होंगी, मुश्किलात झेलनी होंगी, जान व माल का नुक़सान बर्दाश्त करना होगा। आराम से घर बैठे, ठन्डे पेटों हक़ नहीं आ जायेगा, कुफ़्र इस तरह जगह नहीं छोड़ेगा। कुफ़्र को हटाने के लिये, बातिल को ख़त्म करने के लिये और हक़ को क़ायम करने के लिये तुम्हें तन-मन-धन लगाने होंगे। चुनाँचे अब पुकार आ रही है:

आयत 153

“ऐ ईमान वालो! सब्र और नमाज़ से मदद चाहो।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ

पाँचवें रुकूअ की सात आयतों को मैंने बनी इसराइल से ख़िताब के ज़िमान में बमज़िला-ए-फ़ातिहा करार दिया था। वहाँ पर यह अल्फ़ाज़ आये थे:

“और मदद चाहो सब्र और नमाज़ से, और यक़ीनन यह भारी चीज़ है मगर उन लोगों के लिये जो डरने वाले हैं, जो गुमान रखते हैं कि वह अपने रब से मुलाक़ात करने वाले हैं और वह उसी की तरफ़ लौटने वाले हैं।”

وَاسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ وَإِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ إِلَّا عَلَى الْخَاشِعِينَ ﴿١٥٦﴾ الَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُمْ مُلَاقُوا رَبِّهِمْ وَأَنَّهُمْ إِلَيْهِ رَاجِعُونَ ﴿١٥٧﴾

अब यही बात अहले ईमान से कही जा रही है।

“जान लो कि अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है।”

إِنَّ اللَّهَ مَعَ الصَّابِرِينَ ﴿١٥٨﴾

अल्लाह तआला की मईयत (साथ) से क्या मुराद है! एक बात तो मुत्तफ़िक्क़ अलैय है कि अल्लाह की मदद, अल्लाह की ताईद (समर्थन), अल्लाह की नुसरत उनके शामिले हाल है। बाक़ी यह है कि जहाँ कहीं भी हम हैं अल्लाह हमारे साथ है। उसकी कैफ़ियत हम नहीं जानते, लेकिन खुद उसका फ़रमान है कि “हम तो इंसान से उसकी रगेजान से भी ज़्यादा करीब हैं।” (क़ाफ़:16)

आयत 154

“और मत कहो उनको जो अल्लाह की राह में क़त्ल हो जाएँ कि वह मुर्दा हैं।”

وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ يُقْتَلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمْوَاتٌ

अब पहले ही क़दम पर अल्लाह की राह में क़त्ल होने की बात आ गई “शतें अब्बल क़दम ई अस्त कि मजनून बाशी!” ईमान का अब्बलीन तक्राज़ा यह है कि जानें देने के लिये तैयार हो जाओ।

“(वो मुर्दा नहीं हैं) बल्कि ज़िन्दा हैं, लेकिन तुम्हें इसका शऊर नहीं है।”

بَلْ أَحْيَاءٌ وَلَكِنْ لَا تَشْعُرُونَ ﴿١٥٩﴾

जो अल्लाह की राह में क़त्ल हो जाएँ उनको जन्नत में दाखिले के लिये यौमे आखिरत तक इन्तेज़ार नहीं करना होगा, शहीदों को तो उसी वक़्त बराहे रास्त जन्नत में दाखिला मिलता है, लिहाज़ा वह तो ज़िन्दा हैं। यही मज़मून सूरह आले इमरान में और ज़्यादा निखर कर सामने आयेगा।

आयत 155

“और हम तुम्हें लाज़िमन आज़माएँगे किसी
क़द्र ख़ौफ़ और भूख से”

وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوعِ

देख लो, जिस राह में तुमने क़दम रखा है यहाँ अब आज़माइशें आयेंगी, तकलीफ़ें आयेंगी। रिश्तेदार नाराज़ होंगे, शौहर और बीबी के दरमियान तफ़रीक़ होगी, औलाद वालिदैन से जुदा होगी, फ़साद होगा, फ़तूर होगा तसादुम होगा, जान व माल का नुक़सान होगा। हम ख़ौफ़ की कैफ़ियत से भी तुम्हारी आज़माइश करेंगे और भूख से भी। चुनाँचे सहाबा किराम रज़ि० ने कैसी-कैसी सख़्तियाँ झेलीं और कई-कई रोज़ के फ़ाक़े बर्दाश्त किये। ग़ज़वा-ए-अहज़ाब में क्या हालात पेश आये हैं! उसके बाद जैशुल असरा (ग़ज़वा-ए-तबूक) में क्या कुछ हुआ है!

“और मालों और जानों और समारात (फ़लों)
के नुक़सान से”

وَنَقْصِصَ مِنَ الْأَمْوَالِ وَالْأَنْفُسِ وَالثَّمَرَاتِ

माली और जानी नुक़सान भी होंगे और समारात का नुक़सान भी होगा। “समारात” यहाँ दो मायने दे रहा है। मदीने वालों की मईशत (अर्थव्यवस्था) का दारोमदार ज़राअत (कृषि) और बाग़वानी पर था। ख़ासतौर पर खज़ूर उनकी पैदावार थी, जिसे आज की इस्तलाह में cash crop कहा जायेगा। अब ऐसा भी हुआ कि फ़सल पक कर तैयार खड़ी है और अगर उसे दरख़्तों से उतारा ना गया तो ज़ाया हो जायेगी, उधर से ग़ज़वा-ए-तबूक का हुक़म आ गया कि निकलो अल्लाह की राह में! तो यह इम्तिहान है समारात के नुक़सान का। इसके अलावा समारात का एक और मफ़हूम है। इंसान बहुत मेहनत करता है, जद्दो-जहद करता है, एक कैरियर अपनाता है और उसमें अपना एक मक़ाम बना लेता है। लेकिन जब वह दीन के रास्ते पर आता है तो कुछ और ही शक़ल इख़्तियार करनी पड़ती है। चुनाँचे अपनी तिज़ारत के ज़माने में या

किसी प्रोफ़ेशन में अपना मक़ाम बनाने में उसने जो मेहनत की थी वह सब की सब सिफ़र होकर रह जाती है, और अपनी मेहनत के समारात से बिल्कुल तहे दामन होकर उसे इस वादी में आना पड़ता है।

“और (ऐ नबी ﷺ) बशारत दीजिये इन
सब्र करने वालों को”

وَبَشِّرِ الصَّابِرِينَ

आयत 156

“वह लोग कि जिनको जब भी कोई मुसीबत
आये”

الَّذِينَ إِذَا أَصَابَتْهُمُ مُصِيبَةٌ

“तो वह कहते हैं कि बेशक हम अल्लाह ही के
हैं और उसी की तरफ़ हमें लौट जाना है।”

قَالُوا إِنَّا لِلَّهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ رَاجِعُونَ

आख़िरकार तो यहाँ से जाना है, अगर कल की बजाये हमें आज ही बुला लिया जाये तब भी हाज़िर हैं। बक्रौल इक्रबाल:

निशाने मर्दे मोमिन बा तो गोयम

चूँ मर्ग आयद तबस्सुम बर लवे ऊस्त!

यानि मर्दे मोमिन की तो निशानी ही यही है कि जब मौत आती है तो मुसरत (खुशी) के साथ उसके होठों पर मुस्कुराहट आ जाती है। वह दुनिया से मुस्कुराता हुआ रुख़सत होता है। यह ईमान की अलामत है और बंदा-ए-मोमिन इस दुनिया में ज़्यादा देर तक रहने की ख़्वाहिश नहीं कर सकता। उसे मालूम है कि वह दुनिया में जो लम्हा भी गुज़ार रहा है उसे इसका हिसाब देना होगा। तो जितनी उम्र बढ़ रही है हिसाब बढ़ रहा है। चुनाँचे हदीस में दुनिया को मोमिन के लिये क़ैदख़ाना और काफ़िर के लिये जन्नत करार दिया गया है: ((الْدُّنْيَا سِجْنُ الْمُؤْمِنِ وَجَنَّةُ الْكَافِرِ))⁽¹⁸⁾

आयत 157

“यही हैं वह लोग कि जिन पर उनके रब की
इनायतें हैं और रहमत।”

أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَواتٌ مِّن رَّبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ

इन पर हर वक़्त अल्लाह की इनायतों का नुज़ूल होता रहता है और रहमत की बारिश होती रहती है।

“और यही लोग हिदायत याफ़ता हैं।”

وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْهَادُونَ ﴿٥٧﴾

यह वह लोग हैं जिन्होंने वाक़िअतन हिदायत को इख़्तियार किया है। और जो ऐसे मरहले पर ठिठक कर खड़े रह जायें, पीछे हट कर बैठ जायें, पीठ मोड़ लें तो गोया वह हिदायत से तहे दामन हैं।

आयत 158

“यक़ीनन सफ़ा और मरवा अल्लाह के शआइर (निशानियों) में से हैं।”

إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِن شَعَائِرِ اللَّهِ

यह आयत असल सिलसिला-ए-बहस यानि क़िब्ले की बहस से मुताल्लिक है। बाज़ लोगों के ज़हनों में यह सवाल पैदा हुआ कि हज के मनासिक में यह जो सफ़ा और मरवा की सई है तो इसकी क्या हकीकत है? फ़रमाया कि यह भी अल्लाह के शआइर में से हैं। शआइर, शईराह की जमा है जिसके मायने ऐसी चीज़ के हैं जो शऊर बख़्शे, जो किसी हकीकत का अहसास दिलाने वाली और उसका मज़हर और निशान हो। चुनाँचे वह मज़ाहिर जिनके साथ उलुल अज़म पैगम्बरों या उलुल अज़म औलिया अल्लाह के हालात व वाक़िआत का कोई ज़हनी सिलसिला कायम होता हो और जो अल्लाह और रसूल ﷺ की तरफ़ से बतौर एक निशान और अलामत मुक़रर किये गये हों शआइर कहलाते हैं। वह गोया बाज़ मानवी हकाइक का शऊर दिलाने वाले और ज़हन को अल्लाह की तरफ़ ले जाने वाले होते हैं। इस ऐतबार से बैतुल्लाह, हज़रे अस्वद, जमरात और सफ़ा व मरवा अल्लाह तआला के शआइर में से हैं।

“तो जो कोई भी बैतुल्लाह का हज करे या उमरा करे तो उस पर कोई हर्ज नहीं है कि उन दोनों का तवाफ़ भी करे।”

فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ أَوِ اعْتَمَرَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَنْ يَطَّوَّفَ بِهِمَا

सफ़ा व मरवा के तवाफ़ से मराद वह सई है जो इन दोनों पहाड़ियों के दरमियान सात चक्करों की सूरत में की जाती है।

“और जो शख्स खुशदिली से कोई भलाई का

وَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا

काम करत है”

“तो (जान लो कि) अल्लाह बड़ा क़द्रदान है, जानने वाला है।”

فَإِنَّ اللَّهَ شَآكِرٌ عَلِيمٌ ﴿٥٨﴾

यहाँ अल्लाह तआला के लिये लफ़्ज़ “शाकिर” आया है। लफ़्ज़ शक्र की निस्बत जब बंदे की तरफ़ हो तो इसके मायने शक्रगज़ारी और अहसानमंदी के होते हैं, लेकिन जब इसकी निस्बत अल्लाह तआला की तरफ़ हो तो इसके मायने क़द्रदानी और क़बूल करने के हो जाते हैं। “शाकिर” के साथ दूसरी सिफ़त “अलीम” आई है कि वह सब कुछ जानने वाला है। चाहे किसी और को पता ना लगे उसे तो ख़ूब मालूम है। अगर तमने अल्लाह की रज़ाजोई के लिये किसी को कोई माली मदद दी है, इस हाल में कि दाहिने हाथ ने जो कुछ दिया है उसकी बायें हाथ को भी ख़बर नहीं होने दी, बजाय यह कि किसी और इंसान के सामने उसका तज़क़िरा हो, तो यह अल्लाह के तो इल्म में है, चुनाँचे अगर अल्लाह से अज़्रो सवाब चाहते हो तो अपनी नेकियों का ढिंढोरा पीटने की कोई ज़रूरत नहीं, लेकिन अगर तमने यह सब कुछ लोगों को दिखाने के लिये किया था तो गोया वह शिर्क हो गया।

आयत 159

“यक़ीनन वह लोग जो छुपाते हैं उस शय को जो हमने नाज़िल की बय्यिनात में से और हिदायत में से”

إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلْنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدَىٰ

“बाद इसके कि हमने उसको वाज़ेह कर दिया है लोगों के लिये किताब में”

مِنْ بَعْدِ مَا بَيَّنَّاهُ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ

“तो वही लोग हैं कि जिन पर लानत करता है अल्लाह और लानत करते हैं तमाम लानत करने वाले।

وَأُولَٰئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللَّهُ وَيَلْعَنُهُمُ اللَّعْنُونَ ﴿٥٩﴾

इस आयत में यहूद की तरफ़ इशारा है, जिनकी मआनदाना (दुश्मनी की) रविश का ज़िक्र पहले गुज़र चुका है। यहाँ अब गोया आख़री क़तई सफ़ाई (mopping up operation) के तौर पर उनके बारे में चंद बातों का मज़ीद

इज़ाफ़ा किया जा रहा है। यहाँ बय्यिनात और हुदा से खास तौर पर वह निशानियाँ मुराद हैं जो अल्लाह तआला ने तौरात में नबी आख़िरुज़्ज़मा صلی اللہ علیہ وسلم के बारे में यहूद की रहनुमाई के लिये वाज़ेह फ़रमायी थी। लेकिन यहूद ने उन निशानियों से रहनुमाई हासिल करने के बजाय उनको छुपाने की कोशिश की। आयत 140 में हम पढ़ आये हैं: {وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ} “और उस शख्स से बढ़ कर ज़ालिम और कौन होगा जिसके पास अल्लाह की तरफ़ से एक गवाही थी जिसे उसने छुपा लिया।” यहाँ इसकी वज़ाहत हो रही है कि तौरात और इंजील में कैसी-कैसी खुली शहादते थीं, और उनको यह छुपाये फिर रहे हैं!

आयत 160

“सिवाय उनके जो तौबा करें और इस्लाह कर लें और (जो कुछ छुपाते थे उसे) वाज़ेह तौर पर बयान करने लगे”

إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَبَيَّنُّوا

“तो उनकी तौबा में कुबूल करूँगा।”

فَأُولَٰئِكَ أَتُوبُ عَلَيْهِمْ

मैं अपनी निगाहे उल्टफ़ात (प्यार भारी निगाह) उनकी तरफ़ मुतवज्जह कर दूँगा।

“और मैं तो हूँ ही तौबा का कुबूल करने वाला, रहम फ़रमाने वाला।”

وَأَنَا التَّوَّابُ الرَّحِيمُ

आयत 161

“यक़ीनन जिन लोगों ने कुफ़्र किया और वह इसी हाल में मर गये कि कुफ़्र पर कायम थे”

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ

“उन पर लानत है अल्लाह की भी और फ़रिशतों की भी और तमाम इंसानों की भी।”

أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمُ لَعْنَةُ اللَّهِ وَالْمَلَائِكَةِ وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ

आयत 162

“इसी (लानत की कैफ़ियत) में वह हमेशा रहेंगे।”

خَالِدِينَ فِيهَا

“ना उन पर से अज़ाब में कोई कमी की जायेगी”

لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمْ الْعَذَابُ

“और ना उनको मोहलत ही मिलेगी।”

وَلَا هُمْ يُنظَرُونَ

अज़ाब का तसलसुल हमेशा कायम रहेगा। ऐसा नहीं होगा कि ज़रा सी देर के लिए वक़फ़ा हो जाये या साँस लेने की मोहलत ही मिल जाये।

आयत 163

“और तुम्हारा इलाह एक ही इलाह है।”

وَالْهُمُ إِلَهُ وَاحِدٌ

“उसके सिवा कोई इलाह नहीं है, वह रहमान है, रहीम है।”

لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ الرَّحْمَنُ الرَّحِيمُ

रहमान और रहीम की वज़ाहत सूरतुल फ़ातिहा में गुज़र चुकी है।

आयात 164 से 167 तक

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَالْفُلْكِ الَّتِي تَجْرِي فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ وَمَا أَنْزَلَ اللَّهُ مِنَ السَّمَاءِ مِنْ مَّاءٍ فَأَحْيَا بِهِ الْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَثَّ فِيهَا مِنْ كُلِّ دَابَّةٍ وَتَصْرِيفِ الرِّيحِ وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ لَآيَاتٍ لِّقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ۝ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَتَّخِذُ مِنْ دُونِ اللَّهِ أَنْدَادًا يُحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ اللَّهِ وَالَّذِينَ آمَنُوا أَشَدُّ حُبًّا لِلَّهِ وَلَوْ يَرَى الَّذِينَ ظَلَمُوا إِذْ يَرُونَ الْعَذَابَ أَنَّ الْقُوَّةَ لِلَّهِ جَمِيعًا وَأَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعَذَابِ ۝ إِذْ تَبَرَّأَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا مِنَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا وَرَأَوْا الْعَذَابَ وَتَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْأَسْبَابُ ۝ وَقَالَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا لَوْ

أَنَّ لَنَا كَرَّةً فَتَتَّبَرَأْ مِنْهُمْ كَمَا تَتَّبَرَأُوا مِنَّا كَذَلِكَ يُرِيدُ اللَّهُ أَعْمَالَهُمْ حَسَرَاتٍ عَلَيْهِمْ وَمَا هُمْ بِخُرِجِينَ مِنَ النَّارِ ۝

अब जो बात आ रही है इसका मताअले से पहले एक बात समझ लीजिये कि सूरतुल बक्ररह का निस्फ़े सानी जो बाईस रुक़ओं पर मशतमिल है और जिसका आगाज़ उन्नीसवें रुक़अ से हुआ है, उसमें तरतीब क्या है। सूरतुल बक्ररह के पहले अद्वारह रुक़ओं की तकसीम उम्दी (verticle) है। यानि चार रुक़अ इधर, दस दरमियान में, फिर चार उधर। लेकिन उन्नीसवें रुक़अ से अब उफ़क़ी (horizontal) तकसीम का आगाज़ हो गया है। इस हिस्से में चार मज़ामीन ताने-बाने की तरह बने हुए हैं। या यूँ कह लें कि चार लड़ियाँ हैं जिनको बट कर रस्सी बना दिया गया है। इन चार में से दो लड़ियाँ तो शरीअत की हैं, जिनमें से एक इबादात की और दूसरी अहकाम व शराए की है कि यह वाजिब है, यह करना है, यह हलाल है और यह हराम है। नमाज़ फ़र्ज़ है, रोज़ा फ़र्ज़ है वग़ैरह-वग़ैरह। अहकाम व शराए में खासतौर पर शौहर और बीवी के ताल्लुक़ को बहुत ज़्यादा अहमियत दी गई है। इसलिये कि मआशरते इंसानी की बुनियाद यही है। लिहाज़ा इस सूरत में आप देखेंगे कि आइली क़वानीन (family laws) के ज़िम्न में तफ़सीली अहकाम आएँगे। जबकि दूसरी दो लड़ियाँ जिहाद बिल माल व जिहाद बिल नफ़्स की हैं। जिहाद बिल नफ़्स की आख़री इन्तहा क़िताल है जहाँ इंसान नक़द जान हथेली पर रख कर मैदाने कारज़ार (जंग) में हाज़िर हो जाता है।

अब इन चारों मज़ामीन या चारों लड़ियों को एक मिसाल से समझ लीजिये। फ़र्ज़ कीजिये एक सुर्ख़ लड़ी है, एक पीली है, एक नीली है और एक सब्ज़ (हरी) है, और इन चारों लड़ियों को एक रस्सी की सूरत में बट दिया गया है। आप रस्सी को देखेंगे तो चारो रंग कटे-फटे नज़र आएँगे। पहले सुर्ख़, फिर पीला, फिर नीला और फिर सब्ज़ नज़र आयेगा। लेकिन अगर रस्सी के बल खोल दें तो हर लड़ी मसलसल नज़र आयेगी। चनाँचे सूरतुल बक्ररह के निस्फ़े आख़िर में इबादात, अहकामे शरीअत, जिहाद बिल माल और जिहाद बिल नफ़्स के चार मज़ामीन चार लड़ियों के मानिन्द गूथे हुए हैं। ये चारों लड़ियाँ ताने-बाने की तरह बनी हुई हैं। लेकिन इसी बन्ति में बहुत बड़े-बड़े फूल मौजूद हैं। यह फूल कुरान मजीद की अज़ीम तरीन और तवील आयात हैं,

जिनकी नमाया तरीन मिसाल आयतल क़र्सी की है। इन अज़ीम आयतों में से एक आयत यहाँ बीसवें रुक़अ के आगाज़ में आ रही है, जिसे मैंने “आयतुल आयात” का उन्वान दिया है। इसलिये कि कुरान मजीद की किसी और आयत में इस क़द्र मज़ाहिरे फ़ितरत (phenomena of nature) यक़ज़ा (इक़द्रे) नहीं हैं। अल्लाह तआला तमाम मज़ाहिरे फ़ितरत को अपनी आयात क़रार देता है। आसमान और ज़मीन की तख़लीक़, रात और दिन का उलट-फेर, आसमान के सितारे और ज़मीन की नबातात (वनस्पति), यह सब आयात हैं जिनका ज़िक़्र कुरान मजीद में मख़्तलिफ़ मक़ामात पर किया गया है, लेकिन यहाँ बहत से मज़ाहिरे फ़ितरत को जिस तरह एक आयत में समोया गया है यह हिक़मते क़रानी का एक बहुत बड़ा फूल है जो इन चारों लड़ियों की बुन्ति के अंदर आ गया है।

आयत 164

“यक़ीनन आसमान और ज़मीन की तख़लीक़ में और रात और दिन के उलट-फेर में”

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمُوتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّيْلِ وَالنَّهَارِ

“और उन कश्तियों (और जहाज़ों) में जो समुन्दर में (या दरियाओं में) लोगों के लिये नफ़ा बख़्श सामान लेकर चलती हैं”

وَالْفُلْكِ الَّتِي تَجْرِي فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ

“और उस पानी में कि जो अल्लाह ने आसमान से उतारा है”

وَمَا أَنْزَلَ اللَّهُ مِنَ السَّمَاءِ مِنْ مَّاءٍ

“फिर उससे ज़िन्दगी बख़्शी ज़मीन को उसके मुर्दा हो जाने के बाद”

فَأَحْيَا بِهِ الْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا

वे आबो गयाह (बेरंग) ज़मीन पड़ी थी, बारिश हुई तो उसी में से रुईदगी (वनस्पति) आ गई।

“और हर क़िस्म के हैवानात (और चरिंदे परिंदे) इसके अंदर फैला दियो।”

وَبَثَّ فِيهَا مِنْ كُلِّ دَابَّةٍ

“और हवाओं की गर्दिश में”

وَأَنْزَلَ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً فَسَالَتْ سَلَخًا

हवाओं की गर्दिश के मुख्तलिफ़ अंदाज़ और मुख्तलिफ़ पहलू हैं। कभी शिमालन जुनुबन चल रही, कभी मशरिक् से आ रही है, कभी मगरिब से आ रही है। इस गर्दिश में बड़ी हिकमतें कारफ़रमा हैं।

“और उन बादलों में जो मुअल्लिक कर दिये
गये हैं आसमान और ज़मीन के दरमियान”

وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ

“यक्रीनन निशानियाँ हैं उन लोगों के लिये जो
अक़ल से काम लें।”

لَا يَتْلُوهُمْ إِلَّا قَوْمٌ يَعْلَمُونَ

इन मज़ाहिरे फ़ितरत को देखो और इनके ख़ालिक और मुदब्बिर (रचनाकार) को पहचानो! इन आयाते आफ़ाक़ी पर ग़ौरो फ़िक्र और इनके ख़ालिक को पहचानने का जो अमली नतीजा निकलना चाहिये और जिस तक आमतौर पर लोग नहीं पहुँच पाते अब अगली आयत में उसका तज़किरा है। नतीजा तो यह निकलना चाहिये कि फिर महबूब अल्लाह ही हो, शुक्र उसी का हो, इताअत उसी की हो, इबादत उसी की हो। जब सूरज में अपना कुछ नहीं, उसे अल्लाह ने बनाया है और उसे हरात (गर्मी) अता की है, चाँद में कुछ नहीं, हवायें चलाने वाला भी वही है तो और किसी शय के लिये कोई शुक्र नहीं, कोई इबादत नहीं, कोई दंडवत नहीं, कोई सजदा नहीं। चुनाँचे अल्लाह तआला ही मतलूब व मक़सूद बन जाये, वही महबूब हो। “ला महबूबा इल्लल्लाह, ला मक़सूदा इल्लल्लाह, ला मतलूबा इल्लल्लाह” जिन लोगों की यहाँ तक रसाई नहीं हो पाती वह किसी और शय को अपना महबूब व मतलूब बना कर उसकी परस्तिश शुरू कर देते हैं। खुदा तक नहीं पहुँचे तो “अपने ही हुस्न का दीवाना बना फिरता हूँ” के मिस्दाक़ अपने नफ़्स ही को मअबूद बना लिया और ख़्वाहिशाते नफ़्स की पैरवी में लग गये। कुछ लोगों ने अपनी क़ौम को मअबूद बना लिया और क़ौम की बरतरी और सरबुलंदी के लिये जाने भी दे रहे हैं। बाज़ ने वतन को मअबूद बना लिया। इस हक़ीक़त को अल्लामा इक़बाल ने समझा है कि इस दौर का सबसे बड़ा बुत वतन है। उनकी नज़म “वतनियत” मुलाहिज़ा कीजिये:

इस दौर में मय और है, जाम और है, जम और
साक़ी ने बिना की रविशे लुत्फ़ो सितम और

तहज़ीब के आज़र ने तरशवाये सनम और
मुस्लिम ने भी तामीर किया अपना हरम और
इन ताज़ा खुदाओं में बड़ा सबसे वतन है
जो पैरहन इसका है वो मज़हब का कफ़न है!

अगली आयत में तमाम मअबूदाने बातिल की नफ़ी करके एक अल्लाह को अपना महबूब और मतलूबो मक़सूद बनाने की दावत दी गई है।

आयत 165

“और लोगों में से कुछ ऐसे भी हैं जो अल्लाह
को छोड़ कर कुछ और चीज़ों को उसका
हमसर और मद्दे मुक़ाबिल बना देते हैं”

“वह उनसे ऐसी मुहब्बत करने लगते हैं जैसी
अल्लाह से करनी चाहिये।”

يُحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ اللَّهِ

यह दरअसल एक फ़लसफ़ा है कि हर बाशऊर इंसान किसी शय को अपना आईडियल, नस्बुलऐन (लक्ष्य) या आदर्श ठहराता है और फिर उससे भरपूर मोहब्बत करता है, उसके लिये जीता है, उसके लिये मरता है, कुर्बानियाँ देता है, इसार (त्याग) करता है। चुनाँचे कोई क़ौम के लिये, कोई वतन के लिये, और कोई खुद अपनी ज़ात के लिये कुर्बानी देता है। लेकिन बंदा-ए-मोमिन यह सारे काम अल्लाह के लिये करता है। वो अपना मतलूबो मक़सूद और महबूब सिर्फ़ अल्लाह को बनाता है। वह उसी के लिये जीता है, उसी के लिये मरता है: {قُلْ إِنْ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ} (अल् अनआम) “बेशक मेरी नमाज़, मेरी कुर्बानी, मेरा जीना और मेरा मरना अल्लाह ही के लिये है जो तमाम ज़हानों का परवरदिगार है।” इसके बरअक्स आम इंसानों का मामला यही होता है कि:

मी तराशद फ़िक्र मा हर दम खुदा बंदे दीगर

रस्त अज़ यक बंद ता उफ़ताद दर बंदे दीगर

इंसान अपने ज़हन से मअबूद तराशता रहता है, उनसे मुहब्बत करता है और उनके लिये कुर्बानियाँ देता है। यह मज़मून सूरतुल हज़ के आख़री रुकूअ में ज़्यादा वज़ाहत के साथ आयेगा।

“और जो लोग वाकिअतन साहिबे ईमान होते हैं उनकी शदीद तरीन मुहबबत अल्लाह के साथ होती है।”

وَالَّذِينَ آمَنُوا أَشَدُّ حُبًّا لِلَّهِ

“गर यह नहीं तो बाबा फिर सब कहानियाँ है!” यह गोया लिट्मस टेस्ट है। कोई शय अगर अल्लाह से बढ़ कर महबूब हो गई तो वह तुम्हारी मअबूद है। तुमने अल्लाह को छोड़ कर उसको अपना मअबूद बना लिया, चाहे वह दौलत ही हो। हदीसे नबवी ﷺ है: ((تَعَسَّ عَبْدُ الدِّينَارِ وَ عَبْدُ الدِّهْمِ)) (19) “हलाक और बर्बाद हो जाये दिरहम व दीनार का बंदा।” नाम ख्वाह अब्दुल रहमान हो, हकीकत में वो अब्दुल दीनार है। इसलिये कि वह यह ख्वाहिश रखता है कि दीनार आना चाहिये, ख्वाह हराम से आये या हलाल से, जायज़ ज़राए से आये या नाजायज़ ज़राए से। चुनाँचे उसका मअबूद अल्लाह नहीं, दीनार है। हिन्दुओं ने लक्ष्मी देवी की मूर्ती बना कर उसे पूजना शुरू कर दिया कि यह लक्ष्मी देवी अगर ज़रा मेहरबान हो जायेगी तो दौलत की रेल-पेल हो जायेगी। हमने इस दरमियान वास्ते को भी हटा कर बराहे रास्त डॉलर और पेट्रो डॉलर को पूजना शुरू कर दिया और उसकी खातिर अपने वतन और अपने माँ-बाप को छोड़ दिया। चुनाँचे यहाँ कितने ही लोग सिसक-सिसक कर मर जाते हैं और आख़री लम्हात में उनका बेटा या बेटी उनके पास मौजूद नहीं होता बल्कि दियारे ग़ैर में डॉलर की पूजा में मसरूफ़ होता है।

“और अगर यह ज़ालिम लोग उस वक़्त को देख लें जब यह देखेंगे अज़ाब को, तो (इन पर यह बात वाज़ेह हो जाएगी कि) कुव्वत तो सारी की सारी अल्लाह के पास है”

وَلَوْ يَرَى الَّذِينَ ظَلَمُوا إِذْ يَرُونَ الْعَذَابَ أَنَّ الْقُوَّةَ لِلَّهِ جَمِيعًا

यहाँ जुल्म शिर्क के मायने में आया है और ज़ालिम से मुराद मुशरिक हैं।

“और यह कि अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख़्त है।”

وَأَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعَذَابِ

उस वक़्त आँखे खुलेगी तो क्या फ़ायदा होगा? अब आँख खुले तो फ़ायदा है।

आयत 166

“उस वक़्त वह लोग जिनकी (दुनिया में) पैरवी की गई थी अपने पैरुओं से इज़हारे

إِذْ تَبَرَأَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا مِنَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا

बराअत करेंगे”

हर इंसानी मआशरे में कुछ ऐसे लोग ज़रूर होते हैं जो दूसरे लोगों को अपने पीछे लगा लेते हैं, चाहे अरबाबे इक़तदार हों चाहे मज़हबी मसनदों के वाली हों। लोग उन्हें अपने पेशवा और रहनुमा मान कर उनकी पैरवी करते हैं और उनकी हर सच्ची-झूठी बात पर सरे तस्लीम ख़म करते हैं। जब अज़ाबे आख़िरत ज़ाहिर होगा तो यह पेशवा और रहनुमा अज़ाब से बचाने में अपने पैरुओं के कुछ भी काम ना आएँगे और उनसे साफ़-साफ़ इज़हारे बराअत और ऐलाने ला ताल्लुकी कर देंगे।

“और वह अज़ाब से दो-चार होंगे और उनके तमाम ताल्लुकात मुन्क़तअ (अलग) हो जाएँगे।”

وَرَأَوْا الْعَذَابَ وَتَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْأَسْبَابُ
تَمَام تाल्लुकात मुन्क़तअ (अलग) हो जाएँगे।

जब जहन्नम उनकी निगाहों के सामने आ जायेगी तो तमाम रिश्ते मुन्क़तअ हो जाएँगे। सूरह अबस में इस नफ़सा-नफ़सी का नक़शा यूँ खींचा गया है:

“उस रोज़ आदमी भागेगा अपने भाई से, और अपनी माँ और अपने बाप से, और अपनी बीवी और अपनी औलाद से। उनमें से हर शख्स पर उस दिन ऐसा वक़्त आ पड़ेगा कि उसे अपने सिवा किसी का होश ना होगा।”

يَوْمَ يَفِرُّ الْمَرْءُ مِنْ أَخِيهِ ۖ وَأُمِّهِ وَأَبِيهِ ۖ
وَصَاحِبَتِهِ وَبَنِيهِ ۖ لِكُلِّ امْرِئٍ مِنْهُمْ
يَوْمَ مَبْدِئٌ شَأْنٌ يُغْنِيهِ ۖ

इसी तरह सूरतुल मआरिज में फ़रमाया गया है:

“मुजरिम चाहेगा कि उस दिन के अज़ाब से बचने के लिये अपनी औलाद को, अपनी बीवी को, अपने भाई को, अपने करीब तरीन खानदान को जो उसे पनाह देने वाला था, और रूए ज़मीन के सब इंसानों को फ़िदये में दे दे और यह तदबीर उसे निजात दिला दे।”

يَوْمَ الْمُجْرِمُ لَوْ يَفْتَدِي مِنْ عَذَابٍ يَوْمَئِذٍ
بِبَنِيهِ ۖ وَصَاحِبَتِهِ وَأَخِيهِ ۖ وَفَصِيلَتِهِ
الَّتِي تُتَوَكَّلُ ۖ وَمَنْ فِي الْأَرْضِ الْجَمِيعُ ۖ ثُمَّ يُنْجِيهِ ۖ

यहाँ फ़रमाया: {تَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْأَسْبَابُ} “उनके सारे रिश्ते मुन्क़तअ हो जाएँगे” यह लम्हा-ए-फ़िक्रिया है कि जिन रिश्तों की वजह से हम हराम को हलाल और हलाल को हराम कर रहे हैं, जिनकी दिलजोई के लिये हराम की कमाई करते हैं और जिनकी नाराज़गी के ख़ौफ़ से दीन के रास्ते पर आगे नहीं बढ़ रहे

हैं, यह सारे रिश्ते इसी दुनिया तक महदूद हैं और उखरवी ज़िन्दगी में यह कुछ काम ना आयेंगे।

आयत 167

“और जो उनके पैरोकार थे वह कहेंगे कि अगर कहीं हमें दुनिया में एक बार लौटना नसीब हो जाए”

وَقَالَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا لَوْ أَنَّا كُنَّا

“तो हम भी इनसे इसी तरह इज़हारे बराअत करेंगे जैसे आज यह हमसे बेज़ारी ज़ाहिर कर रहे हैं।”

فَتَتَّبِعُوا مِنْهُمْ كَمَا تَبِعُوا مِنَّا

“इस तरह अल्लाह उनको उनके आमाल हसरतें बना कर दिखायेगा।”

كَذَلِكَ يُرِيهِمُ اللَّهُ أَعْمَالَهُمْ حَسَرَاتٍ عَلَيْهِمْ

वह कहेंगे काश हमने समझा होता, काश हमने इनकी पैरवी ना की होती, काश हमने इनको अपना लीडर और अपना हादी व रहनुमा ना माना होता!!

“लेकिन वह अब आग से निकलने वाले नहीं होंगे।”

وَمَا هُمْ بِمُخْرِجِينَ مِنَ النَّارِ

अब उनको दोज़ख से निकलना नसीब नहीं होगा।

आयात 168 से 176 तक

يَا أَيُّهَا النَّاسُ كُلُوا مِنَّا فِي الْأَرْضِ حَلَلًا طَيِّبًا وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوبَ الشَّيْطَانِ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ۝ إِنَّمَا يَأْمُرُكُمْ بِالسُّوءِ وَالْفَحْشَاءِ وَأَن تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝ وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَا أَنزَلَ اللَّهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا يَهْتَدُونَ ۝ وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِي يَنْعِقُ بِمَا لَا يَسْمَعُ إِلَّا دُعَاءً وَنِدَاءً ۚ صُمُّ بُكُمْ عُمًى فَهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ۝ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُلُوا مِن طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ وَاشْكُرُوا لِلَّهِ إِن كُنتُمْ إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ۝ إِنَّمَا حَرَّمَ

عَلَيْكُمْ الْمَيْتَةُ وَالْدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيرِ وَمَا أُهْلَ بِهِ لِغَيْرِ اللَّهِ فَمَن اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلَ اللَّهُ مِنَ الْكِتَابِ وَيُسْتَرُونَ بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا أُولَٰئِكَ مَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ إِلَّا النَّارَ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللَّهُ يَوْمَ الْقِيَمَةِ وَلَا يُزَكِّيهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدَىٰ وَالْعَذَابَ بِالْمَغْفِرَةِ ۚ فَمَا أَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ ۝ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُ تَزَلَّ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ وَإِنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِي الْكِتَابِ لَفِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ ۝

आयत 168

“ऐ लोगों! ज़मीन में जो कुछ हलाल और तय्यब (पाकीज़ा) है उसे खाओ”

يَا أَيُّهَا النَّاسُ كُلُوا مِنَّا فِي الْأَرْضِ حَلَلًا طَيِّبًا

“और शैतान के नक्शे क़दम की पैरवी ना करो।”

وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوبَ الشَّيْطَانِ

“यकीनन वह तुम्हारा खुला दुश्मन है।”

إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ

यह बहस दरअसल सूरतुल अनआम में ज़्यादा वज़ाहत से आयेगी। अरब में यह रिवाज़ था कि बतों के नाम पर कोई जानवर छोड़ देते थे, जिसको ज़िबह करना वह हaram समझते थे। ऐसी रिवायात हिन्दओं में भी थीं जिन्हें हमने बचपन में देखा है। मसलन कोई साँड छोड़ दिया, किसी के कान चीर दिये कि यह फ़लाँ बत के लिये या फ़लाँ देवी के लिये है। ऐसे जानवर जहाँ चाहे मँह मारें, उन्हें कोई कुछ नहीं कह सकता था। ज़ाहिर है उनका गोश्त कैसे खाया जा सकता था! तो अरब में भी यह रिवाज थे और ज़हरे इस्लाम के बाद भी उनके कुछ ना कुछ असरात अभी बाक़ी थे। आबा व अजदाद की रस्में जो करणों (सदियों) से चली आ रही हों वह आसानी से छूटती नहीं हैं, कुछ ना कुछ असरात रहते हैं। जैसे आज भी हमारे यहाँ हिन्दूआना असरात मौजूद हैं। तो ऐसे लोगों से कहा जा रहा है कि मुशरिकाना तोहमात की बनियाद पर तुम्हारे मुशरिक बाप-दादा ने अगर कुछ चीज़ों को हaram ठहरा लिया था और

कुछ को हलाल करार दे लिया था तो इसकी कोई हैसियत नहीं। तुम शैतान की पैरवी में मुशरिकाना तोहमात के तहत अल्लाह तआला की हलाल ठहराई हुई चीज़ों को हुराम मत ठहराओ। जो चीज़ भी असलन हलाल और पाकीज़ा व तय्यब है उसे खाओ।

आयत 169

“वह (शैतान) तो बस तुम्हें बदी और बेहयाई का हुक्म देता है”

إِنَّمَا يَأْمُرُكُمْ بِالشُّوْءِ وَالْفَحْشَاءِ

“और इसका कि तुम अल्लाह की तरफ़ वह बातें मन्सूब करो जिनके बारे में तुम्हें कोई इल्म नहीं है।”

وَأَنْ تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ۝

आयत 170

“और जब उनसे कहा जाता है कि पैरवी करो उसकी जो अल्लाह ने नाज़िल किया है”

وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَا أَنْزَلَ اللَّهُ

“वह जवाब में कहते हैं कि हम तो पैरवी करेंगे उस तरीके की जिस पर हमने अपने आबा व अजदाद को पाया है।”

قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا

“अगरचे उनके आबा व अजदाद ना किसी बात को समझ पाये हों और ना हिदायत याफ़ता हुए हों (फिर भी वह अपने आबा व अजदाद ही की पैरवी करते रहेंगे?)”

أَوْ لَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا

يَهْتَدُونَ ۝

सूरतुल बक्ररह के तीसरे रुकूअ की पहली आयत (जहाँ नौए इंसानी को ख़िताब करके इबादते रब की दावत दी गई) के ज़िम्न में वज़ाहत की गई थी कि जो लोग तुमसे पहले गुज़र चुके हैं वह भी तो मख़्लूक थे जैसे तुम मख़्लूक हो, जैसे तुमसे ख़ता हो सकती है उनसे भी हुई, जैसे तुम ग़लती कर सकते हो उन्होंने भी की।

आयत 171

“और उन लोगों की मिसाल जिन्होंने कफ़्र किया, ऐसी है जैसे कोई शख्स ऐसी चीज़ को पकारे जो पकार और आवाज़ के सिवा कुछ ना समझती हो।”

وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِينَ يَنْعِقُونَ بِمَا لَا يَسْمَعُونَ إِلَّا دُعَاءً وَنِدَاءً

जो लोग महज़ बाप-दादा की तकलीद (नक़ल) में अपने कफ़्र पर अड़ गये हैं उनकी तशबीह (तुलना) जानवरों से दी गई है जिन्हें पकारा जाये तो वह पकारने वाले की पकार और आवाज़ तो सनते हैं, लेकिन सोचने-समझने की सलाहियत से बिल्कुल आरी (वंचित) होते हैं। तमसील (कहानी) से मराद यह है कि रसल अल्लाह ﷺ और मसलमान उन लोगों को समझाने की कोशिश कर रहे हैं लेकिन वह इस दावत पर कान धरने को तैयार नहीं हैं।

“वो बहरे भी हैं, गुँगे भी हैं, अंधे भी हैं, पस वो अक़ल से काम नहीं लेते।”

صُمٌّ بُكْمٌ عُمْى فَهُمْ لَا يَفْقَهُونَ ۝

आयत 172

“ऐ अहले ईमान! खाओ उन तमाम पाकीज़ा चीज़ों में से जो हमने तुम्हें दी हैं”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُلُوا مِن طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ

“और अल्लाह का शुक्र अदा करो”

وَأَشْكُرُوا لِلَّهِ

“अगर तुम वाक़िअतन उसी की इबादत करने वाले हो।”

إِنْ كُنْتُمْ إِتَّاءَةً تَعْبُدُونَ ۝

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया सूरतुल अनआम में यह सारी चीज़ें तफ़सील से आयेंगी।

आयत 173

“उसने तो तुम पर यही हुराम किया है, मुर्दार और खून”

إِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ

जो जानवर अपनी मौत आप मर गया, जिबह नहीं किया गया वह हाराम है और खून हाराम है, नजिस (अशुद्ध) है। इसी लिये अहले इस्लाम का जिबह करने का तरीका यह है कि सिर्फ गर्दन को काटा जाये, ताकि उसमें शरयानें (साँस की नली) वगैरह कट जायें और जिस्म का अक्सर खून निकल जाये। लेकिन अगर झटका किया जाये, यानि तेज़ धार आले (हथियार) के एक ही वार से जानवर की गर्दन अलग कर दी जाये, जैसे सिख करते हैं या जैसे यूरोप वगैरह में होता है, तो फिर खून जिस्म के अंदर रह जाता है। इस तरीके से मारा गया जानवर हाराम है।

“और खन्ज़ीर का गोश्त”

وَحَمَّ الْخَنِزِيرِ

“और जिस पर अल्लाह के सिवा किसी का नाम पुकारा गया हो।”

وَمَا أُهْلَ بِهِ لِغَيْرِ اللَّهِ

यानि किसी जानवर को जिबह करते हुए किसी बत का, किसी देवी का, किसी देवता का, अल ग़र्ज़ अल्लाह के सिवा किसी का भी नाम लिया गया तो वह हाराम हो गया, उसका गोश्त खाना हरामे मल्लक़ (बिल्कुल हराम) है, लेकिन इसके ताबेअ (अधीन) यह सूरत भी है कि किसी बज़र्ग़ का क़र्ब हासिल करने के लिये जानवर को उसके मज़ार पर ले जाकर वहाँ जिबह किया जाये, अगरचे दावा यह हो कि यह साहिबे मज़ार के ईसाले सवाब की खातिर अल्लाह तआला के लिये जिबह किया जा रहा है। इसलिये कि ईसाले सवाब के खातिर तो यह अमल घर पर भी किया जा सकता है।

वह खाने जो अहले अरब में उस वक़्त राइज (प्रचलित) थे, अल्लाह तआला ने बनियादी तौर पर उनमें से चार चीज़ों की हरमत का क़ुरान हकीम में बार-बार ऐलान किया है। मक्की सूरतों में भी इन चीज़ों की हरमत का मतअह्दिद (कई) दो बार बयान हुआ है और यहाँ सूरतुल बक्ररह में भी जो मदनी सूरत है। इसके बाद सूरतुल मायदा में यह मज़मुन फिर आयेगा। इन चार चीज़ों की हरमत के बयान से हलाल व हाराम की तफ़सील पेश करना हरगिज़ मक़सूद नहीं है, बल्कि मुशरिकीन की तरदीद (इन्कार) है।

“फिर जो कोई मजबूर हो जाये और वह ख्वाहिशमंद और हद से आगे बढ़ने वाला ना हो तो उस पर कोई गुनाह नहीं।”

فَمِنْ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ

अगर कोई शख्स भूख से मजबूर हो गया है, जान निकल रही है और कोई शय खाने को नहीं है तो वह जान बचाने के लिये हरामकर्दा चीज़ भी खा सकता है। लेकिन इसके लिये दो शर्तें आयद (लागु) की गई हैं, एक तो वह उस हराम की तरफ़ रग़बत और मैलान ना रखता हो और दूसरे यह कि जान बचाने के लिये जो नागज़ीर मित्रदार (ज़रूरी मात्रा) है उससे आगे ना बढ़े। इन दो शर्तों के साथ जान बचाने के लिये हराम चीज़ भी खाई जा सकती है।

“यक्रीनन अल्लाह बख़्शने वाला, रहम करने वाला है।”

إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ

आयत 174

“यक्रीनन वह लोग जो छपाते हैं उसको जो अल्लाह ने नाज़िल किया है किताब में से और फ़रोख़्त करते हैं उसे बहुत हक़ीर सी कीमत पर”

إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلَ اللَّهُ مِنَ الْكِتَابِ وَيُسْتَرُونَ بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا

यानि उसके एवज़ दुनियवी फ़ायदों की सूरत में हक़ीर कीमत कुबूल करते हैं।

“यह लोग नहीं भर रहे अपने पेटों में मगर आग”

أُولَٰئِكَ مَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ إِلَّا النَّارَ

“और अल्लाह इनसे कलाम नहीं करेगा क़यामत के दिन।”

وَلَا يَكَلِّمُهُمُ اللَّهُ يَوْمَ الْقِيَمَةِ

“और ना इन्हें पाक करेगा।”

وَلَا يُزَكِّيهِمْ

“और इनके लिये दर्दनाक अज़ाब है।”

وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ

आयत 175

“यह हैं वह लोग जिन्होंने हिदायत देकर गुमराही ख़रीद ली है”

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالََةَ بِالْهُدَىٰ

“और (अल्लाह की) मग़फ़िरत हाथ से देकर अज़ाब ख़रीद लिया है।”

وَالْعَذَابِ بِالْمَغْفِرَةِ

“तो यह किस क़द्र सब्र करने वाले हैं दोज़ख़ पर!”

فَمَا أَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ

इनका कितना हौसला है कि जहन्नम का अज़ाब बर्दाश्त करने के लिये तैयार हैं! उसके लिये किस तरह तैयारी कर रहे हैं!

आयत 176

“यह इसलिये कि अल्लाह ने तो किताब नाज़िल की हक़ के साथ।”

ذَلِكَ بِأَنَّ اللَّهَ تَزَلَّ الْكِتَابِ بِالْحَقِّ

“और यक़ीनन जिन लोगों ने किताब में इख़्तलाफ़ डाला वह ज़िद और मुख़ालफ़त में बहुत दूर निकल गये।”

وَأَنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِي الْكِتَابِ لَفِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ

जिन लोगों ने अल्लाह की किताब और शरीअत में इख़्तलाफ़ की पगडंडियाँ निकालीं वह ज़िद, हठधर्मी, शकावत (मुसीबत) और दुश्मनी में मुन्तला हो गये और इसमें बहुत दूर निकल गये। عَاذُوا اللَّهَ مِنْ ذَلِكَ!

आयात 177 से 182 तक

لَيْسَ الْبِرُّ أَنْ تُولُوا وُجُوهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَلَكِنَّ الْبِرَّ مَنْ آمَنَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَالْمَلَائِكَةِ وَالْكِتَابِ وَالنَّبِيِّينَ وَآتَى الْمَالَ عَلَى حُبِّهِ ذَوِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينِ وَابْنَ السَّبِيلِ وَالسَّائِلِينَ وَفِي الرِّقَابِ وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ وَالْمُوفُونَ بِعَهْدِهِمْ إِذَا عَاهَدُوا وَالصَّابِرِينَ فِي الْبَأْسَاءِ وَالضَّرَاءِ وَحِينَ الْبَأْسِ أُولَئِكَ الَّذِينَ صَدَقُوا وَأُولَئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ۝ يَأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِي الْقَتْلِ الْحَرْبُ بِالْحَرْبِ وَالْعَبْدُ بِالْعَبْدِ وَالْأَنْثَىٰ بِالْأُنْثَىٰ فَمَنْ عُفِيَ لَهُ مِنْ أَخِيهِ شَيْءٌ فَاتِّبَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ وَأَدَاءٌ إِلَيْهِ بِإِحْسَانٍ ذَلِكَ تَخْفِيفٌ مِّن رَّبِّكُمْ

وَرَحْمَةٌ مِّنْ أَعْتَدَىٰ بِغَدُوكَ فَلَهُ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيَوةٌ يَا أُولِي الْأَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝ كُتِبَ عَلَيْكُمُ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ أَنْ تَرَكَ خَيْرًا الْوَصِيَّةُ لِلْوَالدَيْنِ وَالْأَقْرَبِينَ بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ۝ فَمَنْ بَدَّلَهُ بَعْدَ مَا سَمِعَهُ فَإِمَّا تَأْمُرُ عَلَى الَّذِينَ يَبْدِلُونَهُ إِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ فَمَنْ خَافَ مِنْ مُّوَسٍ جَنَفًا أَوْ إِثْمًا فَأَصْلَحَ بَيْنَهُمْ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝

जैसा कि अर्ज़ किया जा चुका है, इस सूरह मबारका में कई ऐसी अज़ीम आयतें आई हैं जो हज्म के ऐतबार से भी और मायने व हिकमत के ऐतबार से भी बहत अज़ीम हैं, जैसे दो रुकअ पहले “आयतुल आयात” गज़र चकी है। इसी तरह से अब यह “आयतुल बिर” आ रही है, जिसमें नेकी की हकीकत वाज़ेह की गई है। लोगों के ज़हनों में नेकी के मख़तलिफ़ तसव्वरात होते हैं। हमारे यहाँ एक तबक्का वह है जिसका नेकी का तसव्वर यह है कि बस सच बोलना चाहिये, किसी को धोखा नहीं देना चाहिये, किसी का हक़ नहीं मारना चाहिये, यह नेकी है, बाक़ी कोई नमाज़ रोज़े की पाबंदी करे या ना करे, इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है! एक तबक्का वह है जिसमें चोर उचक़्के, ग़िरोह कट, डाक़ और बदमाश शामिल हैं। उनमें बहत से लोग ऐसे हैं जो यतीमों और बेवाओं की मदद भी करते हैं और यह काम उनके यहाँ नेकी शमार होते हैं। यहाँ तक कि जिस्मफ़रोश ख्वातीन भी अपने यहाँ नेकी का एक तसव्वर रखती है, वह ख़ैरात भी करती हैं और मस्जिदें भी तामीर कराती हैं। हमारे यहाँ मज़हबी तबक्कात में एक तबक्का वह है जो मज़हब के ज़ाहिर को लेकर बैठ जाता है और वह उसकी रूह से नाआशना (अन्जान) होता है। उनका हाल यह होता है कि “मच्छर छानते हैं और समचे ऊँट निगल जाते हैं।” उनके इख़्तलाफ़ात इस नौइयत (स्वभाव) के होते हैं कि रफ़ा यदेन के बग़ैर नमाज़ हई या नहीं? तरावीह आठ हैं या बीस हैं? बाक़ी यह कि सूदी कारोबार तुम भी करो और हम भी, इससे किसी की हन्फ़ियत या अहले हदीसियत पर कोई आँच नहीं आयेगी। नेकी के यह सारे तसव्वरात मस्ख़शदा (perverted) हैं। इसकी मिसाल ऐसी है जैसे अंधों ने एक हाथी को देख कर अंदाज़ा करना चाहा था कि वह कैसा है। किसी ने उसके पैर को टटोल कर कहा कि यह तो सतून की मानिन्द है, जिसका हाथ उसके कान पर पड़ गया उसने कहा यह

छाज की तरह है। इसी तरह हमारे यहाँ नेकी का तसव्वुर तक्रसीम होकर रह गया है। बक्रौल इक्रबाल:

उड़ाये क़छ वक्र लाले ने, क़छ नग़िस ने, क़छ ग़ल ने
चमन में हर तरफ़ बिखरी हई है दास्ताँ मेरी!

यह आयत इस ऐतबार से क़ुरान मजीद की अज़ीम तरीन आयत है कि नेकी की हक़ीक़त क्या है, इसकी जड़ बनियाद क्या है, इसकी रूह क्या है, इसके मज़ाहिर क्या हैं? फिर इन मज़ाहिर में अहमतररीन कौनसे है और सानवी हैसियत किनकी है? चनाँचे इस एक आयत की रोशनी में क़ुरान के इल्मल अख़लाक़ पर एक जामेअ किताब तसनीफ़ की जा सकती है। गोया अख़लाक़ियाते क़रानी (Quranic Ethics) के लिये यह आयत जड़ और बनियाद है। लेकिन यह समझ लीजिये कि यह आयत यहाँ क्योंकर आई है। इसके पसमंज़र में भी वही तहवीले क़िब्ला है। तहवीले क़िब्ला के बारे में चार रुकूअ (15 से 18) तो मुसलसल हैं। इससे पहले चौदहवें रुकूअ में आयत आयी है: {وَلِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ فَأَيْنَمَا تُوَلُّوا فَثَمَّ وَجْهَ اللّٰهِ} (आयत:115) इधर भी अट्टारहवें रुकूअ के बाद इतनी आयतें छोड़ कर यह आयत आ रही है। फ़रमाया:

आयत 177

“नेकी यही नहीं है कि तुम अपने चेहरे
मशरिक और मगरिब की तरफ़ फेर दो”

لَيْسَ الْبِرُّ أَنْ تُوَلُّوا وُجُوهَكُمْ وَبِلِ
الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ

इस अमल के नेकी होने की नफ़ी नहीं की गई। यह नहीं कहा गया कि यह कोई नेकी ही नहीं है। यह भी नेकी है। नेकी का जो ज़ाहिर है वह भी नेकी है, लेकिन असल शय इसका बातिन है। अगर बातिन सही है तो हक़ीक़त में नेकी नेकी है वरना नहीं।

“बल्कि नेकी तो उसकी है”

وَلَكِنَّ الْبِرَّ

“जो ईमान लाये अल्लाह पर, यौमे आख़िरत
पर, फ़रिशतों पर, किताब पर और नबियों
पर।”

مَنْ آمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَآمَنَ بِالْمَلَائِكَةِ
وَالْكِتَابِ وَالنَّبِيِّينَ

सबसे पहले नेकी की जड़ बनियाद बयान कर दी गयी कि यह ईमान है, ताकि तसहीहे नीयत (नीयत का स़धार) हो जाये। ईमानियात में सबसे पहले अल्लाह पर ईमान है यानि जो नेकी कर रहा है वह सिर्फ़ अल्लाह से अज़्र का तालिब है। फिर क़यामत के दिन पर ईमान का ज़िक्र हुआ कि इस नेकी का अज़्र दनिया में नहीं बल्कि आख़िरत में मतलब है। वरना तो यह सौदागरी हो गई। और आदमी अगर सौदागरी और दकानदारी करे तो दनिया की चीज़ें बेचे, दीन तो ना बेचे। दीन का काम कर रहा है तो उसके लिये सिवाय उख़रवी निजात के और अल्लाह की रज़ा के कोई और शय मक्रसद ना हो। यौमे आख़िरत के बाद फ़रिशतों, किताबों और अम्बिया (अलैहिमस्सलाम) पर ईमान का ज़िक्र किया गया। यह तीनों मिल कर एक युनिट बनते हैं। फ़रिशता वही की सूरत में किताब लेकर आया, जो अम्बिया-ए-किराम (अलै०) पर नाज़िल हई। ईमान बिल रिसालत का ताल्लक़ नेकी के साथ यह है कि नेकी का एक मजस्समा, एक मॉडल, एक आइडियल “उस्वा-ए-रसल” की सूरत में इंसानो के सामने रहे। ऐसा ना हो कि ऊँच-नीच हो जाये। नेकियों के मामले में भी ऐसा होता है कि कोई जज़्बात में एक तरफ़ को निकल गया और कोई दूसरी तरफ़ को निकल गया। इस ग़मराही से बचने की एक ही शक़ल है कि एक मक़म्मल उस्वा सामने रहे, जिसमें तमाम चीज़ें मौतदल (मर्यादित) हों और वह उस्वा हमारे लिए महम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की शख़्सियत है। नेकी के ज़ाहिर के लिये हम आप ﷺ ही को मैयार (कसौटी) समझेगें। जो शय जितनी आप ﷺ की सीरत में है, उससे ज़्यादा ना हो और उससे कम ना हो। कोशिश यह हो कि इंसान बिल्कुल रसूल अल्लाह ﷺ के उस्वा-ए-कामिला की पैरवी करे।

“और वह ख़र्च करें माल उसकी मुहब्बत के
बावजूद”

وَإِذَا الْمَالُ عَلَى حُبِّهِ

यानि माल की मुहब्बत के अललरग़म (बावजूद)। “عَلَا، حُبِّهِ” में ज़मीर मत्तसिल अल्लाह के लिये नहीं है बल्कि माल के लिये है। माल अगरचे मुहबूब है, फिर भी वह ख़र्च कर रहा है।

“क्राबतदारों, यतीमों, मोहताजों, मसाफ़िरों
और माँगने वालों पर और गर्दनों के छुड़ाने
में।”

ذَوِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينِ وَابْنِ
السَّبِيلِ وَالسَّالِفِينَ وَفِي الرِّقَابِ

गोया नेकी के मज़ाहिर में अब्बलीन मज़हर इंसानी हमदर्दी है। अगर यह नहीं है तो नेकी का वज़ूद नहीं है। इबादात के अम्बार लगे हों मगर दिल में शकावत (क्लेश) हो, इंसान को हाज़त में देख कर दिल ना पसीजे, किसी को तकलीफ़ में देख कर तिजोरी की तरफ़ हाथ ना बढे, हालाँकि तिजोरी में माल मौजूद हो, तो यह तर्ज़े अमल दीन की रूह से बिल्कुल खाली है। सूरह आले इमरान (आयत:92) में अल्फ़ाज़ आये हैं: {لَيْسَ تَنَالُهَا الْبِرُّ حَتَّى تُنْفِقُوا مِمَّا تُحِبُّونَ} “तुम नेकी के मक़ाम को पहुँच ही नहीं सकते जब तक कि खर्च ना करो उसमें से जो तुम्हें महबूब है।” यह नहीं कि जिस शय से तबियत उकता गई हो, जो कपड़े बोसीदा (फटे-पुराने) हो गये हों वह किसी को देकर हातिम ताई की क़ब्र पर लात मार दी जाये। जो शय ख़द को पसंद हो, अज़ीज़ हो, अगर उसमें से नहीं देते तो तुम नेकी को पहुँच ही नहीं सकते।

“और क़ायम करे नमाज़ और अदा करे
ज़कात।” وَأَقَامَ الصَّلَاةَ وَآتَى الزَّكَاةَ

हिकमते दीन मुलाहिज़ा कीजिये कि नमाज़ और ज़कात का ज़िक्र ईमान और इंसानी हमदर्दी के बाद आया है। इसलिये कि रूहे दीन “ईमान” है और नेकी के मज़ाहिर में से मज़हरे अब्बल इंसानी हमदर्दी है। यह भी नोट कीजिये कि यहाँ “ज़कात” का अलैहदा ज़िक्र किया गया है, जबकि इससे क़ब्ल ईताए माल का ज़िक्र हो चुका है। रसूल अल्लाह ﷺ ने इशार्द फ़रमाया:

((إِنَّ فِي الْمَالِ لَحَقًّا سِوَى الزَّكَاةِ)) (20) “यक़ीनन माल में ज़कात के अलावा भी हक़ है।” यानि अगर कुछ लोगों ने यह समझा है कि बस हमने अपने माल में से ज़कात निकाल दी तो पूरा हक़ अदा हो गया, तो यह उन ख़ाम ख़्याली है, माल में ज़कात के सिवा भी हक़ है। और आप ﷺ ने यही मज़क़ूर बाला आयत पढ़ी।

ईमान और इंसानी हमदर्दी के बाद नमाज़ और ज़कात का ज़िक्र करने की हिकमत यह है कि ईमान को तरोताज़ा रखने के लिये नमाज़ है। अज़रूए अल्फ़ाज़े क़रानी: {أَقِمِ الصَّلَاةَ لِذِكْرِي} (ताहा) “नमाज़ क़ायम करो मेरी याद के लिये।” और इंसानी हमदर्दी में माल खर्च करने के ज़ब्वे को परवान चढ़ाने और बरक़रार रखने के लिये ज़कात है कि इतना तो कम से कम देना होगा, ताकि बोतल का मुँह तो खुले। अगर बोतल का कॉर्क निकल जायेगा तो

उम्मीद है कि उसमें से कोई शर्बत और भी निकल आयेगा। चनाँचे ढाई फ़ीसद तो फ़र्ज़ ज़कात है। जो यह भी नहीं देता वह मज़ीद क्या देगा?

“और जो पूरा करने वाले हैं अपने अहद को
जब कोई अहद कर लें।” وَالْمُؤَفُّونَ يَعْهَدُ لَهُمْ إِذَا عَاهَدُوا ۖ

इंसान ने सबसे बड़ा अहद अपने परवरदिग़ार से किया था जो “अहदे अलस्त” कहलाता है, फिर शरीअत का अहद है जो हमने अल्लाह के साथ कर रखा है। फिर आपस में जो भी मआहिदे हों उनका पूरा करना भी ज़रूरी है। मामलाते इंसानी सारे के सारे मआहिदात की शक़्ल में हैं। शादी भी शौहर और बीवी के माबैन एक समाजी मआहिदा (social contract) है। शौहर की भी कुछ ज़िम्मेदारियाँ और फ़राइज़ हैं और बीवी की भी कुछ ज़िम्मेदारियाँ और फ़राइज़ हैं। शौहर के बीवी पर हक़क़ हैं, बीवी के शौहर पर हक़क़ हैं। फिर आजर और मुस्तआजर (employer & employee) का जो बाहमी ताल्लक़ है वह भी एक मआहिदा है। तमाम बड़े-बड़े कारोबार मआहिदों पर ही चलते हैं। फिर हमारा जो सियासी निज़ाम है वह भी मआहिदों पर मबनी है। तो अगर लोगों में एक चीज़ पैदा हो जाये कि जो अहद कर लिया है उसे पूरा करना है तो तमाम मामलात सुधर जाएँगे, उनकी stream lining हो जायेगी।

“और ख़ासतौर पर सब्र करने वाले फ़क्ररो
फ़ाक्रा में, तकलीफ़ में और जंग की हालत में।” وَالصَّابِرِينَ فِي الْبَأْسَاءِ وَالضَّرَاءِ وَحِينَ الْبَأْسِ

यह नेकी बद्धमत के भिक्षुओं की नेकी से मख़्तलिफ़ है। यह नेकी बातिल को चैलेंज करती है। यह नेकी खानकाओं तक महदद नहीं होती, सिर्फ़ इन्फ़रादी सतह तक महदद नहीं रहती, बल्कि अल्लाह को जो नेकी मतलब है वह यह है कि अब बातिल का सर कचलने के लिये मैदान में आओ। और जब बातिल का सर कचलने के लिये मैदान में आओगे तो ख़द भी तकलीफ़ें उठानी पड़ेंगी। इस राह में सहाबा किराम रज़ि० को भी तकलीफ़ें उठानी पड़ी हैं और जाने देनी पड़ी हैं। अल्लाह का कलमा सरबलंद करने के लिये सैकड़ों सहाबा किराम रज़ि० ने जामे शहादत नौश किया (पिया) है। दनिया के हर निज़ामे अख़लाक़ में “खैरे आला” (summum bonum) का एक तसव्वर होता है कि सबसे ऊँची नेकी क्या है! कुरान की रू से सबसे आला नेकी यह है कि हक़ के ग़लबे

के लिये, सदाक़त, दियानत और अमानत की बालादस्ती के लिये अपनी गर्दन कटा दी जाये। वह आयत याद कर लीजिये जो चंद रकूअ पहले हम पढ़ चुके हैं: {وَلَا تَقُولُوا لِلّٰهِ نُقُلٌ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ اَمْ اَتٰى بَلًا اَحْيَاءٌ وَلِكُمۡ لَا تَشْعُرُونَ ۝} "और जो अल्लाह की राह में क़त्ल किये जाएँ (जामे शहादत नौश कर लें) उन्हें मर्दा मत कहो, बल्कि वह ज़िन्दा हैं लेकिन तुम्हें (उनकी ज़िन्दगी का) शऊर हासिल नहीं है।"

"यह हैं वह लोग हैं सच्चे हैं।"

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ صَدَقُوا

रास्तबाज़ी (धार्मिकता) और नेकोकारी का दावा तो बहुत सों को है, लेकिन यह वह लोग हैं जो अपने दावे में सच्चे हैं।

"और यही हकीकत में मुत्तक़ी हैं।"

وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ۝

हमारे ज़हनों में नेकी और तक्रवा के कुछ और नक़्शे बैठे हुए हैं कि शायद तक्रवा किसी मख़सस लिबास और ख़ास वज़अ-क़तअ (प्रारूप) का नाम है। यहाँ क़ुरान हकीम ने नेकी और तक्रवा की हामिल इंसानी शख़्सियत का एक ह्युला (ढाँचा) और उसके किरदार का पूरा नक़्शा खींच दिया है कि उसके बातिन में रूहे ईमान मौजूद है और ख़ारिज में इस तरतीब के साथ दीन के यह तक्राज़े और नेकी के यह मज़ाहिर मौजूद हैं।

اللَّهُمَّ رَزِّقْنَا جَعَلْنَا مِنْهُمْ! اللَّهُمَّ رَزِّقْنَا جَعَلْنَا مِنْهُمْ!! (अमीन يارب العالمين)

इसके बाद वही जो इंसानी मामलात हैं उन पर बहस चलेगी। सूरतुल बक्ररह के निस्फ़े सानी के मज़ामीन के बारे में यह बात अर्ज़ की जा चुकी है कि यह गोया चार लड़ियों पर मुश्तमिल हैं, जिनमें से दो लड़ियाँ इबादात और अहक़ाम व शराए की है।

आयत 178

"ऐ अहले ईमान! तुम पर लाज़िम कर दिया गया है कि मक़तूलों का बदला लेना।"

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ

فِي الْقَتْلِ

"क़त्ल" की जमा है जिसके मायने मक़तूल के हैं। "क़त्ब" के बाद "क़त्ल" फ़र्ज़ियत के लिये आता है, यानि तुम पर यह फ़र्ज़ कर दिया गया है, इस मामले में सहल अंगारी सही नहीं है। जब किसी मआशरे में इंसान का खून

बहाना आम हो जाये तो तमद्दुन (सभ्यता) की जड़ कट जायेगी, लिहाज़ा किसान तुम पर वाज़िब है।

"आज़ाद आज़ाद के बदले"

الْحُرُّ بِالْحُرِّ

अगर किसी आज़ाद आदमी ने क़त्ल किया है तो किसान में वह आज़ाद ही क़त्ल होगा। यह नहीं कि वह कह दे मेरा गुलाम ले जाओ, या मेरी जगह मेरे दो गुलाम ले जाकर क़त्ल कर दो।

"और गुलाम गुलाम के बदले"

وَالْعَبْدُ بِالْعَبْدِ

अगर गुलाम कातिल है तो वह गुलाम ही क़त्ल किया जायेगा।

"और औरत औरत के बदले"

وَالْأُنْثَىٰ بِالْأُنْثَىٰ

अगर क़त्ल करने वाली औरत है तो वह औरत ही क़त्ल होगी। किसान व देयत के मामले में इस्लाम से पहले अरब में मख़्तिलफ़ मैयारात (मापदण्ड) कायम थे। मसलन अगर औसी खज़रजी को क़त्ल कर दें तो तीन गुना खून बहा वसूल किया जायेगा और अगर खज़रजी औसी को क़त्ल करे तो एक तिहाई खून बहा अदा किया जायेगा। यह उनका क़ानून था। इसी तरह आज़ाद और गुलाम में भी फ़र्क़ रखा जाता था। लेकिन शरीअते इस्लामी ने इस ज़िम्न में कामिल मसावात (बराबरी) कायम की और ज़माना-ए-जाहिलियत की हर तरह की अदमे मसावात का ख़ात्मा कर दिया। इस बारे में इमाम अब हनीफ़ा रहि० का क़ौल यही है कि तमाम मसलमान आपस में "क़फ़" (बराबर) हैं, लिहाज़ा क़त्ल के मुक़दमात में कोई फ़र्क़ नहीं किया जायेगा।

"फिर जिसको माफ़ कर दिया जाये कोई शय

उसके भाई की जानिब से"

فَمَنْ عَفِيَ لَهُ مِنْ أَخِيهِ شَيْءٌ

यानि मक़तूल के वरसा अगर कातिल को कुछ रिआयत दे दें कि हम इसकी जान बख़्शी करने को तैयार हैं, चाहे वह खून बहा ले लें, चाहे वैसे ही माफ़ कर दें, तो जो भी खून बहा तय हुआ हो उसके बारे में इशार्द हुआ:

"तो (उसकी) पैरवी की जाये मारूफ़ तरीक़े

पर और अदायगी की जाये ख़ूबसूरती के

فَاتِّبَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ وَأَدَاءٌ إِلَيْهِ بِإِحْسَانٍ

साथ।”

“यह तुम्हारे रब की तरफ़ से एक तख़फ़ीफ़ (छूट) व रहमत है।”

ذَلِكَ تَخْفِيفٌ مِّن رَّبِّكُمْ وَرَحْمَةٌ

इसका रहमत होना बहुत वाज़ेह है। अगर यह शक़ल ना हो तो फिर क़त्ल दर क़त्ल का सिलसिला जारी रहता है। लेकिन अगर क़ातिल को लाकर मक़तुल के वरसा के सामने खड़ा कर दिया जाये कि अब तुम्हारे हाथ में इसकी जान है, तुम चाहो तो इसको क़त्ल कर दिया जायेगा, और अगर तुम अहसान करना चाहो, इसकी जान बख़्शी करना चाहो तो तुम्हें इख़्तियार हासिल है। चाहो तो वैसे ही बख़्श दो, चाहो तो खून बहा ले लो। इससे यह होता है कि दशमनों का दायरा सिमट जाता है, बढ़ता नहीं है। इसमें अल्लाह की तरफ़ से बड़ी रहमत है। इस्लामी मआशरे में क़ातिल की गिरफ़्तारी और क़िसास की तन्फ़ीज़ (परिपालन) हक़मत की ज़िम्मेदारी होती है, लेकिन इसमें मद्दई रियासत नहीं होती। आज-कल हमारे निज़ाम में ग़लती यह है कि रियासत ही मद्दई बन जाती है, हालाँकि मद्दई तो मक़तुल के वरसा हैं। इस्लामी निज़ाम में किसी सदर या वज़ीरे आज़म को इख़्तियार नहीं है कि किसी क़ातिल को माफ़ कर दे। क़ातिल को माफ़ करने का इख़्तियार सिर्फ़ मक़तुल के वारिसों को है। लेकिन हमारे मुल्की दस्तर की रू से सदरे ममलकत को सज़ा-ए-मौत माफ़ करने का हक़ दिया गया है।

“तो इसके बाद भी जो हद से तज़ावुज़ करेगा مَنْ اعْتَدَىٰ بِعَدْلٍ ذَلِكَ فَلَهُ عَذَابٌ أَلِيمٌ ۝ तो उसके लिये दर्दनाक अज़ाब है।”

यानि जो लोग इस रियायत से फ़ायदा उठाने के बाद ज़ुल्म व ज़्यादती का तरीका अपनाएँगे उनके लिये आखिरत में दर्दनाक अज़ाब है।

आयत 179

“और ऐ होशमंदों! तुम्हारे लिये क़िसास में وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيَوةٌ يَا أُولِي الْأَلْبَابِ ज़िन्दगी है, ताकि तुम बच सको।” لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝

मआशरती ज़िन्दगी में अफ़व व दरगुज़र अगरचे एक अच्छी क़दर है और इस्लाम इसकी तालीम देता है:

{ وَإِنْ تَغْفُوا وَتَصْفَحُوا وَتَغْفِرُوا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝ } (तगाबून:14) “और अगर तुम माफ़ कर दिया करो और चश्मपोशी (अनदेखी) से काम लो और बख़्श दिया करो तो बेशक अल्लाह भी बख़्शने वाला, रहम करने वाला है। लेकिन क़त्ल के मक़दमात में सहल अंगारी और चश्मपोशी को क़िसास की राह में हाइल नहीं होने देना चाहिये, बल्कि शिद्दत के साथ पैरवी होनी चाहिये, ताकि इसके आगे क़त्ल का सिलसिला बंद हो। आयत के आखिर में फ़रमाया: { “ताकि तुम बच सको।” यानि अल्लाह की हुदूद की ख़िलाफ़ वर्ज़ी और एक-दूसरे पर जुल्म व तअदी (दुश्मनी) से बचो।

आयत 180

“जब तुममें से किसी की मौत का वक़्त आ كُتِبَ عَلَيْكُمُ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ إِنْ पहुँचे और वह कुछ माल छोड़ रहा हो तो तुम تَرَكَ خَيْرًا لِّلْوَصِيَّةِ لِّوَالِدَيْهِ وَالْأَقْرَبِينَ पर फ़र्ज़ कर दिया गया है वालिदैन् और بِالْعُرُوفِ रिश्तेदारों के हक़ में इंसफ़ के साथ वसीयत करना।”

अभी क़ानून विरासत नाज़िल नहीं हुआ था, इस ज़िम्न में यह इब्तदाई क़दम उठाया गया। दौरे जाहिलियत में विरासत की तक़सीम इस तरह होती थी, जैसे आज भी हिन्दुओं में होती है, कि मरने वाले की सारी जायदाद का मालिक बड़ा बेटा बन जाता था। उसकी बीवी, बेटियाँ, हत्ता कि दूसरे बेटे भी विरासत से महरूम रहते। चनाँचे यहाँ विरासत के बारे में पहला हक़म दिया गया कि मरने वाला वालिदैन् और अक़रबाअ (रिश्तेदारों) के बारे में वसीयत कर जाये ताकि उनके हक़क़ का तहफ़फ़ज़ हो सके। फिर जब सुरह अल निसा में पूरा क़ानून विरासत आ गया तो अब यह आयत मन्सुख़ शमांर होती है। अलबत्ता इसके एक ज़ुव को रसूल अल्लाह ﷺ ने बाक़ी रखा है कि मरने वाला अपने एक तिहाई माल के बारे में वसीयत कर सकता है, इससे ज़्यादा नहीं, और यह कि जिस शख़्स का विरासत में हक़ मक़रर हो चुका है, उसके लिये वसीयत नहीं होगी। वसीयत ग़ैर वारिस के लिये होगी। मरने वाला किसी यतीम को, किसी बेवा को, किसी यतीमख़ाने को या किसी दीनी इदारे को अपनी विरासत में से कुछ देना चाहे तो उसे हक़ हासिल है कि एक तिहाई

की वसीयत कर दे। बाक़ी दो तिहाई में लाज़िमी तौर पर क़ानूनी विरासत की तन्फ़ीज़ होगी।

“अल्लाह तआला का तक्रवा रखने वालों पर यह हक़ है।”

حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ۝

उन पर वाजिब और ज़रूरी है कि वह वसीयत कर जाएँ कि हमारे वालिदैन् को यह मिल जाये, फ़लाँ रिश्तेदार को यह मिल जाये, बाक़ी जो भी वुरसा हैं उनके हिस्से में यह आ जाये।

आयत 181

“तो जिसने बदल दिया इस वसीयत को इसके बाद कि इसको सुना था”

مَنْ بَدَّلَ بَعْدَ مَا سَمِعَهُ

“तो इसका गुनाह उन्हीं पर आयेगा जो इसे तब्दील करते हैं।”

فَأَمَّا إِمْنُهُ عَلَى الَّذِينَ يُبَدِّلُونَهُ

वसीयत करने वाला उनके इस गुनाह से बरी है, उसने तो सही वसीयत की थी। अगर गवाहों ने बाद में वसीयत में तहरीफ़ और तब्दीली की तो उसका बवाल और उसका बोझ उन्हीं पर आयेगा।

“यक़ीनन अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला (और) जानने वाला है।”

إِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝

आयत 182

“फिर जिसको अंदेशा हो किसी वसीयत करने वाले की तरफ़ से जानिब दारी या हक़तल्फ़ी का”

مَنْ خَافَ مِنْ مَوْصٍ جَنَفًا أَوْ إِمَامًا

अगर किसी को यह अंदेशा हो और दयानतदारी (ईमानदारी) के साथ उसकी यह राय हो कि वसीयत करने वाले ने ठीक वसीयत नहीं की, बल्कि बेजा (गलत) जानिबदारी का मुज़ाहिरा किया है या किसी की हक़तल्फ़ी करके गुनाह कमाया है।

“और वह उनके मावैन सुलह करा दे”

فَأَصْلَحَ بَيْنَهُمْ

इस तरह के अंदेशे के बाद किसी ने वरसा को जमा किया और उनसे कहा कि देखो, इनकी वसीयत तो यह थी, लेकिन इसमें यह ज़्यादती वाली बात है, अगर तुम लोग मुत्तफ़िक्क हो जाओ तो इसमें इतनी तब्दीली कर दी जाये।

“तो उस पर कोई गुनाह नहीं है।”

فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ

यानि ऐसी बात नहीं है कि इस वसीयत को ऐसा तक्रददस हासिल हो गया कि अब इसमें कोई तब्दीली नहीं हो सकती, बल्कि बाहमी मशवरे से और इस्लाह के जज़्बे से वसीयत में तगय्युर (बदलाव) व तब्दील हो सकता है।

“यक़ीनन अल्लाह तआला बख़्शने वाला रहम

إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۝

फ़रमाने वाला है।”

आयात 183 से 188 तक

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ۝ أَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا أَوْ عَلَى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ أَيَّامٍ أُخَرَ ۚ وَعَلَى الَّذِينَ يُطِيقُونَهُ فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِينٍ فَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَهُ ۚ وَأَنْ تَصُومُوا خَيْرٌ لَكُمْ إِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ شَهْرَ رَمَضَانَ الَّذِي أُنْزِلَ فِيهِ الْقُرْآنُ هُدًى لِلنَّاسِ وَبَيِّنَاتٍ مِنَ الْهُدَى وَالْفُرْقَانِ ۚ فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ ۚ وَمَنْ كَانَ مَرِيضًا أَوْ عَلَى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ أَيَّامٍ أُخَرَ ۚ يُرِيدُ اللَّهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيدُ بِكُمُ الْعُسْرَ وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ وَلِتُكَبِّرُوا اللَّهَ عَلَى مَا هَدَاكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ۝ وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَإِنِّي قَرِيبٌ ۖ أُجِيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ إِذَا دَعَانِ فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي وَلْيُؤْمِنُوا بِلَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ ۝ أَجَلٌ لَكُمْ لَيْلَةُ الصِّيَامِ ۚ الرِّقْتُ إِلَى نِسَائِكُمْ ۚ هُنَّ لِبَاسٌ لَكُمْ وَأَنْتُمْ لِبَاسٌ لِهِنَّ ۚ عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ كُنْتُمْ تَخْتَانُونَ أَنْفُسَكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ وَعَفَا عَنْكُمْ ۚ فَالْزِنُ بَاهِرٌ وَهُنَّ وَابِعُغُوا مَا كَتَبَ

اللَّهُ لَكُمْ وَكُلُّوا وَاشْرَبُوا حَتَّى يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْأَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْأَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ثُمَّ أَتَمُوا الصِّيَامَ إِلَى اللَّيْلِ وَلَا تُبَاشِرُوا هُنَّ وَأَنْتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسْجِدِ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَقْرُبُوهَا كَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لِّلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿٥٠﴾ وَلَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوا بِهَا إِلَى الْحُكَّامِ لِيَأْكُلُوا فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَالِ النَّاسِ بِآلٍ ثُمَّ أَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٥١﴾

सूरतुल बक्ररह के निस्फे आखिर के मज़ामीन के बारे में अर्ज़ किया जा चुका है कि यह चार लड़ियों की मानिन्द हैं जो आपस में गंथी हई हैं। अब इनमें से इबादात वाली लड़ी आ रही है और ज़ेरे मताअला रुक़अ में “सौम” की इबादात का तज़क़िरा है। जहाँ तक “सलाह” (नमाज़) का ताल्लुक है तो इसका ज़िक्र मक्की सूरतों में बेताहाशा आया है, लेकिन मक्की दौर में “सौम” बतौर इबादात कोई तज़क़िरा नहीं मिलता।

अरबों के यहाँ सौम या सियाम के लफ़्ज़ का इत्लाक़ और मफ़हम क्या था और उससे वह क्या मुराद लेते थे, इसे ज़रा समझ लीजिये! अरब ख़द तो रोज़ा नहीं रखते थे, अलबत्ता अपने घोड़ों को रखवाते थे। उसकी वजह यह थी कि अक्सर अरबों का पेशा ग़ारतगरी और लुटमार था। फिर मुख्तलिफ़ क़बीलों के माबैन वक्फ़े-वक्फ़े से जंगें होती रहती थीं। इन कामों के लिये उनको घोड़ों की ज़रूरत थी और घोड़ा इस मक़सद के लिये निहायत मौज़ (उचित) जानवर था कि उस पर बैठ कर तेज़ी से जायें, लुटमार करें, शव ख़न मारें और तेज़ी से वापस आ जायें। ऊँट तेज़ रफ़्तार जानवर नहीं है, फिर वह घोड़े के मक़ाबले में तेज़ी से अपना रुख़ भी नहीं फेर सकता। मगर घोड़ा जहाँ तेज़ रफ़्तार जानवर है, वहाँ तनक़ मिज़ाज और नाज़क़ मिज़ाज भी है। चनाँचे वह तरबियत के लिये उन घोड़ों से यह मशक्क़त करवाते थे कि उनको भूखा-प्यासा रखते थे और उनके मँह पर एक “तोबड़ा” चढ़ा देते थे। इस अमल को वह “सौम” कहते थे और जिस घोड़े पर यह अमल किया जाये उसे वह “साइम” कहते थे, यानि यह रोज़े से है। इस तरह वह घोड़ों को भूख-प्यास झेलने का आदी बनाते थे कि कहीं ऐसा ना हो कि मुहिम के दौरान घोड़ा भूख-प्यास बर्दाश्त ना कर सके और जी हार दे। इस तरह तो सवार की जान

शदीद ख़तरे में पड़ जायेगी और उसे ज़िन्दगी के लाले पड़ जायेंगे! मज़ीद यह कि अरब इस तौर पर घोड़ों को भूखा-प्यासा रख कर मौसम गरमा और लू की हालत में उन्हें लेकर मैदान में जा खड़े होते थे। वह अपनी हिफ़ाज़त के लिये अपने सरो पर डढ़ाटे बाँध कर और जिस्म पर कपड़े वग़ैरह लपेट कर उन घोड़ों की पीठ पर सवार रहते थे और उन घोड़ों का मँह सीधा लू और बादे सरसर के थपेड़ों की तरफ़ रखते थे, ताकि उनके अंदर भूख-प्यास के साथ-साथ लू के इन थपेड़ों को बर्दाश्त करने की आदत भी पड़ जाये, ताकि किसी डाके के मुहिम या क़बाइली जंग के मौक़े पर घोड़ा सवार के क़ाबू में रहे और भूख-प्यास या बादे सरसर के थपेड़ों को बर्दाश्त करके सवार की मज़ी के मुताबिक़ मतलबा रुख़ बरक़रार रखे और उससे मँह ना फेरे। तो अरब अपने घोड़ों को भूखा-प्यासा रख कर जो मशक्क़त कराते थे इस पर वह “सौम” के लफ़्ज़ यानि रोज़ा का, इत्लाक़ करते थे।

लेकिन रसूल अल्लाह ﷺ जब मदीना तशरीफ़ लाये तो यहाँ यहद के यहाँ रोज़ा रखने का रिवाज था। वह आशुरा का रोज़ा भी रखते थे, इसलिये कि इस रोज़ा बनी इसराइल को फ़िरऔनियों से निजात मिली थी। रसूल अल्लाह ﷺ ने मुसलमानों को इब्तदाअन हर महीने “अय्यामे बैज़” [अय्यामे बैज़: इस्लामी महीनों की 13, 14 और 15 तारीख़] के तीन रोज़े रखने का हुक्म दिया। इस रुक़अ की इब्तदाई दो आयात में ग़ालिबन इसी की तौसीक़ है। अगर इब्तदा ही में पुरे महीने के रोज़े फ़र्ज़ कर दिये जाते तो वह यक़ीनन शाक़ ग़ज़रते। ज़ाहिर बात है कि महीने सख़्त गर्म भी हो सकते हैं। अब अगर तीस के तीस रोज़े एक ही महीने में फ़र्ज़ कर दिये गये होते और वह जून जुलाई के होते तो जान ही तो निकल जाती। चनाँचे बेहतरीन तदबीर यह की गई कि हर महीने में तीन दिन के रोज़े रखने का हुक्म दिया गया और यह रोज़े मुख्तलिफ़ मौसमों में आते रहे। फिर कुछ अरसे के बाद रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ किये गये। हर महीने में तीन दिन के रोज़ों का जो इब्तदाई हुक्म था उसमें अलल इत्लाक़ यह इजाज़त थी कि जो शख्स यह रोज़े ना रखे वह इसका फ़िदया दे दे, अगरचे वह बीमार या मुसाफ़िर ना हो और रोज़ा रखने की ताक़त भी रखता हो। जब रमज़ान के रोज़ों की फ़र्ज़ियत का हुक्म आ गया तो अब यह रुख़सत ख़त्म कर दी गई। अलबत्ता रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़िदये की इस रुख़सत को ऐसे शख्स के लिये बाक़ी रखा जो बहत बड़ा है, या किसी ऐसी सख़्त बीमारी में मुब्तला है कि रोज़ा रखने से उसके लिये जान की

हलाकत का अंदेशा हो सकता है। यह है इन आयतों की तावील जिस पर मैं बहुत अरसा पहले पहुँच गया था, लेकिन चूँकि अक्सर मुफ़स्सिरीन ने यह बात नहीं लिखी इसलिये मैं इसे बयान करने से झिझकता रहा। बाद में मुझे मालूम हुआ कि मौलाना अनवर शाह काश्मीरी रहि० की राय यही है तो मुझे अपनी राय पर ऐतमाद हो गया। फिर मुझे इसका ज़िक्र तफ़्सीरी कबीर में इमाम राज़ी रहि० के यहाँ भी मिल गया कि मतक़द्दमीन के यहाँ यह राय मौजूद है कि रोज़े से मताल्लिक़ पहली दो आयतें (183,184) रमज़ान के रोज़े से मताल्लिक़ नहीं हैं, बल्कि वह अय्यामे बैज़ के रोज़ों से मताल्लिक़ हैं। अय्यामे बैज़ के रोज़े रसूल अल्लाह ﷺ ने रमज़ान के रोज़ों की फ़र्ज़ियत के बाद भी नफ़लन रखे हैं।

रोज़े के अहकाम पर मुश्तमिल यह रुकूअ छः आयतों पर मुश्तमिल है और इस ऐतबार से एक अजीब मक़ाम है कि इस एक जगह रोज़े का तज़क़िरा जामियत के साथ आ गया है। क़रान मजीद में दीगर अहकाम बहुत दफ़ा आये हैं। नमाज़ के अहकाम बहुत से मक़ामात पर आये हैं। कहीं वज़ के अहकाम आये हैं तो कहीं तयम्मूम के, कहीं नमाज़े कसर और नमाज़े ख़ौफ़ का ज़िक्र है। लेकिन “सौम” की इबादत पर यह कल छः आयात हैं, जिनमें इसकी हिकमत, इनकी गर्ज़ व ग़ायत और इसके अहकाम सबके सब एक जगह आ गये हैं। फ़रमाया:

आयत 183

“ऐ ईमान वालों! तुम पर भी रोज़ा रखना फ़र्ज़ किया गया है जैसे कि फ़र्ज़ किया गया था तुमसे पहलों पर ताकि तुम्हारे अंदर तक्रवा पैदा हो जाये।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ
كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ
تَتَّقُونَ ﴿١٨٣﴾

वह जंग के लिये घोड़े को तैयार करवाते थे, तुम्हें तक्रवे के लिये अपने आपको तैयार करना है। रोज़े की मशक़ तुमसे इसलिये कराई जा रही है ताकि तुम भूख को क़ाबू में रख सको, शहवत को क़ाबू में रख सको, प्यास को बर्दाश्त कर सको। तुम्हें अल्लाह तआला की राह में जंग के लिये निकलना होगा, उसमें भूख भी आयेगी, प्यास भी आयेगी। अपने आपको जिहाद व क़िताल के लिये तैयार करो। सूरतुल बक्ररह के अगले रुकूअ से क़िताल की बहस शुरू हो

जायेगी। चुनाँचे रोज़े की यह बहस गोया क़िताल के लिये बतौर तम्हीद आ रही है।”

आयत 184

“गिनती के चंद दिन है।”

أَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ

“مَعْدُودَاتٍ” जमा क़िल्लत है, जो तीन से नौ तक के लिये आती है। यह गोया इसका सुबूत है कि यहाँ महीने भर के रोज़े मुराद नहीं है।

“इस पर भी जो कोई तुममें से बीमार हो या सफ़र पर हो”

فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا أَوْ عَلَى سَفَرٍ

“तो वह तादाद पूरी कर ले दूसरे दिनों में।”

فَعِدَّةٌ مِّنْ أَيَّامٍ أُخَرَ

“और जो इसकी ताक़त रखते हों (और वह रोज़ा ना रखें) उन पर फ़िदया है एक मिस्कीन का खाना खिलाना।”

इन आयात की तफ़्सीर में, जैसा कि अर्ज़ किया गया, मुफ़स्सिरीन के बहुत से अक़वाल हैं। मैंने अपने मुताअले के बाद जो राय कायम की है मैं सिर्फ़ वही बयान कर रहा हूँ कि उस वक़्त इमाम राज़ी रहि० के बक़ौल यह फ़र्ज़ियत على नहीं थी बल्कि التّغْيِير थी। यानि रोज़ा फ़र्ज़ तो किया गया है लेकिन उसका बदल भी दिया जा रहा है कि अगर तुम रोज़ा रखने की इस्तताअत के बावजूद नहीं रखना चाहते तो एक मिस्कीन को खाना खिला दो। चूँकि रोज़े के वह पहले से आदी नहीं थे, लिहाज़ा उन्हें तदरीजन इसका ख़ूग़र बनाया जा रहा था।

“और जो अपनी मर्ज़ी से कोई ख़ैर करना चाहे तो उसके लिये ख़ैर है।”

فَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَهُ

अगर कोई रोज़ा भी रखे और मिस्कीन को खाना भी खिलाये तो यह उसके लिए बेहतर होगा।

“और रोज़ा रखो, यह तुम्हारे लिये बेहतर है **وَأَنْ تَصُومُوا خَيْرٌ لَّكُمْ إِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ** ⑤ अगर तुम जानों।”

यहाँ भी एक तरह की रियायत का अंदाज़ है। यह दो आयतें हैं जिनमें मेरे नज़दीक रोज़े का पहला हुक्म दिया गया, जिसके तहत रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم और अहले ईमान ने हर महीने में तीन दिन के रोज़े रखे। यह भी हो सकता है कि इन रोज़ों का हुक्म रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने अहले ईमान को अपने तौर पर दिया हो और बाद में इन आयतों ने उसकी तौसीक (पुष्टी) कर दी हो।

अब वह आयतें आ रही हैं जो ख़ास रमज़ान के रोज़े से मुताल्लिक हैं। इनमें से दो आयतों में रोज़े की हिकमत और गर्ज़ व ग़ायत बयान की गई है। फिर एक तवील आयत रोज़े के अहकाम पर मुश्तमिल है और आखिर में एक आयत गोया लिट्मस टेस्ट है।

आयत 185

“रमज़ान का महीना वह है जिसमें कुरान नाज़िल किया गया”

شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِي أُنْزِلَ فِيهِ الْقُرْآنُ

“लोगों के लिये हिदायत बना कर और हिदायत और हक़ व बातिल के दरमियान इस्तियाज़ की रोशन दलीलों के साथ।”

هُدًى لِّلنَّاسِ وَبَيِّنَاتٍ مِّنَ الْهُدَى
وَالْفُرْقَانِ

“तो जो कोई भी तुममें से इस महीने को पाये (या जो शख्स भी इस महीने में मुक़ीम हो) उस पर लाज़िम है कि रोज़ा रखे।”

مَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ

अब वह वुजूब अलल तस्वीर का मामला ख़त्म हो गया और वुजूब अलल तअय्युन हो गया कि यह लाज़िम है, यह रखना है।

“और जो बीमार हो या सफ़र पर हो तो वह तादाद पूरी कर ले दूसरे दिनों में।”

وَمَنْ كَانَ مَرِيضًا أَوْ عَلَى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ
أَيَّامٍ أُخَرَ

यह रियायत हसबे साबक़ (पहले की तरह) बरक्ररार रखी गई।

“अल्लाह तुम्हारे साथ आसानी चाहता है और वह तुम्हारे साथ सख़्ती नहीं चाहता।”

يُرِيدُ اللَّهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيدُ بِكُمُ
الْعُسْرَ

लोग ख़्वाह माख़्वाह अपने ऊपर सख़्तियाँ झेलते हैं, शदीद सफ़र के अंदर भी रोज़े रखते हैं, हालाँकि अल्लाह तआला ने दूसरे दिनों में गिनती पूरी करने की इजाज़त दी है। रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने एक सफ़र में उन लोगों पर काफ़ी सरज़निश (डांट) की जिन्होंने रोज़ा रखा हुआ था। आप صلی اللہ علیہ وسلم सहाबा किराम रज़ि० के हमराह जिहाद व क़िताल के लिये निकले थे कि कुछ लोगों ने इस सफ़र में भी रोज़ा रख लिया। नतीजा यह हुआ कि सफ़र के बाद जहाँ मंज़िल पर जाकर खेमे लगाने थे वह निढाल होकर गिर गये और जिन लोगों का रोज़ा नहीं था उन्होंने खेमे लगाये। इस पर रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया: ((لَيْسَ مِنَ الْيَزْمِ الصَّوْمُ فِي السَّفَرِ))⁽²¹⁾ “सफ़र में रोज़ा रखना कोई नेकी का काम नहीं है।” लेकिन हमारा नेकी का तसुव्वर मुख़्तलिफ़ है। कुछ लोग ऐसे भी हैं कि ख़्वाह 105 बुखार चढ़ा हुआ हो वह कहेंगे कि रोज़ा तो नहीं छोड़ूंगा। हालाँकि अल्लाह तआला की तरफ़ से दी गई रियायत से फ़ायदा ना उठाना एक तरह का कुफ़राने नेअमत है।

“ताकि तुम तादाद पूरी करो”

وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ

मर्ज़ या सफ़र के दौरान जो रोज़े छूट जाएँ तुम्हें दूसरे दिनों में उनकी तादाद पूरी करनी होगी। वह जो एक रियायत थी कि फ़िदया देकर फ़ारिग़ हो जाओ वह अब मन्सूख़ हो गई।

“और ताकि तुम बड़ाई करो अल्लाह की उस पर जो हिदायत उसने तुम्हें बख़्शी है”

وَلِتُكَبِّرُوا اللَّهَ عَلَى مَا هَدَاكُمْ

“और ताकि तुम शुक्र कर सको।”

وَعَلَّامُ الْغُيُوبِ ⑥

वह नेअमते उज़मा जो कुरान हकीम की शक़ल में तुम्हें दी गई है, तुम उसका शुक्र अदा करो। इस मौज़ू पर मेरे दो किताबचों “अज़मते सौम” और “अज़मते सियाम व क्रियामे रमज़ाने मुबारक” का मुताअला मुफ़ीद साबित होगा। उनमें यह सारे मज़ामीन तफ़सील से आये हैं कि रोज़े की क्या हिकमत है, क्या गर्ज़ व ग़ायत है, क्या मक़सद है और आख़री मंज़िल क्या है। मतलूब तो यह है कि

तुम्हारा यह जो जिस्मे हैवानी है, यह कुछ कमज़ोर पड़े और रूहे रब्बानी जो तुम में फूँकी गई है उसे तक्विबत हासिल हो। चुनाँचे दिन में रोज़ा रखो और इस हैवानी वुजूद को ज़रा कमज़ोर करो, इसके तक्वाज़ों को दबाओ। फिर रातों को खड़े हो जाओ और अल्लाह का कलाम सुनो और पढ़ो, ताकि तुम्हारी रूह की आबयारी (पोषण) हो, इस पर आवे हयात का तरशह (छिड़काव) हो। नतीजा यह निकलेगा कि खुद तुम्हारे अंदर से तक्वरूब इलल्लाह की एक प्यास उभरेगी।

आयत 186

“और (ऐ नबी ﷺ!) जब मेरे बंदे आपसे मेरे बारे में सवाल करें तो (उनको बता दीजिये कि) मैं करीब हूँ।”

وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَإِنِّي قَرِيبٌ

मेरे नज़दीक यह दुनिया में हुकूके इंसानी का सबसे बड़ा मन्थूर (Magna Carta) है कि अल्लाह और बंदे के दरमियान कोई फ़सल (दूरी) नहीं है। फ़सल अगर है तो वह तुम्हारी अपनी ख़बासत है। अगर तुम्हारी नीयत में फ़साद है कि हरामखोरी तो करनी ही करनी है तो अब किस मुँह से अल्लाह से दुआ करोगे? लिहाज़ा किसी पीर के पास जाओगे कि आप दुआ कर दीजिये, यह नज़राना हाज़िर है। बंदे और खुदा के दरमियान खुद इंसान का नफ़्स हाइल है और कोई नहीं, वरना अल्लाह तआला का मामला तो यह है कि:

हम तो माईल व करम हैं कोई साइल ही नहीं

राह दिखलाएँ किसे, राह रवे मंज़िल ही नहीं!

उस तक पहुँचने का वास्ता कोई पोप नहीं, कोई पादरी नहीं, कोई पंडित नहीं, कोई पुरोहित नहीं, कोई पीर नहीं। जब चाहो अल्लाह से हम कलाम हो जाओ। अल्लामा इक़बाल ने क्या खूब कहा है:

क्यों ख़ालिक और मख़्लूक में हाइल रहें पर्दे?

पीराने कलीसा को कलीसा से उठा दो!

अल्लाह तआला ने वाज़ेह फ़रमा दिया है कि मेरा बंदा जब चाहे, जहाँ चाहे मुझसे हम कलाम हो सकता है।

“मैं तो हर पुकारने वाले की पुकार का जवाब देता हूँ जब भी (और जहाँ भी) वह मुझे पुकारे”

أُجِيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ إِذَا دَعَانِ

“اجابت” के मफ़हूम में किसी की पुकार का सुनना, उसका जवाब देना और उसे कुबूल करना, यह तीनों चीज़ें शामिल हैं। लेकिन इसके लिये एक शर्त आयद की जा रही है:

“पस उन्हें चाहिये कि वह मेरा हुक्म मानें”

فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي

“और मुझ पर ईमान रखें”

وَلْيُؤْمِنُوا بِي

यह एक तरफ़ा बात नहीं है, बल्कि यह दो तरफ़ा मामला है। जैसे हम पढ़ चुके हैं: {فَإِذْكُرُونِي أَذْكُرْكُمْ} “पस तुम मुझे याद रखो मैं तुम्हें याद रखूँगा” तुम मेरा शुक्र करोगे तो मैं तुम्हारी क़द्रदानी करूँगा। तुम मेरी तरफ़ चल कर आओगे तो मैं दौड़ कर आऊँगा। तुम बालिशत भर आओगे तो मैं हाथ भर आऊँगा। लेकिन अगर तुम रुख़ मोड़ लोगे तो हम भी रुख़ मोड़ लेंगे। हमारी तो कोई गर्ज़ नहीं है, गर्ज़ तो तुम्हारी है। तुम रुजूअ करोगे तो हम भी रुजूअ करेंगे। तुम तौबा करोगे तो हम भी अपनी नज़रे करम तुम पर मुतवज्जा कर देंगे। सूरह मुहम्मद में अल्फ़ाज़ आये हैं {إِنْ تَنصَرُوا لِلَّهِ يَنْصُرْكُمْ} (आयत:7) “अगर तुम अल्लाह की मदद करोगे तो वह तुम्हारी मदद करेगा।” लेकिन अगर तुम अल्लाह के दुश्मनों के साथ दोस्ती की पींगें बढ़ाओ, उनके साथ तुम्हारी साज़-बाज़ हो और खड़े हो जाओ कुनूते नाज़िला में अल्लाह से मदद माँगने के लिये तो तुमसे बड़ा बेवकूफ़ कौन होगा? पहले अल्लाह की तरफ़ अपना रुख़ तो करो, अल्लाह से अपना मामला तो दुरुस्त करो। इसमें यह कोई शर्त नहीं है कि पहले वली-ए-कामिल बन जाओ, बल्कि उसी वक़्त खुलूसे नियत से तौबा करो, सारे पर्दे हट जाएँगे। आयत के आख़िर में फ़रमाया:

“ताकि वह सही राह पर रहें।”

لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ ۝

अल्लाह तआला पर ईमान रखने और उसके अहकाम पर चलने का यह नतीजा निकलेगा कि वह रुशदो हिदायत की राह पर गामज़न हो जाएँगे।

आयत 187

“हलाल कर दिया गया है तुम्हारे लिये रोज़े की रातों में बेहिजाब होना अपनी बीवियों से।”

أُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الرِّفْثِ إِلَى نِسَائِكُمْ

अहकामे रोज़े से मुताल्लिक यह आयत बड़ी तवील है। यहूद के यहाँ शरीअते मूसवी में रोज़ा शाम को ही शुरू हो जाता था और रात भी रोज़े में शामिल थी। चुनाँचे ताल्लुके ज़न व शौ (मियाँ-बीवी का ताल्लुक) भी क़ायम नहीं हो सकता था। उनके यहाँ सेहरी वग़ैरह का भी कोई तसुव्वर नहीं था। जैसे ही रात को सोते रोज़ा शुरू हो जाता और अगले दिन गुरुबे आफ़ताब तक रोज़ा रहता। हमारे यहाँ रोज़े में नरमी की गई है। एक तो यह कि रात को रोज़े से ख़ारिज कर दिया गया। रोज़ा बस दिन का है और रात के वक़्त रोज़े की सारी पाबंदियाँ ख़त्म हो जाती हैं। चुनाँचे रात को ताल्लुके ज़न व शौ भी क़ायम किया जा सकता है और खाने-पीने की भी इजाज़त है। लेकिन बाज़ मुसलमान यह समझ रहे थे कि शायद हमारे यहाँ भी रोज़े के वही अहकाम हैं जो यहूद के यहाँ हैं। इसलिये ऐसा भी होता था कि रोज़ों की रातों में बाज़ लोग ज़वात में बीवियों से मुक़ारबत (संभोग) कर लेते थे, लेकिन दिल में समझते थे कि शायद हमने ग़लत काम किया है। यहाँ अब उनको इत्मिनान दिलाया जा रहा है कि तुम्हारे लिये रोज़े की रातों में अपनी बीवियों के पास जाना हलाल कर दिया गया है।

“वह पोशाक हैं तुम्हारे लिये और तुम पोशाक हो उनके लिये।”

هُنَّ لِبَاسٌ لَّكُمْ وَأَنْتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ

यह बड़ा लतीफ़ किनायह (इशारा) है कि वह तुम्हारे लिये बमंज़िला-ए-लिबास हैं और तुम उनके लिये बमंज़िला-ए-लिबास हो। जैसे लिबास में और जिस्म में कोई पर्दा नहीं ऐसे ही बीवी में और शौहर में कोई पर्दा नहीं है। खुद लिबास ही तो पर्दा है। वैसे भी मर्द के अख़लाक़ की हिफ़ाज़त करने वाली बीवी है और बीवी के अख़लाक़ की हिफ़ाज़त करने वाला मर्द है। मुझे इक़बाल का शेर याद आ गया:

ने पर्दा ने तालीम, नई होकर पुरानी

निस्वानियते ज़न का निगहबान है फ़क़त मर्द

बहरहाल मर्द व औरत एक दूसरे के लिये एक ज़रूरत भी हैं और एक दूसरे की पर्दापोशी भी करते हैं।

“अल्लाह के इल्म में है कि तुम अपने आपके साथ ख़्यानत कर रहे थे”

عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ كُنْتُمْ تَخْتَانُونَ أَنْفُسَكُمْ

तुम एक काम कर रहे थे जो गुनाह नहीं है, लेकिन तुम समझते थे कि गुनाह है, फिर भी उसका इरतकाब कर रहे थे। इस तरह तुम अपने आप से ख़्यानत के मुरतकिब हो रहे थे।

“तो अल्लाह ने तुम पर नज़रे रहमत फ़रमाई”

فَتَابَ عَلَيْكُمْ

“और तुम्हें माफ़ कर दिया”

وَعَفَا عَنْكُمْ

इस सिलसले में जो भी ख़ताएँ हो गई हैं वह सबकी सब माफ़ समझो।

“तो अब तुम उनके साथ ताल्लुके ज़न व शौ क़ायम करो”

فَالَّذِينَ بَاشِرُوا هُنَّ

“और तलाश करो उसको जो कुछ अल्लाह तआला ने तुम्हारे लिख दिया है।”

وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَكُمْ

यानि औलाद, जो ताल्लुके ज़न व शौ का असल मक़सद है। दूसरे यह कि अल्लाह तआला ने इस ताल्लुके ज़न व शौ को सुकून व राहत का ज़रिया बनाया है। जैसे कुरान मजीद में {لَسْكُنُوا إِلَيْهَا} के अल्फ़ाज़ आये हैं। इस ताल्लुक के बाद आसाब (नसों) के तनाव में एक सुकून की कैफ़ियत पैदा हो जाती है। और इसमें यही हिकमत है कि रसूल अल्लाह ﷺ अपने हर सफ़र में एक ज़ौजा-ए-मोहतरमा को ज़रूर साथ रखते थे। इसलिये की क़ायद और सिपहसलार को किसी वक़्त किसी ऐसी परेशानकुन सूरते हाल में फ़ैसले करने पड़ते हैं कि ज़वात पर और आसाब पर दबाव होता है।

“और खाओ-पियो यहाँ तक कि वाज़ेह हो जाये तुम्हारे लिये फ़ज्र की सफ़ेद धारी (रात की) स्याह धारी से।”

وَكُلُوا وَاشْرَبُوا حَتَّى يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ

الْبَيْضُ مِنَ الْخَيْطِ الْأَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ

यह पौ फटने के लिये इस्तआरा (लक्षण) है। यानि जब सुपैदा सहर नुमाया होता है, सुबह सादिक़ होती है उस वक़्त तक खाने-पीने की छूट है। बल्कि यहाँ {وَكُلُوا وَاشْرَبُوا} “और खाओ और पियो” अम्र के सीगे आये हैं। सहरी करने

की हदीस में भी ताकीद आई है और रसूल अल्लाह ﷺ ने यह भी फ़रमाया है कि हमारे और यहूद के रोज़े के माबैन सेहरी का फ़र्क़ है। एक हदीस में आया है: ((تَسْعَرُوا فَإِنَّ فِي السَّحُورِ بَرَكَاتٍ)) (22) “सहरी ज़रूर किया करो, इसलिये कि सहरी में बरकत है।”

“फिर रात तक रोज़े को पूरा करो।”

ثُمَّ آتُوا الصِّيَامَ إِلَى الْبَيْلِ

“रात तक” से अक्सर फुक़हा के नज़दीक गुरुबे आफ़ताब मुराद है। अहले तशय्य (शिया) इससे ज़रा आगे जाते हैं कि गुरुबे आफ़ताब पर चंद मिनट मज़ीद गुज़र जाएँ।

“और उनसे मुबाशरत मत करो जबकि तुम मस्जिदों में हालते ऐतकाफ़ में हो।”

وَلَا تُبَاشِرُوهُنَّ وَأَنْتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسْجِدِ

यह रियायत जो तुम्हें दी जा रही है इसमें एक इस्तशना (exception) है कि जब तुम मस्जिदों में मौतकिफ़ हो तो फिर अपनी बीवियों से रात के दौरान भी कोई ताल्लुक़ कायम ना करो।

“यह अल्लाह की (मुकरर की हुई) हुदूद हैं, पस इनके क़रीब भी मत जाओ।”

تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَقْرُبُوهَا

बाज़ मक़ामात पर आता है: {تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا} “यह अल्लाह की मुकरर कर्दा हुदूद हैं, पस इनसे तजावुज़ ना करो” इनको उबूर ना करो। इस्लाहन हराम तो वही शय होगी कि हुदूद से तजावुज़ किया जाये। लेकिन बहरहाल अहतियात इसमें है कि इन हुदूद से दूर रहा जाये (to keep at a safe distance) आख़री हद तक चले जाओगे तो अंदेशा है कि कहीं इस हद को उबूर ना कर जाओ।

“इसी तरह अल्लाह वाज़ेह करता है अपनी निशानियाँ लोगों के लिये”

كَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ آيَاتِهِ لِلنَّاسِ

“ताकि वह तक्रवा की रविश इख़्तियार कर सकें।”

لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ

अब इस रुकूअ की आख़री आयत में बताया जा रहा है कि तक्रवा का मैयार और उसकी कसौटी क्या है। रोज़ा इसलिये फ़र्ज़ किया गया है और यह सारे

अहकाम तुम्हें इसी लिये दिये जा रहे हैं ताकि तुम में तक्रवा पैदा हो जाए- और तक्रवा का लिट्मस टेस्ट है “अकल हलाल (हलाल खाना)” अगर यह नहीं है तो कोई नेकी नेकी नहीं है। फ़रमाया:

आयत 188

“और तुम अपने माल आपस में बातिल तरीकों से हड़प ना करो”

وَلَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ

“और इसको ज़रिया ना बनाओ हुक्काम तक पहुँचने का”

وَتُذَلُّوا بِهِ إِلَى الْحَاوِ

“ताकि तुम लोगों के माल का कुछ हिस्सा हड़प कर सको गुनाह के साथ”

لِيَأْكُلُوا فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَالِ النَّاسِ بِالْإِثْمِ

“और तुम उसको जानते बूझते कर रहे हो।

وَأَنْتُمْ تَعْلَمُونَ

यह तक्रवा के लिये मैयार और कसौटी है। जो शख्स अकले हलाल पर क़ानेअ (संतुष्ट) हो गया और हराम ख़ोरी से बच गया वो मुत्तक़ी है। वरना नमाज़ों और रोज़ों के अम्बार के साथ-साथ जो शख्स हरामख़ोरी की रविश इख़्तियार किये हुए है वह मुत्तक़ी नहीं है। मैं हैरान होता हूँ कि लोगों ने इस बात पर ग़ौर नहीं किया कि अहकाम की आयतों के दरमियान यह आयत क्योंकर आई है। इससे पहले रोज़े के अहकाम आये हैं, आगे हज़ के अहकाम आ रहे हैं, फिर क़िताल के अहकाम आएँगे। इनके दरमियान में इस आयत की क्या हिकमत है? वाक़्या यह है कि जैसे रोज़े की हिकमत का नुक्ता-ए-उरूज यह है कि रूहे इंसानी में तक्ररब इलल्लाह की तलब पैदा हो जाये इसी तरह अहकामे सौम का नुक्ता-ए-उरूज “अकल हलाल” (हलाल खाना) है।

आयात 189 से 196 तक

يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْإِهْلَاءِ قُلْ هِيَ مَوَاقِيتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ وَلَيْسَ الْبِرُّ بِأَنْ تَأْتُوا
الْبُيُوتَ مِنْ ظُهُورِهَا وَلَكِنَّ الْبِرَّ مَنِ اتَّقَى وَأَتُوا الْبُيُوتَ مِنْ أَبْوَابِهَا وَاتَّقُوا اللَّهَ

لَعَلَّكُمْ تَفْلَحُونَ ﴿١٠﴾ وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوا إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ﴿١١﴾ وَأَقْتُلُواهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ وَأَخْرِجُوهُمْ مِنْ حَيْثُ أَخْرَجُوكُمْ وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّى يُفْتَلُوا فِيهِ فَإِنْ قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ كَذَلِكَ جَزَاءُ الْكُفْرِينَ ﴿١٢﴾ فَإِنْ انْتَهَوْا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٣﴾ وَاقْتُلُواهُمْ حَتَّى لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ فَإِنْ انْتَهَوْا فَلَا عُدْوَانَ إِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ﴿١٤﴾ الشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ وَالْحُرُمَتُ قِصَاصٌ مَنِ اعْتَدَى عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوا عَلَيْهِ بِمِثْلِ مَا اعْتَدَى عَلَيْكُمْ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ﴿١٥﴾ وَأَنْفِقُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَلَا تُلْقُوا بِأَيْدِيكُمْ إِلَى التَّهْلُكَةِ وَأَحْسِنُوا إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٦﴾ وَأَمْوَالُ الْحَجَّ وَالْعُمْرَةِ لِلَّهِ فَإِنْ أُخْصِرْتُمْ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ وَلَا تَحْلِفُوا بِرُءُوسِكُمْ حَتَّى يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحَلَّهُ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا أَوْ بِهِ أَذًى مِنْ رَأْسِهِ فَفِدْيَةٌ مِنْ صِيَامٍ أَوْ صَدَقَةٍ أَوْ نُسُكٍ فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَمَنْ تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ إِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ فِي الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ إِذَا رَجَعْتُمْ تِلْكَ عَشْرَةٌ كَامِلَةٌ ذَلِكَ لِمَنْ لَمْ يَكُنْ أَهْلَهُ حَاضِرِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿١٧﴾

आयत 189

“(ऐ नबी ﷺ) यह आप ﷺ से पूछ रहे हैं चाँद की घटती-बढ़ती सूरतों के बारे में।”

يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْآيَةِ

“कह दीजिये यह लोगों के लिये अवकात का तअय्युन है और हज के लिये है।”

قُلْ هِيَ مَوَاقِيتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ

यह अल्लाह तआला ने एक कैंडल लटका दिया है। हिलाल को देख कर मालूम हो गया कि चाँद की पहली तारीख हो गई। कुछ दिनों के बाद निस्फ चाँद देख कर पता चल गया कि अब एक हफ्ता गुज़र गया है। दो हफ्ते हो गये तो

पूरा चाँद हो गया। अब इसने घटना शुरू किया। तो यह निज़ाम गोया लोगों के लिये अवकाते कार की तअय्युन के लिये है और इस ज़िम्न में खासतौर पर सबसे अहम मामला हज का है। यह नोट कीजिये की सौम के बाद हज और हज के साथ ही क़िताल का ज़िक्र आ रहा है। इसलिये कि “हज” वह इबादत है जो एक खास जगह पर हो सकती है। नमाज़ और रोज़ा हर जगह हो सकते हैं, ज़कात हर जगह दी जा सकती है, लेकिन “हज” तो मक्का मुकर्रमा ही में होगा, और वह मुशरिकीन के ज़ेरे तसल्लुत (एकाधिकार) था और उसे मुशरिकीन के तसल्लुत से निकालने के लिये क़िताल लाज़िम था। क़िताल के लिये पहले सब्र का पैदा होना ज़रूरी है। चुनाँचे पहले रोज़े का हुक्म दिया गया कि जैसे अपने घोड़ों को रोज़ा रखवाते थे ऐसे ही खुद रोज़ा रखो। सूरतुल बक्ररह में सौम, हज और क़िताल के अहकाम के दरमियान यह तरतीब और रब्त है।

“और यह कोई नेकी नहीं है कि तुम घरों में उनकी पुश्त की तरफ़ से दाख़िल हो, बल्कि नेकी तो उसकी है जिसने तक्रवा इख़्तियार किया।”

अहले अरब अय्यामे जाहिलियत में भी हज तो कर रहे थे, मनासिके हज की कुछ बिगड़ी हुई शक़्लें भी मौजूद थीं, और इसके साथ उन्होंने कुछ बिद्आत व रस्मों का इज़ाफ़ा भी कर लिया था। उनमें से एक बिद्आत यह थी कि जब वह अहराम बाँध कर घर से निकल पड़ते तो उसके बाद अगर उन्हें घरों में दाख़िल होने की ज़रूरत पेश आती तो घरों के दरवाज़ों से दाख़िल ना होते बल्कि पिछवाड़े से दीवार फलाँद कर आते थे और समझते थे कि यह बड़ा तक्रवा है। फ़रमाया यह सिर से कोई नेकी की बात नहीं है कि तुम घरों में उनके पिछवाड़ों से दाख़िल हो, बल्कि असल नेकी तो उसकी नेकी है जो तक्रवा की रविश इख़्तियार करे और हुदूदे इलाही का अहताराम मलहज़ रखे। यहाँ पूरी आयत “आयतुल बिर्र” को ज़हन में रख लीजिये जिसके आख़िर में अल्फ़ाज़ आये थे: { وَأُولَئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ } चुनाँचे आयत ज़ेरे मुताअला में { وَلَكِنَّ الْبِرَّ مَنْ اتَّقَى } के अल्फ़ाज़ में नेकी का वह पूरा तसव्वुर मुज़मर है जो आयतुल बिर्र में बयान हो चुका है।

“और घरों में दाख़िल हो उनके दरवाज़ों से।”

وَأُولَئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ

“और अल्लाह का तक़वा इख़्तियार करो ताकि तुम फ़लाह पाओ।”

وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ⑩

आयत 190

“और क़िताल करो अल्लाह की राह में उनसे जो तुमसे क़िताल कर रहे हैं”

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ الَّذِينَ يُغَارِبُونَكُم

लीजिये क़िताल का हुक्म आ गया। सूरतुल बक्ररह के निस्फ़े सानी के मज़ामीन की जो चार लड़ियाँ मैंने गिनवाई थीं- यानि इबादात, मामलात, इन्फ़ाक़ और क़िताल- यह उनमें से चौथी लड़ी है। फ़रमाया कि अल्लाह की राह में उनसे क़िताल करो जो तुमसे क़िताल कर रहे हैं।

“लेकिन हृद से तजावुज़ ना करो।”

وَلَا تَعْتَدُوا ⑪

“बेशक अल्लाह तआला हृद से तजावुज़ करने वालों को पंसद नहीं करता।”

إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ⑫

आयत 191

“और उन्हें क़त्ल करो जहाँ कहीं भी उन्हें पाओ”

وَأَقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ

“और निकालो उनको वहाँ से जहाँ से उन्होंने तुमको निकाला है”

وَأَخْرِجُوهُمْ مِّنْ حَيْثُ أَخْرَجُوكُم

मुहाजरीन मक्का मुक्करमा से निकाले गये थे, वहाँ पर मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और आप ﷺ के साथी अहले ईमान पर क़ाफ़िया-ए-हयात तंग (जीना दूभर) कर दिया गया था। तभी तो आप ﷺ ने हिजरत की। अब हुक्म दिया जा रहा है कि निकालो उन्हें वहाँ से जहाँ से उन्होंने तुम्हें निकाला है।

“और फ़ितना क़त्ल से भी बढ कर है।”

وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ

कुफ़्फ़ार व मुशरिकीन से क़िताल के ज़िम्न में कहीं यह ख़याल ना आये कि क़त्ल और ख़ूरेज़ी बुरी बात है। याद रखो कि फ़ितना इससे भी ज़्यादा बुरी बात है। फ़ितना क्या है? ऐसे हालात जिनमें इंसान खुदाये वाहिद की बन्दगी ना कर सके, ऐसे ग़लत कामों पर मजबूर किया जाये, वह हरामख़ोरी पर मजबूर हो गया हो, यह सारे हालात फ़ितना हैं। तो वाज़ेह रहे कि क़त्ल और ख़ूरेज़ी इतनी बुरी शय नहीं है जितनी फ़ितना है।

“हाँ मस्जिदे हराम के पास (जिसे अमन की जगह बना दिया गया है) उनसे जंग मत करो जब तक वह तुमसे उसमें जंग ना छेड़ें।”

وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتَّىٰ يُفْتَلُوا كُمْ فِيهِ ⑬

“फिर अगर वह तुमसे जंग करें तो उनको क़त्ल करो।”

فَإِنْ قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ ⑭

“यही बदला है काफ़िरो का।”

كَذَلِكَ جَزَاءُ الْكَافِرِينَ ⑮

आयत 192

“फिर अगर वह बाज़ आ जाएँ तो यक़ीनन अल्लाह बख़्शने वाला बहुत मेहरबान है।”

فَإِنْ ائْتَبَهُوا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ⑯

आयत 193

“और लड़ो उनसे यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी ना रहे और दीन अल्लाह का हो जाये।”

وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلَّهِ ⑰

“फिर अगर वह बाज़ आ जाएँ तो कोई ज़्यादाती जायज़ नहीं है मगर ज़ालिमों पर।”

فَإِنْ ائْتَبَهُوا فَلَا عُدْوَانَ إِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ⑱

दावते मुहम्मदी ﷺ के ज़िम्न में अब यह जंग का मरहला शुरू हो गया है। मुसलमानों जान लो, एक दौर वह था कि बारह-तेरह बरस तक तुम्हें हुक्म था {كُفُّوا أَيْدِيَكُمْ} “अपने हाथ बाँधे रखो!” मारे खाओ मगर हाथ मत उठाना। अब तुम्हारी दावत और तहरीक नए दौर में दाख़िल हो गई है। अब जब

तुम्हारी तलवारें म्यान से बाहर आ गई हैं तो म्यान में ना जाएँ जब तक कि फ़ितना बिल्कुल ख़त्म ना हो जाये और दीन अल्लाह ही के लिये हो जाये, अल्लाह का दीन क़ायम हो जाये, पूरी ज़िन्दगी में उसके अहक़ाम की तन्फ़ीज़ हो रही हो। यह आयत दोबारा सूरतुल अन्फ़ाल में ज़्यादा निखरी हुई शान के साथ आई है: {وَقَاتِلُوهُمْ حَتَّى لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ كُلُّهُ لِلَّهِ} (आयत:39) “और जंग करो उनसे यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी ना रहे और दीन कुल का कुल अल्लाह के लिये हो जाये” दीन की बालादस्ती (प्रधानता) जुज़्बी (आंशिक) तौर पर नहीं बल्कि कुल्ली तौर पर पूरी इंसानी ज़िन्दगी पर क़ायम हो जाये, इन्फ़रादी ज़िन्दगी पर भी और इज्जमाई ज़िन्दगी पर भी। और इज्जमाई ज़िन्दगी के भी सारे पहलू (Politico-Socio-Economic System) कुल्ली तौर पर अल्लाह के अहक़ाम के ताबेअ हों।

आयत 194

“हरमत वाला महीना बदला है हरमत वाले महीने का”

الشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ

“और हरमात के अंदर भी बदला है।”

وَالْحُرْمَتُ قِصَاصٌ

यानि अगर उन्होंने अशहरे हरम की बेहरमती की है तो उसके बदले में यह नहीं होगा कि हम तो हाथ पर हाथ बाँध कर खड़े रहें कि यह तो अशहरे हरम हैं। हुदूदे हरम और अशहरे हरम की हरमत अहले अरब के यहाँ मुसल्लम (मान्य) थी। उनके यहाँ यह तय था कि इन चार महीनों में कोई ख़ूँरेज़ी, कोई जंग नहीं होगी, यहाँ तक कि कोई अपने बाप के क़ातिल को पा ले तो वह उसको भी क़त्ल नहीं करेगा। यहाँ वज़ाहत की जा रही है कि अशहरे हरम व हुदूदे हरम में जंग वाक़िअतन बहुत बड़ा गुनाह है, लेकिन अगर कुफ़्रार की तरफ़ से उनकी हरमत का लिहाज़ ना रखा जाये और वह इक़दाम (कार्यवाही) करें तो अब यह नहीं होगा कि हाथ-पाँव बाँध कर अपने आपको पेश कर दिया जाये, बल्कि जवाबी कार्यवाही करना होगी। इस जवाबी इक़दाम में अगर हुदूदे हरम या अशहरे हरम की बेहरमती करनी पड़े तो इसका बवाल भी उन पर आयेगा जिन्होंने इस मामले में पहल की।

“तो जो कोई भी तुम पर ज़्यादती करता है तो तुम भी उसके ख़िलाफ़ कार्यवाही करो (इक़दाम करो) जैसे कि उसने तुम पर ज़्यादती की।”

فَمَنْ اعْتَدَى عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوا عَلَيْهِمْ مِثْلَ مَا اعْتَدَى عَلَيْكُمْ

“और अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो”

وَاتَّقُوا اللَّهَ

“और जान लो कि अल्लाह मुत्तक़ियों के साथ है।”

وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ

यानि अल्लाह की ताईद व नुसरत और उसकी मदद अहले तक्रवा के लिये आयेगी। अब आगे “इन्फ़ाक़” का हुक्म आ रहा है जो मज़ामीन की चार लड़ियों में से तीसरी लड़ी है। क़िताल के लिये इन्फ़ाक़े माल लाज़िम है। अगर फ़ौज के साज़ो सामान ना हो, रसद का अहतमाम ना हो, हथियार ना हों, सवारियाँ ना हों तो जंग कैसे होगी?

आयत 195

“और ख़र्च करो अल्लाह की राह में और मत डालो अपने आपको अपने हाथों हलाकत में।”

وَأَنفِقُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَلَا تُلْقُوا بِأَيْدِيكُمْ إِلَى التَّهْلُكَةِ

यानि जिस वक़्त अल्लाह के दीन को रूपये-पैसे की ज़रूरत हो उस वक़्त जो लोग अल्लाह की राह में जान व माल की कुर्बानी से जी चुराते हैं और अपने आपको अपने हाथों से हलाकत में डालते हैं। जैसे रसूल अल्लाह ﷺ ने ग़ज़वा-ए-तबूक के मौक़े पर आम अपील की और उस वक़्त जो लोग अपने माल को समेट कर बैठे रहे तो गोया उन्होंने अपने आपको खुद हलाकत में डाल दिया।

“और अहसान की रविश इख़्तियार करो।”

وَأَحْسِنُوا

अपने दीन के अंदर ख़ूबसूरती पैदा करो। दीन में बेहतर से बेहतर मक़ाम हासिल करने की कोशिश करो। हमारा मामला यह है कि दुनिया में आगे से आगे और दीन में पीछे से पीछे रहने की कोशिश करते हैं। दीन में यह देखेंगे

कि कम से कम पर गुज़ारा हो जाये, जबकि दुनिया के मामले में आगे से आगे निकलने की कोशिश होगी "है जुस्तजू कि ख़ूब से है ख़ूब तर कहाँ!" यह जुस्तजू जो दुनिया में है इससे कहीं बढ़ कर दीन में होनी चाहिये, अज़रए अल्फ़ाज़े कुरानी: {فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ} "पस तुम नेकियों में एक-दूसरे से बाज़ी ले जाने की कोशिश करो।"

"यक़ीनन अल्लाह तआला मोहसिनीन को (उन लोगों को दर्जा-ए-अहसान पर फ़ाइज़ हो जाएँ) पसंद करता है।"

إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ⑤

हदीसे जिब्राइल (जिसे उम्मुस सुन्नाह कहा जाता है) में हज़रत जिब्राइल अलै० ने रसूल अल्लाह ﷺ से तीन सवाल किये थे: (1) أَخْبِرْنِي عَنِ الْإِسْلَامِ (2) أَخْبِرْنِي عَنِ الْإِيمَانِ (3) أَخْبِرْنِي عَنِ الْإِحْسَانِ "मुझे इस्लाम के बारे में बताइये (कि इस्लाम क्या है?)" "मुझे ईमान के बारे में बताइये (कि ईमान क्या है?)" "मुझे अहसान के बारे में बताइये (कि अहसान क्या है?)" अहसान के बारे में रसूल अल्लाह ﷺ ने इश्राद फ़रमाया: (أَنْ تَعْبُدَ اللَّهَ كَأَنَّكَ تَرَاهُ فَإِنْ لَمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَإِنَّهُ يَرَاكَ) (23) "(अहसान यह है) कि तू अल्लाह तआला की इबादत ऐसे करे गोया तू उसे देख रहा है, फिर अगर तू उसे ना देख सके (यानि यह कैफ़ियत हासिल ना हो सके) तो (कम से कम यह ख़याल रहे कि) वह तो तुझे देख रहा है।" दीन के सारे काम, इबादात, इन्फ़ाक़ और जिहाद व क़िताल ऐसी कैफ़ियत में और ऐसे इख़लास के साथ हों गोया तुम अपनी आँखों से अल्लाह को देख रहे हो, और अगर यह मक़ाम और कैफ़ियत हासिल ना हो तो कम से कम यह कैफ़ियत तो हो जाये कि तुम्हें मुस्तहज़र (अहसास) रहे कि अल्लाह तुम्हें देख रहा है। यह अहसान है। आमतौर पर इसका तर्जुमा इस अंदाज़ में नहीं किया गया। इसको अच्छी तरह समझ लीजिये। वैसे यह मज़मून ज़्यादा वज़ाहत के साथ सूरतुल मायदा में आयेगा।

आयत 196

"और हज़ और उमरा मुकम्मल करो अल्लाह के लिये।"

وَأَتِمُّوا الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ لِلَّهِ

उमरा के लिये अहराम तो मदीना मुनव्वरा से सात मील बाहर निकल कर ही बाँध लिया जायेगा, लेकिन हज़ मुकम्मल तब होगा जब तवाफ़ भी होगा, वकूफ़े अरफ़ा भी होगा और उसके सारे मनासिक अदा किये जाएँगे। लिहाज़ा जो शख्स भी हज़ या उमरा की नीयत कर ले तो फिर उसे तमाम मनासिक को मुकम्मल करना चाहिये, कोई कमी ना रहे।

"फिर अगर तुम्हें घेर लिया जाये"

فَإِنْ أَحْصَوْكُمْ

यानि रोक दिया जाये, जैसा कि 6 हिजरी में हुआ कि मुसलमानों को सुलह हुदेबिया करनी पड़ी और उमरा अदा किये बग़ैर वापस जाना पड़ा। मुशरिकीने मक्का अड़ गये थे कि मुसलमानों को मक्का में दाख़िल नहीं होने देंगे।

"तो जो कोई भी कुर्बानी मयस्सर हो वह पेश कर दो।"

فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ

यह दमे अहसार कहलाता है कि चूँकि अब हम आगे नहीं जा सकते, हमें यहीं अहराम खोलना पड़ रहा है तो हम अल्लाह के नाम पर यह जानवर दे रहे हैं। यह एक तरह से इसका कफ़ारा है।

"और अपने सिर उस वक़्त तक ना मूँडो जब وَلَا تَحْلِقُوا رُءُوسَكُمْ حَتَّى يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحَلَّهُ" तक कि कुर्बानी अपनी जगह ना पहुँच जाये।"

यानि जहाँ जाकर कुर्बानी का जानवर ज़िबह होना है वहाँ पहुँच ना जाये। अगर आपको हज़ या उमरा से रोक दिया गया और आपने कुर्बानी के जानवर आगे भेज दिये तो आपको रोकने वाले उन जानवरों को नहीं रोकेगें, इसलिये कि उनका गोशत तो उन्हें खाने को मिलेगा। अब अंदाज़ा कर लिया जाये कि इतना वक़्त गुज़र गया है कि कुर्बानी का जानवर अपने मक़ाम पर पहुँच गया होगा।

"फिर जो कोई तुममें से बीमार हो या उसके सिर में कोई तकलीफ़ हो"

فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا أَوْ بِهِ آذَى مِنْ رَأْسِهِ

यानि सिर में कोई ज़ख़म वग़ैरह हो और उसकी वजह से बाल कटवाने ज़रूरी हो जायें।

“तो वह फ़िदये के तौर पर रोज़े रखे या
सदका दे या कुर्बानी करे।”

فَقَدَيَّةٌ مِّنْ صِّيَامٍ أَوْ صَدَقَةٍ أَوْ نُسُكٍ

अगर उस हदी के जानवर के काबा पहुँचने से पहले-पहले तुम्हें अपने बाल काटने पड़ें तो फ़िदया अदा करना होगा। यानि एक कमी जो रह गई है उसकी तलाफ़ी के लिये कफ़फ़ारा अदा करना होगा। इस कफ़फ़ारे की तीन सूरतें बयान हुई हैं: रोज़े, या सदका या कुर्बानी। इसकी वज़ाहत अहादीससे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم से होती है कि या तो तीन दिन के रोज़े रखे जायें, या छः मस्कीनों को खाना खिलाया जाये या कम से कम एक बकरी की कुर्बानी दी जाये। इस कुर्बानी को दमे जनायत कहते हैं।

“फिर जब तुम्हें अमन हासिल हो (और तुम
सीधे बैतुल्लाह पहुँच सकते हो)”

فَإِذَا أَمِنتُمْ

“तो जो कोई भी फ़ायदा उठाये उमरे का हज
से क़बूल तो वह कुर्बानी पेश करे जो भी उसे
मयस्सर हो।”

فَمَنْ تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ إِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ

الْهَذْيِ

रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم की बेअसत से पहले अहले अरब के यहाँ एक सफ़र में हज और उमरा दोनों करना गुनाह समझा जाता था। उनके नज़दीक यह काबा की तौहीन थी। उनके यहाँ हज के लिये तीन महीने शवाल, ज़िल क़ादा और ज़िल हिज्जा थे, जबकि रज्जब का महीना उमरे के लिये मख़सूस था। वह उमरे के लिये अलैहदा सफ़र करते और हज के लिये अलैहदा। यह बात हुदूदे हरम में रहने वालों के लिये तो आसान थी, लेकिन इस उम्मत को तो पूरी दुनिया में फैलना था और दूर दराज़ से सफ़र करके आने वालों के लिये इसमें मशक्कत थी। लिहाज़ा शरीअते मुहम्मदी صلی اللہ علیہ وسلم में लोगों के लिये जहाँ और आसानियाँ पैदा की गई वहाँ हज व उमरे के ज़िम्न में यह आसानी भी पैदा की गई कि एक ही सफ़र में हज और उमरा दोनों को जमा कर लिया जाये। इसकी दो सूरतें हैं। एक यह कि पहले उमरा करके अहराम खोल दिया जाये और फिर आठवें ज़िल हिज्जा को हज का अहराम बाँध लिया जाये। यह “हज्जे तमत्तोअ” कहलाता है। दूसरी सूरत यह है कि हज के लिये अहराम बाँधा था, जाते ही उमरा भी कर लिया, लेकिन अहराम खोला नहीं और उसी अहराम से हज भी कर लिया। यह “हज्जे क़िरान” कहलाता है। लेकिन अगर शुरू ही से

सिर्फ़ हज का अहराम बाँधा जाये और उमरा ना किया जाये तो यह “हज्जे अफ़राद” कहलाता है। क़िरान या तमत्तोअ करने वाले पर कुर्बानी ज़रूरी है। इमाम अबु हनीफ़ा रहि० इसे दमे शुक्र कहते हैं और कुर्बानी करने वाले को इसमें से खाने की इजाज़त देते हैं। इमाम शाफ़ई रहि० के नज़दीक यह दमे ज़बर है और कुर्बानी करने वाले को इसमें से खाने की इजाज़त नहीं है।

“जिसको कुर्बानी ना मिले तो वह तीन दिन के
रोज़े अय्यामे हज में रखे”

مَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامٌ ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ فِي الْحَجِّ

यानि ऐन अय्यामे हज में सातवें, आठवें और नौवें ज़िल हिज्जा को रोज़ा रखे। दसवें का रोज़ा नहीं हो सकता, वह ईद का दिन (यौमुल नहर) है।

“और सात रोज़े रखो जबकि तुम वापस पहुँच
जाओ।”

وَسَبْعَةٍ إِذَا رَجَعْتُمْ

अपने घरों में जाकर सात रोज़े रखो।

“यह कुल दस (रोज़े) होंगे।”

تِلْكَ عَشْرَةٌ كَامِلَةٌ

“यह (रिआयत) उसके लिये है जिसके घर
वाले मस्जिदे हराम के करीब ना रहते हो।”

ذَلِكَ لِمَنْ لَّمْ يَكُنْ أَهْلَهُ حَاضِرِي الْمَسْجِدِ

الْحَرَامِ

यानि एक ही सफ़र में हज और उमरा को जमा करने की रिआयत, ख़्वाह तमत्तोअ की सूरत में हो या क़िरान की सूरत में, सिर्फ़ आफ़ाक़ी के लिये है, जिसके अहलो अयाल ज़वारे हरम में ना रहते हों, यानि जो हुदूदे हरम के बाहर से हज करने आया हो।

“और अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो”

وَاتَّقُوا اللَّهَ

“और ख़ूब जान लो कि अल्लाह तआला सज़ा
देने में भी बहुत सख़्त है।”

وَاَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ

आयात 197 से 203 तक

الْحَجُّ أَشْهُرٌ مَّعْلُومَةٌ ۖ فَمَنْ فَرَضَ فِيهِنَّ الْحَجَّ فَلَا رَفْعَ وَلَا فُسُوقَ وَلَا جِدَالَ فِي الْحَجِّ ۚ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ يَعْلَمْهُ اللَّهُ ۚ وَتَزَوَّدُوا فَإِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوَىٰ وَاتَّقُونِ يَا أُولِيَ الْأَلْبَابِ ۚ لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَنْ تَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ ۚ فَإِذَا أَقَضْتُمْ مِنْ عَرَفَاتٍ فَأَذْكُرُوا اللَّهَ عِنْدَ الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ وَاذْكُرُوا كَمَا هَدَيْتُمْ ۚ وَإِنْ كُنْتُمْ مِنْ قَبْلِهِ لَمَنِ الضَّالِّينَ ۚ ثُمَّ أَفِيضُوا مِنْ حَيْثُ أَقَاضَ النَّاسُ وَاسْتَغْفِرُوا اللَّهَ ۚ إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ۚ فَإِذَا قَضَيْتُمْ مَنَاسِكَكُمْ فَأَذْكُرُوا اللَّهَ كَذِكْرِكُمْ آبَاءَكُمْ أَوْ أَشَدَّ ذِكْرًا ۚ فَمَنْ النَّاسِ مَنْ يَقُولُ رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا وَمَا لَهُ فِي الْآخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ۚ وَمِنْهُمْ مَنْ يَقُولُ رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْآخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۚ أُولَٰئِكَ لَهُمْ نَصِيبٌ مِّمَّا كَسَبُوا ۚ وَاللَّهُ سَرِيعُ الْحِسَابِ ۚ وَاذْكُرُوا اللَّهَ فِي أَيَّامٍ مَّعْدُودَاتٍ ۚ فَمَنْ تَعَجَّلَ فِي يَوْمَيْنِ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ وَمَنْ تَأَخَّرَ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ ۚ لِمَنِ اتَّقَىٰ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّكُمْ إِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ۚ

पिछले रुकूअ से मनासिके हज का तज़क़िरा शुरू हो चुका है। अब इस पच्चीसवीं रुकूअ में हज का असल फ़लसफ़ा, उसकी असल हिक्मत और उसकी असल रूह का बयान है। फ़रमाया:

आयत 197

“हज के मालूम महीने हैं”

الْحَجُّ أَشْهُرٌ مَّعْلُومَةٌ

यानि अरब में जो भी पहले से रिवाज चला आ रहा था उसकी तौसीक़ (पुष्टी) फ़रमा दी गई कि वाकई हज के मवाक़ीत (टाइम) का तअय्युन अल्लाह तआला की तरफ़ से है।

“तो जिसने अपने ऊपर लाज़िम कर लिया इन महीनों में हज को”

فَمَنْ فَرَضَ فِيهِنَّ الْحَجَّ

लाज़िम करने से मुराद हज का अज़म और नियत पुख़्ता करना है और इसकी अलामत अहराम बाँध लेना है।

“तो (उसको ख़बरदार रहना चाहिये कि) दौराने हज ना तो शहवत की कोई बात करनी है, ना फ़िस्क व फ़ज़ूर की और ना लड़ाई-झगड़े की।”

ज़माना-ए-हज में जिन बातों से रोका गया है उनमें अब्बलीन यह है कि शहवत की कोई बात नहीं होनी चाहिये। मियाँ-बीवी भी अगर साथ हज कर रहे हों तो अहराम की हालात में उनके लिये वही कैद है जो ऐतकाफ़ की हालात में है। बाक़ी यह कि फ़िस्क व जिदाल यानि अल्लाह की नाफ़रमानी और बाहम लड़ाई-झगड़ा तो वैसे ही नाजायज़ है, दौराने हज इससे ख़ासतौर पर रोक दिया गया। इसलिये कि बहुत बड़ी तादात में लोगों का इज्जतमा होता है, सफ़र में भी लोग साथ होते हैं। इस हालत में लोगों के गुस्सों के पारे जल्दी चढ़ जाने का इम्कान होता है। लिहाज़ा इससे ख़ासतौर पर रोका गया ताकि मनासिके हज की अदायगी के दौरान अमन व सुकून हो। वाक़्या यह है कि आज भी यह बात मौज़्जात में से है कि दुनिया भर से इतनी बड़ी तादात में लोगों के जमा होने के बावजूद वहाँ अमन व सुकून रहता है और जंग व जिदाल और झगड़ा व फ़साद वग़ैरह कहीं नज़र नहीं आता। मुझे अल्हम्दुलिल्लाह पाँच-छः मर्तबा हज की सआदत हालिस हुई है, लेकिन वहाँ पर झगड़ा और गाली-गलौज की कैफ़ियत मैंने कभी अपनी आँखों से नहीं देखी।

“और नेकी के जो काम भी तुम करोगे अल्लाह उसको जानता है”

وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ يَعْلَمْهُ اللَّهُ

हज के दौरान मनासिके हज पर मुस्तज़ाद (उच्चतम) जो भी नेकी के काम कर सको, मसलन नवाफ़िल पढ़ो या इज़ाफ़ी तवाफ़ करो तो तुम्हारी यह नेकियाँ अल्लाह के इल्म में होंगी, किसी और को दिखाने की ज़रूरत नहीं।

“और ज़ादेराह साथ ले लिया करो, यक़ीनन बेहतरीन ज़ादेराह तक्रवा है।”

وَتَزَوَّدُوا فَإِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوَىٰ

इसके दो मायने लिये गये हैं। एक तो यह कि बेहतरीन ज़ादेराह तक्रवा है। यानि सफ़रे हज में मादी ज़ादेराह के अलावा तक्रवा की पूँजी भी ज़रूरी है। अगर आपने अख़राजाते सफ़र के लिये रुपया-पैसा तो वाफ़र (पर्याप्त) ले लिया, लेकिन तक्रवा की पूँजी से तही दामन (खाली) रहे तो दौराने हज अच्छी सहूलियात तो हासिल कर लेंगे मगर हज की रूह और उसकी बरकात से महरूम रहेंगे।

लेकिन इसका एक दूसरा मफ़हूम भी बहुत अहम है कि अगर इंसान खुद अपना ज़ादेराह साथ ना ले तो फिर वहाँ दूसरों से माँगना पड़ता है। इस तरह यहाँ “तक्रवा” से मुराद सवाल से बचना है। यानि बेहतर यह है कि ज़ादेराह लेकर चलो ताकि तुम्हें किसी के सामने साइल ना बनना पड़े। अगर तुम साहिबे इस्तताअत नहीं हो तो हज तुम पर फ़र्ज़ ही नहीं है। और एक शय जो तुम पर फ़र्ज़ नहीं है उसके लिये ख़्वाह मख़्वाह वहाँ जाकर भीख माँगना या यहाँ से भीख माँग कर या चंदा इकट्ठा करके जाना क़तअन ग़लत हरकत है।

“और मेरा ही तक्रवा इख़्तियार करो ऐ
 الثَّقْوَىٰ وَاتَّقُوا يَٰأُولِيَ الْأَلْبَابِ ۝
 होशमंदो!”

आयत 198

“तुम पर इस अम्र में कोई गुनाह नहीं है कि
 لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَنْ تَبْتَغُوا فَضْلًا مِّنْ
 तुम (सफ़रे हज के दौरान) अपने रब का
 رَّبِّكُمْ
 फ़ज़ल भी तलाश करो।”

आदमी हिन्दुस्तान या पाकिस्तान से हज के लिये जा रहा है और वह अपने साथ कुछ ऐसी अजनास (चीज़ें) साथ ले जाये जिन्हें वहाँ पर बेच कर कुछ नफ़ा हासिल कर ले तो यह तक्रवा के मनाफ़ी नहीं है।

“पस जब तुम अराफ़ात से वापस लौटो तो
 فَإِذَا أَفَضْتُمْ مِّنْ عَرَفَاتٍ فَاذْكُرُوا اللَّهَ عِندَ
 अल्लाह को याद करो मशअरे हराम के
 الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ
 नज़दीक।”

वकूफ़े अराफ़ात (अराफ़ात में ठहरना) हज का रुकने आज़म है। रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم का इशार्द है: ((الْحُجَّةُ عَرَفَاتُ))⁽²⁴⁾ यानि असल हज तो अरफ़ा ही है। अगर किसी से हज के बाक़ी तमाम मनासिक रह जायें, सिर्फ़ क़यामे अरफ़ा में

शमूलियत हो जाये तो उसका हज हो गया, बाक़ी जो चीज़ें रह गई हैं उनका कफ़फ़ारा अदा किया जायेगा। लेकिन अगर कोई शख्स अराफ़ात के क़याम में ही शरीक नहीं हुआ तो फिर उसका हज नहीं हुआ। अय्यामे हज का टाइम टेबल नोट कीजिये कि 8 ज़िल हिज्जा को मक्का मुकर्रमा से निकल कर रात मिना में गुज़ारना होती है। अग़ला दिन 9 ज़िल हिज्जा यौमे अरफ़ा है। इस रोज़ सुबह को अराफ़ात के लिये क़ाफ़िले चलते हैं और कोशिश यह होती है कि दोपहर से पहले वहाँ पहुँच जाया जाये। वहाँ पर जुहर के वक़्त जुहर और अस्त्र दोनों नमाज़ें मिला कर पढ़ी जाती हैं। इसके बाद से गुरुबे आफ़ताब तक अराफ़ात का क़याम है, जिसमें कोई नमाज़ नहीं। यानि रिवायती इबादात के सब दरवाज़े बंद हैं। अब तो सिर्फ़ दुआ है। अगर आपके अन्दर दुआ की एक रूह पैदा हो चुकी है, आप अपने रब से हम कलाम हो सकते हैं और आपको हलावते मुनाजात हासिल हो गई है तो बस दुआ माँगते रहिये। क़यामे अरफ़ा के दौरान खड़े होकर या बैठे हुए, जिस तरह भी हो अल्लाह से मुनाजात की जाये। या इसमें अगर किसी वजह से कमी हो जाये तो आदमी तिलावत करे। लेकिन आम नमाज़ अब कोई नहीं। 9 ज़िल हिज्जा को वकूफ़े अराफ़ात के बाद मगरिब की नमाज़ का वक़्त हो चुकने के बाद अराफ़ात से रवानगी है, लेकिन वहाँ मगरिब की नमाज़ पढ़ने की इजाज़त नहीं है। बल्कि अब मुज़दलफ़ा में जाकर मगरिब और इशा दोनों नमाज़ें जमा करके अदा करनी हैं और रात वहीं खुले आसमान तले बसर करनी है। यह मुज़दलफ़ा का क़याम है। मशअरे हराम एक पहाड़ का नाम है जो मुज़दलफ़ा में वाक़ेअ है।

“और याद करो उसे जैसे कि उसने तुम्हें
 وَادْكُرُوهُ كَمَا هَدَاكُمْ
 हिदायत की है।”

यानि अल्लाह का ज़िक्र करो जिस तरह अल्लाह ने तुम्हें अपने रसूल صلی اللہ علیہ وسلم के ज़रिये सिखाया है। ज़िक्र के जो तौर तरीक़े रसूल صلی اللہ علیہ وسلم ने सिखाये हैं उन्हें इख़्तियार करो और ज़माना-ए-जाहिलियत के तरीक़े तर्क कर दो।

“और यकीनन इससे पहले तो तुम गुमराह
 وَإِنْ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلِهِ لَبِنَ الضَّالِّينَ ۝
 लोगों में से थे।”

तुम हज की हक़ीक़त से नावाक़िफ़ थे। हज की बस शक्ल बाक़ी रह गई थी, इसकी रूह ख़त्म हो गई थी, इसके मनासिक भी रद्दोबदल कर दिया गया था।

आयत 199

“फिर तुम भी वहीं से पलटो जहाँ से सब लोग पलटते हैं”

ثُمَّ أَفِيضُوا مِنْ حَيْثُ أَفَاضَ النَّاسُ

ज़माना-ए-जाहिलियत में कुरैशे मक्का अराफ़ात तक ना जाते थे। उनका कहना था कि हमारी ख़ास हैसियत है, लिहाज़ा हम मिना ही में मुक़ीम रहेंगे, बाहर से आने वाले लोग अराफ़ात जाएँ और वहाँ से तवाफ़ के लिये वापस लौटें, यह सारे मनासिक हमारे लिये नहीं हैं। यहाँ फ़रमाया गया कि यह एक ग़लत बात है जो तुमने इजाद कर ली है। तुम भी वहीं से तवाफ़ के लिये वापस लौटो जहाँ से दूसरे लोग लौटते हैं, यानि अराफ़ात से।

“और अल्लाह से इस्तग़फ़ार करते रहो।”

وَاسْتَغْفِرُوا اللَّهَ

अपनी अगली तक़सीर (ग़लती) पर नादम (खेद) हो और अल्लाह से अपने गुनाहों की मग़फ़िरत चाहो।

“यक़ीनन अल्लाह बख़्शने वाला रहम फ़रमाने वाला है।”

إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ

आयत 200

“और जब तुम अपने मनासिके हज़ अदा कर चुको”

فَإِذَا قَضَيْتُمْ مَنَاسِكَكُمْ

“तो अब अल्लाह का ज़िक्र करो जैसे कि तुम अपने आबा व अजदाद का ज़िक्र करते रहे हो”

فَاذْكُرُوا اللَّهَ كَذِكْرِكُمْ آبَاءَكُمْ

“बल्कि उससे भी ज़्यादा शद्दोमद के साथ अल्लाह का ज़िक्र करो।”

أَوْ أَشَدَّ ذِكْرًا

यानि दसवीं ज़िल हिज्जा को जब अफ़आले हज़ से फ़रागत पा चुको तो क़यामे मिना के दौरान अल्लाह का ख़ूब ज़िक्र करो जैसे ज़माना-ए-जाहिलियत में अपने आबा व अजदाद का ज़िक्र किया करते थे, बल्कि इससे भी बढ-चढ कर अल्लाह का ज़िक्र करो। उनका क़दीम दस्तूर था कि हज़ से फ़ारिग़ होकर तीन दिन मिना में क़याम करते और बाज़ार लगाते। वहाँ मेले का सा समौ होता

जहाँ मुख़लिफ़ क़बीलों के शायर अपने क़बीलों की मदह सराई (गुणगान) करते थे और अपने अस्लाफ़ की अज़मत बयान करते थे। अल्लाह का ज़िक्र ख़त्म हो चुका था। फ़रमाया कि जिस शद्दोमद के साथ तुम अपने आबा व अजदाद का ज़िक्र करते रहे हो अब उसी अंदाज़ से, बल्कि उससे भी ज़्यादा शद्दोमद के साथ, अल्लाह का ज़िक्र करो।

“लोगों में से वह भी हैं जो यही कहते रहते हैं कि ऐ हमारे रब! हमें दुनिया ही में दे दे, और ऐसे लोगों के लिये आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं है।”

فَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَقُولُ رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا وَمَا لَهُ فِي الْآخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ

यानि अर्जे हरम में पहुँच कर दौराने हज़ भी उनकी सारी दुआएँ दुनयवी चीज़ों ही के लिये हैं। चुनाँचे वह माल के लिये, औलाद के लिये, तरक्की के लिये, दुनयवी ज़रूरियात के लिये और अपनी मुशक़लात के हल के लिये दुआ करते हैं। इसलिये कि उनके दिलों में दुनिया रची-बसी हुई है। जैसे बनी इसराइल के दिलों में बछड़े का तक्रदुस और उसकी मुहब्बत जागज़ें (inherit) कर दी गई थी उसी तरह हमारे दिलों में दुनिया की मुहब्बत घर कर चुकी है, लिहाज़ा वहाँ जाकर भी दुनिया ही की दुआएँ माँगते हैं। यहाँ वाज़ेह फ़रमा दिया गया कि ऐसे लोगों के लिये फिर आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं है।

आयत 201

“और उनमें से वह भी हैं जो यह कहते हैं”

وَمِنْهُمْ مَنْ يَقُولُ

“परवरदिगार! हमें इस दुनिया में भी ख़ैर अता फ़रमा और आख़िरत में भी ख़ैर अता फ़रमा और हमें बचा ले आग के अज़ाब से।”

رَبَّنَا آتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْآخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ

यही वह दुआ है जो तवाफ़ के हर चक्कर में रुकने यमानी से हज़रे असवद के दरमियान चलते हुए माँगी जाती है। दुनिया का सबसे बड़ा ख़ैर ईमान और हिदायत है। दुनिया का कोई ख़ैर ख़ैर नहीं है जब तक कि उसके साथ हिदायत और ईमान ना हो। चुनाँचे सबसे पहले इंसान हिदायत, ईमान और इस्तक्रामत (दृढता) तलब करे, फिर उसके साथ अल्लाह तआला से दुनिया में

कुशादगी (विस्तार) और रिज़्क में कशाइश (आसानी) की दुआ भी करे तो यह बात पसंदीदा है।

आयत 202

“उन्हीं लोगों के लिये हिस्सा होगा उसमें से जो उन्होंने कमाया।”

أُولَٰئِكَ لَهُمْ نَصِيبٌ مِّمَّا كَسَبُوا

यह अल्फ़ाज़ बहुत अहम हैं। महज़ दुआ काफ़ी नहीं हो जायेगी, बल्कि अपना अमल भी ज़रूरी है। यहाँ पर यह जो फ़रमाया कि “उनके लिये हिस्सा है उसमें से जो उन्होंने कमाया” इस पर सवाल पैदा होता है कि उसमें से क्यों? वह तो सारा मिलना चाहिये! लेकिन नहीं, बंदे को अने आमाल पर ग़रह (संतुष्ट) नहीं होना चाहिये, उसे डरते रहना चाहिये कि कहीं किसी मसले में मेरी नीयत में फ़साद ना आ गया हो, मुमकिन है मेरे किसी अमल के अंदर कोई कमी या कोताही हो गई हो। इसलिये यह ना समझ लें कि जो कुछ भी किया गया है उसका अजर लाज़िमन मिलेगा। जो कुछ उन्होंने कमाया है उसमें अगर ख़लूस है, रियाकारी नहीं है, उसके तमाम आदाब और शराइत मलहज़ रखे गये हैं तो उनको उनका हिस्सा मिलेगा।

“और अल्लाह जल्द हिसाब चुकाने वाला है।”

وَاللَّهُ سَرِيعُ الْحِسَابِ

अल्लाह तआला को हिसाब चुकाने में देर नहीं लगती, वह बहुत जल्दी हिसाब कर लेगा। अब तो हमारे लिये यह समझ लेना कुछ मुश्किल नहीं रहा, हमारे यहाँ कम्प्यूटर्ज़ पर कितनी जल्दी हिसाब हो जाता है, अल्लाह के यहाँ तो पता नहीं कैसा सुपर कम्प्यूटर होगा कि उसे हिसाब निकालने में ज़रा भी देर नहीं लगेगी!

आयत 203

“और ज़िक्र करो अल्लाह का गिनती के चंद दिनों में।”

وَاذْكُرُوا اللَّهَ فِي أَيَّامٍ مَّعْدُودَاتٍ

इससे मुराद जिल हिज्जा की ग्याहरवीं, बारहवीं और तेरहवीं तारीखें हैं जिनमें यौमे नहर के बाद मिना में क़याम किया जाता है। इन तीनों दिनों में

कंकरियाँ मारने के वक़्त और हर नमाज़ के बाद तकबीर कहने का हुक्म है। दीगर अवक़ात में भी इन दिनों में तकबीर और ज़िक्रे इलाही कसरत से करना चाहिये।

“तो जो कोई दो दिन ही में जल्दी से वापस आ जाये तो उस पर कोई गुनाह नहीं।”

مَنْ تَعَجَّلَ فِي يَوْمَيْنِ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ

यानि जो कोई तीन दिन पूरे नहीं करता, बल्कि दो दिन ही में वापसी इख़्तियार कर लेता है तो उस पर कोई गुनाह नहीं है।

“और जो पीछे रहे”

وَمَنْ تَأَخَّرَ

यानि मिना में ठहरा रहे और तीन दिन की मिक़दार पूरी करे।

“तो उस पर भी कोई गुनाह नहीं, बशर्ते कि वह तक्रवा इख़्तियार करे।”

فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ لِمَنِ اتَّقَىٰ

असल चीज़ तक्रवा है। जो कोई ज़माना-ए-हज में परहेज़गारी की रविश इख़्तियार किये रखे तो उस पर इस बात में कोई गुनाह नहीं कि मिना में दो दिन क़याम करे या तीन दिन। अल्लाह तआला के यहाँ उसका अजर महफूज़ है। अगर किसी शख्स ने मिना में क़याम तो तीन दिन का किया, लेकिन तीसरे दिन उसने कुछ और ही हरकतें शुरू कर दीं, इसलिये की जी उकताया हुआ है और तबीयत के अंदर ठहराव नहीं है तो वह तीसरा दिन उसके लिये कुछ ख़ास मुफ़ीद साबित नहीं होगा। असल शय जो अल्लाह के यहाँ कुबूलियत के लिए शर्त लाज़िम है, वह तक्रवा है। आगे फिर फ़रमाया:

“और अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो और ख़ुब जान रखो कि यक़ीनन तुम्हें उसी की जानिब जमा कर दिया जायेगा।”

وَاتَّقُوا اللَّهَ وَأَعْلَمُوا أَنَّكُمْ إِلَيْهِ تُحْشَرُونَ

तुम सबके सब हाँक कर उसी की जनाब में ले जाये जाओगे।

आयात 204 से 210 तक

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُعْجِبُكَ قَوْلُهُ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَيُشْهَدُ اللَّهُ عَلَى مَا فِي قَلْبِهِ وَهُوَ اللَّهُ الْخَصَامُ ۝ وَإِذَا تَوَلَّى سَعَى فِي الْأَرْضِ لِيُفْسِدَ فِيهَا وَيُهْلِكَ الْحَرْثَ وَالنَّسْلَ وَاللَّهُ لَا يُحِبُّ الْفُسَادَ ۝ وَإِذَا قِيلَ لَهُ اتَّقِ اللَّهَ أَخَذَتْهُ الْعِزَّةُ بِالْإِثْمِ فَحَسْبُهُ جَهَنَّمُ وَلَبِئْسَ الْبِهَادُ ۝ وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ اللَّهِ وَاللَّهُ رَءُوفٌ بِالْعِبَادِ ۝ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا ادْخُلُوا فِي السِّلْمِ كَافَّةً وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ۝ فَإِنْ زَلَلْتُمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْكُمْ الْبَيِّنَاتُ فَأَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ هَلْ يَنْظُرُونَ إِلَّا أَنْ يَأْتِيَهُمُ اللَّهُ فِي ظُلَلٍ مِنَ الْغَمَامِ وَالْمَلَائِكَةُ وَقُضِيَ الْأَمْرُ وَالِ اللَّهِ تَرْجِعُ الْأُمُورَ ۝

आयत 204

“और लोगों में से कोई शख्स ऐसा भी है जिसकी बातें तुम्हें बहुत अच्छी लगती हैं दुनिया की ज़िन्दगी में”

यह मुनाफ़िक़ीन में से एक खास गिरोह का तज़क़िरा हो रहा है। मुनाफ़िक़ीन में से बाज़ तो ऐसे थे कि उनकी ज़बानों पर भी निफ़ाक़ वाज़ेह तौर पर ज़ाहिर हो जाता था, जबकि मुनाफ़िक़ीन की एक क्रिस्म वह थी कि बड़े चापलूस और चर्प ज़बान थे। उनकी गुफ़्तगू ऐसी होती थी गोया वह तो बड़े ही मुख़्लिस और बड़े ही फ़िदाकार हैं। अपना मौक़फ़ इस अंदाज़ से पेश करते कि यूँ लगता था कि बड़ी ही नेक नियती पर मन्त्री है, लेकिन उनका किरदार इन्तहाई घिनौना था। उनकी सारी भाग-दौड़ रसूल अल्लाह ﷺ और इस्लाम की मुख़ालफ़त की राह में होती थी। उनके बारे में फ़रमाया कि बाज़ लोग ऐसे भी हैं कि जिनकी बातें दुनिया की ज़िन्दगी में तुम्हें बहुत अच्छी लगती हैं।

“और वह अल्लाह को भी गवाह ठहराता है अपने दिल की बात पर।”

उसका अंदाज़े कलाम यह होता है कि मैं जो कुछ कह रहा हूँ अल्लाह जानता है कि ख़लूस से कह रहा हूँ, पूरी नेक नियती से कह रहा हूँ। मुनाफ़िक़ की एक ख़ुसूसियत यह भी है कि वह अपने आपको क़ाबिले ऐतबार साबित करने के लिये बात-बात पर क़सम खाता है।

“हालाँकि फ़िल वाक़ेअ वह शदीद तरीन दुश्मन है।”

आयत 205

“और जब वह पीठ फेर कर जाता है तो ज़मीन में भाग-दौड़ करता है”

“ताकि उसमें फ़साद मचाये और खेती और नस्ल को तबाह करे।”

यह लोग जब आप ﷺ के पास से हटते हैं तो उनकी सारी भाग-दौड़ इसलिये होती है कि ज़मीन में फ़साद मचायें और लोगों की खेतियाँ और जानें तबाह व बर्बाद करें।”

“और अल्लाह तआला को फ़साद बिल्कुल पसंद नहीं है।”

आयत 206

“और जब उससे कहा जाता है कि अल्लाह से डरो तो झूठी इज़ज़ते नफ़्स उसको गुनाह पर और जमा देती है।”

जब ऐसे शख्स से कहा जाता है कि तुम अल्लाह का ख़ौफ़ करो, अल्लाह से डरो, तुम बातें ऐसी ख़ूबसूरत करते हो और अमल तुम्हारा इतना घिनौना है, ज़रा सोचो तो सही, तो उसको अपनी झूठी अना और इज़ज़ते नफ़्स गुनाह पर और जमा देती है। एक शख्स वह होता है जिससे ख़ता हो गई तो उसने अपनी ग़लती तस्लीम कर ली और अपनी इस्लाह कर ली। जबकि एक शख्स वह है जिसका तर्ज़े अमल यह होता है कि मैं कैसे मान लूँ कि मेरी ग़लती है? उसकी

झूठी अना और झूठी इज़्ज़ते नफ़्स उसे गुनाह से हटने नहीं देती बल्कि मज़ीद अमादा करती है।

“उसके लिये जहन्नम काफ़ी है।”

فَحَسْبُهُ جَهَنَّمُ

“और यक़ीनन वह बुरा ठिकाना है।”

وَلَيْسَ الْبِهَادُ ۝

रिवायात में आता है कि मुनाफ़कीन मदीना में एक शख्स अख़नस बिन शरीक था, यह उसका किरदार बयान हुआ है। शाने नुज़ूल के ऐतबार से यह बात ठीक है और तावीले ख़ास में इसको भी सामने रखा जायेगा, लेकिन दरहकीकत यह एक किरदार है जो आपको हर जगह मिलेगा। असल में इस किरदार को पहचानना चाहिये और इसके हवाले से अल्लाह तआला से हिदायत तलब करना चाहिये कि इस किरदार से अल्लाह तआला हमें अपने हिफ़्ज़ो अमान में रखे।

आयत 207

“और लोगों में एक शख्स वह है जो बेच देता है अपनी जान को अल्लाह की रज़ा के लिये।”

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ اللَّهِ

कुरान का यह आम अस्लूब है कि किरदारों का फ़ौरी तक्राबुल (simultaneous contrast) करता है। चुनाँचे एक नपसंदीदा किरदार के ज़िक्र के फ़ौरन बाद पसंदीदा किरदार का ज़िक्र किया गया कि लोगों में से वह भी हैं जो अपने आपको अल्लाह की रज़ाजोई के लिये बेच देते हैं और अपना तन-मन-धन कुर्बान करने को हर वक़्त तैयार रहते हैं। {إِنَّ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ}

“और अल्लाह अपने ऐसे बंदों के हक़ में बहुत शफ़ीक़ है।”

وَاللَّهُ رَءُوفٌ بِالْعِبَادِ ۝

जिस शख्स ने अल्लाह की रज़ाजोई के लिये अपना सब कुछ बेच देने का ईरादा कर लिया हो, नीयत कर ली हो, उससे भी कभी कोई कोताही हो सकती है, कभी ज़बात में आकर कोई ग़लत क़दम उठ सकता है। अपने ऐसे बंदों को अल्लाह तआला बड़ी शफ़क़त और मेहरबानी के साथ माफ़ फ़रमायेगा।

आयत 208

“ऐ अहले ईमान! इस्लाम में दाख़िल हो जाओ يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا ادْخُلُوا فِي السِّلْمِ كَآفَّةً पूरे के पूरे।”

अहले ईमान से अब वह बात कही जा रही है जिसका माकूस (converse) हम बनी इसराइल से ख़िताब के ज़ेल में (आयत:85 में) पढ़ चुके हैं:

أَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْضٍ فَمَا جَزَاءُ مَنْ يَفْعَلْ ذَلِكَ مِنْكُمْ إِلَّا

خِزْيٌ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ الْقِيَامَةِ يُرَدُّونَ إِلَى أَشَدِّ الْعَذَابِ

“क्या तुम हमारी किताब (और दीन व शरीअत) के एक हिस्से को मानते हो और एक को रद्द कर देते हो? सो जो कोई भी तुममें से यह रविश इख़्तियार करें उनकी कोई सज़ा इसके सिवा नहीं है कि दुनिया में ज़िल्लत व ख़वारी उन पर मुसल्लत कर दी जाये और क़यामत के दिन उनको शदीद तरीन अज़ाब में झोंक दिया जाये।”

अब मुसबत पैराए (सकारात्मक अंदाज़) में मुसलमानों से कहा जा रहा है कि अल्लाह की इताअत में पूरे के पूरे दाख़िल हो जाओ- तहफ़फ़ज़ात (reservations) और इस्तसनात (exceptions) के साथ नहीं। यह तर्ज़े अमल ना हो कि अल्लाह की बंदगी तो करनी है, मगर फ़लाँ मामले में नहीं। अल्लाह का हुक़म को मानना है लेकिन यह हुक़म मैं नहीं मान सकता। अल्लाह के अहक़ाम में से किसी एक की नफ़ी से कुल की नफ़ी हो जायेगी। अल्लाह तआला जुज़्बी इताअत कुबूल नहीं करता।

“और शैतान के नक्शे क़दम की पैरवी ना करो।”

وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ

“वह यक़ीनन तुम्हारा बड़ा खुला दुश्मन है।”

إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ۝

आयत 209

“फिर अगर तुम फ़िसल गये इसके बाद भी कि तुम्हारे पास यह वाज़ेह तालीमात आ चुकी हैं।”

فَإِنْ زَلَلْتُمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْكُمْ الْبَيِّنَاتُ

“तो जान लो कि अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।”

فَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

इसमें तहदीद (हद) और धमकी का पहलू है कि फिर अल्लाह की पकड़ भी बहुत सख्त होगी। और फिर यह कि वह हकीम भी है, उसकी पकड़ में भी हिकमत है, अगर उसकी तरफ़ से पकड़ का मामला ना हो तो फिर दीन का पूरा निज़ाम बे मायने होकर रह जाता है। अगर अल्लाह की तरफ़ से किसी गुनाह पर पकड़ ही नहीं है तो फिर आजमाइश क्या हुई? फिर जज़ा व सज़ा और जन्नत व दोज़ख़ का मामला क्या हुआ?

आयत 210

“क्या यह इसी का इन्तेज़ार कर रहे हैं कि आ जाये इन पर अल्लाह तआला बादलों के सायबानों में और फ़रिश्ते और फ़ैसला चुका दिया जाये?”

هَلْ يَنْظُرُونَ إِلَّا أَنْ يَأْتِيَهُمُ اللَّهُ فِي ظُلُلٍ مِّنَ الْغَمَامِ وَالْمَلَائِكَةُ وَقُضِيَ الْأَمْرُ

यानि जो लोग अल्लाह तआला की तरफ़ से वाज़ेह अहकामात और तम्बिहात आ जाने के बाद भी कजरवी से बाज़ नहीं आते तो क्या वह इस बात के मुन्तज़िर हैं कि अल्लाह तआला उनको अपना जलाल दिखाये और फ़रिश्तों की अफ़वाजे काहरा के साथ ज़ाहिर होकर उनका हिसाब चुका दे?

इंसान का नफ़्स उसे एक तो यह पट्टी पढ़ाता है कि दीन के इस हिस्से पर तो आराम से अमल करते रहो जो आसान है, बाक़ी फिर देखा जायेगा। गोया “मीठा-मीठा हप और कड़वा कड़वा थू।” दूसरी पट्टी यह पढ़ाता है कि ठीक है यह भी अल्लाह का हुक्म है और दीन का भी तक्राज़ा है, लेकिन अभी ज़रा ज़िम्मेदारियों से फ़ारिग हो जायें, अभी ज़रा बच्चों के मामलात हैं, बच्चे बरसरे रोज़गार हो जायें, बच्चियों के हाथ पीले हो जायें, मैं रिटायरमेंट ले लूँ, और अपना मकान बना लूँ, फिर मैं अपने आपको दीन के लिये ख़ालिस कर लूँगा। यह नफ़्स का सबसे बड़ा धोखा है। इस तरह वक़्त गुज़रते-गुज़रते इंसान मौत की वादी में चला जाता है। क्या मालूम मौत की घड़ी कब आ जाये! यह मोहलते उम्र तो अचानक ख़त्म हो सकती है। पूरी दुनिया की क़यामत भी जब आयेगी अचानक ही आयेगी और हर शख़्स की ज़ाति क़यामत तो उसके सर पर तलवार की तरह लटकी हुई है। अज़रूए हदीसे नबवी ﷺ:

((مَنْ مَاتَ فَقَدْ قَامَتْ قِيَامَتُهُ)) (25)

“जो मर गया तो उसकी क़यामत तो आ गई!”

तो क्या तुम्हारे पास कोई गारंटी है कि यह सारे काम कर लोगे और यह सारे काम कर चुकने के बाद ज़िन्दा रहोगे और तुम्हारे जिस्म में तवानाई (ताक़त) की कोई रमक (कण) भी बाक़ी रह जायेगी कि दीन का कोई काम कर सको? तो फिर तुम किस चीज़ का इन्तेज़ार कर रहे हो? हो सकता है अचानक अल्लाह की तरफ़ से मोहलत ख़त्म हो जाये।

“और यक़ीनन तमाम मामलात अल्लाह ही की तरफ़ लौटा दिये जाएँगे।”

وَالِلَّهِ تُرْجَعُ الْأُمُورُ ۝

आयात 211 से 216 तक

سَلِّ بَيْنِي وَبَيْنَ إِسْرَائِيلَ يَلْ كَمْ أَتَيْنَهُمْ مِّنْ آيَةٍ بَيِّنَةٍ وَمَنْ يُبَدِّلْ نِعْمَةَ اللَّهِ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُ فَإِنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝ رُزِّينَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا الْحَيَاةُ الدُّنْيَا وَيَسْعُرُونَ مِنَ الدِّينِ أَمْ نُوَا وَالَّذِينَ اتَّقَوْا فَوْقَهُمْ يَوْمَ الْقِيَمَةِ وَاللَّهُ يَرْزُقُ مَنْ يَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝ كَانَ النَّاسُ أُمَّةً وَاحِدَةً ۖ فَبَعَثَ اللَّهُ النَّبِيِّينَ مُبَشِّرِينَ وَمُنذِرِينَ وَأَنْزَلَ مَعَهُمُ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ لِيُخَلِّمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيمَا اخْتَلَفُوا فِيهِ وَمَا اخْتَلَفَ فِيهِ إِلَّا الَّذِينَ أُوتُوهُ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمْ الْبَيِّنَاتُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ فَهَدَى اللَّهُ الَّذِينَ أَمْنُوا لِمَا اخْتَلَفُوا فِيهِ مِنَ الْحَقِّ بِإِذْنِهِ وَاللَّهُ يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ إِلَى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ۝ أَمْ حَسِبْتُمْ أَنْ تُدْخِلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَأْتِكُمْ مَثَلُ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ مَسْتَهْزِمِينَ ۝ الْبَأْسَاءُ وَالضَّرَّاءُ وَرُلُلُوا حَتَّى يَقُولَ الرَّسُولُ وَالَّذِينَ أَمْنُوا مَعَهُ مَتَى نَصْرُ اللَّهِ الْآلَا إِنَّ نَصْرَ اللَّهِ قَرِيبٌ ۝ يَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ قُلْ مَا أَنْفَقْتُ مِنْ خَيْرٍ فَلِلَّهِ الدِّينُ وَالْأَقْرَبِينَ وَالْيَتَامَى وَالْمَسْكِينِ وَابْنِ السَّبِيلِ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ بِهِ عَلِيمٌ ۝ كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَّكُمْ وَعَسَى أَنْ تَكْرَهُوا شَيْئًا وَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ وَعَسَى أَنْ تُحِبُّوا شَيْئًا وَهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ۝

आयत 211

“पूछ लो बनी इस्राईल से, हमने उन्हें कितनी रौशन निशानियाँ दीं।
سَلِّ بِنِي إِسْرَآءِيلَ كَمْ آتَيْنَهُمْ مِنْ آيَاتٍ بَيِّنَاتٍ

यानि ऐ मुसलमानों! देखो कहीं तुम भी उन्हीं के रास्ते पर ना चलना। जैसा कि रसूल अल्लाह ﷺ ने आगाह फ़रमाया था:

((لَتَنْتَبِعَنَّ سَنَنْ مَنْ قَبْلَكُمْ شَبْرًا بِشَبْرٍ وَذِرَاعًا بِذِرَاعٍ حَتَّىٰ لَوْ سَلَكَوا مَجْرَ صَبْتٍ لَسَلَكَتُمْهُوَ. قُلْنَا: يَا رَسُولَ اللَّهِ الْيَهُودُ وَالنَّصَارَىٰ قَالَ: (مَنْ)) (26)

“तुम लाज़िमन अपने से पहलों के तौर-तरीकों की पैरवी करोगे, बालिशत के मुक़ाबले में बालिशत और हाथ के मुक़ाबले में हाथ। यहाँ तक कि अगर वह गोह के बिल में घुसे होंगे तो तुम भी घुस कर रहोगे।” हमने अर्ज़ किया: ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ! यहूद व नसारा की? आप ﷺ ने फ़रमाया: “तो और किसकी?”

“और जो कोई बदल डाले अल्लाह की नेअमत को, बाद इसके कि वह उसके पास आ गई हो
وَمَنْ يُدِيلْ نِعْمَةَ اللَّهِ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُ فَإِنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ۝

जो कोई अल्लाह की नेअमत को पाने के बाद उसमें तब्दीली करता है, या उसमें तहरीफ़ करता है या खुद ग़लत रविश इख़्तियार करता है तो उसको जान लेना चाहिये कि अल्लाह तआला इस तर्ज़े अमल पर बहुत सख़्त सज़ा देता है। बनी इसराइल ही की मिसाल हमारे सामने मौजूद है कि कुरान हकीम (सूरतुल बक्ररह, आयत:47) में उनसे दो मर्तबा फ़रमाया गया: {يَبْنَئِ إِسْرَآءِيلَ أَذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِي أَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَأَلَيَّْ فَطَلَّكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ ۝} “ऐ बनी इसराइल! याद करो मेरे उस ईनाम को जो मैंने तुम पर किया और यह कि मैंने तुम्हें फ़ज़ीलत अता की तमाम अहले आलम पर।” लेकिन फिर उन्हीं के बारे में फ़रमाया गया: {وَضَرَبْتُ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةَ وَالْمَسْكَنَةَ ۖ وَبَاءُوا بِغَضَبٍ مِنَ اللَّهِ ۖ} (आयत:67) “उन पर ज़िल्लत व ख़वारी और मोहताजी व कम हिम्मती थोप दी गई और वह अल्लाह का ग़ज़ब लेकर लौटे।” और यह मज़मून भी सूरह आले इमरान में दोबारा आयेगा।

आयत 212

“इन काफ़िरों के लिये दुनिया की ज़िन्दगी बड़ी मुज़य्यन कर दी गई है”
رُيِّنَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا الْحَيَاةُ الدُّنْيَا

यहाँ की चमक-दमक और शानो-शौकत उनके लिये बड़ी महबूब व दिल पसंद बना दी गई है। वैसे तो नये मॉडल की लम्बी-लम्बी चमकीली कारें, ऊँची-ऊँची इमारतें और वसीअ व अरीज़ (लम्बी-चौड़ी) कोठियाँ किसको अच्छी नहीं लगतीं, लेकिन कुफ़्फ़ार के दिलों में माल व असबाबे दुनवयी की मुहब्बत इतनी घर कर जाती है कि फिर कोई अच्छी बात उनकी ज़िन्दगी में नहीं रहती, और ना ही कोई अच्छी बात उनके ऊपर असर करती है। अहले ईमान को भी अगर ईमान के साथ यह नेअमतें मिलें तो यह मुस्तहसिन हैं। अज़रुए अल्फ़ाज़े कुरानी: {قُلْ مَنْ حَزَمَ زِينَةَ اللَّهِ الَّتِي أَخْرَجَ لِعِبَادِهِ وَالطَّيِّبَاتِ مِنَ الرِّزْقِ ۖ} (अल् आराफ़:32) “(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कहिये, किसने अल्लाह की उस ज़ीनत को हराम कर दिया जिसे अल्लाह ने अपने बंदों के लिये निकाला था और खाने-पीने की पाकीज़ा चीज़ें?” अच्छा खाना, अच्छा पीना, अच्छा पहनना हराम नहीं है। अल्लाह ने इसको लोगों के लिए ममनूअ नहीं किया। एक मुसलमान दीन के तक्वाज़े अदा करके, अल्लाह का हक़ अदा करके और हलाल से कमा कर इन चीज़ों को हासिल तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन इसके साथ वह हदीस भी ज़हन में ले आयें: (الَّذِينَ يَخْنُ الْعَالَمِينَ وَجَنَّةُ الْكَافِرِينَ) (27) “दुनिया मोमिन के लिये एक कैदख़ाना और काफ़िर के लिये बाग़ है।”

“और वह मज़ाक़ उड़ाते हैं अहले ईमान का।”
وَيَسْتَحْزُونَ مِنَ الَّذِينَ آمَنُوا

ऐसे लोग ईमान की राह इख़्तियार करने वालों का मज़ाक़ उड़ाते हैं कि ज़रा इन पागलों को, इन बेवकूफ़ों को, इन fanatics को देखो, जिन्हें अपने नफ़ा व नुक़सान का कोई होश नहीं।

“और जिन लोगों ने तक्वा की रविश इख़्तियार की थी क़यामात के दिन वह उनके ऊपर होंगे।”
وَالَّذِينَ اتَّقَوْا فَوْقَهُمْ يَوْمَ الْقِيَمَةِ ۖ

वह इन काफ़िरों के मुक़ाबले आली मरतबत और आली मक़ाम होंगे, बल्कि सूरतुल मुतफ़िफ़ीन में तो यहाँ तक आया है कि जन्नत में जाने के बाद अहले ईमान कुफ़्फ़ार का मज़ाक़ उड़ाएँगे।

“और अल्लाह तआला रिज़्क अता फ़रमायेगा जिसको चाहेगा बेहिसाब।”

وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَّشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ۝

यह जन्नत की तरफ़ इशारा है। अब फिर एक तवील आयत आ रही है जिसमें एक अहम मज़मून बयान हो रहा है। मैंने अर्ज़ किया था कि सूरतुल बक्ररह में जा-बजा इल्म व हिकमत और मार्फ़ते इलाही के बड़े हसीन और खुशनुमा फूल आये हैं जो इस बन्ती में बुन दिये गये हैं। दो लड़ियाँ शरीअत की हैं, यानि इबादात और मामलात, जबकि दो लड़ियाँ जिहाद की, यानि जिहाद बिल् माल (इन्फ़ाक़) और जिहाद बिल् नफ़्स (क्रिताल), और इनके दरमियान यह अज़ीम फूल आ जाते हैं। इस आयत को मैंने “आयतुल इख़्तलाफ़” का उन्वान दिया है। इसमें बयान किया गया है कि लोगों के दरमियान इख़्तलाफ़ क्यों होता रहा है, और यह बहुत अहम मज़मून है। इलसिये कि दुनिया में वहदते अदयान (सर्व धर्म एकता) का जो फ़लसफ़ा कुछ लोगों की तरफ़ से पेश होता है उसका एक हिस्सा सही है और हिस्सा ग़लत है। सही कौनसा है और ग़लत कौनसा है, वह इस आयत से मालूम होगा।

आयत 213

“तमाम इंसान एक ही उम्मत थे।”

كَانَ النَّاسُ أُمَّةً وَاحِدَةً

इसमें कोई शक नहीं कि इब्तदा में सबके सब इंसान एक ही उम्मत थे। तमाम इंसान हज़रत आदम अलै० की नस्ल से हैं और हज़रत आदम अलै० नबी हैं। चुनाँचे उम्मत तो एक ही थी। जब तक उनमें गुमराही पैदा नहीं हुई, इख़्तलाफ़ात पैदा नहीं हुए, शैतान ने कुछ लोगों को नहीं वरग़लाया, उस वक़्त तक तो तमाम इंसान एक ही उम्मत थे। अब यहाँ पर एक लफ़्ज़ महज़ूफ़ है: “ثُمَّ اخْتَلَفُوا” (फिर उनमें इख़्तलाफ़ात हुए)। इख़्तलाफ़ के नतीजे में फ़साद पैदा हुआ और कुछ लोगों ने गुमराही की रविश इख़्तियार कर ली। आदम अलै० का एक बेटा अगर हाबील था तो दूसरा काबील भी था।

“तो अल्लाह ने (अपने) नबी भेजे जो खुश ख़बरी सुनाते और ख़बरदार करते हुए आये।”

فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيِّنَّ مُبَشِّرِينَ وَمُنذِرِينَ

अल्लाह तआला ने अम्बिया किराम अलै० का सिलसिला जारी फ़रमाया जो नेक़कारों को बशारत देते और ग़लतकारों को ख़बरदार करते थे।

“और उनके साथ (अपनी) किताब नाज़िल फ़रमाई हक़ के साथ, ताकि वह फ़ैसला कर दें लोगों के माबैन उन उमूर में जिनमें उन्होंने इख़्तलाफ़ किया था।”

وَأَنزَلَ مَعَهُمُ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِي مَا اخْتَلَفُوا فِيهِ

“और किताब में इख़्तलाफ़ नहीं किया मगर उन्हीं लोगों ने जिन्हें यह दी गई थी, इसके बाद कि उनके पास रोशन हिदायात आ चुकी थीं, महज़ बाहमी ज़िद्दम-ज़िद्दा के सबब से।”

وَمَا اخْتَلَفَ فِيهِ إِلَّا الَّذِينَ أُوتُوهُ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمْ الْبَيِّنَاتُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ

“बग़ी” का लफ़्ज़ कबूल अज़ आयत 90 में आ चुका है। वहाँ मैंने वज़ाहत की थी कि दीन में इख़्तलाफ़ का असल सबब यही ज़िद्दम-ज़िद्दा वाला रवैया होता है। इंसान में ग़ालिब (प्रमुख) होने की जो तलब और उमंग (The urge to dominate) मौजूद है वह हक़ को कुबूल करने में मुज़ाहिम (प्रतिरोधी) हो जाती है। दूसरे की बात मानना नफ़से इंसानी पर बहुत गिरां गुज़रता है। आदमी कहता मैं इसकी बात क्यों मानूँ, यह मेरी क्यों ना माने? इंसान के अंदर जहाँ अच्छे मैलानात रखे गये हैं वहाँ बुरी उमंगें और मैलानात भी रखे गए हैं। चुनाँचे इंसान के बातिन में हक़ व बातिल की एक कशाकश चलती है। इस तरह की कशाकश ख़ारिज में भी चलती है। तो फ़रमाया कि जब इंसानों में इख़्तलाफ़ात रुनमा (उत्पन्न) हुए तो अल्लाह तआला ने अपने नबियों को भेजा जो मुबशिशर और मुन्ज़िर बन कर आये।

“पस अल्लाह ने हिदायत बख़शी उन लोगों को जो ईमान लाये उस हक़ के मामले में जिसमें लोगों ने इख़्तलाफ़ किया था, अपने हुक्म से।”

فَهَدَى اللّٰهُ الَّذِينَ آمَنُوا لِمَا اخْتَلَفُوا فِيهِ مِنَ الْحَقِّ بِإِذْنِهِ

“और अल्लाह हिदायत देता है जिसको चाहता है सीधे रास्ते की तरफ़।”

وَاللّٰهُ يَهْدِي مَنْ يَّشَاءُ إِلَى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ۝

सिलसिला-ए-अम्बिया व रुसुल के आखिर में अल्लाह तआला ने नबी आखिरुज़्ज़मान ﷺ पर क़ुरान हकीम नाज़िल फ़रमा कर, अपनी तौफ़ीक़ से, इस नज़ाअ व इख़्तलाफ़ में हक़ की राह अहले ईमान पर खोली है। और

अल्लाह ही है जो अपनी माशियत और हिकमत के तकाज़ों के मुताबिक जिसको चाहता है राहे रास्त दिखा देता है।

अब बड़ी सख़्त आयत आ रही है, जो बड़ी लरज़ा देने वाली आयत है। सहाबा किराम रज़ि० में से एक बड़ी तादाद महाजरीन की थी जो मक्के की सख़्तियाँ झेल कर आये थे। उनके लिये तो अब जो भी मराहिल आइंदा आने वाले थे वह भी कोई ऐसे मुश्किल नहीं थे। लेकिन जो हज़रात मदीना मुनव्वरा में ईमान लाये थे, यानि अंसार, उनके लिये तो यह नई-नई बात थी। इसलिये कि उन्होंने तो वह सख़्तियाँ नहीं झेली थीं जो मक्के में महाजरीन ने झेली थीं। तो अब रुए सख़न ख़ासतौर पर उनसे है, अगरचे ख़िताब आम है। क़रान मजीद में यह असलब आमतौर पर मिलता है कि अल्फ़ाज़ आम हैं, लेकिन रुए सख़न किसी ख़ास तबके की तरफ़ है। तो दरहकीक़त यहाँ अंसार को बताया जा रहा है कि मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ पर ईमान लाना फूलों की सेज नहीं है।

आयत 214

“क्या तुमने यह समझ रखा है कि यूँ ही जन्नत में दाख़िल हो जाओगे”

أَمْ حَسِبْتُمْ أَنْ تُدْخَلُوا الْجَنَّةَ

“हालाँकि अभी तक तुम्हारे ऊपर वह हालात व वाक़्यात वारिद नहीं हुए जो तुमसे पहलों पर हुए थे।”

وَلَهِيَائَاتِكُمْ مِّثْلُ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ

“पहुँची उनको सख़्ती भूख की और तकलीफ़ और वह हिला मारे गये”

مَسْتَنْهَمُ الْبَأْسَاءِ وَالصَّرَاءِ وَزُلُّوا

“यहाँ तक कि (वक़्त का) रसूल और उसके साथी अहले ईमान पुकार उठे कि कब आयेगी अल्लाह की मदद?”

حَتَّى يَقُولَ الرَّسُولُ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ مَتَى نَصْرُ اللَّهِ

“(अब उन्हें यह खुशख़बरी दी गई कि) आगाह हो जाओ, यक़ीनन अल्लाह की मदद करीब है।”

إِنَّ نَصْرَ اللَّهِ قَرِيبٌ ۝

यानि अल्लाह तो अहले ईमान को आज़माता है, उसे खोटे और खरे को अलग करना है। यह वही बात है जो इससे पहले उन्नीसवें रकूअ के बिल्कुल आगाज़ में आ चकी है: {وَالْأَنفُسُ وَالنَّمَاةُ} (आयत:155) “और हम तम्हें लाज़िमन आज़माएँगे किसी क़दर ख़ौफ़ और भूख से और माल व जान और समारात के नुक़सान से।” यह कोई फूलों भरा रास्ता नहीं है, फूलों की सेज नहीं है, हक़ का रास्ता काँटो भरा रास्ता है, इसके लिये ज़हनन तैयार हो जाओ।

दर रहे मंज़िले लैयला कि ख़तरहास्त बसे
शर्ते अब्बल क़दम ऐन अस्त कि मजनून बाशी!

और:

यह शहादत ग़ह उल्फ़त में क़दम रखना है
लोग आसान समझते हैं मसलमाँ होना!

इस रास्ते में अल्लाह की मदद ज़रूर आती है, लेकिन आज़माइशों और क़र्बानियों के बाद। चनाँचे सहाबा किराम रज़ि० को फिर सुरह अस्सफ़ में फ़तह व नसरत की ख़ुशख़बरी सुनाई गई, जबकि ग़ज़वा-ए-अहज़ाब वाक़ेअ हो चका था और मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ और आप ﷺ के साथी अहले ईमान रज़ि० शदीद तरीन इम्तिहान से कामयाबी के साथ गुज़र चुके थे। तब उन्हें बाअल्फ़ाज़ ख़ुशख़बरी दी गई: {وَأَخْرَجْنَا مُجِبِّي نَصْرٍ مِنَ اللَّهِ وَفَتْحٍ قَرِيبٍ} (आयत:13) “और जो दूसरी चीज़ तम्हें पसंद है (वह भी तम्हें मिलेगी), अल्लाह की तरफ़ से नुसरत और करीब ही में हासिल हो जाने वाली फ़तह।” {وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ} “और (ऐ नबी ﷺ!) अहले ईमान को बशारत दे दीजिये!” अपने अहले ईमान साथियों को बशारत दे दीजिये कि अब वह वक़्त आ गया है कि अल्लाह के नुसरत के दरवाज़े खुलते चले जाएँगे।

आयत 215

“ये आप ﷺ से पूछते हैं कि क्या ख़र्च करें?”

يَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ

यानि इन्फ़ाक़ के लिये जो कहा जा रहा है तो हम क्या ख़र्च करें? कितना ख़र्च करें? इंसान भलाई के लिये जो भी ख़र्च करे तो उसमें सबसे पहला हक़ किन का है?

“कह दीजिये जो भी तुम खर्च करो माल व असबाब में से”

قُلْ مَا أَنْفَقْتُمْ مِنْ خَيْرٍ

“तो वालिदैन्, रिश्तेदारों, यतीमों, मस्कीनों और मुसाफ़िरों के लिये (खर्च करो)।”

فَلِلَّوَالِدَيْنِ وَالْأَقْرَبِينَ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينِ
وَاللِّسْبِيلِ

सबसे पहला हक़ वालिदैन् का है, इसके बाद दर्जा-ब-दर्जा कराबतदारों, यतीमों, मस्कीनों और मुसाफ़िरों का हक़ है।

“और जो ख़ैर भी तुम कमाओगे अल्लाह उससे अच्छी तरह बाख़बर है।”

وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ بِهِ عَلِيمٌ ⑩

तुम जो भी अच्छा काम करोगे तो जान लो कि वह अल्लाह के इल्म में है। ज़रूरत नहीं है कि दुनिया उससे वाकिफ़ हो, तुम्हें अगर अल्लाह से अजर लेना है तो वह तो रात के अँधेरे में भी देख रहा है। अगर तुम्हारे दायें हाथ ने दिया है और बायें को पता नहीं चला तो अल्लाह को तो फिर भी पता चल गया। तो तुम ख़ातिर जमा रखो, तुम्हारी हर नेकी अल्लाह के इल्म में है और वह उसे ज़ाया नहीं करेगा।

अब अगली आयत में क़िताल के मज़मून का तसलसुल है। मैंने सूरतुल बक्ररह के निस्फ़े आख़िर के मज़ामीन को चार मुख्तलिफ़ रंगों की लड़ियों से तश्बीह दी थी, जिनको बाहम बट लिया जाये तो चारो रंग कटे-फटे नज़र आते हैं और अगर इन्हें खोल दिया जाये तो हर रंग मुसलसल नज़र आता है।

आयत 216

“(मुसलमानों!) अब तुम पर जंग फ़र्ज़ कर दी गई है और वह तुम्हें गिराँ गुज़र रही है।”

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَّكُمْ

वाज़ेह रहे कि सूरतुल बक्ररह से पहले सूरह मुहम्मद ﷺ नाज़िल हो चुकी थी और उसमें क़िताल की फ़र्ज़ियत आ चुकी थी। (चुनाँचे उसका एक नाम सूरतुल क़िताल भी है) लिहाज़ा इस हवाले से कुछ लोग परेशान हो रहे थे। ख़ासतौर पर मुनाफ़िक़ीन यह कहते थे कि भाई सुलह जोई से काम लो, बस दावत व तब्लीग़ के ज़रिये से लोगों को सीधे रास्ते की तरफ़ लाओ, यह जंग व जिदाल और लड़ाई-भिड़ाई तो कोई अच्छा काम नहीं है, इसमें तो बहुत

ख़राबी हैं। इनके अलावा ऐसे मुसलमान जिनका ईमान क़द्रे कमज़ोर था, अगरचे वह मुनाफ़िक़ तो नहीं थे, लेकिन उनका ईमान अभी पुख्ता नहीं था, अभी ताज़ा-ताज़ा ईमान लाये थे और तरबियत के मराहिल से अभी नहीं गुज़रे थे, उनमें से भी बाज़ लोगों के दिलों में इन्क़बाज़ (दबाव) पैदा हो रहा था। यहाँ क़िताल की फ़र्ज़ियत के लिये “क़ुतब” का लफ़्ज़ आया है। इससे पहले यह लफ़्ज़ रोज़े, किसान और वसीयत के ज़िम्न में आ चुका है।

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ... كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِي الْقَتْلِ... كُتِبَ عَلَيْكُمُ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ إِنْ تَرَكَ خَيْرًا الْوَصِيَّةُ...

फ़रमाया कि तुम पर जंग फ़र्ज़ कर दी गई है और वह तुम्हें बुरी लग रही है।

“और हो सकता है कि तुम किसी शय को नापसंद करो और वह तुम्हारे लिये बेहतर हो।”

وَعَسَىٰ أَنْ تَكْرَهُوا شَيْئًا وَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ

“और हो सकता है कि तुम किसी चीज़ को पसंद करो दर हालाँकि वह तुम्हारे लिये बुरी हो।”

وَعَسَىٰ أَنْ تُحِبُّوا شَيْئًا وَهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ

“और अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते।”

وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ⑪

तुम अपनी अक़ल पर ईमान ना रखो, अल्लाह की वही पर ईमान रखो, अल्लाह के रसूल ﷺ पर ईमान रखो। जिस वक़्त के लिये जो हुक्म मौज़ू (मुनासिब) था वही तुम्हें अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ से दिया गया। चौदह बरस तक तुम्हें क़िताल से मना किया गया। उस वक़्त तुम्हारे लिये हुक्म था: “كُفُّوا أَيْدِيَكُمْ” (अपने हाथ रोके रखो) अब तुम पर क़िताल फ़र्ज़ किया जा रहा है, लिहाज़ा अब इस हुक्म पर सरे तस्लीम ख़म करना तुम्हारे लिये लाज़िम है।

आयात 217 से 221 तक

يَسْأَلُونَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ قِتَالٍ فِيهِ قُلْ فِيهِ كِبِيرٌ وَصَدٌّ عَن سَبِيلِ اللَّهِ وَكُفْرٌ بِهِ
وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَإِخْرَاجُ أَهْلِهِ مِنْهُ أَكْبَرُ عِنْدَ اللَّهِ وَالْفِتْنَةُ أَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ وَلَا يَرَى الْوَنُ
يُقَاتِلُونَكُمْ حَتَّى يَرُدُّوكُمْ عَن دِينِكُمْ إِنِ اسْتَطَاعُوا وَمَن يَرُدَّ دِينَكُمْ عَنْ دِينِهِ فَسَبَّحْتَ
وَهُوَ كَاوٍ فَأُولَئِكَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ وَأُولَئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا
خَالِدُونَ ﴿٢١٧﴾ إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَالَّذِينَ هَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ أُولَئِكَ يَرْجُونَ رَحْمَتَ
اللَّهِ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿٢١٨﴾ يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ قُلْ فِيهِمَا إِثْمٌ كَبِيرٌ وَمَنَافِعُ لِلنَّاسِ
وَإِثْمُهُمَا أَكْبَرُ مَن تَعْبَهُمَا وَتَفَكَّرُونَ ﴿٢١٩﴾ يَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُغْفِقُونَ قُلِ الْغَفْوُ كَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمُ الْآيَاتِ
لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ ﴿٢٢٠﴾ فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ وَيَسْأَلُونَكَ عَنِ الْيَمْنِيِّ قُلْ إِصْلَاحٌ لَهُمْ خَيْرٌ وَإِن
تُخَالِطُوهُمْ فَإِخْوَانُكُمْ وَاللَّهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَأَغْنَتْكُمُ إِنَّا اللَّهُ
عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٢١﴾ وَلَا تَتَكْبَرُوا الْمُشْرِكِينَ حَتَّى يُؤْمِنَ وَلَا مَنَّةٌ مُّؤْمِنَةً خَيْرٌ مِّنْ مُّشْرِكَةٍ وَلَا
أَعَجَبْتُكُمْ وَلَا تَتَكْبَرُوا الْمُشْرِكِينَ حَتَّى يُؤْمِنُوا وَلَعَنَ مُؤْمِنٌ خَيْرٌ مِّنْ مُّشْرِكٍ وَلَا أَعْجَبْتُكُمْ
أُولَئِكَ يَدْعُونَ إِلَى النَّارِ وَاللَّهُ يَدْعُو إِلَى الْجَنَّةِ وَالْمَغْفِرَةِ بِإِذْنِهِ وَيُبَيِّنُ آيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ
يَتَذَكَّرُونَ ﴿٢٢٢﴾

आयत 217

“*(ऐ नबी ﷺ) ये आपसे पूछते हैं हुरमत वाले महीनों में जंग के बारे में।*”

किताल का हुकम आने के बाद अब वह पूछते थे कि ये जो हुरमत वाले महीने हैं उनमें जंग करना कैसा है? इसलिये कि सीरत में यह वाक्या आता है कि हिजरत के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने हज़रत अब्दुल्ला बिन जहश रज़ि० को चंद अफ़राद के दस्ते का कमांडर बना कर हिदायत फ़रमाई थी कि मक्का और तार्ईफ़ के दरमियान जाकर वादिये नख़ला में क़याम करें और कुरैश की नक़ल व हरकत पर नज़र रखें। वादिये नख़ला में क़याम के दौरान वहाँ कुरैश के एक मुख़्तसर से क़ाफ़िले के साथ मुठभेड़ हो गई और मुसलमानों के हाथों एक मुशरिक उमर बिन अब्दुल्लाह अल् हज़रमी मारा गया। उस रोज़ रज्जब की

आख़री तारीख़ थी और रज्जब का महीना अशहरे हुरम में से है। यह हिजरत के बाद पहला खून था जो मुसलमानों के हाथों हुआ। इस पर मुशरिकीन ने बहुत वावैला किया कि इन लोगों का क्या हाल है, बने फिरते हैं अल्लाह वाले, रसूल वाले, दीन वाले, आख़िरत वाले और इन्होंने हुरमत वाले महीने को बट्टा लगा दिया, इसमें जंग की। तो यह दरअसल अल्लाह तआला अपने उन मोमिन बंदों की तरफ़ से गोया खुद सफ़ाई पेश कर रहे हैं। फ़रमाया कि यह आपसे पूछते हैं कि हुरमत वाले महीनों में किताल का क्या हुकम है?

“कह दीजिये कि इसमें जंग करना बहुत बड़ी (गुनाह की) बात है।”

قُلْ قِتَالٌ فِيهِ كِبِيرٌ

“लेकिन अल्लाह के रास्ते से रोकना, उसका क़फ़ करना, मस्जिदे हुरम से रोकना और हरम के रहने वालों को वहाँ से निकालना अल्लाह के नज़दीक इससे कहीं बड़ा गुनाह है।”

وَصَدٌّ عَن سَبِيلِ اللَّهِ وَكُفْرٌ بِهِ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَإِخْرَاجُ أَهْلِهِ مِنْهُ أَكْبَرُ عِنْدَ اللَّهِ

यह वह संगीन जराइम (जुर्म) हैं जिनका इरतकाब मुशरिकीने मक्का की जानिब से हो रहा था। यहाँ फ़रमाया गया कि यह सब काम अशहरे हुरम में जंग करने से भी बड़े जुर्म हैं। लिहाज़ा उनके सहेबाब (मुक्काबले) के लिये अगर अशहरे हुरम में जंग करनी पड़ जाये तो कोई हर्ज नहीं।

“और फ़ितना क़त्ल से भी बड़ा गुनाह है।”

وَالْفِتْنَةُ أَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ

क़त्ल अज़ आयत 191 में अल्फ़ाज़ आ चुके हैं: {وَالْفِتْنَةُ أَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ} फ़ितना हर वह कैफ़ियत है जिसमें साहिबे ईमान के लिये ईमान पर क़ायम रहना और इस्लाम पर अमल करना मुशिकल हो जाये। आज का पूरा मआशरा फ़ितना है। इस्लाम पर अमल करना मुशिकल है, बदमाशी और हरामख़ोरी के रास्ते खुले हुए हैं, अकले हलाल (हलाल खाना) इस क़द्र मुशिकल बना दिया गया है कि दाँतों पसीना आये तो शायद नसीब हो। निकाह और शादी के जायज़ रास्तों पर बड़ी-बड़ी शर्तें और क़दग़नें आयद हैं, जबकि नाजायज़ मरासिम और ज़िना के रास्ते खुले हैं। जिस मआशरे के अंदर बातिल का ग़लबा हो जाये और हक़ पर चलना मुमकिन ना रहे वह बड़े फ़ितना में मुब्तला है। बातिल का

ग़लबा सबसे बड़ा फ़ितना है। लिहाज़ा फ़रमाया कि फ़ितना क़ल्ल के मुकाबले में बहुत बड़ी शय है।

“और यह लोग तुमसे जंग करते रहेंगे यहाँ तक कि लौटा दें तुम्हें अपने दीन से अगर वह ऐसा कर सकते हों।”

वह तो इस पर तुले हुए हैं कि तुम्हें तुम्हारे दीन से फेर दें। यहाँ मुशरिकीने मक्का की तरफ़ इशारा हो रहा है, क्योंकि अब यह ग़ज़वा-ए-बदर की तम्हीद चल रही है। इसके बाद ग़ज़वा-ए-बदर होने वाला है, उसके लिये अहले ईमान को ज़हनी तौर पर तैयार किया जा रहा है और उन्हें आगाह किया जा रहा है कि मुशरिकीन की जंग का मक़सद तुम्हें तुम्हारे दीन से बरग़श्ता करना (हटाना) है, वह तो अपनी भरपूर कोशिश करते रहेंगे कि अगर उनका बस चले तो तुम्हें तुम्हारे दीन से लौटा कर वापस ले जाएँ।

“और (सुन लो) जो कोई भी तुममें से अपने दीन से फिर गया”

“और उसी हालत में उसकी मौत आ गई कि वह काफ़िर ही था”

“तो यह वह लोग होंगे जिनके तमाम आमाल दुनिया और आख़िरत में अकारत (बेकार) जाएँगे।”

पहले ख़्वाह कितनी ही नेकियाँ की हुई थीं, कितनी ही नमाज़े पढ़ी हुई थीं, कितना ही इन्फ़ाक़ किया हुआ था, सदक़ात दिये थे, जो कुछ भी किया था सबका सब सिफ़र (ज़ीरो) हो जायेगा।

“और वह होंगे जहन्नम वाले, वह उसी में हमेशा रहेंगे।”

आयत 218

“इसके बरअक्स) जो लोग ईमान लाये और

जिन्होंने हिजरत की और जिहाद किया अल्लाह की राह में तो यही वह लोग हैं जो अल्लाह की रहमत के उम्मीदवार हैं।”

यहाँ उन लोगों पर बड़ा लतीफ़ तंज़ है जो खुद तो हराम के रास्ते पर जा रहे हैं, लेकिन यह उम्मीद लगाये बैठे हैं कि अल्लाह उन पर रहम फ़रमायेगा। अल्लाह ऐसी रविश इख़्तियार करने वालों पर रहमत नहीं फ़रमाता, अल्लाह की रहमत का मुस्तहिक्क बनना पड़ता है। और अल्लाह की रहमत का मुस्तहिक्क वही है जो ईमान, हिजरत और जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह का रास्ता इख़्तियार करता है। ऐसे लोग बजा तौर पर अल्लाह की रहमत के उम्मीदवार हैं।

“और अल्लाह तआला ग़फ़ूर है, रहीम है।”

वो उनकी लगज़िशों (गुनाहों) को माफ़ करने वाला और अपनी रहमत से उन्हें नवाज़ने वाला है।

आयत 219

“(ऐ नबी ﷺ!) यह आपसे शराब और जुए के बारे में दरयाफ़्त करते हैं (कि इनका क्या हुक्म है?)।”

इन अहक़ाम से शरीअत का इब्तदाई खाका (blue print) तैयार होना शुरू हो गया है, कुछ अहक़ाम पहले आ चुके हैं और कुछ अब आ रहे हैं। शराब और जुए के बारे में यहाँ इब्तदाई हुक्म बयान हुआ है और इस पर महज़ इज़हारे नाराज़गी फ़रमाया गया है।

“(ऐ नबी ﷺ! इनसे) कह दीजिये कि इन दोनों के अंदर बहुत बड़े गुनाह के पहलु हैं।”

“और लोगों के लिए येछ मनफ़अतें (फ़ायदे) भी हैं।”

“अलबत्ता इनका गुनाह का पहलु नफ़े के

पहलु से बड़ा है।”

यानि इशारा कर दिया गया कि इनको छोड़ दो। अब मामला तुम्हारी अक्ले सलीम के हवाले है, हकीकत तुम पर खोल दी गई है। यह इब्तदाई हुक्म है, लेकिन हुक्म के पैराये में नहीं। बस वाज़ेह कर दिया गया कि इनका गुनाह इनके फ़ायदे से बढ़ कर है, अगरचे इनमें लोगों के लिये कुछ फ़ायदे भी हैं। बक्रौल ग़ालिब:

मय से गर्ज निशात है किसी रू स्याह को?
इक गुना बेखुदी मुझे दिन-रात चाहिये!

और:

मैं मयकदे की राह से होकर गुज़र गया
वरना सफ़र हयात का बेहद तवील था!

यह हिकमत समझ लीजिये कि शराब और जुए में क्या चीज़ मुशतरक (समान) है कि यहाँ दोनों को जमा किया गया है? शराब के नशे में भी इंसान अपने आपको हकाइक से मुन्कतअ करता है और मेहनत से जी चुराता है। और ज़िन्दगी के तलख़ हकाइक का मुआवज़ा करने को तैयार नहीं होता। “एक गुना बेखुदी मुझे दिन रात चाहिए!” और जुए की बुनियाद भी मेहनत की नफ़ी पर है। एक रवैया तो यह है कि मेहनत से एक आदमी कमा रहा है, मशक्कत कर रहा है, कोई खोखा, छाबड़ी या रेडी लगा कर कुछ कमाई कर रहा है, जबकि एक है चाँस और दाव की बुनियाद पर पैसे कमाना। यह मेहनत की नफ़ी है। चुनाँचे शराब और जुए के अन्दर असल में इल्लत एक ही है।

“और यह आप ﷺ से पूछते हैं कि (अल्लाह
की राह में) कितना खर्च करें?” وَيَسْأَلُونَكَ مَاذَا يُنفِقُونَ

आयत 195 में इन्फ़ाक़ का हुक्म बाअल्फ़ाज़ आ चुका है:

“और खर्च करो अल्लाह की राह में और अपने
आपको अपने हाथों हलाकत में ना ज़ोंको।” وَأَنْفِقُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَلَا تُلْقُوا بِأَيْدِيكُمْ
إِلَى التَّهْلُكَةِ

तो सवाल किया गया कि “कितना खर्च करें?” हमें कुछ मिक्कदार भी बता दी जाये। फ़रमाया:

“कह दीजिये: जो भी तुम्हारी ज़रूरत से
ज़ायद (ज़्यादा) हो।”

قُلِ الْعَفْوَ

अल्लाह तआला का यह मुतालबा नहीं है कि तुम अपनी ज़रूरतों को पीछे डाल दो, बल्कि तुम पहले अपनी ज़रूरतें पूरी करो, फिर जो तुम्हारे पास बच जाये उसे अल्लाह की राह में खर्च कर दो। कम्युनिज्म के फ़लसफ़े में एक इस्तलाह “कद्रे ज़ायद” (surplus value) इस्तेमाल होती है। यह है “الْعَفْوَ” जो भी तुम्हारी ज़रूरियात से ज़ायद है यह surplus value है, उसे अल्लाह की राह में दे दो। इसको बचा कर रखने का मतलब यह है कि आप अल्लाह पर बे-ऐतमादी का इज़हार कर रहे हैं कि अल्लाह ने आज तो दे दिया है, कल नहीं देगा। लेकिन यह कि इंसान की ज़रूरतें क्या हैं, कितनी हैं, इसका अल्लाह ने कोई पैमाना मुक्क़रर नहीं किया। इसका ताल्लुक़ बातिनी रूह से है। एक मुसलमान के अंदर अल्लाह की मुहब्बत और आख़िरत पर ईमान ज्यों-ज्यों बढ़ता जायेगा उतना ही वह अपनी ज़रूरतें कम करेगा, अपने मैयारे ज़िन्दगी को पस्त करेगा और ज़्यादा से ज़्यादा अल्लाह की राह में देगा। उसूल यह है कि हर शख्स यह देखे कि जो मेरी ज़रूरत से ज़ायद है उसे मैं बचा-बचा कर ना रखूँ, बल्कि अल्लाह की राह में दे दूँ। इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह पर इस सूरह मुबारक में पूरे दो रकूअ आगे आने वाले हैं।

“इसी तरह अल्लाह तआला अपनी आयत
तुम्हारे लिये वाज़ेह कर रहा है ताकि तुम
ग़ौरो फ़िक्क़ करो।”

كَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمُ الْآيَاتِ لَعَلَّكُمْ
تَتَفَكَّرُونَ

आयत 220

“दुनिया और आख़िरत (के मामलात) में।”

فِي الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ

तुम्हारा यह ग़ौरो फ़िक्क़ दुनिया के बारे में भी होना चाहिये और आख़िरत के बारे में भी। दुनिया में भी इस्लाम रहबानियत नहीं सिखाता। इस्लाम की तालीम यह नहीं है कि ना खाओ, ना पिओ, चिल्लेकशी करो, जंगलो में निकल जाओ! नहीं, इस्लाम तो मुत्मद्दन (सभ्य) ज़िन्दगी की तालीम देता है, घर ग्रहस्थी और शादी-ब्याह की तरगीब देता है, बीबी बच्चों के हुक्क़ बताता

है और उनकी अदायगी का हुक्म देता है। इसके साथ-साथ तुम्हें आखिरत की भी फ़िक्र करनी चाहिये, और दुनिया व आखिरत के मामलात में एक निस्वत व तनासुब (ratio proportion) कायम रहना चाहिये। दुनिया की कितनी कद्रो कीमत है और इसके मुकाबले में आखिरत की कितनी कद्रो कीमत है, इसका सही तौर पर अंदाज़ा करना चाहिये। अगर यह अंदाज़ा ग़लत हो गया और कोई ग़लत तनासुब कायम कर लिया गया तो हर चीज़ तलपट हो जायेगी। मिसाल के तौर पर एक दवा के नुस्खे में कोई चीज़ कम थी, कोई ज़्यादा थी। अगर आपने जो चीज़ कम थी उसे ज़्यादा कर दिया और जो ज़्यादा थी उसे कम कर दिया तो अब हो सकता है कि यह नुस्खा शिफ़ा ना रहे, नुस्खा-ए-हलाकत बन जाये।

“और यह आप صلی اللہ علیہ وسلم से पूछ रहे हैं यतीमों के बारे में।”

وَيَسْأَلُونَكَ عَنِ الْيَتَامَىٰ

“(ऐ नबी صلی اللہ علیہ وسلم! इनसे) कह दीजिये कि (जिस तर्ज़े अमल में) उनकी भलाई और मस्लहत (हो वही इस्तिथार करना) बेहतर है।”

قُلْ إِصْلَاحٌ لَهُمْ خَيْرٌ

उनकी मस्लहत को पेशे नज़र रखना बेहतर है, नेकी है, भलाई है। असल में लोगों के सामने सूरह बनी इसराइल की यह आयत (आयत:34) थी: {وَلَا تَقْرُبُوا مَالَ الْيَتَامَىٰ إِلَّا بِالْبَيِّنَاتِ هِيَ أَحْسَنُ} “और माले यतीम के क़रीब तक ना फटको, मगर ऐसे तरीक़े पर जो (यतीम के हक़ में) बेहतर हो।” चुनाँचे वो माले यतीम के बारे में इन्तहाई एहतियात कर रहे थे और उन्होंने यतीमों की हंडियाँ भी अलैहदा कर दी थीं कि मबादा (ऐसा ना हो कि) उनके हिस्से की कोई बोटी हमारे पेट में चली जाये। लेकिन इस तरह यतीमों की देखभाल करने वाले लोग तकलीफ़ और हर्ज में मुब्तला हो गये थे। किसी के घर में यतीम परवरिश पा रहा है तो उसका खर्च अलग तौर पर उसके माल में से निकाला जा रहा है और उसके लिये अलग हंडियाँ पकाई जा रही है। फ़रमाया कि उस हुक्म से यह मक़सद नहीं था, मक़सद यह था कि तुम कहीं उनके माल हड़प ना कर जाओ, उनके लिये इस्लाह और भलाई का मामला करना बेहतर तर्ज़े अमल है।

“और अगर तुम उनको अपने साथ मिलाये

وَأِنْ تَحَاطُّوهُمْ فَاخْوَاكُمُ

रखो तो वह तुम्हारे भाई ही तो हैं।”

“और अल्लाह जानता है मुफ़्फ़िद को भी और मुस्लिह को भी।”

وَاللَّهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ

वह जानता है कि कौन बदनीयती से यतीम का माल हड़प करना चाहता है और कौन यतीम की ख़ैरख़्वाही चाहता है। यह हंडिया अलैहदा करके भी गड़बड़ कर सकता है और यह वह शख्स है जो हंडिया मुश्तरक करके भी हक़ पर रह सकता है।

“और अगर अल्लाह चाहता तो तुम्हें सख़्ती ही में डाले रखता।”

وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَأَغْنَيْنَاكُمُ

लेकिन अल्लाह तआला ने तुम्हें मशक्क़त और सख़्ती से बचाया और तुम पर आसानी फ़रमाई।

“यक़ीनन अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।”

إِنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ

वह इन्तहाई मशक्क़त पर मब्री सख़्त से सख़्त हुक्म भी दे सकता है, इसलिये कि वह ज़बरदस्त है, लेकिन वह इंसानों को मशक्क़त में नहीं डालता, बल्कि उसके हर हुक्म के अंदर हिकमत होती है। और जहाँ हिकमत नरमी की मुतक़ाज़ी (आवेदक) होती है वहाँ वह रियायत देता है।

आयत 221

“और मशरिक औरतों से निकाह ना करो जब तक कि वह ईमान ना ले आएँ।”

وَلَا تَنْكِحُوا الْمُشْرِكِينَ حَتَّىٰ يُؤْمِنُوا

“और एक मोमिना लौंडी (दासी) बेहतर है एक आज़ाद मशरिका औरत से अगरचे वह तुम्हें अच्छी भी लगती हो।”

وَلَا مَؤْمِنَةٌ خَيْرٌ مِنْ مُشْرِكَةٍ وَلَا أَجْنَبَةٌ

“और अपनी औरतें मशरिकों के निकाह में मत दो जब तक कि वह ईमान ना ले आएँ।”

وَلَا تَنْكِحُوا الْمُشْرِكِينَ حَتَّىٰ يُؤْمِنُوا

“और एक मोमिन ग़लाम बेहतर है एक
आज़ाद मुशरिक मर्द से अगरचे वह तुम्हें पसंद
भी हो।”

ख़्वाह वह साहिबे हैसियत और मालदार हो, लेकिन दौलते ईमान से महरूम
हो तो तुम्हारे लिये जायज़ नहीं है कि अपनी बहन या बेटी उसके निकाह में दे
दो।

“यह लोग आग की तरफ़ बुला रहे हैं।”

أُولَٰئِكَ يَدْعُونَ إِلَى النَّارِ

अगर इनसे रिश्ते-नाते जोड़ोगे तो वह तुम्हें भी जहन्नम में ले जाएँगे और
तुम्हारी औलाद को भी।

“और अल्लाह तुम्हें बुला रहा है जन्नत की
तरफ़ और मग़फ़िरत की तरफ़ अपने हुक्म
से।”

وَاللَّهُ يَدْعُو إِلَى الْجَنَّةِ وَالْمَغْفِرَةِ بِإِذْنِهِ

“और वह अपनी आयात वाज़ेह कर रहा है
लोगों के लिये ताकि वह नसीहत हासिल
करें।”

وَيُبَيِّنُ آيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ

आयात 222 से 228 तक

وَيَسْأَلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ قُلْ هُوَ أَذَىٰ فَاعْتَزِلُوا النِّسَاءَ فِي الْمَحِيضِ وَلَا تَقْرُبُوهُنَّ
حَتَّىٰ يَظْهَرْنَ فَإِذَا تَظْهَرْنَ فَاتُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ أَمَرَكُمُ اللَّهُ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ التَّوَّابِينَ
وَيُحِبُّ الْمُتَطَهِّرِينَ ۝ نِسَاءُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ فَاتُوا حَرْثَكُمْ أَلَىٰ شَيْئُمْ وَقَدِّمُوا
لِأَنفُسِكُمْ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّكُمْ مُّلْقَوَةٌ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ۝ وَلَا تَجْعَلُوا اللَّهَ
عُرْضَةً لِإِيمَانِكُمْ أَنْ تَبَرُّوا وَتَتَّقُوا وَتُصْلِحُوا بَيْنَ النَّاسِ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ لَا
يُؤَاخِذُكُمُ اللَّهُ بِاللَّغْوِ فِي أَيْمَانِكُمْ وَلَكِنْ يُؤَاخِذُكُمْ بِمَا كَسَبَتْ قُلُوبُكُمْ وَاللَّهُ غَفُورٌ
حَلِيمٌ ۝ لِلَّذِينَ يُؤَلُّونَ مِنْ نِسَائِهِمْ تَرَبُّصُ أَرْبَعَةِ أَشْهُرٍ فَإِنْ فَاءُوا فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ

رَحِيمٌ ۝ وَإِنْ عَزَمُوا الطَّلَاقَ فَإِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ وَالْمُطَلَّقَتُ يَتَرَبَّصْنَ
بِأَنفُسِهِنَّ ثَلَاثَةَ قُرُوءٍ وَلَا يَحِلُّ لَهُنَّ أَنْ يَكْتُمْنَ مَا خَلَقَ اللَّهُ فِي أَرْحَامِهِنَّ إِنْ كُنَّ
يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَبُعُولَتُهُنَّ أَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ فِي ذَلِكَ إِنْ أَرَادُوا إِصْلَاحًا
وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ

आयत 222

“और वह औरतों की माहवारी के बारे में आप
से सवाल कर रहे हैं।”

وَيَسْأَلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ

“कह दीजिये वह एक नापाकी भी है और एक
तकलीफ़ का मसला भी है।”

قُلْ هُوَ أَذَىٰ

“तो हैज़ की हालात में औरतों से अलैहदा
रहो।”

فَاعْتَزِلُوا النِّسَاءَ فِي الْمَحِيضِ

“और उनसे मुक़ारबत ना करो यहाँ तक कि
वह पाक हो जाएँ।”

وَلَا تَقْرُبُوهُنَّ حَتَّىٰ يَظْهَرْنَ

“फिर जब वह ख़ूब पाक हो जाएँ तो अब
उनकी तरफ़ जाओ जहाँ से अल्लाह ने तुम्हें
हुक्म दिया है।”

فَإِذَا تَظْهَرْنَ فَاتُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ أَمَرَكُمُ اللَّهُ

मालूम हुआ कि बदीहयाते फ़ितरत (पूर्व प्राकृतिक ज्ञान) अल्लाह तआला के
अवामिर (आदेशों) में शामिल है। औरतों के साथ मुजामियत (संभोग) का
तरीका इंसान को फ़ितरी तौर पर मालूम है, यह एक अम्रे तबीय (प्राकृतिक
कार्य) है। हर हैवान को भी जिबिल्ली (जन्मजात) तौर पर मालूम है कि उसे
अपनी मादा के साथ कैसा ताल्लुक़ कायम करना है। लेकिन अगर इंसान
फ़ितरी तरीका छोड़ कर ग़ैर फ़ितरी तरीका इख़्तियार करे और औरतों के
साथ भी क़ौमे लूत वाला अमल करने लगे तो यह हराम है। सही रास्ता वही
है जो अल्लाह तआला ने तुम्हारी फ़ितरत में डाला है।

“यक्रीनन अल्लाह मुहब्बत करता है बहुत तौबा करने वालों से और मुहब्बत करता है बहुत पाकबाज़ी इख्तियार करने वालों से।”

उनसे अगर कोई गुनाह सरज़द हो जाये तो उससे तौबा करते हैं और नापाक चीजों से दूर रहते हैं।

आयत 223

“तुम्हारी बीवियाँ तुम्हारे लिये बमांज़िला खेती हैं।”

जैसे खेत में बीज बोते हो, फिर फ़सल काटते हो, उसी तरह बीवियों के ज़रिये से अल्लाह तआला तुम्हें औलाद अता करता है।

“तो अपनी खेती में जिस तरह चाहो आओ।”

तुम अपनी खेती में जिधर से चाहो आओ, तुम्हारे लिये कोई रुकावट नहीं है, आगे से या दाहिनी तरफ़ से या बायें तरफ़ से, जिधर से भी चाहो, मगर यह ज़रूर है कि तख़मरेज़ी (वीर्यरोपण) उसी ख़ास जगह में हो जहाँ से पैदावार की उम्मीद हो सकती है।

“और अपने आगे के लिये सामान करो।”

यानि अपने मुस्तक़बिल की फ़िक्र करो और अपनी नस्ल को आगे बढ़ाने की कोशिश करो। औलाद इंसान का असासा (संपत्ति) होती है और बुढ़ापे में उसका सहारा बनती है। आज तो उल्टी गंगा बहाई जा रही है और औलाद कम से कम पैदा करने की तरगीब दी जा रही है, जबकि एक ज़माने में औलाद असाए पीरी (बुढ़ापे की छड़ी) शुमार होती थी।

“और अल्लाह का तक्रवा इख्तियार करो और जान लो कि तुम्हें उससे मिल कर रहना है।”

नोट कीजिये कि कुरान हकीम में शरीअत के हर हुक्म के साथ तक्रवा का ज़िक्र बार-बार आ रहा है। इसलिये कि किसी क़ानून की लाख पैरवी की जा रही हो

मगर तक्रवा ना हो तो वह क़ानून मज़ाक़ बन जायेगा, खेल-तमाशा बन जायेगा। इसकी बाज़ मिसालें अभी आएँगी।

“और (ऐ नबी ﷺ!) अहले ईमान को बशारत दे दीजिये।”

आयत 224

“और अल्लाह के नाम को तख़ता-ए-मशक़ ना बना लो अपनी क़समों के लिये”

“कि भलाई ना करोगे, परहेज़गारी ना करोगे और लोगों के दरमियान सुलह ना कराओगे।”

यानि अल्लाह तआला के अज़ीम नाम को इस्तेमाल करते हुए ऐसी क़समें मत खाओ जो नेकी व तक्रवा और मक़सदे इस्लाह के खिलाफ़ हों। किसी वक़्त गुस्से में आकर आदमी क़सम खा बैठता है कि मैं फ़लाँ शख़्स से कभी हुस्ने सुलूक और भलाई नहीं करूँगा, इससे रोका गया है। हज़रत अबु बक्रर सिद्दीक़ रज़ि० ने भी इसी तरह की क़सम खा ली थी। मिस्तह एक ग़रीब मुसलमान थे, जो आप रज़ि० के क़राबतदार भी थे। उनकी आप रज़ि० मदद किया करते थे। जब हज़रत आयशा सिद्दीका रज़ि० पर तोहमत लगी तो मिस्तह भी उस आग के भड़काने वालों में शामिल हो गये। हज़रत अबु बक्रर रज़ि० उनके तर्ज़े अमल से बहुत रंजीदा ख़ातिर हुए कि मैं तो इसकी सरपरस्ती करता रहा और यह मेरी बेटी पर तोहमत लगाने वालों में शामिल हो गया। आप रज़ि० ने क़सम खाई कि अब मैं कभी इसकी मदद नहीं करूँगा। यह वाक़िया सूरतुल नूर में आयेगा। मुसलमानों से कहा जा रहा है कि तुम ऐसा ना करो, तुम अपनी नेकी के दरवाज़े क्यों बंद करते हो? जिसने ऐसी क़सम खाली है वह उस क़सम को खोल दे और क़सम का कफ़ारा दे दे। इसी तरह लोगों के माबैन मसालिहत (सुलह) कराना भी ज़रूरी है। दो भाईयों के दरमियान झगड़ा था, आपने मसालिहत की कोशिश की लेकिन आपकी बात नहीं मानी गई, इस पर आपने गुस्से में आकर कह दिया कि अल्लाह की क़सम, अब मैं इनके मामले में दख़ल नहीं दूँगा। इस तरह की क़समें खाने से रोका गया है। और अगर किसी ने ऐसी कोई क़सम खाई है तो वह उसे तोड़ दे और उसका कफ़ारा दे दे।

“और अल्लाह सुनने वाला, जानने वाला है।”

وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝

आयत 225

“अल्लाह तआला मुवाज़्ज़ा नहीं करेगा तुमसे तुम्हारी बे मायने क्रसमों पर (जो तुम अज़म व इरादे के बग़ैर खा बैठते हो)”

لَا يُؤْخَذُكُمْ اللَّهُ بِاللَّعْوَفِ فِي أَيْمَانِكُمْ

अरबों का अंदाज़े गुफ्तुगू इस तरह का है कि वल्लाह, बिल्लाह के बग़ैर उनका कोई जुमला शुरू ही नहीं होता। इससे दरहक़ीक़त उनकी नीयत क्रसम खाने की नहीं होती बल्कि यह उनका गुफ्तुगू का एक अस्लूब (अंदाज़) है। इस तरह की क्रसमों पर मुवाज़्ज़ा नहीं है।

“लेकिन उन क्रसमों पर तमसे ज़रूर मुवाज़्ज़ा करेगा जो तुमने अपने दिली इरादे के साथ खाई हों।”

وَلَكِنْ يُؤْخَذُكُمْ بِمَا كَسَبْتُمْ قُلُوبُكُمْ

ऐसी क्रसमों को तोड़ने का कफ़़ारा देना होगा। कफ़़ारे का हक़म सूरतुल मायदा में बयान हुआ है। मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि सूरतुल बक्ररह में शरीअते इस्लामी का इव्तदाई खाका दे दिया गया है और इसके तक़मीली अहक़ाम कुछ सूरतुन्निहा में और कुछ सूरतुल मायदा में बयान हुए हैं।

“और अल्लाह बख़्शने वाला है और हलीम है।”

وَاللَّهُ غَفُورٌ حَلِيمٌ ۝

वो बहुत दरग़ज़र करने वाला और बर्दबार (धैर्यवान) है। वह फ़ौरन नहीं पकड़ता, बल्कि इस्लाह की मोहलत देता है।

आयत 226

“जो लोग अपनी बीवियों से ताल्लुक़ ना रखने की क्रसम खा बैठते हैं उनके लिये चार माह की मोहलत है।”

لِّلَّذِينَ يُؤْلُونَ مِن نِّسَائِهِمْ تَرَبُّصُ أَرْبَعَةِ أَشْهُرٍ

अगर कोई मर्द किसी वक़्त नाराज़ होकर या गुस्से में आकर यह क्रसम खा ले कि अब मैं अपनी बीवी के क़रीब नहीं जाऊँगा, उससे कोई ताल्लुक़ नहीं रखूँगा, तो यह ईला कहलाता है। ख़द आँहज़र ﷺ ने भी अपनी अज़वाजे मतहहरात से ईला फ़रमाया था। अज़वाजे मतहहरात रज़ि० ने अर्ज़ किया था कि अब आम मुसलमानों के यहाँ भी ख़शहाली आ गई है तो हमारे यहाँ यह तंगी और सख़्ती क्यों है? अब हमारे भी नफ़्क़ात बढ़ाये जाएँ। इस पर रसूल अल्लाह ﷺ ने उनसे ईला किया। इसका ज़िक़्र बाद में आयेगा। आमतौर पर होता यह था कि लोग क्रसम तो खा बैठते थे कि बीवी के पास ना जाएँगे, मगर बाद में पछताते थे कि क्या करें। अब वह बीवी बेचारी मअल्लक़ (suspended) होकर रह जाती। इस आयत में ईला की मोहलत म़क़रर कर दी गई कि ज़्यादा से ज़्यादा चार माह तक इंतज़ार किया जा सकता है।

“पस अगर वह रुज़अ कर लें तो अल्लाह

فَإِنْ فَأَوْ فَإِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ۝

बख़्शने वाला, मेहरबान है।”

इन चार माह के दौरान अगर वह अपनी क्रसम को ख़त्म करें और रुज़अ कर लें, ताल्लुक़ ज़न व शौ कायम कर लें तो अल्लाह तआला ग़फ़ूर व रहीम है।

आयत 227

“और अगर वह तलाक़ का इरादा कर चुके हों

وَإِنْ عَزَمُوا الطَّلَاقَ فَإِنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝

तो अल्लाह सुनने वाला, जानने वाला है।”

यानि चार माह का अरसा गज़र जाने पर शौहर को बहरहाल फ़ैसला करना है कि वह या तो रुज़अ करे या तलाक़ दे। अब औरत को मज़ीद मअल्लक़ नहीं रखा जा सकता। रुज़अ की सुरत में चूँकि क्रसम तोड़नी होगी लिहाज़ा उसका कफ़़ारा अदा करना होगा। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० ने अपने दौरे ख़िलाफ़त में यह हक़म जारी किया था कि जो लोग जिहाद के लिये घरों से दूर गये हों उन्हें चार माह बाद लाज़िमी तौर पर घर भेजा जाये। आप रज़ि० अल्लाह ने यह हक़म ग़ालिबन इसी आयत से इस्तनबात (अनुमान) करते हये जारी फ़रमाया था। इसलिये कि आप रज़ि० ने उम्मल मोमिनीन हज़रत हफ़्सा रज़ि० से मशावरात भी फ़रमाई थी। अगरचे आप रज़ि० का हज़रत हफ़्सा रज़ि० से बाप-बेटी का रिश्ता है, मगर दीन के मामलात में शर्म व हया

आड़े नहीं आती, जैसे कि अल्लाह तआला का इर्शाद है: {وَاللَّهُ لَا يَسْتَعِذُّ مِنْ خَلْقِهِ} (अहजाब:53) “और अल्लाह शर्माता नहीं हक़ बात बतलाने में।” आप रज़ि० ने उनसे पृच्छा कि एक औरत कितना अरसा अपनी इफ़्फ़त व अस्मत को संभाल कर अपने शौहर का इन्तेज़ार कर सकती है? हज़रत हफ़सा रज़ि० ने कहा चार माह। चनाँचे हज़रत उमर रज़ि० ने मजाहिदीन के बारे में यह हुक्म जारी फ़रमा दिया कि उन्हें चार माह से ज़्यादा घरों से दूर ना रखा जाये।

आयत 228

“और जिन औरतों को तलाक़ दे दी जाये उन पर लाज़िम है कि वह अपने आपको तीन हैज़ तक रोके रखें।” وَالْبَطْلَقُ يَتَرَبَّصْنَ بِأَنْفُسِهِنَّ ثَلَاثَةَ قُرُوءٍ

तलाक़ के बाद औरत के लिये तीन माह की इद्दत है। इस इद्दत में शौहर चाहे तो रुजूअ कर सकता है, अगर उसने एक या दो तलाक़ें दी हों। अलबत्ता तीसरी तलाक़ के बाद रुजूअ का हक़ नहीं है। तलाज़े रज़ीअ के बाद अभी अगर इद्दत ख़त्म हो जाये तो अब शौहर का रुजूअ का हक़ ख़त्म हो जायेगा और औरत आज़ाद होगी। लेकिन इस मुद्दत के अंदर वह दूसरी शादी नहीं कर सकती।

“और उनके लिये यह जायज़ नहीं है कि अल्लाह उनके अरहाम में जो कुछ पैदा कर दिया हो वह उसे छुपाएँ” وَلَا يَحِلُّ لَهُنَّ أَنْ يَكْتُمْنَ مَا خَلَقَ اللَّهُ فِي أَرْحَامِهِنَّ

“अगर वह फ़िलवाक़ेअ अल्लाह और यौमे आख़िर पर ईमान रखती हैं।” إِنْ كُنَّ يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ

तीन हैज़ की मुद्दत इसी लिये मुक़र्रर की गई है कि मालूम हो जाये कि औरत हामिला है या नहीं। अगर औरत हामिला हो लेकिन वह अपना हमल छुपा रही हो ताकि उसके पेट में पलने वाला उसका बच्चा उसके पास ही रहे, तो यह उसके लिये जायज़ नहीं है।

“और उनके शौहर उसके ज़्यादा हक़दार हैं कि उन्हें लौटा लें इस इद्दत के दौरान में अगर वह اضلّاحاً

वाक़िअतन इस्लाह चाहते हों।”

इसे रुजूअत कहते हैं। शौहरों को हक़ हासिल है कि वह इद्दत के अंदर-अंदर रुजूअ कर सकते हैं, लेकिन यह हक़ तीसरी तलाक़ के बाद हासिल नहीं रहता। पहली या दूसरी तलाक़ के बाद इद्दत ख़त्म होने से पहले शौहर को इसका इख़्तियार हासिल है कि वह रुजूअ कर ले। इस पर बीवी को इन्कार करने का इख़्तियार नहीं है। वह यह नहीं कह सकती कि तुम तो मुझे तलाक़ दे चुके हो, अब मैं तुम्हारी बात मानने को तैयार नहीं हूँ।

“और औरतों के लिये इसी तरह हक़क़ हैं जिस तरह उन पर ज़िम्मेदारियाँ हैं दस्तूर के मुताबिक़।” وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي عَلَيْهِنَ بِالْمَعْرُوفِ

यानि उनके लिये जो हुक्क़ हैं वह उनकी ज़िम्मेदारियों की मुनासबत से हैं।

“और मर्दों के लिये उन पर एक दर्जा फ़ौक़ियत (प्राथमिकता) का है।” وَلِلرِّجَالِ عَلَى النِّسَاءِ دَرَجَةٌ

“और अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।” وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ

इस ज़माने में इस आयत की बहत ग़लत ताबीर भी की गई है और इससे मुसावाते मर्दों-ज़न (औरत और मर्द) का फ़लसफ़ा साबित किया गया है। चनाँचे बाज़ म्तरजमीन (तर्जुमा करने वालों) ने {وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي عَلَيْهِنَ بِالْمَعْرُوفِ} का तर्जुमा इस तरह किया है कि “औरतों के हक़क़ भी मर्दों पर वैसे ही हैं जैसे मर्दों के उन पर हक़क़ हैं।” यह तर्जुमा दरुस्त नहीं है, इसलिये कि इस्लामी शरीअत में मर्द और औरत के दरमियान यानि शौहर और बीवी के दरमियान मुसावात नहीं है। इस आयत का मफ़हूम समझने के लिये अरबी में “لِ” और “لَهُ” का इस्तेमाल मालूम होना चाहिये। “لِ” किसी के हक़ के लिये और “لَهُ” किसी की ज़िम्मेदारी के लिये आता है। चनाँचे इस टुकड़े का तर्जुमा इस तरह होगा: “जैसी कि उन पर ज़िम्मेदारियाँ हैं।” अल्लाह तआला ने जैसी ज़िम्मेदारी मर्द पर डाली है वैसे हक़क़ उसको दिये हैं और जैसी ज़िम्मेदारी औरत पर डाली है उसकी मुनासबत से उसको भी हुक्क़ दे दिये हैं। और इस बात को खोल दिया कि

{وَلِلَّهِ جُلٌّ عَلَىٰ دَرَجَةٍ} यानि मर्दों को उन पर एक दर्जा फ़ौक़ियत का हासिल है। अब मसावात क़्योकर हो सकती है? आखिर में फ़रमाया:

“और अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।” وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ

ख्वाह तम्हें यह बात पसंद हो ख्वाह नापसंद हो, यह उसका हक़ है। वह अज़ीज़ है, ज़बरदस्त है, जो चाहे हक़ दे। और हकीम है, हिकमत वाला है, उसका हर हक़ हिकमत पर मन्नी है।

इस आयत में जो मज़मून बयान हुआ है उस पर क़द्रे तफ़्सीली गुफ़्तगु की ज़रूरत है। देखिये, इंसानी तमददन (संस्कृति) का अहमतरनीन और बनियादी तरीन मसला क्या है? एक है इंसानी ज़िन्दगी का मसला। इंसानी ज़िन्दगी का सबसे पहला मसला तो वही है जो हैवानी ज़िन्दगी का भी है, यानि अपनी मादी ज़रूरियात। हर हैवान की तरह इंसान के साथ भी पेट लगा हुआ है जो खाने को माँगता है। लेकिन इसके बाद जब दो इंसान मिलते हैं और इससे तमददन का आज़ाज़ होता है तो इसका सबसे बड़ा मसला इंसान की शहवत है। अल्लाह तआला ने मर्द और औरत दो जिन्सें (लिंग) बना दी हैं और इन दोनों के माबैन ताल्लक़ से नस्ल आगे चलती है। अब इस मामले को कैसे मनज़ज़म (organized) किया जाये, इसकी क्या हदद व क़ैद हों? यह ज़ब्बा वाक़िअतन बहत ज़ोरआवर (potent) है। इसके बारे में फ़राइड ने जो क़छ कहा है वह बिल्कुल बेबनियाद नहीं है। बस यूँ समझिये कि उसने ज़रा ज़्यादा मिर्च-मसाला लगा दिया है, वरना इसमें कोई शक़ नहीं कि इंसान का जिन्सी ज़ब्बा निहायत क़वी और ज़ोरआवर ज़ब्बा है। और जो शय जितनी क़वी हो उसे हदद में रखने के लिये उस पर उसी क़द्र ज़्यादा क़ैद गनीं आयद करनी पड़ती हैं। कोई घोड़ा जितना मूँहज़ोर हो उतना ही उसे लगाम देना आसान नहीं होता, उसके लिये फिर मशक़क़त करनी पड़ती है। चुनाँचे अगर इस जिन्सी ज़ब्बे को बेलग़ाम छोड़ दिया जाता तो तमददन में फ़साद हो जाता। लिहाज़ा इसके लिये शादी का मामला रखा गया कि एक औरत का एक मर्द के साथ रिश्ता क़ायम हो जाये, सबको मालुम हो कि यह इसकी बीबी है यह इसका शौहर है, ताकि इस तरह नसब (वंश) का मामला भी चले और एक खानदानी इदारा वजूद में आये। वरना आज़ाद शहवतरानी (free sex) से तो खानदानी इदारा वजूद में आ ही नहीं सकता। चुनाँचे निकाह के ज़रिये

अज़द्वाजी (वैवाहिक) बंधन का तरीक़ा अल्लाह तआला ने इंसानों को सिखाया और इस तरह खानदानी इदारा वजूद में आया।

अब सवाल यह है कि क्या इस इदारे में मर्द और औरत दोनों बराबर हैं? इस नज़रिये से बड़ी हिमाक़त (मर्खता) और कोई नहीं है। इसलिये कि सीधी सी बात है कि किसी भी इदारे के दो बराबर के सरबराह (head) नहीं हो सकते। अगर आप किसी महक़मे (विभाग) के दो डायरेक्टर बना दें तो वह इदारा तबाह हो जायेगा। ऊपर मैनेजिंग डायरेक्टर एक ही होगा, उसके नीचे आप दस डायरेक्टर भी बना दें तो कोई हर्ज नहीं। किसी इदारे का जनरल मैनेजर एक ही होगा, उसके मातहत आप हर शौबे का एक मैनेजर बना दीजिये। किसी भी इदारे में अगर नज़म (सिस्टम) क़ायम करना है तो उसका चोटी (Top) का सरबराह एक ही होना चाहिये। लिहाज़ा जब एक मर्द और एक औरत से एक खानदानी इदारा वजूद में आये तो उसका सरबराह कौन होगा--- मर्द या औरत? मर्द और औरत इंसान होने के नाते बिल्कुल बराबर है, एक ही बाप के नुत्फ़े से बेटा भी है और बेटी भी। एक ही माँ के रहम में बहन ने भी परवरिश पाई है और भाई ने भी। लिहाज़ा इस ऐतबार से शर्फ़े इंसानियत में, नौए इंसानियत के फ़र्द की हैसियत से, दोनों बराबर हैं। लेकिन जब एक मर्द और एक औरत मिल कर खानदान की बनियाद रखते हैं तो अब यह बराबर नहीं रहे। जैसे इंसान सब बराबर हैं, लेकिन एक दफ़्तर में चपरासी और अफ़सर बराबर नहीं हैं, उनके अलग-अलग इख़्तियारात और फ़राइज हैं।

क़ुरान हकीम में सबसे पहले और सबसे ज़्यादा तफ़्सील के साथ जो अहक़ाम दिये गये हैं वह खानदानी निज़ाम और आइली मामलात ही से मुताल्लिक़ हैं। इसलिये कि इंसानी तमददन की जड़ और बनियाद यही है। यहाँ से खानदान बनता है और खानदानों की इज्जतमा का नाम मआशरा है। पाकिस्तानी मआशरे की मिसाल ले लीजिये। अगर हमारी आबादी इस वक़्त चौदह करोड़ है और आप एक खानदान के सात अफ़राद शमार कर लें तो हमारा मआशरा दो करोड़ खानदानों पर मुश्तमिल है। खानदान का इदारा मुस्तहक़म (स्थिर) होगा तो मआशरा मुस्तहक़म हो जायेगा। खानदान के इदारे में सलाह और फ़लाह होगी तो मआशरे में भी सलाह व फ़लाह नज़र आयेगी। अगर खानदान के इदारे में फ़साद, बेचैनी, ज़ल्म और नाइंसाफी होगी, मियाँ और बीबी में झगड़े हो रहे होंगे तो फिर वहाँ औलाद की

तरबियत सही नहीं हो सकती, उनकी तरबियत में यह मन्फ़ी चीज़ें शामिल हो जायेंगी और इसी का अक्स पूरे मआशरे पर पड़ेगा। चूनाँचे खानदानी इदारे की इस्लाह और उसके इस्तहकाम के लिये क़ुरान मजीद में बड़ी तफ़सील से अहकाम दिये गये हैं, जिन्हें आइली क़वानीन कहा जाता है।

इस ज़िम्न में तलाक़ एक अहम मामला है। इसमें मर्द और औरत को बराबर का इख़्तियार नहीं दिया गया। जहाँ तक शादी का ताल्लुक है उसमें औरत की रज़ामंदी ज़रूरी है, उसे शादी से इन्कार करने का हक़ हासिल है, उस पर ज़बर नहीं किया जा सकता। लेकिन एक मर्तबा जब वह निकाह में आ गई है तो अब शौहर का पलड़ा भारी है, वह उसे तलाक़ दे सकता है। अगर जुल्म के साथ देगा तो अल्लाह के यहाँ ज़वाब देही करनी पड़ेगी और पकड़ हो जायेगी। लेकिन बहरहाल उसे इख़्तियार हासिल है। औरत खुद तलाक़ नहीं दे सकती, अलबत्ता तलाक़ हासिल कर सकती है, जिसे हम “खुलाअ” कहते हैं। वह अदालत के ज़रिये से या खानदान के बड़ों के ज़रिये से खुलाअ हासिल कर सकती है, लेकिन उसे मर्द की तरह तलाक़ देने का हक़ हासिल नहीं है। इसी तरह अगर मर्द ने एक या दो तलाक़ दे दीं और अभी इद्त पूरी नहीं हुई तो उसे रुजूअ का हक़ हासिल है। इस पर औरत इन्कार नहीं कर सकती। यह तमाम चीज़ें ऐसी हैं जो मौजूदा ज़माने में ख्वातीन को अच्छी नहीं लगतीं। इसलिये कि आज की दुनिया में मसावाते मर्दों-ज़न का फ़लसफ़ा शैतान का सबसे बड़ा फ़लसफ़ा और मआशरे में फ़ितना व फ़साद और गंदगी पैदा करने का सबसे बड़ा हथियार है। और अब हमारे इसाई मुल्क ख़ासतौर पर मुसलमान मुल्कों में खानदानी निज़ाम की जो बची-कुची शक़ल बाक़ी रह गई है और जो कुछ रही-सही इक़दार मौजूद हैं उन्हें तबाह व बर्बाद करने की सरतोड़ कोशिशें हो रही हैं। क़ाहिरा कॉन्फ़्रेंस और बीजिंग कॉन्फ़्रेंस का मक़सद यही है कि एशिया का मशरिफ़ और मगरिब दोनों तरफ़ से घेराव किया जाये ताकि यहाँ कि औरत को आज़ादी दिलाई जाये। मर्द व औरत की मुसावात और औरतों की आज़ादी (emancipation) के नाम पर हमारे खानदानी निज़ाम को इसी तरह बर्बाद करने की कोशिश की जा रही है जिस तरह उनके यहाँ बर्बाद हो चुका है। अमरीकी सदर बिल क्लिन्टन ने अपने साले नौ के पैगाम में कहा था कि जल्दी ही हमारी क्रौम की अक्सरियत “हरामज़ादों” (born without any wedlock) पर मुश्तमिल होगी। वहाँ अब महज़ “one parent family” रह गई है। माँ की हैसियत बाप की भी है और माँ की भी।

वहाँ के बच्चे अपने बाप को जानते ही नहीं। अब वहाँ एक मुहिम ज़ोर-शोर से उठ रही है कि हर इंसान का हक़ है कि उसे मालूम हो कि उसका बाप कौन है। यह अज़ीम तबाही है जो मगरबी मआशरे पर आ चुकी है और हमारे यहाँ भी लोग इस मआशरे की नक्काली इख़्तियार कर रहे हैं और यह नज़रिया-ए-मुसावाते मर्दों-ज़न बहुत ही ताबनाक और खुशनुमा अल्फ़ाज़ के साथ सामने आ रहा है।

अलबत्ता इस मामले का एक दूसरा रुख़ भी है। इस्लाम ने औरतों को जो हुक्क़ दिये हैं बदक्रिस्मती से हम मुसलमानों ने वह भी उनको नहीं दिये। इसकी वजह यह है कि हमारे ज़हनों पर अभी तक हमारा हिन्दुआना पसमंज़र मुसल्लत है और हिन्दुओं के मआशरे में औरत की क़तअन कोई हैसियत ही नहीं। विरासत का हक़ तो बहुत दूर की बात है, उसे तो अपने शौहर की मौत के बाद ज़िन्दा रहने का हक़ भी हासिल नहीं है, उसे तो शौहर की चिता के साथ ही जल कर सती हो जाना चाहिये। गोया उसका तो कोई क़ानूनी वुजूद (legal entity) है ही नहीं। हमारे आबा व अजदाद मुसलमान तो हो गये थे, लेकिन इस्लामी तालीमात के मुताबिक़ उनकी तरबियत नहीं हो सकी थी, लिहाज़ा हमारे ज़हनों पर वही हिन्दुआना तसव्वुरात मुसल्लत हैं कि औरत तो मर्द के पाँव की जूती की तरह है। यह जो कुछ हम कर रहे हैं कि उनके जायज़ हुक्क़ भी उनको नहीं देते, इसके नतीजे में हम अपने ऊपर होने वाली मगरबी यलगार को मुअस्सर करने में खुद मदद दे रहे हैं। अगर हम अपनी ख्वातीन को वह हुक्क़ नहीं देंगे जो अल्लाह और उसके रसूल ﷺ ने उनके लिये मुक्करर किये हैं तो ज़ाहिर बात है कि आज़ादी-ए-निस्वाँ, हुक्क़े निस्वाँ और मुसावाते मर्दों-ज़न जैसे खुशनुमा उन्वानात से जो दावत उठी है वह लाज़िम्न उन्हें खींच कर ले जायेगी। लिहाज़ा इस तरफ़ भी ध्यान रखिये। हमारे यहाँ दीनदार घरानों में ख़ासतौर पर औरतों के हुक्क़ नज़र अंदाज़ होते हैं। इसको समझना चाहिये कि इस्लाम में औरतों के क्या हुक्क़ हैं और उनकी किस क़दर दिलजोई करनी चाहिये। रसूल अल्लाह ﷺ ने फ़रमाया: ((حَيُّكُمْ حَيُّكُمْ لَاهِلِهِ وَاَنَا حَيُّكُمْ لَاهِلِي))⁽²⁸⁾ “तुममें से बेहतरीन लोग वह हैं जो अपने घरवालों के लिये अच्छे हों। और जान लो कि मैं अपने घर वालों के लिये तुम सबसे अच्छा हूँ।” लिहाज़ा ज़रूरी है कि औरतों के साथ हुस्ने सुलूक हो, उनकी दिलजोई हो, उनके अहसासात का भी पास किया जाये। अलबत्ता जहाँ दीन और शरीअत का मामला आ जाये वहाँ किसी लचक की गुंजाइश ना हो, वहाँ

आप शमशीर बराहना हो जाएँ और साफ़-साफ़ कह दें कि यह मामला दीन का है, इसमें मैं तुम्हारी कोई रियायत नहीं कर सकता, हाँ अपने मामलात के अंदर मैं ज़रूर नरमी करूँगा।

इस सारी बहस को ज़हन में रखिये। हमारे जदीद दानिशवर इस आयत के दरमियानी अल्फ़ाज़ को तो ले लेते हैं: {وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي عَلَيْنَ بِالْمَعْرُوفِ} और इससे मुसावाते मर्दों-ज़न का मफ़हूम निकालने की कोशिश करते हैं, लेकिन इनसे पहले वाले अल्फ़ाज़ और {وَبُعُولَتُهُنَّ أَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ} और बाद वाले अल्फ़ाज़ {وَالرِّجَالُ قَوَّامُونَ عَلَى النِّسَاءِ} से सफ़ेद नज़र कर लेते हैं। यह तर्जें अमल बिल्कुल ग़लत है। एक मर्द और एक औरत से जो ख़ानदानी इदारा वुजूद में आता है, इस्लाम उसका सरबराह मर्द को ठहराता है। यह फ़लसफ़ा ज़्यादा वज़ाहत से सूरतुनिसा में बयान होगा जहाँ अल्फ़ाज़ आये हैं: {الرِّجَالُ قَوَّامُونَ عَلَى النِّسَاءِ} (आयत:34)। यहाँ इसकी तम्हीद आ गई है ताकि यह कड़वी गोली ख्वातीन के हलक़ से ज़रा नीचे उतरनी शुरू हो जाये। इस आयत का तर्जुमा एक बार फिर देख लीजिये: “और उनके शौहर इसके ज़्यादा हक़दार हैं कि उन्हें लौटा लें इस इद्दत के दौरान में अगर वह वाकिअतन इस्लाह चाहते हों। और औरतों के लिये इसी तरह हुक्क हैं जिस तरह उन पर ज़िम्मेदारियाँ हैं दस्तूर के मुताबिक़। और मर्दों के लिये उन पर एक दर्जा फ़ौक़ियत का है। और अल्लाह ज़बरदस्त है, हकीम है।” अल्लाह तआला ने जो ज़िम्मेदारियाँ औरत के हवाले की हैं, जिस तरह के उस पर फ़राइज़ आयद किये हैं वैसे ही उसको हुक्क भी अता किये हैं। यह दुनिया का मुसल्लमा उसूल है कि हुक्क व फ़राइज़ बाहम साथ-साथ चलते हैं। अगर आपकी ज़िम्मेदारी ज़्यादा हैं तो हुक्क और इख़्तियारात भी ज़्यादा होंगे। अगर आप पर ज़िम्मेदारी बहुत ज़्यादा डाल दी जाये लेकिन हुक्क और इख़्तियारात उसकी मुनासबत से ना हों तो आप अपनी ज़िम्मेदारी अदा नहीं कर सकते। जहाँ ज़िम्मेदारी कम होगी वहाँ हुक्क और इख़्तियारात भी कम होंगे। यह दोनो चीज़ें मुनासबत (proportionate) चलती हैं। अब हम अगली आयत का मुताअला करते हैं:

आयात 229 से 231 तक

الطَّلَاقُ مَرَّتَيْنِ فَإِمْسَاكَ بِمَعْرُوفٍ أَوْ تَسْرِيحٌ بِإِحْسَانٍ وَلَا يَحِلُّ لَكُمَ أَنْ تَأْخُذُوا بِمَا آتَيْنَاهُمْ مِنْ شَيْءٍ إِلَّا أَنْ يَخَافَا أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا فِيمَا افْتَدَتْ بِهِ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ اللَّهِ فَأُولَئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ۝ فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِنْ بَعْدِ حَتَّى تَنْكِحَ زَوْجًا غَيْرَهُ فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا أَنْ يَتَرَاجَعَا إِنْ ظَنَّا أَنْ يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ وَتِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ۝ وَإِذَا طَلَقْتُمُ النِّسَاءَ فَلَمْ يَكُن لَكُمْ عَلَيْهِنَّ أَنْ تُغْلِبُوا فِي مِيسِرَتِهِنَّ مَعْرُوفٍ وَلَا تُنْسِكُوهُنَّ خِوَارًا لِيَتَعْتَدُوا وَمَنْ يَفْعَلْ ذَلِكَ فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهُ وَلَا تَتَّخِذُوا آيَاتِ اللَّهِ هُزُوعًا وَإِذْكُرُوا نِعْمَتَ اللَّهِ عَلَيْكُمْ وَمَا أَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنَ الْكِتَابِ وَالْحِكْمَةِ يَعِظُكُمْ بِهِ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ۝

आयत 229

“तलाक़ दो मर्तबा है।”

الطَّلَاقُ مَرَّتَيْنِ

यानि एक शौहर को दो मर्तबा तलाक़ देकर रुजूअ कर लेने का हक़ है। एक दफ़ा तलाक़ दी और इद्दत के अंदर-अंदर रुजूअ कर लिया तो ठीक है। फिर तलाक़ दे दी और इद्दत के अंदर-अंदर रुजूअ कर लिया तो भी ठीक है। तीसरी मर्तबा तलाक़ दे दी तो अब वह रुजूअ नहीं कर सकता।

“فِيمَا آتَيْنَاهُمْ مِنْ شَيْءٍ إِلَّا أَنْ يَخَافَا أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ”
“फिर या तो मारुफ़ तरीज़े से रोक लेना है या फिर ख़ूबसूरती के साथ रखसत कर देना है।”

यानि दो मर्तबा तलाक़ देने के बाद अब फ़ैसला करो। या तो अपनी बीवी को नेकी और भलाई के साथ घर में रोक लो, तंग करने और परेशान करने के लिये नहीं, या फिर भले तरीक़े से, भले मानुसों की तरह उसे रखसत कर दो।

“और तुम्हारे लिये यह जायज़ नहीं है कि जो कुछ तुमने उन्हें दिया था उसमें से कुछ भी वापस लो”

وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ أَنْ تَأْخُذُوا بِمَا آتَيْتُمُوهُمْ
شَيْئًا

जब तुम तलाक़ दे रहे हो तो तुमने उन्हें जो महर दिया था उसमें से कुछ वापस नहीं ले सकते। हाँ अगर औरत खुद तलाक़ माँगे तो उसे अपने महर में से कुछ छोड़ना पड़ सकता है। लेकिन जब मर्द तलाक़ दे रहा हो तो उसमें से कुछ भी वापस नहीं ले सकता जो वह अपनी बीवी को दे चुका है। सूरतुन्निसा (आयत:20) में यहाँ तक अल्फ़ाज़ आये हैं कि अगरचे तुमने सोने का ढेर (क्रिन्तार) दे दिया हो फिर भी उसमें से कुछ वापस ना लो।

“सिवाये इसके कि दोनों को अंदेशा हो कि वह हुदूद अल्लाह को क़ायम नहीं रख सकेंगे।”

إِلَّا أَنْ يَخَافَا أَلَّا يُعْتَمَرَ حُدُودُ اللَّهِ

मुराद यह है कि अल्लाह तआला ने अज़द्वामी ज़िन्दगी के ज़िम्न में जो अहदाफ़ (लक्ष्य) व मक़ासिद मुअय्यन फ़रमाये हैं, उसके लिये जो अहकाम दिये हैं और जो आदाब बताये हैं, फ़रीक़ैन अगर यह महसूस करें कि हम उन्हें मलहूज़ (ध्यान में) नहीं रख सकते तो यह एक इस्तसनाई सूरत है, जिसमें औरत कोई माल या रक़म फ़िदये के तौर पर देकर ऐसे शौहर से खुलासी हासिल कर सकती है।

“पस अगर तुम्हें यह अंदेशा हो कि वह दोनों हुदूदे इलाही पर क़ायम नहीं रह सकते, तो उन दोनों पर इस मामले में कोई गुनाह नहीं है जो औरत फ़िदये में दे।”

فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا يُعْتَمَرَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا جُنَاحَ
عَلَيْهِمَا فِيمَا افْتَدَتْ بِهِ

यानि ऐसी सूरत में औरत अगर फ़िदये के तौर पर कुछ दे दिला कर अपने आप को छुड़ा ले तो इसमें फ़रीक़ैन पर कोई गुनाह नहीं। मसलन किसी औरत का महर दस लाख था, वह उसमें से पाँच लाख शौहर को वापस देकर उससे खुला ले ले तो इसमें कोई हर्ज नहीं है।

“यह अल्लाह की हुदूद हैं, पस इनसे तज़ावुज़ मत करो।”

تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا

देखिए रोज़े वगैरह के ज़िम्न में हुदूद अल्लाह के साथ {فَلَا تَقْرُبُوهَا} फ़रमाया था। यहाँ फ़रमाया: {فَلَا تَعْتَدُوهَا} इसलिये कि इन मामलात में लोग बड़े धड़ल्ले

से अल्लाह की मुकरर कर्दा हुदूद को पामाल कर (रौंद) जाते हैं। अगरचे क़ानून बाक़ी रह जाता है मगर उसकी रूह ख़त्म हो जाती है।

“और जो लोग अल्लाह की हुदूद से तज़ावुज़ करते हैं वही ज़ालिम हैं।”

وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ اللَّهِ فَأُولَئِكَ هُمُ

الظَّالِمُونَ ﴿٣٠﴾

आयत 230

“फिर अगर वह (तीसरी मर्तबा) उसे तलाक़ दे दे तो वह औरत इसके बाद उसके लिये जायज़ नहीं हैं, जब तक कि वह औरत किसी और शौहर से निकाह ना करे।”

فَإِنْ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِنْ بَعْدُ حَتَّى تَنْكِحَ
رَوْجًا غَيْرَہَا

तीसरी तलाक़ दे चुकने के बाद अगर कोई शख्स फिर उसी औरत से निकाह करना चाहे तो जब तक वह औरत किसी दूसरे शख्स से निकाह ना करे और वह उसे तलाक़ ना दे उस वक़्त तक यह औरत अपने पहले शौहर के लिये हलाल नहीं हो सकती। इसे “हलाला” कहा जाता है। लेकिन “हलाला” के नाम से हमारे यहाँ जो मकरूह धंधा मुरव्वज (चारों ओर) है कि एक मुआहिदे के तहत औरत का निकाह किसी मर्द से किया जाता है कि तुम फिर इसे तलाक़ दे देना, इस पर रसूल अल्लाह ﷺ ने लानत फ़रमाई है।

“पस अगर वह उसको तलाक़ दे दे”

فَإِنْ طَلَّقَهَا

यानि वह औरत दूसरी जगह पर शादी कर ले, लेकिन दूसरे शौहर से भी उसकी ना बने और वह भी उसको तलाक़ दे दे।

“तो अब कोई गुनाह नहीं होगा उन दोनों पर कि वह मराजियत (वापसी) कर लें”

فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا أَنْ يَتَرَاجَعَا

अब वह औरत अपने साबक़ा शौहर से निकाह कर सकती है। दूसरे शौहर से निकाह के बाद औरत को शायद अक्ल आ जाये कि ज़्यादती मेरी ही थी कि पहले शौहर के यहाँ बस नहीं सकी। अब दूसरी मर्तबा तज़ुर्बा होने पर मुमकिन है उसे अपनी ग़लती का अहसास हो जाये। अब अगर वह दोबारा

अपने साबक्रा शौहर की तरफ़ रुजूअ करना चाहे तो इसकी इजाज़त है कि वह फिर से निकाह कर लें।

“अगर उनको यह यक़ीन हो कि वह अल्लाह की हुदूद की पासदारी कर सकेंगे।”

إِنْ ظَنَّا أَنْ يُقِيمَا حُدُودَ اللَّهِ

अज़द्वाजी ज़िन्दगी में अल्लाह तआला ने जो हुदूद मुकर्रर की हैं और जो अहकाम दिये हैं उनको बहरहाल मदेनज़र रखना है और तमाम मामलात पर फ़ायक़ (प्रमुख) रखना है।

“और यह अल्लाह की मुकर्रर कर्दा हुदूद हैं, जिनको वह बाज़ेह कर रहा है उन लोगों के लिये जो इल्म हासिल करना चाहें।”

وَبَلَّغْ حُدُودَ اللَّهِ الَّتِي بَيَّنَّهَا الْقَوْمُ يَعْلَمُونَ ۝

يَعْلَمُونَ का तर्जुमा है “जो जानते हैं” यानि जिन्हें इल्म हासिल है। लेकिन यहाँ इसका मफ़हूम है “जो इल्म के तालिब हैं।” बाज़ अवक्रात फ़अल को तलबे फ़अल के मायने में इस्तेमाल किया जाता है।

आयत 231

“और जब तुम लोग अपनी बीवियों को तलाक़ दो और फिर वह अपनी इद्दत पूरी कर लें”

وَإِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَاءَ فَبَلَّغْنِ أَجَلَهُنَّ

“तो या तो मारूफ़ तरीक़े से उन्हें रोक लो या अच्छे अंदाज़ से उन्हें रखसत कर दो।”

فَأَمْسِكُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ أَوْ سِرِّ حُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ

“और तुम उन्हें मत रोक़ो नुक़सान पहुँचाने के इरादे से कि तुम हुदूद से तजावुज़ करो।”

وَلَا تُمْسِكُوهُنَّ ضَرَارًا لِتَعْتَدُوا ۝

देखो ऐसा मत करो कि तुम उन्हें तंग करने के लिये रोक लो कि मैं इसकी ज़रा और ख़बर ले लूँ, अगर तलाक़ हो जायेगी तो यह आज़ाद हो जायेगी। गुस्सा इतना चढ़ा हुआ है कि अभी भी ठंडा नहीं हो रहा और वह इसलिये रुजूअ कर रहा है ताकि औरत को मज़ीद परेशान करे, उसे और तकलीफ़ें पहुँचाये। इस

तरह तो उसने क़ानून का मज़ाक उड़ाया और अल्लाह की दी हुई इस इजाज़त का नाजायज़ इस्तेमाल किया।

“और जो कोई भी यह काम करेगा वह अपनी ही जान पर जुल्म ढायेगा।”

وَمَنْ يَفْعَلْ ذَلِكَ فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهُ

“और अल्लाह की आयात को मज़ाक ना बना लो।”

وَلَا تَحْزَنْ وَأَلَيْتُ اللَّهُ هُزُؤًا

ज़रूरी है कि अहकामे शरीअत पर उनकी रूह के मुताबिक़ अमल किया जाये। यही वजह है कि कुरान हकीम में खासतौर पर अज़द्वाजी ज़िन्दगी के ज़िम्न में बार-बार अल्लाह के खौफ़ और तक्रवा की ताकीद की गई है। अगर तुम्हारे दिल इससे ख़ाली होंगे तो तुम अल्लाह की शरीअत को खेल-तमाशा बना दोगे, ठट्ठा और मज़ाक़ बना दोगे।

“और याद करो अल्लाह के जो ईनामात तुम पर हुए हैं”

وَاذْكُرُوا نِعْمَتَ اللَّهِ عَلَيْكُمْ

“और जो उसने नाज़िल फ़रमाई तुम पर अपनी किताब और हिकमत।”

وَمَا أَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنَ الْكِتَابِ وَالْحِكْمَةِ

“वह इसके ज़रिये से तुम्हें नसीहत कर रहा है।”

يُعِظُكُمْ بِهِ

अल्लाह तआला की ऐसी अज़ीम नेअमते पाने के बाद भी अगर तुमने उसकी हुदूद को तोड़ा और उसकी शरीअत का मज़ाक़ बनाया तो फिर तुम्हें उसकी ग़िरफ़्त से डरना चाहिये।

“और अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो”

وَاتَّقُوا اللَّهَ

“और जान लो कि अल्लाह तआला को हर चीज़ का हक़ीक़ी इल्म हासिल है।”

وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ۝

आयात 232 से 237 तक

وَإِذَا طَلَقْتُمُ النِّسَاءَ فَلْيُغْلِبَنَّ أَنْ يَتَّخِذْنَ أَرْوَاجَهُنَّ إِذَا تَرَاضُوا بَيْنَهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ ذَلِكَ يُؤْخَذُ بِهِ مَنْ كَانَ مِنْكُمْ يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ذَلِكَمْ أَزْكَى لَكُمْ وَأَظْهَرُ وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ③ وَالْوَالِدَتُ يُرْضَعْنَ أَوْلَادَهُنَّ حَوْلَيْنِ كَامِلَيْنِ لِمَنْ أَرَادَ أَنْ يُتِمَّ الرَّضَاعَةَ ④ وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ إِلَّا وُسْعَهَا لَا تُضَارُّ وَالِدَةُ يَوْلَاهَا وَلَا مَوْلُودُهَا وَلَهُ يَوْلَاهُ ⑤ وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذَلِكَ فَإِنْ أَرَادَا فِصَالًا عَنْ تَرَاضٍ مِنْهُمَا وَتَشَاوُرٍ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا ⑥ وَإِنْ أَرَدْتُمْ أَنْ تَسْتَرْضِعُوا أَوْلَادَكُمْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ إِذَا سَلَّمْتُمْ مَا اتَّيْتُمْ بِالْمَعْرُوفِ ⑦ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ⑧ وَالَّذِينَ يُتَوَقَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذُرُونَ أَرْوَاجًا يَتَرَبَّصْنَ بِأَنْفُسِهِنَّ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَعَشْرًا ⑨ فَإِذَا بَلَغْنَ أَجَلَهُنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا فَعَلْنَ فِي أَنْفُسِهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ ⑩ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ⑪ وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا عَرَّضْتُمْ بِهِ مِنْ خِطْبَةِ النِّسَاءِ أَوْ أَكْنَنْتُمْ فِي أَنْفُسِكُمْ ⑫ عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ سَتَذْكُرُونَهُنَّ وَلَكِنْ لَا تَأْخِذْنَهُنَّ بِرَأْيِكُمْ إِلَّا أَنْ تَقُولُوا قَوْلًا مَعْرُوفًا وَلَا تَغْرِمُوا عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتَّى يَبْلُغَ الْكِتَابُ أَجَلَهُ ⑬ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي أَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوا ⑭ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ ⑮ لَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ إِنْ طَلَقْتُمُ النِّسَاءَ مَا لَمْ تَمْسُوهُنَّ أَوْ تَفْرِضُوا لَهُنَّ فَرِيضَةً ⑯ وَمَتَّعُوهُنَّ عَلَى الْمُسْوَغِ قَدَرَهُ ⑰ وَعَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهُ ⑱ مَتَاعًا بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِينَ ⑲ وَإِنْ طَلَقْتُمُوهُنَّ مِنْ قَبْلِ أَنْ تَمْسُوهُنَّ وَقَدْ فَرَضْتُمْ لَهُنَّ فَرِيضَةً فَبِصْفِ مَا فَرَضْتُمْ إِلَّا أَنْ يَغْفُوا الْإِثْمَ ⑳ وَيَغْفُوا الْإِثْمَ ㉑ وَيَدَّعِي عُقْدَةَ النِّكَاحِ ㉒ وَأَنْ تَغْفُوا أَقْرَبُ لِلتَّقْوَى وَلَا تَنْسُوا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ إِنَّ اللَّهَ

आयत 232

“और जब तुम अपनी औरतों को तलाक़ दे दो, फिर वह अपनी इद्दत पूरी कर लें, तो मत आड़े आओ इसमें कि वह औरतें फिर निकाह कर लें अपने साबिक अज़वाज से, जबकि वह आपस में रज़ामंद हो जाएँ भले तरीक़े पर।”

وَإِذَا طَلَقْتُمُ النِّسَاءَ فَلْيُغْلِبَنَّ أَنْ يَتَّخِذْنَ أَرْوَاجَهُنَّ إِذَا تَرَاضُوا بَيْنَهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ

जो औरत तलाक़ पाकर अपनी इद्दत पूरी कर चुकी हो वह आज़ाद है कि जहाँ चाहे अपनी पसंद से निकाह कर ले। उसके इस इरादे में तलाक़ देने वाले शौहर या उसके ख़ानदान वालों को कोई रुकावट नहीं डालनी चाहिये। इसी तरह अगर किसी शख्स ने अपनी बीवी को एक या दो तलाक़ दी और इद्दत के दौरान रुजूअ नहीं किया तो अब इद्दत के बाद औरत को इख़्तियार हासिल है कि वह चाहे तो उसी शौहर से निकाहे सानी (दोबारा) कर सकती है। आयत 228 के ज़ेल में यह बात वज़ाहत के साथ बयान हो चुकी है कि एक या दो तलाक़ की सूरत में शौहर को इद्दत के दौरान रुजूअ का हक़ हासिल है। लेकिन अगर इद्दत पूरी हो गई तो अब यह तलाक़ रज़ीअ नहीं रही, तलाक़े बाईन हो गई। अब शौहर और बीवी का जो रिश्ता था वह टूट गया। अब अगर यह रिश्ता फिर से जोड़ना है तो दोबारा निकाह करना होगा और इसमें औरत की मज़्री को दख़ल है। इद्दत के अंदर-अंदर रुजूअ की सूरत में औरत की मज़्री को दख़ल नहीं है। लेकिन इद्दत के बाद अब औरत को इख़्तियार है, वो चाहे तो उसी साबिक शौहर से निकाहे सानी कर ले और चाहे तो अपनी मज़्री से किसी और शख्स से निकाह कर ले। अलबत्ता तलाक़े मुग़लज़ (तीसरी तलाक़) के बाद जब तक उस औरत का निकाह किसी और मर्द से ना हो जाये और वह भी उसे तलाक़ ना दे दे, साबिक शौहर के साथ उसका निकाह नहीं हो सकता। इस आयत में यह हिदायत दी जा रही है कि तलाक़े बाईन के बाद अगर वही औरत और वही मर्द फिर से निकाह करना चाहें तो अब किसी को इसमें आड़े नहीं आना चाहिये। आमतौर पर औरत के करीबी रिश्तेदार इसमें रुकावट बनते हैं और कहते हैं कि इस शख्स ने पहले भी तुम्हें सताया था, अब तुम फिर उसी से निकाह करना चाहती हो, हम तुम्हें ऐसा नहीं करने देंगे।

“यह वह चीज़ है जिसकी नसीहत की जा रही है तुममें से उसको जो वाकिअतन ईमान

ذَلِكَ يُؤْخَذُ بِهِ مَنْ كَانَ مِنْكُمْ يُؤْمِنُ بِاللَّهِ

रखता हो अल्लाह पर और यौमे आखिरत पर।”

وَالْيَوْمِ الْآخِرِ

जिनके अंदर ईमान ही नहीं है उनके लिये तो यह सारी नसीहत गोया भैंस के आगे बीन बजाना है जिससे उन्हें कोई फ़ायदा नहीं पहुँचेगा।

“यही तरीका तुम्हारे लिये ज़्यादा पाक और ज़्यादा उम्दा है।”

ذَلِكَ أَرَىٰ لَكُمْ وَأَظْهَرُ

“और अल्लाह जानता है, तुम नहीं जानते।”

وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ۝

लिहाज़ा तुम अपनी अक़ल को मुक़द्दम ना रखो, बल्कि अल्लाह के अहक़ाम को मुक़द्दम रखो। मर्द और औरत दोनों का ख़ालिक वही है, उसे मर्द भी अज़ीज़ हैं और औरत भी अज़ीज़ है। नबी अकरम صلی اللہ علیہ وسلم ने फ़रमाया ((الْخَلْقُ عِيَالُ اللَّهِ)) (29) यानि तमाम मख़लूक अल्लाह के कुनबे की मानिंद है। लिहाज़ा अल्लाह को तो हर इंसान महबूब है, ख़्वाह मर्द हो या औरत हो। इंसान उसकी तख़लीक का शाहकार (masterpiece) है। इसके साथ-साथ उसका इल्म भी कामिल है, वह जनता है कि औरत के क्या हुकूक होने चाहिये और मर्द के क्या होने चाहिये।

आयत 233

“और माँ अपनी औलाद को दूध पिलाए पूरे दो साल”

وَالْوَالِدَتُ يُرْضِعْنَ أَوْلَادَهُنَّ حَوْلَيْنِ

كَامِلَيْنِ

“उस शख्स के लिये जो मुद्दते रज़ाअत पूरी करना चाहता हो।”

لِمَنْ أَرَادَ أَنْ يُتِمَّ الرَّضَاعَةَ

अगर तलाक़ देने वाला शौहर यह चाहता है कि मुतलक्का औरत उसके बच्चे को दूध पिलाए और रज़ाअत की मुद्दत पूरी करे तो दो साल तक वह औरत इस ज़िम्मेदारी से इंकार नहीं कर सकती।

“और बच्चे वाले के ज़िम्मे है बच्चों की माँओं का खाना और कपड़ा दस्तूर के मुताबिक़ा”

وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ

بِالْمَعْرُوفِ

इस मुद्दत में बच्चे के बाप पर मुतलक्का के खाने और कपड़े की ज़िम्मेदारी है, जिसे हम नान-नफ़्का कहते हैं, इसलिये कि क़ानूनन औलाद शौहर की है। इस सिलसिले में दस्तूर का लिहाज़ रखना होगा। यानि मर्द की हैसियत और औरत की ज़रूरियात को पेशे नज़र रखना होगा। ऐसा ना हो कि मर्द करोड़पति हो लेकिन मुतलक्का बीवी को अपनी खादमाओं की तरह का नान नफ़्का देना चाहे।

“किसी पर ज़िम्मेदारी नहीं डाली जाती मगर उसकी वुसअत के मुताबिक़”

لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ إِلَّا وُسْعَهَا

“ना तो तकलीफ़ पहुँचाई जाये किसी वालिदा को अपने बच्चे की वजह से”

لَا تُضَارُّ وَالِدَةُ بَوْلِدِهَا

“और ना उसको जिसका वह बच्चा है (यानि बाप) उसके बच्चे की वजह से।”

وَلَا مَوْلُو دَلَّةٌ بِوَلَدِهِ

यानि दोनों के साथ मुन्सिफ़ाना सुलूक किया जाये, जैसा कि हदीसे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم है ((لَا ضَرَرَ وَلَا فَضْرَ)) (30) यानि ना तो नुक़सान पहुँचाना है और ना ही नुक़सान उठाना है।

“और वारिस पर भी इसी तरह की ज़िम्मेदारी है।”

وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذَلِكَ

अगर बच्चे का बाप फ़ौत हो जाये तो बच्चे को दूध पिलाने वाली मुतलक्का औरत का नान नफ़्का मरहूम के वारिसों के ज़िम्मे रहेगा।

“फिर अगर माँ-बाप चाहें की दूध छुड़ा लें (दो बरस के अंदर ही) बाहमि रज़ामंदी और सलाह से”

فَإِنْ أَرَادَا فِصَالًا عَنْ تَرَاضٍ مِنْهُمَا

وَتَشَاوُرٍ

“तो उन दोनों पर कुछ गुनाह नहीं।”

فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا

“और अगर तुम अपने बच्चों को किसी और से

وَإِنْ أَرَدْتُمْ أَنْ تَسْرِضُوا أَوْلَادَكُمْ

दूध पिलवाना चाहो”

“तो भी तुम पर कुछ गुनाह नहीं”

فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ

अगर बच्चे का बाप या उसके वरसा बच्चे की वालिदा की जगह किसी और औरत से बच्चे को दूध पिलवाना चाहते हों तो भी कोई हर्ज नहीं, उन्हें इसकी इजाज़त है, बशर्ते.....

“जबकि तुम (बच्चे की माँ को) वह सब कुछ दे दो जिसका कि तुमने देना ठहराया था दस्तूर के मुताबिक़ा”

إِذَا سَأَلْتُم مَّا آتَيْتُم بِالْمَعْرُوفِ

यह ना हो कि नान नफ़्का बचाने के लिये अब तम मद्दते रज़ाअत के दरमियान बच्चे की माँ के बजाये किसी और औरत से इसलिये दूध पिलवाने लगे कि उसे म्आवज़ा कम देना पड़ेगा। अगर तम किसी दाई वग़ैरह से दूध पिलवाना चाहते हो तो पहले बच्चे की माँ को भले-तरीक़े पर वह सब कुछ अदा कर दो जो तुमने तय किया था।

“और अल्लाह का तक्रवा इख़्तियार करो और जान रखो कि जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उसे देख रहा है।”

وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ

आयत 234

“और जो तुममें से वफ़ात पा जाएँ और बीवियाँ छोड़ जाएँ”

وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا

“तो वह औरतें रोके रखें अपने आपको चार माह दस दिन तक।”

يَتَرَبَّصْنَ بِأَنْفُسِهِنَّ أَرْبَعَةَ أَشْهُرٍ وَعَشْرًا

क्रबल अज़ आयत 228 में मुतल्लका औरत की इद्दत तीन हैज़ बयान हुई है। यहाँ बेवा औरतों की इद्दत बयान की जा रही है कि वह शौहर की वफ़ात के चार माह दस दिन बाद तक अपने आपको शादी से रोके रखें।

“पस जब वह अपनी इस मुद्दत तक पहुँच

فَإِذَا بَلَغْنَ أَجَلَهُنَّ

जाएँ (यानि इद्दत गुज़ार लें)”

“तो तुम पर कोई गुनाह नहीं है इस मामले में जो कुछ वह अपने बारे में दस्तूर के मुताबिक़ा करें।”

فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا فَعَلْنَ فِي أَنْفُسِهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ

इद्दत गुज़ार चुकने के बाद वह आज़ाद हैं, जहाँ मुनासिब समझे निकाह कर सकती हैं। अब तुम उन्हें रोकना चाहो कि हमारी नाक कट जायेगी, यह बेवा होकर सत्र से बैठ नहीं सकी, इससे रहा नहीं गया, इस तरह की बातें बिल्कुल ग़लत हैं, अब तुम्हारा कोई इख़्तियार नहीं कि तुम उन्हें रोको।

“और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे वाख़बर है।”

وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ

आयत 235

“और तुम पर कुछ गुनाह नहीं है इसमें कि किनाया व इशारे में ज़ाहिर कर दो उन औरतों से पैग़ामे निकाह या पोशीदा रखो अपने दिलों में।”

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا عَزَّيْتُمْ بِهِ مِنْ خُطْبَةٍ النِّسَاءِ أَوْ أَكْنَنْتُمْ فِي أَنْفُسِكُمْ

किसी औरत का इद्दत के दौरान निकाह तो नहीं हो सकता, ना ही उसे वाज़ेह तौर पर पैग़ामे निकाह दिया जा सकता है, अलबत्ता इशारे किनाए में यह बात कही जा सकती है कि मुझे इसमें दिलचस्पी है। या फिर यह बात अपने दिल ही में पोशीदा रखी जाये और इद्दत ख़त्म होने का इंतज़ार किया जाये।

“अल्लाह को मालूम है कि तुम इन औरतों का ज़िक्र करोगे।”

عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ سَتَذْكُرُونَهُنَّ

आख़िर तुम्हें उनका ख़याल तो आयेगा कि यह औरत बेवा हो गई है, अब मैं इससे शादी कर सकता हूँ। कोई आदमी यह भी सोच सकता है कि यह जो मेरे दिल में बेवा के बारे में ख़याल आ रहा है और उससे निकाह की रग़बत पैदा हो रही है तो शायद मैं गुनहगार हूँ। यहाँ इत्मिनान दिलाया जा रहा है कि ऐसे ख़याल का आना गुनाह नहीं है, यह क़ानूने फ़ितरत है।

“लेकिन उनसे निकाह का वादा ना कर रखो
छुप कर”

وَلَكِنْ لَا تُوَاعِدُوهُمْ سِرًّا

ऐसा ना हो कि खुफिया ही खुफिया निकाह की बात पक्की हो जाये।

“सिवाय इसके कि कोई बात कह दो मारुफ़
तरीके से।”

إِلَّا أَنْ تَقُولُوا قَوْلًا مَّعْرُوفًا

बस कोई ऐसी मारुफ़ बात कह सकते हो जिससे उन्हें इशारा मिल जाये।

“और मत बाँधो गिरह निकाह की जब तक
कि क़ानूने शरीअत अपनी मुद्दत को ना पहुँच
जाये।”

وَلَا تَغْرِمُوا عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتَّى يَبْلُغَ الْكِشْبُ
أَجَلَهُ

यानि अल्लाह की मुक़रर कर्दा इद्दत जब तक पूरी ना हो जाये। यहाँ किताब
से मुराद क़ानूने शरीअत है। किताबुल्लाह में बेवा की इद्दत चार माह दस दिन
मुक़रर कर दी गई, इसका पूरा होना ज़रूरी है, इससे पहले निकाह नहीं हो
सकता।

“और जान रखो कि अल्लाह ख़ूब जानता है
जो कुछ तुम्हारे दिलों में है, पस उससे डरते
रहो।”

وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي أَنْفُسِكُمْ
فَاحْذَرُوهُ

उसकी पकड़ से बचने की कोशिश करो।

“और यह भी जान रखो कि अल्लाह बख़्शने
वाला और बुर्दबार है।”

وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ

अल्लाह ग़फ़ूर है, बख़्शने वाला है, कोई ख़ता हो गई है तो इस्तग़फ़ार करो,
तौबा करो, अल्लाह माफ़ फ़रमायेगा। और वह हलीम है, तहम्मल (धैर्य) करने
वाला है फ़ौरन नहीं पकड़ता, बल्कि ढील देता है, मोहलत देता है कि अगर
चाहो तो तुम तौबा कर लो।

आयत 236

“तुम पर कोई गुनाह नहीं है अगर तुम ऐसी
बीवियों को तलाक़ दे दो जिनको ना तुमने
अभी छुआ हो और ना उनके लिये महर

لَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ إِنْ طَلَقْتُمُ النِّسَاءَ مَا لَمْ
تَمْسُوهُنَّ أَوْ تَفْرِضُوا لَهُنَّ فَرِيضَةً

मुक़रर किया हो।”

अगर कोई शख्स अपनी मन्कूहा (बीवी) को इस हाल में तलाक़ देना चाहे कि
ना तो उसके साथ खल्वते सहीह (complete privacy) की नौबत आई हो
और ना ही उसके लिये महर मुक़रर किया गया हो तो वह दे सकता है।

“और उनको कुछ ख़र्च दो।”

وَمِمَّا يُغْنُون

इस सूरत में अगरचे महर की अदायगी लाज़िम नहीं है, लेकिन मर्द को
चाहिये कि वह उसे कुछ ना कुछ माल व मता-ए-दुनियावी कपड़े वगैरह दे
दिला कर फ़ारिग करे।

“साहिबे वुसअत पर अपने हैसियत के
मुताबिक़ ज़रूरी है और तंगदस्त पर अपनी
हैसियत के मुताबिक़।”

عَلَى الْمُوسِعِ قَدَرُهُ وَعَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهُ

जो वुसअत वाला है, गनी है, जिसको कशाइश हासिल है वह अपनी हैसियत
के मुताबिक़ अदा करे और जो तंगदस्त है वह अपनी हैसियत के मुताबिक़।

“जो ख़र्च के कायदे के मुवाफ़िक़ है।”

مَتَاعًا بِالْمَعْرُوفِ

यह साज़ो सामाने दुनिया जो है यह भी भले अंदाज़ में दिया जाये, ऐसा ना
हो कि जैसे ख़ैरात दी जा रही हो।

“यह हक़ है मोहसिनीन पर।”

حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِينَ

नेकी करने वाले, भले लोग यह समझ लें कि यह उन पर अल्लाह तआला कि
तरफ़ से आयद कर्दा एक ज़िम्मेदारी है।

आयत 237

“और अगर तुम औरतों को तलाक़ दो उनको
हाथ लगाने से पहले और तुम ठहरा चुके थे
उनके लिये एक मुतअय्यन (निर्धारित) महर”

وَإِنْ طَلَقْتُمُوهُنَّ مِنْ قَبْلِ أَنْ تَمْسُوهُنَّ وَقَدْ
فَرَضْتُمْ لَهُنَّ فَرِيضَةً

“तो जो महर तुमने तय किया था अब उसका

فَرِيضَتُ مَا فَرَضْتُمْ

आधा अदा करना लाज़िम है”

इस सूरत में मुक़ररर शुदा महर का आधा तो तुम्हें देना ही देना है।

“इल्ला यह कि वह माफ़ कर दे”

إِلَّا أَنْ يَغْفُونَ

यानि कोई औरत खुद कहे कि मुझे आधा भी नहीं चाहिये या कोई कहे कि मुझे चौथाई दे दीजिये।

“या वह शख्स दरगुज़र से काम ले जिसके हाथ में निकाह की गिरह है।”

أَوْ يَغْفُوا الَّذِي بِيَدِهِ عُقْدَةُ النِّكَاحِ

और यह गिरह मर्द के हाथ में है, वह उसे खोल सकता है। औरत अज़ खुद तलाक़ दे नहीं सकती। लिहाज़ा मर्दों के लिये तरगीब है कि वह इस मामले में फ़राख़ (उदार) दिली से काम लें।

“और यह कि तुम मर्द दरगुज़र करो तो यह तक्रवा से क़रीबतर है।”

وَأَنْ تَغْفُوا أَقْرَبَ لِلتَّقْوَىٰ

“और अपने माबैन अहसान करना मत भुला दो।”

وَلَا تَنْسُوا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ

इसका तर्जुमा यूँ भी किया गया है: “और तुम्हारे दरमियान एक को दूसरे पर जो फ़ज़ीलत है उसको मत भूलो।” यानि अल्लाह ने जो फ़ज़ीलत तुम मर्दों को औरतों पर दी है उसको मत भूलो। चुनाँचे तुम्हारा तर्ज़े अमल भी ऐसा होना चाहिये कि तुम अपने बड़े होने के हिसाब से उनके साथ नमी करो और उनको ज़्यादा दो। तुमने उनका जितना भी महर मुक़ररर किया था वह निस्फ़ के बजाय पूरा दे दो और उन्हें मारुफ़ तरीक़े से इज़ज़त व तकरीम के साथ रुख़सत करो।

“यक़ीनन जो कुछ तुम कर रहो हो अल्लाह उसे देख रहा है।”

إِنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ

आयात 238 से 242 तक

حِفْظُوا عَلَى الصَّلَوَاتِ وَالصَّلَاةِ الْوُسْطَىٰ وَقُومُوا لِلَّهِ قَانِتِينَ ۖ فَإِنْ خِفْتُمْ فَرِجَالًا أَوْ رُكْبَانًا فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَأَذْكُرُوا اللَّهَ كَمَا عَلَّمَكُم مَّا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ۚ وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا وَصِيَّةً لِأَزْوَاجِهِمْ مَّتَاعًا إِلَى الْحَوْلِ غَيْرِ إِخْرَاجٍ فَإِنْ خَرَجُنْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِي مَا فَعَلْنَ فِي أَنْفُسِهِنَّ مِنْ مَّعْرُوفٍ وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝ وَلِلْمُطَلَّاتِ مَتَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ۝ كَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمْ آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝

आयत 238

“मुहाफ़ज़त करो तमाम नमाज़ों की और ख़ास हफ़्ज़ुल अल्लुल वल्लुल वल्लुल वल्लुल तौर पर बीच वाली नमाज़ की।”

यह जो बार-बार आ रहा है कि जान लो अल्लाह हर शय का जानने वाला है, जान रखो कि अल्लाह तुम्हारे सब कामों को देख रहा है, जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह कि निगाह में है, जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उससे बाख़बर है, तो इस सबको क़ल्ब व ज़हन में मुस्तहज़र रखने के लिये तुम्हें पंच वक़्ता नमाज़ दी गई है कि इसकी निगहदाश्त करो। दुनिया के कारोबार से निकलो और और अल्लाह के हुज़ूर हाज़िर होकर उससे किया हुआ अहद ताज़ा करो। हफ़ीज़ का एक शेर है:

सरकशी ने कर दिये धुँधले नुक़्शे बन्दगी

आओ सजदे मे गिरें लौहे जबी ताज़ा करें!

“सलातुल वुस्ता” (बीच वाली नमाज़) के बारे में बहुत से अक़वाल हैं, लेकिन आमतौर पर इससे मुराद असर की नमाज़ ली जाती है। इसलिये कि दिन में दो नमाज़े फ़जर और ज़ुहर इससे पहले हैं और दो ही नमाज़ें मगरिब और इशा इसके बाद में हैं।

“और खड़े हुआ करो अल्लाह के सामने पूरे अदब के साथ।”

وَقُومُوا لِلَّهِ قَانِتِينَ ۝

क़याम, रुकूअ और सजदा फ़राइजे नमाज़ में से हैं। रुकूअ में बंदा अपने रब के हुज़ूर आजिज़ी से झुक जाता है, सजदा उस झुकने कि इन्तहा है। मतलूब यह है कि क़याम भी कुनूत, आजिज़ी और इन्क़सारी (विनम्रता) के साथ हो, मालूम हो कि एक बंदा अपने आक्रा के सामने बाअदब खड़ा है।

आयत 239

“फिर अगर तुम ख़तरे की हालत में तो चाहे
प्यादा पढ़ लो या सवारा।”

فَإِنْ خِفْتُمْ فَرِجَالًا أَوْ رُكْبَانًا

दुश्मन अगर पीछा कर रहा है और आप रुक कर तमाम शराइत व आदाब के साथ नमाज़ पढ़ना शुरू कर देंगे तो वह आपके सर पर पहुँच जायेगा। या आपने कहीं जाकर फ़ौरी तौर पर हमला करना है और आप नमाज़ के लिये रुक जाएंगे तो मतलूबा हदफ़ (लक्ष्य) हासिल नहीं कर सकेंगे। चुनाँचे दुश्मन से ख़तरे की हालत में पैदल या सवार जिस हाल में भी हों नमाज़ पढ़ी जा सकती है।

“फिर जब तुम अमन में हो जाओ”

فَإِذَا أَمِنْتُمْ

ख़तरा दूर हो जाये और अमन की हालत हो।

“फिर अल्लाह को याद करो जैसे कि तुम्हें
उसने सिखाया है जिसको तुम नहीं जानते
थे।”

فَاذْكُرُوا اللَّهَ كَمَا عَلَّمَكُمْ مَالَكُمْ تَكُونُوا
تَعْلَمُونَ

उम्मत को नमाज़ का तरीक़ा मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ सिखाया है और हुक़म दिया है: ((صَلُّوا كَمَا رَأَيْتُمُوْنِي أَصِلُّ))⁽³¹⁾ “नमाज़ पढ़ो जैसे कि तुम मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखते हो।” नमाज़ का यह तरीक़ा अल्लाह तआला का सिखाया हुआ है। रिवायात से साबित है कि हज़रत जिब्रील अलै० ने आकर मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ को दो दिन नमाज़ पढ़ाई है। एक दिन पाँचों नमाज़ों अब्बल वक़्त में और दूसरे दिन पाँचों नमाज़ों आख़री वक़्त में पढ़ाई और बता दिया कि इन नमाज़ों का वक़्त इन अवक़ात के दरमियान है। चुनाँचे नमाज़ के मामले में आँहुज़ूर ﷺ के मुअल्लिम हज़रत जिब्रील अलै० हैं और आप ﷺ पूरी उम्मत के लिये मुअल्लिम हैं।

अब बेवा औरतों के बारे में मज़ीद हिदायात आ रही हैं।

आयत 240

“और जो लोग तुममें से वफ़ात दे दिये जाएँ
और वो छोड़ जाएँ बीवियाँ”

وَالَّذِينَ يَتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا

“तो वह वसीयत कर जाएँ अपनी बीवियों के
लिये एक साल तक के लिये नान नफ़्का की,
बग़ैर इसके कि उन्हें घरों से निकाला जाये।”

وَصِيَّةٌ لِأَزْوَاجِهِمْ مَّتَاعًا إِلَى الْحَوْلِ غَيْرِ
إِخْرَاجٍ

मिसाल के तौर पर एक शख्स फ़ौत हुआ है और उसकी चार बीवियाँ हैं, जिनमें से एक के यहाँ औलाद है, जबकि बाक़ी तीन इस औलाद सौतेली माँएँ हैं। अब यह औलाद सगी माँ को तो अपनी माँ समझ कर उसकी ख़िदमत करेगी और बाक़ी तीन को ख़्वाह माख़्वाह की ज़िम्मेदारी (liability) समझेगी। तो फ़रमाया कि ऐसा ना हो कि इन बेवाओं को फ़ौरन घर से निकाल दो, कि जाओ अपना रास्ता लो, जिससे तुम्हारी शादी थी वह तो फ़ौत हो गया, बल्कि एक साल के लिये उन्हें घर से ना निकाला जाये और उनका नान नफ़्का दिया जाये। इन आयतों के नुज़ूल तक क़ानूने विरासत अभी नहीं आया था, लिहाज़ा बेवाओं के बारे में वसीयत का उबूरी हुक़म दिया गया, जैसे कि क़बूल अज़ आयत 180 में वालिदैन और क़राबतदारों के लिये वसीयत का उबूरी हुक़म दिया गया। सूरतुन्निसा में क़ानूने विरासत नाज़िल हुआ तो उसमें वालिदैन का हक़ भी मुअय्यन कर दिया गया और शौहर की वफ़ात की सूरत में बीवी के हक़ का और बीवी की वफ़ात की सूरत में शौहर के हक़ का भी तअय्यन कर दिया गया और अब वालिदैन व अज़ीज़ व अक्रारिब और बेवगान (बेवाओं) के हक़ में वसीयत की हिदायात मन्सूख़ हो गई।

“फिर अगर वह औरतें खुद निकल जाएँ तो
तुम पर इसका कोई गुनाह नहीं जो कुछ वह
अपने हक़ में मारूफ़ तरीक़े पर करें।”

فَإِنْ خَرَجْنَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِي مَا فَعَلْنَ
فِي أَنْفُسِهِنَّ مِنْ مَّعْرُوفٍ

अगर कोई औरत इद्दत गुज़ारने के बाद दूसरी शादी करके कहीं बसना चाहे तो तुम उसे साल भर के लिये रोक नहीं सकते। वह अपने हक़ में मारूफ़

तरीके पर जो भी फैसला करें वह उसकी मिजाज़ (अधिकृत) है, इसका कोई इल्ज़ाम तुम पर नहीं आयेगा।

“और यकीनन अल्लाह तआला ज़बरदस्त है,
हिकमत वाला है।”

وَاللّٰهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

आयत 241

“और मुतल्लका औरतों को भी साज़ो सामाने
ज़िन्दगी देना है मारुफ़ तरीके पर।”

وَلْيُطْلَقْ مَتَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ ۝

“यह लाज़िम है परहेज़गारों पर।”

حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ۝

वाज़ेह रहे कि यह हिदायत इद्दत के वक़्त तक के लिये है, उसके बाद नहीं। इसी मामले में कलकत्ता हाई कोर्ट ने शाह बानो केस में जो एक फैसला दिया था उस पर हिन्दुस्तान में शदीद एहतजाज़ हुआ था। उसने यह फैसला दिया था कि मुसलमान अगर अपनी बीवी को तलाक़ दे दे तो वह बीवी अगर दूसरी शादी कर ले तब तो बात दूसरी है, वरना जब तक वह ज़िन्दा रहेगी उसका नान नफ़का तलाक़ देने वाले के ज़िम्मे रहेगा। इस पर भारत के मुसलमानों ने कहा कि यह हमारी शरीअत में दख़ल अंदाज़ी है, शरीअत ने मुतल्लका के लिये सिर्फ़ इद्दत तक नान नफ़का का हक्क रखा है। चुनाँचे मुसलमानों ने इस मसले पर एहतजाज़ी तहरीक चलाई, जिसमें बहुत से लोगों ने जानों का नज़राना पेश किया। आख़िरकार राजीव गाँधी की हुकूमत को घुटने टेकने पड़े और फिर वहाँ यह क़ानून बना दिया गया कि हिन्दुस्तान की कोई अदालत बशमूल सुप्रीम कोर्ट मुसलमानों के आइली क़वानीन में दख़ल नहीं दे सकती। इस पर मैं मुसलमाने भारत की अज़मत को सलाम पेश किया करता हूँ। इसके बरअक्स हमारे यहाँ यह हुआ कि एक फ़ौजी आमिर ने आइली क़वानीन बनाये जिनके बारे में सुन्नी, शिया, अहले हदीस, देवबंदी, बरेलवी तमाम उल्मा और जमाअते इस्लामी की चोटी की क़यादत सबने मुतफ़क़का तौर पर यह कहा कि यह क़वानीन ख़िलाफ़े इस्लाम हैं, मगर वह आज तक चल रहे हैं। एक और फ़ौजी आमिर ग्यारह बरस तक यहाँ पर कोसे बजाता रहा और इस्लाम इस्लाम का भी राग़ भी अलापता

रहा, लेकिन उसने भी इन क़वानीन को ज्यों का त्यों बरकरार रखा। इसी बुनियाद पर मैंने इसकी शूरा से इस्तीफ़ा दे दिया था। लेकिन हिन्दुस्तान के मुसलमानों ने वहाँ पर यह बात नहीं होने दी।

आयत 242

“इसी तरह अल्लाह तआला तुम्हारे लिये
अपनी आयत को वाज़ेह कर रहा है ताकि
तुम अक्ल से काम लो (और समझो)।”

كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمْ آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ۝

आयात 243 से 253 तक

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ خَرَجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ وَهُمْ أُلُوفٌ حَذَرَ الْمَوْتِ فَقَالَ لَهُمُ اللَّهُ مُوتُوا ۖ ثُمَّ أَحْيَاهُمْ إِنَّ اللَّهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلَكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُونَ ۝ وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ مَنْ ذَا الَّذِي يَفْرِضُ اللَّهُ قَرْصًا حَسَنًا فَيُضِعُّهُ لَهُ أَضْعَافًا كَثِيرًا ۖ وَاللَّهُ يُفْضِلُ وَيَبْخُضُ وَاللَّهُ تَرَجُّعُونَ ۝ أَلَمْ تَرَ إِلَى الْمَلَإِ مِنْ بَنِي إِسْرَءِيلَ مِنْ بَعْدِ مُوسَى إِذْ قَالُوا لِنَبِيِّهِمْ ائْتِنَا مَلِكًا نُقَاتِلَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ قَالَ هَلْ عَسَيْتُمْ إِنْ كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ أَلَّا تُقَاتِلُوا قَالُوا قَاتِلُوا وَمَا لَنَا أَلَّا نُقَاتِلَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَقَدْ أُخْرِجْنَا مِنْ دِيَارِنَا وَأَبْنَاءِنَا فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ تَوَلَّوْا إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ ۖ وَاللَّهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ۝ وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ اللَّهَ قَدْ بَعَثَ لَكُمْ طَالُوتَ مَلِكًا قَالُوا أَلَيْسَ يَكُونُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَيْنَا وَنَحْنُ أَحَقُّ بِالْمُلْكِ مِنْهُ وَلَمْ يُؤْتَ سَعَةً مِّنَ الْمَالِ قَالَ إِنَّ اللَّهَ اصْطَفَاهُ عَلَيْكُمْ وَزَادَهُ بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ ۖ وَاللَّهُ يُؤْتِي مُلْكَهُ مَن يَشَاءُ ۖ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ۝ وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ آيَةَ مُلْكِهِ أَنْ يَأْتِيَكُمُ التَّابُوتُ فِيهِ سَكِينَةٌ مِّنْ رَبِّكُمْ وَبَقِيَّةٌ مِّمَّا تَرَكَ آلُ مُوسَىٰ وَآلُ هَارُونَ تَحْمِلُهُ الْمَلَائِكَةُ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَةً لَّكُمْ إِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِينَ ۝ فَلَمَّا فَصَلَ

طَلُوتٌ بِالْجُنُودِ قَالَ إِنَّ اللَّهَ مُبْتَلِيكُمْ بِنَهَرٍ فَمَنْ شَرِبَ مِنْهُ فَلَيْسَ مِنِّي وَمَنْ لَمْ يَطْعَمْهُ فَإِنَّهُ مِنِّي إِلَّا مَنِ اغْتَرَفَ غُرْفَةً بِيَدِهِ فَشَرَبُوا مِنْهُ إِلَّا قَلِيلًا مِنْهُمْ فَلَمَّا جَاوَزَهُ هُوَ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ قَالَ الَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُمْ مُلْقَاوُا اللَّهَ كَمْ مِنْ فِئَةٍ قَلِيلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَثِيرَةً بِإِذْنِ اللَّهِ وَاللَّهُ مَعَ الصَّابِرِينَ ١٥ وَلَمَّا بَرَزُوا لِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ قَالُوا رَبَّنَا أَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَثَبِّتْ أَقْدَامَنَا وَانصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ١٦ فَهَزَمُوهُمْ بِإِذْنِ اللَّهِ وَقَتَلَ دَاوُدُ جَالُوتَ وَاتَّهَى اللَّهُ الْمُلْكَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَيْهِ مِمَّا يَشَاءُ وَلَوْ لَا دَفْعُ اللَّهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَفَسَدَتِ الْأَرْضُ وَلَكِنَّ اللَّهَ ذُو فَضْلٍ عَلَى الْعَالَمِينَ ١٧ تِلْكَ آيَةُ اللَّهِ تُنَلِّوْهَا عَلَيْكَ الْحَقُّ وَإِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ١٨ تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَى بَعْضٍ مِنْهُمْ مَنْ كَلَّمَ اللَّهُ وَرَفَعَ بَعْضَهُمْ دَرَجَاتٍ وَآتَيْنَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلَ الَّذِينَ مِنْ بَعْدِهِمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَلَكِنْ اخْتَلَفُوا فَمِنْهُمْ مَنْ آمَنَ وَمِنْهُمْ مَنْ كَفَرَ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلُوا وَلَكِنَّ اللَّهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ ١٩

अब जो दो रुकूअ ज़ेरे मुताअला आ रहे हैं यह इस ऐतबार से बहुत अहम हैं कि इनमें उस जंग का तज़क़िरा है जिसकी हैसियत गोया तारीखी बनी इस्राईल के ग़ज़वा-ए-बदर की है। क़ब्ल अज़ यह बात ज़िक्र की जा चुकी है कि हज़रत मूसा अलै० के बाद बनी इस्राईल ने यूशा बिन नून की सरकरदगी में जिहाद व क़िताल किया तो फ़लस्तीन फ़तह हो गया। लेकिन उन्होंने एक मुस्तहक़म हुकूमत क़ायम करने की बजाय छोटी-छोटी बारह हुकूमतें बना लीं और आपस में लड़ते भी रहे। लेकिन तीन सौ बरस के बाद फिर यह सूरते हाल पैदा हुई कि जब उनके ऊपर दुनिया तंग हो गई और आस-पास की काफ़िर और मुशरिक क़ौमों ने उन्हें दबा लिया और बहुत सों को उनके घरों और उनके मुल्कों से निकाल दिया तो फिर तंग आकर उन्होंने उस वक़्त के नबी से कहा कि हमारे लिये कोई बादशाह, यानि सिपहसालार मुकर्रर कर दीजिये,

अब हम अल्लाह की राह में जंग करेंगे। चुनाँचे वह जो जंग हुई है तालूत और जालूत की, उसके बाद गोया बनी इस्राईल का दौर ख़िलाफ़रे राशदा शुरू हुआ।

बनी इस्राईल की तारीख़ का यह दौर जिसे मैं “ख़िलाफ़ते राशदा” से ताबीर कर रहा हूँ, उनके रसूल अलै० के इन्तेक़ाल के तीन सौ बरस बाद शुरू हुआ, जबकि इस उम्मत मुस्लिमा की ख़िलाफ़ते राशदा रसूल अल्लाह ﷺ के ज़माने के साथ मुत्तसिल (जुड़ा) है। इसलिये कि सहाबा किराम रज़ि० ने जानें दीं, खून दिया, कुर्बानियाँ दीं और इसके नतीजे में रसूल अल्लाह ﷺ की ज़िन्दगी ही में दीन ग़ालिब हो गया और इस्लामी रियासत क़ायम हो गई। नतीजतन आप ﷺ के इन्तेक़ाल के बाद ख़िलाफ़त का दौर शुरू हो गया, लेकिन वहाँ तीन सौ बरस गुज़रने के बाद उनका दौर ख़िलाफ़त आया है। इसमें भी तीन ख़िलाफ़तें तो मुत्तफ़िक़ अलैह हैं। यानि हज़रत तालूत, हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान अलै० की ख़िलाफ़त। लेकिन चौथी ख़िलाफ़त पर आकर तक्रसीम हो गई। जैसे हज़रत अली रज़ि० ख़लीफ़ा-ए-राबेअ के ज़माने में आलमे इस्लाम मुन्क़सिम हो गया कि मिस्र और शाम ने हज़रत अली रज़ि० की ख़िलाफ़त को तस्लीम नहीं किया। इस तरह फ़लस्तीन की मम्लकत हज़रत सुलेमान अलै० के दो बेटों में तक्रसीम हो गई, और इस्राईल और यहूदिया के नाम से दो रियासतें वुजूद में आ गईं। कुरान हकीम में इस मक़ाम पर तालूत और जालूत की उस जंग का तज़क़िरा आ रहा है जिसके बाद तारीखी बनी इस्राईल में इस्लाम के ग़ल्बे और ख़िलाफ़ते राशदा का आगाज़ हो रहा है। यह दरहक़ीक़त सहबा किराम रज़ि० को एक आईना दिखाया जा रहा है कि अब यही मरहला तुम्हें दरपेश है, ग़ज़वा-ए-बदर पेश आया चाहता है।

आयत 243

“क्या तुमने उन लोगों के हाल पर ग़ौर नहीं किया जो निकल खड़े हुए अपने घरों से”

لَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ خَرَجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ

“जबकि वह हज़ारों की तादाद में थे”

وَهُمُ الْوُفُ

“मौत के डर की वजह से।”

حَذَرَ الْمَوْتِ

यानि जब कुफ़्फ़ार और मुशरिकीन ने उन पर ग़लबा कर लिया और यह दहशतज़दा होकर, अपने मुल्क छोड़ कर, अपने घरों से निकल भागे।

“तो अल्लाह ने उनसे कहा कि मर जाओ!”

فَقَالَ لَهُمُ اللَّهُ مُوتُوا

“फिर (अल्लाह ने) उन्हें ज़िन्दा किया।”

ثُمَّ أَحْيَاهُمْ

यहाँ मौत से मुराद ख़ौफ और बुज़दिली की मौत भी हो सकती है जो उन पर बीस बरस तारी रही, फिर सिमोइल (Samuel) नबी की इस्लाह व तजदीद की कोशिशों से उनकी निशाते सानिया हुई और अल्लाह ने उनके अंदर एक जज़्बा पैदा कर दिया। गोया यहाँ पर मौत और अहया (ज़िन्दगी) से मुराद मायनवी और रुहानी व अख़लाकी मौत और अहया है। लेकिन बिल् फ़अल जसदी मौत और अहया भी अल्लाह के इख़्तियार से बाहर नहीं, उसकी कुदरत में है, वह सबको मार कर भी दोबारा ज़िन्दा कर सकता है।

“यक़ीनन अल्लाह तआला तो लोगों पर बड़ा फ़ज़ल करने वाला है लेकिन अक्सर लोग शुक्र नहीं करते।”

إِنَّ اللَّهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلَكِنَّ أَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُونَ

अक्सर लोग शुक्रगुज़ारी की रविश इख़्तियार करने की बजाय अल्लाह तआला के अहसानात की नाक़द्री करते हैं।

अब साबक़ा उम्मत मुस्लिमा के “ग़ज़वा-ए-बदर” का हाल बयान करने से पहले मुसलमानों से गुफ़्तगू हो रही है। इसलिये कि यह सब कुछ उनकी हिदायत के लिये बयान हो रहा है, तारीख़ बयान करना कुरान का मक़सद नहीं है। यह तो मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की इन्क़लाबी जद्दोज़हद की तहरीक जिस मरहले से गुज़र रही थी और इन्क़लाबी अमल जिस स्टेज पर पहुँच चुका था उसकी मुनासबत से साबक़ा उम्मत मुस्लिमा की तारीख़ से वाक़यात भी लाये जा रहे हैं और उसी की मुनासबत से अहक़ाम भी दिये जा रहे हैं। चुनाँचे फ़रमाया:

आयत 244

“और जंग करो अल्लाह की राह में, और ख़ूब जान लो कि अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला (और) सब कुछ जानने वाला है।”

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَعَلِمُوا أَنَّ اللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ

आयत 245

“कौन है जो अल्लाह को क़र्ज़े हसना दे तो अल्लाह उसको उसके लिये कई गुना बढ़ाता रहे।”

مَنْ ذَا الَّذِي يُقرِضُ اللَّهَ قَرْضًا حَسَنًا فَيُضْعِفُهُ لَكُمُ أَضْعَافًا كَثِيرَةً

जो इन्फ़ाक़ खालिस अल्लाह तआला के दीन के लिये किया जाता है उसे अल्लाह अपने ज़िम्मे क़र्ज़े हसना से ताबीर करता है। वह कहता है कि तुम मेरे दीन को ग़ालिब करना चाहते हो, मेरी हुकूमत कायम करना चाहते हो, तो जो कुछ इस पर ख़र्च करोगे वह मुझ पर क़र्ज़ है, जिसे मैं कई गुना बढ़ा-चढ़ा कर वापस करूँगा।

“और अल्लाह तंगदस्ती भी देता है और कुशादगी भी देता है।”

وَاللَّهُ يَقْضِي وَيَضْطُّ

अल्लाह ही के इख़्तियार में है किसी चीज़ को सिकोड़ देना और खोल देना, किसी के रिज़क़ को तंग कर देना या उसमें कशाइश कर देना।

“और उसी की तरफ़ तुम्हें लौटा दिया जायेगा।”

وَالْبَیْتُ تَرْجَعُونَ

यहाँ देखिये जिहाद बिल् नफ़्स और जिहाद बिल् माल दोनों चीज़ों का तज़क़िरा किया जा रहा है। जिहाद बिल् नफ़्स की आख़री शक़ल क़िताल है और जिहाद बिल् माल के लिये पहले लफ़ज़ “इन्फ़ाक़” आ रहा था, अब क़र्ज़े हसना लाया जा रहा है।

आयत 246

“क्या तुमने ग़ौर नहीं किया बनी इस्राईल के सरदारों के मामले में, जो उन्हें मूसा अलै० के

الْمَرَّتْ إِلَى الْهَلَالِ مِنْ بَنِي إِسْرَءِيلَ مِنْ بَعْدِ

बाद पेश आया?"

مُوسَىٰ

"जबकि उन्होंने अपने नबी से कहा कि हमारे लिये कोई बादशाह मुकर्रर कर दीजिये, ताकि हम अल्लाह की राह में जंग करें।"

إِذْ قَالُوا لِنَبِيِّهِمْ لَهُمْ اَبْعَثْ لَنَا مُلْكًا نُّقَاتِلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ

यहाँ बादशाह से मुराद अमीर और सिपहसालार है। ज़ाहिर बात है कि नबी की मौजूदगी में बुलंदतरीन मर्तबा तो नबी ही का रहेगा, लेकिन एक ऐसा अमीर नामज़द कर दीजिये जो नबी के ताबेअ होकर जंग की सिपहसालारी कर सके। मैं हदीस बयान कर चुका हूँ कि बनी इस्राईल में हज़रत मूसा अलै० से लेकर हज़रत ईसा अलै० तक कोई ना कोई नबी ज़रूर मौजूद रहा है। उस वक़्त सैमुअल नबी थे जिनसे सरदाराने बनी इस्राईल ने यह फ़रमाइश की थी।

"उन्होंने कहा कि तुमसे इस बात का भी अंदेशा है कि जब तुम पर जंग फ़र्ज़ कर दी जाये तो उस वक़्त तुम जंग ना करो।"

قَالَ هَلْ عَسَيْتُمْ اِنْ كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ اَلَا تُقَاتِلُوْا

यानि अभी तो तुम्हारे बड़े दावे हैं, बड़े जोश व ख़रोश और बहादुरी का इज़हार कर रहे हो, लेकिन कहीं ऐसा तो नहीं होगा कि मैं अल्लाह तआला से जंग की इजाज़त भी लूँ और तुम्हारे लिये कोई सिपहसालार या बादशाह भी मुकर्रर कर दूँ और फिर तुम जंग से कच्ची कतरा जाओ?

"उन्होंने कहा कि यह कैसे हो सकता है कि हम अल्लाह की राह में क़िताल ना करें?"

قَالُوا وَمَالَنَا اَلَا نُقَاتِلُ فِي سَبِيلِ اللَّهِ

"जबकि हमें निकाल दिया गया है हमारे घरों से और अपने बेटों से।"

وَقَدْ اُخْرِجْنَا مِنْ دِيَارِنَا وَابْنَانَا

दुश्मनों ने उनके बेटों को गुलाम और उनकी औरतों को बांदियाँ बना लिया था और यह अपने मुल्कों से ख़ौफ़ के मारे भागे हुए थे। चुनाँचे उन्होंने कहा कि अब हम जंग नहीं करेंगे तो क्या करेंगे?

"फिर जब उन पर जंग फ़र्ज़ कर दी गई"

فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ

"तो सब पीठ फेर गये, सिवाय उनकी एक क़लील (थोड़ी) तादाद के"

تَوَلَّوْا اِلَّا قَلِيْلًا مِّنْهُمْ

यह गोया मुसलमानों को तम्बीह (चेतावनी) की जा रही है कि तुम भी बहुत कहते रहे हो कि हुज़ूर हमें जंग की इजाज़त मिलनी चाहिये, लेकिन ऐसा ना हो कि जब जंग का हुक्म आये तो वह तुम्हें नागवार गुज़रे। आयत 216 में हम यह अल्फ़ाज़ पढ़ चुके हैं: { كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهُ لَكُمْ } "तुम पर जंग फ़र्ज़ की गई है और वह तुम्हें नागवार है।"

"और अल्लाह ऐसे ज़ालिमों से ख़ूब बाख़बर है।"

وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ بِالظّٰلِمِيْنَ

आयत 247

"और उनसे कहा उनके नबी अलै० ने कि अल्लाह तआला ने तालूत को तुम्हारा बादशाह मुकर्रर कर दिया है।"

وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ اِنَّ اللّٰهَ قَدْ بَعَثَ لَكُمْ طَالُوتَ مَلِكًا

इनका नाम तौरात में साउल (Saul) आया है। हो सकता है कि असल नाम साउल हो, लेकिन चूँकि वह बहुत क्रद्दावर थे इसलिये उनका एक सिफ़ाती नाम या लक़ब "तालूत" हो। तालूत के मायने "लंबे तड़ंगे" के हैं।

"उन्होंने कहा कि कैसे हो सकता है कि उसे हमारे ऊपर बादशाहत मिले?"

قَالُوا اَنَّىٰ يَكُوْنُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَيْنَا

"जबकि हम उससे ज़्यादा हक़दार हैं बादशाहत के"

وَنَحْنُ اَحَقُّ بِالْمُلْكِ مِنْهُ

"और उसे तो माल की वुसअत भी नहीं दी गई।"

وَلَمْ يُؤْتْ سَعَةً مِنَ الْمَالِ

वह तो मुफ़लिस है, उसे तो अल्लाह तआला ने ज़्यादा दौलत भी नहीं दी है। क्योंकि उनके मैयारात यही थे कि जो दौलतमंद हैं वही साहिबे इज़ज़त है।

"(नबी अलै०) ने कहा: (अब जो चाहो कहो) यक़ीनन अल्लाह ने, उसको चुन लिया है तुम

قَالَ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰهُ عَلٰیكُمْ

पर।”

यह फ़ैसला हो चुका है। यह अल्लाह का फ़ैसला (Divine Decision) है, जिसे कोई तब्दील नहीं कर सकता। अल्लाह ने उसी को तुम्हारी सरदारी के लिये चुना है।

“और उसे कुशादगी अता की है इल्म और जिस्म दो चीज़ों में।”

وَرَادَةُ بِسَطَةِ فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ

वह ना सिर्फ़ क़द्वावर और ताक़तवर है बल्कि अल्लाह ने उसे इल्म और फ़हम भी वाफ़र (प्रयाप्त) अता फ़रमाया है, उसे उमूरे जंग से भी वाक्फ़ियत है। तुम्हारे नज़दीक इज़्ज़त और सरदारी का मैयार दौलत है, मगर अल्लाह ने उसे इन दो चीज़ों की बिना पर चुना है। एक तो वह जिस्मानी तौर पर मज़बूत और ताक़तवर है। उस दौर में ज़ाहिर बात है इसकी बहुत ज़रूरत थी। और दूसरे यह कि उसे इल्म, फ़हम, समझ और दानिश दी है।

“और अल्लाह तआला जिसको चाहता है अपनी बादशाहत दे देता है।”

وَاللَّهُ يُؤْتِي مُلْكَهُ مَنْ يَشَاءُ

अल्लाह को इख़्तियार है कि अपना मुल्क जिसको चाहे दे, वह जिसे चाहे अपनी तरफ़ से इक़तदार बख़्शे।

“और अल्लाह बहुत समाई (सुनने) वाला है, सब कुछ जानने वाला है।”

وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ

उसकी वुसअत अथाह है, कोई उसका अंदाज़ा नहीं कर सकता, और वह बड़ा इल्म रखने वाला है, सब कुछ जानने वाला है। वह जिसको जो कुछ देता है बरबनाये इल्म (अपने पूरे इल्म से) देता है कि कौन उसका मुस्तहिक्क है।

आयत 248

“और उनसे कहा उनके नबी ने कि तालूत की बादशाहत की एक निशानी यह होगी कि तुम्हारे पास वह सन्दूक आ जायेगा (जो तुमसे छिन चुका है) जिसमें तुम्हारे लिये तस्कीन का सामान है तुम्हारे रब की तरफ़ से और कुछ

وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ آيَةَ مُلْكِهِ أَنْ يَأْتِيَكُمُ التَّابُوتُ فِيهِ سَكِينَةٌ مِّن رَّبِّكُمْ وَبَقِيَّةٌ مِّمَّا تَرَكَ آلُ مُوسَىٰ وَآلُ هَارُونَ تَحْمِلُهُ الْمَلَائِكَةُ

आले मूसा अलै० और आले हारून अलै० के छोड़े हुए तबर्कात हैं, वह सन्दूक फ़रिश्तों की तहवील में है।”

तालूत की अमारत और बादशाही की अलामत के तौर पर वह सन्दूक तुम्हारे पास वापस आ जायेगा। असल में यह “ताबूते सकीनह” लकड़ी का एक बहुत बड़ा सन्दूक था, जिसमें बनी इस्राईल के अम्बिया किराम अलै० के तबर्कात महफूज़ थे। यहूदियों का दावा है कि यह सन्दूक अब भी मस्जिदे अक्सा के नीचे सुरंग में मौजूद है। उन्होंने बाज़ ज़राए से फ़ोटो लेकर उसकी दस्तावेज़ी फ़िल्म भी दिखा दी है। यह “ताबूते सकीनह” हज़रत सुलेमान अलै० के तामीर कर्दा हैकल के तहखाने में रखा हुआ था और वहीं पर रबाई (رَبَائِي) भी मौजूद थे। जब उस हैकल को मुन्हदिम (ध्वस्त) किया गया तो वह उसी में दब गये। वह तहखाना चारों तरफ़ से बंद हो गया होगा और उनकी लाशें और ताबूते सकीनह उसके अंदर ही होंगे। ताबूते सकीनह में बनी इस्राईल के लिये बहुत बड़ी रुहानी तस्कीन का सामान था कि हमारे पास हज़रत मूसा और हज़रत हारून अलै० के तबर्कात हैं। उसमें असा-ए-मूसा भी था और वह अल्वाह भी जो हज़रत मूसा अलै० को कोहे तूर पर दी गई थीं और जिन पर तौरात लिखी हुई थी। उस ताबूत को देख कर बनी इस्राईल को इसी तरह तस्कीन होती थी जैसे एक मुसलमान को खाना-ए-काबा को देख कर तस्कीन होती है। इस्राईलियों को जब उनके पड़ोसी मुल्कों ने शिकस्त दी तो वह ताबूते सकीनह भी छीन कर ले गये। पूरी क्रौम ने इस अज़ीम सानेहा पर मातम किया और इसे बनी इस्राईल से सारी इज़्ज़त व हशमत छिन जाने से ताबीर किया। चुनाँचे इससे उनके हौसले मज़ीद पस्त हो गये। अब जबकि इस्राईलियों ने जंग का इरादा किया और वक़्त के नबी हज़रत सैमुअल अलै० ने तालूत को उनका अमीर मुक़्रर किया तो उन्हें यह भी बताया कि तालूत को अल्लाह की तरफ़ से नामज़द किये जाने की एक अलामत यह होगी कि तुम्हारी तस्कीन का सामान “ताबूते सकीनह” जो तुमसे छिन गया था, उनके अहदे अमारत में तुम्हें वापस मिल जायेगा और इस वक़्त वह फ़रिश्तों की तहवील में है। हुआ यह कि उनके दुश्मन जब ताबूत छीन कर ले गये तो वह उनके लिये एक मुसीबत बन गया। वह उसे जहाँ रखते वहाँ ताऊन और दूसरी वबाएँ फूट पड़ती। बिलआख़िर उन्होंने उसे नहुसत का बाइस समझते हुए

छकड़े पर रखा और बैलों को हाँक दिया कि जिधर चाहें ले जाएँ। बैल सीधे चलते-चलते उसे बनी इस्राईल के इलाक़े में ले आये। ज़ाहिर है कि यह मामला फ़रिश्तों की रहनुमाई से हुआ। इस तरह वह ताबूत सकीनह उनके पास वापस पहुँच गया जो बरसों पहले उनसे छिन चुका था।

“यक्कीनन इसमें तुम्हारे लिये बड़ी निशानी है إِنَّ فِي ذَلِكَ لَآيَةً لِّكُمْ إِن كُنتُمْ مُّؤْمِنِينَ ۝ अगर तुम मानने वाले हो।”

आयत 249

“फिर जब तालूत अपने लश्क़रों को लेकर चले”

فَلَمَّا فَصَلَ طَالُوتُ بِالْجُنُودِ

“तो उन्होंने कहा कि अल्लाह तआला तुम्हारी आजमाइश करेगा एक दरिया से (यानि दरिया-ए-उरदन)।”

قَالَ إِنَّ اللَّهَ مُبْتَلِيكُمْ بِنَهَرٍ

“तो जो उसमें से (पेट भर कर) पानी पियेगा वह मेरा साथी नहीं है।”

فَمَنْ شَرِبَ مِنْهُ فَلَيْسَ مِنِّي

“और जो उसमें से पानी नहीं पियेगा वह मेरा साथी है”

وَمَنْ لَّمْ يَطْعَمْهُ فَإِنَّهُ مِنِّي

“सिवाय इसके कि कोई अपने हाथ से सिर्फ़ चुल्लु भर पानी लेकर पी ले।”

إِلَّا مَنِ اغْتَرَفَ غُرْفَةً بِيَدِهِ

असल में हर कमांडर के लिये ज़रूरी होता है कि किसी भी बड़ी जंग से पहले अपने साथियों के जोश व जज़्बे और अज़म व हौसले (morale) को परखे और नज़म (discipline) की हालत को देखे। चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ ने भी ग़ज़वा-ए-बदर से क़बल मशावरत की थी कि मुसलमानों! एक तरफ़ जुनूब से कील काँटे से लैस एक लश्कर आ रहा है और दूसरी तरफ़ शिमांल से माल व असबाब से लदा-फंदा एक क़ाफ़िला आ रहा है। अल्लाह तआला ने वादा फ़रमाया है कि उन दोनों में से एक तुम्हें ज़रूर मिलेगा। बताओ किधर चलें? कुछ लोग जो कमज़ोरी दिखा रहे थे उन्होंने कहा कि चलें पहले क़ाफ़िला लूट

लें! और जो लोग बा-हिम्मत थे उन्होंने कहा हुज़ूर! जो आप ﷺ का इरादा हो, जो आप ﷺ की मंशा हो, आप ﷺ उसके मुताबिक़ फ़ैसला फ़रमाये, हम हाज़िर हैं! तो यहाँ भी तालूत ने अपने लश्क़रों का टेस्ट लिया कि वह मेरे हुक्म की पाबंदी करते हैं या नहीं करते।

“तो उन्होंने उसमें से (ख़ूब जी भर कर) पानी पिया”

فَشَرِبُوا مِنْهُ

“सिवाय उनमें से एक क़लील तादाद के।”

إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ

“तो जब दरिया पार करके आगे बढ़े तालूत और उसके साथी अहले ईमान”

فَلَمَّا جَاوَزَهُ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ

वाज़ेह रहे कि सबसे पहली स्क्रीनिंग क़बल अज़ हो चुकी थी। उनमें से जो क़िताल ही के मुन्कर हो गए थे वह पहले ही अलग हो चुके थे। अब यह दूसरी छलनी थी। जो उसमें से नहीं निकल सके वह पानी पीकर बेसुध हो गए। यह ऐसा ही जैसे ग़ज़वा-ए-उहद में रसूल अल्लाह ﷺ के साथ एक हज़ार आदमी मदीना मुनव्वरा से निकले थे फिर ऐन वक़्त पर तीन सौ अफ़राद साथ छोड़ कर चले गए। तो जब तालूत और उसके उन साथियों ने जो ईमान पर साबित क़दम रहे थे, दरिया पार कर लिया.....

“तो उन्होंने कहा कि आज हममें जालूत और उसके लश्क़रों का मुक़ाबला करने की ताक़त नहीं है।”

قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ

जालूत (Goliath) बड़ा क़वी हैकल और ग्रानडेल इंसान था। ज़िरहबकतर (कवच) में उसका पूरा जिस्म इस तरह छुपा हुआ था कि सिवाय आँख के सुराख के जिस्म का कोई हिस्सा खुला नहीं था। उसकी मुबारज़त (ललकार) के जवाब में कोई भी मुक़ाबले पर नहीं आ रहा था।

“तो कहा उन लोगों ने जो यक्कीन रखते थे कि उन्हें (एक दिन) अल्लाह से मुलाक़ात करनी है, कि कितनी मर्तबा ऐसा हुआ है कि एक छोटी जमाअत बड़ी जमाअत पर ग़ालिब आ गई अल्लाह के हुक्म से।”

قَالَ الَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُمْ مُّلَاقُوا اللَّهَ كَمْ مِّنْ فِتْنَةٍ قَالِيلَةٍ غَلَبَتْ فِتْنَةُ كَيْدِهِمْ بِإِذْنِ اللَّهِ

सो तुम आगे बढ़ो, हिम्मत करो, अपनी कम हिम्मती का सबूत ना दो। अल्लाह तआला की नुसरत और मदद से तुम्हें फ़तह हासिल हो जायेगी।

“और अल्लाह तो सब्र करने वालों के साथ है।” وَاللَّهُ مَعَ الصَّابِرِينَ ۝

आयत 250

“और जब वह मुकाबले पर निकले जालूत وَلَمَّا بَرَزُوا لِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ
और उसके लश्करो के”

جُذ के मायने हैं ज़ाहिर हो जाना, आमने-सामने आ जाना। अब दोनों लश्कर मैदाने जंग में आमने-सामने आये। इधर तालूत का लश्कर है और उधर जालूत का।

“तो उन्होंने दुआ की कि ऐ हमारे रब! हम पर सन्न उंडेल दे” رَبَّنَا أَفْرِغْ عَلَيْنَا مِثْرًا

“أَفْرِغْ” का मफ़हूम है किसी बर्तन से किसी के ऊपर पानी इस तरह गिरा देना कि वह बर्तन ख़ाली हो जाये। तालूत और उनके साथी अहले ईमान ने दुश्मन के मद्दे मुकाबिल आने पर दुआ की कि ऐ हमारे परवरदिगार! हम पर सन्न का फ़ैज़ान फ़रमा, सन्न की बारिश फ़रमा दे।

“और (मैदाने जंग में) हमारे क़दमों को जमा दे” وَتَبَتِ أَقْدَامُنَا

“और हमारी मदद फ़रमा काफ़िरो के मुकाबले में।” وَانصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ۝

यह दुआ गोया अहले ईमान को तल्कीन की जा रही है कि जब बदर के मौक़े पर तुम्हारा कुफ़्रार से मुकाबला होगा तो तुम्हें यह दुआ करनी चाहिये।

आयत 251

“तो उन्होंने मार भगाया उनको अल्लाह के हुक्म से।” فَهَرَّوْهُمْ يَاْذُنَ اللَّهِ

अहले ईमान ने अल्लाह के इज़्ज़ से और अल्लाह की मशियत से दुश्मनों को शिकस्त दी।

“और दाऊद अलै० ने जालूत को क़त्ल कर दिया” وَقَتَلَ دَاوُدُ جَالُوتَ

यह दाऊद वही हज़रत दाऊद अलै० हैं जो जलीलुलक़दर नबी और बादशाह हुए। इनके बेटे हज़रत सुलेमान अलै० थे। तौरात से मालूम होता है कि दाऊद एक गड़रिये थे और जंगल में अपनी भेड़-बकरियाँ चराया करते थे। उनके पास एक गोपया होता था, जिसके अंदर पत्थर रख कर वह उसको घुमा कर मारते थे। निशाना इतना सही था कि इससे वह अपनी बकरियों पर हमला करने वाले जंगली जानवरों के जबड़े तोड़ दिया करते थे। जब तालूत और जालूत के लश्कर आमने सामने थे तो दाऊद इत्तेफ़ाक़न वहाँ आ निकले। उन्होंने देखा कि जालूत ललकार रहा है कि है कोई जो मेरे मुकाबले में आये? लेकिन इधर सबके सब सहमें खड़े हैं, कोई आगे नहीं बढ़ रहा। यह देख कर उनकी ग़ैरत को जोश आ गया। उन्होंने तालूत से उसके मुकाबले की इजाज़त माँगी और कहने लगे कि मैं तो अपने गोपये से शेरों के जबड़े तोड़ दिया करता हूँ, भला इस नामख़तून की क्या हैसियत है, मैं अभी इसको कैफ़रे किरदार तक पहुँचाता हूँ। (वाज़ेह रहे कि ख़तना हज़रत इब्राहीम अलै० की सुन्नत है और यह मिल्लते इब्राहीमी में हमेशा राइज रहा है। लेकिन कुफ़्रार और मुशरिकीन के यहाँ ख़तना का रिवाज नहीं था। चुनाँचे “नामख़तून” बनी इस्राईल के यहाँ सबसे बड़ी ग़ाली थी) दाऊद अलै० ने सिपहसालार की इजाज़त से अपना गोपया और चंद पत्थर उठाये और देव हैकल जालूत के सामने जा खड़े हुए। जालूत ने उनका मज़ाक उड़ाया, लेकिन उन्होंने अपने गोपये में एक पत्थर रख कर ऐसे घुमा कर छोड़ा कि वह सीधा आँख के सुराख से पार होकर उसके भेजे के अंदर उतर गया और जालूत वहीं ढेर हो गया।

“और अल्लाह ने उसे सल्लत और हिकमत وَأَنزَلْنَا إِلَيْكَ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمْنَاهُ جَدًّا
अता की और जो कुछ चाहा उसे सिखा दिया।”

तालूत ने दाऊद अलै० से अपनी बेटी का निकाह कर दिया, इस तरह वह तालूत के दामाद हो गये। फ़िर तालूत ने उन्हीं को अपना वारिस बनाया और

यह बादशाह हुए। अल्लाह तआला ने हज़रत दाऊद अलै० को हुकूमत व सल्तनत भी अता फ़रमाई और हिकमत व नबुवत से भी नवाज़ा। इन दोनों ऐतबारात से अल्लाह तआला ने आप अलै० को सरफ़राज़ फ़रमाया। यह सब ईनामात इस वाक़ये के बाद हज़रत दाऊद अलै० पर हुए। इन सब पर मुस्तज़ाद यह कि अल्लाह ने उन्हें सिखाया जो कुछ कि अल्लाह ने चाहा।

“और अगर (इस तरीक़े से) अल्लाह एक ग़िरोह को दूसरे के ज़रिये से दफ़ा ना करता रहता तो ज़मीन में फ़साद फैल जाता”

ज़मीन में जब भी फ़साद होता है तो अल्लाह तआला कोई शक़ल ऐसी पैदा करता है कि किसी और ग़िरोह को सामने लाकर मफ़्सिदों का ख़ात्मा करता है। अगर ऐसा ना होता तो ज़मीन में फ़साद ही फ़साद फैल गया होता। अल्लाह तआला ने जंगों के ज़रिये से फ़सादी ग़िरोहों का ख़ात्मा फ़रमाया है। हर बड़ा फ़िरऔन जो आता है अल्लाह तआला उसके मुक़ाबले किसी मुसा को खड़ा कर देता है। इस तरह अल्लाह तआला ने हर सरकश और फ़सादी के लिये कोई ना कोई ईलाज तजवीज़ किया हुआ है।

“लेकिन अल्लाह तआला तो तमाम ज़हानों पर बड़ा फ़ज़ल करने वाला है।”

आयत 252

“यह अल्लाह की आयात हैं जो हम आप को पढ़ कर सुना रहे हैं हक़ के साथ।”

यह क़ौल गोया हज़रत ज़िब्रील अलै० की तरफ़ मन्सूब होगा। यह मुहम्मद रसूल अल्लाह और तमाम मुसलमानों से ख़िताब है कि यह अल्लाह की आयात हैं जो हम आप को सुना रहे हैं हक़ के साथ। यह एक बामक़सद सिलसिला है।

“और यक़ीनन (ऐ मुहम्मद) आप (अल्लाह के) रसूलों में से हैं।”

आयत 253

“उन रसूलों में से हमने बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दी है।”

यह एक बहुत अहम उसूल बयान हो रहा है। यह बात क़बल अज़ बयान की जा चुकी है कि “तफ़रीक़ बयनल रसूल” कुफ़्र है, जबकि “तफ़ज़ील” कुरान से साबित है। अल्लाह तआला ने अपने रसूलों में से हर एक को किसी ना किसी पहलु से फ़ज़ीलत बख़्शी है और इस ऐतबार से वह दूसरों पर मुमताज़ है। चुनाँचे जुज़वी फ़ज़ीलतें मुख़तलिफ़ रसूलों की हो सकती हैं, अलबत्ता कुल्ली फ़ज़ीलत तमाम अम्बिया व रसूल अलै० पर मुहम्मद रसूल अल्लाह को हासिल है।

“उनमें से वह भी थे जिनसे अल्लाह ने कलाम फ़रमाया”

यह हज़रत मूसा अलै० की फ़ज़ीलत का ख़ास पहलु है।

“और बाज़ के दरजात (किसी और ऐतबार से) बड़ा दियो।”

“और हमने ईसा इब्ने मरयम अलै० को बड़े खुले मौज़्जे दिये”

“और उनकी मदद फ़रमायी रूहुल कुदुस (हज़रत ज़िब्रील अलै०) के साथ।”

“और अगर अल्लाह चाहता तो उनके बाद आने वाले आपस में ना लड़ते-झगड़ते”

यानि ना तो यहूदियों की आपस में जंगें होतीं, ना यहूदियों और नसरानियों की लड़ाइयाँ होतीं, और ना ही नसरानियों के फ़िरके एक-दूसरे से लड़ते।

“इसके बाद की उनके पास बाज़ेह तालीमात आ चुकी थीं”

“लेकिन उन्होंने इख़्तलाफ़ किया”

“फिर कोई तो उनमें से ईमान लाया और कोई कुफ़्र पर अड़ा रहा।”

فَمِنْهُمْ مَّنْ آمَنَ وَمِنْهُمْ مَّنْ كَفَرَ

“और अगर अल्लाह चाहता तो वह आपस में ना लड़ते।”

وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلُوا

यानि अगर अल्लाह तआला जबरन तकवीनी तौर पर उन पर लाज़िम कर देता तो वह इख़्तलाफ़ ना करते और आपस में जंग व जिदाल से बाज़ रहते।

“लेकिन अल्लाह तो करता है जो वह चाहता है।”

अल्लाह तआला ने दुनिया को इस हिकमत पर बनाया है कि दुनिया कि यह ज़िन्दगी आजमाइश है। चुनाँचे आजमाइश के लिये उसने इन्सान को आज्ञादी दी है। तो जो शख्स ग़लत रास्ते पर जाना चाहता है उसे भी आज्ञादी है और जो सही रास्ते पर आना चाहता है उसे भी आज्ञादी है।

आयात 254 से 257 तक

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا إِمَارًا رَزَقْنَاكُمْ مِنْ قَبْلِ أَنْ يَأْتِيَ يَوْمٌ لَا بَيْعَ فِيهِ وَلَا خُلَّةٌ وَلَا شَفَاعَةٌ ۚ وَالْكَافِرُونَ هُمُ الظَّالِمُونَ ۝ اللَّهُ لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ الْعَلِيُّ الْفَتِيُّ ۚ لَا تَأْخُذُهُ سِنَّةٌ وَلَا نَوْمٌ ۚ لَهُ مَا فِي السَّمَوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۚ مَنْ ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِنْدَهُ إِلَّا بِإِذْنِهِ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ ۚ وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَوَاتِ وَالْأَرْضَ وَلَا يَئُودُهُ حِفْظُهُمَا ۚ وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ۝ لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۚ قَدْ تَبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ ۚ فَمَنْ يَكْفُرْ بِالطَّاغُوتِ وَيُؤْمِنْ بِاللَّهِ فَقَدْ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقَىٰ لَا انْفِصَامَ لَهَا ۚ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ۝ اللَّهُ وَلِيُّ الَّذِينَ آمَنُوا يُخْرِجُهُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ إِلَى النُّورِ ۚ وَالَّذِينَ كَفَرُوا أُولِيئُهُمُ الطَّاغُوتُ يُخْرِجُونَهُمْ مِنَ النُّورِ إِلَى الظُّلُمَاتِ ۚ أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝

तक़रीबन दो रुकूओं पर मुश्तमिल तालूत और जालूत की जंग के वाकिआत हम पढ़ चुके हैं और अब गोया गज़वा-ए-बदर के लिये ज़हनी और नफ़िसयाती तैयारी हो रही है। गज़वात के लिये जहाँ सरफ़रोशी की ज़रूरत है वहाँ इन्फ़ाके माल भी नागुज़ीर (ज़रूरी) है। चुनाँचे अब यहाँ बड़े ज़ोरदार अंदाज़ में इन्फ़ाके माल की तरफ़ तबज्जो दिलाई जा रही है। जैसा कि अज़्र किया जा चुका है, सूरतुल बक्ररह के निस्फ़े आखिर में चार मज़ामीन तक़रार के साथ आये हैं। यानि इन्फ़ाके माल, क़िताल, इबादात और मामलात। यह गोया चार डोरियाँ हैं जो इन बाईस रुकूओं के अन्दर ताने-बाने की तरह गुथी हुई हैं।

आयत 254

“ऐ अहले ईमान! खर्च करो उसमें से जो कुछ हमने तुम्हें दिया है इससे पहले कि वह दिन आ धमके जिसमें ना कोई खरीद व फ़रोख्त होगी, ना कोई दोस्ती काम आयेगी और ना कोई शफ़ाअत मुफ़ीद होगी।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا إِمَارًا رَزَقْنَاكُمْ مِنْ قَبْلِ أَنْ يَأْتِيَ يَوْمٌ لَا بَيْعَ فِيهِ وَلَا خُلَّةٌ وَلَا شَفَاعَةٌ

“और जो इन्कार करने वाले हैं वही तो ज़ालिम हैं।”

وَالْكَافِرُونَ هُمُ الظَّالِمُونَ ۝

यहाँ काफ़िर से मुराद इस्तलाही काफ़िर नहीं, बल्कि मायनवी काफ़िर हैं, यानि अल्लाह के हुक्म का इन्कार करने वाले। जो शख्स अल्लाह तआला के इस हुक्म इन्फ़ाक की तामील नहीं करता, देखता है कि दीन मगलूब है और उसको ग़ालिब करने की जद्दो-जहद हो रही है, उसके कुछ तक्राज़े हैं, उसकी माली ज़रूरतें हैं और अल्लाह ने उसे कुदरत दी है कि उसमें खर्च कर सकता है लेकिन नहीं करता, वह है असल काफ़िर।

इसके बाद अब वह आयत आ रही है जो अज़रूए फ़रमाने नबवी ﷺ कुरान हकीम की अज़ीम तरीन आयत है, यानि “आयतुल कुरसी”। इसका नाम भी मारूफ़ है। मैंने आपको सूरतुल बक्ररह में आने वाले हिकमत के बड़े-बड़े मोती और बड़े-बड़े फूल गिनवाये हैं, मसलन आयतुल आयात, आयतुल बिर, आयतुल इख़्तलाफ़ और अब यह आयतुल कुरसी है जो तौहीद के अज़ीम तरीन

खज़ानों में से है। रसूल अल्लाह ﷺ ने इसे तमाम आयाते कुरानी की सरदार करार दिया है। हज़रत अबु हुरैरा रज़ि० से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

لِكُلِّ شَيْءٍ سَنَامٌ وَإِنَّ سَنَامَ الْقُرْآنِ سُورَةُ الْبَقَرَةِ وَفِيهَا آيَةٌ هِيَ سَيِّدَةُ آيِ الْقُرْآنِ هِيَ آيَةُ الْكَرْسِيِّ

“हर शय की एक चोटी होती है और यक़ीनन कुरान हकीम की चोटी सूरतुल बक्ररह है, इसमें एक आयत है जो आयाते कुरानी की सरदार है, यह आयतुल कुरसी है।” (32)

जिस तरह आयतुल बिर्र और सूरतुल अस्र में एक निस्बत है कि अल्लाह तआला ने हिदायत और निजात की सारी की सारी शराइत एक छोटी सी सूरत में जमा कर दीं:

وَالْعَصْرِ ۝ إِنَّ الْإِنْسَانَ لِرَبِّهِ لَكَنُفٍ ۝ إِلَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ ۝

लेकिन इसकी तफ़सील एक आयत में बयान हुई है और वह आयतुल बिर्र है। चुनाँचे हमने मुताअला-ए-कुरान हकीम का जो मुन्तखब निसाब मुस्तब (सेट) किया है उसमें पहला दर्स सूरतुल अस्र का है और दूसरा आयतुल बिर्र का है। यही निस्बत आयतुल कुरसी और सूरतुल इख़लास में है। सूरतुल अस्र एक मुख़्तसर की सूरत है जबकि आयतुल बिर्र एक तवील आयत है। इसी तरह सूरतुल इख़लास चार आयात पर मुश्तमिल एक छोटी सी सूरत है और यह आयतुल कुरसी एक तवील आयत है। सूरतुल इख़लास तौहीद का अज़ीम तरीन खज़ाना है और तौहीद के मौजू पर कुरान हकीम की जामेअ तरीन सूरत है, चुनाँचे रसूल अल्लाह ﷺ ने इसे सुलूसे कुरान (एक तिहाई कुरान) करार दिया है, जबकि तौहीद और ख़ास तौर पर तौहीद फिल सिफ़ात के मौजू पर कुरान करीम की अज़ीम तरीन आयत यह आयतुल कुरसी है।

आयत 255

“अल्लाह वह माअबूदे बरहक़ है जिसके सिवा कोई इलाह नहीं।”

لَا إِلَهَ إِلَّا هُوَ

“वह ज़िन्दा है सबका क़ायम रखने वाला है।”

الْحَيُّ الْقَيُّومُ

वह अज़ख़ुद और बाख़ुद ज़िन्दा है। उसकी ज़िन्दगी मुस्तआर (उधार) नहीं है। उसकी ज़िन्दगी हमारी ज़िन्दगी की मानिन्द नहीं है, जिसके बारे में बहादुर शाह ज़फ़र ने कहा था:

उम्रे दराज़ माँग कर लाये थे चार दिन

दो आरज़ू में कट गये दो इन्तेज़ार में!

अल्लाह तआला की ज़िन्दगी “हयाते मुस्तआर” नहीं है, वह किसी की दी हुई नहीं है। उसकी ज़िन्दगी में कोई ज़ौफ़ (दुर्बलता), कोई कमज़ोरी, और कोई एहतियाज (गरीबी) नहीं है। वह खुद अपनी जगह ज़िन्दा-ओ-जावेद हस्ती है और बाक़ी हर शय का वुजूद उसके हुक्म से क़ायम है। वह “الْقَيُّومُ” है। उसके इज़्न के बग़ैर कोई शय क़ायम नहीं है। सूरतुल इख़लास में अल्लाह तआला के लिये दो अल्फ़ाज़ “الْأَحَدُ” और “الْصَّمَدُ” आये हैं। वह अपनी जगह “الْأَحَدُ” है लेकिन बाक़ी पूरी क़ायनात के लिये “الْصَّمَدُ” है। इसी तरह वह अज़ख़ुद “الْحَيُّ” है और बाक़ी पूरी क़ायनात के लिये “الْقَيُّومُ” है।

“ना उस पर ऊँघ ग़ालिब आती है ना नींद।”

لَا تَأْخُذُهُ سِنَّةٌ وَلَا نَوْمٌ

“जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है सब उसी का है।”

لَهُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ

हर शय की मिलकियते ताम्मा और मिलकियते हक़ीक़ी उसी की है।

“कौन है वह जो शफ़ाअत कर सके उसके पास किसी की मगर उसकी इजाज़त से।”

مَنْ ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِنْدَهُ إِلَّا بِإِذْنِهِ

सूरतुल बक्ररह में क़ब्बल अज़ तीन मर्तबा क़यामत के रोज़ किसी शफ़ाअत का दो टूक अन्दाज़ में इन्कार (categorical denial) किया गया है कि कोई शफ़ाअत नहीं! यहाँ भी बहुत ही जलाली अन्दाज़ इख़्तियार किया गया है:

{مَنْ ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِنْدَهُ} यानि किसकी यह हैसियत है, किसका यह मक़ाम है, किसको यह इख़्तियार हासिल है कि वह अपनी हैसियत की बुनियाद पर अल्लाह के हुज़ूर किसी की शफ़ाअत कर सके? {إِلَّا بِإِذْنِهِ} हाँ, जिसके लिये अल्लाह इजाज़त दे दे! यहाँ पहली मर्तबा इस्तसना के साथ शफ़ाअत का ज़िक़

आया है, वरना सूरतुल बक्ररह के छठे रुकूअ की दूसरी आयत में हम अल्फ़ाज़ पढ़ चुके हैं: {وَلَا يَفْقَهُ شَفَاعَةُ} "और ना (उस रोज़) किसी की तरफ से कोई शफ़ाअत कुबूल की जायेगी।" इसी तरह पंद्रहवे रुकूअ की दूसरी आयत में अल्फ़ाज़ आये हैं: {وَلَا تَنْفَعُ شَفَاعَةُ} "और ना उसको किसी की शफ़ाअत ही फ़ायदा देगी।" और अब इस रुकूअ की पहली आयत में आ चुका है: {وَلَا شَفَاعَةُ} "और ना कोई शफ़ाअत मुफ़ीद होगी।" लेकिन यहाँ एक इस्तसना बयान किया जा रहा है कि जिसको अल्लाह की तरफ से इज़्ने शफ़ाअत हासिल होगा वह उसके हक़ में शफ़ाअत कर सकेगा जिसके लिये इज़्न होगा। यह ज़रा बारीक मसला है कि शफ़ाअते हक्का क्या है और शफ़ाअते बातिला क्या है। दौरा-ए-तर्जुमा-ए-कुरान के दौरान इस पर तफ़सील के साथ बहस नहीं की जा सकती। इस पर मैं अपने तफ़सीली दर्स रिकॉर्ड करा चुका हूँ।

"वह जानता है जो कुछ उनके सामने है और
जो कुछ उनके पीछे है।" يَغْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ

आम तौर पर दुनिया में हम किसी की सिफ़ारिश करते हैं तो कहते हैं कि भई मैं इस शख्स को बेहतर जानता हूँ, असल में यह जैसा कुछ नज़र आता है वैसा नहीं है, इसके बारे में जो मालूमात आप तक पहुँची है वह मन्त्री पर हकीकत नहीं है, असल हक़ाइक कुछ और हैं, वह मैं आपको बताता हूँ। यह बात अल्लाह के सामने कौन कह सकता है? जबकि अल्लाह तो जानता है जो कुछ उनके सामने है और जो कुछ उनके पीछे है।

"और वह इहाता नहीं कर सकते अल्लाह के
इल्म में से किसी शय का भी सिवाय उसके जो अल्लाह चाहे।" وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِّنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ

बाक़ी हर एक के पास जो इल्म है वह अल्लाह का दिया हुआ, अताई इल्म है। बड़े से बड़े वली, बड़े से बड़े रसूल और बड़े से बड़े फ़रिश्ते का इल्म भी महदूद है। फ़रिश्तों का क़ौल {لَا عِلْمَ لَنَا إِلَّا بِمَا عَلَّمْتَنَا} हम चौथे रुकूअ में पढ़ आये हैं।

"उसकी कुरसी तमाम आसमानों और ज़मीन
को मुहीत है।" وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمُوتَ وَالْأَرْضَ

यहाँ कुरसी के दो मफ़हूम हो सकते हैं। एक तो ये कि उसका इक़तदार, उसकी कुदरत और उसका इख़्तियार (Authority) पूरी कायनात के ऊपर हावी है।

नेज़ यह भी हो सकता है कि अल्लाह तआला के इक़तदार की अलामत के तौर पर वाक़िअतन कोई मुजस्सम शय भी हो जिसको हम कुरसी कह सकें। अल्लाह तआला के अर्श और कुरसी के बारे में यह दोनों बातें ज़हन में रखें। यह भी हो सकता है कि इनकी कोई मुजस्सम हकीकत हो जो हमारे ज़हन और तख़य्युल (कल्पना) से मा-वरा (बहुत ऊपर) है और यह भी हो सकता है कि इससे इस्तआरा मुराद हो कि उसका इख़्तियार और इक़तदार आसमानों और ज़मीन पर छाया हुआ है।

"और उस पर गिरां (भारी) नहीं गुज़रती उन
दोनों की हिफ़ाज़त।" وَلَا يَتُودُّهُ حِفْظُهُمَا

आसमानों और ज़मीन की हिफ़ाज़त और इनका थामना उस पर ज़रा भी गिरां नहीं और इससे उस पर कोई थकान तारी नहीं होती।

"और वह बुलन्द व वाला (और) बड़ी अज़मत
वाला है।" وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ

यह आयतुल कुरसी है जो तमाम आयाते कुरानी की सरदार और तौहीदे इलाही का एक बहुत बड़ा खज़ाना है। इसके बाद आने वाली दो आयत भी हिकमत और फ़लसफ़ा-ए-दीन के ऐतबार से बड़ी अज़ीम आयत हैं।

आयत 256

"दीन में कोई जबर नहीं है।" لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ

इस्लाम इस बात की इजाज़त नहीं देता कि किसी को इस्लाम कुबूल करने पर मजबूर किया जाये। इस्लाम में किसी फ़र्द को जबरन मुस्लमान बनाना हुराम है। लेकिन इस आयत का यह मतलब निकाल लेना कि निज़ामे बातिल को ख़त्म करने के लिये भी कोई ताक़त इस्तेमाल नहीं हो सकती, परले दर्जे की हिमाक़त है। निज़ामे बातिल जुल्म पर मन्त्री है और यह लोगों का इस्तेहसाल (शोषण) कर रहा है। यह अल्लाह और बन्दों के दरमियान हिजाब और आड़ बन गया है। लिहाज़ा निज़ामे बातिल को ताक़त के साथ ख़त्म करना मुस्लमान का फ़र्ज़ है। अगर ताक़त मौजूद नहीं है तो ताक़त हासिल करने की कोशिश की जाये, लेकिन जिस मुस्लमान का दिल निज़ामे बातिल को ख़त्म

करने की आरजू और इरादे से खाली है उसके दिल में ईमान नहीं है। ताक़त और ज़बर निज़ामे बातिल को ख़त्म करने पर सर्फ़ (खर्च) किया जायेगा, किसी फ़र्द को मजबूरन मुस्लमान नहीं बनाया जायेगा। यह है असल में इस आयत का मफ़हूम।

“हिदायत गुमराही से वाज़ेह हो चुकी है।”

قَدْ تَبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ

जितनी भी कजियाँ हैं, गलत रास्ते हैं, शैतानी पगडंडियाँ हैं सिराते मुस्तक़ीम को इनसे बिल्कुल मुबहहरन (अलग) कर दिया गया है।

“तो जो कोई भी तागूत का इन्कार करे”

مَنْ يَكْفُرْ بِالطَّاغُوتِ

देखिये, अल्लाह पर ईमान लाने से पहले तागूत का इन्कार ज़रूरी है। जैसे कलमा-ए-तैय्यबा “لا اله الا الله” में पहले हर इलाह की नफ़ी है और फिर अल्लाह का अस्वात (पुष्टिकरण) है। तागूत तगा से है, यानि शरकश। तो जिसने अपनी हाकिमियत का ऐलान किया वह तागूत है, जिसने गैरुल्लाह की हाकिमियत को तस्लीम किया वह भी तागूत है और गैरुल्लाह की हाकिमियत के तहत बनने वाले सारे इदारे तागूत हैं, ख़्वाह वह कितने ही खुशनुमा इदारे हों। “अदलिया” के नाम से एक इदारा अगर अल्लाह के क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसलें नहीं कर रहा, कुछ और लोगों के बनाये हुए क़ानून के मुताबिक़ फ़ैसलें कर रहा है तो वह तागूत है। “मुताफ़नना” का इदारा अगर अल्लाह की नाज़िल करदा हिदायत के मुताबिक़ क़ानून साज़ी नहीं कर रहा तो वह भी तागूत है। जो कोई भी अल्लाह के हुदूद-ए-बन्दगी से तजावुज़ करता है वह तागूत है। दरिया जब अपनी हदों से बाहर निकलता है तो यह तुग्यानी है:

दरिया को अपनी मौज की तुग्यानियों से काम

क़शती किसी की पार हो या दरमियान रहे!

तगा और बगा दोनों बड़े करीब के अल्फ़ाज़ हैं, जिनका मफ़हूम तुग्यानी और बगावत है। फ़रमाया कि “जो कोई कुफ़्र करे तागूत के साथ।”

“और फिर अल्लाह पर ईमान लाये”

وَيُؤْمِنُ بِاللّٰهِ

तागूत से दोस्ती और अल्लाह पर ईमान दोनों चीज़ें यक़जा (एक साथ) नहीं हो सकती। अल्लाह के दुश्मनों से भी याराना हो और अल्लाह के साथ वफ़ादारी का दावा भी हो यही तो मुनाफ़क़त है। जबकि इस्लाम तो {حَنِيفًا

مُسْلِمًا} के मिस्दाक़ कामिल यक्सुई (पूरी एकाग्रता) के साथ इताअत शआरी का मुतालबा करता है।

“तो उसने बहुत मज़बूत हल्का (कुंडा) थाम लिया।”

فَقَدْ اسْتَبْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقَىٰ

जिस शख्स ने यह काम कर लिया कि तागूत की नफ़ी की और अल्लाह पर ईमान लाया उसने एक मज़बूत कुंडा थाम लिया। यूँ समझिये अगर कोई शख्स समुन्द्री जहाज़ के अर्थ से समुन्दर में गिर जाये, उसे तैरना भी ना आता हो और किसी तरह हाथ-पैर मार कर वह जहाज़ के किसी कुंडे को थाम ले तो अब वह समझता है कि मेरी ज़िन्दगी इसी से वाबस्ता (समर्पित) है, अब मैं इसे नहीं छोड़ूँगा। वह कुंडा अगर कमज़ोर है तो उसका सहारा नहीं बन सकेगा और उसके वज़न से ही उखड़ जायेगा या टूट जायेगा, लेकिन अगर वह कुंडा मज़बूत है तो वह उसकी ज़िन्दगी का ज़ामिन (जमानती) बन जायेगा। यहाँ फ़रमाया कि तागूत का इन्कार करके अल्लाह पर ईमान लाने वाले शख्स ने बहुत मज़बूत कुंडे पर हाथ डाल दिया है।

“जो कभी टूटने वाला नहीं है।”

لَا انْفِصَامَ لَهَا

कभी अलैहदा होने वाला नहीं है। यह बहुत मज़बूत सहारा है। रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के एक ख़ुत्बे में यह अल्फ़ाज़ नक़ल किये गये हैं: ((أَوْثَقُ الْعُرَى كَلِمَةُ التَّقْوَىٰ)) यानि तमाम कुंडों में सबसे मज़बूत कुंडा तक्वे का कुंडा है।⁽³³⁾ लिहाज़ा इसको मज़बूती के साथ थमने की ज़रूरत है।

“और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला सब कुछ जानने वाला है।”

وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ

आयत 257

“अल्लाह वली है अहले ईमान का”

اللّٰهُ وَلِيُّ الَّذِينَ آمَنُوا

ईमान दरहक़ीक़त अल्लाह और बन्दे के दरमियान एक दोस्ती का रिश्ता कायम करता है। यह विलायते बाहमी यानि दो तरफ़ा दोस्ती है। एक तरफ़ मतलूब यह है कि बंदा अल्लाह का वली बन जाये (सूरह युनुस:62-63):

“याद रखो, अल्लाह के दोस्तों के लिये ना तो किसी तरह का खौफ़ है और ना वह ग़मगीन होंगे। यह वह लोग हैं जो ईमान लाये और उन्होंने तक्रवा इख़्तियार किया।”

दूसरी तरफ़ अल्लाह भी अहले ईमान का वली है, यानि दोस्त है, पुश्त पनाह है, मददगार है, कारसाज़ है।

“वह उन्हें निकलता रहता है तारीकियों से नूर की तरफ़ा”

आप नोट करेंगे कि कुरान में “नूर” हमेशा वाहिद आता है। “अनवार” का लफ़्ज़ कुरान में नहीं आया, इसलिये कि नूर एक हकीकते वाहिदा है। लेकिन “ज़ुलुमात” हमेशा जमा में आता है, इसलिये कि तारीकी के shades मुख्तलिफ़ हैं। एक बहुत गहरी तारीकी है, एक ज़रा उससे कम है, फिर उससे कमतर है। कुफ़्र, शिर्क, इल्हाद (नास्तिकता), माद्दा परस्ती, ला अदरियत (Agnosticims) वगैरह मुख्तलिफ़ किस्म की तारीकियाँ हैं। तो जितने भी गलत फ़लसफ़े हैं, जितने भी गलत नज़रियात हैं, जितनी भी अमल की गलत राहें हैं उन सबके अँधियारों से निकाल कर अल्लाह अहले ईमान को ईमान की रोशनी के अन्दर लाता रहता है।

“और (इनके बरअक्स) जिन्होंने कुफ़्र किया, उनके औलिया (पुश्त पनाह, साथी और मददगार) तागूत हैं।”

“वह उनको रोशनी से निकाल कर तारीकियों की तरफ़ ले जाते हैं।”

अगर कहीं नूर की थोड़ी बहुत रमक़ (बिंदु) उन्हें मिली भी थी तो उससे उन्हें महरूम करके उन्हें तारीकियों की तरफ़ धकेलते रहते हैं।

“यही लोग हैं आग वाले, यह उसमें हमेशा-ओलिक अख़्तुबुल न्कार हम फ़िन्हा ख़लदुन”

اللَّهُمَّ اجْعَلْنَا مِنْ عِبَادِكَ الْمُؤْمِنِينَ اللَّهُمَّ اخْرِجْنَا مِنَ الظُّلُمَاتِ إِلَى النُّورِ آمِينَ يَا رَبَّ الْعَالَمِينَ

इसके बाद हज़रत इब्राहीम और हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम की ज़िन्दगी के कुछ वाकिआत बयान किये जा रहे हैं।

आयात 258 से 260 तक

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ حَاجَّ إِبْرَاهِيمَ فِي رَبِّهِ أَنْ آتَاهُ اللَّهُ الْمُلْكَ إِذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّيَ الَّذِي يُحْيِي وَيُمِيتُ قَالَ أَنَا أُحْيِي وَأُمِيتُ قَالَ إِبْرَاهِيمُ فَإِنَّ اللَّهَ يَأْتِي بِالشَّمْسِ مِنَ الْمَشْرِقِ فَأْتِ بِهَا مِنَ الْمَغْرِبِ فَبُهِتَ الَّذِينَ الَّذِينَ كَفَرُوا وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ۝ أَوْ كَالَّذِينَ مَرَّ عَلَى قَرْيَةٍ وَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلَى عُرُوشِهَا قَالَ أَنَّى يُحْيِي هَذِهِ اللَّهُ بَعْدَ مَوْتِهَا فَأَمَاتَهُ اللَّهُ مِائَةَ عَامٍ ثُمَّ بَعَثَهُ قَالَ كَمْ لَبِثْتَ قَالَ لَبِثْتُ يَوْمًا أَوْ بَعْضَ يَوْمٍ ۖ قَالَ بَلْ لَبِثْتَ مِائَةَ عَامٍ فَانْظُرْ إِلَى طَعَامِكَ وَشَرَابِكَ لَمْ يَتَسَنَّهْ ۖ وَانْظُرْ إِلَى حِمَارِكَ وَلِتَجْعَلَ آيَةً لِلنَّاسِ وَانْظُرْ إِلَى الْعِظَامِ كَيْفَ نُنْشِرُهَا ثُمَّ نَكْسُوهَا لَحْمًا ۖ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُ قَالَ أَعْلَمُ أَنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝ وَإِذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّ ارْنِي كَيْفَ تُحْيِي الْمَوْتَى قَالَ أَوَلَمْ تُؤْمِنْ ۖ قَالَ بَلَى وَلَكِنْ لِيَطْمَئِنَّ قُلُوبِي قَالَ فَنَخَذُ أَرْبَعَةً مِنَ الطَّيْرِ فَصَرَّهُنَّ الْيَبِكَ ثُمَّ اجْعَلْ عَلَى كُلِّ جَبَلٍ مِنْهُنَّ جُزْءًا ثُمَّ ادْعُهُنَّ يَأْتِينَكَ سَعْيًا ۖ وَاعْلَمْ أَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ۝

आयत 258

“क्या तुमने उस शख्स को नहीं देखा जिसने हज़रतबाज़ी की थी इब्राहीम अलैहिस्सलाम से इस वजह से कि अल्लाह ने उसे बादशाही दी हुई थी।”

यह बाबुल (इराक़) का बादशाह नमरूद था। यह ज़हन में रखिये कि नमरूद असल में लक़ब था, किसी का नाम नहीं था। जैसे फ़िरऔन (जमा फ़राअना) मिस्र के बादशाहों का लक़ब होता था इसी तरह नमरूद (जमा नमारुद) बाबुल (इराक़) के बादशाहों का लक़ब था। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की

की पैदाइश “उर” में हुई थी जो बाबुल (Babylonia) का एक शहर था और वहाँ नमरूद की बादशाहत थी। जैसे फ़िरऔन ने मिस्र में अपनी बादशाहत और अपनी खुदाई का दावा किया था इसी तरह का दावा नमरूद का भी था। फ़िरऔन और नमरूद का खुदाई का दावा दरहक्रीकत सियासी बादशाहत और इक़तदार का दावा था कि इख़्तियारे मुतलक हमारे हाथ में है, हम जिस चीज़ को चाहें ग़लत करार दे दें और जिस चीज़ को चाहें सही करार दे दें। यही असल में खुदाई इख़्तियार है जो उन्होंने हाथ में ले लिया था। तहलील व तहरीम (हलाल-हराम का फैसला करना) अल्लाह तआला का हक़ है, किसी शय को हलाल करने या किसी शय को हराम करने का इख़्तियारे वाहिद अल्लाह के हाथ में है। और जिस शख्स ने भी क़ानून साज़ी का यह इख़्तियार अल्लाह के क़ानून से आज़ाद होकर अपने हाथ में ले लिया वही तागूत है, वही शैतान है, वही नमरूद है, वही फ़िरऔन है। वरना फ़िरऔन और नमरूद ने यह दावा तो नहीं किया था कि यह दुनिया हमने पैदा की है।

“जब इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने कहा कि मेरा रब तो वह है जो ज़िन्दा करता है और मारता है तो उसने कहा कि मैं भी ज़िन्दा करता हूँ और मारता हूँ।”

नमरूद ने जेल से सज़ा-ए-मौत के दो कैदी मंगवाये, उनमें से एक की गर्दन वहीं उड़ा दी और दूसरे की सज़ा-ए-मौत माफ़ करते हुए उसे रिहा कर दिया और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से कहने लगा कि देखो, मैंने जिसको चाहा ज़िन्दा रखा और जिसको चाहा मार दिया। हज़रत इब्राहीम अलै० ने देखा कि यह कटहुज्जती पर उतरा हुआ है, इसे ऐसा जवाब दिया जाना चाहिये जो उसको चुप करा दे।

“इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने कहा कि अल्लाह सूरज को मशरिफ़ से निकालता है (अगर तू खुदाई का मुद्दई है) तो इसे मगरिब से निकाल कर दिखा”

“तो सबूत (आकर्षित) होकर रह गया वह काफ़िर।”

अब उसके पास कोई जवाब नहीं था। वह यह बात सुन कर भौंचक्का और शशदर (हैरान) होकर रह गया।

“और अल्लाह ज़ालिमों को हिदायत नहीं दिया करता।” وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ

अल्लाह ने उसे राहयाब नहीं किया, लेकिन वह चुप हो गया, उससे हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की बात का कोई जवाब नहीं बन पड़ा। इसके बाद उसने बुतकदे के पुजारियों के मशवरे से यह फैसला किया कि इब्राहीम अलैहिस्सलाम को आग में झोंक दिया जाये।

आयत 259

“या फिर जैसे कि वह शख्स (उसका वाक़िया ज़रा याद करो) जिसका गुज़र हुआ एक बस्ती पर और वह औंधी पड़ी हुई थी अपनी छतों पर।”

तफ़ासीर में अगरचे इस वाक़िये की मुख्तलिफ़ ताबीरात मिलती हैं, लेकिन यह दरअसल हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम का वाक़िया है जिनका गुज़र येरुशलम शहर पर हुआ था जो तबाह व बर्बाद हो चुका था। बाबुल (इराक़) के बादशाह बख्तनसर (Nebuchadnezzar) ने 586 ई०पू० में फ़लस्तीन पर हमला किया था और येरुशलम को ताख़त (सरपट) व ताराज (तहस-नहस) कर दिया था। इस वक़्त भी इराक़ और इसराइल की आपस में बदतरीन दुश्मनी है। यह दुश्मनी दर हक़ीक़त ढाई हज़ार साल पुरानी है। बख्तनसर के हमले के वक़्त येरुशलम बारह लाख की आबादी का शहर था। बख्तनसर ने छः लाख नफ़ूस (इंसानों) को क़त्ल कर दिया और बाक़ी छः लाख को भेड़-बकरियों की तरह हाँकता हुआ कैदी बना कर ले गया। यह लोग डेढ़ सौ बरस तक असीरी (captive) में रहे और येरुशलम उजड़ा रहा है। वहाँ कोई मुतनफ़िफ़स ज़िन्दा नहीं बचा था। बख्तनसर ने येरुशलम को इस तरह तबाह व बर्बाद किया था कि कोई दो ईंटें सलामत नहीं छोड़ी। उसने हैकले सुलेमानी को भी मुकम्मल तौर पर शहीद कर दिया था। यहूदियों के मुताबिक़ हैकल के एक तहख़ाने में “ताबूते सकीनह” भी था और वहाँ उनके रबाई भी मौजूद थे। हैकल मस्मार (विध्वंस) होने पर वहाँ उनकी मौत वाक़ेअ हुई और

ताबूते सकीनह भी वहीं दफ़न हो गया। तो जिस ज़माने में यह बस्ती उजड़ी हुई थी, हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम का उधर से गुज़र हुआ। उन्होंने देखा कि वहाँ कोई मुतनफ़िफ़स ज़िन्दा नहीं और कोई इमारत सलामत नहीं।

“उसने कहा कि अल्लाह इस बस्ती को, इसके
इस तरह मुर्दा और बर्बाद हो जाने के बाद
किस तरह ज़िन्दा करेगा?”

قَالَ أَلَيْسَ هَذَا اللَّهُ بَعْدَ مَوْتِهِ

उनका यह सवाल इज़हारे हैरत की नौइयत का था कि इस तरह उजड़ी हुई बस्ती में दोबारा कैसे अहया हो सकता है? दोबारा कैसे इसमें लोग आकर आबाद हो सकते हैं? इतनी बड़ी तबाही व बर्बादी कि कोई मुतनफ़िफ़स बाक़ी नहीं, कोई दो ईंटे सलामत नहीं!

“तो अल्लाह ने उस पर मौत वारिद कर दी
सौ बरस के लिये और फिर उसको उठाया।”

فَأَمَّا اللَّهُ مِائَةَ عَامٍ ثُمَّ بَعَثَهُ

“पूछा कितना अरसा यहाँ रहे हो?”

قَالَ كَمْ لَبِثْتُ

“कहने लगा एक दिन या एक दिन का कुछ
हिस्सा।”

قَالَ لَبِثْتُ يَوْمًا أَوْ بَعْضَ يَوْمٍ

उनको ऐसा महसूस हुआ जैसे थोड़ी देर के लिये सोया था, शायद एक दिन या दिन का कुछ हिस्सा में यहाँ रहा हूँ।

“(अल्लाह तआला ने) फ़रमाया बल्कि तुम पूरे
सौ साल इस हाल में रहे हो”

قَالَ بَلْ لَبِثْتُ مِائَةَ عَامٍ

“तो ज़रा तुम अपने खाने और अपने मशरूब
को (जो सफ़र में तुम्हारे साथ था) देखो,
उनके अन्दर कोई बसांद पैदा नहीं हुई।”

فَأَنظُرْ إِلَى طَعَامِكَ وَشَرَابِكَ لَمْ يَتَسَنَّهْ

उनमें से कोई शय गली-सड़ी नहीं, उनके अन्दर कोई ख़राबी पैदा नहीं हुई।

“और (दूसरी तरफ़) अपने गधे को देखो (हम
इसको किस तरह ज़िन्दा करते हैं)”

وَأَنظُرْ إِلَى حِمَارِكَ

हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम की सवारी का गधा इस अरसे में बिल्कुल ख़त्म हो चुका था, उसकी बोशीदा हड्डियाँ ही बाक़ी रह गयी थीं, गोश्त गल-सड़ चुका था।

“और ताकि हम तुम्हें लोगों के लिये एक
निशानी बनायें”

وَلِتَجْعَلَ آيَةً لِلنَّاسِ

यानि ऐ उज़ैर अलैहिस्सलाम! हमने तो खुद तुम्हें लोगों के लिये एक निशानी बनाया है, इसलिये हम तुम्हें अपनी यह निशानी दिखा रहे हैं ताकि तुम्हें दोबारा उठाये जाने पर यक़ीने कामिल हासिल हो।

“और अब इन हड्डियों को देखो, किस तरह
हम इन्हें उठाते हैं”

وَأَنظُرْ إِلَى الْعِظَامِ كَيْفَ نُنشِئُهَا

“फिर (तुम्हारी निगाहों के सामने) इनको
गोश्त पहनाते हैं।”

ثُمَّ نَكْسُوُهَا لَحْمًا

चुनाँचे हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम के देखते ही देखते उनके गधे की हड्डियाँ जमा होकर उसका ढाँचा खड़ा हो गया और फिर उस पर गोश्त भी चढ़ गया।

“पस जब उसके सामने यह बात वाज़ेह हो
गयी”

فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُ ۝

हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम ने बचशमे सर एक मुर्दा जिस्म को ज़िन्दा होने का मुशाहिदा कर लिया।

“वह पुकार उठा कि मैंने पूरी तरह जान लिया
(और मुझे यक़ीन कामिल हासिल हो गया)
कि अल्लाह हर शय पर क़ादिर है।”

قَالَ أَعْلَمُ أَنَّ اللَّهَ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

उन्हें यक़ीन हो गया कि अल्लाह तआला इस उजड़ी हुई बस्ती को भी दोबारा आबाद कर सकता है, इसकी आबादी अल्लाह तआला के इख़्तियार में है।

हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम को बनी इसराइल की निशाते सानिया (Renaissance) के नक़ीब (अग्रदूत) की हैसियत हासिल है। बाबुल की असारत (क़ैद) के दौरान यहूद अख़लाक़ी ज़वाल का शिकार थे। जब हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम को अल्लाह तआला ने मुतज़क्किर बाला मुशाहदात करवा दिये तो आप अलैहिस्सलाम ने वहाँ जाकर यहूद को दीन की तालीम दी और

उनके अन्दर रूहे दीन को बेदार किया। इसके बाद ईरान के बादशाह केखोरस (Cyrus) ने जब बाबुल (इराक़) पर हमला किया तो यहूदियों को असारत (Captive) से निजात दी और उन्हें दोबारा फ़लस्तीन में जाकर आबाद होने की इजाज़त दे दी। इस तरह येरुशलम की तामीरे नौ हुई और यह बस्ती 136 साल बाद दोबारा आबाद हुई। फिर यहूदियों ने वहाँ हैकले सुलेमानी दोबारा तामीर किया जिसको वह माअबूदे सानी (Second Temple) कहते हैं। फिर यह हैकल 70 ई० में रोमन जनरल टाइटस के हाथों तबाह हो गया और अब तक दोबारा तामीर नहीं हो सका। दो हज़ार बरस होने को आये हैं कि उनका काबा ज़मीनबोस है। यही वजह है कि आज दुनिया भर के यहूदियों के दिलों में आग सी लगी हुई है और वह मस्जिदे अक्रसा को मस्मार करके वहाँ हैकले सुलेमानी (माअबूदे सालिस) तामीर करने के लिये बेताब हैं। उसके नक्शे भी तैयार हो चुके हैं। बस किसी दिन कोई एक धमाका होगा और ख़बर आ जायेगी कि किसी जुनूनी (Fanatic) ने वहाँ जाकर बम रख दिया था, जिसके नतीजे में मस्जिदे अक्रसा शहीद हो गयी है। आपके इल्म में होगा कि एक जुनूनी यहूदी डॉक्टर ने मस्जिदे अल खलील में 70 मुस्लिमों को शहीद करके खुद भी खुदकुशी कर ली थी। इसी तरह कोई जुनूनी यहूदी मस्जिदे अक्रसा में बम नसब करके उसको गिरा देगा और फिर यहूदी कहेंगे कि जब मस्जिद मस्मार हो ही गयी है तो अब हमें यहाँ हैकल तामीर करने दें। जैसे अयोध्या में बाबरी मस्जिद के इन्हदाम (विध्वंस) के बाद हिन्दुओं का मौक़फ़ था कि जब मस्जिद गिर ही गयी है तो अब यहाँ पर हमें राम मन्दिर बनाने दो! बहरहाल ये हज़रत उज़ैर अलैहिस्सलाम का वाक़िया था। अब इसी तरह का एक मामला हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का मुशाहिदा है।

आयत 260

“और याद करो जबकि इब्राहीम अलै० ने भी कहा था परवरदिगार! ज़रा मुझे मुशाहिदा करा दे कि तू मुर्दों को कैसे ज़िन्दा करेगा?”

“(अल्लाह तआला ने) फ़रमाया क्या तुम (इस बात पर) ईमान नहीं रखते?”

وَإِذْ قَالَ إِبْرَاهِيمُ رَبِّ ارْنِي كَيْفَ تُحْيِي الْمَوْتَىٰ

قَالَ أَوَلَمْ تُؤْمِنْ

“कहा क्यों नहीं! (ईमान तो रखता हूँ)”

قَالَ بَلَىٰ

“लेकिन चाहता हूँ कि मेरा दिल पूरी तरह मुतमईन हो जाये।”

وَلَكِنْ لِّيَطْمَئِنَّ قَلْبِي

यह तमाम अम्बिया-ए-किराम अलैहिस्सलाम का मामला है कि उन्हें अयनूल यक्रीन और हक्कुल यक्रीन के दर्जे का ईमान अता किया जाता है। उन्हें चूँकि ईमान और यक्रीन की एक ऐसी भट्टी (furnace) बनना होता है कि जिससे ईमान और यक्रीन दूसरों में सरायत करे, तो उनके ईमान व यक्रीन के लिये उनको ऐसे मुशाहदात करवा दिये जाते हैं कि ईमान उनके लिये सिर्फ़ ईमान बिलगैब नहीं रहता बल्कि वह ईमान बिलशहादा भी हो जाता है। सूरतुल अनआम में सराहत के साथ फ़रमाया गया है कि हमने इब्राहीम अलै० को आसमानों और ज़मीन के निज़ामे हुकूमत का मुशाहिदा कराया ताकि वह कामिल यक्रीन करने वालों में से हो जाये। मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ को शबे मेराज में आसमानों पर ले जाया गया कि वह हर शय को अपनी आँखों से देख लें। इन मुशाहदात से अम्बिया को उन ईमानी हक्काइक़ पर यक्रीन कामिल हो जाता है जिनकी वह लोगों को दावत देते हैं। गोया वह खुद ईमान और यक्रीन की एक भट्टी बन जाते हैं।

“फ़रमाया, अच्छा तो चार परिन्दे ले लो और उन्हें अपने साथ हिला लो”

قَالَ فَخُذْ أَرْبَعَةً مِّنَ الطَّيْرِ فَصُرْهُنَّ إِلَيْكَ

उन्हें अपने साथ इस तरह मानूस कर लो कि वह तुम्हारी आवाज़ सुन कर तुम्हारे पास आ जाया करें।”

“फिर उनके टुकड़े करके हर पहाड़ पर उनका एक-एक टुकड़ा रख दो”

ثُمَّ اجْعَلْ عَلَىٰ كُلِّ جَبَلٍ مِّنْهُنَّ جُزْأً

“फिर उनको पुकारो तो वह तुम्हारे पास दौड़ते हुए आयेंगे।”

ثُمَّ ادْعُهُنَّ يَأْتِينَكَ سَعْيًا

इसकी तफ़सील में आता है कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने चारों परिंदों के सर, धड़, टाँगें और उनके पर अलैहदा-अलैहदा किये। फिर एक पहाड़ पर चारों के सर, दूसरे पहाड़ पर चारों के धड़, तीसरे पहाड़ पर चारों की टाँगें और चौथे पहाड़ पर चारों के पर रख दिये। इस तरह उन्हें मुख्तलिफ़ अज्ज़ाअ

(हिस्सों) में तक्रसीम कर दिया। फिर उन्हें पुकारा तो उनके अज्ज़ाअ मुज्तमेअ (जमा) होकर चारों परिनंदें अपनी साबक़ा हैइयत (आकार) में ज़िन्दा होकर हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के पास दौड़ते हुए आ गये।

“और (इस बात को यक्कीन के साथ) जान लो
कि अल्लाह तआला ज़बरदस्त है, कमाले
हिकमत वाला है।”

आयात 261 से 273 तक

مَثَلُ الَّذِينَ يُنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ أَنْبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلٍ فِي
كُلِّ سُنْبُلَةٍ مِائَةٌ حَبَّةٌ وَاللَّهُ يُضَعِفُ لِمَنْ يَشَاءُ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ۝ الَّذِينَ يُنْفِقُونَ
أَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُونَ مَا أَنْفَقُوا مَتًّا وَلَا أَدَىٰ لَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ
رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ قَوْلٌ مَّعْرُوفٌ وَمَغْفِرَةٌ خَيْرٌ مِّنْ
صَّدَقَةٍ يَتَّبِعُهَا أَذَىٰ وَاللَّهُ غَنِيٌّ حَلِيمٌ ۝ يَأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تُبْطِلُوا صَدَقَاتِكُمْ
بِالْمَنِّ وَالْأَذَىٰ كَالَّذِينَ يُنْفِقُونَ مَالَهُ رِثَاءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ
فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ تُرَابٌ فَأَصَابَهُ وَابِلٌ فَتَرَكَهُ صَلْدًا لَا يَقْدِرُونَ عَلَىٰ شَيْءٍ
مِّمَّا كَسَبُوا وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ ۝ وَمَثَلُ الَّذِينَ يُنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ
ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ اللَّهِ وَتَغْيِيٓتًا مِّنْ أَنْفُسِهِمْ كَمَثَلِ حَبَّةٍ بَرَزَتْ أَصَابَهَا وَابِلٌ فَاتَتْ
أَكْلَهَا ضَعْفَيْنِ فَإِن لَّمْ يُصِبْهَا وَابِلٌ فَطُلَّ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝ أَيُّدُ أَحَدِكُمْ
أَنْ تَكُونَ لَهُ حَبَّةٌ مِّنْ تَحِيْلٍ وَأَعْنَابٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ لَهُ فِيهَا مِنْ كُلِّ
الثَّمَرَاتِ وَأَصَابَهُ الْكِبَرُ وَلَهُ ذُرِّيَّةٌ ضُعَفَاءُ فَأَصَابَهَا إِعْصَارٌ فِيهِ نَارٌ فَاحْتَرَقَتْ
كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمْ الْآيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ ۝ يَأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَنْفِقُوا مِنْ
طَيِّبَاتِ مَا كَسَبْتُمْ وَمِمَّا أَخْرَجْنَا لَكُمْ مِنَ الْأَرْضِ وَلَا تَيَمَّمُوا الْخَبِيثَ مِنْهُ تُنْفِقُونَ
وَلَسْتُمْ بِأَخْيَارٍ إِلَّا أَنْ تُغْنُوا فِيهِ ۖ وَاللَّهُ غَنِيٌّ حَمِيدٌ ۝ الشَّيْطَانُ يَعِدُكُمُ

الْفَقْرَ وَيَأْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَاءِ وَاللَّهُ يَعِدُكُمْ مَغْفِرَةً مِّنْهُ وَفَضْلًا ۖ وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ۝
يُؤْتِي الْحِكْمَةَ مَنْ يَشَاءُ وَمَنْ يُؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ أُوتِيَ خَيْرًا كَثِيرًا وَمَا يَذَّكَّرُ إِلَّا أُولُو
الْأَلْبَابِ ۝ وَمَا أَنْفَقْتُمْ مِنْ نَّفَقَةٍ أَوْ نَذَرْتُمْ مِنْ نَّذْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ يَعْلَمُهُ وَمَا لِلظَّالِمِينَ
مِنْ أَنْصَارٍ ۝ إِنْ تُبْدُوا الصَّدَقَاتِ فَنِعِمَّا هِيَ وَإِنْ تُخْفُوهَا وَتُؤْتُوهَا الْفُقَرَاءَ فَهُوَ
خَيْرٌ لَّكُمْ وَيُكَفِّرُ عَنْكُم مِّنْ سَيِّئَاتِكُمْ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ۝ لَيْسَ عَلَيْكُمْ
هُدُوبُهُمْ وَلَكِنَّ اللَّهَ يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ فَلَا تُنْفِسْكُمْ وَمَا تُنْفِقُونَ
إِلَّا ابْتِغَاءَ وَجْهِ اللَّهِ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ يُؤَفِّ إِلَيْكُمْ وَأَنْتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ۝ لِلْفَقَرَاءِ
الَّذِينَ أُحْصِرُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ لَا يَسْتَطِيعُونَ ضَرْبًا فِي الْأَرْضِ يَحْسَبُهُمُ الْجَاهِلُ
أَغْنِيَاءَ مِنَ التَّعَفُّفِ تَعْرِفُهُمْ بِسَبْطِهِمْ لَا يَسْأَلُونَ النَّاسَ إِلْحَافًا وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ
خَيْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ بِهِ عَلِيمٌ ۝

अब जो दो रुकूअ आ रहे हैं, इनका मौजू इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह है, और इस मौजू पर ये कुरान मजीद का ज़रवा-ए-सनाम (climax) है। इनके मुताअले से पहले यह बात नोट कर लीजिये कि अल्लाह तआला की रज़ा जोई के लिये अपना माल खर्च करने के लिये दीन में कई इस्तलाहात हैं। सबसे पहली “إِطْعَامُ الطَّعَامِ” (खाना खिलाना) है: {وَيُطْعَمُونَ الطَّعَامَ عَلَىٰ حُبِّهِ مِسْكِينًا وَيَتِيمًا وَأَسِيرًا} (अद दहर:8) दूसरी इस्तलाह ईताये माल है: (सूरतुल बक्ररह:177) {وَأَتَى الْمَالَ عَلَىٰ حُبِّهِ ذَوِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسْكِينُ وَابْنُ السَّبِيلِ} फिर इससे आगे सदक़ा, ज़कात, इन्फ़ाक़ और कर्ज़े हस्ना जैसी इस्तलाहात आती हैं। ये पाँच-छः इस्तलाहात (terms) हैं, लेकिन इनके अन्दर एक तक्रसीम ज़हन में रखिये। अल्लाह तआला की रज़ा जोई के लिये माल खर्च करने की दो बड़ी-बड़ी मदें हैं। एक मद अब्राये नौ पर खर्च करने की है। यानि क़राबतदार, गुरबा, यतामा, मसाकीन, मोहताज और बेवाओं पर खर्च करना। यह आपके मआशरे के अज्ज़ाअ (हिस्से) हैं, आपके भाई-बन्द हैं, आपके अज़ीज़ व अकरबाअ हैं। इनके लिये खर्च करना भी अल्लाह तआला को बहुत पसंद है और इसका

अजर मिलेगा। यह भी गोया आपने अल्लाह तआला ही के लिये खर्च किया। जबकि दूसरी मद है ऐन अल्लाह के दीन के लिये खर्च करना।

कुरान हकीम में इन्फ़ाक़ और क़र्ज़े हस्ना की इस्तलाहें इस दूसरी मद के लिये आती हैं और पहली मद के लिये इतआमुल तआम, ईताये माल, सदक़ा व ख़ैरात और ज़कात की इस्तलाहात हैं। चुनाँचे इन्फ़ाक़े माल या इन्फ़ाक़े फ़ी सबीलिल्लाह से मुराद है अल्लाह की राह में खर्च करना, अल्लाह के दीन की दावत को आम करने और अल्लाह की किताब के पैग़ाम को आम करने के लिये खर्च करना। अल्लाह के दीन की दावत को इस तरह उभारना कि बातिल के साथ ज़ोर आज़माई करने वाली एक ताक़त पैदा हो जाये, एक जमाअत वुजूद में आये। इस जमाअत के लिये साज़ो-सामान फ़राहम करना ताकि ग़लबा-ए-दीन के हर मरहले के जो तक्राज़े और ज़रूरतें हैं वह पूरी हो सकें, इस काम में जो माल सर्फ़ (खर्च) होगा वह है इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह या अल्लाह के ज़िम्मे क़र्ज़े हस्ना। तो यहाँ असल में इस इन्फ़ाक़ की बात हो रही है। आम तौर पर फ़ी सबीलिल्लाह का मफ़हूम बहुत आम समझ लिया जाता है और पानी की कोई “सबील (प्याऊ)” बना कर उसे भी “फ़ी सबीलिल्लाह” करार दे दिया जाता है। ठीक है, वह भी सबील तो है, नेकी का वह भी रास्ता है, सबील अल्लाह है, लेकिन “इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह” का मफ़हूम बिल्कुल और है। फ़ुकरा व मसाकीन और अहले हाजत के लिये सदक़ात व ख़ैरात हैं। ज़कात भी असलन गरीबों का हक़ है, लेकिन उसमें भी एक मद “फ़ी सबीलिल्लाह” की रखी गयी है। अगर आपके अज़ीज़ व अक्रारब और कुर्ब व जवार में अहले हाजत हैं, ग़ुरबा हैं तो सदक़ा व ज़कात में उनका हक़ फ़ाइज़ है, पहले उनको दीजिये। इसके बाद उसमें से जो भी है वह दीन के काम के लिये लगाइये। जब दीन यतीमी की हालत को आ गया हो तो सबसे बड़ा यतीम दीन है। और आज वाक़िअतन दीन की यही हालत है। अब हम इन आयात का मुताअला करते हैं:

आयत 261

“मिसाल उनकी जो अपने माल अल्लाह की राह में (अल्लाह के दीन के लिये) खर्च करते हैं ऐसे हैं जैसे एक दाना कि उससे सात

مَثَلُ الَّذِي يَنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ أَنْبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلٍ فِي كُلِّ

वालियाँ (खोशे) पैदा हों और हर बाली में सौ दाने हों।”

سُبُلَةٍ مِّمَّا تُؤْتِي حَبَّةً

इस तरह एक दाने से सात सौ दाने वजूद में आ गये। यह उस इज़ाफ़े की मिसाल है जो अल्लाह की राह में खर्च किये हुए माल के अज़्रो सवाब में होगा। जो कोई भी अल्लाह के दीन के लिये अपना माल खर्च करेगा अल्लाह तआला उसके माल में इज़ाफ़ा करेगा, उसको जज़ा देगा और अपने यहाँ उस अज़्रो सवाब को बढ़ाता रहेगा।

“अल्लाह जिसको चाहता है अफ़ज़ोनी (वृद्धि) अता फ़रमाता है।”

وَاللَّهُ يُضِعِفُ لِمَنْ يَشَاءُ

ये सात सौ गुना इज़ाफ़ा तो तुम्हें तम्सीलन बताया है, अल्लाह इससे भी ज़्यादा इज़ाफ़ा करेगा जिसके लिये चाहेगा। सिर्फ़ सात सौ गुना नहीं, और भी जितना चाहेगा बढ़ाता चला जायेगा।

“और अल्लाह बड़ी वुसअत वाला और सब कुछ जानने वाला है।”

وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ

उसके खज़ानों में कोई कमी नहीं और उसका इल्म हर शय को मुहीत है।

आयत 262

“जो लोग अपने माल खर्च करते हैं अल्लाह की राह में”

الَّذِينَ يُنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ

“फिर जो कुछ वह खर्च करते हैं उसके बाद ना तो अहसान जताते हैं और ना तकलीफ़ पहुँचाते हैं”

ثُمَّ لَا يُنَبِّئُونَ مَآ أَنْفَقُوا مَنًّا وَلَا أَذًى

उनका तर्ज़े अमल यह नहीं होता कि देखिये जी, मैंने उस वक़््त इतना चंदा दिया था, मालूम हुआ कि मेरा हक़ ज़्यादा है, हम चंदे ज़्यादा देते हैं तो फिर बात भी तो हमारी मानी जानी चाहिये! या अगर कोई शख्स अल्लाह के दीन के काम में लगा हुआ है और आप उसके साथ तआवुन कर रहे हैं ताकि वह फ़िक़्रे मआश से आज़ाद होकर अपना पूरा वक़््त दीन की ख़िदमत में लगाये, लेकिन अगर कहीं आपने उसको जता भी दिया, उस पर अहसान भी रख

दिया, कोई तकलीफ़देह कलमा भी कह दिया, कोई दिल आज़ारी की बात कह दी तो आपका जो अज़्रो सवाब था वह सिफ़र (ज़ीरो) हो जायेगा।

“उनका अज़्र उनके रब के पास महफूज़ है। और ना तो उनके लिये कोई खौफ़ होगा और ना ही वह किसी रन्ज व ग़म से दो चार होंगे।”

لَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٣٠﴾

आयत 263

“भली बात कहना और दरगुज़र करना”

قَوْلٌ مَّعْرُوفٌ وَمَغْفِرَةٌ

“बेहतर है उस ख़ैरात से जिसके बाद अज़ियत पहुँचाई जाये।”

خَيْرٌ مِّنْ صَّدَقَةٍ يَّتْبِعُهَا آذَى

अगर आपके पास कोई ज़रूरतमंद आ गया है, किसी ने हाथ फैला दिया है तो अगर आप उसकी मदद नहीं कर सकते तो दिलदारी का एक कलमा कह दीजिये, नरमी के साथ जवाब दे दीजिये, मआज़रत कर लीजिये। या अगर किसी साइल ने आपके साथ दरशत (भद्दा) रवैय्या इख़्तियार किया है तो फिर भी उसे डाँटीये नहीं: {وَأَلَّا السَّائِلَ فَلَا تَنْهَى} (अददुहा:10) बल्कि दरगुज़र से काम लीजिये। ये तर्ज़े अमल उससे कहीं बेहतर है कि ज़रूरतमंद को कुछ दे तो दिया लेकिन उसके बाद उसे दो-चार जुम्ले भी सुना दिये, उसकी दिल आज़ारी भी कर दी। तो उसका कोई फ़ायदा नहीं होगा।

“अल्लाह तआला गनी है और हलीम है।”

وَاللَّهُ غَنِيٌّ حَلِيمٌ ﴿٣١﴾

वह बेनियाज़ भी है और बुर्दबार भी। अगर तुम किसी को कुछ दे रहे हो तो असल में अल्लाह को दे रहे हो। इस ज़िमन में एक हदीसे कुदसी में बड़ी वज़ाहत आयी है। हज़रत अबु हुरैरा रज़ि० रिवायत करते हैं कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

“क्रयामत के दिन अल्लाह अज़्ज व जल्ल फ़रमाएगा: ऐ आदम के बेटे! मैं बीमार हुआ तूने मेरी तीमारदारी नहीं की। वह कहेगा: ऐ परवरदिगार! मैं तेरी तीमारदारी कैसे करता जबकि तू रब्बुल

आलामीन है? अल्लाह तआला फ़रमाएगा: क्या तू नहीं जानता कि मेरा फ़लां बंदा बीमार हुआ और तूने उसकी तीमारदारी नहीं की? क्या तू नहीं जानता कि अगर तू उसकी तीमारदारी करता तो मुझे उसके पास मौजूद पाता! ऐ आदम के बेटे मैंने तुझसे खाना माँगा था, तूने मुझे खाना नहीं खिलाया। वह कहेगा: ऐ मेरे रब! मैं तुझको खाना कैसे खिलाता जबकि तू रब्बुल आलामीन है? अल्लाह तआला फ़रमाएगा: क्या तू नहीं जानता कि तुझसे मेरे फ़लां बन्दे ने खाना माँगा था, तूने उसको खाना नहीं खिलाया? क्या तू नहीं जानता कि अगर तू उसे खाना खिलाता तो उस खाने को मेरे पास मौजूद पाता! ऐ आदम के बेटे! मैंने तुझसे पानी माँगा था, तूने मुझे पानी नहीं पिलाया। वह कहेगा: परवरदिगार! मैं तुझको कैसे पानी पिलाता जबकि तू तो रब्बुल आलामीन है? अल्लाह तआला फ़रमाएगा: तुझसे मेरे फ़लां बन्दे ने पानी माँगा था, तूने उसको पानी नहीं पिलाया था, क्या ऐसा नहीं है कि अगर तू उसको पानी पिला देता तो अपने उस अमल को मेरे पास मौजूद पाता!”(34)

चुनाँचे याद रखो कि जो कुछ तुम किसी ज़रूरतमन्द को दे रहे हो वह दरहक्रीकत अल्लाह को दे रहे हो, जो गनी है, जिसने तुम्हें सब कुछ अता किया है। और तुम्हारे तर्ज़े अमल के बावजूद भी अगर वह तुमसे दरगुज़र कर रहा है तो उसकी वजह यह है कि वह हलीम है, बुर्दबार है। अगर तुम अपने दिल से उतरी हुई शय अल्लाह के नाम पर देते हो, कोई बेकार और रद्दी चीज़ अल्लाह के नाम पर दे देते हो तो अल्लाह तआला की गैरत अगर उसी वक़्त जोश में आ जाये तो तुम्हें हर नेअमत से महरूम कर दे। वह चाहे तो ऐसा कर सकता है, लेकिन नहीं करता, इसलिये कि वह हलीम है।

आयत 264

“ऐ अहले ईमान! अपने सदक़ात को बातिल ना कर लो अहसान जतला कर और कोई अज़ीयत बख़्श बात कह कर”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَبْطُلُوا صَدَقَاتِكُمْ
بِالْبَيْنِ وَالْأَذَى

“उस शख्स की तरह जो अपना माल खर्च करता है लोगों को दिखाने के लिये”

كَالَّذِي يُنْفِقُ مَالَهُ رِثَاءَ النَّاسِ

अगरचे अपना माल खर्च कर रहा है, लोगों को सद्कात दे रहा है, बड़े-बड़े खैराती इदारे क़ायम कर दिये हैं, लेकिन यह सब कुछ रियाकारी के लिये, सरकार दरबार में रसाई के लिये, कुछ अपने टैक्स बचाने के लिये और कुछ अपनी नामवरी के लिये है। यह सारे काम जो होते हैं अल्लाह जानता है कि इनमें किसकी कियानियत है।

“और वह ईमान नहीं रखता अल्लाह और
وَلَا يُؤْمِنُ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ
यौमे आखिरत पर।”

जो कोई रियाकारी कर रहा है वह हकीकत में अल्लाह पर और यौमे आखिरत पर ईमान नहीं रखता। रिया और ईमान एक-दूसरे की ज़िद हैं, जैसा कि यह हदीस हम मुतअहिद पढ़ चुके हैं:

مَنْ صَلَّى يُرَائِيَ فَقَدْ أَشْرَكَ وَمَنْ صَامَ يُرَائِيَ فَقَدْ أَشْرَكَ وَمَنْ تَصَدَّقَ يُرَائِيَ فَقَدْ أَشْرَكَ
“जिसने दिखावे के लिये नमाज़ पढ़ी उसने शिर्क किया, जिसने दिखावे के लिये रोज़ा रखा उसने शिर्क किया और जिसने दिखावे के लिये लोगों को सद्का व खैरात दिया उसने शिर्क किया।” (35)

“तो उसकी मिसाल उस चट्टान की सी है जिस
فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ صَفْوَانَ عَلَيْهِ رُءُوبٌ
पर कुछ मिट्टी (जम गई) हो”

अगर किस चट्टान पर मिट्टी की थोड़ी सी तह जम गई हो और वहाँ आपने कुछ बीज डाल दिये हों तो हो सकता है कि वहाँ कोई फसल भी उग आये, लेकिन वह इन्तहाई नापायदार होगी।

“फिर उस पर ज़ोरदार बारिश पड़े तो वह
فَأَصَابَهُ وَايِلٌ فَتَرَكَ صَلْدًا
उसको बिल्कुल साफ़ पत्थर छोड़ दे।”

बारिश के एक ही ज़ोरदार छिटि में चट्टान के ऊपर जमी हुई मिट्टी की तह भी बह गई, आपकी मेहनत भी ज़ाया हो गई, आपका बीज भी अकारत (व्यर्थ) गया और आपकी फ़सल भी गई। बारिश से धुल कर वह चट्टान अन्दर से बिल्कुल साफ़ और चटियल निकल आई। यानि सब कुछ गया और कुछ हासिल ना हुआ। इसका मतलब यह है कि रियाकारी का यही अंजाम होता है कि हाथ से माल भी दिया और हासिल कुछ ना हुआ। अल्लाह के यहाँ किसी अज़्रो सवाब का सवाल ही नहीं।

“उनकी कमाई में से कुछ भी उनके हाथ नहीं
لَا يَقْدِرُونَ عَلَى شَيْءٍ مِّمَّا كَسَبُوا
आयेगा।”

ऐसे लोग अपने तै सद्का व खैरात करके जो नेकी कमाते हैं उसमें से कुछ भी उनके हाथ नहीं आता।

“और अल्लाह तआला ऐसे काफ़िरो को
وَاللَّهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ ①
राहयाब नहीं करता।”

वह नाशुक्रों और मुन्करीने नेअमत को सीधी राह नहीं दिखाता और उन्हें बामुराद नहीं करता।

अगली आयत में फौरी ताक़बुल (simultaneous contrast) के तौर पर उन लोगों के लिये भी मिसाल बयान की जा रही है जो वाक़िअतन अल्लाह तआला से अज़्रो सवाब की उम्मीद रखते हुए खुलूस व इख़लास से खर्च करते हैं।

आयत 265

“और मिसाल उन लोगों की जो खर्च करते हैं
وَمَثَلُ الَّذِينَ يُنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ ابْتِغَاءَ
अपने माल अल्लाह की रज़ाजोई के लिये”
مَرْضَاتِ اللَّهِ

“और अपने दिलों को जमाये रखने के लिये”
وَتُغْنِيَنَّهُمْ أَنْفُسُهُمْ

“उस बाग़ की मानिंद है जो बुलंदी पर वाक़ेअ
كَمَثَلِ جَنَّةٍ بِرَبْوَةٍ
हो”

जैसा कि मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि कुदरती बाग़ का यही तसव्वुर होता था कि ज़रा ऊँचाई पर वाक़ेअ है, उसके दामन में कोई नदी बह रही है जिससे खुद-ब-खुद आब पाशी हो रही है और वह सेराब हो रहा है।

[कादयानियों ने इसी लफ़्ज़ “رَبْوَةٍ” के नाम पर पाकिस्तान में अपना शहर बनाया।]

“अब अगर उस बाग़ के ऊपर ज़ोरदार बारिश
أَصَابَهَا وَايِلٌ
बरसे”

“तो दोगुना फ़ल लाये।”

فَأَتَتْ أَكْثَرَهُمْ ضِعْفَيْنِ

“और अगर ज़ोरदार बारिश ना भी बरसे तो हल्की सी फुहार (ही उसके लिये काफी हो जाये)।”

فَإِنْ لَّمْ يُمْصِبْهَا وَابِلٌ فَطَلٌّ

“और जो कुछ तुम कर रहे हो, अल्लाह तआला उसको देख रहा है।”

وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ۝

लिहाज़ा तुम दरुं बीनी (intro spection) करते रहा करो कि तुम जो यह माल खर्च कर रहे हो वाकिअतन खुलूसे दिल और इख्लासे नीयत के साथ अल्लाह ही के लिये कर रहे हो। कहीं गैर-शऊरी तौर पर तुम्हारा कोई और ज़बा इसमें शामिल ना हो जाये। चुनाँचे अपने गिरेबानों में झाँकते रहो।

आयत 266

“क्या तुममें से कोई कोई यह पसंद करेगा कि उसके पास खजूरों और अंगूरों का एक बाग़ हो, जिसके दामन में नदियाँ बहती हों”

أَيُّدُ أَحَدِكُمْ أَنْ تَكُونَ لَهُ جَنَّةٌ مِّنْ نَّجِيلٍ
وَأَعْنَابٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ

अहले अरब के नज़दीक यह एक आईडियल बाग़ का नक्शा है, जिसमें खजूर के दरख़्त भी हो और अंगूरों की बेलें भी हो, फिर उसमें आबपाशी का कुदरती इंतज़ाम हो।

“उसके लिये उस बाग़ में हर तरह के फ़ल हों”

لَهُ فِيهَا مِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ

“और उस पर बुढ़ापा तारी हो जाये जबकि उसकी औलाद भी नातवां (कमज़ोर) हो।”

وَأَصَابَهُ الْكِبَرُ وَلَهُ ذُرِّيَّةٌ ضُعَفَاءُ

“और ऐन उस वक़्त उस बाग़ पर एक ऐसा बगुला फिर जाये जिसमें आग हो और वह बाग़ झुलस कर रह जाये?”

فَأَصَابَهَا إِعْصَارٌ فِيهِ نَارٌ فَاحْتَرَقَتْ

यानि एक इन्सान सारी उम्र यह समझता रहा कि मैंने तो नेकियों के अम्बार लगाये हैं, मैंने खैराती इदारे क़ायम किये, मैंने फाउंडेशन बनाई, मैंने मदरसा

क़ायम किया, मैंने यतीमखाना बना दिया, लेकिन जब उसका नामाये आमाल पेश होगा तो अचानक उसे मालूम होगा कि यह तो कुछ भी ना था। “जब आँख खुली गुल की तो मौसम था खज़ा का!” बस बादे मौसम का एक बगुला आया और सब कुछ जला गया। इसलिये कि उसमें इख्लास था ही नहीं, नीयत में खोट था, उसमें रियाकारी थी, लोगों को दिखाना मक़सूद था। फिर उसका हाल वही होगा जिस तरह कि वह बूढ़ा अब कफ़े अफ़सोस (अफ़सोस में हाथ) मल रहा है जिसका बाग़ जल कर खाक हो गया और उसके कमसिन बच्चे अभी किसी लायक़ नहीं। वह खुद बूढ़ा हो चुका है और अब दोबारा बाग़ नहीं लगा सकता। उस शख्स की मोहलते उम्र भी ख़त्म हो चुकी होगी और सिवाय कफ़े अफ़सोस मलने के उसके पास कोई चारा ना होगा।

“इस तरह अल्लाह तआला अपनी आयात तुम्हारे लिये बाज़ेह करता है ताकि तुम ग़ौर-ओ-फ़िक्र करो।”

كَذَلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ لَكُمُ الْآيَاتِ لَعَلَّكُمْ
تَتَفَكَّرُونَ ۝

आयत 267

“ऐ ईमान वालो! अपने कमाये हुए पाकीज़ा माल में से खर्च करो।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا انْفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاكُمْ
مِمَّا كَسَبْتُمْ

अल्लाह के दीन के लिये खर्च करना है, अल्लाह के नाम पर देना है तो जो कुछ तुमने कमाया है उसमें से अच्छी चीज़, पाकीज़ा चीज़, बेहतर चीज़ निकालो।

“और उसमें से खर्च करो जो कुछ हमने निकाला है तुम्हारे लिये ज़मीन से।”

وَمِمَّا أَخْرَجْنَا لَكُمْ مِنَ الْأَرْضِ

ज़ाहिर बात है कि ज़मीन से जो भी नबातात बाहर आ रही हैं उनका पैदा करने वाला अल्लाह है। चाहे कोई चरागाह है तो उसके अन्दर जो हरियावल है वह अल्लाह ही ने पैदा की है। खेत के अन्दर आपने मेहनत की है, हल चलाया है, बीज डाले हैं, लेकिन फ़सल का उगाना तो आपके इख़्तियार में नहीं है, यह तो अल्लाह के हाथ में है। “पालता है बीज को मिट्टी की तारीकी

में कौन?" चुनाँचे फ़रमाया कि जो कुछ हमने तुम्हारे लिये ज़मीन से निकाला है उसमें से हमारी राह में खर्च करो!

"और उसमें से रद्दी माल का इरादा ना करो
कि उसे खर्च कर दो!"

وَلَا تَبْذُرُوا الْخَيْثَ مِنْهُ تَنْفِقُونَ

ऐसा ना हो कि अल्लाह की राह में खर्च करने के लिये रद्दी और नाकारा माल छाँटने की कोशिश करने लगो। मसलन भेड़-बकरियों का गल्ला है, उसमें से तुम्हें ज़कात के लिये भेड़ें और बकरियाँ निकालनी हैं तो ऐसा हरगिज़ ना हो कि जो कमज़ोर हैं, ज़रा लागर (दुर्बल) हैं, बीमार हैं, नुक्स वाली हैं उन्हें निकाल कर गिनती पूरी कर दो। इसी तरह उश्र निकालना है तो ऐसा ना करो कि गन्दुम के जिस हिस्से पर बारिश पड़ गई थी वह निकाल दो। तयम्मुम के मायने क़सद (नीयत) और इरादा करने के हैं।

"और तुम हरगिज़ नहीं होगे उसको लेने वाले
(अगर वह शय तुमको दी जाये) इल्ला यह कि चश्मपोशी कर जाओ।"

وَلَسْتُمْ بِأَخْذِيهِ إِلَّا أَنْ تُغِطُوا فِيهِ

ऐसा भी तो हो सकता है कि तुम मोहताज हो जाओ और तुम्हें ज़रूरत पड़ जाये, फिर अगर तुम्हें कोई ऐसी चीज़ देगा तो तुम कुबूल नहीं करोगे, इल्ला यह कि चश्मपोशी (अनदेखा) करने पर मजबूर हो जाओ। एहतियाज उस दर्जे की हो कि नफ़ीस या खबीस जो शय भी मिल जाये चश्मपोशी करते हुए उसे कुबूल कर लो। वरना आदमी अपने तय्बे खातिर के साथ रद्दी शय कुबूल नहीं कर सकता।

"और खूब जान रखो कि अल्लाह तआला गनी
है और हमीद है।"

وَأَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ غَنِيٌّ حَمِيدٌ

यहाँ "गनी" का लफ़्ज़ दोबारा आया है। यह ना समझो कि तुम किसी मोहताज और ज़रूरतमन्द को दे रहे हो, बल्कि यूँ समझो कि अल्लाह को दे रहे हो, जो गनी है, सबकी ज़रूरतें पूरी करने वाला है और हमीद है, यानि अपनी ज़ात में खुद महमूद है। एक तो किसी शय की अच्छाई या हुस्न या कमाल ऐसा होता है कि जिसे ज़ाहिर किया जाये कि भई देखो इसमें यह खूबसूरती है। और एक वह खूबसूरती होती है जो अज़ खुद ज़ाहिर हो। "हाजते मुशाता नीस्त रूए दिल आराम रा!" तो अल्लाह तआला इतना

सतूदाह सिफ़ात (तारीफ़ के क़ाबिल) है कि वह अपनी ज़ात में अज़ खुद महमूद है, उसे किसी हम्द की हाजत नहीं है।

आयत 268

"शैतान तुम्हें फ़क्र का अन्देशा दिलाता है और
बेहयाई के कामों की तरगीब देता है।"

الشَّيْطَانُ يَعِدُكُمُ الْفَقْرَ وَيَأْمُرُكُمْ
بِالْفَحْشَاءِ

"और अल्लाह वादा कर रहा है तुमसे अपनी
तरफ़ से मग़फ़िरत का और फ़ज़ल का।"

وَاللَّهُ يَعِدُكُمْ مَغْفِرَةً مِنْهُ وَفَضْلًا

अब देख लो तुम्हें कौनसा तर्ज़े अमल इख़्तियार करना है:

रुख-ए-रोशन के आगे शमा रख कर वह यह कहते हैं

उधर जाता है देखें या इधर परवाना आता है!

शैतान तुम्हें अल्लाह की राह में खर्च करने से रोकता है कि इस तरह तुम्हारा माल कम हो जायेगा और तुम फ़क्रो फ़ाक्रा में मुब्तला हो जाओगे। अब अगर वाकई तुम यह खौफ़ रखते हो कि कहीं ऐसा ना हो कि मुझ पर फ़क्र आ जाये, लिहाज़ा मुझे अपना माल सम्भाल-सम्भाल कर, सेंट-सेंट कर रखना चाहिये तो तुम शैतान के जाल में फँस चुके हो, तुम उसकी पैरवी कर रहे हो। और अगर तुमने अपना माल अल्लाह की राह में खर्च कर दिया अल्लाह पर ऐतमाद करते हुए कि वह मेरी सारी हाजतें आज भी पूरी कर रहा है, कल भी पूरी करेगा (इश्शा अल्लाह) तो अल्लाह की तरफ़ से मग़फ़िरत और फ़ज़ल का वादा पूरा होकर रहेगा।

"और अल्लाह बहुत वुसअत वाला है, सब
कुछ जानने वाला है।"

وَاللَّهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ

तुम उसके खज़ानों की महदूदियत का कोई तसव्वुर अपने ज़हन में ना रखो।

आयत 269

"वह जिसको चाहता है हिकमत अता करता
है।"

يُؤْتِي الْحِكْمَةَ مَنْ يَشَاءُ

ये हिकमत की बातें हैं, जिनका समझना हर किस व नाकिस के लिये मुमकिन नहीं। एक चीज़ों का ज़ाहिर है और एक बातिन है, जो हिकमत से नज़र आता है। ज़ाहिर तो सबको नज़र आ रहा है, लेकिन किसी शय की हकीकत क्या है, यह बहुत कम लोगों को मालूम है:

ऐ अहले नज़र! ज़ोके नज़र खूब है लेकिन

जो शय की हकीकत को ना देखे वह नज़र क्या?

जिस किसी पर यह हकीकत अयाँ (उजागर) हो जाती है वह हकीम है। और हिकमत असल में इन्सान की अक़ल और शऊर की पुख्तगी का नाम है। इस्तेहकाम इसी “हिकमत” से ही बना है। अल्लाह तआला अक़ल व फ़हम और शऊर की यह पुख्तगी और हक्काइक तक पहुँच जाने की सलाहियत जिसको चाहता है अता फ़रमाता है।

“और जिसे हिकमत दे दी गयी उसे तो खैरे
कसीर अता हो गया।” وَمَنْ يُؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ أُوتِيَ خَيْرًا كَثِيرًا ۚ لَا يَأْتِيهِ الْقِسْيرُ

इससे बड़ा खैर का खज़ाना तो और कोई है ही नहीं।

“और नहीं नसीहत हासिल कर सकते मगर
वही लोग जो होशमंद हैं।” وَمَا يَذْكُرُ إِلَّا أَهْلُ الْاَلْبَابِ ۖ

इन बातों से सिर्फ़ वही लोग सबक लेते हैं जो ऊलुल अल्बाब हैं, अक़लमंद हैं। लेकिन जो दुनिया पर रीझ गये हैं, जिनका सारा दिली इत्मिनान अपने माल व ज़र, जायदाद, असासाजात (संपत्ति) और बैंक बैलेंस पर है तो ज़ाहिर बात है कि वह ऊलुल अल्बाब (अक़लमंद) नहीं हैं।

आयत 270

“और जो कुछ भी तुम खर्च करते हो (सदका व खैरात देते हो) या जो भी तुम (अल्लाह के नाम पर) मन्नत मानते हो, तो यक़ीनन अल्लाह तआला उस सबको जानता है।” وَمَا أَنْفَقْتُمْ مِنْ نَفَقَةٍ أَوْ نَذَرْتُمْ مِنْ نَذْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ يَعْلَمُهَا

“और (याद रखो कि) ज़ालिमों का कोई मददगार नहीं होगा।” وَمَا لِلظّالِمِينَ مِنْ أَنْصَارٍ ۖ

आयत 271

“अगर तुम सदकात को ऐलानिया दो तो यह भी अच्छा है।” إِنْ تُبْدُوا الصَّدَقَاتِ فَيَعْبَاهُمْ

खासतौर पर ज़कात का मामला तो ऐलानिया ही है। तो अगर तुम अपने सदकात ज़ाहिर करके दो तो यह भी ठीक है। इसलिये कि कम से कम फुकरा का हक तो अदा हो गया, किसी की ज़रूरत को पूरी हो गई।

“और अगर तुम उन्हें छुपाओ और चुपके से ज़रूरतमंदों को दे दो तो यह तुम्हारे लिये बेहतर है।” وَإِنْ تُخْفُوهَا وَتُؤْتُوهَا الْفُقَرَاءَ فَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ

याद रहे कि यह बात सदकाते नाफ़िला के लिये है। लेकिन जो सदकाते वाजिबा हैं, जो लाज़िमन देने हैं, ज़कात और उश्र, उनके लिये अख़फ़ा नहीं है। यह दीन की हिकमत है, इसको ज़हन में रखिये कि फ़र्ज़ इबादात ऐलानिया अदा की जायेंगी। यह वस्वसा भी शैतान बहुत सों के दिलों में डाल देता है कि क्या पाँच वक़्त मस्जिद में जाकर नमाज़ पढ़ने से लोगों पर अपने तक़वे का रौब डालना चाहते हो? घर में पढ़ लिया करो! या दाढ़ी इसलिये रखोगे कि लोग तुम्हें समझें कि बड़ा मुत्तक़ी है? ऐसे वसावसे शैतानी को कोई अहमियत नहीं देनी चाहिये और जो चीज़ फ़र्ज़ व वाजिब है, वह अलल ऐलान करनी चाहिये, उसके इज़हार में कोई रुकावट नहीं आनी चाहिये। हाँ जो नफ़ली इबादात हैं, सदकाते नाफ़िला हैं या नफ़ल नमाज़ है उसे छुपा कर करना चाहिये। नफ़ल इबादात का इज़हार बहुत बड़ा फ़ितना है। लिहाज़ा फ़रमाया कि अगर तुम अपने सदकात छुपा कर चुपके से ज़रूरतमंदों को दे दो तो वह तुम्हारे लिये बहुत बेहतर है।

“और अल्लाह तआला तुमसे तुम्हारी बुराईयों को दूर कर देगा।” وَيُكَفِّرْ عَنْكُمْ مِنْ سَيِّئَاتِكُمْ

“और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह तआला उससे बाख़बर है।” وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ۖ

आयत 272

“(ऐ नबी ﷺ!) आपके ज़िम्मे नहीं है कि

لَيْسَ عَلَيْكَ هُدَاهُمْ

उनको हिदायत दे दें”

उनको हिदायत देने की ज़िम्मेदारी आप पर नहीं है, आप صلی اللہ علیہ وسلم पर ज़िम्मेदारी तब्लीग की है। हमने आपको बशीर और नज़ीर बना कर भेजा है।

“बल्कि अल्लाह तआला ही हिदायत देता है
وَلَكِنَّ اللَّهَ يَهْدِي مَنْ يَشَاءُ
जिसको चाहता है।”

“और जो भी माल तुम खर्च करोगे वह तुम्हारे
وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ فَلَا تُفْسِدُكُمْ
अपने लिये बेहतर है।”

उसका अज़्रो सवाब बढ़ा-चढ़ा कर तुम्ही को दिया जायेगा, सात सौ गुना, चौदह सौ गुना या उससे भी ज़्यादा।

“और तुम नहीं खर्च करोगे मगर अल्लाह की
وَمَا تُنْفِقُونَ إِلَّا ابْتِغَاءَ وَجْهِ اللَّهِ
रज़ाजोई के लिये।”

तभी तुम्हें इस क़दर अज़्र मिलेगा। अगर रियाकाराना खर्च किया था तो अज़्र का क्या सवाल? वह तो शिर्क बन जायेगा।

“और जो भी माल तुम खर्च करोगे वह पूरा-
وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ يُؤَفِّ إِلَيْكُمْ وَأَنْتُمْ لَا
पूरा तुम्हें लौटा दिया जायेगा और तुम पर
تُظَلَّمُونَ ۝
कोई जुल्म नहीं होगा।”

तुम्हारी ज़रा भी हक़ तल्फी नहीं की जायेगी।

अब वाज़ेह किया जा रहा है कि इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह का सबसे बड़ कर हक़दार कौन है।

आयत 273

“यह उन ज़रूरतमंदों के लिये है जो घिर कर
لِلْفُقَرَاءِ الَّذِينَ أُحْصِرُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ
रह गये हैं अल्लाह की राह में”

जैसे रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم के दौर में असहाबे सुफ़्फ़ा थे कि मस्जिदे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم में आकर बैठे हुए हैं और अपना वक़्त तलाशे मआश में सर्फ़ नहीं कर रहे, आँहुज़ूर صلی اللہ علیہ وسلم से इल्म सीख रहे हैं और जहाँ-जहाँ से मुतालबा आ रहा है कि मुअल्लिमीन और मुबल्लिगीन की ज़रूरत है वहाँ उनको भेजा जा रहा है।

अगर वह मआश की जद्दो-जहद करते तो यह तालीम कैसे हासिल करते? इसी तरह दीन की किसी ख़िदमत के लिये कुछ लोग अपने आप को वक़फ़ कर देते हैं तो वह उसका मिस्दाक़ होंगे। आपने दीन की दावतो तब्लीग और नशरो इशाअत के लिये कोई तहरीक उठायी है तो उसमें कुछ ना कुछ हमावक़ती कारकुन (हर वक़्त तैयार रहने वाले कार्यकर्ता) दरकार होंगे। उन कारकुनों की मआश का मसला होगा। वह आठ-आठ घंटे दफ़्तरों में जाकर काम करें और वहाँ अफसरों की डाँट-डपट भी सुनें, आने-जाने में भी दो-दो घंटे लगायें तो अब वह दीन के काम के लिये कौनसा वक़्त निकालेंगे और क्या काम करेंगे? लिहाज़ा कुछ लोग तो होने चाहिये जो इस काम में हमावक़त लग जायें। लेकिन पेट तो उनके साथ भी हैं, औलाद तो उनकी भी होगी।

“वह (अपने कसब मआश के लिये) ज़मीन में
لَا يَسْتَطِيعُونَ صَرْفًا فِي الْأَرْضِ
दौड़-धूप नहीं कर सकते।”

ज़मीन के अन्दर घूम-फिर कर तिजारत करने का उनके पास वक़्त ही नहीं है।

“नावाक़िफ़ आदमी उनको खुशहाल ख्याल
يَحْسَبُهُمُ الْجَاهِلُ أَغْنِيَاءَ مِنَ التَّعَفُّفِ
करता है उनकी खुदारी के सबवा”

यह इस तरह के फ़क़ीर तो हैं नहीं जो लिपट कर माँगते हों। उनकी खुदारी की वजह से आम तौर पर जो नावाक़िफ़ शख्स है वह समझता है कि यह ग़नी हैं, खुशहाल हैं, इन्हें कोई ज़रूरत ही नहीं, इन्होंने कभी माँगा ही नहीं। लेकिन इसकी वजह यह है कि वह इस तरह के सवाली नहीं हैं, वह फ़क़ीर नहीं हैं, उन्होंने तो अल्लाह तआला के दीन के लिये अपने आप को लगा दिया है। यह तुम्हारा काम है कि उन्हें तलाश करो और उनकी ज़रूरियात पूरी करो।

“तुम पहचान लोगे उन्हें उनके चेहरों से।”
تَعْرِفُهُمْ بِسِيمَاهُمْ

ज़ाहिर बात है कि फ़क़र व अहतियाज का असर चेहरे पर तो आ जाता है। अगर किसी को सही गिज़ा नहीं मिल रही है तो चेहरे पर उसका असर ज़ाहिर होगा।

“वह लोगों से लिपट कर सवाल नहीं करते।”
لَا يَسْتَلُونَ النَّاسَ الْحَافًا

वह उन साइलों की तरह नहीं हैं जो असल में अपनी मेहनत का सिला वसूल करते हैं कि आपके सर होकर आपसे ज़बरदस्ती कुछ ना कुछ निकलवा लेते हैं।

यह बड़ा अहम मसला है कि अक्रामते दीन की जद्दो-जहद में जो लोग हमावक़्त लग जायें, आखिर उनके लिये ज़रिया-ए-मआश क्या हो? इस वक़्त इस पर तफ़सील से गुफ्तगू मुमकिन नहीं। बहरहाल यह समझ लीजिये कि ये दो रुकूअ इन्फ़ाक़ के मौजू पर कुरान हकीम का नुक्ता-ए-उरूज हैं और यह आखरी आयत इनमें अहमतरनीन है।

“और जो माल भी तुम खर्च करोगे तो अल्लाह وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ بِهِ عَلِيمٌ ۝ तआला उसको खूब जानता है।”

यह ना समझना कि तुम्हारा इन्फ़ाक़ अल्लाह के इल्म में नहीं है। तुम ख़ामोशी के साथ, इख़फ़ा के साथ लोगों के साथ तआवुन करोगे तो अल्लाह तआला तुम्हें इसका भरपूर बदला देगा।

आयात 274 से 281 तक

الَّذِينَ يُنْفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ بِاللَّيْلِ وَالنَّهَارِ سِرًّا وَعَلَانِيَةً فَلَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۖ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ الَّذِينَ يَأْكُلُونَ الرِّبَا لَا يَقْوَمُونَ إِلَّا كَمَا يَقُومُ الَّذِينَ يَتَخَبَّطُهُ الشَّيْطَانُ مِنَ الْمَسِّ ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ قَالُوا إِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبَا ۚ وَأَحَلَّ اللَّهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبَا ۚ فَمَنْ جَاءَهُ مَوْعِظَةٌ مِنْ رَبِّهِ فَانْتَهَىٰ فَلَهُ مَا سَلَفَ ۚ وَأَمْرُهُ إِلَى اللَّهِ ۚ وَمَنْ عَادَ فَأُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ۝ يَمْحَقُ اللَّهُ الرِّبَا وَيُزِيلُ الصَّدَاقَاتِ ۚ وَاللَّهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ كَفَّارٍ أَثِيمٍ ۝ إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ لَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ۝ يَأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ وَذَرُوا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبَا إِن كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ۝ فَإِنْ لَمْ تَفْعَلُوا فَأْذَنُوا بِحَرْبٍ مِنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ ۖ وَإِنْ تُبْتُمْ فَلَكُمْ رُءُوسُ أَمْوَالِكُمْ لَا تَظْلِمُونَ وَلَا تُظْلَمُونَ ۝ وَإِنْ كَانَ ذُو عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ إِلَىٰ مَيْسَرَةٍ ۚ وَأَنْ تَصَدَّقُوا خَيْرٌ لَّكُمْ إِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝ وَاتَّقُوا يَوْمًا تُرْجَعُونَ فِيهِ إِلَى اللَّهِ ثُمَّ تُوَفَّىٰ كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ۝

अब हम इस सूरह मुबारका का जो रुकूअ पढ़ रहे हैं यह आज के हालात में अहमतरनीन है। यह रुकूअ सूद की हुरमत और शनाअत (बुराई) पर कुरान हकीम का इन्तहाई अहम मक़ाम है। इस दौर में अल्लाह तआला के खिलाफ़ बगावत की सबसे बड़ी सूरत तो गैरुल्लाह की हाकिमियत का तसव्वुर है, जो सबसे बड़ा शिर्क है। अगरचे नफ़िसयाती और दाखिली ऐतबार से सबसे बड़ा शिर्क मादे पर तवक्कुल है, लेकिन खारजी और वाक़ियाती दुनिया में इस वक़्त सबसे बड़ा शिर्क गैरुल्लाह की हाकिमियत है, जो अब “अवामी हाकिमियत” की शक़ल इख़्तियार कर गई है। इसके बाद इस वक़्त के गुनाहों और बदअम्ली में सबसे बड़ा फ़ितना और फ़साद सूद की बुनियाद पर है। इस वक़्त दुनिया में सबसे बड़ी शैतानियत जो यहूदियों के ज़रिये से पूरे कुरा-ए-अर्ज़ी को अपनी गिरफ्त में लेने के लिये बेताब है, वह यही सूद का हथकंडा है। यहाँ इसकी हुरमत दो टूक अन्दाज़ में बयान कर दी गई। इस मक़ाम पर मेरे ज़हन में कभी-कभी एक सवाल पैदा होता था कि इस रुकूअ की पहली आयत का ताल्लुक तो इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह से है, लिहाज़ा इसे पिछले रुकूअ के साथ शामिल होना चाहिये था, लेकिन बाद में ये हकीक़त मुझ पर मुन्कशिफ़ हुई कि इस आयत को बड़ी हिकमत के साथ इस रुकूअ के साथ शामिल किया गया है। वह हिकमत मैं बाद में बयान करूँगा।

आयत 274

“जो लोग अपना माल खर्च करते रहते हैं रात को भी और दिन में भी”

“खुफ़िया तौर पर भी और ऐलानिया भी”

سِرًّا وَعَلَانِيَةً

सदक़ाते वाजिबा ऐलानिया और सदक़ाते नाफ़िला खुफ़िया तौर पर देते हैं।

“उनके लिये उनका अज़्र (महफूज़) है उनके रब के पास, ना तो उन पर कोई खौफ़ तारी होगा और ना ही वह किसी हुज़्ज़ से दो-चार होंगे।”

इसके बरअक्स मामला उनका है जो सूद खाते हैं। वजह क्या है? असल मसला है “क़द्रे ज़ायद” (surplus value) का! आपका कोई शुगल है, कोई

कारोबार है या मुलाज़मत है, आप कमा रहे हैं, उससे आपका खर्च पूरा हो रहा है, कुछ बचत भी हो रही है। अब इस बचत का असल मसरफ़ (उपयोग) क्या है? आयत 219 में हम पढ़ आये हैं: {وَسْأَلُوكَ مَاذَا يَنْفَعُونَ قُلِ الْعَفْوَ} “लोग आपसे दरयाफ्त करते हैं कि (अल्लाह की राह में) कितना खर्च करें? कह दीजिये जो भी ज़ायद अज़ ज़रूरत हो!” चुनाँचे असल रास्ता तो यह है कि अपनी बचत को अल्लाह की राह में खर्च कर दो। या मोहताजों को दे दो या अल्लाह की के दीन की नशरो इशाअत और सरबुलंदी में लगा दो। लेकिन सूदखोराना ज़हनियत यह है कि इस बचत को भी मज़ीद कमाई का ज़रिया बनाओ। लिहाज़ा असल में सूदखोरी इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह की ज़िद है। यह उक़द (गिरह) मुझ पर उस वक़्त खुला जब मैंने “الْفُرْأَنُ يُغْفِرُ بَعْضَهُ بَعْضًا” के उसूल के तहत सूरतुल रूम की आयत 39 का मुताअला किया। वहाँ भी इन दोनों को एक-दूसरे के मुक़ाबले में लाया गया है, अल्लाह की रज़ाजोई के लिये इन्फ़ाक़ और उसके मुक़ाबले में रिबा, यानि सूद पर रक़म देना। फ़रमाया: {وَمَا آتَيْتُم مِّن رَّبًّا يَّرِيءُ فِي أَمْوَالِ النَّاسِ فَلَا يَرِيءُ عَنَّا اللَّهُ} “और जो माल तुम देते हो सूद पर ताकि लोगों के अमवाल में (शामिल होकर) बढ़ जाये तो वह अल्लाह के यहाँ नहीं बढ़ता।” मेहनत कोई कर रहा है और आप उसकी कमाई में से अपने सरमाये की वजह से वसूल कर रहे हैं तो आपका माल उसके माल में शामिल होकर उसकी मेहनत से बढ़ रहा है। लेकिन अल्लाह के यहाँ उसकी बढ़ोतरी नहीं होती। {وَمَا آتَيْتُم مِّن رَّكُوتَةٍ تُرِيدُونَ وَجْهَ اللَّهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْبُخْعُونَ} “और वह जो तुम ज़कात (और सदक़ात) में दे देते हो महज़ अल्लाह की रज़ा जोई के लिये तो यही लोग (अपने माल अल्लाह के यहाँ) बढ़ा रहे हैं।” उनका माल मुसलसल बढ़ रहा है, उसकी बढ़ोतरी हो रही है। चुनाँचे इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह और सदक़ात व ज़कात वगैरह का मामला सूद के बिल्मुक़ाबिल और उसके बरअक्स है। अपने इस बचत के माल को या तो कोई अल्लाह की राह में खर्च करेगा या फिर सूदी मुनाफ़ा हासिल करने का ज़रिया बनायेगा। और आपको मालूम है कि आज के बैंकिंग के निज़ाम में सबसे ज़्यादा ज़ोर बचत (saving) पर दिया जाता है और उसके लिये सेविंग एकाउंट्स और बहुत सी पुरकशिश मुनाफ़ाबख़्श स्कीमें मुतारफ़ कराई जाती हैं। उनकी तरफ़ से यही तरगीब दी जाती है कि बचत करो मज़ीद कमाने के लिये! बचत इसलिये नहीं कि अपना पेट काटो और ग़ुरबा की ज़रूरियात पूरी करो, अपना

मैयारे ज़िन्दगी कम करो और अल्लाह के दीन के लिये खर्च करो। नहीं, बल्कि इसलिये कि जो कुछ तुम बचाओ वह हमें दो, ताकि वह हम ज़्यादा शरह सूद पर दूसरों को दें और थोड़ी शरह सूद तुम्हें दे दें। चुनाँचे इन्फ़ाक़ और सूद एक-दूसरे की ज़िद हैं। फ़रमाया:

आयत 275

“जो लोग सूद खाते हैं।”

الَّذِينَ يَأْكُلُونَ الرِّبَا

“वह नहीं खड़े होते मगर उस शख्स की तरह जिसको शैतान ने छूकर मख़बूतुल हवास बना दिया हो।”

لَا يَقُومُونَ إِلَّا كَمَا يَقُومُ الَّذِي يَخَصَّطُهُ الشَّيْطَانُ مِنَ الْمَيْمَنِ

यहाँ आम तौर पर यह समझा गया है कि यह क़यामत के दिन का नक़शा है। क़यामत के दिन का यह नक़शा तो होगा ही, इस दुनिया में भी सूदखोरों का हाल यही होता है, और उनका यह नक़शा किसी स्टॉक एक्सचेंज में जाकर बखूबी देखा जा सकता है। मालूम होगा गोया दीवाने हैं, पागल हैं, जो चीख रहे हैं, दौड़ रहे हैं, भाग रहे हैं। वह नॉर्मल इन्सान नज़र नहीं आते, मख़बूतुल हवास लोग नज़र आते हैं जिन पर गोया असीब का साया हो।

“इस वजह से कि वह कहते हैं बैय (ख़रीदो फ़रोख्त) भी तो सूद ही की तरह है।”

ذَلِكَ بِأَنَّهُمْ قَالُوا إِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبَا

कोई शख्स कह सकता है कि मैंने सौ रुपये का माल ख़रीदा, 110 रुपये में बेच दिया, 10 रुपये बच गये, यह रबह (मुनाफ़ा) है, जो जायज़ है, लेकिन अगर सौ रुपये किसी को दिये और 110 वापस लिये तो यह रिबा (सूद) है, यह हराम क्यों हो गया? एक शख्स ने 10 लाख का मकान बनाया, 4 हज़ार रुपये महाना किराये पर दे दिया तो जायज़ हो गया, और 10 लाख रुपये किसी को क़र्ज़ दिये और उससे 4 हज़ार रुपये महीना लेना शुरू किये तो यह सूद हो गया, हराम हो गया, ऐसा क्यों है? अक़ली तौर पर इस तरह की बातें सूद के हामियों की तरफ़ से कही जाती हैं। (रबह और रिबा का फ़र्क़ सूरतुल बक्ररह की आयत 26 के ज़िमन में बयान हो चुका है।) इस ज़ाहिरी मुनासबत की वजह से यह मख़बूतुल हवास सूदखोर लोग इन दोनों के अन्दर कोई फ़र्क़

महसूस नहीं करते। यहाँ अल्लाह तआला ने इनके क़ौल का अक्ली जवाब नहीं दिया, बल्कि फ़रमाया:

“हालाँकि अल्लाह ने बैय को हलाल करार
दिया है और रिबा को हराम ठहराया है।”

अब तुम यह बात करो कि अल्लाह को मानते हो या नहीं? रसूल अल्लाह صلی اللہ علیہ وسلم को मानते हो या नहीं? कुरान को मानते हो या नहीं? या महज़ अपनी अक्ल को मानते हो? अगर तुम मुस्लिमान हो, मोमिन हो तो अल्लाह तआला और उसके रसूल صلی اللہ علیہ وسلم के हुक्म पर सरे तस्लीम ख़म करो (सूरतुल हश्श:7): {وَمَا أَرْسَلْنَاكَ إِلَّا رَحْمَةً مِّنَ رَبِّكَ} “जो कुछ रसूल तुम्हें दें उसे ले लो और जिस चीज़ से रोक दें उससे रुक जाओ।” यह तो शरीअत का मामला है। वैसे मआशियात के ऐतबार से इसमें यह फ़र्क़ वाक़ेअ होता है कि एक है fluid capital और एक है fixed capital. जहाँ तक मकान का मामला है तो वह fixed capital है। दस लाख रुपये के मकान में जो शख्स रह रहा है वह उससे क्या फ़ायदा उठायेगा? वह उसमें रिहाइश इख़्तियार करेगा और उसके एवज़ महाना किराया अदा करेगा। इसके बरअक्स अगर आपने दस लाख रुपये किसी को नक़द दे दिये तो वह उन्हें किसी काम में लगायेगा। इसमें यह भी इम्कान है कि दस लाख के बारह लाख या पन्द्रह लाख बन जायें और यह भी कि आठ लाख रह जायें। चुनाँचे इस सूरत में अगर आपने पहले से तयशुदा (fix) मुनाफ़ा वसूल किया तो यह हराम हो जायेगा। तो इन दोनों में कोई मुनास्बत नहीं है। लेकिन अल्लाह तआला ने अक्ली जवाब नहीं दिया। जवाब दिया कि “अल्लाह ने बैय को हलाल ठहराया है और रिबा को हराम।”

“तो जिस शख्स के पास उसके रब की तरफ़ से
यह नसीहत पहुँच गयी और वह बाज़ आ
गया तो जो कुछ वह पहले ले चुका है वह
उसका है।”

वह उससे वापस नहीं लिया जायेगा। हिसाब-किताब नहीं किया जायेगा कि तुम इतना सूद खा चुके हो, वापस करो। लेकिन इसका यह मतलब भी नहीं कि उस पर इसका कोई गुनाह नहीं होगा।

“उसका मामला अल्लाह के हवाले है।”

अल्लाह तआला चाहेगा तो माफ़ कर देगा और चाहेगा तो पिछले सूद पर भी सरज़निश (डॉट-फटकार) होगी।

“और जिसने (इस नसीहत के आ जाने के बाद
भी) दोबारा यह हरकत की तो यह लोग
जहन्नमी हैं, वह उसमें हमेशा-हमेश रहेंगे।”

आयत 276

“अल्लाह तआला सूद को मिटाता है और
सदक़ात को बढ़ाता है।”

हमारे ज़माने में शेख़ महमूद अहमद (मरहूम) ने अपनी किताब “Man & Money” में साबित किया है कि तीन चीज़ें सूद के साथ-साथ बढ़ती चली जाती हैं। जितना सूद बढ़ेगा उसी क़दर बेरोज़गारी बढ़ेगी, इफ़राते ज़र (inflation) में इज़ाफ़ा होगा और उसके नतीजे में शरह सूद (interest rate) बढ़ेगा। शरह सूद के बढ़ने से बेरोज़गारी मज़ीद बढ़ेगी और इफ़राते ज़र में और ज़्यादा इज़ाफ़ा होगा। यह एक दायरा-ए-ख़बीसा (vicious circle) है और इसके नतीजे में किसी मुल्क की मइशत बिल्कुल तबाह हो जाती है। यह तबाही एक वक़्त तक पोशीदा रहती है, लेकिन फिर एकदम इसका ज़हूर बड़े-बड़े बैंकों के दिवालिया होने की सूरत में होता है। अभी जो कोरिया का हश्श हो रहा है वह आपके सामने है। इससे पहले रूस का जो हश्श हो चुका है वह पूरी दुनिया के लिये बाइस-ए-इबरत है। सूदी मइशत का मामला तो गोया शीश महल की तरह है, इसमें तो एक पत्थर आकर लगेगा और इसके टुकड़े-टुकड़े हो जाएँगे। इसके बरअक्स मामला सदक़ात का है। उनको अल्लाह तआला पालता है, बढ़ाता है, जैसा कि सूरतुल रूम की आयत 39 में इरशाद हुआ।

“और अल्लाह किसी नाशुक्के और गुनाहगार
को पसंद नहीं करता।”

अल्लाह तआला को वह सब लोग हरगिज़ पसंद नहीं हैं जो नाशुक्के और गुनाहगार हैं।

आयत 277

“हाँ जो लोग ईमान लाये और उन्होंने नेक अमल किये और नमाज़ क़ायम करते रहे और ज़कात अदा करते रहे उनके लिये उनका अज़्र उनके रब के पास महफूज़ है।”

إِنَّ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَأَقَامُوا الصَّلَاةَ وَآتَوُا الزَّكَاةَ لَهُمْ أَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ

नेक अमल में ज़ाहिर बात है जो शय हराम है उसका छोड़ देना भी लाज़िम है।

“और ना उन्हें कोई खौफ़ लाहक़ होगा और ना ही वह गमगीन होंगे।”

وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ

आयत 278

“ऐ ईमान वालो! अल्लाह का तक्रवा इख्तियार करो और सूद में से जो बाक़ी रह गया है उसे छोड़ दो”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اتَّقُوا اللَّهَ وَذَرُوا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبَا

आज फैसला कर लो कि जो कुछ भी तुमने किसी को क़र्ज़ दिया था अब उसका सूद छोड़ देना है।

“अगर तुम वाक़ई मोमिन हो।”

إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ

आयत 279

“फिर अगर तुमने ऐसा ना किया तो ख़बरदार हो जाओ कि अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ से तुम्हारे खिलाफ़ ऐलाने जंग है।”

فَإِنْ لَمْ تَفْعَلُوا فَأْذَنُوا بِحَرْبٍ مِنَ اللَّهِ وَرَسُولِهِ

सूदखोरी से बाज़ ना आने पर यह अल्टीमेटम है। कुरान व हदीस में किसी और गुनाह पर यह बात नहीं आयी है। यह वाहिद गुनाह है जिस पर अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की तरफ़ से ऐलाने जंग है।

“और अगर तुम तौबा कर लो तो फिर असल अमवाल तुम्हारे ही हैं।”

وَأِنْ تَبَنُّوا فَلكُمْ رُءُوسُ أَمْوَالِكُمْ

तुम्हारे जो असल रासुल माल हैं वह तुम्हें लौटा दिये जाएँगे। चुनाँचे सूद छोड़ दो और अपने रासुल माल वापस ले लो।

“ना तुम जुल्म करो और ना तुम पर जुल्म किया जाये।”

لَا تَظْلِمُونَ وَلَا تُظْلَمُونَ

ना तुम किसी पर जुल्म करो कि उससे सूद वसूल करो और ना ही तुम पर जुल्म किया जाये कि तुम्हारा रासुल माल भी दबा दिया जाये।

आयत 280

“और अगर मक़रूज़ तंगदस्त हो तो फराखी हासिल होने तक उसे मोहलत दो।”

وَإِنْ كَانَ دُؤْغُ عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ إِلَىٰ مَيْسَرَةٍ

उसे मोहलत दो कि उसके यहाँ कुशादगी पैदा हो जाये ताकि वह आसानी से आपका क़र्ज़ आपको वापस कर सके।

“और अगर तुम सदक़ा ही कर दो तो यह तुम्हारे लिये बेहतर है”

وَأَنْ تَصَدَّقُوا خَيْرٌ لَّكُمْ

तुम्हारा भाई गरीब था, उसको तुमने क़र्ज़ दिया था, उस पर कुछ सूद लेकर खा भी चुके हो, बाक़ी सूद को तो छोड़ा ही है, अगर अपना रासुल माल भी उसको बख़्श दो तो यह इन्फ़ाक़ हो जायेगा, यह अल्लाह को क़र्ज़े हस्ना हो जायेगा और तुम्हारे लिये ज़खीरा-ए-आखिरत बन जायेगा। यह बात समझ लीजिये कि आपकी जो बचत है, जिसे मैंने क़द्रे ज़ायद (surplus value) कहा था, इस्लामी मइशत के अन्दर उसका सबसे ऊँचा मसरफ़ इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह है। उसे अल्लाह की राह में खर्च कर दो, सदक़ा कर दो। इससे कमतर “क़र्ज़े हस्ना” है। आपके किसी भाई का कारोबार रुक गया है, उसको क़र्ज़ दे दो, उसका कारोबार चल पड़ेगा और फिर वह तुम्हें तुम्हारी असल रक़म वापस कर देगा। यह क़र्ज़े हस्ना है, इसका दर्जा इन्फ़ाक़ से कमतर है। तीसरा दर्जा मज़ारबत का है, जो जायज़ तो है मगर पसन्दीदा नहीं है। अगर तुम ज़्यादा ही खसीस (कंज़ूस) हो तो चलो अपना सरमाया अपने किसी भाई को मज़ारबत पर दे दो। और मज़ारबत यह है कि रक़म तुम्हारी होगी और काम वह करेगा। अगर बचत हो जाये तो उसमें तुम्हारा भी हिस्सा होगा, लेकिन अगर नुक़सान हो जाये तो वह कुल का कुल तुम्हारा होगा, तुम उससे

कोई तावान नहीं ले सकते। इसके बाद इन तीन दर्जों से भी नीचे उतर कर अगर तुम कहो कि मैं यह रक़म तुम्हें दे रहा हूँ, इस पर इतने फ़ीसद मुनाफ़ा तो तुमने बहरहाल देना ही देना है, तो इससे बढ़ कर हराम शय कोई नहीं है।

इस आयत में हिदायत की जा रही है कि अगर तुम्हारा मकरूज़ तंगी में है तो फिर इन्तेज़ार करो, उसे उसकी कशाइश और फ़राखी तक मोहलत दे दो। और अगर तुम सदक्का ही कर दो, ख़ैरात कर दो, बख़्श दो तो वह तुम्हारे लिये बेहतर होगा।

“अगर तुम जानते हो।”

إِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ۝

अगर तुम्हें अल्लाह ने हिकमत अता कर दी है, अगर तुम ऊलुल अल्बाब हो, अगर तुम समझदार हो तो तुम उस बचत के उम्मीदवार बनो जो अल्लाह के यहाँ अज़्रो सवाब की सूरत में तुम्हें मिलेगी। उसके मुक़ाबले में उस रक़म की कोई हैसियत नहीं जो तुम्हें मकरूज़ से वापस मिलनी है।

अगली आयत नज़ूल के ऐतबार से कुरान मजीद की आखरी आयत है।

आयत 281

“और डरो उस दिन से कि जिस दिन तुम लौटा दिये जाओगे अल्लाह की तरफ़।”

وَاتَّقُوا يَوْمًا تُرْجَعُونَ فِيهِ إِلَى اللَّهِ ۝

यहाँ वह आयत याद कीजिये जो सूरतुल बक्ररह में अल्फ़ाज़ के मामूली फ़र्क के साथ दो बार आ चुकी है:

“और डरो उस दिन से कि जिस दिन काम ना आ सकेगी कोई जान किसी दूसरी जान के कुछ भी और ना किसी से कोई सिफ़ारिश कुबूल की जायेगी और ना किसी से कोई फ़िदया वसूल किया जायेगा और ना उन्हें कोई मदद मिल सकेगी।”

وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِي نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا شَفَاعَةٌ وَلَا يُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ ۝

और

“और डरो उस दिन से कि जिस दिन काम ना आ सकेगी कोई जान किसी दूसरी जान के

وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِي نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ

कुछ भी और ना किसी से कोई फ़िदया कुबूल किया जायेगा और ना किसी को कोई सिफ़ारिश फ़ायदा पहुँचा सकेगी और ना उन्हें कोई मदद मिल सकेगी।”

شَيْئًا وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا عَدْلٌ وَلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ وَلَا هُمْ يُنصَرُونَ ۝

“फिर हर जान को पूरा-पूरा दे दिया जायेगा जो कमाई उसने की होगी।”

ثُمَّ تَوُفَّى كُلُّ نَفْسٍ مَّا كَسَبَتْ

“और उन पर कुछ जुल्म ना होगा।”

وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ۝

आयात 282, 283

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدِينٍ إِلَىٰ أَجَلٍ مُّسَمًّى فَاكْتُبُوهُ وَلْيَكْتُبَ بَيْنَكُمْ كَاتِبٌ بِالْعَدْلِ وَلَا يَأْبَ كَاتِبٌ أَنْ يَكْتُبَ كَمَا عَلَّمَهُ اللَّهُ فَلْيَكْتُبْ وَلْيُمْلِلِ الَّذِي عَلَيْهِ الْحَقُّ وَلْيَتَّقِ اللَّهَ رَبَّهُ وَلَا بَيِّنْخَسَ مِنْهُ شَيْئًا فَإِنْ كَانَ الَّذِي عَلَيْهِ الْحَقُّ سَفِيهًا أَوْ ضَعِيفًا أَوْ لَا يَسْطِيعُ أَنْ يُمْلَ هُوَ فَلْيُمْلِلْ وَلِيَّهُ بِالْعَدْلِ وَاسْتَشْهِدُوا شَهِيدَيْنِ مِنْ رَجَالِكُمْ فَإِنْ لَمْ يَكُونَا رَجُلَيْنِ فَرَجُلٌ وَامْرَأَتْنِ مِمَّنْ تَرْضَوْنَ مِنَ الشُّهَدَاءِ أَنْ تَضِلَّ إِحْدَاهُمَا فَتُذَكِّرَ إِحْدَاهُمَا الْأُخْرَىٰ وَلَا يَأْبَ الشُّهَدَاءُ إِذَا مَا دُعُوا وَلَا تَسْمَعُوا أَنْ تَكْتُبُوهُ صَغِيرًا أَوْ كَبِيرًا إِلَىٰ أَجَلِهِ ذَلِكُمْ أَقْسَطُ عِنْدَ اللَّهِ وَأَقْوَمُ لِلشَّهَادَةِ وَأَدْنَىٰ أَلَّا تَرْتَابُوا إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً حَاضِرَةً تُدِيرُونَهَا بَيْنَكُمْ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَلَّا تَكْتُبُوهَا وَأَشْهِدُوا إِذَا تَبَايَعْتُمْ وَلَا يُضَارَّ كَاتِبٌ وَلَا شَهِيدٌ وَإِنْ تَفَلَعُوا فَإِنَّهُ فَسُوقٌ بِكُمْ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَيُعَلِّمُكُمُ اللَّهُ وَاللَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ۝

وَأَنْ كُنْتُمْ عَلَىٰ سَفَرٍ وَلَمْ تَجِدُوا كَاتِبًا فَرِهْنِ مَقْبُوضَةً فَإِنْ آمِنَ بَعْضُكُمْ بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِي أُوْتِمِنَ أَمَانَتَهُ وَلْيَتَّقِ اللَّهَ رَبَّهُ وَلَا تَكْتُبُوا الشَّهَادَةَ وَمَنْ يَكْتُبْهَا فَإِنَّهُ آثَمُ قَلْبُهُ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ عَلِيمٌ ۝

आयत 282, जो ज़ेरे मुताअला है, कुरान हकीम की तवील-तरीन आयत है और इसे “आयते दैन” या “आयते मुदायना” का नाम दिया गया है। इस आयत में हिदायत की गई है कि कोई क़र्ज़ का बाहम लेन-देन हो या आपस में कारोबारी मामला हो तो उसे बाक्रायदा तौर पर लिख लिया जाये और उस पर दो गवाह मुकर्रर किये जायें। हमारे यहाँ आम तौर पर इस कुरानी हिदायत को नज़र अंदाज़ किया जाता है और किसी भाई, दोस्त या अज़ीज़ को क़र्ज़ देते हुए या कोई कारोबारी मामला करते हुए यह ख्याल किया जाता है कि इससे क्या लिखवाना, वह कहेगा कि इन्हें मुझ पर ऐतमाद नहीं है। चुनाँचे तमाम मामलात ज़बानी तय कर लिये जाते हैं, और बाद में जब मामलात में बिगाड़ पैदा होता है तो फिर लोग शिकवा-शिकायत और चीखो पुकार करते हैं। अगर शुरू ही में कुरानी हिदायात के मुताबिक़ माली मामलात को तहरीर कर लिया जाये तो नौबत यहाँ तक ना पहुँचेगी। हदीसे नबवी صلی اللہ علیہ وسلم का मफ़हूम है कि जो शख्स क़र्ज़ देते हुए या कोई माली मामला करते हुए लिखवाता नहीं है, अगर उसका माल ज़ाया हो जाता है तो उसे इस पर कोई अज़ नहीं मिलता, और अगर वह मकर्रर के हक़ में बददुआ करता है तो अल्लाह तआला उसकी फ़रियाद नहीं सुनता, क्योंकि उसने अल्लाह तआला के वाज़ेह हुक्म की खिलाफ़वर्ज़ी की है।

आयत 282

“ऐ अहले ईमान! जब भी तुम क़र्ज़ का कोई मामला करो एक वक्त्रे मुअय्यन तक के लिये तो उसको लिख लिया करो।”

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا إِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ إِلَىٰ أَحَدٍ مِّنْكُمْ فَأَكْتُبُوهُ

आयत के इस टुकड़े से दो हुक्म मालूम होते हैं। एक यह कि क़र्ज़ का वक्त्र मुअय्यन होना चाहिये कि यह कब वापस होगा और दूसरे यह कि उसे लिख लिया जाये। فَاكْتُبُوهُ फ़अल अम्र है और अम्र वज़ूब (ज़रूरी) के लिये होता है।

“और चाहिये कि उसको लिखे कोई लिखने वाला तुम्हारे माबैन अदल के साथ।”

وَلْيَكْتُبْ بَيْنَكُمْ كَاتِبٌ بِالْعَدْلِ

लिखने वाला कोई डंडी ना मार जाये, उसे चाहिये कि वह सही-सही लिखे।

“और जो लिखना जानता हो वह लिखने से इन्कार ना करे, जिस तरह अल्लाह ने उसको सिखाया है, पस चाहिये कि वह लिख दे।”

وَلَا يَأْتِ كَاتِبٌ أَنْ يَكْتُبَ كَمَا عَلَّمَهُ اللَّهُ فَلْيَكْتُبْ

यह हिदायत ताकीद के साथ की गयी, इसलिये कि उस मआशरे में पढ़े-लिखे लोग बहुत कम होते थे। अब भी माली मामलात और मुआहिदात बिलउमूम व वसीक़ा नोएस तहरीर करते हैं।

“और इमला वह शख्स कराये जिस पर हक़ आता है”

وَالْمُنِيلُ الَّذِي عَلَيْهِ الْحَقُّ

यानि जिसने क़र्ज़ लिया है वह दस्तावेज़ लिखवाये कि मैं क्या ज़िम्मेदारी ले रहा हूँ, जिसका माल है वह ना लिखवाये।

“और वह अल्लाह से डरता रहे अपने रब से”

وَلْيَتَّقِ اللَّهَ رَبَّهُ

“और (लिखवाते हुए) उसमें से कोई शय कम ना कर दे।”

وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَيْئًا

“फिर अगर वह शख्स जिस पर हक़ आयद होता है, नासमझ या ज़ईफ़ हो”

فَإِنْ كَانَ الَّذِي عَلَيْهِ الْحَقُّ سَفِيهًا أَوْ ضَعِيفًا

“या उसके अन्दर इतनी सलाहियत ना हो कि इमला करवा सके”

أَوْ لَا يَسْتَطِيعُ أَنْ يُمِلَّ هُوَ

“तो जो उसका वली हो वह इन्साफ़ के साथ लिखवा दे।”

فَلْيُمْلِلْ وَلِيُّهُ بِالْعَدْلِ

अगर क़र्ज़ लेने वाला नासमझ हो, ज़ईफ़ हो या दस्तावेज़ ना लिखवा सकता हो तो उसका कोई वली, कोई वकील या मुख्तार (attorney) उसकी तरफ़ से इन्साफ़ के साथ दस्तावेज़ तहरीर कराये। यहाँ “इमलाल” इमला के मायने में आया है।

“और इस पर गवाह बना लिया करो अपने मर्दों में से दो आदमियों को।”

وَأَشْهِدُوا شَهِيدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ

“फिर अगर दो मर्द दस्तयाब ना हों तो एक मर्द और दो औरतें हों”

فَإِنْ لَّمْ يَكُنْوا رَجُلَيْنِ فَرَجُلٌ وَامْرَأَتَانِ

“यह गवाह तुम्हारे पसन्दीदा लोगों में से हो”

مِنْ تَرْضَوْنَ مِنَ الشُّهَدَاءِ

जिनकी गवाही हर दो फ़रीक़ के नज़दीक़ मक़बूल हो और उन पर दोनों को ऐतमाद हो। अगर मज़क़ूर सिफ़ात के दो मर्द दस्तयाब ना हो सकें तो गवाही के लिये एक मर्द और दो औरतों का इन्तखाब कर लिया जाये। यानि गवाहों में एक मर्द का होना लाज़िम है, महज़ औरत की गवाही नहीं चलेगी। अब सवाल पैदा होता है कि आया हर क्रिस्म के मामलात में दो औरतों की गवाही एक मर्द के बराबर है या यह मामला सिर्फ़ क़र्ज़ और माली मामलात में दस्तावेज़ तहरीर करते वक़्त का है, इसकी तफ़सील फ़ुक्राहा के यहाँ मिलती है।

“ताकि उनमें से कोई एक भूल जाये तो दूसरी याद करवा दे।”

أَنْ تَضِلَّ إِحْدَاهُمَا فَتُذَكِّرَ إِحْدَاهُمَا الْأُخْرَى

यहाँ अक़ली सवाल पैदा हो गया कि क्या मर्द नहीं भूल सकता? इसका जवाब यह है कि वाक़िअतन अल्लाह तआला ने औरत के अन्दर निस्नान का माद्दा ज़्यादा रखा है। {أَلَا يَعْلَمُ مَنْ خَلَقَ وَهُوَ اللَّطِيفُ الْخَبِيرُ ⑩} (अल मुल्क) “क्या वही ना जानेगा जिसने पैदा किया है? वह बड़ा बारीक़-बीन और हर शय की ख़बर रखने वाला है।” जिसने पैदा किया है वह ख़ूब जानता है कि किसमें कौनसा माद्दा ज़्यादा है। औरत में निस्नान का माद्दा क्यों ज़्यादा रखा गया है, यह भी समझ लीजिये। यह बड़ी अक़ली और मंतक़ी बात है। दरअसल औरत को मर्द के ताबेअ रहना होता है, लिहाज़ा उसके अहसासात को कभी ठेस पहुँच सकती है, उसके ज़ज़्बात के ऊपर कभी कोई कदुरत आती है। इस ऐतबार से अल्लाह तआला ने उनके अन्दर भूल जाने का माद्दा “सेफ़्टी वाल्व” के तौर पर रखा हुआ है। वरना तो उनका मामला इस शेर के मिस्दाक़ हो जाये:

يَا دِةَ مَا جِئِى اَجْرًا هَيْ يَا رَبِّ

छीन ले अब मुझसे हाफ़ज़ा मेरा!

चुनाँचे यह निस्नान भी अल्लाह तआला की बहुत बड़ी नेअमत है, वरना तो कोई सदमा दिल से उतरने ही ना पाये, कोई गुस्सा कभी ख़त्म ही ना हो।

बहरहाल ख्वाह किसी हुक्म की इल्लत या हिकमत समझ में आये या ना आये, अल्लाह का हुक्म तो हर सूरत मानना है।

“और ना इन्कार करे गवाह जबकि उनको बुलाया जाये।”

وَلَا يَأْتِ الشُّهَدَاءُ إِذَا مَا دُعُوا

गवाहों को जब गवाही के लिये बुलाया जाये तो आकर गवाही दें, उससे इन्कार ना करें। इसी सूरह मुबारका की आयत 140 में हम पढ़ आये हैं: {وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ} “और उस शख्स से बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जिसके पास अल्लाह की तरफ़ से एक शहादत मौजूद हो और वह उसे छुपाये?”

“और तसाहुल (लापरवाही) मत करो उसके लिखने में, मामला ख्वाह छोटा हो या बड़ा, उसकी मुअययन मुद्दत के लिये।”

وَلَا تَسْبُوا أَنْ تَكْتُبُوهُ صَغِيرًا أَوْ كَبِيرًا إِلَىٰ أَجَلِهِ

क़र्ज़ ख्वाह छोटा हो या बड़ा, उसकी दस्तावेज़ तहरीर होनी चाहिये कि मैं इतनी रक़म ले रहा हूँ और इतने वक़्त में इसे लौटा दूँगा। इसके बाद क़र्ज़ख्वाह इस मुद्दत को बढा भी सकता है, मज़ीद मोहलत दे सकता है, बल्कि माफ़ भी कर सकता है। लेकिन क़र्ज़ देते वक़्त उसकी मुद्दत मुअययन होनी चाहिये।

“यह अल्लाह के नज़दीक़ भी ज़्यादा इन्साफ़ पर मत्री है”

ذِكْرُكُمْ أَقْسَطُ عِنْدَ اللَّهِ

“और गवाही को ज़्यादा दुरुस्त रखने वाला है”

وَأَقْوَمُ لِلشَّهَادَةِ

मामला ज़ब्त तहरीर (documented) में आ जायेगा तो बहुत वाज़ेह रहेगा, वरना ज़बानी याददाश्त के अन्दर तो कहीं ताबीर ही में फ़र्क़ हो जाता है।

“और यह इसके ज़्यादा करीब है कि तुम शुबह में नहीं पड़ोगे”

وَأَذْنَىٰ الْأَلْتَرَاتِبِ

“इल्ला यह कि कोई तिजारती लेन-देन हो जो तुम दस्त-ब-दस्त करते हो”

إِلَّا أَنْ تَكُونَ تِجَارَةً حَاصِرَةً تُدِيرُونَهَا

بَيْنَكُمْ

मसलन आप किसी दुकानदार से कोई शय खरीदते हैं और नक़द पैसे अदा करते हैं तो ज़रूरी नहीं कि आप उसका कैशमेमो भी लें। अगर आप चाहें तो दुकानदार से कैशमेमो तलब कर सकते हैं।

“तो तुम पर कोई गुनाह नहीं है कि उसे ना लिखो।” فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَلَّا تَكْتُبُوهَا

“और गवाह बना लिया करो जब कोई (मुस्तक़बिल का) सौदा करो।” وَأَشْهَدُوا إِذَا تَبَايَعْتُمْ

“بيع سلم” जो होती है यह मुस्तक़बिल का सौदा है, और यह भी एक तरह का क़र्ज़ है। मिसाल के तौर पर आप किसी ज़मींदार से तय करते हैं कि आइन्दा फ़सल के मौक़े पर आप उससे इतने रूपये फ़्री मन के हिसाब से पाँच सौ मन गन्दुम खरीदेंगे। यह बय सलम कहलाती है और इसमें लाज़िम है कि आप पूरी क़ीमत अभी अदा कर दें और आपको गन्दुम फ़सल के मौक़े पर मिलेगी। इस तरह का लेन-देन भी बाक़ायदा तहरीर में आ जाना चाहिये और इस पर दो गवाह मुक़रर होने चाहिये।

“और ना नुक़सान पहुँचाया जाये किसी लिखने वाले को और गवाह को। और ना नुक़सान पहुँचाये कोई लिखने वाला और गवाह।” وَلَا يُضَارَّ كَاتِبٌ وَلَا شَهِيدٌ

“يُضَارُّ” में यह दोनों मफ़हूम मौजूद हैं। इसलिये कि यह मारुफ़ भी है और मजहूल भी।

“और अगर तुम ऐसा करोगे (नुक़सान पहुँचाओगे) तो यह तुम्हारे हक़ में गुनाह की बात होगी।” وَأِنْ تَفْعَلُوا فَإِنَّهُ فُسُوقٌ بِكُمْ

“और अल्लाह से डरते रहो।” وَاتَّقُوا اللَّهَ

“और अल्लाह तुम्हें तालीम दे रहा है।” وَيُعَلِّمُكُمُ اللَّهُ

“और अल्लाह हर चीज़ का इल्म रखने वाला وَاللَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ”

है।”

यह एक आयत मुकम्मल हुई है। मेरा ख्याल है कि आखरी पारे की चार-पाँच छोटी सूरतें जमा कर लें तो उनका हुज्म इस एक आयत के बराबर होगा। मैं अर्ज़ कर चुका हूँ कि आयात की ताअयीन तौफीक़ी (विशेषता मज़बूत) है। इसका हमारे हिसाब-किताब से, ग्रामर से, मंतिक़ से और इल्मे बयान से कोई ताल्लुक़ नहीं।

आयत 283

“और अगर तुम सफ़र पर हो और कोई लिखने वाला ना पाओ” وَإِنْ كُنْتُمْ عَلَى سَفَرٍ وَلَمْ تَجِدُوا كَاتِبًا

अगर दौराने सफ़र कोई लेन-देन का या क़र्ज़ का मामला हो जाये और कोई कातिब ना मिल सके।

“तो कोई शय गिरवी रखलो क़ब्ज़े में।” فَرِهْنٌ مَّقْبُوضَةٌ

क़र्ज़ लेने वाला अपनी कोई शय क़र्ज़ देने वाले के हवाले कर दे कि मेरी यह शय आपके क़ब्ज़े में रहेगी, आप इतने पैसे मुझे दे दीजिये, मैं जब यह वापस कर दूँगा आप मेरी चीज़ मुझे लौटा दीजियेगा। यह रहन बिलक़ब्ज़ा है। लेकिन रहन (गिरवी) रखी हुई चीज़ से कोई फ़ायदा उठाने की इजाज़त नहीं है, वह सूद हो जायेगा। मसलन अगर मकान रहन रखा गया है तो उस पर क़ब्ज़ा तो क़र्ज़ देने वाले का होगा, लेकिन वह उससे इस्तफ़ादा नहीं कर सकता, उसका किराया नहीं ले सकता, किराया मालिक को जायेगा।

“फिर अगर तुम में से एक-दूसरे पर ऐतमाद करे” فَإِنْ أَمِنَ بَعْضُكُم بَعْضًا

यानि एक शख्स दूसरे पर ऐतमाद करते हुए बग़ैर रहन के उसे क़र्ज़ दे देता है।

“तो जिसके पास अमानत रखी गयी है उसको चाहिये कि वह उसकी अमानत वापस करे” فَلْيُؤَدِّ الَّذِي اؤْتِمِنَ اَمَانَتَهُ

एक शख्स के पास रहन देने को कुछ नहीं था या यह कि दूसरे भाई ने उस पर ऐतमाद करते हुए उससे कोई शय रहन नहीं ली और उसको क़र्ज़ दे दिया तो

यह माल जो उसने कर्ज़ लिया है यह उसके पास कर्ज़ देने वाले की अमानत है, जिसका वापस लौटाना उसके ज़िम्मे फ़र्ज़ है।

“और अल्लाह से डरे जो उसका रब है।”

وَلْيَتَّقِ اللَّهَ رَبَّهُ

“और गवाही को छुपाया ना करो।”

وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ

“और जो कोई गवाही को छुपायेगा तो उसका दिल गुनाहगार होगा।”

وَمَنْ يَكْتُمْهَا فَإِنَّهُ إِثْمٌ قَلْبِي

बाज़ गुनाहों का असर इन्सान के बाहिरी आज़ा (अंगों) तक महदूद होता है, जबकि बाज़ का ताल्लुक दिल से होता है। शहादत का छुपाना भी इसी नौइयत का गुनाह है। और अगर किसी का दिल दाग़दार हो गया तो बाक़ी क्या रह गया?

“और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उसे ख़ूब जानता है।”

وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ عَلِيمٌ

आयात 284 से 286 तक

لِلَّهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۚ وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِيْ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تَخْفَوْهُ يَحْسِبْكُمْ بِهٖ ۗ اللّٰهُۤ اَعْيُفِّرُۤ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُۤ مَنْ يَّشَآءُ ۗ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝ۚ اَمَنْ الرَّسُوْلُۙ بِمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَّبِّهٖ ۚ وَالْمُؤْمِنُوْنَ كُلُّ اَمَنْ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ ۚ لَا نَقْرُقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِنْ رُّسُلِهٖ ۚ وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا ۚ غُفْرٰنَكَ رَبَّنَا ۚ وَالْيٰنِكَ الْاَمْصِرُ ۝ۚ لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ ۚ رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَا اِنْ نُسِيْنَا اَوْ اَخْطَاْنَا رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَا اِثْمًا كَمَا حَمَلْتَهُ عَلٰى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تُحِطِلْ عَلَيْنَا مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهٖ ۚ وَاعْفُ عَنَّا ۚ وَاعْفِرْ لَنَا ۚ وَارْحَمْنَا ۚ اَنْتَ مَوْلٰنَا فَانصُرْنَا عَلٰى الْقَوْمِ الْكَافِرِيْنَ ۝ۚ

अल्लाह तआला के फ़ज़लो करम से हम सूरतुल बक्ररह के आखरी रुकूअ पर पहुँच गये हैं। यह अज़ीमुशशान रुकूअ तीन आयात पर मुशतमिल है। क़ब्ल अज़ हम इसी तरह का एक अज़ीम रुकूअ पढ़ आये हैं जिसकी चार आयात हैं और उसमें आयतुल कुरसी भी है। यूँ कहा जा सकता है कि ये दोनों रुकूअ अपनी अज़मत और अपने मक़ाम के ऐतबार से एक-दूसरे के हमपल्ला हैं। आयतुल कुरसी तौहीद के मौज़ू पर कुरान हकीम की जामेअ तरीन आयत है, और इस रुकूअ की आखरी आयत जामेअ तरीन दुआ पर मुशतमिल है।

आयत 284

“अल्लाह ही का है जो कुछ भी आसमानों में है और जो कुछ भी ज़मीन में है।”

لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ

आप देखेंगे कि अक्सरो बेशतर इस तरह के अल्फ़ाज़ सूरतों के इख़ताम पर आते हैं।

“और जो कुछ तुम्हारे दिलों में है ख्वाह तुम उसे ज़ाहिर करो ख्वाह छुपाओ अल्लाह तुमसे उसका मुहास्बा कर लेगा।”

وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِيْ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تَخْفَوْهُ يَحْسِبْكُمْ بِهٖ ۗ اللّٰهُ

तुम्हारी नीयतें उसके इल्म में हैं। एक हदीस में अल्फ़ाज़ आते हैं:

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَنْظُرُ اِلٰى صُوْرِكُمْ وَاَمْوَالِكُمْ وَلٰكِنْ يَنْظُرُ اِلٰى قُلُوْبِكُمْ وَاَعْمَالِكُمْ

“यक़ीनन अल्लाह तआला तुम्हारी सूरतों को और तुम्हारे माल व दौलत को नहीं देखता, बल्कि वह तुम्हारे दिलों को और तुम्हारे आमालों को देखता है।” (36)

तो तुम्हारे दिल में जो कुछ है ख्वाह उसे कितना ही छुपा लो अल्लाह के मुहास्बे से नहीं बच सकोगे।

“फिर वह बख़्श देगा जिसको चाहेगा और अज़ाब देगा जिसको चाहेगा।”

فَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ وَيُعَذِّبُۤ مَنْ يَّشَآءُ

इख़्तियारे मुतलक अल्लाह के हाथ में है। हमारे यहाँ अहले सुन्नत का अक़ीदा यही है कि अल्लाह तआला पर लाज़िम नहीं है कि नेकोकार को उसकी जज़ा ज़रूर दे और बदकार को उसकी सज़ा ज़रूर दे। यह दूसरी बात है कि अल्लाह ऐसा करेगा, लेकिन अल्लाह की शान इससे बहुत आला व अरफ़ा है कि उस

पर किसी शय को लाज़िम करार दिया जाये। उसका इख्तियारे मुतलक है, वह {فَعَالٌ لِّبَآئِرٍ يُدُّ ۝} (अल बुरूज) की शान का हामिल है। सूरतुल हज में अल्फ़ाज़ आये हैं: {إِنَّ اللَّهَ يَفْعَلُ مَا يُشَاءُ ۝} “यक़ीनन अल्लाह जो चाहता है करता है।” अहले तशय्यो का मौक़फ़ यह है कि अल्लाह पर अद्ल वाजिब है। अहले सुन्नत कहते हैं कि अल्लाह अद्ल करेगा, ज़ज़ा व सज़ा में अद्ल होगा, लेकिन अद्ल करना उस पर वाजिब नहीं है, बल्कि अल्लाह ने जो शय अपने ऊपर वाजिब की है वह “रहमत” है। अज़रुए अल्फ़ाज़े कुरानी: {كُتِبَ عَلَى نَفْسِهِ الرَّحْمَةُ ۝} (अल अनआम:12) और: {كُتِبَ رَبُّكُمْ عَلَى نَفْسِهِ الرَّحْمَةُ ۝} (अल अनआम:54) “तुम्हारे रब ने रहमत को अपने ऊपर वाजिब कर लिया है।”

“और अल्लाह हर चीज़ पर कुदरत रखता है।”

وَاللَّهُ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ۝

आयत 285

“ईमान लाये रसूल (ﷺ) उस चीज़ पर जो नाज़िल की गयी उनकी जानिब उनके रब की तरफ से और मोमिनीन भी (ईमान लाये)।”

أَمِنَ الرَّسُولُ بِمَا أُنْزِلَ إِلَيْهِ مِنْ رَبِّهِ
وَالْمُؤْمِنُونَ

यह एक गौरतलब बात और बड़ा बरीक नुक्ता है कि नबी अकरम (ﷺ) पर जब वही आयी तो आप (ﷺ) ने कैसे पहचान लिया कि यह बदरूह नहीं है, यह जिब्राइल अमीन अलैहिस्सलाम हैं? आखिर कोई इश्तबाह भी तो हो सकता था। इसलिये कि पहला तजुर्बा था। इससे पहले ना तो आप (ﷺ) ने कहानत सीखी और ना आपने कोई नफ़िसयाती रियाज़तें कीं। आप (ﷺ) तो एक कारोबारी आदमी थे और अहलो अयाल के साथ बहुत ही भरपूर ज़िन्दगी गुज़ार रहे थे। आप (ﷺ) का बुलन्द तरीन सतह का इम्पोर्ट-एक्सपोर्ट का कारोबार था। यह दर हकीकत आप (ﷺ) की फ़ितरते सलीमा थी जिसने वही लाने वाले फ़रिश्ते को पहचान लिया और आप (ﷺ) उस वही पर ईमान ले आये। नबी की फ़ितरत इतनी पाक और साफ़ होती है कि उसके ऊपर किसी बदरूह वगैरह का कोई असर हो ही नहीं सकता। बहरहाल हमारे लिये बड़ी तस्कीन की बात है कि अल्लाह तआला ने अपने रसूल (ﷺ) के ईमान के

तज़किरे के साथ हमारे ईमान का तज़किरा किया। अल्लाह तआला हमे असहाबे ईमान में शामिल फरमाये। **اللهم ربنا اجعلنا منهم**

“यह सब ईमान लाये अल्लाह पर, उसके क़रिश्तों पर, उसकी किताबों पर और उसके रसूलों पर।”

सूरतुल बक्ररह में यह दूसरा मक्क़ाम है जहाँ ईमान के अज़्ज़ाअ को गिना गया है। क़ब्ल अज़ आयतुल बिर् (आयत 177) में अज़्ज़ाये ईमान की तफ़सील बयान हो चुकी है।

“{يَهْدِيكُمْ اللَّهُ عَلَى سُبُلٍ مُّسْتَقِيمَةٍ ۝} (यह कहते हैं कि) हम अल्लाह के रसूलों में किसी के दरमियान कोई तफ़रीक़ नहीं करते।”

यह बात तीसरी मर्तबा आ गयी है कि अल्लाह के रसूलों के दरमियान कोई तफ़रीक़ नहीं की जायेगी। सौलहवें रकूअ में हम यह अल्फ़ाज़ पढ़ चुके हैं:

{لَا تَفَرِّقُ بَيْنَ أَحَدٍ مِنْهُمْ} “हम उनमें किसी के दरमियान फ़र्क़ नहीं करते और हम अल्लाह ही के फ़रमाबरदार हैं।” और सबसे पहले आयत 4 में

“वह लोग जो ईमान रखते हैं उस पर भी जो (ऐ नबी (ﷺ) आप पर नाज़िल किया गया और उस पर भी जो आपसे पहले नाज़िल किया गया।” अलबत्ता रसूलों के दरमियान तफ़ज़ील साबित है और हम यह आयत (आयत:253) पढ़ चुके हैं

{تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَى بَعْضٍ مِنْهُمْ مَنْ كَلَّمَ اللَّهُ وَرَفَعَ بَعْضَهُمْ دَرَجَاتٍ} “यह रसूल जो हैं हमने उनमें से बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दी है। उनमें से वह भी थे जिनसे अल्लाह ने कलाम किया और बाज़ के दर्जे (किसी और ऐतबार से) बुलन्द कर दिये।”

“यह रसूल जो हैं हमने उनमें से बाज़ को बाज़ पर फ़ज़ीलत दी है। उनमें से वह भी थे जिनसे अल्लाह ने कलाम किया और बाज़ के दर्जे (किसी और ऐतबार से) बुलन्द कर दिये।”

“और वह कहते हैं हमने कि हमने सुना और इताअत की।”

وَقَالُوا سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا

“परवरदिगार! हम तेरी बख़्शीश माँगते हैं”

غُفْرَانَكَ رَبَّنَا

मफ़ऊल होने की वजह से मंसूब है। यानि غُفْرَانَكَ ऐ अल्लाह! हम तुझसे तेरी मग़फ़िरत तलब करते हैं, हम तेरी बख़्शीश के तलबगार हैं।

“और तेरी ही जानिब लौट जाना है।”

وَالْيَكُفُّ الْبَصِيرُ ۝

यहाँ पर ईमान बिलआखिरा का ज़िक्र भी आ गया जो ऊपर इन अल्फ़ाज़ में नहीं आया था: {كُلُّ أَمْنٍ بِاللّٰهِ وَمَلِكَيْهِ وَكُتُبِهِ وَرُسُلِهِ} अब आखरी आयत आ रही है।

आयत 286

“अल्लाह तआला नहीं ज़िम्मेदार ठहरायेगा किसी जान को मगर उसकी वुसअत के मुताबिक़ा।”

لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا

यह आयत अल्लाह तआला के बहुत बड़े फ़ज़ल व करम का मज़हर है। मैंने आयत 186 के बारे में कहा था कि यह दुनिया में हकूके इंसानी का सबसे बड़ा मन्शूर (Magna Carta) है कि अल्लाह और बन्दे के दरमियान कोई फ़सल नहीं है: {اُجِبْتُ دَعْوَةَ الدّٰعِ اِذَا دَعَانِ} “मैं तो हर पुकारने वाले की पुकार का जवाब देता हूँ जब भी (और जहाँ भी) वह मुझे पुकारे।” {فَلَيْسَ سَجِيئُوْنًا وَلِيُوْمِنُوْنًا} “पस उन्हें भी चाहिये कि मेरा हुक्म मानें और मुझ पर ईमान रखें।” गोया दो तरफ़ा बात चलेगी, एक तरफ़ा नहीं। मेरी मानो, अपनी मनवाओ! तुम दुआएँ करोगे, हम क़बूल करेंगे! लेकिन अगर तुम हमारी बात नहीं मानते तो फिर तुम्हारी दुआ तुम्हारे मुँह पर दे मारी जायेगी, ख्वाह कुनूते नाज़ला चालीस दिन तो क्या अस्सी दिन तक पढ़ते रहो। यही वजह है कि तुम्हारी दुआओं के बावजूद तुम्हें सकूते ढाका का सानेहा देखना पड़ा, तुम्हें यहूदियों के हाथों शर्मनाक शिकस्त से दो-चार होना पड़ा। अगरचे उन मौक़ों पर हरमैन शरीफ़ में कुनूते नाज़ला पढ़ी जाती रही, लेकिन तुम्हारी दुआएँ क्योंकि क़बूल होतीं! तुम्हारा जुर्म यह है कि तुमने अल्लाह को पीठ दिखाई हुई है, उसके दीन को पाँव तले रौंदा हुआ है, अल्लाह के बागियों से दोस्ती रखी हुई है। किसी ने मास्को को अपना क़िब्ला बना रखा था तो किसी ने वाशिंगटन को। लिहाज़ा तुम्हारी दुआएँ तुम्हारे मुँह पर दे मारी गयीं।

लेकिन आयत ज़ेरे मुताअला इस ऐतबार से बहुत बड़ी रहमत का मज़हर है कि अल्लाह तआला के यहाँ अंधे की लाठी वाला मामला नहीं है कि तमाम इन्सानों से मुहासबा एक ही सतह पर हो। अल्लाह जानता है कि किसकी

कितनी वुसअत है और उसी के मुताबिक़ किसी को ज़िम्मेदार ठहराता है। और यह वुसअत मौरूसी और महौलयाती अवामिल पर मुश्तमिल होती है। हर शख्स को जो genes मिलते हैं वह दूसरे से मुश्तलिफ़ होते हैं और उन genes की अपनी-अपनी खुसूसियात (properties) और तहदीदात (limitations) होती हैं। इसी तरह हर शख्स को दूसरे से मुश्तलिफ़ माहौल मयस्सर आता है। तो इन मौरूसी अवामिल (hereditary factors) और महौलयाती अवामिल (environmental factors) के हासिल ज़र्ब से इंसान की शख्सियत का एक ह्यूला बनता है, जिसको मिस्तरी लोग “पाटन” कहते हैं। जब लोहे की कोई शय ढालनी मक़सूद हो तो उसके लिये पहले मिट्टी या लकड़ी का एक साँचा (pattern) बनाया जाता है। उसको हमारे यहाँ कारीगर अपनी बोली में “पाटन” कहते हैं। अब आप लोहे को पिघला कर उसमें डालेंगे तो वह उसी सूरत में ढल जायेगा। कुरान की इस्तलाह में यह “शाकिला” है जो हर इन्सान का बन जाता है। इरशादे बारी तआला है (बनी इसराइल): {قُلْ كُلُّ يَعْْمَلْ عَلَى شَاكِلَتِهِ فَرَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَنْ هُوَ اَهْدٰى سَبِيْلًا ۝} “कह दीजिये कि हर कोई अपने शाकिला के मुताबिक़ अमल कर रहा है। पस आपका रब ही बेहतर जानता है कि कौन सीधी राह पर है।” इस शाकिला के अन्दर-अन्दर आपको मेहनत करनी है। अल्लाह तआला जानता है कि किसका शाकिला वसीअ था और किसका तंग था, किसके genes आला थे और किसके अदना थे, किसके यहाँ ज़हानत ज़्यादा थी और किसके यहाँ जिस्मानी कुव्वत ज़्यादा थी। उसे खूब मालूम है कि किसको कैसी सलाहियतें वदियत की गयीं और कैसा माहौल अता किया गया। चुनाँचे अल्लाह तआला हर एक के महौलयाती अवामिल और मौरूसी अवामिल को मल्हूज़ रख कर उसकी इस्तदादात के मुताबिक़ हिसाब लेगा। फ़र्ज़ कीजिये एक शख्स के अन्दर इस्तदाद ही 20 दर्जे की है और उसने 18 दर्जे काम कर दिखाया तो वह कामयाब हो गया। लेकिन अगर किसी में इस्तदाद सौ दर्जे की थी और उसने 50 दर्जे काम किया तो वह नाकाम हो गया। हालाँकि कीमत के ऐतबार से 50 दर्जे 18 दर्जे से ज़्यादा हैं। तो अल्लाह तआला का मुहासबा जो है वह इन्फ़रादी सतह पर है। इसलिये फ़रमाया गया: {وَكُلُّهُمْ اَتٰىهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فَرْدًا ۝} (सूरह मरयम) “और सब लोग क़यामत के दिन उसके हुज़ूर फ़रदन-फ़रदन

हाज़िर होंगे।” वहाँ हर एक का हिसाब अकेले-अकेले होगा और वह उसकी वुसअत के मुताबिक़ होगा।

{لَا يَكْفِيكَ اللَّهُ نَفْسًا إِلَّا وَسْعَةً} “के अल्फ़ाज़ में जो एक अहम उसूल बयान कर दिया गया है, बाज़ लोग दुनिया की ज़िन्दगी में उसका ग़लत नतीजा निकाल बैठते हैं। वह दुनिया के मामलात में तो ख़ूब भाग-दौड़ करते हैं लेकिन दीन के मामले में कह देते हैं कि हमारे अन्दर सलाहियत और इस्तदाद ही नहीं है। यह महज़ खुदफ़रेबी है। इस्तदाद व इस्तताअत और ज़हानत व सलाहियत के बग़ैर तो दुनिया में भी आप मेहनत नहीं कर सकते, कोई नताइज हासिल नहीं कर सकते, कुछ कमा नहीं सकते। लिहाज़ा अपने आप को यह धोखा ना दीजिये और जो कुछ कर सकते हों, वह ज़रूर कीजिये। अपनी शख्सियत को खोद-खोद कर उसमें से जो कुछ निकाल सकते हों वह निकालिये! हाँ आप निकाल सकेंगे उतना ही जितना आपके अन्दर वदियत है। ज़्यादा कहाँ से ले आयेंगे? और अल्लाह ने किसी में क्या वदियत किया है, वह वही जानता है। तुम्हारा मुहासबा उसी की बुनियाद पर होगा जो कुछ उसने तुम्हें दिया है। इस मज़मून की अहमियत का अंदाज़ा कीजिये कि यह कुरान मजीद में पाँच मर्तबा आया है।

“उसी जान के लिये है जो उसने कमाया और उसी के ऊपर बवाल बनेगा जो उसने बुराई कमाई।”

इस मक़ाम पर भी “ل” और “عَلَى” के इस्तेमाल पर गौर कीजिये। {لَهَا مَا كَسَبَتْ} से मुराद है जो भी नेकी उसने कमाई होगी वह उसके लिये है, उसके हक़ में है, उसका अज़्रो सवाब उसे मिलेगा। {وَعَلَيْهَا مَا كَسَبَتْ} से मुराद है कि जो बदी उसने कमाई होगी उसका बवाल उसी पर आयेगा, उसकी सज़ा उसी को मिलेगी।

अब वह दुआ आ गई है जो कुरान मजीद की जामेअ तरीन और अज़ीम तरीन दुआ है:

“ऐ हमारे रब! हमसे मुआख़ज़ा ना फ़रमाना अगर हम भूल जायें या हमसे खता हो जाये।”

ईमान और अमल सालेह के रास्ते पर चलते हुए अपनी शख्सियत के कोनों खहरों में से इम्कान भर अपनी बाक़ी मांदा तवानाइयों (residual energies) को भी निकाल-निकाल कर अल्लाह की राह में लगा लें, लेकिन इसके बाद भी अपनी मेहनत पर, अपनी नेकी, अपनी कमाई और अपने कारनामों पर कोई गर्रा ना हो, कोई गुरूर ना हो, कहीं इन्सान धोखा ना खा जाये। बल्कि उसकी कैफ़ियत तवाज़े, आजिज़ और इन्कसारी की रहनी चाहिये। और उसे यह दुआ करते रहना चाहिये कि ऐ मेरे परवरदिगार! हमारी भूल-चूक पर हमसे मुआख़ज़ा ना फ़रमाना।

इन्सान के अन्दर खता और निस्नान दोनों चीज़ें गुंथी हुई हैं: (الْإِنْسَانُ مُرْتَكِبٌ مِّنَ الْخَطَايَا وَالنِّسْيَانِ) खता यह है कि आपने अपनी इम्कानी हद तक तो निशाना ठीक लगाया था, लेकिन निशाना खता हो गया। इस पर आपकी गिरफ़्त नहीं होगी, इसलिये कि आपकी नीयत सही थी। एक इज्जहाद करने वाला इज्जहाद कर रहा है, उसने इम्कानी हद तक कोशिश की है कि सही राय तक पहुँचे, लेकिन खता हो गयी। अल्लाह माफ़ करेगा। मुज्ताहिद मुख्ती भी हो तो उसको सवाब मिलेगा और मुज्ताहिद मुसीब हो, सही राय पर पहुँच जाये तो उसको दोहरा सवाब मिलेगा। और निस्नान यह है कि भूले से कोई ग़लती सरज़द हो जाये। रसूल अल्लाह ﷺ का इरशाद है:

إِنَّ اللَّهَ تَجَاوَزَ عَنْ أَفْئِي الْخَطَايَا وَالنِّسْيَانِ

“अल्लाह तआला ने मेरी उम्मत से खता और निस्नान माफ़ फ़रमा दिया है।”

“और ऐ रब हमारे! हम पर वैसा बोझ ना डाल जैसा तूने उन लोगों पर डाला था जो हमसे पहले थे।”

एक हम्ल (बोझ) वह होता है जिसको लेकर इन्सान चलता है। उसी से “हिमाल” बना है जो एक बोरी को या बोझ को उठा कर चल रहा है। जो बोझ आपकी ताक़त में है और जिसे लेकर आप चल सके वह “हम्ल” है, और जिस बोझ को आप उठा ना सकें और वह आपको बिठा दे उसको “इस्” कहते हैं। यह लफ़ज़ सूरह आराफ़ में फिर आयेगा: {وَيَضَعُ عَنْهُمْ إِصْرَهُمْ وَالْأَغْلَالَ الَّتِي كَانَتْ عَلَيْهِمْ} (आयत:157) इन अल्फ़ाज़ में मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की यह शान बयान हुई है कि उन्होंने लोगों के वह बोझ जो उनकी ताक़त से बढ़ कर थे,

उनके कन्धों से उतार दिये। हमसे पहले लोगों पर बड़े भारी बोझ डाले गये थे। शरीअते मूसवी हमारी शरीअत की निस्वत बहुत भारी थी। जैसे उनके यहाँ रोज़ा रात ही से शुरू हो जाता था, लेकिन हमारे लिये यह कितना आसान कर दिया गया कि रोज़े से रात को निकाल दिया गया और सहरी करने की ताकीद फ़रमायी गयी: ((تَسَحَّرُوا فَإِنَّ فِي السَّحْرِ بَرَكَةً))⁽³⁸⁾ “सहरी ज़रूर किया करो, इसलिये कि सहरीयों में बरकत रखी गयी है।” फिर रात में ताल्लुक़ ज़नो-शौ की इजाज़त दी गयी। उनके रोज़े में ख़ामोशी भी शामिल थी। यानि ना खाना, ना पीना, ना ताल्लुक़ ज़नो-शौ और ना गुफ्तगू। हमारे लिये कितनी आसानी कर दी गयी है! उनके यहाँ यौमे सब्त का हुक्म इतना सख्त था कि पूरा दिन कोई काम नहीं करोगे। हमारे यहाँ जुमे की अज़ान से लेकर नमाज़ के अदा हो जाने तक हर कारोबारे दुनयवी हराम है। लेकिन उससे पहले और उसके बाद आप कारोबार कर सकते हैं।

“और ऐ रब हमारे! हम पर वह बोझ ना डाल
जिसकी हम में ताक़त ना हो।” رَبَّنَا وَلَا تُحِيزْ لَنَا مَالًا طَاقَةً لَّنَا بِهِ

“और हमसे दरगुज़र फ़रमाता रह!” وَأَعْفُ عَنَّا

हमारी लगज़िशों को माफ़ करता रह!

“और हमें बख़्शता रह!” وَأَعْفِ لَنَا

हमारी ख़ताओं की पर्दापोशी फ़रमा दे!

मग़फ़िरत की लफ़्ज़ को समझ लीजिये। इसमें ढाँप लेने का मफ़हूम है। मग़फ़र ‘खूद’ (हेलमेट) को कहते हैं, जो जंग में सर पर पहना जाता है। यह सर को छुपा लेता है और उसे गोली या तलवार के वार से बचाता है। तो मग़फ़िरत यह है कि गुनाहों को अल्लाह तआला अपनी रहमत से ढाँप दे, उनकी पर्दापोशी फ़रमा दे।

“और हम पर रहम फ़रमा।” وَأَرْحَمْنَا

“तू हमारा मौला है।” أَنْتَ مَوْلَانَا

तू हमारा पुश्तपनाह है, हमारा वली है, हमारा हामी व मददगार है। हम यह आयत पढ़ आये हैं: {اللَّهُ وَلِيُّ الَّذِينَ آمَنُوا يُخْرِجُهُم مِّنَ الظُّلُمَاتِ إِلَى النُّورِ} (आयत:257)।

“पस हमारी मदद फ़रमा काफ़िरों के मुक़ाबले में” فَأَنْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ

इन्हीं अल्फ़ाज़ पर वह दुआ ख़त्म हुई थी जो तालूत के साथियों ने की थी। अब अहले ईमान को यह दुआ तलक़ीन की जा रही है, इसलिये कि मरहला सख्त आ रहा है। गोया:

ताब लाते ही बनेगी ग़ालिब

मरहला सख्त है और जान अजीज़!

अब कुफ़्रार के साथ मुक़ाबले का मरहला आ रहा है और उसके लिये मुस्लिमनों को तैयार किया जा रहा है। यह दर हकीक़त ग़ज़वा-ए-बद्र की तमहीद है।

بَارَكَ اللَّهُ لِي وَلَكُمْ فِي الْقُرْآنِ الْعَظِيمِ وَنَفَعْنِي وَبَارَكَ لَكُمْ فِي الْقُرْآنِ الْعَظِيمِ وَنَفَعْنِي وَبَارَكَ لَكُمْ فِي الْقُرْآنِ الْعَظِيمِ

